ओ३म्

राष्ट्रधर्म

आर्यराष्ट्र की स्थापना
के लिये
राजनीति एवं अर्थनीति
के क्रान्तिकारी
विचारों से ओतप्रोत

धर्मपर हुआ श्याम बलिदान

देशिक आर्ययुवक
रिषद् का पाक्षिक
मुखपत्र

आर्य बलिदान अंक

सम्पादक
प्रो० श्यामराव

वर्ष २ अङ्क ४
१ जनवरी १९६६

वार्षिक शुल्क
१० रुपया

एक प्रति ५० पैसे

आर्य राष्ट्र निर्माण सम्मेलन में श्री जो. एल. दत्ता की अध्यक्षता में श्री इन्द्रदेव जी मेधार्थी प्रधान परिषद् भाषण देते हुए ।

आर्य समाज को राजनैतिक मंच तैयार करना चाहिए

नई दिल्ली १३ दिसम्बर ।

श्री डा० जी० एल. दत्ता प्रधान डी० ए० वी० प्रबन्ध समिति की अध्यक्षता में सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद के तत्वावधान में आर्य समाज मन्दिर में आर्य राष्ट्र निर्माण सम्मेलन धूमधाम से सम्पन्न हुआ इसमें घोषणा करते हुए मार्वदेशिक आर्य युवक के प्रधान श्री इन्द्रदेव जी मेधार्थी ने कहा कि आर्य समाज की शक्ति अन्य राजनैतिक दलों में लगने से आर्य समाज को बड़ा आघात लगा है अब आर्य समाज को अपना राजनैतिक मंच तैयार करना चाहिए ।

आर्य शिक्षा नीति पर बोलते हुए आचार्य रामानन्द ने कहा कि आर्य समाज की शिक्षा नीति वर्तमान समस्याओं का व्यावहारिक समाधान करते हुये चरित्र प्रधान होनी चाहिए ।

अपने ओजस्वी भाषण में प्रो० श्यामराव जी ने वैदिक अर्थ नीति का विवेचन करते हुए कहा कि सम्पति का अधिकार जन्म के आधार पर न होकर गुण कर्म स्वभाव के अनुसार होना चाहिए ।

इन सभी विचारों का विशाल जन समूह ने हृदय से स्वागत किया । जिससे सभी के दिलों म आशा की लहर दौड़ गई । अन्य दलों के मुकाबले में वैदिक राज्य व्यवस्था की इतनी सुन्दर व्याख्या का यह पहला अवसर था जब कि आर्य समाज के मंच पर इस प्रकार की घोषणा हुई ।

आर्य जगत के प्रसिद्ध भजनोपदेशक पं० नत्थासिंह तथा ओमप्रकाश जी का अत्यन्त ओजस्वा कार्य क्रम रहा । आर्य युवक परिषद् के अल्पत्तमआयुक आठ वर्षीय सदस्य ब्र० महीपाल ने अपने धूआधार व्याख्यान से श्रोताओं को झकझोर दिया । इन्होंने श्रोताओं द्वारा दिये गए इनाम की एक सो एक रु० की राशि परिषद् को देने की आश्चर्यजनक घोषणा की ।

संयोजक—रामनाथ सहगल

अद्य जीवानि मा श्वः
अन्यायी राजा आज जीवित है, कल नहीं रहेगा (अथर्व वेद)

सम्पादकीय—

यज्ञशाला का अपमान

१५ दिसम्बर प्रातः अचानक दो टेलीग्राम अबोहर (पंजाब) से आये। भेजने वाले थे प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु—उपप्रधान सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्। लिखा था शीघ्र पहुँचो। बात समझ में नहीं आई कि क्यों इतनी बेसब्री से बुलाया जा रहा है। जाने से पहले प्रिंसिपल एन० डी० ग्रोवर, डी० ए० वी० कालेज अबोहर से ट्रंककाल पर बात हुई और स्थिति की गम्भीरता को जानकर मैं और कार्यालय मन्त्री श्रीकृष्णदत्त जी अबोहर रवाना हुए। शहर में घुसते ही एक अजीब चहल-पहल दिखाई दी। पूरे तीन दिन की हड़ताल के बाद दुकानें खुली थीं। सारे कालेज उस समय भी बन्द थे पर विद्यार्थियों का समूह उद्विग्न होकर सड़कों पर घूम रहा था। हम सीधे डी० ए० वी० कालेज पहुंचे और वहां जाकर अकाली दल से प्रेरणा प्राप्त सिख लड़कों के उत्पात का जो कुत्सित दृश्य देखा तो खून खोलने लगा। सत्ता प्राप्त करने के बाद अकाली दल ने पंजाब की राजनीति में जो साम्प्रदायिकता का जहर घोल दिया है और उसके परिणामस्वरूप गैर सिखों पर जिस प्रकार के जुल्म ढाये जा रहे हैं उसका एक बीभत्स उदाहरण अबोहर में सामने आया। वर्णन इस प्रकार है—

११ दिसम्बर प्रातः ९-३० बजे के लगभग जब दूसरा पीरियड बड़े शान्त वातावरण में चल रहा था; ५०-६० सिक्ख विद्यार्थी प्रिंसिपल साहब के पास जाकर उनसे 'पंजाब बन्द" के सिलसिले में कालेज बन्द करने का आग्रह करने लगे। प्रिंसिपल साहीब ने इन लड़कों को समझाया कि कालेज बन्द करने का कोई नियम नहीं। यदि उसके बारे में पहले सूचना होती तो विचार किया जा सकता था पर जब कि दो पीरियड चल चुके हैं, कालेज का बन्द करना उचित नहीं। साथ में यह भी कहा कि मुख्यमन्त्री गुरनामसिंह जी का रेडियो पर वक्तव्य है कि पंजाब बन्द के अवसर पर शिक्षण संस्थाएं खुली रहेंगी। प्रिंसिपल साहब के समझाने पर भी सिक्ख युवक नहीं माने और कक्षाओं के पास (कैन्टीन ब्लाक) में जाकर नारे लगाने लगे। "कालेज बन्द करो" "कालेज बन्द करो"। इस प्रकार शोर मचाते हुए लगभग १० बजे वह प्रो० राधेश्याम शर्मा जी क्लास में घुसकर लड़कों को जबरदस्ती बाहर निकालने लगे। कक्षा के अनुशासनप्रिय विद्यार्थियों ने जब बाहर जाने से मना किया तो इन सिक्ख युवकों ने मारपीट शुरू कर दी। जिसके फलस्वरूप श्री हरीश कुमार और हंसराज को विशेष चोटें आईं। इस प्रकार की घटनाएं प्रो० नैन और प्रो० एन० के० अरोड़ा जी की कक्षाओं में हुई। कक्षाएं फिर भी चलती रहीं। इस बीच पीरियड बदला और ११ बजे के लगभग जब श्री महीराम जी कक्षा से बाहर निकले तो इन्हें सिक्ख लड़कों ने घेर लिया और कालेज बन्द करवाने में सहयोग माँगा। इस बीच श्री राधाकृष्ण (प्रीमैडिकल) और उनके कुछ साथी वहां आ गये। महीराम जी द्वारा सिक्ख लड़कों की बात न मानने पर सिक्ख लड़के भड़क उठे और उन्हें तथा उनके साथियों को पीटने लगे। पीटने में श्री गुरलालसिंह ने महीराम जी को थप्पड़ लगाये और श्री मिट्ठूसिंह ने महीराम जी को ईंट मारने की चेष्टा की लेकिन सतीश नारंग (बी० ए०) ने ईंट छीन ली, अन्य सिक्ख विद्यार्थी श्री राधाकृष्ण तथा उनके साथियों पर गालियां

देते हुए टूट पड़े। प्रिंसिपल साहब द्वारा बीच-बचाव पर ही श्री महीराम तथा उनके साथी वहाँ से निकल कर लैबोरेट्री (कैमीस्ट्री) की तरफ आ सके। सिक्ख लड़कों ने फिर भी उनका पीछा किया, इससे स्थिति काफी तनाव-पूर्ण हो गई और विद्यार्थी दो गुटों में विभक्त हो गये। हिन्दू विद्यार्थी कालेज भवन की ओर तथा सिक्ख विद्यार्थी, साईकल स्टैंड की ओर। इस समय तक पुलिस कालेज प्रांगण में आ चुकी थी। सिक्ख विद्यार्थी यज्ञशाला की ओर इकट्ठे हो गये। तब सरदार पोहलासिंह (अकाली नेता) के पहुँचते ही सिक्ख विद्यार्थियों की ओर से हिन्दू विद्यार्थियों तथा कालेज भवन पर पथराव शुरू हो गया। पुलिस खड़ी देखती रही, प्रिंसिपल तथा प्राध्यापकों ने हिन्दू विद्यार्थियों को घास के मैदान (जो कि बिल्डिंग के पीछे है) में रोके रखा। इसी समय प्रो० के० एल० नारंग कक्षा से लौट रहे थे। उन सिक्खों के पथराव से उन्हें चोटें आईं, जब लड़कियाँ और लड़के ऊपर बाल-कोनी में खड़े थे उस समय सिक्ख लड़के (मुख्तयारसिंह विद्यार्थी) और (परमजीतसिंह बाहर का) नंगे होकर लड़कियों की ओर अत्यन्त निर्लज्जता-पूर्वक प्रदर्शन करने लगे।

पुलिस द्वारा सिक्ख लड़कों को यज्ञशाला ग्राउण्ड में भेज दिया गया। वहां पर सिक्ख लड़कों पथराव से यज्ञशाला के शीशे तोड़ दिये, इसी बीच प्रिंसिपल साहब ने हिन्दू विद्यार्थियों को घास वाले मैदान में इकट्ठा करके रोके रखा और शान्त रहने के लिए कहा। सिक्ख विद्यार्थियों ने पुनः पथराव शुरू किया और कैनटीन, फिजीक्स तथा कमीस्ट्री लैबोरेटरी के शीशे तोड़ डाले।

३ बजे लगभग प्रिंसिपल साहब के कहने पर हिन्दू विद्यार्थी जिनकी कक्षा थी अपनी कक्षा में चले गये, बाकी अपने घरों को चले गये। 'सिक्ख विद्यार्थी अगले दिन ८-३० बजे आने की घोषणा कर गये। इसी दिन रात को लगभग १० बजे जागीरसिंह तथा मुखबिन्द्रसिंह महीराम के घर पर रिवाल्वर लेकर गये और उसे जान से मार डालने की धमकी दी।

१२ दिसम्बर प्रातः ८-३० बजे सिक्ख विद्यार्थी हाकी ग्राउण्ड में इकट्ठे होने शुरू हो गये। पुलिस की उपस्थिति में उन्होंने "सत् श्री अकाल" के नारे लगाये।

दयानन्द कालेज अबोहर (पंजाब) की यज्ञशाला का गुम्बज जिसके शीशे सिक्ख गुण्डों ने तोड़ दिये हैं

९-३० बजे नारे लगाते हुए यज्ञशाला वाले ग्राउण्ड में आए। वहां "प्रिंसिपल एन० डी० ग्रोवर मुरदाबाद" और प्रो० नैन "मुरदाबाद" तथा "पंजाब पुलिस जिन्दाबाद" के नारे लगाये इसके बाद प्रिंसिपल ग्रोवर की अर्थी बनाई और उन पर जूते बरसाये गये। यह क्रम घण्टों चलता रहा। इसी बीच कुछ सिक्ख विद्यार्थी जूतों समेत यज्ञशाला में चढ़ गये और वहाँ पर हवन कुण्ड को जूतों से ठोंकने लगे। अश्लील भाषा का प्रयोग करते हुए हिन्दू लड़कों की धार्मिक भावना को ठेस पहुंचाने के लिए वरयामसिंह, गुरुशरण सिंह, हरगोविन्द सिंह, माहर सिंह, इकबाल सिंह ने यज्ञशाला के हवनकुण्ड में पेशाब करने का घृणित कार्य किया और पुकार-पुकार कर कहा कि देखो हिन्दुओ हमने तुम्हारे हवन कुण्ड में पेशाब किया है, जो कुछ करना हो कर लो, उसके बाद इस इकबाल सिंह (बी० ए० तृतीय) ने जूतों समेत यज्ञशाला में खड़े होकर भाषण दिया, यह कार्यक्रम १२-३०बजे तक चलता रहा, लगभग १२-३० बजे "एस० डी० एम० फाजिलका" घटना स्थल पर पहुँचे और सिक्ख लड़कों के पास जाकर उन्हें समझाया, इस पर सिक्ख लड़कों ने अपनी माँगें

पेश की ओर चले गये। बाकी सभी हिन्दू विद्यार्थी कक्षाओं में थे।

१३ तारीख को लगभग दोपहर के २ बजे सतीश जसूजा, अशोक आर्य, हेमराज गुप्ता, सतीश जसूजा के घर के पास खड़े थे तब दो सिक्खों ने (हरवंशसिंह बराड़ रोल नं० ६५१) तथा उसका एक साथी बन्दूक लेकर वहां आये और सतीश जसूजा को जान से मार डालने की धमकी दी।

इसके बाद भी हिन्दू लड़कों के साथ सिक्ख लड़कों ने दुर्व्यवहार जारी रखा, गन्दी गालियों और मार डालने की धमकियां देते रहे।

ऊपरलिखित घटना से पंजाब का यह दक्षिण पश्चिम इलाका क्षुब्ध हो उठा है। जो अबोहर दर्शनसिंह फेरूमान के मृत्यु पर और पंजाब बन्द के अवसर पर भी बन्द नहीं हुआ वही अबोहर कुछ सिक्ख गुण्डों के इस जघन्य कांड के प्रति रोष प्रकट करने के लिए लगातार तीन दिन तक बन्द रहा। पंजाब के पत्रों में जब काफी शोर हुआ तो पंजाब के वित्तमन्त्री श्री कृष्ण लाल जी जनसंघ तथा उपमंत्री श्री सतनामसिंह बाजवा (अकाली) १८ दिसम्बर को अबोहर पधारे और सीधे कालेज की यज्ञशाला के निरीक्षण के लिए आये। बाद में कैनाल रेस्ट हाऊस में दिन भर सभी वर्गों के जिम्मेदार लोगों से मिलकर उन्होंने उपर्युक्त घटनाक्रम की पुष्टि की और अपराधियों को कठोर दंड का आश्वासन देकर चले गये।

अपराधियों को सचमुच दण्ड मिलेगा या नहीं यह तो कहा नहीं जा सकता क्योंकि जिनकी प्रेरणा पर यह सब हुआ वे ही दंड देने वाले सरकार में है। पर एक बात से हृदय को जबरदस्त आघात लगा है और वह यह कि सरस्वती केन्द्र में स्थित वैदिक धर्म की पावन यज्ञशाला का इस तरह से अपमान हुआ पर किसी जिम्मेदार सिक्ख धर्म के नेता ने इस बात पर दुःख प्रकट नहीं किया। ऊपर से कालेज के प्रिंसिपल पर यह आरोप लगाया जा रहा है कि वे हिन्दू लड़कों को सिक्खों के विरुद्ध भड़काते हैं। यदि सचमुच प्रिंसिपल ग्रोवर ऐसा चाहते तो उस दिन ना जाने कितने धर्मान्धों की लाशें गिर जाती। यह तो ग्रोवर साहब की हिम्मत थी कि उन्होंने हिन्दू लड़कों को यह कहकर रोक दिया कि यदि कोई भी इस गुण्डागर्दी का जवाब मारपीट से देगा तो मैं आत्महत्या कर लूंगा।

पंजाब में भाषा और धर्म के नाम पर राजनीति और साम्प्रदायिकता का अराष्ट्रिय गठबन्धन जोर पकड़ रहा है। यदि समय रहते हुए इस साम्प्रदायिक राजनीति के साधन को समाप्त नहीं किया जाता तो शीघ्र ही यहां वैसी हालत हो जायेगी जैसी कि आजादी के ठीक बाद निजाम के हैदराबाद में हो गई थी। हम पंजाब के सत्ताधारी राजनीतिक नेताओं से और विशेषकर अकाली सिक्खों को चेतावनी देना चाहते हैं कि यदि राजमद में मदान्ध होकर वे हमारे अधिकारों की रक्षा नहीं कर सकते तो एक बार पुनः आर्यसमाज को सत्याग्रह का बिगुल बजाना पड़ेगा और भाई वंशीलाल और भाई श्यामलाल के बलिदानी इतिहास तरोताजा करके वैदिक धर्म की कीर्ति पताका को अक्षुण्ण रखना पड़ेगा।

आपका कर्त्तव्य !

अब पंजाब के हालात दिन ब दिन बदतर होते जा रहे हैं। पता नहीं कब आर्यसमाज को अपना आंदोलन आरम्भ करना पड़े। यज्ञशाला का अपमान हमारे लिये एक करारी चुनौती है। यदि इस अपमान को हम चुपचाप पी गये तो यह हमारी मौत होगी। इसलिये अभी से देश भर के आर्य नर-नारी संघर्ष के लिये तैयार हो जायं। अपनी समाजों में शीघ्र ही इस घृणित काण्ड पर रोष प्रकट करते हुए प्रस्ताव पारित कर केन्द्रीय गृहमन्त्री और पंजाब के मुख्य मन्त्री को अवश्य भेजें ताकि उन्हें हमारी शक्ति का पता चले और भविष्य में कोई विधर्मी हमारी यज्ञवेदी को अपवित्र करने का दुस्साहस न कर सके।

—०—

पर इसका सही उपाय होगा—

आर्य राष्ट्र स्थापना

प्रस्ताव पारित करने और मौखिक प्रतिवाद करने मात्र से दुनियां की अदालत में हमारी कोई सुनवाई नहीं होगी। दुनियां तो शक्ति की भाषा समझती है

और शक्ति होती है राजनैतिक सत्ता के हाथों। इसलिये यदि हम चाहते हैं कि आये दिन हमें विधर्मियों के हाथों इस तरह अपमानित न होना पड़े और हमारी मान्यतायें सारे संसार में फैलें तो हमें शीघ्र से शीघ्र आर्यराष्ट्र की स्थापना के लिये अग्रसर होना पड़ेगा आर्यराष्ट्र की स्थापना के लिये आर्य सेना सजानी होगी।

कार्लमार्क्स के सिद्धान्तों से आज सारी दुनियां परिचित है पर महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों को हमारे अपने देश में भी लोग नहीं जानते। क्या आप बता सकेंगें क्यों ?

ईसामसीह के चेले आज दुनियां के हर भाग में फैले हुए दनदना रहे हैं और हमारे मिशनरी अपने देश में ही कम पड़ रहे हैं। पता है क्यों ? गुरु नानक की शताब्दी पर पांच करोड़ खर्च हुए गुरु विरजानन्द की जन्म शताब्दी और देवदयानन्द की शास्त्रार्थ शताब्दी पर एक लाख भी इकट्ठा न हो सका। आखिर क्यों ? जानना चाहते हैं ? तो सुनिये।

कार्लमार्क्स के पीछे रूस और चीन के विशाल साम्राज्य हैं, ईसामसीह के पीछे अमेरिका और इंग्लैण्ड के राज्य हैं और अब गुरूनानक के पीछे पंजाबी सूबा है। पर........ पर दयानन्द के पीछे आज तक कोई साम्राज्य......कोई राज्य......कोई सूबा नहीं है। क्या दयानन्द का तप त्याग, उसकी साधना और उसकी विद्या मार्क्स से, ईसा से या गुरुनानक से कम थी ? क्या वह कबीर पंथी और दादू पंथी था और राजनीति से घृणा करता था ? क्या दयानन्द ने दोनों हाथ उठाकर यह हजार बार नहीं कहा कि आर्यो ! तुम अपना चक्रवर्ती राज्य स्थापित करो ?

उसने कहा था और हमने सुना भी था पर सुनकर अनसुना कर दिया। यदि हम उस पर आचरण करते, यदि आर्यसमाज की भट्टी में पकी ईटों को कांग्रेस, हिन्दूमहासभा, जनसंघ और बी० के० डी० के भवन बनाने में न लगाकर वेद और दयानन्द का महल बनाते तो आज इस देश में......हमारे प्यारे आर्यावर्त में आर्यों का राज होता और ये दुर्दिन हमें देखने न पड़ते।

अब भी समय है। हमने देर की, पर अन्धेर न करें। आज देश की राजनैतिक परिस्थितियां जितनी ही बिगड़ रहीं हैं उतना ही हमारे लिये अनुकूल वातावरण तैय्यार हो रहा है। अब ठीक समय है कि आर्य जन अपनी शिथिलता और नैराश्य के आवरण को तोड़कर बाहर आयें और अपने प्रचण्ड, प्रखर तेजस्वी रूप से अज्ञान, अन्याय और अभाव के दुश्मनों को ललकार कर वैदिक वर्णाश्रम पर आधारित राज्य की स्थापना करें।

जब आर्य राष्ट्र की स्थापना में अग्रसर दयानन्द के सैनिकों का नगाड़ा बजेगा तो विदेशी विधर्मियों के और गरीबों का खून चूसने वाले स्वार्थी पूंजीपतियों के दिल दहलेंगे और क्रान्ति की

चिनगारियाँ इकट्ठी होकर एक ऐसी दहकती ज्वालामुखी को जन्म देंगी जिसमें आज के तमाम अधकचरे राजनैतिक दल जलकर भस्म हो जायेंगे।

इसलिये आओ ! सब मिलकर आर्य राष्ट्र की स्थापना का सङ्कल्प लें और इस यज्ञ में अपने सर्वस्व की आहुति देने के लिये तत्पर हों। निम्न प्रश्नों पर गम्भीर चिन्तन द्वारा अपने विचारों से हमें अवगत करायें ताकि शीघ्र ही इस दिशा में ठोस कदम उठाये जा सकें।

१. आर्य राज्य सभा की घोषणा जनता के समक्ष कब प्रकाश में आनी चाहिए ?

२. जो आर्यसमाजी विभिन्न राजनैतिक दलों में हैं उन्हें आर्य राज्य सभा में लाने के लिए क्या प्रयत्न होने चाहियें ?

३. आर्य राज्य स्थापना में बाधक समाज में प्रचलित जातिवाद और पूंजीवाद आदि कुरीतियों के निराकरण के लिए मोर्चे का क्या रूप होना चाहिए ?

४. आप इस राष्ट्र यज्ञ में तन-मन-धन से क्या और किस प्रकार सहयोग कर सकेंगे ?

५. कृपया अपने परिचित सक्रिय आर्य समाजी व्यक्तियों के पते पत्र द्वारा भेज दें, जिससे उनसे भी सम्पर्क बनाया जा सके।

हमें विश्वास है कि आप महर्षि दयानन्द के संकल्पों का आर्य राज्य बनाने में पूर्ण उत्साह से सहयोग देंगे। उत्तर की प्रतीक्षा में—

भवदीय

इन्द्रदेव मेधार्थी
प्रधान

श्यामराव
मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्
आर्यसमाज मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली—१

छपते-छपते—

आर्य जनता द्वारा वीर संन्यासी स्वामी श्रद्धानन्द को भावभीनि श्रद्धाञ्जलि

(कार्यालय प्रतिनिधि द्वारा)

दिल्ली २५ दिसम्बर—आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली द्वारा आयोजित दिल्ली तथा आस-पास की देहात की सभी आर्यसमाजों और शिक्षण संस्थाओं द्वारा एक मील लम्बा विशाल जलूस निकाला गया। सायं चार बजे गांधी मैदान में स्वामी सर्वानन्द की अध्यक्षता में वीर संन्यासी स्वामी श्रद्धानन्द की ४३ वीं बलिदान जयन्ती पर आर्य जनता ने स्वामी जी को श्रद्धाञ्जलियां दी। सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के कार्यालय मन्त्री श्री कृष्णदत्त की प्रेरणा पर लाला रामगोपाल शाल वाले (संसद् सदस्य) ने अबोहर कांड की घोर निन्दा की तथा न्यायिक जांच कराने के लिए सर्वसम्मति से प्रस्ताव प्रारित हुआ।

समाचार-दर्शन

● ज्ञानेश्वर शास्त्री

जगजीवनराम का राज्याभिषेक

दश वर्षों तक आयकर न देने के दण्ड-स्वरूप श्री जगजीवनराम को यह यातना दी गई है कि वे नवगठित कांग्रेस के अध्यक्ष पद को संभालेंगे। इन्दिरा गान्धी पर दबाव डाला जा रहा था कि चोर-उचक्कों को मंत्रिमण्डल में रखने से अपयश बढ़ेगा—अतएव जगजीवनराम को यहाँ से निकाल बाहर किया जाय। परन्तु जगजीवनराम श्रीमती इन्दिरा जी के भाग्य-विधाता रहे हैं—हरिजन वोटों की चोट से आपको प्रधान मन्त्री बनाया—निजलिंगप्पा के तम्बू से भागकर इन्दिरा जी के तम्बू में आये और रात-बे-रात इस तम्बू की गेटकीपरी की। इन्दिरा जी वफादार बाप की वफादार बेटी है। किसी की वफादारी की कद्र करना जानती है। उन्होंने मित्रों के दबाव को भी माना और जगजीवन बाबू को भी नाराज नहीं किया।

जैसे अच्छी से अच्छी पुस्तक को भी परीक्षा के पाठ्यक्रम में रख दिया जाय तो छात्रगण उसको पढ़ने से नाक-भौं सिकोड़ते हैं, वैसे ही अच्छे से अच्छे व्यक्ति को कांग्रेसाध्यक्ष बना दिया जाय—वह बेचाराअपयश-भाजन बनने लगता है। किसी अच्छे व्यक्ति को अपयश पात्र बनाने से बेहतर है कि अपयश-लब्ध चोर-उचक्कों को ही इस पर प्रतिष्ठित किया जाय। इन्दिरा गान्धी ने जगजीवन बाबू को नवगठित कांग्रेस का प्रधान बनाकर एक प्रौढ़ कूटनीतिक कार्य किया है।

कहते हैं, पहले-पहल श्री चौहान का नाम आया कि कांग्रेस का प्रधान पद आपको दिया जाय। परन्तु कुछ तो "आधुनिक शिवाजी" चौहान इस पद के लिए ज्यादा उत्सुक प्रतीत नहीं हुए क्योंकि स्वराष्ट्र-मंत्री का पद छोड़कर कांग्रेस की प्रधानता स्वीकार करना कोई बुद्धिमत्ता नहीं थी। दूसरे महाराष्ट्र प्रदेश कांग्रेस ने उन्हें सलाह दी कि वे स्वराष्ट्र मंत्रालय न छोड़ें।

एक अन्य हरिजन नेता तथा भूतपूर्व कांग्रेसाध्यक्ष दामोदर संजीवय्या का भी नाम आया लेकिन उनके सहयोगी ब्रह्मानन्द रेड्डी ने इसका विरोध किया।

द्वारिकाप्रसाद मिश्र और फखरुद्दीन अली अहमद के मस्तक पर भी यह सहेरा बांधा जाने वाला था लेकिन येन-केन-प्रकारेण ये लोग इस झमेले से बच गए।

इन्दिरा जी के भक्तों ने सलाह दी कि कांग्रेसाध्यक्ष का पद भी बीबी जी को खुद ही संभालना चाहिये। क्योंकि आपसे बढ़कर योग्य नेता परमात्मा भी सृष्टि में कहीं भी नहीं है। परन्तु इन्दिरा जी ने यह कहकर निषेध किया कि लोग मुझ पर "व्यक्ति पूजा" का दोषारोपण करेंगे कि मैं सरकार और पार्टी दोनों पर प्रभुत्व रखती हूँ।

इन्दिरा जी के निषेध के पश्चात् कार्यकारिणी समिति के सदस्यों की आंखों के सामने घटाटोप अन्धेरा छा गया। जब आप नेतृत्व नहीं करेंगी तो देश की नैया बीच भँवर में डूब जायेगी। देश की नैया को उबारने के लिये आपको "मत्स्यावतार" लेना पड़ेगा।

कलिकलुष निस्तारिणी महिषासुर मर्दिनी भवभय-हारणी इन्दिरा जी ने "पावन वचन" का उद्घोष किया कि जो काम मैं नहीं कर सकती हूँ—वह काम करने के लिए आयकर चोरी में दस-वर्षीय अनुभव प्राप्त व्यक्ति जगजीवन बाबू कर सकेंगे। अतएव देश की नैया को भँवर से बचाने के लिये "मत्स्यावतार" के रूप में मैं उनको ही नामांकित करती हूँ। इस प्रकार जगजीवन बाबू नवगठित कांग्रेस के अध्यक्ष पद के लिए निर्वाचित हुए।

अन्तरिम अध्यक्ष "अंगरेजी भक्त" श्री सुब्रह्मण्यम जी अपना मुकुट उतार कर जबकि मत्स्यावतार बाबू जगजीवनराम की खोपड़ी पर रख देंगे तो वह अवसर

कांग्रेस के इतिहास में अभूतपूर्व होगा और स्वर्गस्थ महात्मा गान्धी अपनी इच्छा दूरी होते देख खिलखिला उठेंगे।

एक "संत" की दास्तान

संत फतहसिंह ने फिर धमकी दी है कि चण्डीगढ़ को यदि पंजाब में नहीं मिलाया गया तो मैं आग में छलांग लगा दूंगा। दिल्ली हायर सेकेण्डरी में जो लड़के फेल होते हैं वे कुतुबमीनार पर से कूद मरने की धमकी देते हैं, इसलिए ज्यों ही परीक्षाफल प्रकाशित होता है कि कुतुब की सीढ़ियों के दरवाजे बन्द कर दिये जाते हैं। संत फतहसिंह की धमकी पर भी सरकार को चाहिये कि पंजाब में लकड़ी, मिट्टी के तेल इत्यादि पर नियंत्रण लागू कर दे।

जैनमुनि सुशील कुमार ने संत जी को एक बार सलाह भी थी कि चण्डीगढ़ पंजाब में रहे या हरियाणा में—यह फैसला करना किसी "संत" महात्मा का काम नहीं है। यह तो राजनीतिज्ञों का काम है--साधु सन्तों का काम तो है परमात्मा में चित्त लगाना.........भजन पूजन इत्यादि।

सन्त फतहसिंह की सन्तचर्या वास्तव में सन्त चर्या नहीं, राजनीति चर्या है—यह ब्लैकमेल चर्या है। चण्डीगढ़, भाखड़ा नंगल दो—वरना आग में कूदता हूं—यह राजनीति भी नहीं—बालनीति है—मूढ़ नीति है।

जब शाह आयोग बैठा था तो संत जी फूले नहीं समाये थे। उन्होंने आशा लगाई थी कि आयोग वाले चांदी की थाली में चण्डीगढ़ परोस कर संत जी के आगे रख देंगे। आयोग के निर्णय ने संत जी की आशाओं पर पानी फेर दिया और वे आग में कूदने वाला नारा बुलन्द करने लगे।

यह जगजाहिर है कि एक बार पहले भी आपने कुण्ड खुदवाया था, लकड़ी, घी इत्यादि का इन्तजाम कर लिया था। लेकिन जब कूदने की बात आई तो तत्कालीन लोक सभाध्यक्ष सरदार हुकमसिंह दिल्ली से विमान द्वारा अमृतसर पहुँचे और आपकी जीवन रक्षा के लिए नाटक रचा था।

संत जी ने दुबारा जो आग में कूदने वाला शिगूफा छोड़ा है तो जरा देख लेना चाहिए कि आपकी जान बचाने वाला—कोई अभिनेता आगे पीछे है या नहीं?

श्री दर्शनसिंह फेरुमान को स्वर्ग सिधारे अभी थोड़े ही दिन बीते हैं। श्री फेरुमान "चण्डीगढ़ या मौत" की तख्ती गले में लटकाकर जब अनशन पर बैठे थे तो पंजाब में महाप्रलय की भविष्यवाणी की गई थी। श्री फेरुमान को चण्डीगढ़ नहीं मिला, मौत मिल गई और विस्मय की बात कि पंजाब में महाप्रलय भी नहीं आया। समाचारपत्रों ने लिखा कि फेरुमान ने "बहुत छोटे से निमित्त" के लिए आत्म-बलिदान दिया।

संत जी को पता होना चाहिये कि उनके आग में कूदने वाली धमकी से या वास्तविक रूप से कूद जाने पर भी सरकार या जनसाधारण-क्षेत्र में कोई बावेला मचने वाला नहीं। राजनीति में परास्त नेता और डाल से छूटा बन्दर अपयश का पात्र होता है। संत जी ने पहली बार जबकि आग में कूदने की धमकी दी थी और सरदार हुकुमसिंह से "नाटक" करवाकर अपना अस्तित्व बचाया था तभी से वे जनता की निगाहों से गिरे हुए हैं। पंजाब की जनता जब संत जी से "चण्डीगढ़ चण्डीगढ़" का तोतारटन्त सुनती है तो यह समझने में विलम्ब नहीं करती कि इस बार "नाटक" का दूसरा संस्करण प्रस्तुत किया जायेगा।

गुरु गोलवलकर जी ने एक बार संत के कारनामों पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि संतानुयायियों, सिक्खों को चाहिये कि वे अपने लिए पृथक् देश, प्रदेश की मांग न करें—वे हिन्दु समाज के अभिन्न अंग हैं। सवाल है कि सिक्ख अपने को हिन्दु कहें, आर्य कहें, ऋषि-मुनियों के उपदेशानुयायी कहें तो संत-असंत सरीखे नेताओं की नेतागिरी नहीं चलती। ये तथाकथित नेता अपनी टांग पुजवाने के लिए अपनी अलग डफली बजाते हैं।

अभी दिल्ली में सिक्खिस्तान का पोस्टर छपा था। समाचारपत्रों ने इसे कुछेक सिक्खों की नेतागिरी बनाये रखने की चाल कही और इस तरह की अशोभन प्रवृत्ति की निन्दा की। वृहत्तर आर्यराष्ट्र से टूट कर ऐसे-वैसे अनेक मत-सम्प्रदाय निकल पड़े हैं—जैसे कि बर-

साती मेंढ़क—कोई सिक्ख है तो कोई हरिजन—कोई अनुसूचित जाति या"""" । ये लोग अपनी अपनी डफली पर अपना अलग-अलग राग अलापते हैं और दब्बू सरकार को और दबाते हैं।

ज्ञानसिंह राड़ेवाला ने बताया कि संत फतहसिंह ने पाकिस्तानी राष्ट्रपति के एक संदेहवाहक बूरे खांसे बातचीत की है। शायद प्रोग्राम बनाया जा रहा हो कि अकाली राजनीति ने केन्द्रीय सरकार को झुकाने में कदाचित् असफलता प्राप्त की तो पाकिस्तान से सहायता व सहयोग लिया जा सकता है।

भारत-पाक युद्ध के दौरान जबकि अमृतसर में आपात स्थिति जारी थी—संत फतहसिंह अकाली आन्दोलन चला रहे थे। विदेशी आक्रमण की दशा में उनसे जबकि आन्दोलन स्थगित करने को कहा गया तो वे बोले कि अकाली आन्दोलन भारत-पाक युद्ध से ज्यादा महत्वपूर्ण है। तब राजनीतिज्ञों ने इन्हें पाकिस्तानपरास्त बताया था। संत जी सिक्ख बनने से पूर्व मुसलमान थे—उनके हृदय के एक कोने में मुसलमानों के लिये "मुलायम स्थान" है—इसे अतिशयोक्ति नहीं कहनी चाहिये।

इस दृष्टान्त को उद्धृत करने में हमारा अभिप्राय है कि संत जी अपनी ओछी राजनीतिक विजय के लिए पाकिस्तान की तरफ भी हाथ बढ़ाने को तैयार हैं। देशाभिमानी सिक्खों ने इस रहस्य को समझा है और यदाकदा उनकी भर्त्सना भी की है।

आग में कूदने वाली घोषणा ने पंजाब की राजनीति को अधिक प्रभावित नहीं किया है। यदि प्रभावित किया भी हो तो हरियाणा हर मुकाबले को तैयार है। जब पंजाब में "बन्ध" का आयोजन होता है तो हरियाणा में भी। जब पंजाब में "प्रदर्शन" होता है तो हरियाणा में भी। पंजाब के नेता जिन शब्दों में धमकी देते हैं—उन्हीं शब्दों का उच्चारण हरियाणा वाले करते हैं। पंजाब की ईंट का जवाब पत्थर से देने के लिये हरियाणा आज सक्षम है।

इस अवस्थिति में केन्द्रीय सरकार को चाहिये कि संत की ओछी राजनीति, विदेशपरस्ती को समझे और देशहित में कोई ठोस घोषणा करें। बजट सत्र से पूर्व चण्डीगढ़ का निर्णय करने की प्रतिज्ञा लेकर श्री चौहान ने बुद्धिमत्ता का परिचय दिया है। उनकी बुद्धिमत्ता पर उस दिन चार चान्द लगेंगे जबकि वे शाह आयोग की पुनरावृत्ति के व्याज से चण्डीगढ़ को हरियाणा में सम्मिलित कर देंगे।
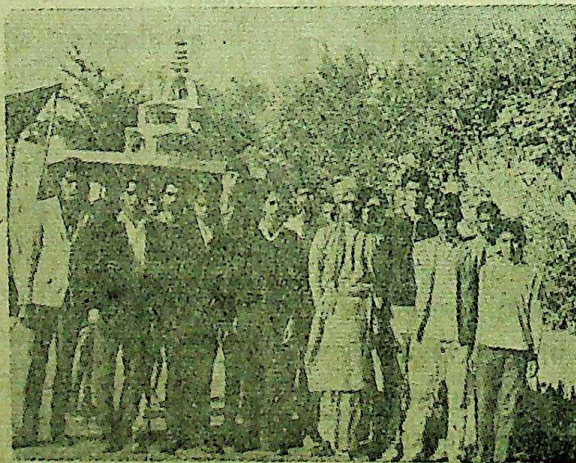
दयानन्द कालेज के छात्रों के साथ प्रो० श्यामराव पीछे टूटी हुई यज्ञशाला का गुम्बज।

हैदराबाद स्वातन्त्र्य संग्राम के अमर सेनानी

कर्मवीर भाई वंशीलाल जी

● बहिन सुनीति जी, प्रधाना, नगर आर्यसमाज, हैदराबाद

जब हैदराबाद में निजामशाही के अत्याचार अपनी चरम सीमा पर पहुँच रहे थे ! दिन दहाड़े माँ और बहनों का शील भंग किया जाता था ! भारतीय संस्कृति को विनष्ट कर इस्लामी राष्ट्र के स्वप्न लिए जा रहे थे ! निरीह हिन्दू जनता पर नाना प्रकार के अत्याचार एवं शोषण का चक्र चल रहा था ! हैदराबाद के सवा करोड़ हिन्दुओं पर अल्पसंख्यक ५० लाख मुसलमानों का आश्रय ले तात्कालिक शासक निजाम ने जो दमन-चक्र चलाया आज उसकी कल्पना भी सहज नहीं ! हत्या और लूट साधारण सी बात मानी जाती थी ! हिन्दू जनता निस्तेज और स्वाभिमान रहित हो चुकी थी। ऐसे समय हैदराबाद स्टेट की जनता में नवजीवन का संचार करने वाले, उनमें अपनी संस्कृति व सभ्यता के गौरव की याद दिला स्वाभिमान जगाने वाले यदि कोई महारथी सामने आये तो वे थे दो भाई—स्व० भाई वंशीलाल और उनके अनुज अमर शहीद भाई श्यामलाल जी !

विभाजन

भारतीय प्रान्तों के पुनर्गठन के कारण हैदराबाद तीन भागों में विभक्त हो गया और हैदराबाद का रोमाञ्चकारी इतिहास भी बिखर गया। हैदराबाद के ये सेनानी और शहीद परिवार नए प्रान्तों में उपेक्षा के पात्र हो गए ! किन्तु आज भी हैदराबाद स्टेट के पुराने क्षेत्रों की जनता दोनों भाइयों की गौरव गाथा बड़े श्रद्धा व स्नेह से सुनाती है और उनकी प्रशंसा कर अघाती नहीं ! इन दोनों भाइयों का इतिहास ही वास्तव में हैदराबाद स्टेट की स्वतन्त्रता का इतिहास है ! अपनी चमकती हुई वकालत को ठुकरा कर दोनों भाइयों ने जनसेवा का एवं आत्मोत्सर्ग का नया प्रतिमान स्थापित किया है ! यहाँ हम ज्येष्ठ भ्राता स्व० भाई वंशीलाल का जीवन परिचय प्रस्तुत कर रहे है।

बीसवीं सदी के प्रथम चरण में भाई वंशीलाल जी का जन्म एक धर्मनिष्ठ परिवार में भालकी ग्राम में हुआ ! आपके पिता श्री भोलाशंकर निकट के माणिकनगर ग्राम के प्रसिद्ध माणिक प्रभु के देवालय में पुजारी का काम करते थे ! भाई जी बाल्यकाल से अत्यन्त प्रतिभावान थे ! श्रेणी में सदा अग्रणी किन्तु स्वास्थ्य में दुर्बल। भाई जी जब एक बार ग्राम की बावड़ी में अपने साथियों के साथ तैर रहे थे तो अचानक बावड़ी का स्वामी आ पहुँचा और पेय जल की बावड़ी में तैरने वाले बच्चों की पिटाई करनी चाही। सब बच्चे तो येन-केन-प्रकारेण बच निकले पर भाई जी को उसने पकड़ लिया। पर भाई जी बचपन से ही नीतिज्ञ व चतुर थे वे तनिक भी घबराये नहीं और क्षण भर में उन्होंने सांप-सांप कह कर शोर मचाया। बावड़ी का मालिक घबरा कर जैसे ही ध्यान-भ्रष्ट हुआ भाई जी नौ-दो-ग्यारह हो गए !

सत्याग्रही

अपने मामा श्री गोकुल प्रसाद जी के सान्निध्य से भाई जी ने स्वामी दयानन्द जी का नाम सुना और उनके हृदय में स्वामी जी के प्रति अगाध श्रद्धा उत्पन्न हो गई ! एक दिन जब कट्टर मूर्तिपूजक पिता ने मूर्तिपूजा के दुश्मन स्वामी दयानन्द के जयकार का उद्घोष सुना तो उनके क्रोध का पारावार न रहा। उन्होंने मारे क्रोध के जूता उठा कर पुत्र की पीठ पर जड़ दिया। सत्याग्रही वंशी भाई ने इसे अपने इष्ट गुरु का अपमान समझ कर जूते की हर मार के साथ उद्घोष लगाना प्रारम्भ कर दिया ! पिता क्रोध में अन्धे हो चुके थे। पुत्र बराबर उद्घोष लगा

रहा था। माता छट्टोभबाई ने जब पिता-पुत्र की इस होड़ को देखा तो वह बीच में पड़ी और अपने लाड़ले बेटे की रक्षा की! अन्त में पिता ने दिन भर वंशी भाई को घर में न आने दिया। वंशी भाई ने हार न मानी और न ही आश्वासन दिया कि वे अपने प्रिय स्वामी की जयकार नहीं करेंगे! यह था बचपन से भाई जी का सत्याग्रही रूप। उनकी यह कट्टरता उनके सारे जीवन में स्पष्ट झलकती रही! निश्चय के दृढ़ कट्टर सिद्धान्तवादी भाई जी रंच मात्र भी सिद्धान्तों की अवहेलना सह नहीं सकते थे!

संस्कृति का प्रभाव

अपने मामा-मामी के संपत्ति सम्बन्धवादी उत्तराधिकार के वाद-विवाद को सुनकर भाई जी ने माता की अनुमति से गृह-त्याग कर दिया! मामा वंशीभाई को संपत्ति का उत्तराधिकारी बनाना चाहते थे पर मामी अपनी सन्तान प्राप्ति की इच्छा के प्रति आशान्वित थीं! भाई जी ने गृह त्याग किया और हैदराबाद नगर पहुँच गए जहाँ आपने वकालत तक की पढ़ाई पूर्ण की! अपने श्रम से हैदराबाद के प्रसिद्ध मूसा नदी पर बने पुराने पुल पर मिट्टी के तेल की जलाई जाने वाली कंदील के प्रकाश में उनका अध्ययन-क्रम चलता रहा। भाई जी धार्मिक कठिनाई में तथा पूरे पैर तक फैलाकर न सो सकने वाले अंधेरे कमरे में रहते थे! यहाँ पर इनके अनेक मुसलमान सहपाठी भी मित्र बन गये। वे प्रायः हिन्दू संस्कृति की रीति-परम्पराओं का उपहास किया करते थे और मूर्ति-पूजा आदि के बारे में वे सुन्दर तर्क दिया करते थे। धीरे-धीरे भाई जी के मन पर उनकी बातों का प्रभाव पड़ने लगा और यहाँ तक कि खुले मस्तिष्क से चिन्तन करने वाले भाई जी ने मुसलमान बनना स्वीकार कर लिया!

भाई जी के हृदय में अन्तर्द्वन्द्व मचा और इसी स्थिति में भाई जी के कहीं से सत्यार्थप्रकाश हाथ पड़ गया जिसने दिग्भ्रमित वंशी भाई के जीवन में प्रकाश स्तंभ का कार्य किया! वह इस ग्रन्थ के जीवन के अन्तिम क्षण तक भी साथ ही रखते रहे! अपनी कानूनी वकालत छोड़कर वे आर्यसमाज के वैदिक धर्म के सिद्धान्तों के वकील बन गए!

भाई जी वकालत पास कर ग्राम हल्लीखेड़ पहुँचे जहाँ भाई जी ने अपना निवास क्षेत्र बनाया और वकालत प्रारम्भ की। धीरे-धीरे भाई जी की वकालत इतनी चमक उठी कि वे हाईकोर्ट के वकील बने! भाई जी के अकाट्य तर्कों से न्यायाधीश अत्यन्त प्रभावित हो जाते थे! आर्थिक दृष्टि से अब भाई जी संपन्न थे। धीरे-धीरे यहीं से भाई जी ने आर्यसमाज का कार्य प्रारंभ किया। उस समय पूरे हैदराबाद स्टेट में तीन आर्यसमाजें थी! पहली रेसीडेन्सी क्षेत्र में जहाँ का क्षेत्र अंग्रेज रेजिडेण्ट के अधीन था। दूसरी समाज बोलरम थी जो अंग्रेजों का अपनी सेना-नियन्त्रित क्षेत्र था और तीसरी समाज की धारूर में। इन तीन समाजों के अलावा निजाम हैदराबाद के अधिकार क्षेत्र में आर्यसमाज की स्थापना हल्लीखेड़ में भाई जी ने की। आर्यसमाज की स्थापना के दिन स्वयं भाई जी ने हारमोनियम पर गाना गाया। बिना शासक की आज्ञा के हारमोनियम बजाना एक बड़ा अपराध माना जाता था! इसी दिन शाम में सैंकड़ों धर्मान्ध मुसलमानों ने भाई जी का घर घेर लिया। अल्ला हो अकबर के नारों से ग्राम गूँजने लगा! ये आक्रमणकारी भाई जी की हत्या कर देने के लिए घर को घेरे बैठे थे! अकेले भाई जी ने भी बंदूकें भर कर घर के दरवाजे पर रक्खीं ताकि घर में कोई घुस न पाये! उधर जब मामा माणिक प्रसाद जी को पता चला कि भाई जी के घर को सैंकड़ों मुसलमान घेरे खड़े हैं तो वे नंगी तलवार लेकर बाहर निकल पड़े। वे ग्राम के प्रतिष्ठित प्रभावशाली व्यक्ति थे और साहस के धनी थे! उन्होंने ललकारते हुए कहा कि अरे! मेरे बच्चे से क्या लड़ते हो! आओ मुझ से लड़ो! इस ललकार को सुन सारे के सारे यवन भाग खड़े हुए! भाई जी की हिम्मत और अधिक बढ़ गई! अपने साथियों के साथ घोड़ों पर सवार शस्त्रास्त्र से लैस भाई जी की टोली निकली और ग्राम में जन-जागृति का कार्य प्रारम्भ हुआ! ३ आर्यसमाजों से बढ़ाकर भाई वंशीलाल जी ने ५०० आर्यसमाजों का जाल फैला दिया। भाई जी के कन्धे में यज्ञोपवीत के समान रिवाल्वर का पट्टा हर समय शोभा पाता था जिसमें छः कारतूसी रिवाल्वर भरी रहती थी।

अभिनव विवाह

२५ वर्ष की अवस्था के बाद मित्रों के आग्रह पर

भाई जी ने विवाह कर लेने का निश्चय किया ! हैदराबाद स्टेट में यह वैदिक पद्धति से होने वाला पहला विवाह था जिसमें समस्त सामाजिक कुरीतियों को तोड़ कर विशुद्ध वैदिक पद्धति का श्रीगणेश किया ! आपने विवाह कराने के लिए अपने अनुज श्याम भाई को लाहौर भेजा कि वे वहाँ से किसी पुरोहित को ले आएँ जो वदिक पद्धति से विवाह कराए ! दुर्भाग्य से श्याम भाई पुरोहित को लेकर समय पर न पहुँच सके ! परिणामतः भाई जी ने अपना विवाह अपने ही पौरोहित्य में कर लेने का निश्चय किया और विश्व के इतिहास में संभवतः यह पहली घटना होगी जब पूरी पद्धति के अनुसार स्वयं मन्त्रोच्चारण कर भाई जी ने अपना विवाह स्वयं कर लिया। विवाह के समय वधू पक्ष वालों ने अपनी पौराणिक पद्धति चलाने का प्रयास किया पर भाई जी के सिद्धान्तों के कट्टर ! परिणामतः दोनों पक्षों में गम्भीर मतभेद खड़ा हो गया। स्थिति यहाँ तक विस्फोटक हो गई कि दोनों ओर से रिवाल्वरें बन्दूकें निकल आई। भाई जी हिमालय के समान दृढ़ ! खून बह जाए परवाह नहीं पर कोई पौराणिक विधि संभव नहीं !

यह है भाई जी के जीवन की रोमांचकारी कथा। शस्त्रास्त्रों के बीच खेलने वाले अपनी संस्कृति व समाज के लिए मर-मिटने वाले ये बहादुर जिनका मुकाबला कौन कर सकता था। कितनी बार आर्य सम्मेलनों में अनेक उत्सवों पर रास्ते से जाते ये दुश्मनों से घिर जाते और अपने शौर्य, साहस एवं बुद्धि चातुर्य से सदा विजयी होते और शत्रुओं को नीचा देखना होता !

धर्मयुद्ध

हल्लीखेड में हिन्दुओं की पालकी निकल रही थी ! पुलिस ने पालकी को आकर रोक दिया ! भाई जी ने अधिकारियों को बहुतेरा समझाया पर वे एक न माने। पालकी सड़क पर रुक गई। भाई जी ने सरकार के खिलाफ छोटी अदालत में प्रार्थना-पत्र दिया और अपने धार्मिक अधिकारों की स्वतन्त्रता की मांगकी लेकिन प्रार्थना अस्वीकार हो गई ! हैदराबाद जाकर हाईकोर्ट से अनुमति प्राप्त की गई। जब तक यह स्वीकृति मिली नहीं तब तक पालकी सड़क पर वहीं स्थित रही। लोगों ने भी सड़क पर डेरा डाले रक्खा और फिर अनुमति कोर्ट द्वारा प्राप्त कर दुगुने उत्साह से पालकी निकाली गई ! धार्मिक स्वतन्त्रता के लिए मन्दिरों और गुरुद्वारों के लिए भाई जी ने अनेक संघर्ष किए।

निलंगा ग्राम की आर्यसमाज को स्थानीय तहसीलदार ने बुनियाद सहित रातों-रात उखड़वाकर धाराशायी कर दिया। भाई जी को खबर मिली। भाई जी तुरन्त पहुँचे। वस्तुस्थिति का अध्ययन करने के बाद तहसीलदार के विरुद्ध न्यायालय में अभियोग चला दिया ! परिणामतः तहसीलदार घबराया और उसने भाई जी को बुलवाया और बन्द कमरे में क्षमा मांग कर उसने आर्यसमाज के पूर्ववत् निर्माण के लिये पूरा धन दिया। आज भी आर्यसमाज निलंगे का भवन तहसीलदार के धन से बना भाई जी के हिम्मत व साहस की गौरव-गाथा सुना रहा है। ज्ञात रहे कि उस युग में तहसीलदार के विरुद्ध कर्म करना साधारण बात नहीं थी। तहसीलदार की स्थिति उसके क्षेत्र में राजा के समान मानी जाती थी। आर्यसमाज की स्थापना पर जब निजाम सरकार ने आपत्ति तो भाई जी ने इस आदेश को न्यायालय में चुनौती दी और यह सिद्ध किया कि आर्यसमाज मन्दिरों एवं मस्जिदों के समान आर्यों के पूजागृह हैं। परिणामतः पूरे स्टेट भर में निर्भीकता के साथ आर्यसमाजों की स्थापनाएँ होने लगीं। पूरे देश भर में आर्यसमाजों का जो रूप था हैदराबाद की परिस्थितियों के कारण यहाँ के आर्यसमाज आन्दोलन का भिन्न रूप था ! जहाँ दक्षिण भारत में आर्यसमाज और सनातन धर्म के मध्य जो एक पारस्परिक सौहार्द का अभाव था हैदराबाद स्टेट की स्थिति उससे सदा भिन्न रही। यद्यपि हैदराबाद नगर में ही आर्यसमाज का प्रसिद्ध शास्त्रार्थ श्री माधवाचारी के साथ महारथी पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार ने किया था ! फिर भी यहाँ एकमात्र आर्यसमाज की ही गूँज सर्वत्र दिखाई देती थी ! कांग्रेस का नाम भी यहां अधिकांश जनता न जानती थी। यहाँ के आर्यसमाज का रूप राजनीति मिश्रित सामाजिक स्वरूप था ! भाई जी के भाषण बड़े ही ओजस्वी होते थे ! आपके भाषणों से प्रभावित होकर अनेक राजकीय अधिकारी भी आपकी प्रशंसा करते थे ! भाई जी के भाषणों में हजारों की भीड़ होती थी ! ये

दोनों भाई हैदराबाद में महात्मा गांधी के समान लोकप्रिय थे ! सारे हिन्दू समाज को एक ही ओ३म् ध्वज के नीचे लाकर खड़े करने का महान् कार्य स्वयं भाई जी की अपार कार्यकुशलता का परिचायक था !

आर्यसमाज के बदले हुए संगठन को देखकर आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना हुई ! हैदराबाद की इस बैठक में न्यायमूर्ति श्री केशवराव जी प्रधान व आर्य-समाज सुलतान बाजार के तत्कालीन मंत्री श्री चन्दूलाल जी मंत्री निर्वाचित हुए । पर शीघ्र ही यह अनुभव किया जाने लगा कि सभा को गति प्रदान करने की भाई जी से प्रार्थना की जाए कि वे सभा के दायित्व को भी संभाले ! परिणामत: आर्य प्रतिनिधि सभा का कार्यालय उदगीर में लाया गया जहाँ भाई जी इन दिनों रहा करते थे ! इस प्रकार यदि यह कहा जाए कि आर्यसमाज के सामूहिक शक्ति का प्रथम विकास केन्द्र उदगीर ग्राम ही रहा तो अतिशयोक्ति न होगी !

लोकप्रिय महान् नेता के रूप में—

भाई जी अपनी अपार योग्यता और अपने सत्यमय जीवन के प्रभाव से अत्यन्त लोकप्रिय हो गए ! उदगीर नगर के मार्ग से जब ये दोनों भाई गुजरते तो आदर व स्नेह से नगर के सारे व्यापारी अपनी-अपनी दुकानों पर खड़े हो जाते और अपना स्नेह इन कर्मवीर धर्मवीरों पर प्रकट करते ! सुबह से गई रात तक भाई जी से मिलने वालों का ताँता लगा रहता था । वे जिस ग्राम में पहुँचते सारे ग्रामवासी उमड़ पड़ते और बहुत दूर से ही उनकी अगवानी करते !

इन दोनों भाइयों के नाम से शासक दल थर्राता था क्योंकि जनता के हृदयों पर इन भाइयों का साम्राज्य था !

उत्सवों की धूम

हैदराबाद स्टेट में वर्ष भर आर्यसमाज के उत्सवों की धूम मची रहती थी ! इन उत्सवों में पचास-पचास हजार की उपस्थिति का होना एक साधारण बात थी ! जहाँ कहीं उत्सव होते दूर-दूर ग्रामों से टोली की टोली आती । उत्तर भारत के शास्त्रार्थ महारथी रामचन्द्र जी देहलवी, पं० बुद्धदेव विद्यालंकार, श्री पं० चन्द्रभानु जी, न जाने कितने विद्वानों का स्टेट की निजाम सरकार ने हैदराबाद में प्रवेश निषेध कर दिया ! पर आर्यसमाज का कारवां चलता ही गया—बढ़ता ही गया ! एक समय ऐसा आया धब कि निजाम सरकार ने इन दोनों भाइयों का हत्या के षड्यन्त्र रचे । छोटे भाई श्यामलाल जी कोबीदर के जेल में हलाहल विष का प्याला देकर समाप्त कर दिया गया । पर भाई बंशीलाल जी अपनी नीतिमत्त से सदा बचते ही रहे ! अनेक बार घातक आक्रमण हुए ! हत्यारे अपने दुष्कृत्य में सफल न हुए और उनके भेद खुल गए । ये एक ब्रहत् इतिहास की सामग्री है जिसे इस छोटे लेख में आवद्ध नहीं किया जा सकता !

जिस समय भाई श्यामलाल जी उदगीर के षड्यन्त्र पूर्ण उपद्रव में गिरफ्तार किए गए उन दिनों भाई जी देहली गए हुए थे ! सार्वदेशिक सभा देहली की बैठक में भाई जी का हैदराबाद में मानवीय अधिकारों की रक्षा के लिए सत्याग्रह करने का प्रस्ताव था ! दो घंटे के विचार विनिमय के बाद भी जब सभा के सदस्य सत्याग्रह प्रस्ताव पर सहमत न हुए—

विरोध का स्वर

तब भाई जी ने सभा में खड़े होकर घोषणा की कि यदि सार्वदेशिक सभा हमारे प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करती तो निश्चय जानिए अकेला बंशीलाल हैदराबाद में राज्य की जनता के संगठित कर सत्याग्रह करेगा ! हम अपने ऊपर होने वाले दुर्धर्ष अत्याचारों का निराकरण स्वयं करेंगे ! भाई जी द्वारा की गई इस घोषणा और दृष्टता को देख सहस्त्रों को हैदाराबाद में सत्याग्रह संग्राम का निर्णय करना पड़ा । श्रद्धेय स्वामी स्वतन्त्रतानन्द जी महाराज, श्री गंगाप्रसाद उपाध्या एवं भाई बंशीलाल जी ने शोलापुर में डेरा डाला—जहाँ सर्वप्रथम श्री लोक नायक अणे की अध्यक्षता में सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन का आयोजन हुआ जो लोग उस सम्मेलन में सम्मिलित हुए उन सबने मुक्त कण्ठ से भाई जी की आर्य कुशलता और नेतृत्व क्षमता की भूरि-भूरि प्रशंसा की—और इसके बाद ही भाई श्यामलाल जी के बलिदान की ज्योति ने आर्य सत्याग्रह संग्राम का बिगुल बज उठा—यह भाई जी की अग्नि परीक्षा थी । परन्तु १९३८ का यह सत्या-

यह आर्यसमाज के सौ वर्ष के इतिहास की सर्वाधिक गौरवशाली घटना है जिसने देश विदेश में आर्यसमाज कीर्ति को चार चाँद लगा दिए ! महात्मा गांधी के विरोध के बावजूद भी आर्यसमाज ने इसी अवसर पर यह सिद्ध कर दिखाया कि गांधी जी के नेतृत्व में अखिल भारतीय कांग्रेस से भी अधिक शक्तिशाली संगठन आर्य-समाज का है जो बड़ी शक्ति से टकराने का साहस रखता है। इस सत्याग्रह ने भाई जी की कीर्ति को अखिल भारतीय ख्याति का बना दिया ! पर भाई जी यश और कीर्ति में पीछे कभी न पड़े। उन्हें यह सब गौरव उनकी अपार कर्मनिष्ठा के कारण सहज ही उपलब्ध हुए ! सत्याग्रह विजय के उपरान्त जब भाई जी ने हैदराबाद का भ्रमण किया तो स्थान-स्थान पर लाखों की संख्या में जनता ने सत्याग्रह संग्राम के इस महान सेनानी का अभूतपूर्व स्वागत किया स्थान-स्थान पर लोगों ने नोटों की मालाओं से भाई जी को लाद दिया। हजारों की संख्या में प्राप्त धनराशि से भाई जी ने एक विशाल प्रेस खरीद कर आर्य प्रतिनिधि सभा को भेंट कर दिया। दुर्भाग्य से सभा आगे चलकर उसे संभाल न सकी और उस प्रेस का विक्रय कर दिया गया। भाई जी इस घटना से बहुत दुःखी हुए।

त्याग एवं तपस्या

भाई जी अत्यन्त निस्पृह व्यक्ति थे। सत्याग्रह संग्राम में लाखों रुपया बच गया। सार्वदेशिक सभा ने निर्णय किया कि इस धन का जहाँ कहीं विनिमय होगा उससे पूर्व भाई जी की स्वीकृति भी आवश्यक होगी। चाहे भाई जी प्रतिनिधि सभा के अधिकारी रहें न रहें। परन्तु भाई जी ने सारा धन सार्वदेविक को सौंप कर स्पष्ट कर दिया कि अब आप इस प्रयोग में स्वतन्त्र रहेंगे ! भाई जी जहाँ सामाजिक क्षेत्र में महान् नेता रहे वहाँ उनका व्यक्तिगत जीवन भी अत्यन्त महान् था। वे सादगी पसन्द थे। दो धोती और दो कुर्ते से अधिक कपड़े भाई जी ने कभी अपने पास न रक्खे ! वे अपने वस्त्र सदा अपने हाथों से धोते थे ! उनकी दिनचर्या प्रातः चार बजे से ही प्रारम्भ हो जाती थी। भाई जी के हाथों से धुले हुए वस्त्र सदा इतने शुभ्र होते थे कि लोग भाई जी से वस्त्र धोने की पद्धति सीखा करते थे। भाई जी ने सदा तृतीय श्रेणी में ही यात्रा की। वे जनता के धन के एक धेले का भी अपव्यय न होने देते थे ! छोटा कद छरहरा स्फूर्ति भरा शरीर, विशाल मस्तक और प्रभावोत्पदक दाढ़ी में भाई जी का व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक व प्रभावशाली था। भाई जी की वाणी में ओज था ! उनकी गर्जना सिंह के समान भयाकुल होती थी। लोग उन्हें छत्रपति शिवाजी का अवतार कह कर उनकी प्रशंसा करते थे ! सिद्धान्तों के कट्टर प्रतिपालक उसकी सीमा से बाहर न वे जाते थे और न जाना उन्हें सह्य था। वे महर्षि दयानन्द के एक निष्ठ प्रशंसक व अनुयायी थे। आर्यसमाज के माध्यम से वे राजनीति क्षेत्र में भी कार्य करने के प्रतिपादक थे। वे राजार्य सभा के लिए प्रयत्नशील भी रहे। वे जीवित रहते तो हैदराबाद का भविष्य ही कुछ और होता। वे आर्य चक्रवर्ती राज्य की कल्पना को हैदराबाद स्टेट से ही साकार बनाने का हौसला रखते थे।

प्रचारनिष्ठा

छूत-छात, जात-पात के अभिशाप को मिटाने का क्रियात्मक प्रयत्न भाई जी ने किया। सहभोजों का आयोजन, जात-पात छोड़ कर विवाह कराना आदि कार्य भाई जी के रचनात्मक प्रचार के अंग थे। शंका समाधान का कार्य स्टेट भर में करना अकेले भाई जी का कार्य था। उनके अकाट्य तर्क में उनकी वकीली प्रतिभा स्पष्ट चमकती थी। प्रश्नकर्ता हृदय से उसे अंगीकार कर लेता था। प्रतिनिधि सभा के साप्ताहिक पत्र के ग्राहक बनाने का भाई जी का विचित्र तरीका था। उनका भोजन अत्यन्त सीमित व सात्विक था। बल्कि वे तराजू में तोल कर निश्चित मात्रा में भोजन करने के पक्षपाती थे। परन्तु जब कोई व्यक्ति उन्हें अधिक भोजन करने में शर्त लगाना चाहता तो भाई जी की शर्त होती कि—हारने पर उसे, अखबार के दस ग्राहक बनाने पड़ेंगे। चलते, फिरते, उठते बैठते सिद्धान्तों की चर्चा, व्यक्तिगत जीवन की समस्याओं के समाधान, युवकों से आत्मीयता की भावना, भाई जी के दैनिक कार्यक्रमों के अंग थे। जीवन निर्माण पर वे विशेष बल देते थे। इसी उद्देश्य से भाई जी ने एक आदर्श गुरुकुल की स्थापना की थी।

आदर्श गुरुकुल

भाई जी ने देश में गुरुकुलों में राजसी वैभव देखे तो उनका हृदय खिन्न हो उठा और वे जीवन के उत्तरार्द्ध में इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि—जब तक हम बचपन से ही बच्चों को एक विशेष ढांचे में नहीं ढालेंगे तब तक राष्ट्र व जाति का निर्माण नहीं हो सकता। इसी उद्देश्य से भाई जी ने अपने अनुज श्याम भाई की स्मृति में श्यामार्य गुरुकुल नामक एक आर्ष पाठविधि के गुरुकुल की स्थापना की। एक निर्झर के तट पर चारों ओर सुरम्य घाटियों से भरे स्थान पर पर्णकुटियों में भाई जी का गुरुकुल चलता था। ब्रह्मचारी बिना सिले वस्त्र धारण करते थे। परस्पर संस्कृत में ही संभाषण करना अनिवार्य नियम था। यही कारण है कि आज भी भाई जी के परिवार के सदस्य संस्कृत में सहज भाषण कर लेते हैं। भोजन एक दम सात्विक, नमक मिर्च और खटाई सर्वथा त्याज्य थी। गुरुकुल की पाठविधि महर्षि दयानन्द प्रतिपादित थी। यही कारण था कि आचार्य भगवानदेव जी भाई जी के अभिन्न साथी बन गए थे।

इस गुरुकुल में भाई जी के सपनों का भारत बन रहा था पर कराल काल ने भाई जी के साथ ही उनके स्वप्नों को भी आत्मसात् कर लिया। इस प्रकार भाई जी ने अपने जीवन में राष्ट्र की जो महान सेवा की है वह अविस्मरणीय है—

इस प्रकार भाई जी ने अपने जीवन से हैदराबाद में आर्य जीवन का निर्माण किया। वे जैसा करते थे वसा ही उनका आचरण होता था। यही कारण था वे तत्कालीन हैदराबाद के सर्वोच्च नेता रहे। हिन्दी प्रचार, दैनिक पत्र का संचालन जात-पात तोड़ कर विवाह करने का आन्दोलन, आर्यसमाज का प्रचार, आर्षपाठ विधि का प्रचलन, हैदराबाद का स्वतन्त्रता-संग्राम, ये भाई जी के इतने उज्ज्वल कार्य हैं जो अपने आप में महान हैं।

●

कुछ रोचक संस्मरण

बात उन दिनों की है जब हैदराबाद में सत्याग्रह चल रहा था। हैदराबाद स्टेट में भाई जी पर वारण्ट था। भाईजी शोलापुर सीमा स्थित बम्बई प्रान्त में सत्याग्रह का संचालन कर रहे थे। अचानक गुलबर्गा नगर में एक व्यक्ति को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया और घोषित कर दिया कि भाई वंशीलाल जी गिरफ्तार कर लिए गए हैं। उस व्यक्ति ने जब वंशीलाल न होने की बात कही तो उसकी खूब पिटाई की पुलिस के इस भ्रम का कारण उस व्यक्ति कीदाढी बनी। उसने पुलिस के हाथों छूटते ही अपनी दाढी साफ करा दी।

× × ×

लातूर आर्यसमाज का उत्सव हो रहा था। टीन की छत पर मुसलमान गुंडे चढ़ गए। दरवाजा बाहर से बन्द कर दिया और ऊपर से लगे पत्थर फेंकने। चारों ओर भय का वातावरण छा गया। माताएँ घबराने लगीं। यहाँ तक की गुंडों के साथ निजाम पुलिस भी इस गुण्डागर्दी में साथ थी। किसी को कुछ न सूझा, पर भाई जी ने टीन के एक में से चुपचाप रिवाल्वर से गोली दागी! पाशा पलट गया। गुंडे भाग खड़े हुए। दरवाजा खुल गया। पर गोली से आहत होने वाला था एक पुलिस सिपाही जो धड़ाक से वहीं टीन पर गिर पड़ा था। पुलिस ने बड़ी खोज की कि गोली किसने चलाई पर वह थाह न पा सकी? क्योंकि गोली चलाने की बात का पता एक दो के सिवाय किसी को न था।

तहसीलदार और जूते

भाई जी के छोटे साले घनश्याम प्रसाद साइकिल पर जा रहे थे। सामने एक बैलगाड़ी पर्दे लगी हुई जा रही थी। रास्ता छोटा था सायंकाल को गाड़ी से आगे निकालने की धुन में बैलगाड़ी के पीछे के भाग को हाथ से पकड़ना पड़ा। जैसे ही घनश्याम प्रसाद जी ने हाथ से पकड़ा भीतर परिवार के साथ बैठे आदमी ने इन्हें दो चार गाली दे डालीं। घनश्याम प्रसाद जी ने आव देखा न ताव—साइकिल खड़ा करके उस व्यक्ति की जूतों से खूब मरमत कर दी। तब पत चला कि मार खाने वाले व्यक्ति तहसीलदार है। फिर क्या था घनश्याम प्रसाद जी घबराए और सायकिल भगाकर औरस ग्राम से उदगीर पहुंचे। भाई जी से घटना का विवरण दिया। श्री भाई जी तहसीलदार के गाली देने के विरुद्ध मानहानि

की नोटिस दे डाली। तहसीलदार ने घबराकर माफी मांगी और अपने जूते खाने की घटना की चर्चा न करने की बात कही।

चोर और भाई जी

एक दिन रात गुरुकुल में चोरी हो गई बड़े बड़े बरतन चोरी गए। ऐसी घटनाएँ प्रायः होती रहती थीं। दूसरे दिन सुबह भाई जी को दूसरे ग्राम ट्रेन से जाना था। भाई जी टिकट लेकर जैसे ही डिब्बे में चढ़ रहे थे। एक व्यक्ति बरतन लेकर छिपने का प्रयत्न करने लगा। भाई जी ने तुरन्त उसे पकड़ लिया और गुरुकुल वापस ले आए सर पर सोरे बरतन रक्खे वह हट्टा कट्टा चोर पहुंचा। हमने कहा—पिता जी आप इसे जंगल से अकेल कैसे ले आए तो उन्होंने कहा बेटा चोर के पैर नहीं होते और डरपोक होता है। बाद में भाई जी ने उसे छोड़ दिया। किसी प्रकार की प्रताड़ना भीं हमें न करने दी।

जब आँखों में पानी आ गया

सब ब्रह्मचारियों के बीच वृक्ष के नीचे बैठे सैद्धान्तिक चर्चा चल रही थी। ग्रीष्म ऋतु की भरी दोपहरी। मार्ग पर तपी हुई धूल में पैर रखना कठिन था। लकड़ी का गट्ठा लिए एक १६ वर्षीय किशोरी बाला नंगे पांव चली जा रही थी। तब डबडबाई आँखों से भाई जी ने कहा—मेरे देश पर गरीबी का कितना बड़ा अभिशाप है।

छलांग या मृत्यु

उन दिनों भाई जी हैदराबाद नगर के बेगमपेट स्थान पर रहते थे। बेगमपेट से शहर आने के लिए रेल की पटरी का रास्ता निकट पड़ता था। भाई दो अन्य मित्रों के साथ शहर आ रहे थे। जसे ही खुले पुल पर पहुंचे रेलगाड़ी दिखाई दी। भाई जी ने तुरन्त कहा छलांग लगाओ और तालाब में तीनों वस्त्रों सहित कूद पड़े और सुरक्षित घर लौटे।

जब बेहोश हो गए

साकेत ग्राम के उत्सव पर जाना था। स्टेशन पर एक बढिया घोड़ा भाई जी के लिए लाया गया था। ग्राम कोई बीस मील पर था। भाई जी के साथ एक छोटा बक्स भी था। वैसे तो भाई जी सधे हुए घुड़सवार थे और धूर्त से धूर्त शरारती घोड़े पर बैठने में बड़ा आनन्द लेते थे। भाई जी घोड़े पर अभी बैठे ही थे कि सेवक से कहा कि वह छोटा बक्स भी दे दो। बक्स अभी थाम भी न पाए थे, घोड़ा बिदक गया। हाथ में लगाम भी न थाम पाए थे। भाई जी गिर पड़े किन्तु दुर्भाग्य से उनका एक पैर फंस गया था घोड़ा बराबर भाग रहा था। इस स्थिति से वह और भी चौंक कर भागने लगा। अचानक ईश्वर की कृपा हुई कि फँसा पैर निकल गया। पर भाई जी बेहोश हो चुके थे। छाती और हाथ में सख्त चोटें लग चुकी थीं। ग्राम में घोड़े के अकेला आया देख गांव वाले घबरा कर बैलगाड़ी लेकर पहुंचे। सेवक तब तक भाई जी की देख भाल करता रहा। ग्राम वासी खिन्न मन हो भाई जी को ले गए और उपचार किया।

घिसट-घिसट कर धर्म-प्रचार

रक्त विकृत हो जाने के कारण भाई जी के दोनों पैरों पर कोई १५-२० बालतोड़ के भयंकर फोड़े हो गए थे! पर भाई जी घिसट-घिसट कर अपना प्रचार-कार्य करते रहे। कभी उन्होंने कोई कार्यक्रम रद्द नहीं किया। दोनों पैरों में पट्टी बाँधे वे बराबर ट्रेन या बैलगाड़ी से यात्रा करते और अपने कार्य में जुटे रहते।

कलेक्टर साहब का जनाजा

पठान वेशधारी भाई जी!

जब एक पठान रोहिला गुरुकुल के भीतर आता दिखाई दिया तो हमने समझा कि कोई गुप्तचर होगा। पर निकट जा बात करने पर पता चला कि ये तो भाई जी ही हैं। गुलबर्गा में आर्यमहासम्मेलन पर मुसलमानों ने आक्रमण कर दिया। आर्य युवकों को भाई जी ने जाने की गड़बड़ न करने का सलाह दी। फिर भी जो कोई स्टेशन पहुंचें उनकी खूब पिटाई मुसलमान गुण्डों ने की। इधर सभी आर्य नेताओं को पुलिस अधिकारी ने बातचीत के लिए बुलावा भेजा। भाई जी वहाँ जाकर बातचीत के पक्ष में न थे। क्योंकि यदि एक साथ सभी गिरपतार कर लिया गया तो सम्मेलन के सभी आर्य अनाथ हो जाते!

पर दूसरों की सम्मति रही की जाकर बात करना अनुचित न होगा। सब की इच्छा देख भाई जी ने भी चलना स्वीकार कर लिया। इतने में ही एक सज्जन ने दूध का गिलास लाकर थमा दिया कि आपने कल से भोजन तक नहीं किया कम से कम दूध तो लेते जाइए। अन्य लोग आगे की मोटर में निकल गए। दूध बहुत गर्म था। भाई जी रह गए। जितने नेता वहां पहुँचे उन्हें पुलिस ने लाठी से खूब पीटा। भाई जी की रक्षा भगवान ने की। तीन दिन तक भाई जी आर्य जनता को अकेले संभालते रहे। और बड़ी-बढ़ी टोलियों में स्टेशन पहुँचने की व्यवस्था की। भाई जी की गिरफ्तारी के लिए पुलिस बेचैन थी। राजपूत वाड़े में भाई जी छिपे रहे। चौथे दिन पठानों की वेशभूषा में बन्द पर्दे के ताँगे में निकले जब तांगे वालों से पुलिस ने पूछा—कौन है टांगे में तो कह दिया कि कलेक्टर साहब का जनाजा है। फिर किस की मजाल थी आगे बात करे। धीरे से उतर कर भाई जी डिब्बे में ऊपर की बर्थ पर लेट गए और जब गाड़ी ने स्टेट की सीमा लांघ ली तब भाई जी निश्चिन्त हुए।

पिस्तौल चोरी गया

भाई जी को अपना ६ कारतूसी पिस्तौल बड़ा प्यारा था। भाई जी के इस पिस्तौल पर निकट के व्यक्तियों की नजर पड़ी और मौका पाकर उन्होंने उसे चुरा लिया। भाई जी को सन्देह हुआ कि हो न हो इन्होंने ही चुराया है। पर पता कैसे चलाया जाए। भाई जी ने पिस्तौल चोरी जाने की बात को अप्रकट ही रक्खा। और अपने एक व्यक्ति को इस साजिश का पता लगाने छोड़ दिया। इस व्यक्ति ने संदिग्ध व्यक्तियों से अपने सम्बन्ध घनिष्ट किये। होटल, सिनेमा आदि का कार्यक्रम बना। भाई जी के विरुद्ध खूब बातें बनाईं। ४-६ दिन के बाद उसने कहा कि कोई ऐसी योजना बनाओ कि भाई जी का पिस्तौल चुराया जाए। उन लोगों ने छूटते ही कहा तुम तो सोच ही रहे हो—हमने तो वह गायब कर ही दिया है। उसे बेचने की योजना बनी। दूसरे दिन संध्या समय उसे खेत में से खोदकर लाने की बात तय हुई। इधर भाई जी ने पुलिस को खबर कर संध्या समय रंगे हाथों पिस्तौल बरामद कर लिया।

गोली से मृत्यु

भाई जी की साली का पुत्र अपने मौसा और मौसी को अपनी शादी का निमंत्रण देने स्वयं आया। भाई जी एक दिन जब बाहर गए थे और रिवाल्वर चमड़े के झोलेमें खूंटी पर लटक रहा था। उस युवक ने देखने की जिज्ञासा से रिवाल्वर निकाला। उसे पता न था कि वह भरा हुआ है। जैसे ही खटका दबाया, गोली कलेजे को चीरकर बाहर हो गई। वह तत्काल मर गया। भाई जी कुछ ही देर में घर पहुँचे तब तक यह दुर्घटना हो चुकी थी। भाई जी हृदय से दुःखी हुये पर विधि का विधान ऐसा ही होता है।

बम्बई के वेटिंग रूम में भाई जी

भाई जी बम्बई स्टेशन पर किराए के एक रूम में ठहरे थे। इस कमरे के बाहर ही बरामदे में हैदराबाद के कुछ राजस्थानी भाई आपस में बात कर रहे थे। चर्चा हैदराबाद की रजाकारी स्थिति पर ही हो रही थी। बात-बात में वे कहने लगे कि आर्यसमाज कुछ न कुछ अवश्य करेगा। भाई बंशीलाल जी के रहते हमें क्या खतरा हो सकता। इस बात को सुनकर भाई अत्यन्त विचलित हो उठे और इस दिशा में भाई जी ने कहीं अधिक कार्य करना आरम्भ किया।

सरदार पटेल और भाई जी

उपरोक्त घटना के तुरन्त बाद ही भाई जी ने सरदार पटेल से संपर्क स्थापित किया। सरदार भी हैदराबाद की घटनाओं से चिन्तित थे। सरदार ने प्रातः अन्धेरे में चार बजे अपनी कोठी पर मिलने का समय दिया। भाई जी, पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार और रामचन्द्र जी तीनों एक साथ गए। उस दिन सरदार ने तीन घंटेतक हैदराबाद की स्थिति पर विचार विनिमय किया। अनेक तथ्य सरदार को सप्रमाण प्रस्तुत किए। उस समय भाई जी ने सरदार से कहा था—यदि भारतीय सीमा के १० मील के क्षेत्र में हमें शस्त्र रखने की अनुमति दी जाए तो हम स्वयं रजाकारों से निपट लेंगे। बाद में सरदार ने एक तार द्वारा भाई जी को धन्यवाद दिया था।

हमारे भाई वंशीलाल

● पं० नरेन्द्र
प्रधान—आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य-दक्षिण हैदराबाद

स्व० भाई वंशीलाल जी की जब भी याद आती है तो आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण का इतिहास आंखों के सामने प्रस्तुत होता है। इस इतिहास के निर्माण में भाई जी का विशेष योग रहा है। उनके अपूर्व त्याग कर्तव्यनिष्ठा एवं बलिदान की कहानी हमें इस इतिहास में देखने को मिलेगी। उनका आदर्शमय जीवन आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रकाश स्तम्भ का कार्य करता रहेगा। निश्चय ही वह एक आदर्श नेता थे।

भाई वंशीलाल जी आर्य समाज के सजग प्रहरी थे। हर संकट एवं विषम परिस्थितियों में भी आपने उनका डट कर सामना किया और समाज की प्रतिष्ठा को सदा बनाए रखा। निजाम के शासन काल में निरीह हिन्दु जनता पर जो अत्याचार किये गए थे उनका चित्रण करना अत्यन्त कठिन है। ऐसे भयंकर वातावरण में भाई जी की सूझ-बूझ और साहस का ही परिणाम था कि उन्होंने अपने साथियों को लेकर अनेक मोर्चे बनाये और धार्मिक स्वतन्त्रता के युद्ध में सक्रिय भाग लिया। धर्म एवं वंश के प्रति उनकी जो निष्ठा थी उनका परिचय हमें उन व्यक्तियों के द्वारा मिलता है जो उनसे प्रभावित हो कर आर्य समाज में प्रविष्ट हुए थे। १९३८ के उतरार्ध में आर्यन कांफ्रेंस ने शोलापूर में आर्य समाज की मांगों की पूर्ति के लिए जो निर्णय लिए थे उसने समस्त देश को चौकन्ना कर दिया। आर्यन कांफ्रेंस के संचालन में जब सत्याग्रह आरम्भ हुआ उस समय हैदराबाद राज्य में भाई वंशीलाल जी ने तूफानी दौरों द्वारा अपनी संगठन शक्ति का अदभुत परिचय दिया। उनके इन दौरों से जन जीवन एवं राज्य में जो जागृति देखी गयी, सम्भवतः आर्य समाज के इतिहास में वह प्रथम अवसर था।

उन्हीं दिनों भाई के अनुज भाई श्याम लाल जी का निधन हुआ। जिन दिनों बीदर के कारावास में श्याम लाल जी को बड़ी निर्दयता के साथ कई कई दिन तक शारारिक यातनाएं दे कर भोजन में विष दिया गया था, उन दिनों भाई वंशीलाल जी शोलापुर में थे। अपने अनुज की मृत्यु से भाई जी को जो दुःख हुआ उससे भी अधिक दुःख आर्य समाज को हुआ। भाई श्यामलाल जी की मृत्यु आर्य समाज के लिए वज्रपात था।

निजाम के शासन काल में आर्य समाज पर अनेक अत्याचार किये गए। आर्य समाज की गतिविधियों पर प्रतिबन्ध लगाये गये। साम्प्रदायिक दंगों की योजनाओं द्वारा आर्य समाज के आन्दोलन को कुचलने का पूरा प्रयास किया गया। भाई वंशीलाल जी का ही सामर्थ्य था कि राज्य के जिस कोने में भी ऐसे षड़यन्त्र रचे जाते, वे उनको विफल करने में अपनी पूरी शक्ति लगा देते थे।

मुझे भाई जी के साथ कई वर्षों तक आर्य समाज के कार्यों एवं आन्दोलन में भाग लेने का अवसर प्राप्त हुआ है। अतः उनकी हर बात मुझे आज भी याद आती है। भाई जी का अद्भुत जीवन मेरी आँखों के सामने आज भी प्रत्यक्ष सा होता है। उनके जीवन की सभी घटनाओं को इन पंक्तियों में प्रस्तुत करना सर्वथा कठिन है। वे एक कर्मठ नेता, आर्य समाज के वीर सेनानी, जन साधारण के प्रेरक और निर्भिक वक्ता थे। आर्य समाज हल्लीखेड़ की ओर से कर्मवीर भाई वंशीलाल जी का स्मृति समारोह मनाया जा रहा है। इस अवसर पर अपनी भावपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए हमें उनके जीवन चरित्र से यह शिक्षा लेनी चाहिए कि सच्ची लगन, साहस और निर्भीकता से किस प्रकार देश, धर्म और समाज की सुरक्षा की जा सकती है।

भाई वंशीलाल जी समाज के उन महान् व्यक्तियों में से है जिनकी स्मृति हृदय पटल पर चिरस्थायी रहती है, जो कभी भुलाई नहीं जा सकती। आज हमें भाई जी जैसे वीर सेनानियों की नितान्त आवश्यकता है।

हम आग लगा देंगे

मानव ने पत्थर पूजे पर
मानव को कब पहचान सका ?
यद्यपि इसकी ही छाया से
पा रंग रूप भगवान सका ।।१।।
मानव फुटपाथों पर सोते,
भगवान भवन में झूले पर।
मानव-सुत पत्तल चाट रहे,
नैवेद्य वहां थाली भर-भर ।।२।।
जा रही हजारों की लाशें,
बेकफन, यहां शमशानों में,
शृंगार नहीं पूरा होता,
उनका रेशम के थानों में ।।३।।
पत्थर नहलाये जाते हैं,
दुर्भाग्य, दूध-घी से, जल से।
भूखी भिखमंगिन का बच्चा,
दो बूंद न पी पाया कल से ।।४।।
बच्चों के मुख से छीन-छीन
जिन ने पंडों के पेट भरे,
उनसे यदि खुश होगा ईश्वर,
ईश्वर वह नहीं पिशाच अरे ।।५।।
इन पंडों का पाखंड ही यदि
ईश्वर को ठेकेदारी है।
यदि यहां विश्व की सत्ता है,
यह डायन है, हत्यारी है ।।६।।
तुम पाखंडों के पेट भरो
हम तुम को मुक्ति दिला देंगे।
जो ऐसा कहते हैं सुन लो,
हम इनमें आग लगा देंगे ।।७।।
सोने चांदी के ढेरों पर,
जिनने भगवान बनाये हैं।
जिनने मानव को चूस-चूस
कंकाल समान बनाए हैं ।।८।।
यदि वही धर्म के नेता हैं
धिक्कार रहा उनको यह स्वर !
यदि वही धर्म के हैं धुरीण,
लानत है उन पर, है ठोकर ।।९।।
इंसान उठो, फेंको पत्थर
मानव का जब पूजन होगा।
पंडों के पेट नहीं होंगे,
भूखों का भोग भजन होगा ।।१०।।
इंसान न होगा गटरों में,
मठ में पाषाण नहीं होगा।
अब स्वर्ग-नरक के ठेकों का
सौदा नीलाम नहीं होगा ।।११।।
पूजित होगा इंसान यहां,
पूजित, पाषाण नहीं होगा।
मानव के शव पर मन्दिर का
निर्माण-विधान नहीं होगा ।।१२।।
सोने-चांदी के आभूषण
पत्थर का साज नहीं होंगे।
घंटों में, शंख-निनादों में,
हम बे आवाज नहीं होंगे ।।१३।।
मेरी आवाज पुकारेगी
मानव-मानव के कानों में।
हम आग लगा देंगे बढ़कर
इन शोषण के भगवानों में ।।१४।।
हम भू पर स्वर्ग उतारेंगे
अपने दो-चार इशारों में;
तुम देखो तो, कितना बल है,
इन क्रांतिपूर्ण उद्गारों में ।।१५।।

कुमारी सुषमा आर्य

सैनिक : युद्ध के मोर्चे से

स्यालकोट क्षेत्र में अग्रिम मोर्चों में से एक जवान ने यमुनानगर (पंजाब) में अपनी पत्नी के नाम एक पत्र में लिखा है :—

"पहले साल भर में सिर्फ एक बार हम लोग दीवाली मनाते थे लेकिन यहाँ हम मोर्चों पर बमों के विस्फोट से रोज ही दीवाली मना रहे हैं।"

●

लाहौर क्षेत्र से अपने एक मित्र के नाम लिखे पत्र में हमारे एक जवान ने मित्र द्वारा पूछे गए प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया है :—

"तुमने पूछा है कि यहां मुझे कोई कष्ट तो नहीं है—सा तुम्हारे प्रश्न का उत्तर यह है कि यहां रात को गीदड़ और गधे बहुत बोलते हैं तो उस समय ऐसा मालूम होता है कि ये जानवर पाकिस्तानियों के जीवन-मरण के साथी बने हुए हैं—और अब ये पाकिस्तानियों की 'बेवफाई' पर रो रहे हैं।"

●

मेजर आशाराम त्यागी ने लाहौर क्षेत्र में डोगराई की ऐतिहासिक लड़ाई जीतने का श्रेय प्राप्त और जब किया बुरी तरह से घायल होकर वे अस्पताल पहुँचाए गए तो वीरगति पाने से पहले अपने माता-पिता के नाम उन्होंने संदेश दिया :—

"मेरे मां-बाप से कह देना कि वे मेरा शव अच्छी तरह से उलट-पुलट कर देख लें कि उनके बेटे ने दुश्मन की गोलियां छाती पर खाई हैं, पीठ पर नहीं।"

खून के आखिरी कतरे तक

"अल्ला-तआला के फजल-ओ-करम से मैंने अपने वतन के लिए अपने फर्ज को ठीक तौर से निभाया है और अल्ला-तआला से दुआ है कि आगे भी अपने खून के आखिरी कतरे तक अपने मुल्क की आजादी को आंच न आने दूं।"

ये उद्गार हैं उस 'भारतीय अय्यूब' के जिसने 'पाकिस्तानी-अय्यूब' के दांत खट्टे कर दिए।

बा० स्क्वैड्रन १८ वीं कैवेलरी के नायब रिसालदार, ३० वर्षीय मुहम्मद अय्यूब खां ने जम्मू-स्यालकोट मोर्चे पर अकेले ही चार पाकिस्तानी टैंक नष्ट करके वीरता की अपनी महान् परम्परा को शृंगारित किया है। उसने शत्रु की गोलियों की तेज बौछार में एक के बाद एक, चार टैंक चकनाचूर कर दिए। शत्रु के एक टैंक पर आक्रमण करके उन्होंने चालकों को मौत के घाट उतार दिया। यह पाकिस्तान का एक अमरीकी टैंक था, जिस पर वे कूद कर चढ़ गए और इसका ढक्कन खोल कर भीतर बम फेंक दिया। इससे दो चालक मर गए और शेष जीवित व्यक्तियों के साथ वे टैंक को अपने क्षेत्र में ले आए। भारत के राष्ट्रपति ने उन्हें वीर चक्र से सम्मानित किया है। अपनी माता के नाम एक पत्र में मुहम्मद अय्यूब ने लिखा है, "मां, तेरा बेटा खैरियत से है। इसने अब तक तेरे दूध की लाज रखी है और आगे भी उम्मीद करता है कि लाज रखेगा।"

●

करजन वायली का वध

इण्डिया हाउस के कमरे में सावरकर के सम्मुख एक पंजाबी भारतीय युवक मदनलाल ढींगरा बैठा हुआ था। युवक ढींगरा पंजाब से अध्ययन के लिए इंग्लैंड आया था।

युवक ढींगरा ने सावरकर से, भारत की स्वाधीनता के महान् कार्य में योगदान देने की इच्छा प्रकट की। सावरकर ने कहा कि "क्रान्ति के मार्ग पर चलना अत्यन्त कठिन है। बड़े-बड़े उत्साही व्यक्ति इस मार्ग से फिसल जाते हैं। यदि तुम कुछ करना ही चाहते हो तो पहले परीक्षा दो।"

मदनलाल ढींगरा बलिपथ का वास्तविक राही था। अंग्रेजों द्वारा किये गये भारतीयों पर अत्याचारों ने उसके हृदय को झकझोर डाला था। वह अपना बलिदान देकर अत्याचारी अंग्रेजों से बदला लेने के लिए उतावला हो रहा था। उसने सावरकर से कहा कि मैं मातृभूमि

के चरणों में अपना सर्वस्व ही निछावर करना चाहता हूँ। आप मेरी कठोर से कठोर परीक्षा ले सकते हैं।

सावरकर ने ढींगरा को आजमाने के लिए उसकी हथेली में पेना सुआ घुसेड़ दिया। वीर ढींगरा के माथे पर शिकन तक न आई। वह धैर्य के साथ मुस्कराता रहा। सावरकर उसकी दृढ़ता से बड़े प्रभावित हुए और उसे अपने दल में सम्मिलित कर लिया।

१ जुलाई, १९०९ को लन्दन के इम्पीरियल इंस्टीट्यूट के जहांगीर हाल में मदनलाल ढींगरा ने सर करजन वायली नामक एक अंग्रेज अधिकारी को गोली का निशाना बना दिया। अंग्रेजों की भरी सभा में एक भारतीय हिन्दू युवक के इतने साहस को देखकर अंग्रेज कांप उठे। सभा में सन्नाटा छा गया और भगदड़ मच गई। मदनलाल ढींगरा को गिरफ्तार कर लिया गया।

अंग्रेज-भक्त कुछ भारतीयों ने अंग्रेजों की सहानुभूति अर्जित करने के हेतु, वायली की हत्या की निन्दा के लिए एक सार्वजनिक शोकसभा का आयोजन किया। सभा के अध्यक्ष सर आगा खां थे। सभा की समाप्ति पर सभाध्यक्ष आगाखां ने शोक प्रस्ताव पढ़ते हुए कहा—"इस हिंसक व निन्दनीय कार्य की सर्वसम्मिति से कड़ी भर्त्सना की जाती है।" इसी बीच सभा में सावरकर गरज उठे—"सर्वसम्मिति से नहीं, मैं इस प्रस्ताव का विरोध करता हूँ।"

उपस्थित व्यक्तियों ने देखा कि पीछे सावरकर निर्भीकतापूर्वक खड़े हुए इस प्रस्ताव का विरोध कर रहे हैं। अंग्रेज एक भारतीय युवक का इतना अनुपम साहस देखकर जल-भुन उठे। पामर नाम के एक अंग्रेज ने सावरकर पर घूंसा मारा। प्रत्युत्तर में सावरकर के एक भारतीय साथी ने अपनी छड़ी से उस अंग्रेज का सिर फोड़ दिया। शोक प्रस्ताव बीच में ही अधूरा रह गया।

ब्रिटिश सरकार को यह निश्चय हो गया कि मदनलाल ढींगरा ने सावरकर की प्रेरणा से ही वायली की हत्या की है।

सावरकर ने 'टाइम्स' में एक लेख लिखकर शोकसभा की वैधता को चुनौती देते हुए कहा—"जब तक मिस्टर ढींगरा के अभियोग का अदालती निर्णय न हो तब तक इस प्रकार का कोई भी प्रस्ताव पास करना गैरकानूनी है। इस प्रस्ताव से अभियोग पर प्रभाव पड़ सकता था, इसलिए मैंने इसका विरोध किया।" वीर सावरकर की तर्क बुद्धि को देखकर अंग्रेज चकित हो उठे।

मदनलाल ढींगरा पर मुकदमा चलाया गया तथा १६ अगस्त, सन् १९०९ को फांसी दे दी गई। फांसी से पूर्व शहीद ढींगरा ने अपना विस्तृत वक्तव्य देते हुए कहा—"एक हिन्दू के नाते मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि मेरे देश का अपमान करने वाले, हिन्दू युवकों को गोलियों से भूनने के जिम्मेवर अंग्रेज अधिकारी का वध करना अपना परम कर्तव्य समझता हूँ।"

तीनों भाई जेल में

सावरकर के क्रांतिकारी साहित्य ने विशेषकर महाराष्ट्र में युवकों में स्वाधीनता के लिए मर-मिटने की भावनाएँ जागृत कर दीं। पूना के जिलाधीश मिस्टर रैण्ड क क्रांतिकारी युवकों ने गोली से उड़ा दिया। स्थान-स्थान पर अंग्रेज अधिकारियों को समाप्त किया जाने लगा।

१९ अप्रैल, १९०९ को नासिक के जिलाधीश मि० जैक्सन को विदाई पार्टी दी जा रही थी। विजयानन्द नाट्य-गृह नासिक में मि० जैक्सन अपनी पत्नी के साथ आनन्दमग्न हुए नाटक देख रहे थे कि १६ वर्षीय बालक 'कान्हेरे' ने उनको गोली से भून डाला। क्रान्तिवीर कान्हेरे ने जिस पिस्तौल से जैक्सन की हत्या की थी। वह सावरकर द्वारा लन्दन से भेजी गई पिस्तौल थी। वीर कान्हेरे गीता हाथ में लेकर फांसी पर चढ़ गया। उधर ब्रिटिश अधिकारियों ने अनुमान लगाया कि भारत में जो अंग्रेज अधिकारियों की हत्या की जा रही है, उसका एकमात्र कारण सावरकर ही हैं। उन्हीं की प्रेरणा से ये घटनाएँ घटित हो रही हैं।

महाराष्ट्र सरकार ने सावरकर जी के बड़े भाई श्री गणेश दामोदर सावरकर को देशभक्तिपूर्ण साहित्य प्रकाशित कराने एवं क्रांतिकारियों का संगठन करने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया। उनका सम्बन्ध जैक्सन हत्याकांड से भी जोड़ा गया। अंग्रेज सरकार ने उन्हें २० वर्ष के लिए कारावास का दण्ड देकर जेल भेज दिया। महाराष्ट्र

सरकार ने सावरकर बन्धुओं की तमाम सम्पत्ति भी जब्त कर ली।

इंगलैंड में जब सावरकर ने अपने बड़े भाई की गिरफ्तारी तथा सम्पत्ति जब्त किए जाने का समाचार सुना तो उन्होंने अपने साथियों से मुस्करा कर कहा—"अभी तो कुछ नहीं हुआ, अभी तो स्वातन्त्र्य लक्ष्मी की आराधना के लिए हमें अपने प्राणों की बलि चढ़ानी है, सर्वस्व समर्पित करना है।"

कुछ ही दिनों बाद सावरकर को समाचार मिला कि उनके छोटे भाई श्री नारायण दामोदर सावरकर को भी अंग्रेज सरकार ने क्रान्तिकारी गतिविधियों के कारण गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया है। सावरकर ने उक्त समाचार सुनते ही गर्व से कहा—"चलो उससे ज्यादा गौरव की बात और क्या होगी कि हम तीनों भाई ही स्वातन्त्र्य लक्ष्मी की आराधना में लीन हैं।"

वीर सावरकर को अपने बड़े भाई की गिरफ्तारी के बाद पूज्य भाभी के शोक का आभास हुआ तथा चिन्ता हुई। उन्होंने अपनी भाभी को सांत्वना देने के लिए 'सांत्वना काव्य लिखा। उन्होंने लिखा :—

"तेरी जें गजेन्द्रशुंडेने उपलिटें,
श्री हरि साठी नेलें।
कमल फूल तें अमर ठेलें,
माक्ष दातें पावन॥"

अर्थात्—"अनेक पुष्प उत्पन्न होते हैं, और सूख जाते हैं, कोई उनकी गिनती नहीं करता। किन्तु हाथी की सूंड द्वारा भगवान के श्रीचरणों में समर्पित पुष्प अमर हो जाता है। उसी प्रकार हम तीनों भाई कमल पुष्प की तरह भगवान् श्री हरि (मातृभूमि) के चरणों में समर्पित होकर अमर हो जायेंगे।" वीर सावरकर के इस सांत्वना से न केवल उनके परिवार को अपितु अनेक क्रांतिकारी परिवार को भी सांत्वना मिली

जब सावरकर ने देखा कि उन तीनों को ही अण्डमान भेजकर सरकार उनके वंश का बीजनाश करना चाहती है तो उन्होंने अपनी भाभी को धैर्य देने के लिए लिखा :—

"देवकार्य के हेतु बीजनाश (निवंश) होने वाली वंशलता अमर हो जाती है और उसकी 'लोकहित परिमल' की सुगन्ध से समस्त दिशाएं व्याप्त हो जाती हैं।"

इंगलैंड में ब्रिटिश पुलिस अधिकारी सावरकर के पीछे हाथ धोकर पड़ गए। जब उनकी गतिविधियों पर पुलिस का नियन्त्रण हो गया तो मित्रों के आग्रह से वह पैरिस चले गए। लेकिन इंगलैंड के साथियों को खतरे में छोड़कर स्वयं सुरक्षित रहना उन्हें उचित न जंचा। श्याम जी कृष्ण वर्मा ने उन्हें पैरिस में ही रहने का सुझाव दिया, किन्तु वह इंगलैंड को रवाना हो गए। १३ मार्च, सन १९१० को लंदन के रेलवे स्टेशन पर पहुंचते ही उनको गिरफ्तार कर लिया गया। उन पर निम्नलिखित पांच अभियोग लगाए गए :—

१. भारत में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध षड्यन्त्र रचना;

२. ब्रिटिश सम्राट् को प्रभुसत्ता से वंचित कराने का प्रयास करना;

३. अवैध शस्त्रास्त्रों का संग्रह, वितरण करना तथा जैक्सन और करजन वायली की हत्या की प्रेरणा देना;

४. लन्दन में शस्त्रों का संग्रह तथा भारत को निर्यात;

५. भारत में जनवरी १९०६ से मार्च १९०६ तक तथा लन्दन में १९०८ से १९०९ तक राजद्रोहात्मक भाषण देना।

●

हुतात्मा मंगल पाण्डे

१८५७ की घटनाओं से सम्बन्धित जितने भी आश्चर्यजनक अध्याय रहे हैं, उनमें सबसे विशिष्ट अध्याय इतने बड़े व्यापक आन्दोलन की गोपनीयता थी। चतुर से चतुर अंग्रेज शासक इस आन्दोलन से इतने अनभिज्ञ थे कि गदर के एक वर्ष पश्चात् भी वे इसी बात पर बल देते रहे कि विद्रोह का कारण चर्बीयुक्त कारतूसों में निहित था। अब अंग्रेज इतिहासकार यह समझने लगे हैं कि कारतूसों की समस्या एक घटना मात्र थी। अब वे स्वीकार करने लगे हैं कि १८५७ का युद्ध भारतवासियों की देशभक्ति तथा धर्मप्रियता का प्रतिफल रहा है।

एक ओर क्रांति का गुप्त संगठन तैयार हो रहा था,

दूसरी ओर बंगाल में सैनिकों को विवश किया जा रहा था। उन्हीं दिनों ऐसा लगा कि उन्नीसवीं रेजीमेंट को इस बात के लिए सबसे पहले विवश किया जाएगा। यह फरवरी का महीना था और बंगाल की स्थिति सारी रेजीमेंटों में से चौंतीसवीं रेजीमेंट क्रान्ति के लिए सबसे अधिक तत्पर थी। यह रेजीमेंट बैरकपुर में थी। अली-नक्की खां कलकत्ते में थे। उन्होंने इस पूरी रेजीमेण्ट को क्रान्ति के लिए तैयार कर लिया था तथा शपथ दिला दी थी। उसी रेजीमेंट की कुछ कम्पनियों को उन्नीसवीं रेजीमेण्ट में भेजा गया था। फलतः उन्नीसवीं रेजीमेण्ट के लोगों को भी क्रान्ति के लिए प्रेरित कर लिया गया था। अंग्रेजों को इस तथ्य का कोई पता न था। उन्होंने चर्बीयुक्त कारतूसों के प्रयोग के लिए इस रेजीमेण्ट को विवश किया। रेजीमेण्ट ने ऐसे कारतूसों के उपयोग से इन्कार कर दिया तथा यह धमकी भी दी कि यदि उन्हें अधिक विवश किया गया तो वे म्यानों से तलवार खींच लेंगे। यह देखकर अंग्रेजों ने दमन की नीति पर चलना चाहा किन्तु उन्हें शीघ्र ही अपनी भूल मालूम हो गई और उन्होंने यह अपमान झेल लिया। इसके अतिरिक्त वे और कुछ कर भी न सकते थे, क्योंकि समस्त बंगाल में अंग्रेजी सेना की एक भी रेजीमेण्ट न थी। इसी बीच उन्होंने बर्मा से अंग्रेजी सेना बुलाने का निश्चय किया। साथ ही यह भी निर्णय किया कि देशी सेना को निरस्त्र कर दिया जाएगा तथा उनका विघटन भी कर दिया जाएगा। यह भी निश्चय हुआ कि यह सारे काम बैरकपुर में ही किये जायेंगे।

परन्तु बैरकपुर की रेजीमेण्ट हाथ पर हाथ धर कर बैठने वाली न थी। यद्यपि कुछ दूरदर्शी नेताओं की यह राय थी कि कोई भी कदम उठाने से पूर्व सभी लोगों से परामर्श लेना चाहिए। इसके लिए बैरकपुर से सम्बन्धित केन्द्रों को पत्र भी भेजे गए। परन्तु मंगल पांडे की तलवार म्यान में वापिस जाने को तैयार न थी। मंगल पांडे को उनका धर्म उनकी जान से भी प्रिय था। स्वाधीनता के विचार से उनके रक्त में बिजली दौड़ रही थी। वे रुकने के लिए तैयार न थे। जब उन्होंने सुना कि उनका नेता उनकी योजना से सहमत नहीं है तो उनकी देश-भक्ति उन्माद में बदल गई। उन्होंने अपनी बन्दूक भरी और परेड मैदान में जाकर ललकारा—"भाइयो, उठो! किस बात का विलम्ब है? मैं तुम्हें शपथ देता हूँ कि स्वाधीनता के लिए धूर्त शत्रु पर वार करो।" सर्जेन्ट मेजर ह्यूसन ने जब यह देखा तो उसने मंगल पांडे को बन्दी बना लेने की आज्ञा दी। किन्तु उनकी आज्ञा अनसुनी रह गई और मंगल पांडे की एक ही गोली ने ह्यूसन का काम तमाम कर दिया। ह्यूसन का शव धूल में औंधा पड़ा था कि लेफ्टीनेण्ट बाव्ह घोड़े पर चढ़ कर उधर आ पड़े। मंगल पांडे ने घोड़े का निशाना बनाया। घोड़ा अपने सवार को लेकर भूमि पर गिर पड़ा। इतने में बाव्ह उठा और पांडे जी पर गोली चला दी किन्तु उसका लक्ष्य चूक गया। उसने अपनी तलवार निकाली। उसकी तलवार म्यान से बाहर भी न निकल पाई थी कि मंगल पांडे ने उसे भी सदा की नींद सुला दिया। इतने में किसी और अंग्रेज ने उस पर वार करना चाहा, तब तक किसी भारतीय सिपाही ने बन्दूक के कुन्दे से उसका सिर चकनाचूर कर दिया। अब तो चारों तरफ से भारतीय सिपाहियों की आवाज आई, "मंगल पांडे को छूने का साहस मत करो।" तब तक घटना-स्थल पर कर्नल व्हीलर पहुँच चुके थे। उसने मंगल पांडे को बन्दी बनाने की आज्ञा दी। परन्तु नहीं में उत्तर मिला। यह सुनते ही कर्नल उल्टे पाँव वापस चल पड़ा तथा जनरल के बंगले में जा छिपा। मंगल पांडे के हाथ दो अंग्रेजों के रक्त से भरे थे। वे उच्च स्वर में निरन्तर ललकारते जा रहे थे। "भाइयो, हथियार उठा लो! समय आ गया है।" जनरल हिअरसी ने यह सब सुना और अंग्रेज सिपाहियों के साथ परेड में आ पहुँचा। मंगल पांडे ने उसको आते देखकर मन ही मन सोचा कि अब वे फिरंगियों के हाथों बन्दी बना लिए जायेंगे। इससे तो मर ही जाना अच्छा है। यह सोचकर उन्होंने बन्दूक का मुँह अपनी छाती की ओर कर लिया तथा क्षण-भर में उनका पवित्र शरीर धराशायी हो गया। अंग्रेजों ने उनको अस्पताल पहुँचाया। वे इस वीर की वीरता पर आश्चर्यचकित बने रहे। यह घटना २९ मार्च, १८५७ की है।

इसके पश्चात् मंगल पांडे के विरुद्ध सैनिक अदालत में मुकदमा चलाया गया। मुकदमे में उन्हें इस पर विवश किया गया कि वे अन्य विद्रोहियों के नाम बतायें। किन्तु

उस वीर युवक ने नाम को कलंकित न होने दिया। मंगल पांडे ने यह भी नहीं कहा कि जिन अफसरों पर उन्होंने गोली चलाई, उनसे किसी प्रकार का व्यक्तिगत विद्वेष न था। यदि मंगल पांडे ने व्यक्तिगत कारणों से ऐसा किया होता तो उनका नाम हुतात्माओं की सूची में न होता लेकिन मंगल पांडे ने जो कुछ किया उसके पीछे महान् देशभक्ति ही थी। अपने धर्म तथा देश को अपमानित देखते रहने से मरना ही श्रेयस्कर समझा। मंगल पांडे की वीरता तथा देश भक्ति की जितनी प्रशंसा की जाये उतनी ही कम है। सैनिक अदालत ने उनको मृत्यु-दण्ड का आदेश सुनाया और ८ अप्रैल को उन्हें यह दण्ड दे दिया गया।

मंगल पांडे के प्रति लोगों में अगाध श्रद्धा तथा प्रेम पैदा हो गया कि उन्हें फांसी पर चढ़ाने के लिए कोई जल्लाद भी तैयार न हो रहा था। अन्त में अंग्रेजों ने इस पाप कर्म के लिए कलकत्ते से चोर जल्लाद बुलाए। ८ अप्रैल को मंगल पांडे को प्रातःकाल ही फांसी के तख्ते पर ले जाया गया। उस समय उनके पांवों में अदम्य साहस तथा मस्तक गर्व से ऊँचा था। फांसी की रस्सी उनके गले में डाल दी गई, तब भी उन्होंने अंग्रेजों के पूछने पर यह उत्तर दिया कि वह किसी भी क्रान्तिकारी का नाम नहीं बताएगा। मंगल पांडे की महान् आत्मा शरीर त्याग कर अमर हो गई।

क्रान्तिकारी युद्ध की यह पहली मुठभेड़ थी और मंगल पांडे उसके प्रथम शहीद थे।

पवित्र धरती की सौगन्ध

लगभग अस्सी वर्षीय वृद्ध किसान अलबेलसिंह का चेहरा इस समय भी मेरी आंखों के सामने घूम रहा है। जिला भटिण्डा के उस छोटे से गांव में जब मैं गया तो ग्रामीणों ने मुझे बड़े गर्व के साथ यह घटना सुनाई थी।

अलबेलसिंह बहुत सवेरे ही अपने खेतों की ओर गया था। उसने देखा कि पैरासूट द्वारा पाकिस्तानी छाता सैनिक नीचे उतर रहा है। उसने अपने लड़के और पोते को आवाज दी, जो निकट ही खेतों में काम कर रहे थे। वह गरज कर बोला, "असां इस नायक दे पैर अपनी पवित्र धरती नाल नहीं लगन देने" (हम इस नापाक के पांव अपनी पवित्र धरती के साथ नहीं लगने देंगे)। सचमुच ही ८० वर्षीय अलबेलसिंह ने उस पाकिस्तानी छाता सैनिक को जमीन पर गिरने से पहले ही दबोच लिया और एक लाश की तरह अपने कन्धे पर उसे डालते हुए अपने लड़के एवं पोते को आज्ञा दी कि इसे पीठ पर लदे हुई स्थिति में ही लाठियों द्वारा कुचल दिया जाए।

कश्मीर भारत का अटूट अंग है

कश्मीर भारत का अविभाज्य एवं अटूट अंग है। कश्मीर प्रदेश में रहने वाले लोग भारतीय हैं। उनका दुःख-सुख हम सब का दुःख-सुख है। कश्मीर की कोई भी समस्या नहीं थी—और यदि कोई थी भी तो वह कब की सुलझ चुकी है।

यदि पाकिस्तानी रक्त पिपासु युद्धोन्मादियों को मालूम न हो तो उन्हें अब समझ लेना चाहिए कि केसर की इस घाटी पर लगी लुलचाई आंखें फोड़ देने को उत्सुक, वजीर मुहम्मद सचेत है, दयाल, हमीद, भूपेन्द्र और रणवीर जैसे करोड़ों रणबांकुरे अपने 'स्वर्ग' के प्रहरी हैं। उनके फौलादी कदम मुजफ्फराबाद और उससे आगे वहां तक बढ़ने के लिए बेचैन हैं, जहां तक हमारी धरती है। हम पाक-भूमि नहीं चाहते। लेकिन यदि पाकिस्तान ने अपनी दृष्टि इस तरफ उठाई तो हम देखेंगे कि कौन-सी ताकत मां भारती के वीर पुत्रों को उसके नापाक इरादों को धूल में मिलाने से रोक सकती है।

रामरेखा धाम मेले में ५४ ईसाईयों की शुद्धि

दिनांक २१-११-६९ को कार्तिक पूर्णिमा के पवित्र शुभ अवसर पर रामरेखा धाम में प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष भी मेला में लाखों की संख्या में नर-नारी एकत्रित हुए थे। भारतीयकरण सभा की ओर से यहां शुद्धि समारोह का कार्य सम्पन्न हुआ। गुरुकुल के ब्रह्मचारी गण प्रचारक श्री प्रणव प्रकाश मुंडा एवं श्रीयुत स्वामी त्यागानन्द जी उक्त धार्मिक स्थान पर शुद्धि और प्रचारार्थ उपस्थित थे। राँची से पं० गोविन्द प्रसाद विद्यावारिधि जो, पं० देशपाल जी दीक्षित उपस्थित थे।

वैदिक यज्ञ विधानानुसार उन ५४ वनवासी जनों को उद्धार किया गया वे पुनः सनातन वैदिक धर्म में दीक्षित हुए। स्वामी त्यागानन्द जी सरस्वती के पौरोहित्य में यह सब कार्य सम्पन्न किया गया।

स्मरण रहे कि इसी धाम पर पिछले वर्ष स्वामी ब्रह्मानन्द जी सरस्वती की अध्यक्षता में शुद्धि समारोह सम्पन्न हुआ था।

मेजर भूपेन्द्रसिंह : राष्ट्र के गौरव

स्यालकोट क्षेत्र में १८ सितम्बर को पाक-सेना के साथ घमासान लड़ाई लड़ने के बाद जब मेजर भूपेन्द्रसिंह मोर्चे से लौ–, तो उनके कमाडिंग-आफिसर ने कहा कि अगले रोज मेजर अपनी यूनिट के साथ मोर्चे पर जायेंगे। किन्तु मेजर भूपेन्द्र को यह स्वीकार नहीं था। उन्होंने आग्रह किया कि अगले रोज भी उन्हीं को मोर्चे पर भेजा जाए।

इस प्रकार अगले रोज भी मेजर भूपेन्द्रसिह ने ही अपने टेंक दस्ते की कमान की। यह १६ सितम्बर, १९६५ का दिन था, जब कि स्यालकोट क्षेत्र में टेंकों की भीषण एवं ऐतिहासिक लड़ाई लड़ी गई। इस लड़ाई में मेजर भूपेन्द्र सिंह ने अद्वितीय वीरता के जौहर दिखाए।

लड़ाई अभी शुरू ही हुई थी कि उन्होंने अपने रणकौशल एवं अदम्य साहस से शत्रु के सात पैटन टेंक बिलकुल नाकारा कर दिए। उनके पीछे १४ और पाकिस्तानी टेंकों का दस्ता आ रहा था। उन पाकिस्तानी फौजियों ने जब अपने सात पैटन टेंक पलक झपते ही पाश-पाश होते देखे तो भयभीत हो भाग खड़े हुए। इससे पहले ही मेजर भूपेन्द्र के दस्ते ने तोपों का मुंह उनकी तरफ मोड़ दिया था, लेकिन तोप का एक भी गोला व्यर्थ में ही नष्ट करने की जरूरत उन्होंने नहीं समझी। इन १४ पाकिस्तानी टंकों पर भी बिलकुल ठीक हालत में कब्जा कर लिया गया।

इस ऐतिहासिक विजय के कुछ क्षण बाद ही पाकिस्तानी हवाई जहाजों ने हवाई हमला कर दिया। अपने जिस टेंक में मेजर भूपेन्द्रसिंह खड़े थे, उस पर ऊपर से एक मिसाइल आ गिरा और तुरन्त ही टेंक को आग लग गई। मेजर भूपेन्द्र छलांग लगा कर जलते हुए टेंक से बाहर कूद गए। इस समय तक उनके कोई चोट नहीं आई थी।

तभी उनके कानों में अपने उन जवानों की आवाज सुनाई पड़ी, जो जल रहे टेंक के भीतर थे और जिनके बाहर आ पाने की सम्भावना नहीं थी। मेजर भूपेन्द्र जी यह सोच भी नहीं सके कि उनके बहादुर जवान यूं बेबस होकर जल जाएंगे। तुरन्त ही वह उधर लपके और जलते हुए टेंक पर जा चढ़े। अपनी पूरी ताकत से पहले उन्होंने एक जवान को टेंक में से खींच कर बाहर फेंक

दिया और इसके बाद आग की लपटों से खेलते हुए उन्होंने अपने बाकी दोनों जवानों को भी बाहर निकाल लिया। अब सिर्फ एक जवान टैंक में रह गया था। मेजर भूपेन्द्र की वर्दी जलकर राख हो गई थी, चेहरा और शरीर झुलस गया था, कई जगह घाव हो गए थे और उन में से खून रिस रहा था। किन्तु जल रहे टैंक में अपने चौथे और आखिरी जवान को बाहर निकालने को वह बेचैन नजर आ रहे थे।

चौथे जवान को जब वह निकालने लगे तो दुर्भाग्य से उस जवान की पेटी टैंक के किसी हुक में फंस गई। वह अपना पूरा जोर लगा रहे थे और इसी खींचातानी में उस जवान की पेटी टूट गई। एक झटके के साथ जवान टैंक के भीतर गिरकर, आग में जीवित ही, झुलस गया और मेजर भूपेन्द्र टैंक से बाहर की ओर नीचे जा गिरे। बुरी तरह से घायल हो जाने के बावजूद, उन्होंने अपने जवान की रक्षा करने में सारी शक्ति व्यय कर दी। लेकिन वे उसे बचा न सके।

मेजर भूपेन्द्र को हवाई जहाज द्वारा पहले पठान कोट तथा फिर लाया गया तथा उपचार के लिए 'विलिंग्डन अस्पताल में भी रखा गया। उनका सारा शरीर झुलस चुका था और स्थिति गम्भीर होती जा रही थी। ●

आर्य-प्रचारकों का संगठन बनेगा !

(पण्डित बुद्धदेव जी विद्यालंकार)

स्व० स्वामी समर्पणानन्द जी सरस्वती के प्रथम बलिदान दिवस माघ बदी १२ तदनुसार ३ फरवरी १९७० को उनकी पावन स्मृति में आर्य जगत् की शिथिलता को दूर करने तथा एक अत्यन्त ओजस्वी कार्यक्रम आर्य जनता के सामने रखने की दृष्टि से एक विशाल आर्यप्रचारक-संघ का निर्माण होगा। इस सम्मेलन में आर्य जगत् के प्रसिद्ध भजनोपदेशक, उपदेशक, लेखक, सम्पादक तथा संन्यासी भाग लेंगे।

मन्त्री
सार्वदेशिक आर्ययुवक परिषद्

१५ मई से २५ मई तक डी० ए० वी० कालेज करनाल (हरयाणा) में
आर्य जगत् का एक विशाल एवं ऐतिहासिक

आर्य-युवक-शिविर

लगेगा। इसकी पूर्व सूचना से देश के कोने में (विशेषकर मराठावाड़ा, राजस्थान, पंजाब और हरयाणा) युवक बड़ी उत्सुकता से इस शिविर की की प्रतीक्षा कर रहे हैं और आशा है कि ५०० से अधिक चुने हुए नौजवान इस दस दिवसीय शिविर में भाग लेंगे। शिविर का प्रशिक्षण-कार्यक्रम बहुत ऊंचे स्तर से विद्वानों द्वारा होगा और वैदिक राजनीति, वैदिक अर्थनीति आदि से सम्बन्धित महत्वपूर्ण गोष्ठियां होंगी ! शिविर की वेशभूषा, शुल्क तथा सम्पूर्ण कार्यक्रम की रूपरेखा आदि के बारे में राजधर्म में सूचना आती रहेगी।

लेखकों से

राजधर्म (पाक्षिक) आर्यराष्ट्र की स्थापना के लिये अग्रसर एक क्रान्तिकारी पत्रिका है ! इसके लिये अर्थनीति एवं राजनीति पर ओजस्वी और खोजपूर्ण लेखों का स्वागत होगा और लेखों को यथायोग्य दक्षिणा से भी पुरस्कृत किया जायगा।

यह अंक आपको कैसा लगा ?

जब आप राजधर्म के पृष्ठों को बड़े चाव से पढ़ने लगते हैं तो आपके मन में कई प्रकार के विचार तरंगित होते हैं। क्या ही अच्छा हो यदि आप उन विचारों को लिपिबद्ध कर हमें भेज दें !

—सम्पादक

आन्ध्र प्रदेश में नक्सलवादी आतंक

● वी० एम० नैयर

आन्ध्र प्रदेश के श्रीकाकुलम् क्षत्र में नक्सलवादियों का आतंक बढ़ता नजर आ रहा है। माओ जिन्दबाद का थोथा नारा बुलन्द करने वाले नक्सलवादियों ने यहाँ के भोले-भाले गिरिजनों को गुमराह करना शुरू कर दिया है।

अभी हाल में ही यहाँ तोपबन्दूकों की गड़गड़ाहट सुनी गई तो लोग घबरा उठे। गिरिजनों के एक समुदाय ने दूसरे समुदाय पर सशस्त्र आक्रमण किया और कुछ पूंजीपतियों की इहलीला समाप्त कर दी—उनका सर्वस्व छीन-झपट लिया। कुछ जमींदारों से बलात् जमीन छीनी गई और उन्हें परमधाम भेज दिया गया।

श्रीकाकुलम् के ३५० मील विस्तृत जिले में भय और आतंक का वातावरण छाया रहा तथा प्रशासनाधिकारी वहां के लोगों को आश्वस्त करते फिरे। यहाँ कई भूमिपतियों, जमीन्दारों की हत्या कर दी गई। कितने ही पुलिस के संरक्षण में रहते रहे। कइयों ने एक स्थान से दूसरे स्थान पर पलायन कर लिया। कहते हैं इन क्षेत्रों में पुलिस की गश्त बढ़ा दी गई है। सारा जनवर्ग इनके ही संरक्षण में है।

परन्तु इन सबसे भी कोई विशेष लाभ नहीं पहुंचा है। पिछले १२ महीनों में नक्सलवादी गिरिजनों ने २५ राजनीतिक हत्यायें की। १७ बार पुलिस दल से मुठभेड़ की। २३ बार डकैती की। ६५ बार इन्होंने पुलिस का मुकाबला किया। कहा जाता है इनमें ६७ नक्सलवादियों की तथा २ पुलिस के सिपाहियों की मृत्यु हुई।

कहा जाता है, इन विद्रोहियों के पास ज्यादा अच्छे शस्त्रास्त्र नहीं हैं। परन्तु इनमें "अभूतपूर्व" साहस है और इनका ठोस संगठन है। ये लोग कई दलों में विभाजित हैं। इनके दलपति हैं—वेम्पतु सत्यनारायण—४५ वर्षीय एक भूतपूर्व अध्यापक।

इस आन्दोलन की राजनीतिक और प्रशासनिक शाखा को "जनक्रान्ति परिषद्" कहते हैं। हजारों की संख्या में गिरिजन इसके सदस्य हैं। १० रुपया मात्र सदस्यता शुल्क देकर प्रवेश लिया जाता है। मार्क्सवाद लेनिनवाद के इन विद्रोही अनुयायियों के नेता हैं सुप्रसिद्ध नक्सलवादी चारु मजुमदार, कानू सान्याल इत्यादि।

नक्सलवादियों ने यहाँ अपना "साम्राज्य" ही स्थापित कर रक्खा है। ये लोग अपनी "प्रजा" से कर वसूली भी करते हैं। जो लोग कर देने में आनाकानी करते हैं उन्हें "जनता की अदालत" द्वारा दण्ड मिलता है।

आन्ध्र प्रदेश सरकार ने इस ओर कठोर कदम उठाया और कितने ही तथाकथित "पदाधिकारियों" को गिरफ्तार भी किया। पांचाली कृष्णमूर्ति, तमादु गणपति, चगन्ती भास्कर राव प्रभृति कुछेक विद्रोहियों ने पुलिस से मुठभेड़ में अपनी जान गंवाई।

गुण्टूर को प्रधान प्रचार-केन्द्र बनाया गया है। यहाँ शहर के रंगरूट भरती किये जाते हैं जिन्हें यथावत् "नक्सलवादी प्रशिक्षण" दिया जाता है। प्रशिक्षण पाने के बाद ये लोग "जनमुक्ति आन्दोलन" में भाग लेते हैं। परन्तु जंगल का वातावरण, निरन्तर कठोर जीवन, पुलिस से छिपकर रहना—इत्यादि कुछेक ऐसे तथ्य हैं जो उन नवजवानों के उत्साह को कालान्तर में ठंडा कर देते हैं। एक तरुण डाक्टर इस आन्दोलन में गया—फिर वापस आ गया—वह कठोर जीवन का अभ्यस्त नहीं था।

नक्सलवादी नेताओं की धर-पकड़ के लिए पुलिस विभाग ने "इनाम" घोषित किये हैं—जिसकी रकम १० हजार रुपया तक है। इनके संचालक नेता वेम्पतु सत्यनारायण की धर-पकड़ के लिए तो ५० हजार रुपये के पुरस्कार की घोषणा की जाने वाली है। इनके नेताओं

की गिरफ्तारी मात्र से यह आन्दोलन समाप्त किया जा सकता है—यह सोचना उचित नहीं जान पड़ता। यहाँ के निवासी गिरिजनों में जो विद्रोह की आग भड़काई गई है, उनमें जो "माओभक्ति" पनपाई गई है—इसका निराकरण एक विषम प्रश्न है।

कहते हैं कि यहाँ के गिरिजन पूंजीपतियों, भूमिपतियों, सूदखोरों से अत्यधिक सताये गए हैं और कम्यूनिस्टों ने अवसर पाकर उनमें "माओभक्ति" पैदा कर दी है। सरकार ने "वैध रीति से" इन्हें सुखी करने की अनेक बार घोषणा की लेकिन ठोस रूप में कुछ नहीं किया। कम्यूनिस्टों ने अवसर का लाभ उठाया और विद्रोह की आग सुलगा दी।

पूंजीपतियों, भूमिपतियों के विरुद्ध बहुत बार संघर्ष छिड़ा। विषम परिस्थितियाँ उत्पन्न हुई। सरकार ने इन्हें येन केन प्रकारेण दबा दिया परन्तु शोषित निर्धन गिरिजनों की आर्थिक दुरवस्था की ओर "स्थायी रूप से" ध्यान नहीं दिया गया। फलस्वरूप यहाँ के लोगों ने "कानून और प्रशासन" अपने हाथ में ले लिया और सरकार के लिये "समस्या" बन गए।

सुनते हैं कि प्रदेश गृहमन्त्री वेंगल राव ने इस "लाल क्षेत्र" का निजी रूप से निरीक्षण शुरू किया है। उन्होंने कई अफसरों की अदला-बदली कर दी। आजकल उन अफसरों का नियुक्ति की गई है जो जनभावना के अनुकूल कार्य करें। गिरिजनों में मुफ्त गाय बैल वितरण किए गए। उन्हें जमीन देने की व्यवस्था पर गौर किया जा रहा है ताकि वे रोटी-रोजी में असुविधा न महसूस करें और विद्रोही-दल में न प्रवेश करें।

आवागमन व संचार की व्यवस्था भी सुधारी जा रही है जिससे नक्सलवादियों की धर-पकड़ में सुविधा हो। आपको पता होना चाहिए कि ये लोग जंगलों, पहाड़ों में अपना 'गढ़" स्थापित करते हैं। इस तरह के "गढ़ों" तक संचार व्यवस्था अच्छी होनी चाहिए कि कोई विद्रोह की शुरुआत हो तो शीघ्र पता चल जाए।

गिरिजन कल्याण कोष में प्रायः ३ करोड़ रुपयों की व्यवस्था आंकी गई थी जबकि राज्य सरकार ने सिर्फ १९ लाख रुपयों की व्यवस्था की। गिरिजनों के असन्तोष पर सरकार ने इस प्रश्न का पुनरीक्षण करना शुरू किया है। गैर-गिरिजनों द्वारा जो भूमि अधिकृत की गई है—वह भी शनैः-शनैः उन्हें वापस की जा रही है।

गिरिजनों की आर्थिक दुरवस्था की यहाँ तक सीमा है कि ये लोग कई महीने तक जंगली फलों को खाकर गुजारा करते हैं। कम्यूनिस्टों द्वारा भड़काये जाने पर जब ये लोग कानून और व्यवस्था को अपने हाथ में लेते हैं तो फिर सरकार इन पर नियंत्रण करती है। लगभग १००० गिरिजन आज भी जेलों में सड़ रहे हैं। परन्तु 'कानून भंग" के तथाकथित अपराध में उन्हें जेल भेजना बुद्धिमानी नहीं। सरकार को चाहिये कि इन्हें आर्थिक दुरवस्था से उबारे तथा इनके लिए कोई स्थाई समाधान सोचे।

कांग्रेस और स्वतन्त्र पार्टी ये ही दो राजनीनिक दल यहाँ सक्रिय हैं। परन्तु किसी ने "उचित समाधान" प्रस्तुत नहीं किया फलतः ये लोग कम्यूनिस्टों के हाथ का खिलौना बने रहे। अब समय आ गया है कि राज्य सरकार व केन्द्रीय सरकार इस ओर ध्यान दे। जबकि गिरिजनों की आर्थिक विपन्नता दूर नहीं की जायेगी—ये लोग तथाकथित "विद्रोह" से पीछे नहीं मुड़ेंगे—यहाँ की धरती आज अस्थाई रूप से "लाल क्षेत्र" है तो कभी स्थायित्व भी आ सकता है। अतः सरकार को चाहिये कि यहाँ के लोगों को आर्थिक रूप से समृद्ध करे जिससे कि तथाकथित आन्दोलन स्वयमेव समाप्त हो जाये। ★

भाई वंशीलाल

भाई श्यामलाल

आर्यराष्ट्र की यज्ञवेदी पर अपनी भरी जवानी की समिधा होम कर आततायी निजाम हैदराबाद को क्रान्ति की लपटों में जलाकर राख कर देने वाली दो ज्वाल शिखायें

पाठकों के पत्र

श्री आदरणीय प्रो० श्यामरावजी,

सादर नमस्ते !

जब मैं छुटियों में गांव को आता हूं तो आर्य समाज में जाया करता हूं। एक दिन हमारे आर्य समाज में एक पड़ी हुई पुस्तक पर 'राजधर्म' यह शब्द पढ़ा। आर्यसमाज में यह शब्द मुझे बहुत नवीन लगा। पहले तो मुझे अचरज मालूम हुआ कि यह किताब यहां कैसे आई। मैं राजधर्म को पढ़ना शुरू किया तो मेरा होश ही उड़ गया। राजधर्म ने मुझ पर पूरा जादू किया था। पूरा राजधर्म पढ़ने के बाद मुझे मालूम हुआ कि रारधर्म नवयुवकों को एक प्रकार की चुनौती है। नवयुवकों में क्रान्ति का रक्त फैला देता है। इससे मेरा पूरा विश्वास हो गया है कि अंक अपने उद्देश्य को सफलता के साथ पूरा करेगा। मैं बी० ए० में पढ़ता हूं, लेकिन अभी तक ऐसा मार्मिक अंक नहीं पढ़ा। इस की यह विशेषता है कि, राजनैतिक क्षेत्रो में धर्म का किस तरह स्थान होता है। नवयुवक को आगे ले जाता है और कॉलिज के विद्यार्थियों को देश के उन्नति के लिए और खुद का स्थान ऊँचा करने का सबक देता है। मैं अभी तक सिर्फ दो तीन अंक पढ़ा हूं। इस अंक में मुझे जो चमक दिखाई पड़ी उसे मैं कभी नहीं भूल सकता। इससे अनुमान निकलता है कि, आगे निकलने वाले सभी अंक इससे सौ-गुना अच्छे निकलेंगे। मैं भी यह इच्छा प्रभु के पास करता हूं कि यह अंक निरन्तर हम नवयुवकों को मार्गदर्शन का, प्रोत्साहन देने का कार्य करता रहेगा। अब तो यह अंक सबसे पहले पढ़ता हूँ। आर्य युवक परिषद की ओर से, आर्यराष्ट्र की स्थापना करने के लिए अगामी मई में जो ऐतिहासिक प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया हैं। उसमें जरुर-जरूर भाग लूंगा।

एक विद्यार्थी—
निकम बी० बी०
मु० पो०—मोगरगा
ता०—औसा
जि०—उस्मानाबाद

पूजनीय स्वामी जी,

हमारा कार्य सुचारु रूप से चल रहा है और नवजवानों को संगठित कर रहे हैं। मई महीने के शिविर में हम ऐसे आर्यवीर सम्मिलित होंगे जो कालेज स्टूडेन्ट, आर्य विचारों के, ब्रह्मचारी और अपने मिशन के लिये कार्य करने वाले हों। भेड़ों को इकट्ठा करने का विचार नहीं है। यहां भी कई बार शिविर लगे, भेड़ें इकट्ठी हुई और खा-पीकर पता नहीं कहां चली गईं। इसलिये आप के शिविर में हम चुने हुए ५० आर्यवीर नवयुवक भाग लेने आवेंगे !

यहां हम राजधर्म का बहुत प्रचार कर रहे हैं। एयर फोर्स और फौजी लोगों को ग्राहक बना रहे हैं। मैं तो आपके परिषद् को जीवन दान देना चाहता हूं। मेरी उम्र अभी १९ वर्ष है। बलिदान की वेदी पर एक आर्यवीर की आवश्यकता हो तो आपका जग्गुभाई पूर्णरूपसे तैयार है। आप कीआज्ञा की देरी है।

जग्गूभाई आर्यवीर
उम्मेद चौक—जोधपुर (राज०)

राजधर्म (पाक्षिक) का नूतन वर्षाभिनन्दन
सचमुच आर्यसमाज की आशाओं के केन्द्र
माननीय श्री प्रो० श्यामराव जी,

सादर नमस्ते

उषा देवी दिन प्रति दिन सवाया रूप धारण करती है। ठीक इसी तरह आपका राजधर्म (पाक्षिक)भी अपनी (धार्मिक-राजनैतिक) झलक दिखाता है। केवल एक वर्ष में(अराजकता और अधर्म)अन्धेरे को समाप्त कर एक सनातन आर्य राज्य स्थापना के प्रभात की। अपने प्रत्येक अंक में उषा देवी जैसे दैवी शक्ति है। आपका प्रत्यक नूतन वर्ष भी उषा देवी बनकर एक दिन वैदिक सनातन आर्य राज्य स्थापना का……अरुणोदय होगा। यह मेरी मंगल कामना।

आपका
कृपाभिलाषी इन्द्रजीत गिरी मन्त्री
आर्य समाज मु० पो० मोगरगा, ता० औसा,
जि० उस्मानबाद (महाराष्ट्र)

नवयुवक-गान

कुमारी सुशीला आर्या एम. ए. विद्यावाचस्पति चरखी दादरी (हरयाणा)

नवयुग की इस नई उषा का नया तराना गाएँगे।
प्राची के रवि की किरणों के संग संग मुस्काएँगे ॥

हम में गंगा का गौरव है, हिमगिरि की ऊँचाई।
हम लाए उगते सूरज की प्रातः किरण की अरुणाई।
हमने इन कदमों से मापे गगन धरा सागर खाई।
भारत भू का भाग बनाने चल दी चढ़ती तरुणाई।

हम मेहनत के जादू से मिट्टी को स्वर्ण बनाएँगे।
प्राची के रवि की..............................॥

हमें शौक है दुर्गम पथ पर गिर गिर बढ़ते जाने का;
भीषण झंझाओं को भी दे दे लोरियाँ सुलाने का;
चंचल लहरों के स्वर में स्वर मिला-मिला कर गाने का;
सिर पर मौत नाचती नाचे, काँटों पर मुस्काने का;

बिजली की चमकारों से हम हंस कर आँख मिलाएँगे।
प्राची के रवि की..............................॥

हम युग बदलेंगे, युग की परिभाषा बदल दिखा देंगे,
मानव को मानव बन कर जीने की कला सिखा देंगे,
गिरे रहे जो अब तक नीचे उनको साथ मिला लेंगे,
समता की ममता लेकर हम इष्ट स्थान को पा लेंगे,

चमत्कार सा देख जगत के मनुज चकित रह जाएँगे।
प्राची के रवि की..............................॥

जिससे आँच देश पर आए कभी न ऐसा काम करें,
तोड़ फोड़ हिंसा से न हम भारत को बदनाम करें,
सर्वोदय के लिए कामना नगर-नगर हर ग्राम करें,
हम धरती माँ के बेटे हैं शत-शत इसे प्रणाम करें,

डगर, डगर, घर, हर मन में आशा के दीप जला देंगे।
नवयुग की इस..............................॥

तरुणाई ले अंगड़ाई, सुख-समृद्धि मुस्काएगी,
हो आराम हराम, सफलता चरण चूमने आएगी,
दानवता पर मानवता की विजय ध्वजा लहराएगी,
वर्ण वर्ण के फूल खिलेंगे, घटा निराली छाएगी,

भारत के उपवन के माली नव हरियाली लाएँगे।
नवयुग की इस..............................॥

आर्यावर्त, आर्य और आर्य-भाषा

स्व० वंशीलाल आर्य

आज संसार में प्रत्येक जाति अपने सुधार का कार्य-क्रम बनाकर उन्नति की ओर सरपट दौड़ लगा रही है। यह हमारे दुर्भाग्य की बात है कि इस संसार में मनुष्य जाति अपने को एक जाति न मानकर कल्पित जातियां बनाकर उसको अपनी जाति समझ उसके ही उद्धार में अग्रसर हो जाती है। इसलिये संसार में झगड़े भी बढ़ते जा रहे हैं। संसार में हमारी एक ही जाति है—और वह है मनुष्य जाति। हाँ इसमें दो भेद हो सकते हैं—एक अच्छे और दूसरे बुरे। ऐसी दशा में एक ही झगड़ा रहेगा, अच्छे और बुरे का। इस झगड़े को संसार से कोई मिटा तो नहीं सकता, परन्तु सदा विजय अच्छे की ही होगी। वेद शास्त्रों में अच्छे, धर्मात्मा, न्यायशीलों का नाम आर्य, और बुरे अधर्मात्मा, अन्यायियों का नाम अनार्य व दस्यु है। क्या ही अच्छा होगा यदि संसार के सभी न्यायप्रिय अच्छे लोग आपस में एक संगठन में बंध जायें। परन्तु आज शीघ्र और सहज में इस बात को लोग मानेंगे नहीं अतः हमको पुरुषार्थ करना होगा। श्री पूज्य महर्षि दयानन्द जी महाराज ने इसी चीज को सोचकर आजकल की परिस्थिति के अनुसार, मनुष्य जाति को चार विचारों में बांटकर अपना कार्य आरम्भ किया था। हमको भी महर्षि के ही पदचिह्नों पर चलना चाहिए ताकि शीघ्र और निश्चित सुधार कर सकें। पू० स्वामीजी महाराज ने चार विभाग किये। उनके नाम उनके शब्दों में ये हैं, पुरानी, जैनी, किरानी और कुरानी। किरानी और कुरानी को छोड़कर सबके लिये उन्होंने आर्यजाति का प्रयोग किया है। अतः मेरे लेख में आर्य जाति शब्द इन्हीं आर्यों में प्रयोग किया होगा।

अस्तु,

आर्य भाइयो! सोचो, क्या आप भी उन्नति कर सकते हैं? यदि मुझ से पूछा जाय तो मैं दावे से कह सकता हूँ कि आप जैसी शीघ्र और सर्वांगपूर्ण उन्नति कर सकते हैं संसार में कोई भी नहीं कर सकता क्योंकि हमारे पास सारी सामग्री इकट्ठी है, केवल कमी है तो चन्द बातों की। मैं इन्हीं बातों का वर्णन इस लेख में करना चाहता हूं।

सबसे पहला सुधार जो हमें करना है वह है हमारा 'नाम'। नाम का सुधार ही सारे सुधारों की जड़ है जिसे हमको अपनाना चाहिए। इस के लिए मैं यह कहना चाहता हूँ कि देश में जब राष्ट्रभाषा का प्रश्न खड़ा हुआ तब चहुँ ओर से आवाज आने लगी कि राष्ट्रभाषा वह हो जो सीखने में सबके लिये सरल हो और जिसका बहुसंख्यक प्रजा प्रयोग करती और समझती हो। वह थी 'आर्य भाषा!' सोने पर सुहागा की कहावत चरितार्थ हो गई, क्योंकि यह भाषा जहाँ सीखने, लिखने व बोलने में सरल व आसान और भावों को प्रकट करने में उत्तम है वहाँ इसे भारत की अधिक से अधिक जनता बोलती और समझती है। परन्तु राष्ट्रवादियों ने यहाँ पर एक भूल की। उन्होंने यह तो समझा कि एक भाषा के बिना राष्ट्र का उद्धार नहीं हो सकता है और यह है भी ठीक। परन्तु एक भाषा बनाने से पहले हमारे लिए एक नाम वाले बनना आवश्यक है। यदि हमारा एक नाम हो तो फिर हमारी भाषा का एक होना सुगम है। एक नाम की महिमा का अनुभव किये बिना ही हमने एक भाषा बनाने का यत्न किया। इससे भाषा का तो एक बनना एक ओर रहा उल्टे झगड़े बढ़ गए। अतः अब हमको सब से पहले यह काम करना है कि हमारा नाम एक हो। जब हमारे नाम से एकता आ जायेगी तो हमारे काम एक होने में देर नहीं लगेगी।

पू० स्वामी जी महाराज ने आर्य समाज की एक ऐसी संस्था स्थापित की है जो देश के लिए अमृत सि

हो सकती है। परन्तु इसके नेता बाद में यह समझ बैठे कि अन्दर रीति व रूढ़ियों की भरमार है और इनका पू० स्वामी जी वर्णित मार्ग से सुधार होना कठिन है और समय का काम है, इसलिए हमको जनता को विचार धारा के साथ-साथ बहना चाहिए। अतः उन्होंने पू० स्वामी जी के मार्ग को छोड़ जनता की विचार धारा में ही बढ़ना आरम्भ कर दिया। फल यह निकला कि सुधार होना तो दूर रहा और अधिक उलझनें पड़ गई। जैसा कि पू० स्वामी जी महाराज का विचार था, यदि इस देश को आर्यावर्त्त के नाम से पुकारते और लिखते तो आज इस देश का नाम आर्यावर्त्त पड़ गया होता। जब यह देश आर्यावर्त्त है तो यहाँ के निवासी निश्चित ही देश के नाते आर्य हैं, फिर वह किसी मत या सम्प्रदाय के यूं न हो। जब हमारा देश आर्यावर्त और हम आर्य हैं तो यह आवश्यक ही है कि हमारे देश की भाषा हो।

वीर पुरुष वे होते हैं जो संकल्प की ओर दृढ़ता से पुरुषार्थ के साथ अग्रसर हो जाते हैं। वो आगे पीछे, दायें-बायें झांका नहीं करते। नपुंसक वे होते हैं जो पुरुषार्थ न करके सदा असफलता का स्वप्न लिया करते हैं। यदि वीरपुरुष चाहे, तो फिर संसार में सब कुछ कर सकता है। इस संसार को दुःखमय बनाना अथवा सुखमय बनाना मनुष्य के बायें हाथ का खेल है, परन्तु हो पुरुषार्थ करने वाला पुरुष। अतः आर्य वीरो! कमर कस लो और मैदान में आकर डट जाओ। तुम्हारे इरादे नेक हैं, तुम्हारे पास सामग्री उपस्थित है और परमात्मा का अदृश्य हाथ तुम्हारे पीठ पर है। फिर कौन है जो तुम्हारी ओर आंख उठाकर देखने का भी साहस कर सके। बस उठते-बैठते, चलते-फिरते, सोते जागते, लिखते-बोलते आर्यावर्त और आर्य जाति के स्वप्न लिया करो। एक स्वर से कहने लगो हमारा देश आर्यावर्त है, हम आर्य हैं और हमारी भाषा आर्य भाषा है। यही कहा करो, यही लिखा करो, यही सुनाया करो और सुना भी करो। मार्ग तय्यार हो गया, इस मार्ग पर बेखटके अभीष्ट स्थान पर पहुँच सकोगे। इस पर ठोकरें खाने का नाम नहीं, पराजित होने का काम नहीं। पैदल चलने की बात तो क्या मोटरों की गति से सरपट दौड़ सकते हो।

हम को आज से नहीं, इसी समय से क्या करना है? जिस ध्वनि को गुंजाना है, जिस चीज को अपनाना है, वह यह है।

१—हमारा देश आर्यावर्त है।

२—हम आर्य हैं।

३—हमारी भाषा आर्यभाषा है।

हम मुंहमांगी कीमत देकर भी इसकी रक्षा करेंगे।

★

आर्यसमाज का राजनैतिक क्षेत्र

स्व० भाई वंशीलाल जी आर्य

आजकल जिधर मैं आता हूं उधर यही देखता और सुनता हूं कि नवयुवक धर्म के काम से उदासीन हो राजनैतिक क्षेत्र में काम करने के लिये उतावले हो रहे हैं। इसमें अधिकतर कांग्रेस की नीति को स्वीकार कर रहे हैं। इसलिये आज मैं अपने राजनैतिक विचार आर्यसमाज तथा पू० महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज के बताये आदेशानुसार उपस्थित करना चाहता हूं और आशा करता हूं कि आर्य भाई इस पर गम्भीरता से विचार करें।

सबसे पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि आर्यसमाज वेद ही को ईश्वरीय ज्ञान और निभ्रांत मानता है। इसलिये वेद को स्वतःप्रमाण तथा अन्य ग्रंथों को परतःप्रमाण मानता है अर्थात् वेद से भिन्न किसी का लेख क्यों न हो वेद के अनुकूल पाता है तो उसे मान्य करता है अन्यथा त्यागने के योग्य समझता है। इसलिये हमारी संस्कृति और हमारा सिद्धांत वेद है न कि कोई व्यक्ति व समाज। आर्य नवयुवको! सचेत हो जाओ! किसी विशेष व्यक्ति के विचारों से पथभ्रष्ट होकर देश, जाति को नष्ट-भ्रष्ट मत करो। हां आप में जोश है और देश के संकट देखे नहीं जा सकते हैं तो अन्धाधुंदी करके अधिक संकट उपस्थित मत करो। वेद और आप्त वचनों के प्रकाश में मार्ग ढूंढ़ो और निर्भीक होकर डट कर चलो लक्ष्य को प्राप्त करगे। अस्तु व्यक्ति धर्म, समाज धर्म राज धर्म क्या है, और इसे क्यों धारण करना चाहिये। शारीरिक आत्मिकोन्नति व्यक्ति धर्म है। सब मिल कर व्यक्ति धर्म को पूर्ण सफल बनाने के लिये जिन नियमों को पालन करने की आवश्यकता है वह समाज धर्म है। सामाजिक धर्म की रक्षा के लिये राजधर्म है और इसे इसलिये धारण करना चाहिये कि इसके बिना मनुष्य समाज राष्ट्र अभ्युदय निश्रेयस् की सिद्धि नहीं कर सकता। व्यक्ति धर्म के लिये चार आश्रम हैं और समाज धर्म के लिये चार वर्ण हैं इनकी रक्षा के लिये राजसभा है।

आज मुझे व्यक्ति धर्म या समाज धर्म पर कुछ कहना नहीं है। आज तो आर्यसमाज का राजनैतिक दृष्टिकोण ही बताना है और यह निश्चित है कि व्यक्ति ही समाज का निर्माण कर सकता है और समाज ही राष्ट्र का। राष्ट्र समाज का निर्माण नहीं कर सकता बल्कि उसकी रक्षा और समाज व्यक्ति का निर्माण नहीं कर सकता बल्कि उसकी रक्षा कर सकता है। यदि ऐसा न होता तो कोई राष्ट्र सुदृढ़ हो कर वह किसी दूसरे समाज के निर्माण में बाधक हो जाता और इस प्रकार समाज का निर्माण असम्भव बन जाता। कोई समाज सुदृढ़ होकर किसी अन्य व्यक्ति के निर्माण में बाधक सिद्ध होता। ऐसा नहीं है यदि कोई समाज चाहे तो किसी राष्ट्र की विद्यमानता में ही अपना निर्माण और उन्नति कर सकता है। कोई व्यक्ति चाहे तो किसी समाज की विद्यमानता में भी अपनी उन्नति करके समाज का निर्माण कर सकता है।

(अपूर्ण हस्तलिखित प्रति से)

(यह लेख श्री सुभाष अष्टीकर, मन्त्री आर्यसमाज हलीखेड़ (बड़ा) बीदर (मैसूर) के सौजन्य से प्राप्त हुआ)

★

निजाम स्टेट के आर्यों को क्या करना चाहिये ?

● वंशीलाल वकील

मेरे कान में सबसे पहले आर्य समाज का नाम मेरे मामा पूज्य पं० गोकुल प्रसाद जी वकील ने डाला था। मैंने आर्यसमाज की सेवा सन् १३२७ फसली से आरम्भ की। हमारे कुल के सारे पुरुष आर्यसमाज की सेवा के मैदान में काम करने लगे। मैंने काम करते हुए जो अनुभव प्राप्त किये हैं उनके आधार पर आज की परिस्थिति में आर्यों को क्या करना चाहिये—यह बतलाना चाहता हूँ।

जो मनुष्य चाहे वह स्त्री हो या पुरुष आर्य समाज में प्रविष्ट हो जावे उस को अपनी जन्म की भ्रममूलक जाति को भी भूल जाना चाहिये। आर्यों को अपने सारे नामों को त्याग कर एक ही पवित्र, कीर्ति, यश वाला आर्य नाम को ग्रहण कर लेना चाहिये। एक ऐसी जाति का निर्माण करो जिसमें जन्म का, जन्म की जाति-पाति का गंध भी न हो, किसी को पता न चले कि यह कौन था, सब एक ही जाति रूपी माला के फूल बन जावें। रोटी बेटी का सम्बन्ध आपका आर्य जाति में हो। जन्म की जाति-पाति को तोड़कर अपने योग्य स्त्री, पुरुष से सम्बन्ध करें, ताकि आपका संगठन सच्चा संगठन हो। कोई भी आपके संगठन को तोड़ने में समर्थ न हो सके। मुझको पूर्ण विश्वास है कि एक आर्यसमाजी ही ऐसे हैं जो अपने विचारों को क्रियात्मक रूप में संसार के सम्मुख रख सकते हैं। यह लेख मैं केवल पढ़ने के लिये नहीं लिख रहा हूं बल्कि मैं आशा करता हूं कि स्टेट का जो भी आर्य इसको पढ़ेगा उसी समय से इसको अपने जीवन में धारण करेगा। मैं इस वर्ष एक सुसंगठित आर्य जाति का निर्माण देखना चाहता हूँ जिन के दिल में एक आर्य शब्द और आर्य जाति से अगाध प्रेम हो, अपने जन्ममूलक जाति का लेश मात्र भी मोह न हो। इनकी सन्तानों को यह पता नहीं चलना चाहिये कि, वर्तमान काल के किस जन्ममूलक जाति से इनका सम्बन्ध था।

आर्यो ! आप जब तक ऐसा न करोगे तुम्हारी दीवार रेत पर खड़ी होगी जो हवा का एक हल्का सा झोंका भी उसको मिस्मार करके रख देगा। क्या मैं आप भाई बहनों से यह आशा करूं कि आपने इस वर्ष श्याम दिवस मनाया ? यदि आपके दिल में सचमुच श्याम के लिये प्रेम है यदि आप उन वीरों के बलिदानों की कदर करते हो तो बस उनके स्मारक में न कोई संस्था खोलेंगे, न भवन निर्माण, बल्कि उनके स्मारक में एक विशाल आर्य जाति का निर्माण कर दोगे। एक जाति की महिमा महान है। एक जाति में सुख दुःख बँट जाता है। एक जाति में विद्युत का संचार होता है। फिर इसके लिये उन्नति करना कोई कठिन काम नहीं है।

आज तुम अपना नाम आर्य जाति कहना, लिखना, बताना आरंभ करो। नाम की बड़ी भारी महिमा है। जिस नाम की जाति का इतिहास उज्ज्वल हो, जिस जाति का लोहा सारा संसार मान चुका हो, उस जाति के नाम में जादू हुआ करता है। क्या आप नहीं जानते कि कहीं मैं जाकर आपको भेड़, मांग बताऊँ तो दुनिया मेरे साथ कैसा बर्ताव करेगी ? यदि आर्य नाम बताऊँ तब मेरे लिये उसके दिल में किस प्रकार के भाव उत्पन्न होंगे। याद रखो जाति के नाम के साथ उसका पूर्व इतिहास हुआ करता है। आर्यों का इतिहास आदर्श, अनुकरणीय है। इस जाति को कभी संसार का गुरु कहलाने का सौभाग्य प्राप्त हो चुका है। इसलिये हमको आर्य शब्द और आर्य जाति का निर्माण अद्भुत लाभ का कारण होगा। तुम कचेहरी में जाओ, औषधालय में जाओ। अपनी जाति का प्रश्न आवे तो "आर्य" लिखाओ। आने वाली जनगणना में हम सबका कर्त्तव्य है कि जाति के खाने में आर्य जाति लिखा दें। केवल इतना ही नहीं बल्कि प्रत्येक आर्य को चाहिये कि यह सन्देश जहाँ तक हो सके वहाँ तक लोगों के कानों तक पहुँचा दें कि आने वाली जनगणना में अपनी जाति आर्य लिखाना चाहिये। यह पहली बात

या पाठ है। जो आर्यों को सीखना चाहिये।

यह है पहला पाठ जो आर्यों को सीखना चाहिये। यदि इसमें भूल व आलस्य करोगे तो महान् दुःख उठाओगे। रेत पर दीवारें मत बनाओ। आज अपनी जन्म जाति का ही प्रयोग करने वाले आर्यसमाज की दीवार रेत पर बना रहे हैं। जिसको मामूली हवा का झोंका नष्ट-भ्रष्ट कर सकता है। दक्षिण के आर्यों ने पूर्व से ही अर्थात् जब से यहां आर्यसमाज का प्रचार आरम्भ हुआ है तब ही से जन्म की जाति पर कुल्हाड़ा चलाया है परन्तु मैं चाहता हूं कि शीघ्र ही, आज ही, नहीं नहीं अब, इसी समय से ही एक दृढ़, विशाल, बलशाली आर्यजाति का निर्माण करना चाहिये। इस काम में भूल करना जाति के जीवन की, जाति के इतिहास की भूल सिद्ध होगी। अतः उठो, अंगड़ाई लो और अपने कर्त्तव्य पथ पर डट जाओ। तभी हम ईश्वर के प्यारे बन सकते हैं क्योंकि वेदों में आर्य और अनार्य दो ही भेद जाति के बताये गये हैं। हमारे पूर्वज भी वेदों के आज्ञानुसार जीवन बना कर ही सुखी हुए थे। अतः हम भी 'यथा पूर्वे देवा भागम् संजानानामुपासते, के अनुसार सुखों को प्राप्त कर सकते हैं।

(विबुति २६-१२-३९ से)

प्रधान मंत्री श्री शास्त्री रो दिए:—

मां भारती के वीर पुत्र, अदम्य साहसी और इस्पात जैसे दृढ़ मेजर भूपेन्द्र सिंह के बलिदान एवं शौर्य की गाथा भारतीय स्थलसेनाध्यक्ष जनरल चौधरी ने स्वयं जाकर प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री को सुनाई। वे द्रवित हो उठे—भावुक हृदय व्याकुल सा हो उठा। रोक नहीं पाये वे अपनी मन की भावनाओं को और कदम बढ़ चले अस्पताल की ओर, जहां भारत माता का महान् सपूत-बलिदान और साहस के इतिहास का निर्माता असहाय अवस्था में पड़ा था।

राष्ट्रनायक श्री शास्त्री अपने राष्ट्र की सुरक्षा के उस 'फौलादी स्तम्भ' को देखने अस्पताल पहुंचे। मेजर भूपेन्द्र उस समय होश में थे। उन्होंने प्रधान मंत्री की ओर देखा। उनकी आंखें भर आई। अपनी भावनाओं के आवेग को प्रधान मंत्री भी दबा नहीं पाए—आंखें भींग गई।

मेजर भूपेन्द्र ने भीगे स्वर से कहा, "मुझे खेद है मेरे प्रधान मंत्री आए हैं और मैं उठकर उन्हें 'सैल्यूट' करके उनका सम्मान भी नहीं कर सकता। इस गुस्ताखी के लिए मैं क्षमा चाहता हूं—लेकिन.........मैं उठ नहीं सकता, मैं उठने के काबिल नहीं।"

सुनते ही राष्ट्रनायक की भीगी आंखें छलक पड़ी—मन रो दिया। अपने को नियन्त्रित रखते हुए वे बोले—"राष्ट्र आपके वीरतापूर्ण कारनामे के लिए सम्मानित करना चाहता है—इसीलिए मैं आया हूं।"

मेजर भूपेन्द्र ने अत्यन्त विनम्र शब्दों में कहा, "मान्यवर प्रधान मंत्री जी मैं किस सम्मान के योग्य हूं। मुझे आप डाक्टरों से जल्द अच्छा करा दें, तब मैं आपको बता सकूंगा कि मेरे साथियों ने मुझ से कितनी अधिक वीरता दिखाई है! वास्तव में सम्मान के असल हकदार तो वे हैं।"

जिन्दगी और मौत के बीच लटकते भारत मां के उस वीर सपूत के उद्‌गार सुनकर श्री शास्त्री जी का नियत्रंण ढह गया। कितनी ज्वाला धधक रही थी उस वीर सेनानी के हृदय में—अपने देश की आबादी और अखण्डता के शत्रु को भस्म कर देने को लालायित ज्वाला!

लेकिन, वह बच नहीं सके और ३ अक्टूबर, १९६५ को स्वर्ग सिधार गए।

जल्दी ही अन्तिम संघर्ष की दुन्दुभी बजेगी

(पंजाब सरकार के नाम सरदार भगतसिंह का अन्तिम पत्र)

[फांसी पर लटकाये जाने से पहले सरदार भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव ने लाहौर सेन्ट्रल जेल के सुपरिन्टेण्डेण्ट के द्वारा पंजाब के गवर्नर को यह पत्र लिखा था।]

"उचित सम्मान के साथ हम नीचे लिखी बातें आपकी सेवा में प्रस्तुत करना चाहते हैं।

"हम लोगों को १९३० की ७ वीं अक्तूबर को उस अंग्रेजी अदालत, अर्थात् स्पेशल ट्रिब्यूनल ने फांसी की सजा दी थी, जो भारत में अंग्रेजी शासन के प्रधान वायसराय द्वारा जारी किये हुए 'स्पेशल लाहौर कांस्पिरेसी केस आर्डिनेन्स' के अनुसार नियुक्त हुआ था। हम लोगों के विरुद्ध मुख्य अभियोग सम्राट् पचम जार्ज अर्थात् इंगलैंड के सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने का लगाया गया था। उक्त अदालत के निर्णय से दो बातें निश्चित हो जाती हैं। पहली यह है कि अंग्रेज राष्ट्र और भारतीय राष्ट्र के बीच युद्ध की अवस्था उपस्थित है, और दूसरी यह है कि हम लोगों ने वास्तव में उस युद्ध में भाग लिया था, जिससे हम युद्ध के बन्दी हैं।

"दूसरी बात कुछ आत्मश्लाघा सी जान पड़ती है। परन्तु फिर भी हम उसे स्वीकार करने ही के नहीं, बल्कि इसके लिए अपने को महान् भाग्यशाली समझने के लिए अपने भावों को दबा नहीं सकते।

"पहली बात के सम्बन्ध में हम कुछ विस्तार में जाने के सम्बन्ध में हैं। उक्त वाक्य में जैसा प्रकट होता है वैसा युद्ध प्रकट दिखाई नहीं देता। हम नहीं जानते कि युद्ध करने का अर्थ अदालत ने क्या लगाया किन्तु हम इसे यथार्थ में स्वीकार करना चाहते हैं। पर अपना विचार स्पष्ट करने के लिए कुछ विस्तृत व्याख्या की आवश्यकता जान पड़ती है।

युद्ध जारी है।

"हम यह कहना चाहते हैं कि युद्ध छिड़ा हुआ है और यह तब तक रहेगा जब तक मुट्ठी भर शक्तिशाली लोगों ने मेहनत मजदूरी करने वाले भारतीयों और जनसाधारण के प्राकृतिक साधनों पर अपने स्वार्थ साधन के लिए अधिकार जमा रखा है। उस प्रकार स्वार्थ साधने वाले चाहे अंग्रेजी पूंजीपति हों या हिन्दुस्तानी, उन्होंने आपस में मिलकर लूट जारी कर रखी हो या शुद्ध भारतीय पूंजी से ही गरीब का खून चूसा जा रहा हो, इन बातों से अवस्था में कोई अन्तर नहीं आता। कुछ परवाह नहीं यदि आज की सरकार नेताओं या भारतीय समाज के चौधरियों को थोड़े सुभीते देकर अपनी ओर मिला लेने में सफल हो जाए और समझौता हो जाय। परन्तु जनसाधारण पर इसका बहुत कम असर पड़ता है। इसकी कुछ परवाह नहीं, अगर एक बार फिर नौजवानों से विश्वासघात किया गया है। इस बात का भी दुःख नहीं अगर हमारे राजनीतिज्ञ फिसल गए हैं। और वे सुलह की बातचीत में उन गृहहीन और दरिद्र देवियों को भूल गए हैं, जो दुर्भाग्यवश क्रान्तिकारी दल की मेम्बर समझी जाती हैं, और हमारे राजनीतिज्ञ उन्हें अलग अपना दुश्मन समझते हैं। क्योंकि उनके विचार से वे 'हिंसा में विश्वास करती हैं, इन वीर देवियों ने निस्सन्देह अपना सब कुछ बलिदान कर दिया है। उन्होंने अपने पतियों को बलिदान किया और अपने भाइयों को भेंट चढ़ा दिया और जो कुछ उनके पास था निछावर कर दिया, बल्कि अपने आपको भी निछावर कर दिया। लेकिन आपकी सरकार उनको बागी समझती है। आपके ऐजेण्ट भले ही झूठी कहानियां गढ़-गढ़ कर उन्हें तथा उनकी पार्टी को बदनाम करें, लेकिन युद्ध तब भी जारी रहेगा।

युद्ध के भिन्न-भिन्न रूप

"हो सकता है युद्ध भिन्न-भिन्न समयों पर भिन्न-भिन्न

रूप धारण करे। किसी समय प्रकट रूप धारण कर सकता है, और कभी छिपे रूप में भी हो सकता है। कभी हलचल मचाने वाले आन्दोलन का रूप पकड़ सकता है, तथा कभी जीवन-मरण का दृश्य उपस्थित कर सकता है। चाहे जिस रूप में भी वह युद्ध हो उसका प्रभाव आप पर पड़ेगा। यह आपकी इच्छा है कि चाहे जो रूप पसंद कर लें, लेकिन युद्ध जारी रहेगा। इसमें छोटी-मोटी बातों की परवाह नहीं की जायगी। बहुत सम्भव है कि यह युद्ध भीषण रूप धारण कर ले। नए उत्साह, बढ़ी हुई दृढ़ता और अटल विश्वास के साथ यह युद्ध तब तक चलता रहेगा जब तक साम्यवादी प्रजातन्त्र स्थापना नहीं हो जाती और वर्तमान समाज के स्थान पर नए सिरे से समाज का ऐसा पुनर्गठन नहीं होता, जिससे स्वार्थियों के स्वार्थ साधन बन्द हो जांय और समाज एवं मानव-जाति को सच्ची शान्ति मिल सके।

अन्तिम युद्ध

"बहुत शीघ्र अन्तिम युद्ध की दुन्दुभी बजेगी और उसमें अन्तिम फैसला हो जायगा। साम्राज्यवाद और पूंजीवाद अब थोड़े ही दिनों के मेहमान हैं। यही युद्ध है जिसमें हमने खुलकर भाग लिया है और इसके लिए हमें गर्व है। हमने इस युद्ध को नहीं आरम्भ किया है और न हमारे जीवन के साथ यह समाप्त होगा। इसकी शुरूआत तो ऐतिहासिक घटनाओं और वर्तमान समाज की असंगतियों के परिणामस्वरूप हुई है। हमारा बलिदान तो इतिहास के उस अध्याय में एक वृद्धि करने वाला होगा जिसे हमारे यतीन्द्रनाथदास और कामरेड भगवतीचरण के अद्वितीय बलिदानों ने प्रकाशमान् बना दिया है।

"अब रही अपनी बात, सो इस विषय में हम इतना ही कहेंगे कि आपने जब हमें फांसी पर लटकाने का निश्चय कर लिया है, तो आप वैसा करेंगे। आपके हाथ में शक्ति है और आपको अधिकार प्राप्त है। लेकिन हम यह कहना चाहते हैं कि 'जिसकी लाठी उस की भैंस' का सिद्धान्त आपके सामने है (और) आप उसी के अनुसार काम कर रहे हैं। इस कथन को सिद्ध करने के लिए हमारे केस की कार्यवाही ही काफी है। हमने कभी प्रार्थना नहीं की और न हम किसी से दया की भिक्षा मांगते हैं और न उसकी आशा रखते हैं। हम केवल यही बताना चाहते हैं कि आपकी अदालत के निर्णय के अनुसार हम युद्ध प्रवृत्त रहे हैं और इसीलिए युद्ध-बन्दी हैं। इसी से हम चाहते हैं कि हमारे साथ वैसा ही बर्ताव किया जाय, अर्थात् हमारा दावा यह है कि हमें फांसी न देकर गोली से उड़ा देना चाहिये। अब यह सिद्ध करना आपके हाथ है कि आप गम्भीरतापूर्वक वैसा ही समझते हैं जैसा आपकी अदालत ने कहा है और इसे कार्य द्वारा सिद्ध करें।

"हम बड़ी उत्सुकता से आप से निवेदन करते हैं कि आप कृपा करके सेना विभाग को आदेश देंगे कि हमें प्राण-दण्ड देने के लिए वह सैनिक दस्ता या गोली मारने वालों की एक टुकड़ी भेजें। आशा है आप हमारी यह बात स्वीकार करेंगे जिसके लिए हम आपको पहले से ही धन्यवाद दे देना चाहते हैं।"

यज्ञशाला के अपमान से क्षुब्ध आर्य युवक कालेज के प्रांगण में अनशन कर रहे हैं।

आर्यराष्ट्र के दुश्मनों को कुचल दो

प्रेता जयता नर इन्द्रो वः शर्म यच्छतु।
उग्रा: सन्तु वाहवोऽस्ना धृष्या यथासथ। ऋग्वेद ८।

हे आर्य वीरो, देश और राष्ट्र की रक्षा के हेतु तन्द्रा त्याग उठकर अग्रगामी बनो। शत्रुओं पर विजय प्राप्त करो। तुम्हारी भुजाएँ प्रचंड पराक्रम से भर उठें, जिससे तुम कभी जीते न जा सको।

स्थिरा वः सन्त्वायुधा पराणुदे वीळू उत प्रतिष्क मे।
युष्माकमस्तु तविषी पनीयसीमा मर्त्यस्य मायिनः ॥
ऋग्वेद

हे वीर! तुम्हारे अमोघ एवं अभेद्य आयुध शत्रुओं को खदेड़ देने में समर्थ हैं। तुम्हारी सेना, संगठन व शक्ति शत्रु का आक्रमण रोकने में पूर्ण समर्थ है। अपनी इस (धीरता, संगठन और ऐक्य की शक्तियों के कारण) तुम प्रशंसा के पात्र हो।

जहि त्वं काम मन ये सपत्नाअन्धा तमांस्यव या दयैनात।
निरिन्द्रिया अरसाः सन्तु सर्वे, मा ते जोविसु कतम च्चनाह; ॥ अथर्ववेद

संकल्प बल! अब तू जाग ही उठ! तू ही मनुष्य तथा किसी जाति के उत्थान का मूल आधार है। जाग! और अपनी शक्ति से दुराचारी राक्षसों को मार गिरा।

उन्हें अन्धकार की घोर तमिस्रा में फेंक दे। फेंक दे उन्हें इस जोर से फेंक दे कि उनकी इन्द्रियाँ नष्ट हो जायें। वे निर्वीर्य हो जायें और एक दिन भी जीवित न रह सकें।

अहमस्मि सहमान, उत्तरो नाम भूम्याम
अभीषाऽस्मि विश्वाषाड़ाशामाशां विषासीह ॥
अथर्ववेद

मैं अपने से टकराने वाले शत्रुओं को चूर-चूर करने वाला वीर हूँ। (चूंकि मैं सत्य, न्याय, धर्म और नीति पर टिका हुआ हूं) मैं अपने समक्ष शत्रुओं को पराजित कर डालने वाला शक्तिवान साहसी हूं। वीर भाव के कारण मेरे दृढ़ चरण जिधर अभियान करेंगे, उधर के शत्रु मिट्टी की तरह मसल जायेंगे। मैं वीर हूं और सैनिकों के समस्त गुणों से युक्त हूं। उत्कृष्ट हूँ।

परीहतो ब्रह्मणा वर्मणाऽहं कश्यपस्य ज्योतिषा वचसा च।
मा मा प्रापन्निषवो दैव्या या, मा धनुसीरवसृष्टा वधाय ॥ अथर्ववेद

मैं ब्रह्मज्ञान का कवच धारण किए हुए हूँ। मार्तण्ड की प्रचण्ड ज्योति से तेजस्वी हूँ। इन दोनों अमोघ कवच तथा तेज से रक्षित मुझ वीर को दैवी विपत्तियाँ तो विचलित नहीं कर सकती तब भला मानवीय आपत्तियों की क्या औकात है कि मुझे परेशान करें।

कृतं मे दक्षिणे हस्ते, जयो मे सव्य आहितः।

देख लो मैं अकर्मण्य नहीं हूं। दाहिने हाथ में कर्तव्य है। मैं राष्ट्र के लिये धर्म और नीति के लिए, असुरता को परास्त करने के लिये युद्ध कर रहा हूँ, इसलिए पूर्ण विजय मेरे बांयें हाथ की मुट्ठी में बन्द है।

प्रेह्यभीहि धृष्णुहि न ते वज्रो नियंसते।
इन्द्र नृम्णं हि ते शवो, वृत्र यजा अयोऽर्वननुस्वराज्यम्।
ऋग्वेद

हे वीर, तेरे शस्त्र (तथा आत्मबल) अप्रतिम हैं। तेरी शक्ति अमोघ है। तेरी विजय अनिवार्य है। तेरी आत्मा और शरीर में शत्रुञ्जयी बल ओतप्रोत है।

तेरी शक्ति का पारावार नहीं है। व शत्रु को निश्चय ही परास्त कर देने वाली है।

तो फिर व्यर्थ ही मन को छोटा करता है! क्यों कायरता कर रहा है। उठ, और आगे बढ़। आततायियों को मार कर, शत्रु पर पूर्ण प्रहार कर, उन्हें परास्त कर अपनी भूमि और प्रजा को छुड़ा और जीत कर स्वराज्य का संरक्षक बन।

यो नः शपादशपतः, शपतो यश्च नः शपात्।
शुने पेष्ट्रनिवावक्षामं, तं प्रत्यस्यामि मृत्यवे
अथर्ववेद

हे आततायी ! ऐसे न्याय और शान्तिप्रिय हम लोगों को यदि दुर्वचन कहेगा, तो कुत्ते के समान सूखी रोटी के टुकड़े के समान मैं तुझे मौत के आगे फेंक दूंगा । सजा दिए बिना न छोड़ूंगा । शठ के साथ शठता की नीति मैं व्यवहार में लाता हूं ।

योनो दिप्सदप्सितो, दिप्सतो यश्च दिप्सति ।
वैश्वानरस्य दंष्ट्रयो रग्नेपि दधामि तम् ॥

-अथर्ववेद

किसी को न सताने वाले हम लोगों को यदि कोई मारने की धमकी देगा, तो हम उसे जलती हुई आग की लपटों में आहुति दे देंगे।

यद् वदामि मधुमत् तद् वदामि
यदीक्षे तद् बनन्ति मा ।
त्विषीमानस्मि जूतिमान
अवान्यान् हन्मि दोधतः ।

मैं जिससे बातें करता हूं, मधुरता से करता हूं ।

मैं जिसे प्यार से देखता हूँ, उसे अपना बना लेता हूँ।

किन्तु इस माधुर्य के साथ—

मुझ में इतना तेज भी है कि जो मेरी ओर क्रोध पूर्वक देखता है, उसे तत्काल मार गिराता हूं ।

ऋग्वेद में कहा गया है ।

इन्द्र प्रेहि पुरस्त्वं, विश्वस्येशान ओजसा । वृत्राणि वत्रहन् जहि । ऋगवेद

हे पराक्रमी !

अपने प्रताप से अनुगामी बन कर संसार को अनुशासित कर और—

संसार से पाप का नाश कर के पुण्य स्थापित कर !

अप त्वं परिपन्थिनं, मुषीवाण दुरश्चितम् दूरमधिस्त्र तेरज ॥ ऋग्वेद

हे अग्रगामी ! तेरे पथ में जो भी चोर, डाकू, कुटिल पापी और राक्षस आवे उसे उठाकर दूर फेंक दे और निर्भीक बढ़ता जा ।

●

आ० वे० प्र. म. मेवाल के अहर्गतं ता० २४-२५-२६-२७ शनि, रवि, सोमबार को होंडल (गुडगांवा) आर्यसमाज मन्दिर में 'कार्यवाही प्रशिक्षण शिविर लगने जा रहा है ।

शिविर में मेवाल क्षेत्र के ग्राम-ग्राम घर-घर में पद-यात्राओं द्वारा वैदिक सन्देश पहुँचाने के कार्यक्रम पर विचार होकर पदयात्राओं का कार्यक्रम बनाया जायेगा ।

शिविर में शिवरार्थियों को इस बात की शिक्षा-दिक्षा दी जायेगी कि बहुत मुस्लिम क्षेत्र में किस प्रकार प्रचार शैली अपनानी है तथा ग्रामों में बसे हिन्दूओं का मनोबल किस प्रकार खड़ा रखना है ।

अन्यथा मेवाल क्षेत्र के हिन्दू इस क्षेत्र को छोड़ कर चले जायेंगे जिस प्रकार मालव तहसील नूह में हुआ है ।

अत: प्रत्येक समझदार व्यक्ति से पुरजोर शब्दों में अपील है कि इस शिविर में पहुँच कर फिर जब सुविधा हो कम से कम १० दिन का समय दान देकर एक पदयात्रा टोली में ग्रामों में प्रचारार्थ जाने की कृपा करें ।

पदमचन्द आर्य मन्त्री

उत्साह के अंगारे

कूटनीतिज्ञ श्री भाई वंशीलाल जी

ले० प्रो० राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

आर्यसमाज के इतिहास में बंधुद्वय हुतात्मा श्यामलाल जी व भाई वंशीलाल जी का विशेष स्थान है। यद्यपि दोनों भाइयों का कार्यक्षेत्र हैदराबाद दक्षिण तक ही सीमित रहा परन्तु, कोई भी इतिहासप्रेमी इस तथ्य को झुठला नहीं सकता कि इन दोनों भाइयों ने समूचे आर्य जगत के इतिहास को एक नई दिशा दी। मध्य दक्षिण आर्य प्रतिनिधि सभा का इतिहास रक्तरंजित है। इस रक्तरंजित इतिहास में अगणित ज्ञात व अज्ञात वीरों ने अपनी-अपनी आहुति दी है। छोटे-बड़े सहस्रों आर्यों ने दुःख और कष्ट झेले हैं। जेल की यातनायें, दंगे में मारपीट अथवा घातक आक्रमण उनके लिए एक साधारण बात बन चुकी थी। उस काल के इतिहास का अवलोकन करने पर मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूं कि आर्यसमाज की प्रगति व गौरव का कारण यह था कि आर्यसमाज रूपी शरीर का मस्तिष्क, हृदय व भुजा तीनों स्वस्थ थे।

वंशी भाई आर्यसमाज के मस्तिष्क थे, श्याम भाई निजाम राज्य के आर्यसमाज के हृदय थे और श्री पं० नरेन्द्र जी आर्यसमाज की भुजा थे। श्याम भाई एक बलिदानी सेनानी थे। उनके तपोनिष्ठ जीवन से स्फूर्ति व चेतना पाकर सहस्रों ने धर्मरक्षा का व्रत लिया। सैंकड़ों ने जान जोखिम में डालकर जेल की काल कोठरी की कठोर यातनायें सहन कीं, गुण्डों का मान-मर्दन किया। श्री पं० नरेन्द्र जी की सिंहगर्जना व आत्मोत्सर्ग ने आर्यों को तेजस्विता प्रदान की।

श्री भाई वंशीलाल जी का मार्ग भिन्न था। वह कूटनीतिज्ञ थे। वह कभी निजाम सरकार की पकड़ में न आए। न कभी किसी दंगे में मार खाई। वह सदा कहा करते थे कि आर्य वह है जिसकी प्रज्ञा आर्य हो। यूं ही मार खाना, शत्रु, के हाथ आना बुद्धिमत्ता नहीं। मेरे मान्य मित्र श्री अशोक कुमार जी आर्य (शोलापुर) सुनाया करते थे कि गुलबर्गा के प्रसिद्ध दंगा के बाद पुलिस ने श्री भाई वंशीलाल, श्री पं० नरेन्द्र जी व श्री विनायक राव को थाना में बुलाया। भाई जी ने इन दोनों नेताओं को रोका कि मत जाओ। पुलिस की दुर्भावना को समझो। पं० नरेन्द्र जी व श्री पं० विनायक राव जी नहीं माने। तब वंशी भाई ने कहा कि अच्छा आप चलो, मैं भी आता हूं। आर्यजन जानते हैं कि पुलिस ने पं० नरेन्द्र जी की टांग तोड़ दी, श्री पं० विनायक राव जी की भर पेट पिटाई की।

इधर वंशी भाई ने श्री अशोक जी आदि से कहा कि चलो मुसलमानों के मुहल्लों से वेश बदलकर शोलापुर चलें। सबको आश्चर्य हुआ कि मुसलमानों के मुहल्ला से कैसे चल ? भाई जी ने कहा कि हिन्दु मुहल्ला को गये तो कहीं सन्देह होगा। निर्भीक होकर मुसलमानों के मुहल्लों से निकलो। कसाबों के मुहल्ला से सब बचकर निकल गये। किसी को तनिक भी सन्देह नहीं हुआ। यह थी उनकी नीतिज्ञता।

पुलिस ऐक्शन से पूर्व की बात है। रजाकारों से आर्यजन जूझ रहे थे। निजाम ने उन दिनों एक आर्य नेता को ५-१० लाख रुपये देने की पेशकश की। शर्त यह थी कि राज्य के बाहर विदर्भ या शोलापुर में एक समाचारपत्र चलाया जाए। उसमें निजाम का पक्ष भले ही न लिया जाए परन्तु निजाम के विरुद्ध कुछ न लिखा जाए। निजाम का विशेष दूत भाई जी से मिला। भाई जी एक रात्रि शोलापुर में श्री अशोक जी के पास आए और कहा कि निजाम का सन्देश मिला है। क्यों न ५-१० लाख ले लिया जाए

और आर्यसमाज के प्रचार के लिए पत्र निकाला जाए और निजाम से टक्कर भी जैसे हो सकता ली जाए। अशोक जी ने भाई जी को कहा कि ऐसा मत करना, आपकी भावना तो शुद्ध है परन्तु दूसरे आपकी समाज सेवा व श्याम भाई के बलिदान को बट्टा लगेगा। भाई जी ने अशोक जी का सुझाव सहर्ष स्वीकार किया। इस घटना से भाई जी के सोचने का ढंग का पता चलता है।

श्री अशोक जी ने सुनाया कि रजाकारों के आतंक युग में भाई जी मारे-मारे फिर रहे थे। एक स्थान पर वह एक खेत में बैठे हुरड़ा खा रहे थे कि वहीं घोड़े पर सवार एक बड़ा घातक डाकू आ गया। उसने पूछा क्या आप ही भाई वंशीलाल हैं? भाई जी ने निर्भीकता से हां में उत्तर दिया। उस सुसज्जित डाकू ने कहा कि मेरे योग्य कोई सेवा बतायें, जितना धन कहो लूट के ला दूं। भाई जी ने कहा धन नहीं चाहिए। कर सकते हो तो एक कार्य करो। लूटमार से क्या लाभ? उदगीर के समीप कहीं ऊँचाई पर एक कुख्यात रजाकार लीडर का गढ़ तोड़ सकते हो तो यह भारी देश-सेवा होगी। भाई जी के प्रेरणाप्रद शब्दों ने उस डाकू के जीवन की दिशा ही बदल दी। उसने यह कार्य कर दिखाया। यदि मैं भूल नहीं करता तो वीर मराठा अब विरक्त है। लातूर, उदगीर के लोग उसका नाम जानते हैं।

भाई जी ने एक बार वानप्रस्थ की घोषणा कर दी परन्तु व्रत से विचलित हो गये। साहसपूर्वक आर्यों से कहा—भाई, मैं संयम नहीं रख सका, यह व्रत मेरी शक्ति के बाहर है। यह थी उनकी सरलता। एक बार पं० आर्य भानु घारूरकर के साथ प्रचार के लिए गये। वर्षा आ गई। हिन्दुओं ने मुसलमानों के भय के कारण क्रान्तिकारी आर्यों को शरण न दी। भाई जी साहस कर एक मुसलमान के यहां चले गये। वहीं दोनों ने रात काटी।

हैदराबाद सत्याग्रह के समय सारे आर्य जगत को आन्दोलित करने वाली विभूति वही थे। इस में किसी को इनकार नहीं।

वीरवर वेदप्रकाश के बलिदान के समय वह गुंजोटी पधारे। उस समय उन्होंने घटनास्थल पर पहुँच कर जो मार्गदर्शन किया उसका विशेष लाभ रहा। वह सुवक्ता थे, सूझ अच्छी थी, हास्यरस में बोलते थे। बोलने में यथायोग्य का सिद्धान्त उनके सामने रहता था। पौराणिक के इस प्रश्न "कि हवन यज्ञ शौचालय में क्यों नहीं किया जाता?" का यथोचित उत्तर उन्होंने दिया। दक्षिण के आर्य वह उत्तर याद करके आज भी हँसी से लोट-पोट हो जाते हैं। निजाम राज्य पर 'मच्छर की जमानत' की कहानी का व्यंग कसना उन्हीं का कार्य था। डा० रघुतम मुनि जी लातूर वालों के द्वारा मैंने वह कहानी सुनी। हैदराबाद के पुलिस ऐक्शन से पूर्व सरदार पटेल से उन्होंने ऐतिहासिक भेंट की। सरदार ने तब कहा था कि हमारे धीरज का बांध अब टूट चुका है पग उठाना ही पड़ेगा।

●

बायें टेबुल पर बैठे हुए शहीद अमरसिंह (राजपुरा जीन्द) तथा खड़े हुए शहीद स्वर्णसिंह (गुलकनी जीन्द)।

१ जनवरी १९५८ को हिन्दी सत्याग्रह से लौटते हुए आप दोनों ट्रेन दुर्घटना में शहीद हो गये थे। जिनकी स्मृति में श्रद्धालु सज्जनों ने गुलकनी में एक शहीद स्मारक बनवा दिया है।

———

राजधर्म का विराट रूप

राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

ऋषि दयानन्द जी महाराज व आर्यसमाज ने विश्व व देश के लिए क्या किया है और क्या दिया है, यह सब जानते हैं। आर्यसमाज ने देश को श्री पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति, श्री महाशय कृष्ण आदि सरीखे पत्रकार शिरोमणि दिये।

आज कितने सौभाग्य व गर्व की बात है कि राजधर्म ने पत्रकार जगत में आर्यसमाज की पुनः धाक जमा दी है। मैं भावनावश यह सब कुछ नहीं लिख रहा। तथ्य स्वयं बोल रहे हैं। राजधर्म में कुछ मास पूर्व एक सम्पादकीय 'आल इन्दिरा रेडियो' शीर्षक से छपा था। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इस लेख का सर्वत्र स्वागत हुआ। देश के बुद्धिजीवी वर्ग व बहुजन समाज पर राजधर्म का घोष छा गया। पाञ्चजन्य, वीर अर्जुन, सरीखे साप्ताहिक व दैनिक पत्रों ने इसे सगर्व अपनाया। यहाँ तक बस नहीं भूतपूर्व कांग्रेस अध्यक्ष श्री कामराज ने भी १५ या १६ दिसम्बर को आकाशवाणी को 'आल इन्दिरा रेडियो' की संज्ञा दी है। देश भर के दैनिक पत्रों में श्री कामराज का यह वक्तव्य छपा है।

राजधर्म के अनूप रूप, विराट स्वरूप का यह एक प्रमाण है। हम सबको इस पर गर्व है।

विशाल शहीद सम्मेलन

३१ दिसम्बर व १ जनवरी १९७० को शहीद स्मारक गुलकनी-राजपुरा (जीन्द) हरियाणा में बड़े विशाल स्तर पर हिन्दी सत्याग्रह के शहीद स्वर्णसिंह अमरसिंह की स्मृति में एक शहीद सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है। सम्मेलन में बड़े-बड़े धुरन्धर वक्ता पधार रहे हैं। इस अवसर पर शराब बन्दी सम्मेलन तथा युवक सम्मेलन का भी आयोजन किया जायेगा।

अद्भुत व्यायाम प्रदर्शन

३१ दिसम्बर सायंकाल विचित्र व्यायामों का प्रदर्शन भी किया जायेगा।

सभी देशभक्त सज्जनों से प्रार्थना है कि वे पधार कर देशभक्ति का परिचय दें।

डी० — १

क्रान्तिकारी साहित्य

१. कायाकल्प
स्वामी समर्पणानन्द
पृष्ठ १४० आफसेट पेपर मूल्य १ रु०

२. अमर शहीद रामप्रसाद "बिस्मिल" की आत्मकथा

पृष्ठ १३० एन्टिक पेपर मूल्य १ रु०
१०० प्रतियाँ केवल ६० रु० में
राजधर्म प्रकाशन मन्दिर मार्ग नई दिल्ली-१

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के लिये
प्रो० श्यामराव द्वारा प्रकाशित एवं सम्राट् प्रेस,
पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित ।

श्रीयुत ....

राजधर्म
मन्दिर मार्ग नई दिल्ली-१
दूरभाष—४२०५१

पत्र व्यवहार करते हुए ग्राहक संख्या लिखना न भूलें ।

ओ३म्

राजधर्म

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का पाक्षिक मुखपत्र

सम्पादक
प्रो० श्याम राव

वर्ष-१ : अंक-११
वार्षिक शुल्क — १० रु०
एक प्रति ५० पैसे

१० अप्रैल १९६९
दयानन्दाब्द १४५

जवानो तुम्हें अब मचलना पड़ेगा !

सुनायी सभी ओर से दे रहा है,
जवानो तुम्हें अब मचलना पड़ेगा !
समझते जिसे ध्येय की पूर्ति तुम हो,
अरे, वह अभी ध्येय का रंच अथ है;
समझते जहां से हो तुम अंत पथ का,
वहीं से आरंभ होता सुपथ है;
जहाँ पर समझते हो विश्राम का घर,
वहीं से तो अभियान करना पड़ेगा !
जवानो ! तुम्हें अब मचलना पड़ेगा ॥
हुआ अंत परकीय सत्ता का सचमुच,
नहीं कुछ हुआ किन्तु स्वाधीन मन है;
नयन खोलने से पड़ेगा दिखायी,
सभी का हुआ जो कि नैतिक पतन है;
कलुष से सराबोर जो राष्ट्र सारा,
तुम्हें चित्र उसका बदलना पड़ेगा !
जवानो ! तुम्हें अब मचलना पड़ेगा ॥

जिन्हें हम समझते हैं मल्लाह अपने,
वही दे रहे नाव पूरी डुबाये;
नहीं कार्य में हैं सफलता के लक्षण,
अधाधुंध वादों के बादल हैं छाये;
अखिल नीति-नम-स्वच्छता के लिए,
प्रबल वायु का वेग बनना पड़ेगा !
जवानो ! तुम्हें अब मचलना पड़ेगा ॥
उठो यादकर तुम हकीकत को युवको,
प्रखर वाण बन्दा के रक्तिम पुकारें;
खड़ा दूर 'राणा' तुम्हें हेरता है,
द्रुपद की सुता-सी सहस्त्रों पुकारें;
कहाँ सो रहे हो बधिर-से बने तुम,
सभी त्याग आलस्य, जगना पड़ेगा !
जवानो ! तुम्हें अब मचलना पड़ेगा ॥

—भैरवदत्त शुक्ल

× × ×

सम्पादकीय

........हर शाख पे 'गुरुवर' बैठे हैं

हिन्दू समाज को गुरुओं की गुरुडम ने खोखला कर दिया है। गुरु भी एक दो नहीं कई हैं। कोई परम पूजनीय गुरु हैं तो कोई जगद्गुरु हैं जगद्गुरु भी चारों कोनों पर चार और अन्दर बेशुमार बैठे हैं। नाम और धाम अलग-अलग पर काम एक ही है—गुरुडम।

पुरी के जगदगुरु शंकराचार्य विश्व हिन्दू सम्मेलन की अध्यक्षता करने पटना पधारे। इस सम्मेलन में जहां और विशिष्ट अतिथि आमन्त्रित थे वहां भारत सरकार के शिक्षा मन्त्री डा० वी० के० ग्रार० वी० राव भी आये थे। डा० राव ने अपने भाषण में हिन्दू समाज से अस्पृश्यता निवारण के लिये ठोस कदम उठाने पर जोर दिया। इस पर जगद्गुरु शंकराचार्य जी भड़क उठे। उन्होंने आव देखा न ताव, गरज कर बोले "छुआछूत हिन्दू धर्म का आधारभूत सिद्धान्त है और कोई भी कानून हिन्दुओं को इस नियम पालन से नहीं रोक सकता। हिन्दू धर्म में छुआछूत को स्वीकार किया गया है और वह कुछ व्यक्तियों को जन्म से ही अस्पृष्य मानता है। शंकराचार्य के नाते मैं इस संबंध में किसी भी ऐसी बात को मानने से नहीं हिचकिचाऊंगा, जो कि शास्त्रों में कही गई है। कोई भी मुझे छुआछूत के प्रश्न पर हिन्दू धर्मग्रथों के अनुसार चलने के अधिकार से वंचित नहीं कर सकता। मेरा रुख यही है और सरकार जो भी कदम मेरे खिलाफ उठाना चाहे, उठा सकती है। यदि वह चाहे तो मुझे फांसी भी दे सकती है।" बाद में तो और भी बहुत सारा नाटक किया। जब सभा की समाप्ति पर राष्ट्रगीत "जन-गण-मन" गाया जाने लगा तो सभा से 'वाक आउट' (बहिर्गमन) कर गये।

कितने दुःख की बात है कि आज जब सदियों की दासता के बाद इस राष्ट्र के जीवन में कुछ स्पन्दन की अनुभूति होनी आरम्भ हुई थी उस समय ये धर्म और आचार के तथाकथित ठेकेदार अपने दकियानूसी, दम घोंटने वाली, समाज को जर्जरित बनाने वाली नितान्त अनैतिक विचारधारा का बड़ी बेहयाई के साथ प्रचार करने में लगे हैं। एक ओर तो ईसाई और कम्यूनिस्टों का अराष्ट्रिय प्रचार राष्ट्र को खोखला बना रहा है—हजारों की संख्या में हमारे देशवासी ईसाइयत के चंगुल में फंसते जा रहे हैं—उनकी गरीबी, अज्ञानता और बेबसी का फायदा उठाकर पश्चिमी साम्राज्यवाद के ये भेड़िये उन्मुक्त होकर 'सरकारी लाइसेन्स' पर उनका शिकार कर रहे हैं। दूसरी ओर अपने ये ठेकेदार अपने भाइयों को अस्पृष्य और छूत मानकर यह घोषणा कर रहे हैं कि "छुआछूत हमारे धर्म का आधारभूत सिद्धान्त है।" वास्तव में इस राष्ट्र की राष्ट्रियता पर सब से प्रथम और प्रबल प्रहार तो इस हिन्दूधर्म के आदि शंकराचार्य ने उस दिन किया जिस दिन उन्होंने 'वेदान्त दर्शन' का भाष्य करते हुए यह लिखा कि (जन्म के ब्राह्मण को छोड़कर) यदि कोई शूद्र वेद मन्त्र उच्चारण करे तो जीभ छेदन कर दो, यदि सुन ले तो कान में सीसा पिघलाकर डाल दो और धारण करे तो अंगच्छेदन कर दें। इस प्रकार देश के एक बड़े भारी समुदाय को न केवल ईश्वरीय ज्ञान को प्राप्त करने से वञ्चित रखा गया वरन् उन्हें नीच, अन्त्यज और अछूत मानकर उनके साथ पशुओं से भी बदतर व्यवहार किया गया। दक्षिण भारत की यात्रा से लौटकर मैंने "हिन्दुओं ! कुछ सम्भलो" शीर्षक लेख में यह दिखाने का प्रयास किया था कि आज हमारे देश में ईसाई कुचक्र के सफल होने का प्रमुख कारण हमारी धार्मिक और सामाजिक कुरीतियां हैं जिनसे हिन्दू समाज के ठेकेदार चिपट कर बैठे हैं। जिस प्रेस में हमारी यह पत्रिका छपती है उसी में पिछले दिनों एक दूसरी पुस्तक को प्रकाशित होते देख मैं हैरान रह गया—पुस्तक के प्रकाशक डा० अम्बेदकर के शिष्य थे—पुस्तक का नाम था—"सम्मान से जीना चाहते हो तो धर्म

परिवर्तन करो"सचमुच आज हिन्दू समाज में पिछड़े लोगों को सम्मान से जीने के लिये कोई जगह नहीं है पर वही व्यक्ति यदि ईसाई या बौद्ध हो जाय सुदर्शन से मि० सैन्डरसन हो जाय तो उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ जाती है।

सदियों से कुण्ठित और कोढ़ के खाज से पीड़ित इस समाज को देव दयानन्द ने एक क्रान्ति का नारा दिया—गुण, कर्म स्वभाव के आधार पर वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था की आधारशिला रखते हुये उन्होंने मनुष्य-मनुष्य के बीच के सारे भेदभाव की दीवार ढहाकर एक नवीन समाज के निर्माण की परिकल्पना रखी। आज उस क्रान्ति की चिनगारियां यत्र-तत्र बिखर रही हैं और रूढ़ियों की बेड़ियां टूटने लग रही हैं। आवश्यकता तो इस बात की थी कि 'हिन्दू धर्म" के ठेकेदार आगे बढ़ कर इस परिवर्तन का स्वागत करते और संकीर्ण मतमतान्तरों को गाड़ कर विशुद्ध धर्म के अनुयायी बनते। पर विश्व हिन्दू धर्म सम्मेलन के दूसरे दिन के विद्वत् परिषद् के अध्यक्ष काशी के पण्डित राजराजेश्वर शास्त्री ने कहा कि 'हिन्दू धर्म के वास्तविक रूपों को यथायोग्य बनाये रखने के लिये भी जरूरी है कि हम अपनी पुरानी मान्यताओं में किसी भी प्रकार के परिवर्तन नहीं करें क्योंकि ऐसा करने से हम अपनी प्राचीन परम्पराओं को स्थिर नहीं रख सकते।" कैसी विडम्बना है? एक ओर तो प्रस्ताव पास किया जा रहा कि ईसाई मत में गये लोगों को वापस लो दूसरी ओर अपने ही भाईयों को 'छुआछूत' के नाम पर और प्राचीन मान्यताओं के नाम पर उनके आत्मसम्मान को कुचलकर उनका परित्याग किया जा रहा है!

एक ओर तो जन्म के नाम पर किसी को शूद्र बताकर उसे धार्मिक सामाजिक अधिकारों से वंचितकर अपमानित और लज्जित किया जा रहा है दूसरी ओर ब्राह्मण कुल में जन्म लेने के मिथ्या गौरव को प्रश्रय देते हुए महाभ्रष्ट, शराब और मांस में डूबे रहने वालों को ब्राह्मण मानकर और चोर बाजारी, शोषण और धोखाधड़ी करने वाले व्यापारियों को वैश्य बनाकर उन्हें प्रतिष्ठित किया जा रहा है। इस प्रकार के अनर्गल प्रचारकों को ही महर्षि दयानन्द ने 'पोप' की संज्ञा दी थी और इस पोपलीला का पर्दाफास करने के लिये कुम्भ के मेले में पाखण्ड खण्डिनी पताका फहराई थी। नौजवानों! उठो-इस पताका को आज हाथ में लेकर पोपों के गढ़ पर आक्रमण कर दो। जब तक इस पोपलीला को धू-धू जलाकर हम भस्म नहीं कर देते तब तक हम सजग सुदृढ़ राष्ट्रियता की स्थापना में सफल नहीं हो सकते। रास्ते के इन रोड़ों को हटाना होगा—पोपों के दरबार में क्रान्ति की मशाल लेकर घुस पड़ो और इन के निहित स्वार्थों के महलों को आग लगाकर इसकी ईंट-ईंट नष्ट कर दो। नव निर्माण तभी आरम्भ होगा।

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् ऐसे नवजवानों का दल है जो इस प्रकार के गुरुडम और पोपलीला के विरुद्ध विद्रोह करता है और वैदिक वर्णाश्रम के सिद्धान्तों के आधार पर आर्यराष्ट्र की स्थापना के लिये रचनात्मक कामों में विश्वास रखता है। आज जरूरत है देश के सभी क्रान्तिकारी विचार रखने वाले नवयुवकों के संगठित होने की क्योंकि गुरुडम को फैलाने के लिये बड़े-बड़े अजगर बैठे हैं। अभी पिछले दिनों हमने सम्पादकीय में 'परमपूजनीय' गुरु गोलवलकर जी के वक्तव्य का उल्लेख किया था जिसमें उन्होंने जन्म के आधार वर्ण व्यवस्था की स्थापना की थी। हम तो इन एक ही गुरु जी से परेशान थे अब एक और जगद्गुरु बहक गये। सुनते हैं कई जगद्गुरु हैं। इन सबके हाव-भाव और आकार प्रकार को देखकर हमें हठात् शायर की ये पंक्तियां याद आ जाती हैं—

बरबाद चमन को करने को, जब एक ही उल्लू काफी है
अन्जामे गुलिस्तां क्या होगा। हर शाख पे उल्लू बैठे हैं

—श्यामराव

★

जब तक "मत-छुओ-वाद" तुम्हारा धर्म है और रसोई का बर्तन तुम्हारा देवता है तब तक तुम्हारी आध्यात्मिक उन्नति नहीं हो सकती। —स्वामी विवेकानन्द

योजना बना रहा है। अमेरिका का सातवां बेड़ा चीन सागर में डटा हुआ है। ब्रिटेन के सिंगापुर छोड़ देने पर १९७३ में उसका स्थान कौन लेगा ? क्या चीन लेगा ? चीन प्रयत्नशील है। रूस और अमेरिका दोनों इसका प्रतिरोध करेंगे, यह आशा भारत को जीवित रखे हुए है। पर वह अण्डमान और निकोबार की किलेबन्दी करने में सचेष्ट है।

तीसरा महायुद्ध भारत में

समर-पण्डितों का अनुमान था कि तीसरे महायुद्ध का रण-क्षेत्र एशिया होगा। एशिया में कोरिया, वियतनाम, फारमूसा, चीन का समुद्रतट, पश्चिम एशिया आदि अनेक स्थल हैं जो विश्वयुद्ध का आह्वान कर सकते हैं किन्तु कोरिया, वियतनाम और पश्चिम एशिया में हुई लड़ाइयां विश्व-युद्ध का आह्वान करने में असमर्थ रहीं। दक्षिण-पूर्व एशिया में तीसरा महायुद्ध लड़ा जायगा, यह आज भी माना जाता है। इस धारणा के पीछे एक इतिहास और भूगोल है। अग्नेय एशिया या दक्षिण-पूर्व एशिया का विस्तार आकरिसन नदी से लेकर वलिंगटन (न्यूजीलैंड) पर्यन्त तक है। इस सम्पूर्ण भू-भाग को एक भौगोलिक यूनिट जब तक न माना जायगा, यह भाग कभी पहले के समान विश्व का भाग्य निर्माता न हो सकेगा। इस भाग का केन्द्र या नाभि भारत है। सब जल-मार्ग और हवाई मार्ग भारत से होकर जाते हैं। अतः तीसरा महायुद्ध इस बार पश्चिम यूरोप में नहीं, भारत में लड़ा जाएगा।

चीन ने जब तिब्बत पर कब्जा किया था, उस समय यदि भारत चाहता तो वह अमेरिका को चीन से लड़ा सकता था और तिब्बत की स्वाधीनता का रक्षक हो सकता था। परन्तु भारत के शासकों ने मायावी चीन की मिथ्या मैत्री को मूल्यवान माना और रण-क्षेत्र से मुख मोड़ लिया। फलतः आज चीन भारत की उत्तरी सीमा पर छाया हुआ है। दक्षिण-पूर्व एशिया के देश हिमालय से पार चीन की ओर देखते हैं। भारत को कोई अपना रक्षक और सहायक नहीं मानते। भारत इन देशों को किसी प्रकार की मदद पहुंचा सकता है, यह वह विश्वास नहीं करते। जो देश अपना दैनिक व्यवहार विदेशी भाषा में चलाता है, वह दूसरों की क्या मदद कर सकता है ? भारत के पास अपना क्या है ? पश्चिमी टेकनालाजी के लिए ये देश सीधे पश्चिमी यूरोप के पास क्यों न जावें, भारत के माध्यम से क्यों जावें ? जापान का वह स्वागत करने को तैयार हैं, पर भारत का नहीं। भारत भारतीय नहीं है, फलतः वह दक्षिण-पूर्व एशिया का केन्द्र-बिन्दु होकर भी शक्ति का केन्द्र नहीं बन सका।

चीनी राक्षस के पैने दांत

एशिया में भारत का यथार्थ में प्रतियोगी चीन है। एंग्लोअमेरिका ने पाकिस्तान को बनाने की कोशिश की है। चीन विश्व की तीसरी महती शक्ति है। उसके पास अणुबम, उद्जन बमों और मिसाइलों का संग्रह फ्रांस से अधिक है। वह रूस और अमेरिका दोनों के दांत खट्टे करने की सामर्थ्य रखता है। कोरिया और वियतनाम में वह अमेरिका को पराजय दे चुका है। सोवियत रूस को उसने साइबेरिया और रूसी तुर्किस्तान खाली करने का नोटिस दिया है। भारत के नेफा पर उसका नियंत्रण है। अकसाई चीन द्वार उसके अधिकार में है। लद्दाख की १८००० वर्गमील भूमि पर वह जमा हुआ है। और उसको छोड़ने से इनकार करता है। भयभीत भारत ने उसको प्रसन्न करने के लिए अपनी सीमा चार कद नदी से हटाकर कराकोरम पर्वत पर ले आने की भारी गलती की है। क्यूलून पर्वत माला की परिक्रमा करके मंगोलिया जाने का अपना द्वार बन्द कर दिया है। 'चीन' विश्वविजय की महत्त्वाकांक्षा संजोए हुए है। उसको अपनी बढ़ती आबादी विश्व भर में फैलानी है। उसको तेल भी चाहिए। नेपोलियन के समान चीन भी विश्वास करता है कि जो कोई भारत का स्वामी होगा, वह विश्व का भी स्वामी होगा। अमेरिका और रूस ने भारत का स्वामित्व और नियंत्रण भारत को कर्जदार बनाकर प्राप्त किया है। चीन भारत को विजय करके दक्षिण-पूर्व एशिया का स्वामी होना चाहता है।

पिछले इक्कीस सालों में चीन, भारत में दूर तक पैठ चुका है। भारत में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी है। सम्पूर्ण पर्वतीय क्षेत्र इस समय चीन के प्रभाव में है। नेपाल से उसने २८०० गुरखा सैनिक मांगे हैं। यह इस बात का एक प्रमाण है कि चीन अमेरिका और रूस से टक्कर लेने

के लिए भारत-भूमि को उपयुक्त रणक्षेत्र समझता है। विश्व का भाग्य विधाता इस समय क्या माओ-त्से-तुंग और चाऊ-एन-लाई नहीं है, जैसे १९३८ में हिटलर और रिबन ट्राप थे ?

दूसरे महायुद्ध में रोमेल ने सीटेनिका और लीबिया के मरुस्थल को टैंक-युद्ध के लिए आदर्श समर-क्षेत्र बना दिया। इतना बड़ा, इतना विस्तृत और विशाल मैदान दूसरे महायुद्ध में नहीं बना। इसी प्रकार जैसा भीषण और बड़ा टैंक-संग्राम यहां हुआ, वैसा अन्यत्र नहीं हुआ। रोमेल टैंक-युद्ध सदृश टैंक-युद्ध भारत में ही सम्भव है। करांची से कलकत्ता तक का विशाल मैदान टैंक-युद्ध के लिए आदर्श रण-क्षेत्र होगा। इतना बड़ा मैदान शायद दुनियाँ भर में दूसरा नहीं है।

भारत पहले दो महायुद्धों में विश्व-युद्ध का तल बना था। अड्डा रहा। तीसरे महा-युद्ध में उसको रण-क्षेत्र भूमिका अदा करनी होगी। विशाल सेनायें आगे बढ़ सकें, पीछे हट सकें, सरलता से रसद और युद्ध सामग्री प्राप्त कर सकें, बड़े-बड़े तोपखाने और टैंक तीव्र वेग से दौड़ा सकें, यह सब भारत में संभव है। अतः भारत से अच्छा रण-क्षेत्र दूसरा न होगा।

परन्तु चीन के लिए गंगा-सिन्धु घाटी आकर्षक नहीं है। यहां उसको जन-प्रतिरोध का पग-पग पर सामना करना पड़ेगा। यहां उसको किसी प्रकार की मदद नहीं मिलेगी। यहां सघन बस्ती है। चीन को चीनी बसाने के लिए जमीन चाहिए। यहां उसको उसके लिए भूमि नहीं प्राप्त हो सकेगी। हां, गुजरात का तेल उसको अवश्य आकर्षित करेगा। पर, वह इसको पाकिस्तान पर छोड़ सकता है। कंजरकोट पाकिस्तान को दिलाने का एक कारण यह भी है।

असम में लड़ाई होगी

दूसरी ओर असम की ब्रह्मपुत्र घाटी आदर्श रण-क्षेत्र सिद्ध होगी। ब्रह्मपुत्र सिन्ध और गंगा से बड़ी नहीं है। इसमें स्टीमर गोहाटी-तेजपुर तक आ सकते हैं। यही नहीं यहाँ समुद्रगामी जहाज भी ब्रह्मपुत्र नदी में काफी दूर तक आ सकते हैं। चटगांव बंदरगाह की राह चीन सब प्रकार की युद्ध-सामग्री जल मार्ग से ला सकता है।

टैंक-युद्ध और तोपखाने के संग्रह के लिए ब्रह्मपुत्र घाटी आदर्श रण-क्षेत्र है। ब्रह्मपुत्र घाटी २५ मील चौड़ी और ५०० मील लंबी है, यह न भूलना चाहिए।

पेकिंग से सीधा स्थल-मार्ग असम तक तैयार है। ल्हासा से तवांग तक मोटर रोड बनानी शेष है। यह कार्य १५ दिन में कर लेगा। ल्हासा से पेकिंग तक ट्रक रोड है। तवांग से सेला, बोमडीला और तेजपुर तक मोटर रोड भारत ने तैयार कर ली है। अतः स्थल, मार्ग से भी चीन को रसद और युद्ध सामग्री और सेना लाने में कोई विशेष दिक्कत न होगी।

बर्मा रोड भी मौजूद है। चुंगचिंग से खदिया तक सड़क चलती हुई है। उधर रंगून से इम्फाल तक की सड़क इस समय बनी है, पर वह पुनः जारी हो सकती है। अतः रंगून की राह भी चीन के लिए खुली है। वह रूस और अमेरिका के नियंत्रण से मुक्त है। बम वर्षा का इसको भी कोई भय नहीं है। वियतनाम के संग्राम ने बता दिया है कि बम-वर्षा के कारण सेना के संचार में क्षणिक बाधा पहुंचती है, स्थायी नहीं।

असम का तेल और असम की विरल आबादी, भू-गर्भ सम्पत्ति भी चीन को असम को रण-क्षेत्र बनाने के लिए ललचाती है।

इन कारणों के अतिरिक्त राजनीतिक कारण भी है। राजनीतिक दृष्टि से असम भारत के एक अंग के रूप में ब्रिटिश शासन काल से पहले अति प्राचीन काल में ही था। औरंगजेब असम को जीत नहीं सका। अंग्रेजों ने बर्मी नरेश थीबो से असम पाया था। किसी भारतीय नरेश से नहीं। जाति, नस्ल और रक्त की दृष्टि से यहां बसे लोग थाई वंश के हैं। मीजो लोग गो-भक्षक हैं। इनके लिए गोरक्षा का कोई महत्त्व नहीं है। असम का आर्यीकरण किया भी नहीं गया। यहां के लोगों की सहानुभूति चीन के प्रति स्वाभाविक है। इनकी नसों में मंगोल खून है। कोहिमा में विद्रोही नागाओं और भारतीय सेना के बीच हुई झड़पें इस दृष्टि से महत्त्व की हैं। शास्त्रास्त्रों की परीक्षा के लिए यह संघर्ष किया गया था। चीन अपने हथियारों की शक्ति देखना चाहता था। चीनी सेना को यहां स्थानीय लोगों की ओर से सब प्रकार की सहायता

मिलने की आशा है।

क्या सरकार जवाब देगी ?

इसके विपरीत भारतीय सेना को अपने ही बल पर लड़ना होगा। स्थानीय जनता से वह किसी प्रकार की मदद की आशा नहीं कर सकती। १९६५ की लड़ाई में जैसी मदद स्थानीय लोगों ने दी थी। वैसी मदद पाने की आशा सेना असम में नहीं कर सकती।

असम की चप्पा-चप्पा भूमि से चीन परिचित है। पाकिस्तान उसकी मदद पर होगा। अमेरिका और रूस के लिए यह प्रदेश अज्ञात है। मार्ग तक उनको पता नहीं। नदियों के बहाव को भी वह नहीं जानते। यहां सदियों में युद्ध हो सकेगा। असम का बर्मी चीन का सहायक होगा। अतः इन कारणों से तीसरे विश्व महायुद्ध का टैंक युद्ध ब्रह्मपुत्र घाटी में लड़ा जाएगा। प्रश्न यही है, क्या हम इसके लिए तैयार हैं ? यदि नहीं, तो क्या तैयारी कर रहे हैं ? भारतीय जनता यह जानने को उत्सुक है। क्या सरकार जवाब देगी ?

वेतन बढ़वाने के लिए दूध पीना पड़ा

झांसी की रानी लक्ष्मीबाई अपने सैनिकों के प्रति पुत्रवत् स्नेह रखती थी। सैनिकों के लिए स्वास्थ्यवर्धक प्रतियोगितायें आयोजित करना भी रानी मां का एक प्रिय विषय था। एक बार सैनिकों के बीच क्षोभ उत्पन्न हुआ कि उनका वेतन कम हैं। बात रानी के कानों तक पहुंची और वे सीधे सैनिकों के सामने उपस्थित हुईं। बोलीं—"मैं देखना चाहती हूँ कि हमारे सैनिकों का कितना बड़ा पेट है कि उनका वेतन कम पड़ रहा है ?" और उन्होंने दूध पीने की प्रतियोगिता कर दी। उनका कहना था कि जो सैनिक जितना अधिक दूध पी सकेगा, उसी हिसाब से उसका वेतन बढ़ा दिया जायगा। फलस्वरूप सभी सैनिक दूध पीने बैठ गये और रानी माँ प्रसन्न मुद्रा में सब कुछ देखने लगीं।

चमरू नाम के सैनिक का कहना था कि उसने अठारह सेर दूध पिया। उसके एक साथी ने १९ सेर तक नम्बर बढ़ा दिया। किन्तु अन्त में विजयी हुआ एक दक्षिणी सैनिक जिसने २१ सेर दूध पी डाला। रानी अपने सैनिकों के सामर्थ्य से बहुत प्रसन्न हुईं और उन्होंने सभी सैनिकों का वेतन बढ़ा दिया।

शिक्षा-पद्धति बदलो !

गुरुदत्त

कोई दिन ऐसा नहीं जाता जिस दिन कहीं न कहीं विद्यार्थियों से अहिंसात्मक उपद्रव किये जाने का समाचार न आये। पञ्जाब से लेकर असम तक और कश्मीर से लेकर केरल तक यह वर्ग नित्य कहीं न कहीं घेराव, पथराव, अग्नि-काण्ड अथवा तोड़-फोड़ करता सुना जाता है।

हमारे बुद्धिमान शासक, समाचार-पत्र और संसद् सदस्य इस अशान्ति और उपद्रव को देखते हैं और सरकार को शान्ति न रख सकने पर कोसते हैं। यदि वे कुछ दूर की बात करें तो कहने लगते हैं कि शिक्षा की योजना में भूल हो रही है। सरकार ऐसी शिक्षा दे रही है कि जिस के लिए देश में मांग नहीं है। सरकार इंजीनियर बना रही है और इंजीनियर बेकार घूम रहे हैं। सरकार डाक्टर बना रही है और डाक्टरों के पास न तो औषधियाँ हैं और न ही जनता के पास उन औषधियों को क्रय करने की शक्ति है। सरकार क्लर्क बना रही है और क्लर्कों के लिये इतनी नौकरियां नहीं हैं।

परन्तु जब कालेजों में प्रवेश लेने के दिन आते हैं तो विद्यार्थियों की भीड़ कालेजों में लगी दिखायी देती है, जिनको प्रवेश नहीं मिल रहा होता। जिनके अंक उस सीमा रेखा से ऊपर होते हैं जो सीमा रेखा कालेज की पढ़ाई के लिए निर्धारित होती है, वे भी प्रवेश नहीं पा सकते और वे भी नहीं, जिनके अंक इस सीमा रेखा से नीचे होते हैं। सब भाग दौड़ करते दिखाई देते हैं और प्रवेश पाने के लिए सिफारिशी चिट्ठियां भी चलती देखी जाती हैं। क्या ये दोनों बातें परम्परा विरोधी नहीं हैं? हमारे बुद्धिमान् विधायक जहाँ सब प्रत्याशियों के लिए कालेजों के द्वार खुलवाने के लिए हाय-तोबा मचाते हैं, वहाँ यह कहते भी नहीं थकते कि कालेजों की पढ़ाई योजना-बद्ध नहीं अथवा दोषपूर्ण योजना के साथ है। यदि यह बात है तो फिर जो इस आयोजित अथवा अशुद्ध संयोजित शिक्षा में प्रवेश दिलाने की वे चिन्ता क्यों करते हैं?

देखा जाये तो विदित होगा कि शिक्षा में दोष तो है, परन्तु दोष वह नहीं, जो प्रायः समाचार-पत्रों में लेख लिखने वाले प्रकट किया करते हैं अथवा संसद् में विपक्षी सदस्य प्रायः कहते रहते हैं। इन लोगों के प्रायः दो लक्ष्य होते हैं। कुछ तो यह कह कर बात टालना चाहते हैं कि दोष सरकार का है जो मिथ्या योजना बनाती है और जो पढ़े-लिखों की नौकरी का प्रबन्ध नहीं करती। दूसरे हैं जो विद्यार्थियों में अशान्ति का कारण विपक्षियों पर डालते रहते हैं यह कह कर कि वे उनको भड़काते हैं। परन्तु ये रोग का मूल कारण नहीं है।

वास्तविक बात यह है कि यह शिक्षा जिस पर अरबों रुपये प्रति वर्ष व्यय किये जा रहे हैं, शिक्षा ही नहीं। जो शिक्षक इसके लिए नियुक्त हैं, वे स्वयमेव शिक्षित नहीं और शिक्षक बनने के योग्य नहीं। वे लोग जो इसका प्रबन्ध करते हैं वे नौकर-पेशा क्लर्क मात्र हैं।

शिक्षा के विभाग में तीन स्तर के लोग हैं। सरकारी स्तर के, प्राध्यापक स्तर के और तीसरे इन दोनों से ऊपर योजनायें बनाने वाले। ये तीनों वर्ग शिक्षा का प्रबन्ध कर रहे हैं और ऐसा प्रतीत होता रहा है कि शिक्षा क्या है इसकी समझ किसी को भी नहीं।

सर्वप्रथम योजना बनाने वालों की बात देखिये। शिक्षा पर नवीनतम रिपोर्ट कोठारी कमीशन की है। यह कमीशन सन् १९६४ में नियुक्त की गयी थी और सन् १९६६ में इसकी रिपोर्ट प्रकाशित हुई। सन् १९६७ में इस पर संसद् ने विचार किया।

तनिक देखें कि यह रिपोर्ट शिक्षा को क्या समझती है? रिपोर्ट का प्रथम अध्याय है "शिक्षा और राष्ट्री

उद्देश्य" । शब्द हैं Education and National Objective.

"नैशनल आबजेक्टिव" अर्थात् राष्ट्रीय उद्देश्य क्या है ? इस विषय में रिपोर्ट के इसी अध्याय के पैराग्राफ १.-०४ में लिखा है—

......But education connot be considered in isolation or planned in a vacume. It has to be used as a powerful instruement of sociol, economic and political change and will therefore have to be related to the long term national aspiration, the programme of national development on which the country is engaged.

ये महानुभाव शिक्षा का यह उद्देश्य समझे हैं। हमारा यह कहना है कि यह उद्देश्य मिथ्या है । पेड़ के पत्तों को पानी देने के समान है ! शिक्षा के सम्मुख यह समस्या नहीं है ।

शिक्षा का उद्देश्य है श्रेष्ठ, सबल, सतर्क, सजग और बुद्धिमान् मानव निर्माण करना । ऐसे मानव जो न केवल सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तन लाने में शक्तिशाली साधन हों, वरंच इन परिवर्तनों की आवश्यकता और दिशा पर विचार करने की भी क्षमता रखते हों । देश में ऐसे मानव निर्माण करना शिक्षा का उद्देश्य है जो न केवल राष्ट्रीय भावनाओं को पूर्ण कर सकें, वरंच राष्ट्रीय भावनाओं के बनाने अथवा समाप्त करने की भी योग्यता रखते हैं ।

उक्त रिपोर्ट वाले यह समझकर चले हैं कि उनकी राष्ट्रीय भावना क्या है, उन्होंने क्या, क्या सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक, परिवर्तन करने हैं और उनको करने के लिए वे महानुभाव शिक्षा की योजना बनाने बैठे हैं ।

यही सबसे बड़ी भूल है । शिक्षा मूर्खों द्वारा निर्मित उद्देश्यों को फलीभूत करने के लिए कठपुतलियाँ निर्माण करना नहीं है । यह ऐसे मनुष्य निर्माण करने के लिए है जो इतनी सूझ-बूझ रखते हों कि वे स्वयं विचार करें कि क्या परिवर्तन उचित है और क्या उचित नहीं ।

पूर्ण कोठारी रिपोर्ट को पढ़ जाने पर पता चलेगा कि रिपोर्ट के लिखने वाले प्रजातन्त्र, समाजवाद, तकनीकी उन्नति और जीवन स्तर को ऊँचा करना जाति का उद्देश्य मान चुके हैं और उन्होंने इसकी पूर्ति के लिए शिक्षित समाज का निर्माण करना है । यह गलत दिशा है । शिक्षा का उद्देश्य यह होना चाहिये कि सजग, सजीव, बुद्धिमान् एवं शरीर से सुदृढ़ मानव निर्मित हों । ऐसे मानव यह विचार करेंगे कि प्रजातन्त्र ठीक है अथवा किसी और प्रकार का राजनीतिक ढांचा, आर्थिक समस्या समाजवाद से सुलझेगी अथवा किसी अन्य प्रकार के समाज से। शिक्षा उक्त बातों के लिए नहीं है । शिक्षा मानव कल्याण के लिए है और यह मानव कल्याण मानवों ने ही करना है । इस कारण सब प्रकार से योग्य मानव निर्माण करना ही शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिये ।

यह तो बात है योजना बनाने वालों की । अब शिक्षा विभाग के दूसरे स्तर के लोगों की बात पर विचार करें। वे हैं वाईस चान्सलर से लेकर प्राइमरी स्कूल के अध्यापक तक । इनकी पढ़ा सकने की योग्यता पर हम सन्देह नहीं करते, परन्तु ये सब वेतन के लिए काम करने वाले लोग हैं और जहाँ से वेतन मिलता है, उनके कहने के अनुसार कार्य करने वाले हैं । सबसे बड़ी संस्था इनको नौकर रखने वाली सरकार है । जब से सरकार डांवाडोल हुई है, तब से ही अध्यापकों में हलचल देखने में आती है । यह हलचल पञ्जाब में हो चुकी है, दिल्ली में हो चुकी है, उत्तर प्रदेश में हो रही है, बिहार और बंगाल में भी है । इसी प्रकार देश के प्रायः सब राज्यों में है । इस हलचल का कारण ऐसा है, जैसे किसी बड़ी व्यापारिक कम्पनी का मालिक दुर्बल और वृद्ध हो जाये और उसका स्थान लेने वाले बहुत से प्रत्याशी हों तो कम्पनी के कर्मचारी अपनी उन्नति की आशा में भिन्न-भिन्न प्रत्याशियों के पास पहुंच, उनकी खुशामद करने लगते हैं तथा दूसरे प्रत्याशियों की निन्दा करने लगते हैं । और कभी-कभी काम छोड़ बैठते हैं यह कहकर कि जब तक मालिक का निश्चय नहीं हो जाता, वे क्या करें, क्यों करें, किसकी पसन्द का करें ?

होना यह चाहिये कि ये अध्यापक स्वतन्त्र हों, सरल सादा जीवन व्यतीत करने वाले हों । इनकी महिमा इनके

जीवन स्तर के अनुसार न हो, वरंच इनकी विद्वत्ता के अनुसार हो। लाखों की संख्या में, वेतनों पर पलने वाले, शिक्षा का कार्य कर रहे हैं और वे अपने मालिकों को प्रसन्न करने में संलग्न हैं। विद्यार्थी क्या सीखते हैं और क्या नहीं सीखते, यह उनका उत्तरदायित्व नहीं होता। अधिक से अधिक वे यह देखते हैं कि उनके कार्य से उनके मालिक प्रसन्न हैं अथवा नहीं ?

शिक्षा विभाग के तीसरे स्तर पर आती है सरकार। सरकार से हमारा अभिप्राय है प्रधान मन्त्री, मुख्य मन्त्री तथा मन्त्री गण, विधान परिषदों और संसद् के सदस्य, इनके साथ ही शिक्षा विभाग के निर्देशक इत्यादि। ये सब लोग शासक दल का रूप होते हैं और होना भी चाहिये। यहाँ तक कि बड़े से बड़े विश्वविद्यालय का वाईस-चान्स-लर, विश्वविद्यालय में शान्ति रखने के लिए शिक्षा मन्त्री और प्रधान मन्त्री का मुख देखता है। वह शिक्षा को दिशा देने के लिए भी सरकारी मन्त्रियों और निर्देशकों की आज्ञा का पालन करता है। सरकार शिक्षा पर इतना छा रही है कि विश्वविद्यालयों में एक चपरासी तक की रक्षा के लिए शिक्षण संस्था के बड़े से बड़े अधिकारी का अपमान कर सकती है।

कहने का अभिप्राय यह है कि पूर्ण ढांचा ही दोषपूर्ण है। तब इस ढांचे में से निकलने वाले विद्यार्थियों से आप क्या आशा कर सकते हैं ? वास्तव में देखा जाये तो जैसा देश है वैसा ही विद्यार्थी समाज बन रहा है। प्रायः राज-नीतिक दल वाम पंथी हैं। ये दल बलपूर्वक अपनी बात मनवाने का अपना अधिकार मानते हैं। इस कारण ये देश में अव्यवस्था उत्पन्न करते रहते हैं। विद्यार्थी इनका अनु-करण करते हैं।

वर्तमान शिक्षा का उद्देश्य बुद्धिशील मानव बनाना नहीं, वरंच प्रजातन्त्रात्मक समाजवादी क्लर्क और कर्म-चारी निर्माण करना है। अतः विद्यार्थी राजनीतिक दलों की अंगुलियों पर नाचते हैं। वे विचार ही नहीं कर सकते कि जो कुछ वे कर रहे हैं वह हितकर है अथवा अहित-कर ? जो कोई उनकी भावना को भड़का देता है, वही वे करने लगते हैं। कारण स्पष्ट है कि वे अपने चारों ओर हो रही बातों पर विचार करने की योग्यता ही नहीं रखते। उनमें विचारशीलता उत्पन्न करने का यत्न ही नहीं किया गया। स्कूल, कालेज, इंजीनियर, वैज्ञानिक, डाक्टर बनाने के लिए खोले जा रहे हैं। शिक्षा में श्रेष्ठ मानव निर्माण करने की न तो योजना है और न ही प्रयास।

हमारा यह मत है कि शिक्षा में आमूल-चूल परिवर्तन करने की आवश्यकता है। शिक्षा-केन्द्रों का घनी आबादी में बनाना भूल है। इन केन्द्रों में शारीरिक सुख-सुविधायें देकर छात्रों को कोमल और दुर्बल बनाना अपराध है। इन पर भाषाओं का भारी बोझा डालना मूर्खता है। शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और चेतन तत्व के विकास की अवहेलना कर किसी प्रकार की व्यवसायिक शिक्षा को लक्ष्य बनाना जातीय और व्यक्तिगत हत्या का कार्य है।

सबसे पहले शिक्षा को दो भागों में बांटना चाहिये। पहला भाग हो मानव निर्माण करना। शरीर से, मन से, बुद्धि एवं इन्द्रियों से सुचारु रूप से कार्य कर सकने की शिक्षा सर्वप्रथम कार्य है। बिना मानव निर्माण किये किसी प्रकार की वैज्ञानिक (Scientific) अथवा व्यवसायिक (Technical) शिक्षा देना न केवल निरर्थक है, वरंच हानिकर भी है। ये कार्य दूसरे दर्जे के हैं और पीछे आने चाहियें।

प्रथम कार्य है मनुष्य की कार्य शक्तियों का विकास करना। ज्ञान वृद्धि तो उन शक्तियों के विकास के उपरान्त ही हो सकेगी। ये दोनों अंग साथ-साथ चलें अथवा एक दूसरे के उपरान्त, विचारणीय है। इतना निर्विवाद है कि शिक्षा के दूसरे भाग के लोभ में प्रथम की हत्या अथवा प्रथम कार्य में न्यूनता घातक है।

वर्तमान शिक्षा में विद्यार्थियों को वैज्ञानिक अथवा व्यवसायिक बनाने के लोभ में मानव बनाने की शिक्षा की अवहेलना हो रही है।

—***—

चन्द्रशेखर आजाद का ब्रह्मचर्य

भगवानदास माहौर

झांसी में श्री शचीन्द्रनाथ बख्शी के कार्य-कलाप ने पुलिस का ध्यान आकृष्ट किया था, अतएव उस पकड़-धकड़ के संकटमय समय में आजाद का झाँसी में रहना निरापद नहीं समझा गया। मास्टर रुद्रनारायण के घर उन्होंने झांसी के दल की शाखा के साथियों से मिलकर उन्हें भावी कार्यक्रम समझा-बुझा कर, एक कम्बल और एक रामायण का गुटका, बस इतना ही सम्बल साथ ले ओरछे की राह पकड़ी और ओरछे से कुछ दूर, झाँसी और ओरछे की बीच में, ढिमरपुरा ग्राम के पास एक छोटी सी नदी सातार के तट पर एक कुटिया में उन्होंने आसन जमाया। उन्होंने यहां अपना नाम हरिशंकर ब्रह्मचारी रखा। उनका ब्रह्मचारी का वेश स्वाभाविक था ही। यहां रहकर उन्होंने अपना क्रान्तिकारी ताना-बाना बुनना प्रारम्भ किया। पास के ग्राम ढिमरपुरा में उन्होंने मधुकरी वृत्ति से अपना भोजन माँगा और गांव वालों को रामायण की कथा सुनाई। इसीलिए तो वे रामायण का गुटका साथ लाए थे। आजाद भावरा में (पहले अलीराजपुर रियासत का एक ग्राम जो अब मध्य-भारत की झाबुआ तहसील में आ गया है) अपने घर से भाग कर काशी में 'विद्याध्ययन' करने के लिये पहुंचे थे और वहाँ एक क्षेत्र में रहकर व्याकरण रटने का मिथ्या व्यवसाय भी उन्होंने किया था। परन्तु 'अइ उण् ऋलृक्' के रटने और 'डिच्च पिन्न पिच्च डिन्न' करके शब्दसिद्धि की व्यर्थ की माथा-पच्ची करने के लिए तो वे पैदा ही नहीं हुए थे। अतएव काशी में उन्होंने "स्त्री प्रत्यय" न साध कर क्रान्तिकारियों का सम्पर्क ही साधा था। मेरी जान में तो संस्कृत के नाम पर उन्हें 'शिवमहिम्नस्तोत्र' के सवा दो, ढाई या पौने तीन श्लोक ही याद थे—किसी हालत में तीन से अधिक नहीं—सो भी इस प्रकार कि किसी का पहला चरण तो किसी का दूसरा किसी का तीसरा तो किसी का चौथा। कुल मिलाकर इन श्लोकों में पूरा श्लोक एक भी नहीं था। परन्तु इन ढाई-पौने तीन टूटे-फूटे श्लोकों से वे गांव वालों की श्रद्धा-भक्ति प्राप्त करने के लिए अपने 'ध्यान' और 'भजनपूजन' का सारा काम चला लेते थे। हाँ! नीति का एक श्लोक उन्हें और भी याद था और उसको वे मौका मिलने पर सुनाए बिना न मानते वह था—

'उष्ट्राणां विवाहेषु गीतं गायन्ति गर्दभाः
परस्परं प्रशंसन्ति अहोरूपमहोध्वनिः।'

यह उनको ठीक ऐसा ही याद था और इसका अर्थ भी वे ठीक जानते थे। बस, इतना ही था उनका संस्कृत का ज्ञान।

हरिशंकर ब्रह्मचारी का गांव में बड़ा सम्मान हो गया और उनकी पाठशाला में गाँव के छोटे-छोटे विद्यार्थी 'अ-आ-इ-ई' दो ही एक महीनों में इस प्रकार इतना दृढ़ आधार बना लेने के बाद अब उन्होंने झाँसी से अपने साथियों को बुलाना शुरू किया और काकोरी-काण्ड के बाद दल के टूटे हुए सूत्रों को फिर से जोड़ने में जुट गए। शीघ्र ही सातार-तट उत्तर-प्रदेश और पंजाब के क्रान्तिकारी आन्दोलन का एक प्रमुख नाड़ी केन्द्र बन गया। काकोरी-काण्ड की धर-पकड़ से बचे लोग आजाद की तलाश में झाँसी आए और श्री कुन्दन लाल जो काकोरी-काण्ड के बचे हुए लोगों में नं० एक कहे जाते थे। आजाद से यहीं सातार-तट पर मिले और संगठन का भावी कार्यक्रम यहीं बना। आजाद इस समय कहे जाते थे नं० दो।

ढिमरपुरा में ब्रह्मचारी हरिशंकर के ब्रह्मचर्य की एक अग्नि परीक्षा हुई और उसमें वे फर्स्ट क्लास पास हुए। गाँव की एक 'रमणी' उनके पीछे हाथ धोकर पड़ गई। जब कान्ता-कटाक्ष-विशिखों ने उनको जरा भी विचलित नहीं कर पाया, तो रमणी की अश्रु-

सरिता की बाढ़ उन्हें बहा देने को बढ़ी और उसासों की आँधियाँ उन्हें उड़ा देने को चलीं। परन्तु वे एक पहाड़ की तरह अडिग रहे। न हुआ वह पुराना सतयुग, त्रेता या द्वापर नहीं तो आजाद को कामजित् की उपाधि इन्द्रलोक से अवश्य मिल जाती और कोई बालमीकि या व्यास उनके स्थैर्य की प्रशंसा में काव्य रचता परन्तु आजाद हम कलिकुटिल जीवों के चक्कर म थे। जब एक रोज हास-परिहास के वक्त झाँसी में मेरे घर पर ही आजाद ने अपना यह वृत्त ढिमरपुरा से आकर इस प्रकार सुनाया जैसे अभी-अभी बड़ी झंझट और मुसीबत से छूटकर आए हों तो मैंने हास-परिहास करते हुए यही कहा—"जाओ भी यार ! बस यूँ ही रहे…" कामदेव को आजाद पर अपने अभियान पर सफलता केवल इतनी ही मिली कि बातचीत में उन्होंने मुझ से कहा "और किसी कष्ट से या किसी प्रलोभन से भला क्या होना जाना है ? हाँ, कभी कोई कमजोरी आई, तो उसका कारण औरत-फौरत का चक्कर ही हो सकता है… देख तू कविता-फविता, गाने-वाने के चक्कर में बहुत रहता है, तू होश्यार रहना।"

ब्रह्मचारी हरिशंकर के ब्रह्मचर्य की इस अग्नि-परीक्षा के इस सारे काण्ड पर ग्राम के चतुर ठाकुर नम्बरदार की कुशल आँख थी, और फिर तो वह हरिशंकर का ऐसा भक्त बन गया कि उन पर उसे अपने भाइयों से भी अधिक विश्वास हो गया। नम्बरदार की बहन आजाद की प्रिय जीजी बन ही गई थी। नम्बरदार चार भाई थे, हरिशंकर को मिला कर अब वे पाँच हो गये, यह स्वयं नम्बरदार की उक्ति थी और अब उन की तिजोरी की चाबी हरिशंकर के जनेऊ में बँधी रहने लगी। नम्बरदार साहब की बन्दूकें हरिशंकर की देख-रेख में रहने लगीं। हरिशंकर स्वयं उनसे शिकार खेलने लगे तथा झाँसी से अपने दल के साथियों को बुलाकर गोली चलाने, निशान मारने और शिकार खेलने की शिक्षा देने लगे। दल में गोली चलाने आदि में झाँसी के सदस्यों की विशेष योग्यता मानी जाने लगी।

शराब के ठेके तोड़ दो !

हरयाणा प्रान्तीय मद्य निषेध समिति ने आचार्य भगवानदेव जी के नेतृत्व में २३ मार्च १९६९ को रोहतक में शराब के विरुद्ध विशाल प्रदर्शन किया। आर्य वीरों का उमड़ता हुआ उत्साह देखने लायक था। नारे लग रहे थे—शराब की बोतल फोड़ दो…शराब के ठेके तोड़ दो शराब पीना छोड़ दो ! और जब एक अंग्रेजी शराब की दुकान के सामने से प्रदर्शन निकला तो युवकों में कुछ गर्मी आ ही गई। इतने विशाल विरोध के बावजूद शराब की दुकान खोलकर बैठना–गड़बड़ को निमन्त्रण देना नहीं था तो और क्या था ? पर नेताओं के हस्तक्षेप से जनता आगे बढ़ी और जिलाधीश को अपना विरोध ज्ञापन दे दिया। अब सरकार ने कहा है कि शराब दो दिन बन्द रखेंगे पर यह तो बेकार की बात है। जब तक पूर्ण शराब बन्दी नहीं होती-आर्य युवक चुप नहीं बैठ सकते।

सामयिकी—

कुछ तड़प कुछ झड़प

झा का झगड़ा

एक हैं दिल्ली के उपराज्यपाल। नाम है आदित्य नारायण झा। नाम करण के समय ये छोटे बच्चे थे वरना कोई 'अंग्रेजी नाम' रखवाते। झा साहब को अंग्रेजी से इतनी मोहब्बत है कि हिन्दी भाषा भाषियों के सामने भी ये अंग्रेजी में ही भाषण झाड़ते हैं। पिछले दिनों दिल्ली में राष्ट्रिय खेल-कूदों का जो भव्य समारोह हुआ उसकी समाप्ति पर जब सारा कार्यक्रम आर्य भाषा में हुआ वहाँ 'झा' साहब ने अंग्रेजी में अपना भाषण दिया। अभी कुछ दिन हुए नैनीताल जिले के अन्तर्गत पन्त नगर के कृषि विश्वविद्यालय में आप दीक्षान्त भाषण देने पधारे। सारा काम आर्य भाषा में हो रहा था। पर दीक्षान्त भाषण अंग्रेजी में आरम्भ हुआ और अपने अंग्रेजी प्रेम का कारण बताते हुए उपराज्यपाल महोदय ने फरमाया कि हमारा देश सदियों से गुलाम है और गुलामी के कारण वह प्रगति नहीं कर पा रहा है। अब हम आजाद हैं पर प्रगति उस भाषा के द्वारा ही कर सकते हैं जिसमें वैज्ञानिक कार्य हो सकता है इसलिये मैं अपना भाषण अंग्रेजी में ही करूँगा और इसके लिए क्षमा नहीं मांगना चाहता।

अंग्रेज जब देश छोड़ कर जाने लगे तो बागडोर काले अंग्रेजों को सौंप गये। ये काले अंग्रेज, अंग्रेजों से बढ़कर अंग्रेजी भक्त हैं। ये आज भी अंग्रेजी ढंग से ही सोच जाते हैं और अंग्रेजी में ही जम्हाई लेते हैं। अब धीरे-धीरे ये नसल कम होती जा रही हे पर फिर भी जहाँ भी है वहाँ अपनी डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग पकाये बगैर नहीं रहती। हमारा एक सुझाव है कि ऐसे 'काले अंग्रेजों' की बची खुची नसल को सुरक्षित रखने की दृष्टि से और इनके ऐतिहासिक महत्व को कायम रखने के लिए इन्हें दिल्ली के प्रशासन विभाग से हटाकर दिल्ली के 'चिड़ियाघर' या 'अजायबघर' में रखा जाय। यदि "राष्ट्र की प्रगति" में परम सहायक लोगों के लिए इतनी भी व्यवस्था न की जा सके तो इससे बढ़कर कृतघ्नता की पराकाष्ठा क्या होगी?

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के 'छैला' उपकुलपति

६ मार्च को कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय का दीक्षान्त समारोह था। इस अवसर पर पधारे केन्द्रीय राज्य शिक्षा मन्त्री प्रो० शेरसिंह (अब सूचना प्रसार मन्त्री) को कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय की छात्राओं और उनके अभिभावकों ने एक ज्ञापन दिया जिसमें बताया गया है कि किस प्रकार सरेआम लड़कियों के दुपट्टे जबरदस्ती उतार लिये जाते हैं, उनके साथ छेड़खानी की जाती है, चुटकियाँ काटी जाती हैं, डराने धमकाने के लिए उनके विरुद्ध घृणित पोस्टर निकाले जाते हैं आदि। अधिकारियों को शिकायत करने से कोई परिणाम नहीं निकलता। ज्ञापन में छात्राओं ने उपकुलपति श्री दीपचन्द्र वर्मा को ही इन घटनाओं के लिए दोषी ठहराया। बताया जाता है कि उपकुलपति स्वयं गुण्डे लड़कों के एक गिरोह को प्रोत्साहन दे रहे हैं। अभिभावकों का एक शिष्ट-मण्डल उसी दिन राज्यपाल श्री बी० एन० चक्रवर्ती से मिला। उन्होंने भी विश्वविद्यालय में अनुशासनहीनता समाप्त करने के लिए सर्वप्रथम उपकुलपति को हटाना आवश्यक बताया।

इन पंक्तियों का लेखक स्वयं जब कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय गया था तो वहाँ छात्रों द्वारा छात्राओं के होस्टल के सामने रात को बड़ा ही अभद्र प्रदर्शन देखा था। होस्टल के कमरों में शराब पी जानी वहाँ कोई आश्चर्य नहीं है। प्राध्यापकों की नियुक्ति में "भाई-भतीजावाद" को प्रश्रय देना नियम के रूप में पालन होता है। इन

सारी अव्यवस्थाओं के लिए समझदार व्यक्तियों ने विश्वविद्यालय के 'छैला' उपकुलपति को जिम्मेदार बताया था। अब प्रश्न यह है कि हरयाणा में एक ही तो विश्वविद्यालय है—यहाँ एक प्रकार से हरयाणा का भावी नेतृत्व तैयार हो रहा है। पर इस एक व्यक्ति के दुर्बल चरित्र के कारण सारे हरयाणे के भाग्य को जो धक्का लगेगा या लग रहा है उसे ध्यान में रखते हुए शीघ्र ही वर्मा जी को त्याग-पत्र देकर अलग हो जाना चाहिए अन्यथा विवश होकर विद्यार्थियों को कोई 'सही रास्ता' अपनाना होगा।

मरे हुए का श्राद्ध ?

अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति ड्वाइट डी० आइजनहावर का प्राणान्त हो गया। वर्तमान अमेरिका के भाग्य-विधाताओं में आपका विशिष्ट स्थान रहा है—इसलिये आज यदि सारा अमेरिका उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट रहा है तो कोई आश्चर्य नहीं।

पर एक बात है! भूतपूर्व राष्ट्रपति के शव का अन्तिम संस्कार करने के लिए महान् आयोजन किया। कहा जाता है कि उन्हें सरकारी और सैनिक सम्मान के साथ दफनाया गया। दूर-दूर देशों के मन्त्री और प्रधान मन्त्री शवयात्रा में सम्मिलित हुए। हमारे देश से उपप्रधान मन्त्री श्री मोरार जी भी गये। बड़ा भारी आडम्बर हुआ। ऐसा पहली बार हुआ हो ऐसी बात नहीं। जब भी दुनियाँ का कोई नेता (विशेषकर राजनैतिक) मरता है तो काफी नाटक रचा जाता है। हमारे अपने देश में भी तीन-चार बार अभी पिछले कुछ वर्षों में ये नाटक हुए। लाखों की जनता उमड़ पड़ती है—"अपने नेता के अन्तिम दर्शन करने के लिए" पर नेता महाशय को तो और कहीं बुलावा आ जाता है और वे नदारद होते हैं। उनकी लाश पड़ी होती है जो न देखती है, न बोलती है, न सुनती है, न चखती है न सूंघती है। अब उस निर्जीव शरीर पर फूल चढ़ाये जाते हैं—बहुत से उसका पैर छूते हैं या हाथ चूमते हैं या माथा चूमते हैं। यदि अनपढ़ और गंवार समझे जाने वाले लोग यह करें तो अधिक आश्चर्य नहीं पर अपने आपको बहुत सभ्य और सुशिक्षित मानने वाले लोग जब ऐसा करते हैं तो सचमुच आश्चर्य होता है। कुछ तो इच्छा न रहते हुए भी इस नाटक में शरीक होते हैं। कैसी बेढंगी परम्परायें बना रखी हैं हमने ?

हमारे देश में लाश को जलाकर जो राख बच जाती है उसको लेकर भी बड़ा लम्बा-चौड़ा नाटक होता है—समय और रुपये की बर्बादी के साथ-साथ ऐसी पूजा बेहूदी होती है। यदि जीवित नेता को यह सम्मान दिया जाय—या फिर मृत के उत्तराधिकारियों को जो जीवित हैं यह सम्मान दिया जाय तो फिर भी कुछ लाभ है पर एक लाश को लेकर इतना प्रपंच करना अधिक बुद्धि संगत नहीं लगता।

इस प्रकार की जड़ पूजा अन्तिम संस्कार तक ही सीमित नहीं रहती–जहाँ उस लाश को गड़ाया या जलाया जाता है वहाँ समाधियाँ या घाट बनाये जाते हैं और मूर्ख जनता और उसके महामूर्ख नेता उस सीमेंट पत्थर की समाधि पर फूल चढ़ाते फिरते हैं। बुद्धि को ताक में रख कर यह जो जड़ पूजा की जाती है उससे जड़ता और मूढ़ता बढ़ती है। समझदार व्यक्तियों को इन सड़ी-गली परम्पराओं के विरुद्ध विद्रोह करना चाहिये और इन्हें उखाड़ कर कुछ अन्य स्वस्थ परम्पराओं की स्थापना करनी चाहिये।

बीस वर्ष में सरकारी खर्च नौ गुना

भारत सरकार का प्रशासनिक व्यय विवेकहीन और निरंकुश ढंग से बढ़ता ही जा रहा है। १९५०-५१ में यह ३४७ करोड़ रुपये था। १९६९-७० में यह खर्च नौ गुना बढ़कर ३०२७ करोड़ रुपये हो गया। इसमें औसतन ४० प्रतिशत वृद्धि प्रतिवर्ष होती रही। १९६१-६६ तक यह वृद्धि ११७५ करोड़ रुपये की हुई थी, जबकि इसके बाद के वर्षों में १०२६ करोड़ रुपये की। राज्य सरकारों का भी खर्चा अन्धाधुन्ध बढ़ता जा रहा है। १९५०-५१ में यह ३९३ करोड़ रुपये था। ६८-६९ में २५९७ करोड़ रुपये। इसमें भी छह गुना बढ़ोतरी हुई है। कर लगाये गये हर नये रुपये में से ७१ पैसे प्रशासनिक ढांचे के लिए अनुत्पादक ढंग से खर्च होते हैं।

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के संगठन की धूम !

आर्य सामाजिक कार्यकर्त्ता शिविर सम्पन्न

रोहतक :—सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् की ओर से आयोजित आर्य सामाजिक कार्यकर्त्ता शिविर श्री पं० जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती की अध्यक्षता में २६ फरवरी से २८ फरवरी तक दयानन्द मठ (रोहतक) में सम्पन्न हुआ। शिविर में सुलझे हुये ५० कार्यकर्त्ताओं ने भाग लिया। आर्य समाज के प्रचार को कैसे तीव्र किया जावे, वेद प्रचार मण्डलों की स्थापना, युवा पीढ़ी को आर्यसमाज में दीक्षित करने तथा वर्णाश्रम सम्बन्धी सिद्धान्तों का व्यवहारिक रूप देने पर गम्भीर चिन्तन तथा विचार विमर्श हुआ। शिविर में हुये निर्णयों को क्रियान्वित करने के लिये परिषद् के कार्यकर्ता प्रचार द्वारा वातावरण तैयार कर रहे हैं।

नारनौल :—१५ मार्च प्रो० रामसिंह जी की अध्यक्षता में एक विशाल युवक सम्मेलन हुआ और सर्व सम्मति से दो प्रस्ताव पारित हुए। (१) सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् की शाखायें ग्राम-ग्राम में खोली जायं। (२) गांव-गांव में व्यायामशालायें स्थापित की जायें।

पाकस्मा :—वेद प्रचार मण्डल के तत्त्वावधान में परिषद् के प्रचार मन्त्री ब्र० रामकिशन जी द्वारा पाकस्मा के १२ प्रमुख गांवों में प्रचार किया गया और परिषद् के व्यायामाचार्य मनुदेव जी द्वारा सभी स्थानों पर परिषद् की शाखायें स्थापित की की गईं।

नरेला :—९ मार्च परिषद् प्रधान ब्र० इन्द्रदेव जी मेधार्थी की अध्यक्षता में युवक सम्मेलन का आयोजन हुआ। योग्य युवकों को यज्ञोपवीत देकर उत्साही प्रतियोगियों को परितोषिक दिय गये।

पटोदी :—१० मार्च परिषद् के उत्साही कार्यकर्ता सरपंच मंगतूराम जी के प्रयास से पटोदी में विशाल मद्य निषेध सम्मेलन आयोजित हुआ जिसमें आचार्य भगवानदेव जी इन्द्रदेव जी मेधार्थी रामानन्द जी आदि के ओजस्वी भाषण हुए!

श्री शंकराचार्य को चुनौती :—गत मास अबोहर में श्री शंकराचार्य पधारे। एक समारोह में भाषण देते हुए आपने कहा कि वर्ण-व्यवस्था गुण, कर्म से नहीं जन्म से है। देहली से प्रकाशित होने वाले प्रताप के २५-२-६६ के अङ्क में श्री शंकराचार्य का वह भाषण प्रकाशित हुआ है। आपने अपने भाषण में यह भी कहा कि मैं इस विषय पर शास्त्रार्थ के लिए तैयार हूँ।

इन्हीं शंकराचार्य के विचार अप्रैल १९६८ के कल्याण में भी छपे। उस अङ्क में (कल्याण में) आपने ओ३म् के जाप का विरोध किया। आपका कथन है कि ओ३म् के जाप से स्त्री विधवा हो जाती है, धन नष्ट हो जाता है, पशु मर जाते हैं, बच्चे मर जाते हैं, आदि आदि।

श्री शंकराचार्य के ये विचार पढ़कर मैंने आर्य गजट साप्ताहिक जालन्धर द्वारा उनको शास्त्रार्थ की चुनौती दी थी। आज तक वह या उनका कोई चेला नहीं बोला। आज पुनः राजधर्म द्वारा हम शंकराचार्य जी को चुनौती देते हैं कि उनमें साहस है तो वह अपने इन वेद विरुद्ध, अनार्ष, मानवताघाती अनुचित विचारों को सिद्ध करने के लिए हमारी शास्त्रार्थ की चुनौती को स्वीकार करें। देव दयानन्द के वैदिक पक्ष की सत्यता सिद्ध करने और उनके अनर्गल विचारों के खण्डन के लिए श्री आचार्य सत्यप्रिय जो सिद्धान्त शिरोमणि शास्त्रार्थ करेंगे। एक मास तक हम उत्तर की प्रतीक्षा करेंगे अन्यथा यही समझा जाएगा कि आपको अपनी पराजय स्वीकार है।

—प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु

आर्यसमाज और राजनीति

● स्व० स्वामी वेदानन्द सरस्वती

[आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् स्व० स्वामी वेदानन्द जी सरस्वती का यह लेख विशेष रूप से पठनीय है। स्व० स्वामी जी ने स्थूलाक्षरी सटिप्पण सत्यार्थप्रकाश, स्वाध्यायसंदोह आदि महत्वपूर्ण ग्रन्थों का सम्पादन किया। गाजियाबाद (दिल्ली) स्थित विरजानन्द वैदिक संस्थान के आप संस्थापक रहे। आज जब कुछ नेता और उनकी कुछ पत्रिकायें आर्यसमाज को "विशुद्ध धार्मिक संस्था" घोषित कर रही हैं, स्व० स्वामी जी का यह लेख उन्हें सद्बुद्धि प्रदान करने में सहायक होगा। —सम्पादक]

आर्यसमाज की जिस समय स्थापना हुई थी, उस समय भारतवर्ष पराधीन था। आर्यसमाज के आरम्भ के दिनों में आर्यसमाजी देशभक्त के नाम से प्रसिद्ध थे और भजनों में ऋषि दयानन्द को देशहितैषी कहा जाता था।

रूठे हुए राजाओं को मिलाया

इसके अतिरिक्त ऋषि दयानन्द के जीवन की कुछ घटनाओं को भी स्मरण करना चाहिये। ऋषि का जन्म एक राज्याधिकारी के घर में हुआ था। सम्वत् १९१४ वि० (सन्१८५७)में भारतवर्ष से अंग्रेजों को निकालने के लिये जो प्रबलसंग्राम छेड़ा गया था, उसमें ऋषिदयानन्द का पर्याप्त हाथ बताया जाता है। ऋषि दयानन्द ने बाद में जिन के चरणों में बैठकर सकल सन्देह मिटाए, वह महापुरुष दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी इस महासंग्राम के संचालक थे। ऋषि ने आर्यभाषा को राज्यभाषा के उच्चासन पर बिठाने के लिये दो करोड़ भारतीयों के हस्ताक्षर से युक्त एक आवेदनपत्र तैयार करवा कर राज-राजेश्वरी विक्टोरिया के पास भिजवाने का यत्न किया था। इसी प्रकार गोहत्या बन्द कराने के लिये भी एक आवेदन-पत्र तैयार कराया था। अपने जीवन में वह कई बार उच्च राज्याधिकारियों से मिले और उनके सामने देश की दशा रखी। जीवन के अन्तिम दिनों में उन्होंने राजस्थान में प्रचार किया, परस्पर रूठे हुए राजाओं को आपस में मिलाया। सं० १९३३ वि० में देहली दरबार के अवसर पर ऋषि ने सब सम्प्रदायों के और राजनीतिक नेताओं को बुलाकर एक जगह एकस्थ करके उनके आगे प्रस्ताव रखा कि हम सब परस्पर मिलकर देशोन्नति के लिये कार्य करें। इसी प्रकार ऋषि जीवन में और भी अनेक घटनायें मिलती हैं। विस्तारभय से हम इतने पर ही सन्तोष करते हैं।

ऋषि के लेख भी प्रमाणस्वरूप यहां उपस्थित करना अयुक्त न होगा। सत्यार्थप्रकाश का एक पूरा समुल्लास ही राजनीति के सम्बन्ध में लिखा गया है। आठवें समुल्लास में ऋषि लिखते हैं—"इक्ष्वाकु से लेकर कौरव-पाण्डव पर्यन्त सब भूगोल में आर्यों का राज्य और वेदों का थोड़ा-थोड़ा प्रचार आर्यावर्त्त से भिन्न देशों में रहता था।" इससे आगे लिखते हैं—"अब अभाग्योदय और आर्यों के प्रमाद आलस्य; परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य की कथा ही क्या कहनी किन्तु आर्यवर्त्त में भी आर्यों का अखण्ड स्वतन्त्र, स्वाधीन निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ भी है...सो भी विदेशियों के पादाक्रान्त है। दुर्भाग्य के दिन जब आते हैं तब देशवासियों को अनेक प्रकार का दुःख भोगना पड़ता है। कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है।"

राजरोग नष्ट करो

दशम समुल्लास में समुद्रयात्रा के सम्बन्ध में विचार करते हुये महाराज ने लिखा है—"देश-देशान्तर, द्वीप-द्वीपान्तर में राज्य या व्यापार किये बिना स्वदेश की उन्नति कभी हो सकती? जो स्वदेश में स्वदेशी लोग व्यवहार करते और परदेशी स्वदेश में व्यवहार या राज्य करें

दारिद्रय और दुःख के विना दूसरा कुछ नहीं हो सकता।" इसके आगे फिर आदेश किया है—"आपस की फूट से कौरव-पाण्डवों और यादवों का सत्यानाश हो गया परन्तु अब तक भी वही रोग पीछे लगा है। न जाने यह भयङ्कर राक्षस कभी छूटेगा या आर्यों को सब सुखों से छुड़ाकर दुःख सागर में डुबा मारेगा। उसी दुष्ट दुर्योधन गोत्रहत्यारे स्वदेशविनाशक नीच के दुष्ट मार्ग में आर्य लोग अब तक भी चलकर दुःख बढ़ा रहे हैं। परमेश्वर कृपा करे कि यह राजरोग हम आर्यों में से नष्ट हो जाय।"

ग्यारहवें समुल्लास के आरम्भ में अनेक चक्रवर्ती राजाओं के नाम लिखे हैं। इस समुल्लास के अन्त में राजा युधिष्ठिर से राजा यशपाल तक राजाओं के राज्यकाल का वर्णन किया है। इससे पूर्व ऋषि के यह शब्द ध्यान देने योग्य हैं—"यह आर्यावर्त्त निवासी लोगों के मतविषय में संक्षेप से लिखा। इसके आगे जो थोड़ा सा आर्य राजाओं का इतिहास लिखा है उसको सब सज्जनों के अवलोकनार्थ प्रकाशित किया जाता है।" इसी ग्यारहवें समुल्लास में ब्रह्मसमाज के सम्बन्ध में ऋषि ने जो कुछ लिखा उसको यहां दोहराने की अपेक्षा स्मरण कराना ही पर्याप्त है।

मनुष्य कौन ?

सत्यार्थप्रकाश की समाप्ति से पूर्व ऋषि ने अपने मन्तव्यामन्तव्य संक्षेप से बताये हैं। उनमें एक जगह लिखते हैं—"मनुष्य उसी को कहना जो मननशील होकर अपने आत्मा के समान दूसरे के सुख दुख और हानि लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने पूरे सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वह महा अनाथ निर्बल और गुणरहित भी क्यों न हों, उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण सदा किया करे और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती, सनाथ, महाबलवान् और गुणवान् भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे। अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सब प्रकार किया करें। इस काम में चाहे कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भले ही चले जायें परन्तु इस मनुष्यरूप धर्म से पृथक् कभी न होवें।"

ऊपर की पंक्तियों में दिये गये ऋषि दयानन्द के प्रमाणों से सिद्ध होता है कि स्वामी दयानन्दजी किसी के भी अनुचित कार्य का अनुमोदन करने का निषेध करते हैं। इतना ही नहीं अपितु उन का भाव यह प्रतीत होता है कि अपने प्राणों को संकट में डालकर भी मनुष्यता की रक्षा करनी चाहिये।

सत्यार्थप्रकाश, आर्याभिविनय आदि ऋषि के ग्रन्थों से और भी प्रमाण दिये जा सकते हैं परन्तु विस्तारभय मार्ग में बाधक है। ऋषि दयानन्द आर्यसमाज के संस्थापक हैं। अपने मन्तव्यों के स्थिर प्रचार के लिये उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना की। ऋषि ने स्थापना करते समय उद्देश्य को विशाल तो कर दिया; परन्तु यह कहने का साहस कोई भी नहीं कर सकता कि संकुचित कर दिया। निस्सन्देह संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है। परन्तु क्या अपना देश संसार से बाहर है। अंग्रेजी में एक लोकोक्ति है— Charity begins at home अर्थात् घर में दिया जला कर मन्दिर में प्रकाश करने जाना चाहिये। ऋषि दान की महिमा बताते हुये अपने एक व्याख्यान में कहते हैं कि दान अपने पड़ौसियों को देना चाहिये। दूर में दान देने से प्रशंसा तो प्राप्त हो जाती है, परन्तु दान का वास्तविक उद्देश्य पूरा नहीं होता। अभिप्राय यह है कि यदि आप संसार का उपकार करना चाहते हैं तो सब से पहले अपने देश का उपकार कीजिये। अपने देशका उपकार न करने वाले दूसरे देशों का उपकार कर ही नहीं सकते। दूसरे के दुःख को मिटाने का नाम उपकार है। अपने पड़ौस में दुःख-दर्द से कराहते हुए की उपेक्षा करके दूसरे स्थान में पीड़ितों को ढूंढने का अभिलाषी मनुष्य पाखण्डी है, उपकारी नहीं। यदि वह उपकारी होता तो अपने पड़ौसी के कष्ट को दूर करने का यत्न करता।

राजनीति है क्या ? राजा और प्रजा के पारस्परिक हित सम्बन्धी कुछ नियम और विधानों का नाम राजनीति कहा जाता है। राजा या राजकर्मचारी प्रजा से कैसे बर्ताव करें और प्रजा राजा या कर्मचारी से किस प्रकार का व्यवहार करे— यह राजनीति है। राजा का अस्तित्व प्रजा के सुख के लिए है। यदि एक राजा या आजकल की भाषा में प्रशासन (सरकार) ऐसे नियम बनाने लगता है

जिन से प्रजा की पीड़ा होती है तो क्या प्रजा शान्त रहे ? अथवा वह आन्दोलन करे ? यह बात राजनीति के दो भिन्न सिद्धान्तों के मूल को प्रकट करती है। सरकार के प्रत्येक काम को चाहे वह कितना ही अत्याचार-पूर्ण क्यों न हो, सहनकर लेने वाला समुदाय (दल) अपने विचार के अनुसार सरकार का प्रिय बनता है। इसके विपरीत सरकार की अनुचित आज्ञा के विरोध में आवाज उठाने वाला मनुष्य या दल सरकार का कोपभाजन बनता है और इसीलिए वह प्रजा के प्रेम का अधिकारी हो जाता है।

ब्राह्मण 'हरिजन' बने

व्यवहारिक दृष्टि से विचार कीजिए। आप राजनीति से दूर रहते हैं और अछूतों का उद्धार करना चाहते हैं। आप कर नहीं सकते। आर्यसमाज ने अछूतोद्धार पर लाखों रुपया व्यय किया। कई बलिदान भी दिए, परन्तु हुआ क्या ? मिस्टर मैकडानल्ड ने अपने निर्णय से आर्यसमाज का सब किया-कराया मिट्टी में मिला दिया। आर्यसमाज चाहता था कि अछूत कहे जाने वालों को आर्यसमाज में समानता का अधिकार मिल जावे। वसिष्ट, महत्तम, ओड, मेघ, बाटवाल, डोम, रहतिये और नात्रक आदि जातियां आर्य जाति के उसी भाँति अंग हैं जिस प्रकार ब्राह्मण आदि। इसके लिए आर्यसमाज ने इन में संस्कृत के अतिरिक्त वर्तमान शिक्षा और शिल्पकला का प्रचार किया। परन्तु मैकडानल्ड के पदचिह्न पर चलने वाली भारतीय सरकार ने इनको आर्यसमाज से दूर कर दिया। एक सज्जन जन्मना अछूत है, परन्तु साधारण जन उनको उनके कर्म के कारण ब्राह्मण जानते तथा मानते थे। इस सज्जन के मन में असेम्बली की मेम्बरी का विचार आया। अपनी आर्थिक और अन्य बातों को ध्यान में रखते हुए उन्हें निश्चय हुआ कि वह सफल न हो सकेंगे। इसके पश्चात् उन्होंने तुरन्त विचार किया कि क्यों न अपने जन्म-जात अधिकार BIRTHRIGHT को काम में लाया जावे। अतः उन्होंने घोषणा कर दी कि वह हरिजन हैं। कबीर जी के "हरि को भजै सो हरि का होय" हरिजन नहीं—अपितु पहले अछूत, पश्चात् दलित और अन्त में हरिजन। आक्षेप किया गया कि आप तो ब्राह्मण हैं। आपने-अपने ब्राह्मण न होने और अछूत होने के प्रमाणों की झड़ी लगा दी। यदि आर्यसमाज का राजनीति में हाथ होता तो न मैकडानल्ड का निर्णय भारत पर लागू होता और न प्रलोभन भरा वर्तमान ढांचा लोगों को लालच में फांसने का अवसर देता।

इस बात को कौन अस्वीकार कर सकता है कि धर्म की अपेक्षा प्रकृति में आकर्षण अधिक है। यदि एक अछूत राज्यविधानसभा अथवा भारतीय लोकसभा का सदस्य बन जाता है, तो कल तक नाक-भौं सिकोड़ने वाले सज्जन इससे हाथ मिलाते हैं और इसके साथ बैठकर भोजन करने में गौरव समझते हैं। इसलिये एक अछूत का इस पद को प्राप्त करने के लिए अपनी वंशावली खोजना सर्वथा उपयुक्त है। इसको किसी भांति उपालम्भ नहीं दिया जा सकता।

प्रसिद्ध कम्यूनिस्ट नेता एम० एन० राय ने लिखा है कि यदि आर्यसमाज अपनी नीति पर दृढ़ रहता तो स्वराज्यप्राप्ति का श्रेय कांग्रेस की अपेक्षा आर्यसमाज को मिलता।

मूर्खों के स्वर्ग से निकलो

कहा जाता है कि राजनीति ही सब कुछ नहीं है। राजनीति के अतिरिक्त कई कार्य हैं—जैसे भ्रष्टाचार के विरुद्ध प्रचार करना आदि। ज्ञात होता है कि ऐसे महापुरुष मूर्खों के स्वर्ग में निवास करते हैं। राजदण्ड के बिना भ्रष्टाचार को रोका नहीं जा सकता। हमें श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने दो घटनायें बतलाईं, जिनसे हमारे विचार का अनुमोदन होता है। जर्मन ईस्ट अफ्रीका [जो अब ब्रिटिश ईस्ट अफ्रीका में सम्मिलित है] में किसी मैले कपड़े वाले को रेल में यात्रा की अनुमति नहीं थी। वहां एक मनुष्य एक ही टिकट ले सकता था। दूसरे के लिए टिकट मांगने पर देखे बिना टिकट नहीं दिया जाता था। इस प्रकार राज नियम से यात्रा में मैले वस्त्रों का प्रयोग बन्द हो गया। इसी प्रकार उन्होंने मारीशस द्वीप के विषय में बतलाया कि वहां बाजार में यदि कोई मनुष्य मैले वस्त्र पहन कर जा रहा हो तो सैनेटरी इन्सपैक्टर नाम तथा पता पूछ कर उसके घर से मालूम करेगा कि उसकी स्त्री अथवा नौकर ने धुले वस्त्र तैयार रखे या नहीं। यदि इसमें स्त्री या नौकर दोषी हों तो वे, और यदि वे निर्दोष हों तो मैले कपड़े वाले बाबू जी को दण्ड मिलता है। राजनियम में मैले कपड़े पहनकर हाट बाजार

में चलने का निषेध कर दिया गया।

आर्यसमाज भ्रष्टाचार के विरुद्ध सैकड़ों व्याख्यान देता है, परन्तु उसका प्रभाव नहीं होता। इसके कई कारण हैं। सब से प्रबल तो यह है कि भ्रष्टाचारी को दण्डित करने अथवा अपने समाज से पृथक् करने का साहस आर्यसमाज में नहीं है।

आर्यसमाज शुद्धि का प्रचारक है अर्थात् मुस्लिम, ईसाई आदि सबको अपने में मिलाना चाहता है। अंग्रेजी राज्य के समय प्रकट रूप में तो नहीं, किन्तु गुप्त रूप से अंग्रेजी सरकार इसकी प्रबल विरोधी थी। वर्तमान स्वराज्य समय में कई राज्यनिबन्धक बाधक हैं।

यदि आर्यसमाज ने राजनीति का त्याग न किया होता तो आर्यसमाज के मार्ग की अनेक विघ्न-बाधायें आज दूर हुई होतीं। जामियामिलिया को तो लाखों रुपये की वार्षिक सरकारी सहायता मिले, परन्तु राष्ट्रिय शिक्षा के सबसे पहले शिक्षणालय गुरुकुल कांगड़ी को एक बार एक लाख रुपये की घोषणा होने पर भी इसकी प्राप्ति में जिन-जिन कठिनाइयों वा विरोधों का सामना करना पड़ा, इस बात को प्रकट न करना ही अच्छा है। जामिया वाले मुसलमान हैं। यह राजनीति में भाग लेते रहे। आज भारतीय राजनीति में उनका प्रबल हस्तक्षेप है। सबसे प्रथम स्वतन्त्रता का पाठ पढ़ाने वाला आर्यसमाज राजनीति से दूर रहने के कारण आज अपने आपको राजनीतिक अनाथ अनुभव कर रहा है।

राजनीति के परम आचार्य चाणक्य ने कहा है कि "सर्वे धर्मा राजधर्माणि पर्यवस्यन्ते" "सब धर्मों की पूर्ति राजधर्म में होती है।" यह बात पूर्णतया सत्य है।

शैतान का उपदेश

आर्यसमाज के प्राणघातक लीडर कभी-कभी ऐसा उच्चारण करने लग जाते हैं—"आर्यसमाज की स्थिति तो एक संन्यासी के समान है। इसका राजनीति से क्या सम्पर्क ?" ये बेचारे क्या जाने संन्यास धर्म को ! जिनको संन्यास के बाह्य चिह्न भगवे वस्त्रों से घोर घृणा हो—वे जब ऐसे कहते हैं तो यह अनुभव होने लगता है कि "Satan quotes the Scriptures" सुनिये, कुछ कान खोल कर सुनिये। कौरव-पाण्डवों के मतभेद के समय भी ऋषि-मुनियों ने पाण्डवों का साथ दिया। केवल वचन से ही नहीं किन्तु सक्रिय। पांडवों को वनवास के दिनों में व्यास जी ने वन में जाकर केवल वनवास व्यतीत करने का ढंग ही नहीं बतलाया, अपितु युद्ध की रीतियां भी समझाईं और कहा कि—"यद्यपि हम विरक्त हैं परन्तु योग्य पुरुषों पर विरक्तों का भी अनुराग हो ही जाता है।"

जब बहमनी राज्य के उत्तराधिकारियों ने विजयनगर पर बार-बार चढ़ाई की और इसी कारण विजयनगर का कोष खाली हो गया तो शृंगेरीमठ के तात्कालिक शङ्कराचार्य ने मठ का सारा धन (जो करोड़ों रुपयों तक पहुंचता था), विजयनगर के महाराज को समर्पण करके राजनीति में सक्रिय भाग लिया।

कौन नहीं जानता कि आर्यसमाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द उच्चकोटि के संन्यासी थे। उन्होंने राजनीति में भाग लिया और उनका संन्यास धर्म बना रहा, उसमें कोई दोष नहीं आया, परन्तु जहां हैं ही बनावटी संन्यासी, उनके धर्म को कैसे बट्टा लग सकता है ?

सुनो कहानी !

आर्यसमाज राजनीति से कैसे पृथक् हुआ, इसकी कथा भी सुनिये।

सत्य कहना आजकल के संसार में कठिन ही नहीं अपितु बुरा काम समझा जाता है। यूरोप का महायुद्ध जब आरम्भ हुआ था तब पंजाब के तत्कालीन गवर्नर ने कहा था कि युद्ध में सबसे पहला प्रहार सत्यता पर होता है। उसने चाहे जिस प्रयोजन से यह बात कही हो, परन्तु इसमें सत्यता की एक बड़ी मात्रा निहित। यूरोप के पहले युद्ध के समय जब अंग्रेजों ने देखा कि जर्मनी से पार पाना प्रायः असम्भव है, तो अंग्रेजों ने सत्यता पर खुला कुल्हाड़ा चलाया। जर्मनी के विरुद्ध अमेरिका में प्रचार किया गया कि जर्मनी ने वायुयानों द्वारा बेलजियम के हस्पतालों पर बमवर्षा की है। अमेरिका की जनता और सरकार दोनों इस भयानक समाचार से स्तब्ध रह गये और तुरन्त युद्ध में कूद पड़े और ब्रिटेन को जिताया। उस युद्ध से पहले, अमेरिका संसार की राजनीति से पृथक् रहता था। उस लड़ाई के पश्चात् वह यूरोप ही नहीं

किन्तु संसार भर की राजनीति पर छा गया। अंग्रेज अपनी सहायता के लिए अमेरिका को युद्ध में खींच लाये थे। अमेरिका ने अंग्रेज को नीचे करके स्वयं उसका स्थान ले लिया है। अंग्रेजों की ठीक यही दशा हुई जो पंचतन्त्र ग्रन्थ में वर्णित मण्डूकराज की हुई थी। कथा इस प्रकार है--

एक कुंएं में बहुत से मेंढक रहते थे। मेंढकों के राजा का किसी बात पर अपने साथियों से झगड़ा हो गया। मूर्ख राजा ने अपनी सहायता के लिए एक सांप को बुलाया। सांप मंडूकराज के शत्रुओं की चटनी करके उसके परिवार पर भी झपटने लगा। तब मंडूकराज छटपटाने लगा। किन्तु कर कुछ न सकता था। यतः स्वयं वह सांप को बुला लाया था। अमेरिका ने भी बहुत कुछ ऐसा ही किया है। प्रथम महायुद्ध से पहले लन्दन संसार की राजनीति का मध्यबिन्दु था। कोई भी देश कुछ भी करने से पूर्व अंग्रेजों की प्रतिक्रिया जानने का इच्छुक रहता था। आज वह स्थिति अमेरिका ने प्राप्त कर ली है। अंग्रेजों की इस दशा का उत्तरदायित्व स्वयं अंग्रेजों पर है।

राजनीति ऐसी ही विचित्र वस्तु है। इसके उतार चढ़ाव का प्रभाव मानव जीवन पर होता है। इससे अलिप्त कोई नहीं रह सकता। आज संसार एक गांव के समान होता जा रहा है। गांव भी ऐसा कि जिसमें प्रत्येक बात को राजनीतिक तुला से नापा तोला जाता हो, तब कोई समाज अपने आपको राजनीति से कैसे अछूता रख सकता है।

आज तक आर्यसमाज के समक्ष यह दृष्टिबिन्दु रखा जाता रहा है कि आर्यसमाज को सामूहिक रूप से राजनीति से परे रहना चाहिए। हां व्यक्तिगत रूप से आर्यसमाजी राजनीति में भाग ले सकते हैं। स्मरण रखने की बात है कि सं० १९६४वि० सन् १९०७ तक इस दृष्टिकोण को कोई जानता ही नहीं था। उस समय आर्यसमाज ही एक मात्र ऐसी संस्था समझी जाती थी जिससे देशोपकार के सब कामों की आशा होती थी। कांग्रेस की उस समय कुछ भी स्थिति न थी। उस समय अंग्रेज सरकार ने आर्यसमाज पर प्रहार किया। आर्यसमाज में ऐसे लोगों की संख्या अधिक थी जो कि सरकारी नौकर थे और जिन्होंने पाश्चात्य शिक्षा को फैलाने का उत्तरदायित्व आर्यसमाज पर लाद रखा था और इसके लिए उनको सरकार से सहायता मिलती थी। सरकार की कोपकुटिल दृष्टि को देखकर वे घबराये। उन्हें अपनी गिरफ्तारी के साथ अपने चालू किये गए कामों की भी समाप्ति दिखलाई पड़ी। अतः उस समय आर्यसमाजी नेताओं ने अंग्रेज अधिकारियों के पास जा-जा कर अपनी निर्दोषता सिद्ध करनी चाही थी। यह अवस्था देखकर उस समय पंजाब के एक बहुत बड़े अंग्रेज अधिकारी ने कहा था कि "आर्यसमाज मर गया।"

उससे पूर्व आर्यसमाजी नेता आर्यसमाज के सम्बन्ध में क्या विचार देते थे, इस विषय में महात्मा मुन्शीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) के जीवन की एक घटना का उल्लेख करना अनुचित न होगा। महात्मा मुन्शीराम जी जालंधर में वकालत करते थे। उन्हीं दिनों की घटना है। एक दिन महात्मा जी जालन्धर के कमिश्नर से मिलने गये, बातचीत के प्रसंग में आर्यसमाज की चर्चा भी आई। महात्मा जी ने आर्यसमाज के उद्देश्य और कार्यों का वर्णन किया। इनको सुनकर अंग्रेज कमिश्निर ने कहा-तब तो अंग्रेजों को यहाँ से जाना होगा।

यदि महात्मा मुन्शीराम जी आर्यसमाज का राजनीति से कुछ सम्बन्ध न मानते होते तो इस ढंग से वर्णन क्यों करते कि जिसको सुनकर कमिश्नर ने ऊपर लिखी बात कही।

घोर स्वार्थियों का तर्क

जिस भ्रान्त युक्ति के द्वारा आर्यसमाज को ठीक मार्ग से हटाकर अशुद्ध मार्ग पर डाल दिया गया है, उस की आलोचना करना आवश्यक है। आर्यसमाज को राजनीति से दूर रखने वालों का कहना है कि यदि सामूहिक रूप से आर्यसमाज राजनीति में भाग लेने लग जावे तो सामयिक सरकार आर्यसमाज को अवैध संस्था घोषित करके, उसकी सम्पत्ति को हस्तगत करके मन्दिरों को ताले लगवा सकती है, जिससे आर्यसमाज समाप्त हो जायगा। ऐसी बातें कहने वाले या तो नितान्त जड़बुद्धि हैं, या घोर स्वार्थी या अन्धे हैं। कांग्रेस जब तक प्रस्ताव पास करके निवेदन पत्र भेजती रही तब तक उसकी

पूछताछ न थी। जब गांधी जी के नेतृत्व में उसने सरकार के विरुद्ध मोर्चा लिया तब से कई बार कांग्रेस अवैध घोषित की गई। सम्पत्तियां हड़प की गई। कांग्रेस के नेताओं ने कारावास के कष्ट उठाये और सदा कांग्रेस पूर्वापेक्षया दृढ़तर होकर जनता के सामने आती रही। उसका परिणाम यह है कि देश का शासनसूत्र आज कांग्रेस के हाथ में है।

यदि आर्यसमाज राजनीति में भाग लेता होता तो पंजाब में दुर्नाम सच्चर (भाषा) फार्मूला कभी नहीं बन सकता था। अनेक आर्यसमाजी राजनीति में भाग ले रहे हैं और वे वहां प्रमुख पदों पर हैं, परन्तु व्यक्तिगत रूप में वहां हैं। अतः इन्हें किसी न किसी राजनीतिक दल के साथ बन्धना पड़ता है इसी कारण उन्हें अपने दल का अनुशासन मानना होता है। क्योंकि केवल राजनीतिक कार्य के संघटन वाले दल (धर्मशून्य राजनीतिक पार्टियां) धर्म और आचार को न मान्यता देते हैं और न ही चिन्ता करते हैं। इसी कारण उस दल के सदस्य भी वैसे ही हो जाते हैं। तभी तो अपने को आर्यसमाजी कहलाने वाले भीमसेन सच्चर ने उस फार्मूले को प्रस्तुत किया और आर्यसमाजी कांग्रेसियों ने अपने आतमा के विरुद्ध उसका समर्थन किया।

जिन भाइयों ने इस फार्मूले की उपेक्षा की, उनकी वर्तमान चुनाव के समय और बाद में उपेक्षा कर दी गई। यदि आर्यसमाज के नेता उस समय कायरता न दिखाते और आर्यत्व को प्रकट करते हुए आगे आते तो वह अपने पीछे और साथ चलने वालों की महती संख्या पाते और आगे-आगे आर्यसमाज को और दृढ़ पाते। इतिहास में लिखा है कि आर्यकुलकमलदिवाकर महाराणा प्रताप कहा करते थे "हन्त! मेरे और महाराणा संग्रामसिंह के बीच उदयसिंह न हुए होते तो मेवाड़ की यह दशा न होती जो आज है।" ठीक इसी भांति आर्यसमाज के नवयुवक कह कर रह जाते हैं—"हा! सं० १९६९ वि० सन् १९१२ वाले आर्यसमाजी न हुए होते।"

आर्यसमाज राजनीति में सामूहिक रूप से सक्रिय भाग ले रहा होता तो देश में जो आज भ्रष्टाचार का व्यापक फैलाव है, यह न हुआ होता। लेखक को एक सोशलिस्ट सज्जन ने कहा कि आर्यसमाज के अतिरिक्त भ्रष्टाचार को दूर करने का कोई साहस नहीं कर सकता। क्योंकि यह ही एक समाज है जो अपने संघटन में भ्रष्टाचारियों को घुसने नहीं देता।

कांग्रेस का उदाहरण देकर हमने सिद्ध कर दिया है कि यदि आर्यसमाज राजनीति में भाग लेता तो न केवल वह स्वयं शक्त होता अपितु देशका शासन इसके हाथ में होता।

कांग्रेसियों का षड्यन्त्र

इस पर कई लोग यह कहते हैं कि राजनीति के कारण अथवा राजनीति के साथ स्वाभाविक संबद्ध शासनलिप्सा के कारण कांग्रेस में भयङ्कर फूट और दलबन्दी है, वैसे ही आर्यसमाज में भी होता। ऐसे लोगों को क्या कहा जाये। क्या आर्यसमाज में इस समय दल नहीं हैं, और फिर क्या उन दलों में गुट नहीं हैं? अतः राजनीति को दलबन्दी का हेतु बताना अपनी धूर्तता का परिचय देना है। कांग्रेस में दलबन्दी का हेतु है कांग्रेस की धर्मनिरपेक्ष नीति। आर्यसमाज का आधार है सदाचार। अतः यदि कोई संस्था दलबन्दी का विनाश कर सकती है तो वह आर्यसमाज ही है। राज्यशक्ति-दण्डविधान हाथ में न होने से वह आज असमर्थ हो रहा है।

कुछ लोग ऐसे भी आर्यसमाज में हैं जो कांग्रेस में काम करते हैं। यह लोग भी आर्यसमाज को राजनीति से दूर रखने की पूरी चेष्टा करते हैं। उनके प्रति पूरा आदर मान रखते हुए भी हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं कि हमें उनकी मनोदशा पर पूरा संदेह है। वह किस प्रयोजन के लिए ऐसा करते हैं। और इस प्रयोजन को आर्य जनता जानती है। आवश्यकता पड़ी तो उसको प्रकट कर दिया जायेगा।

ऋषि दयानन्द के जीवन-काल में ही अंग्रेजों ने यत्न किया था कि ऋषि किसी भांति सरकारी सहायता लेना स्वीकार करें। कमांडर-इन-चीफ जनरल राबर्ट ने एक बार स्वामी जी से कहा था कि हम आपको रेल का फर्स्टक्लास का पास दिलवा देते हैं और आपकी रक्षा के लिये कुछ सैनिक आपकी सेवा में रख देते हैं। ऋषि ने तुरन्त बिना झिझक उत्तर दिया कि लोग मुझे सरकारी मनुष्य कहेंगे।

जो बात ऋषि के समय सरकार न कर सकी, उनके

पश्चात् सरकार को इसमें मनचाही सफलता मिली। वैसे तो ऋषि के जीवन काल में भी आर्यसमाज में ऐसे मनुष्य घुस आये थे जो आर्यसमाज के लिए अन्त:शत्रु थे, इनमें से एक व्यक्ति का नाम लेना अनुचित न होगा। यह सज्जन राय बहादुर मूलराज एम० ए० थे। ऋषि ने गोकरुणानिधि लिखी थी। रायबहादुर को इसका अंग्रेजी भाषान्तर करने को कहा गया। यह बहुत छोटा पुस्तक है। एक या दो दिन में इसका अनुवाद किया जा सकता है। परन्तु दो मास बीत जाने पर भी रायबहादुर ने भाषान्तर करके नहीं दिया। तब ऋषि ने उनको पत्र लिखा कि 'यदि इतना छोटा सा काम आप से अब तक न हो सका तो देशहित जैसा बड़ा कार्य आप कैसे करेंगे।" ऋषि के इस उपालम्भ में कितनी हार्दिक वेदना है! कितनी गम्भीर चिन्ता है! उसी रायबहादुर के एक अनिष्टकारी व्याख्यान ने आर्यसमाज के दो टुकड़े कर डाले। सं १९५० वि० में आर्यसमाज लाहौर के वार्षिकोत्सव पर रायबहादुर ने कहा "एक मैं हूँ जो मांस खाने को वेद के अनुकूल मानता हूं।" उनके इस कथन का फल आर्यसमाज में सदा के लिए फूट के रूप में प्रकट हुआ।

अंग्रेजों की चाल

हमारा अपना विचार है कि उस समय की सरकार ने आर्यसमाज को शक्तिहीन करने के लिए अपने बहुत से कर्मचारियों को आर्यसमाज में सम्मिलित करा रखा था, जिन्होंने अपनी चालाकी से आर्यसमाज में प्रतिष्ठा प्राप्त करके कई अशुद्ध धारणाओं की रीति डाल दी। जिसका परिणाम समाज की दुर्बलता के रूप में प्रकट हुआ। कुछ व्यक्तियों को छोड़कर आर्यसमाज को राजनीति से दूर रहने का उपदेश देने वाले वे लोग थे जो सरकारी नौकर थे।

आर्यसमाज के दशवें नियम में कहा गया है कि "सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए" अर्थात् समाजहित के लिए निजहित का त्याग कर दो। परन्तु इन लोगों ने निजहित पर समाजहित की बलि दे दी। यदि आज आर्यसमाज विवश है और अपने आपको हीन, दीन और कभी-कभी कोपभाजन अवस्था में समझता है तो इसका कारण यही अनीति है।

आर्यसमाज की नौका के खेवटों ने कम से कम अपने कार्य से यह प्रमाणित कर दिया है कि आर्यसमाज की नगण्य स्थिति है। जो काम आर्यसमाज अथवा आर्यप्रतिनिधि सभाओं द्वारा होने चाहियें, उनको यह नाममात्र के नेता अपने को चमकाने के लिए अपने नाम से करते हैं, समाज के द्वारा नहीं बनाते। यदि इनके हृदय में समाज के प्रति आदर की भावना होती तो यह सब काम समाजों और सभाओं द्वारा हुए होते।

आर्यसमाज में कुछ व्यक्ति ऐसे भी आये जिनको ऋषि के व्याख्यानों से कुछ हानि पहुँची थी। वह लोग पर्याप्त संख्या में आर्यसमाज में आये। और आकर आर्यसमाज की अगली पंक्ति में आसन जमा लिया। उन्होंने आर्यसमाज को अपरिशोधनीय हानि पहुँचाने के लिए कुतर्क (कि आर्यसमाज को राजनीति में भाग नहीं लेना चाहिये) खड़ा किया। यह मानना होगा कि जिस हीन प्रयोजन को लेकर वे लोग आर्यसमाज में आए थे, उसमें उन्हें पूर्ण सफलता मिली।

अब जनसंघ का डोरा

आर्यसमाज को राजनीति से दूर रखने वाले महानुभाव कभी-कभी यह कहने का दुस्सहास करते हैं कि "यदि आर्यसमाज राजनीति में भाग लेने लग जाय तो आर्यसमाज अखाड़ा बन जावेगा। हिन्दू सभाई आर्यसमाज को अपनी ओर खींचने का यत्न करेंगे। कांग्रेस वाले उसे अपने पक्ष में घसीटने का यत्न करेंगे। इस प्रकार आर्यसमाज एक राजनीतिक अखाड़ा बन जायेगा।" हमें इस पर हंसी आती है और इस युक्ति को उपस्थित करने वालों की बुद्धि पर दया आती है। भले लोगो! अखाड़ा तो आर्यसमाज कभी का बन चुका है। अंग्रेजी-शासन काल में कांग्रेसी आर्यसमाजी आर्यसमाज की वेदि को अपने विचार के प्रचार में प्रयुक्त करते रहते थे। हिन्दूसभाई इसको अपना दुमछल्ला बनाने की चिन्ता में रहते रहे हैं। राष्ट्रिय स्वयं सेवक संघ वाले अपना प्रोयजन सिद्ध करने के लिए इसको हथियार बनाने की चेष्टा करते हैं। परिणाम सबके सामने है। आज जब भारत स्वतन्त्र हो चुका है, आर्यसमाज तब भी अखाड़ा बना हुआ है। कांग्रेस की यह

इच्छा है कि आर्यसमाज का संचालन उसकी इच्छा के अनुकूल होना चाहिये। हिन्दू महासभा सोचती है कि आर्यसमाज में उसके विचारानुसार कार्य होना चाहिए। सद्योजात जनसंघ भी आर्यसमाज को अपनी विचारधारा में बहा ले जाने की तरंग में है। इसके परिणाम को बताने की आवश्यकता नहीं।

यदि आर्यसमाज सीधे रूप में राजनीति में भाग ले तो यह न हिन्दू महासभा की पूंछ होगा और न ही कांग्रेसी ध्वजा इसके कन्धे पर होगी। आर्यसमाज के अपने विचार होंगे। अपनी कार्यप्रणाली होगी। फिर यह परमुखापेक्षी न होगा।

कई महानुभाव यह कहते हैं कि "यदि आर्यसमाज ने आर्यसमाज के रूप में भाग लेना आरम्भ किया तो इस समय जितने कुछ आर्यसमाजी राज्य विधान-सभाओं, भारतीय-लोकसभा और राज्य-परिषद् में हैं उतने न जा सकेंगे।" उत्तर में निवेदन है कि हम पहले ही कह चुके हैं कि आर्यसमाज को राजनीति से दूर रखने में स्वार्थ काम कर रहा है। हम साथ ही यह भी कहना आवश्यक समझते हैं कि वैयक्तिक रूप में जो आर्यसमाजी लोकसभा आदि में जाते हैं वे आर्यसमाज को भुला देते हैं। इस बात को सब जानते हैं कि पर्याप्त समय तक पंजाब यूनिवर्सिटी में आर्यसमाजियों का एक प्रकार से प्राधान्य रहा। वे लोग अपने मित्रों को पुरस्कार आदि भी दिलवाते रहे, परन्तु उन्होंने कभी भी शास्त्री एम० ए० परीक्षाओं में सायणभाष्य के साथ दयानन्दभाष्य रखवाने का यत्न नहीं किया। प्रेरित करने पर अरुचि प्रकट की। यदि राजनीति में भाग लेने वाले आर्यसमाजियों की संख्या लोकसभा आदि में कम हो जायेगी तो इससे आर्यसमाज की कुछ भी हानि नहीं होगी, अपितु लाभ पहुंचेगा। इसको एक उदाहरण से स्पष्ट करते हैं—आयरलैण्ड जब इङ्गलैण्ड के आधीन था तब आयरलैण्ड के सदस्य ब्रिटिश पार्लियामेंट में सम्मिलत होते थे। आयरलैण्ड अपने सदस्य स्वयं चुनकर भेजता था। आयरिश सदस्यों ने अपना दल पृथक् बना रखा था। वे अंग्रेजों के कंजरवेटिव और लिबरल दलों से सौदा करते रहते थे, क्योंकि उन पार्टियों को आयरिश सदस्यों की सहायता की अपेक्षा रहती थी। इस प्रकार आर्यसमाज जब सीधे रूप में राजनीति में भाग लेने लगेगा तो इसकी पृथक् सत्ता के कारण अन्य दलों की इसकी अपेक्षा हुआ करेगी और इस प्रकार देश के भाग्य निर्माण में आर्यसमाज की आवाज़ रहेगी।

स्वार्थी नेता रोड़े हैं

राजनीति में भाग लिए बिना भी आर्यसमाज में मतभेद है, विरोध है। और वह कभी-कभी बहुत भयानक रूप धारण कर लेता है। उस समय यह लोग अखाड़े से क्यों नहीं घबराते। यह इसलिए की उन अखाड़ों में यह लोग स्वयं पहलवानी करते हैं। उन्हें भय है कि राजनीति में कूदने से आर्यसमाज का रूप बदल जायेगा और उस अवस्था में इनके लिए आर्यसमाज में कोई जगह न होगी। अतः ऐसा समय और अवस्था होने ही न दो। 'न होगा बांस न बजेगी बांसरी।'

इस समय सिखों की संख्या आर्यसमाजियों से बहुत न्यून है, किन्तु यतः वे राजनीति में भाग लेते हैं, अतः उनकी सत्ता की महत्ता मानी जाती है। राजनीति में भाग लेने से उनकी शक्ति बढ़ी है, घटी नहीं है। अतः राजनीति में भाग लेने से आर्यसमाज को लाभ ही होगा, इससे इसकी शक्ति बढ़ेगी।

कुछ और भी छोटे-मोटे कारण हैं जिन से आर्यसमाज को राजनीति से दूर रखने का यत्न किया गया, और किया जा रहा है। परन्तु विस्तार भय से उन कारणों का उल्लेख यहाँ नहीं किया जा रहा है।

इस समय संसार और देश की जैसी अवस्था है वह बहुत ही विचित्र है। यदि आर्यसमाज सचेत न हुआ, तो नगण्य सम्प्रदाय के रूप में बदल जायेगा। यदि समय पर सावधान सजग हो गया तो केवल भारत ही नहीं, संसार भर का नेता बन सकेगा। हां यह बात कभी भी नहीं भूलनी चाहिये कि चेतन्य और जागरण का यही काल है। अन्यथा हम पर वही लोकोक्ति चरितार्थ होगी...."पीछे पछताये क्या होत जब चिड़िया चुग गई खेत।"

इसके साथ यह कहने में हमें भी कुछ संकोच नहीं कि आर्यसमाज के वर्तमान नेता आर्यसमाज को ऐसा बनने नहीं देते। क्योंकि इनको आर्यसमाज की उन्नति और वृद्धि अभिप्रेत नहीं। यह प्रत्येक चीज को "आगे के लिए रख

छोड़ने" के इच्छुक हैं। किस प्रकार आवश्यक विषयों पर विचार को स्थगित किया जा सकता है, ये इस विद्या में वह बड़ी निपुणता रखते हैं। इससे लोग विवश हैं, अन्याधीन हैं।

इन्हें आर्यसमाज तथा वैदिक धर्म की उन्नति की कितनी चिन्ता है, इसे जानने के लिए इनकी सन्तान को देख लीजिये। यदि इनसे पूछा जाय आपके परिवार के लोग आपके विचार के क्यों नहीं हैं ? तो कहते हैं हमने उन्हें विचारों की स्वतन्त्रता दे रखी है। पाठक इसका अर्थ कदाचित् न समझ सकेंगे। हम बतलाते हैं उसका गहरा भाव है। यह कहना चाहते हैं कि जब हम पर ही आर्यसमाज की छाप नहीं है, तब दूसरों को कैसे उसमें रगें ? क्या आप ऐसों से आर्यसमाज की उन्नति की आशा करते हैं। यदि आप करते हैं तो बालू में से तेल निकालने की इच्छा करते हैं।

आर्यसमाज के सामूहिक रूप से राजनीति में भाग लेने के विरोधी महानुभावों से हम एक सीधा सा प्रश्न करना चाहते हैं। हैदराबाद में उन्होंने संवत् १९९५ वि० में सत्याग्रह किया था, उसकी चर्चा आज तक चालू है। क्या वह राजनैतिक न था ? अब पुनः गोहत्या रुकवाने के लिए सरकार से टक्कर लेने की योजना बनाई जा रही है, यह क्या राजनैतिक नहीं है ?

जब आवश्यकता पड़ने पर समय-समय पर आप राजनीति में जूझते रहते हैं, तब आर्यसमाज के हित के लिए संसार को सुपथ दिखाने के लिए व्यवहारिक राजनीति में भाग लीजिये। लोग आपके राजनीति संबन्धी वैदिक उपदेशों को कदाचित् इतने आदर से न सुनें जितने भक्तिभाव से वे वैदिक राजनीति को आपके द्वारा व्यवहार में लाया जाना देखना चाहते हैं। यह समय की मांग है। चूकने से महान् अनर्थ होगा।

●

रहस्य क्या है ?

एक देवी जी एक जौहरी की दुकान पर अँगूठी खरीदने गइं। उन्होंने १०० रुपये कीमत की एक अँगूठी पसंद की, सौ का नोट दिया और घर आयीं।

दूसरे दिन पुनः वह उसी दुकान पर आयीं, "इसे बदलकर मैं २०० रुपये की एक दूसरी अँगूठी लेना चाहती हूं।"

उन्होंने दूसरी अँगूठी पसंद की। जौहरी को धन्यवाद दिया और वहाँ से चलने को तैयार हुई।

जौहरी ने और १०० रुपये माँगे।

उन देवी जी ने कुछ रुखाई से कहा, "कल मैंने आपको १०० का नोट दिया और आज फिर १०० रुपये की अंगूठी दी। अतः अब मुझे अधिक देना नहीं है।"

इतना कहकर वह दुकान से चलती बनीं।

बेचारा बनिया सोचता रह गया। आप भी थोड़ा-सा सोचिए कि इस पहेली में क्या रहस्य है।

× × × ×

शराब आमदनी का साधन नहीं कैसे ?

● रामानन्द
(एम० अर्थ शास्त्र)

देश के शिक्षित कर्णधारों से लेकर अशिक्षित वर्ग तक एक स्वर से यही राग अलापते हैं कि शराब राजस्व का साधन है इससे सरकार को आमदनी होती है। आश्चर्य है कितना विचित्र और मनुष्य को बुद्धिहीन बना देने वाला अंग्रेजों (मानवता के कातिलों को) का नारा आज भी उसी रूप में बुलन्द हो रहा है। १८८९ में अंग्रेजों ने षड्यन्त्र के साथ इस नारे को बुलन्द किया था कि हिन्दू शराब पियेंगे और हम इसका शोषण करेंगे और अंग्रेजी साम्राज्यवाद का नींवपताल में पहुंचा देंगे ठीक उसीप्रकार काले अंग्रेज (कांग्रेसी और छोटे कांग्रेसी जनसंघी भारतीय क्रान्ति दलीय कम्यूनिस्ट आदि) अपनी स्वार्थ नीति एवं शोषणकी नीति जिसका अनुकरण अंग्रेजोंसे किया है, अपनी सत्ता को स्थाई बनाये रखने के लिए शराब का प्रचलन अंग्रेजों के स्वरों में कर रहे हैं। अर्थात् कांग्रेसी साम्राज्यवाद की नींव को दृढ़ करना। वर्तमान शराब पीने वाले केन्द्र एवं अधिकांश राज्यों के मन्त्री (जैसा हिन्दुस्थान समाचार पत्र में मार्च के अन्तिम सप्ताह में प्रकाशित हुआ है) शराब पीते हैं अतः शराब पीने वालों से शराब नहीं बन्द हो सकती। विशेष बात करने पर अपनी जिम्मेदारी को राज्यों की सरकार पर डाल देते हैं और संविधान की अवहेलना करते हैं।

पासवां जब चोर हो तो कौन रखवाली करे।
उस चमन का हाल क्या, माली जो पामाली करे॥

संविधान की धारा ४७ में स्पष्ट किया गया है कि केवल औषधि रूप में छोड़कर शराब पर पूर्ण प्रतिबन्ध होगा। किन्तु हापकिन्स विश्व विद्यालय के डा० केजे ने कहा है कि—

"There is no single disease in the world of which Alcohal is the cure. This fact well known to science is now generally admitted by proyressing members of the medical profession. The purpose of medicines is to care disease. Since Alcohal cures no disease its is not a medicine. It has no plan in medical practice"

इसी प्रकार टी० डी० क्रोथर्स (Crothers) बताया कि Effects of alcohal on the body are anaesthetic and paralysing

अनेक उन्नतिशील वैद्यों ने स्पष्ट कर दिया है कि शराब औषधि के रूप में नहीं उपयोग की जा सकती। अतः संविधान की धारा का औषधि शब्द हटा देना चाहिए।

शराब राजस्व का साधन है वह केवल राक्षसी वृत्ति एवं मानवता को मिटादेने वाले एवं शोषकों का एक मात्र स्टन्ट (Staunt) है। यदि प्राचीन वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक साहित्य पर दृष्टिपात करते हैं तो ९९ प्रतिशत साहित्य में हमें शराब आमदनी के साधन के रूप में न आकर बल्कि आय को मिटा देने वाला साधन है क्योंकि इस आयको अर्जित करने के लिये मनुष्य की बुद्धि को सन्तुलित रहना आवश्यक है किन्तु शराब

'बुद्धिम् लुम्पति यद् द्रव्यम् मदकारी तद् उच्यते'
(रस शारङ्ग धर)

अतः अब मनुष्य की बुद्धि नष्ट हो चुकी है तो आमदनी कैसे प्राप्त हो सकती है। आय सही रूप में.........

"Not gold but man only makes a nation strong and bold"

अतः स्पष्ट है कि राष्ट्र की आय चरित्रवान् बलवान एवं स्वस्थ्य मनुष्य है क्योंकि ऐसे मनुष्य ही राष्ट्र की निधि होते हैं इसका प्रत्यक्ष उदाहरण महाभारत काल में उपलब्ध है कि शराबी दुर्योधन को बध कर धर्मधीर युधिष्ठिर ने सार्वभौम राज्य की स्थापना की थी। ठीक इसी प्रकार व्रतधारी राम ने रावण मद्यपीका विनाशकर रामराज्य की स्थापना की थी।

शराब मनुष्य की कार्यक्षमता को कम कर देती है अतः धीरे-धीरे मनुष्य के अस्तित्व को भी मिटा देती है अतः आय को किसी रूप में नहीं अर्जित कर सकती। उदाहरण स्वरूप १६४७ के पूर्व गुजरात में शराब बन्दी नहीं थी परिणाम स्वरूप मनुष्यों की कार्य क्षमता में कमी आ गयी मजदूर मुश्किल से २०० सूती वस्त्रों के स्पेन्डिलस चला पाते थे। किन्तु वर्तमान समय में शराब पर पूर्ण प्रतिबन्ध होने के कारण आज वहाँ के मजदूरों की कार्य-क्षमता दुगुनी से चारगुनी अधिक हो गयी है। अब मजदूर ८०० स्पेडिलस तक चलाते हैं। इसके विपरीत गुजरात की आय में भी क्रमशः वृद्धि हुई है जैसाकि आँकड़े स्वयं बता रहे हैं :—यह वृद्धि बिक्री करों में वृद्धि से हुई है।

वर्ष	शराब से आय (लाख रुपये में)	बिक्री कर से आय (लाख रुपये में)
१६४६-४७	८५०.००	६६
१६४७ ४८	७६६.२७	४००
१६४८-४६	५८५.१७	६७०
१६४६-५०	३७०.१६	१२६७
१६५०-५१	७५.७८	१४५६
१६५१-५२	५६.६०	——
१६५३-५४	५६.४५	१५४३
१६५४-५५	३८.०६	२०७३
गुजरात		
१६६०-६१	३.१८	१०५३
१६६१-६२	३.३१	१३८२

अतः उपरोक्त आँकड़ों से स्पष्ट हो रहा है कि प्रारम्भ में शराब से आय बढ़ती है किन्तु दीर्घकाल में सम्पूर्ण शराब की आय घट जाती है और बिक्री कर से आय धीरे-धीरे बढ़कर बहुत अधिक हो जाती है।

इसके अतिरिक्त मद्रास राज्य (तमिलनाड) जहाँ पूर्ण प्रतिबन्ध है वहां से भी इस बात को स्पष्ट किया जा सकता है :—

मद्रास राज्य में १६४५-४६ में शराब पर प्रतिबंध न होने के कारण १० करोड़ रुपये की आय होती थी, किन्तु १६४६ से पूर्ण नशाबन्दी करने के बाद १६६३-६४ में मद्रास राज्य को २८ करोड़ रुपये की आय प्राप्त हुयी थी।

आय में वृद्धि का कारण मनुष्य की कार्यक्षमता में वृद्धि, मनोरंजन कर और बिक्री कर में वृद्धि तथा पुलिस विभाग पर व्यय में कमी।

इस प्रकार अपने देश के विभिन्न १७ राज्यों में से दो राज्यों में जब शराब बन्दी के कारण राज्य के राजस्व में वृद्धि हुयी है तो निश्चित ही सभी राज्यों की आय में वृद्धि होगी।

नशाबन्दी समिति की रिपोर्ट के आधार पर जब १) की आय शराब से होती है तो ४) की हानि सामूहिक रूप से होती है। जब यह कहा जाता है कि सम्पूर्ण देश को लगभग एक अरब रुपये की आय होती है तो इस प्रकार ४ अरब रुपये की हानि होती है।

अतः विभिन्न राज्यों में जो घाटे का बजट आया है। इसका मात्र कारण लोगों को अपना पिछला कर न जमा करना है जैसा कि समाचारपत्रों में प्रकाशित हुआ था कि लगभग १ लाख २२ हजार व्यक्तियों ने आय कर नहीं दिया है जिसकी सम्पूर्ण धन राशि लगभग २ अरब ३७ करोड़ रुपये होती है। यह स्पष्ट है कि शराब पीने से व्यक्तियों का नैतिक स्तर घट जाता है अतः व्यक्ति कर देने से टाल कर जाता है।

इसी प्रकार भारतत कुमारप्पा ने 'नशाबन्दी क्यों' में संयुक्त राज्य अमेरिका का उदाहरण दिया है कि जब १६२१—२६ तक संयुक्त राज्य में पूर्ण मद्य निषेध था तो वहाँ की व्यक्तिगत आय से लेकर राष्ट्र की आय बढ़ गयी थी और व्यक्तियों का पारस्परिक सम्बंध बढ़ गया था, घृणा, ईर्ष्या द्वेष एवं तलाक के स्थान पर प्रेम, सहानुभूति सुखी पारिवारिक जीवन हो गया था। किन्तु असुरों (दुष्टों) का संगठन दृढ़ होने शराब से प्रतिबंध हटा दिया गया। परिणाम स्वरूप आज संयुक्त राज्य अमेरिका की स्थिति यह हो गयी है जिसका स्पष्टीकरण लिङन बी० जानसन (राष्ट्रपति) ने स्वयं किया था:—"हमारा राष्ट्र कितना गिर

चुका है कि प्रत्येक ढाई मिनट में एक दुर्घटना होती है, प्रत्येक बीस मिनट में एक व्यक्ति आत्महत्या कर लेता है तथा पाँच मिनट में एक बलात्कार हो जाता और आधे घंटे में एक डकैती हो जाती है।" अतः अमेरिका का अनुकरण करने वालों को चेतावनी दी जा रही है कि आर्यावर्त अमेरिका नहीं बन सकता, जो इसके अमेरिकी-करण करने में लगे हैं वे चेतें अब आर्यावर्त का आर्य जाग उठा है अब आर्यावर्त से सभी अशांति के कारणों को ठंडा करके ही दम लेगा। इसके लिए चाहे कितना ही संघर्ष एवं युद्ध करना पड़े किन्तु मनुष्यों को पाप के मुख से बचाकर ही दम लेगा।

अतः जब आय बढ़ने की पुष्टि की जाती है तो इसका वस्तुओं के मूल्य में असर अवश्य पड़ना चाहिए किन्तु अभी हाल शराब से प्रतिबंध हटा देने से वस्तुओं के मूल्यों में कई गुना वृद्धि हो गयी है। जैसा कि मूल्य सूचनाङ्क के (Price Index) इस समय २०० तक पहुँच चुका है जब कि १९५१ लेकर १९६० तक १४० से १६० के मध्य तक था। जहाँ तक वस्तुओं के उत्पादन वृद्धि की बात है प्रत्येक वस्तु का उत्पादन बढ़ा है और साथ ही साथ मूल्य भी अधिक अनुपात में बढ़ा है। जब की अर्थ व्यवस्था (Economics) का सामान्य सिद्धान्त यह बताता है कि जब वस्तुओं के उत्पादत में वृद्धि होती है तो मूल्य में कमी होनी चाहिए (Otherthings remaing the same) किन्तु शराब का प्रचार होने के कारण उपरोक्त नियम परिवर्तित हो जाता है क्योंकि मनुष्य का स्वभाव बदल जाता है आदत और रुचि बदल जाती है। अतः समाज में शराब का प्रचार होने से (Hoartig incentive) अर्थात धन संकुचन विकास होता है जिससे अधिक उत्पादत होने पर भी वस्तुओं का मूल्य घटने की अपेक्षा बढ़ता है।

गुजरात और मद्रास राज्य को छोड़कर अन्य राज्यों का बजट देखने पर मुझे ज्ञात हुआ कि जब देश के विभिन्न राज्यों में शराब पर पूर्णतः या अंशतः प्रतिबंध था, उस समय राज्यों के बजटों में इतना घाटा नहीं हुआ करता था किन्तु शराब से प्रतिबंध हटा देने पर घाटा भी अधिक हो गया है जैसा कि पंजाब राज्य का बजट स्पष्ट बता रहा है कि पिछले वर्ष लगभग ८ करोड़ का घाटा था, इस वर्ष १२ करोड़ ५० लाख का घाटे का बजट आया है। अतः उपरोक्त प्रमाणों के आधार पर कहा जा सकता है कि मादक पदार्थों से राज्यों की आय बढ़ती नहीं बल्कि घटती है। हमारी खुली चुनौती है कि मादक और अमानवीय साधनों से वास्तविक आय में वृद्धि होने की अपेक्षा ह्रास होता है।●

"यह धारणा कि शराब की दुकानों से राज्य-सरकारों को आमदनी होगी, एक बचकाना सरकारी दंगाबाजी है। जो चीज जनता की तबाही ला सकती है, बस इस कारण राज्य सरकारों के लिए हितकर नहीं हो सकती कि इसमें से थोड़ा-सा मुनाफा प्राप्त किया जा सकता है। परिवार की इस्तेमाल की वस्तुओं के ऊंचे दामों और शराब पर फिजूल के खर्चे के बीच इतनी मुसीबत होगी जिसकी जिम्मेदारी कोई भी समझदार सरकार अपने ऊपर नहीं लेगी।"

—राजगोपालाचार्य

Why I left the Church ?

● ADOLF JUNG

[It was great pleasure for me to welcome Shri ADOLF JUNG-in our office on 28th March. He was introduced to me by my friend Shri Ved Prakash Kohli (General Secretary Indian Council for International Co-operation-New Delhi) Shri Adolf Jung, a bright young man of 32 from West Germany, is indeed a very interesting person. In our hour long conversation. I was delighted to notice in him a great fascination for Vaidic Dharma. He was forthright in his condemnation of Max Mueller who masqueraded himself as a great Vaidic Scholar and who prostituted his learning by partaking in the theo-political conspiracy to uproot Vaidic Dharma from India in order to pave the way for converting millions of Indians into Christianity. Shri Jung knows Hindi, English, Spanish, Dutch, Swedish besides his mother tongue German and has promised to translate our book "Max Mueller Exposed" into diffierent European languages and arrange for its circulation among the intellegentia in Germany. I requested him to write for "Rajdharma" the reasons which prompted him to embrace Vaidic Dharma. He gladly accepted. What he wrote for us is quite revealing of the nefarious methods employed by the Christian church to raise money for financing their anti-national activities in our country].

Why I have left the church and why I think Vaidic Religion is the only true religion of mankind ?

Christianity is one of the faiths which were founded by one person (by a man, never by a woman) at a certain time and in a certain part of the world. This faith has spread mainly by force, taking advantage of temporary weaknesses and degradations of other religious systems. Even today Christians are trying to convert innocent and illiterate people by all means.

I did not want to belong to such a religion. Hence I gave up Christianity on 24 Dec. 1964.

Vaidic Dharma is SANATANA, eternal, it was not founded by any one person at a certain time but is at least as old as mankind. Great seers, also women among them,
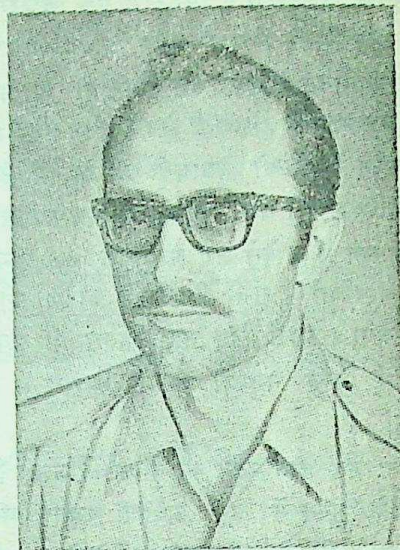
have been expounding and promulgating Dharma during tens of thousand years making minor adaptations and changes according to the need of the time. This Vaidic religion has never been forced upon followers of other beliefs.

Church Tax

In many West European countries every individual belonging to a Christian Church, except children pensioners. etc., has to pay church tax. This tax is compulsory and it is collected by the State. So the State co-operates with the church. This tax is deducted from the wages and salaries of workers and employees. From owners of houses and estates it is collected according to the area of their estates. A big part of this money is sent abroad to Christian missions where it is used to convert illiterate people, to wean them away from their traditional faith, to make them feel as a separate nation so that in the end they claim a separate State and if this State is not conceded they often rise in revolt, supported by foreign powers. So everyone who pays church tax should be aware of the fact that he is financing subversive and anti-national activities which pose a danger to the internal security of non-Christian countries.

ADOLF JUNG
6101, WIXHAUSEN,
FRANKFURTER STRASSE-17
WEST GERMANY

should be classed as Hindus is most significant and make it the more extraordinary that this same Government should have failed so completely to protect the aboriginal Hindus from alien missionary aggression.

Conversion to Christianity harmful for the tribals :—The second part of India's case rests on a profound belief that a **change of religion is actually harmful to the aboriginals. It destroys tribal unity, strips the people of age—long moral sanctions, sepa ates them from the mass of their fellow countrymen and in many cases leads to a decadence that is as pathetic as it is deplorable.**

It is by no means communal—minded and fanatic controversialists who hold this view. It **is the considered opinion of scientists and scholars throughout the world.** The strongest criticism of missionary work and exposure of its effect on primitive civilizations has been made not by Hindus but by such members of the Indian Civil Service as Mr. N. E. Parry., Mr. J. P. Mills and Professer J. H. Hutton., Mr. Mills emphasizes in the Census of Indian Reports the deplorable effects of missionary work in Assam. The Naga, he points out, puts his village before himself. The Christian puts himself before his village. 'No Semas are so prone to disobey their chiefs as Christian Semas and Christian Aos have often refused to take the part in village government to which their years and experience called them......Told year in and year out that all the past history, all the strivings, all the old customs of his tribe are wholly evil, the Naga tends to despise his own race, and no night of the soul is blacker than that.

The great authority of Dr. Henry Balfour found among the Nagas who had come under mission influence 'marked evidence of a comparative lack of that virility, alertnesss and zest' which he had observed elsewhere. Baron Von Eikstedt has described how the Andaman Home Policy of winining the aboriginals to loyalty through evangelization has proved 'the door of death' to the Andamanese. Geoffery Gorer is scathing in his account of mission work among the Lepchas of whom over a thousand have been converted. The main result, he says, has been to 'implant a strong sense of individual sin and excessive prudery, with which is coupled a tendency to snigger at excretory functions,' and the breaking of tribal life and the too rapid destruction of ancient customs. Thus the Archivesd Anthropologic Criminelle describe how in Burma the missionaries have 'unintentionally but inevitably favoured the growth of prostitution in the country by condemning free unions.' And Milihowski says that missionary attempts to break up the bukumatula system in the Trobriand Islands only threw tribal life into confusion. It is needless to say,' he poinis out, that this state of affairs does not enhance true morality.'

Missionary controversialists have frequently quoted from the writtings of **Sarat Chandra Roy, the Hindu ahtaropologist,** in support of their contention (for they are never backward in self praise) that their work has brought every **kind of benefit to the people. It is true that** in his early works Roy did write favourably about the missionaries, but later his mind changed and shortly before his death **he told me that he regretted what he had written on this subject and that in his final opinion it was not beneficial for the aborigina's to change their religion.** Indeed his later writings show a marked lack of enthusiasm for missionary effort. Thus he expresses doubts of the value of the evangelization of the Khonds and while praising certain Spanish Fathers describes them as **'rare specimens' of their kind speaks of the 'incalcuable harm' thoughtlessly done to the simple children of nature 'by most foreigners.'**

The conflict of missionary aboriginals is not confined to India, and had I space I could fill hundreds of pages with testimonies to the tragic results of missionary work in the other lands. Here, however, I must content myself with calling one witness, but an important one. The opinion of Dr. Raymond Firth, Professor in the London School of Economics, one of the leading sociologists in the world, on the effect of mission work in a primitive Pacific island, Tikopia is so moderate and unbiassed and so relevant to the Indian situation that I propose to examine it in detail.

'The effects of mission activity' says Firth,' have been most serious in the political field. A general opinion is that the mission teachers wish to exalt themselves at the expense of traditional authority. Allegiance has been divided, jealousy has arisen between the chiefs and the mission leaders and bewilderment and uneasiness has resulted among the people. The only theft of my goods took place in Faca and everybody accussed a Christian, and the only case of adultery that occurred to my knowledge, while I was there, was between Christians in the village of the principal teacher. As far as the cruder forms of laying and greed were concerned heathen and Christian had to be classed alike'.

'The aggressiveness of the mission teachers, feeling that they have behind them the power of the white man, is sometimes rether trying...The most serious element in the situation, to my mind, is that the Tikopia, Christians and hethen alike, believe that the attitude of the mission, as expressed through its teachers, represents the official attitude of the European Government and white people in general. They are a docile people and when informed by what they rega as superior power that their customs are b they endeavour to defend them but with tendency to yield. "We just go about urina ing" is the deprecatory way in which one ma expressed their conviction of relative inefficienc

"The modest acceptance of their own ign rance while striving to preserve their ancie customs is pathetic. The more intelligent reali their dilemma : they see the advance of t mission, the increase in the number of teacher Churches, and converts, the success of its poli of inducing the children to attend its service they feel the weight of its economic powe they bow to its claim to speak in the name that vast white civilization which they resp so much. Yet they are convinced that th own institutions are good. **I can not, but reg that the urge to proselytization finds it necess to disturb a people whose adjustment to life their traditional institutions has been on whole a satisfactory one.** To make an unsop ticated, defenceless people bear a part of burden of our own uneasy, restless spirit se a pity."

This might describe word for word the si tion among the Gonds of mandla at the pre day.

Methods adopted by Missonaries :—Our t criticism of missionary effort concerns the **thods by which people are brought into Church.** In Mandla the priests of the Apos prefecture of Jubbulpur have obliged us wi large scale demonstration (which they foolish enough to display under the very of scientific abserver) of what these met can mean in a remote Partially excluded ar

आर्य राज्य कब होगा ?

संकलयिता—ब्र० सतीशकुमार 'गुरुकुल झज्जर'

१

जब दी जायेगी फांसी—

बेईमान राज्याधिकारियों को,
दुराचारी पदाधिकारियों को,
स्वार्थरत वेद विमुख विद्वानों को,
धर्म युद्ध से विरत क्षत्रियों को,
भारतवासी संस्कृति-द्रोहियों को,

२

जब सर्वस्व हरण होगा—

चोर बाजार करने वाले नराधमों का,
घूसखोर राज्य-कर्मचारियों का,
धर्मादि को व्यापार में लगाने वालों का,
संस्कृत का अपमान करने वालों का,

३

जब बन्द कर दिये जायेंगे—

गोहत्या और बूचड़खाने,
गोचर्म के जूते बनाने,
गोचरों के खेत बनाने,
मछली अण्डों से पेट भरना
लोहे की भैंस से घी दूध बनाना,

४

जब अक्षम्य अपराध निर्धारित होगा—

मादक द्रव्यों का दुरुपयोग,
तम्बाकू, शराब, गांजा, चरस का पीना,
विषय वासनाभिभूत हो पूंजी बटोरना,
रक्तपिपासु शाही लोक का सूदखोर जीवन,

५

जब निर्वाचन होगा—

योग्यता पर, पार्टीपोलिटक्स पर नहीं,
जन सेवा पर, प्रोपेगण्डे पर नहीं,
जनता की अपनी राय पर, लादी गई पर नहीं,
धारायें बनाने के लिये ऋषियों का
मतदाता की योग्यता पर, आयु पर नहीं,

६

जब अन्त होगा—

विदेशी शासन पद्धति का,
हिन्दू कोड बिल का,
वकील, डाक्टरों की लूट का,
ऐश्वर्योपभोगी बढ़े वेतनों का,
नियन्त्रण द्वारा मूल्य की बढ़ती का,

७

जब बायकाट होगा—

विदेशी फैशन का
अश्लील चित्र बनाने का
वेश्या लावण्य भूषा का
विदेशी नकल का

८

जब संरक्षण होगा—

राष्ट्रीय ब्रह्मचर्य प्रणाली का
भारतीय चिकित्सा प्रणाली का
भारतीय आर्ष शिक्षा पद्धति का
भारतीय संस्कृति, सभ्यता, वेश-भूषा का

आर्य राज्य तब होगा।

ओ३म्
पंजीयन क्रमांक डी० १६८
राजधर्म १० अप्रैल १९६९

हरयाणा में 'शराब बन्दी' आन्दोलन की आंशिक सफलता पर हम आर्य युवकों को बधाई देते हैं पर आशा करते हैं अब दुगने उत्साह से जुट कर पूर्ण शराब बन्दी करके दिखायेंगे। —भूपाल आर्य

नाम ....
....
....
....

विज्ञापन शुल्क

(एक बार के लिये)

कवर पृष्ठ ४	पूरा—	३०० रु०
कवर पृष्ठ ४	आधा—	२०० रु०
कवर पृष्ठ ३	पूरा—	२०० रु०
अन्य पृष्ठ	पूरा—	१५० रु०
अन्य पृष्ठ	आधा—	१०० रु०

राजधर्म (पाक्षिक)
वार्षिक शुल्क १० रुपये

ओ३म्
राजधर्म (पाक्षिक)
आर्यसमाज मन्दिरमार्ग नईदिल्ली-१
दूरभाष—४२०४६

संपादक
प्रो० श्यामराव

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के लिये प्रो० श्यामराव द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित।

सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६

ओ३म्

राजधर्म

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का पाक्षिक मुखपत्र

सम्पादक
प्रो० श्यामराव

वर्ष-१ : अंक-१५
वार्षिक शुल्क— १० रु०
एक प्रति ५० पैसे

१० जून १९६९
दयानन्दाब्द १४५

कब तक चुप रहेगें ?

आर्य समाज के नेताओं के आपसी झगड़ों से आर्य जनता ऊब चुकी है। इन नेताओं ने व्यक्तिगत पदलिप्सा के लिये आर्यसमाज के गौरव को गिरवी रख दिया है। ३१ मई को सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के वार्षिक अधिवेशन में अनैतकता की चरम सीमा पर पहुंच कर कतिपय नेताओं ने आर्य सन्यासी महात्मा आनन्द स्वामी जी के विरुद्ध विषवमन किया। सन्यासी होने के नाते महात्मा जी चाहे चुप रह जांय पर जिस आर्य जनता ने पूरी श्रद्धा के साथ महात्मा जी को दशम सार्वदेशिक आर्य महा-सम्मेलन हैदराबाद का अध्यक्ष स्वीकार किया उन लाखों आर्य नर-नारियों के हृदय को ठेस लगी है और इस अपमान का बदला निश्चिय लिया जाएगा !

दो पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभाओं का गठन और अब दो सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभाओं का निर्माण आर्य समाज को विघटित करने के निमित्त अत्यन्त घृणित षड्यन्त्र हैं। आर्य समाजी नेता कांग्रेस, जनसंघ, भारतीय क्रांति दल एवं हिन्दू महासभा आदि विभिन्न राजनैतिक दलों में विभक्त हैं और आर्य समाज की पवित्र वेदी का उपयोग अपने राजनैतिक स्वार्थों के लिये करना चाहते हैं। क्या हम अपनी आंखों के आगे देव दयानन्द के रक्त से सिंचित आर्य समाज के पौधे को इन राजनैतिक दलों द्वारा कुचलता हुआ देख सकते हैं ? क्या वह समय नहीं आया कि गुरुदत्त, लेखराम और श्रद्धानन्द के खून का मज़ाक उड़ाने वाले इन अनार्य राजनैतिक नेताओं को हम खुले शब्दो में कह दें कि वे अपने गन्दे हाथों को आर्य समाज से दूर रखें और आर्य समाज को इन दलो के हाथों नीलाम करने थे बदले उसे अपने भाग्य पर छोड़ दें ?

हम नहीं चाहते थे इन झगड़ों में पड़ना। हम यह समझते थे कि नेताओं को सद्बुद्धि आयेगी और महात्मा आनन्द स्वामी जी का प्रयास सफल हो जायगा। पर अब महात्मा जी ने कह दिया है कि वे पूरी तरह निराश हो गये हैं। न्यायालयों में और समाचार पत्रों में आज आर्य समाज के पवित्र नाम को बड़ी बेरहमी से घसीट कर कलंकित किया जा रहा है—आर्य जगत के निष्पक्ष विद्वान् और दयानन्द के सच्चे सिपाहियों को आज उत्तर देना होगा कि इस अन्याय को, इस अपमान को, इस बेहयाई को हम कब तक सहन करते रहेंगे ? आखिर हम कब तक चुप रहेंगे ?

—सार्वदेशिक आर्ययुवक परिषद

सम्पादकीय—

वैदिक धर्मियो ! अपने दुश्मनों को पहचानो

राजधर्म के १२ वें अंक में "काले अंग्रेज ! भारत छोड़ो" नामक शीर्षक लेख में मैंने यह दिखाने का प्रयत्न किया था कि किस प्रकार अंग्रेजी शासनकाल में एक महान् षड्यन्त्र के द्वारा इस देश की शिक्षा पद्धति में परिवर्तन कर यहां के पढ़े लिखे लोगों को ईसाई बनाने का प्रयत्न किया गया था। किस तरह एक धर्मान्ध ईसाई, टामस बैबिन्गटन मैकाले की योजना को क्रियान्वित करने के लिये शिक्षा प्रणाली और पाठ्य पुस्तकों में परिवर्तन किये गये। १८३६ में मैकाले ने अपने पिता से कहा था कि ३० वर्षों के अन्तर्गत मैं सारे बंगाल के सम्भ्रान्त परिवारों में एक भी हिन्दू बाकी नहीं रहने दूंगा। जब ये ३० वर्ष पूरे होने को आ रहे थे और उस नीच मैकाले के कुत्सित सपने पूरे होते नहीं दिखाई पड़े तो मैकाले चिन्तित हो उठा और उसने पुनः खोज आरम्भ की कि क्या कारण है इतनी शक्ति और इतनी बुद्धि लगाने के बाद भी इन हिन्दुओं को हम पूरी तरह ईसाई नहीं बना पा रहे ? तब उसे पता चला कि इस देश में धर्म की जड़े बहुत गहरी हैं। यहाँ के समझदार धार्मिक लोग वेद को अपने धर्म की आधार शिला मानते हैं और जब तक इनके मस्तिष्क से "वेद ईश्वरीय ज्ञान हैं" और इनके धर्म की बुनियाद है इस बात को नहीं हटा देते तब तक इनके दिल और दिमाग में बाईबल और ईसामसीह को नहीं घुसाया जा सकता !

अपनी इस घृणित योजना को मूर्त रूप देने के लिये मैकाले ने जर्मनी के एक ३२ वर्षीय नवयुवक को आमन्त्रित किया। २८ दिसम्बर १८५५ को दोनों की बातचीत हुई और मैकाले ने इस नवयुवक 'फ्रेड्रिक मैक्समूलर' को नौ लाख रुपयों का प्रलोभन देकर अपने षड्यन्त्र में शामिल कर लिया। जिस प्रकार एक वेश्या चान्दी के चन्द टुकड़ों पर अपने सतीत्व को बेच देती है उसी प्रकार इस विद्वान् मैक्समूलर ने अपनी विद्वता को मैकाले के हाथों बेच दिया।

इस घटना के ठीक दस ग्यारह वर्ष बाद मैक्समूलर ने ऋग्वेद का अनुवाद और अन्य ग्रन्थ प्रकाशित करवाया जिनको सरकारी मान्यता मिलने में कोई देर न लगी। मैक्समूलर द्वारा कुछ चिकने चुपड़े व्याख्यान दिलाकर इस देशवासियों को खुश कर दिया गया और यहाँ के (मूर्ख) विद्वानों ने यह मान लिया कि मैक्समूलर से बढ़कर संस्कृत और वेदों को जानने वाला कोई नहीं और वेदों की जो सेवा मैक्समूलर ने की उसकी चारों ओर प्रशंसा होने लगी। देशभक्त परन्तु संस्कृत और वैदिक वाङ्मय से अपरिचित युवक सन्यासी स्वामी विवेकानन्द सरस्वती जी ने मैक्समूलर को 'ऋषि' तक कह डाला। पर क्रान्तदर्शी देव दयानन्द की पैनी पकड़ ने उसी समय मैक्समूलर की असलियत का अन्दाजा लगा लिया था—अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें सम्मुल्लास में वे पर्याप्त इशारा करके लिखते हैं—

"जो लोग कहते हैं कि जर्मनी देश में संस्कृत विद्या का बहुत प्रचार है और जितना संस्कृत मोक्षमूलर साहब पढ़े हैं उतना कोई नहीं पढ़ा, यह बात कहने मात्र है। क्योंकि "यस्मिन् देशे द्रुमो नास्ति तत्रैरण्डोऽपि द्रुमायते" अर्थात् जिस देश में कोई वृक्ष नहीं होता उस देश में एरण्ड को ही बड़ा मान लेते हैं, वैसे ही यूरोप देश में संस्कृत विद्या का प्रचार न होने से जर्मन लोगों और मोक्षमूलर साहब ने थोड़ा सा पढ़ा, वही उस देश के लिए अधिक है। परन्तु आर्यावर्त देश की ओर देखें तो उनकी बहुत न्यून गणना है, क्योंकि मैंने जर्मनी देश निवासी एक "प्रिन्सिपल" के पत्र से जाना कि जर्मनी देश में संस्कृत चिट्ठी का अर्थ करने वाले भी बहुत कम हैं और मोक्ष-मूलर साहब के संस्कृत साहित्य और थोड़ी से वेद की

व्याख्या देखकर मुझको विदित होता है कि मोक्षमूलर साहब ने इधर-उधर आर्यावर्तीय लोगों की की हुई टीका देखकर कुछ-कुछ यथा तथा लिखा है जैसा कि "युञ्जन्ति ब्रघ्नमरुषं चरन्त परितस्थुषः । रोचन्ते रोचनादिवि (ऋ० १-६-१) इस मन्त्र के ब्रघ्न शब्द का अर्थ घोड़ा किया है इससे तो जो सायणाचार्य ने 'सूर्य' अर्थ किया है सो अच्छा है परन्तु इसका ठीक अर्थ 'परमात्मा' है । सो मेरी बनाई 'ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका' में देख लीजिये । उसमें इस मन्त्र का यथार्थ अर्थ किया है । इतने से जान लीजिए कि जर्मनी देश और मोक्षमूलर साहब में संस्कृत विद्या का कितना पाण्डित्य है ।"

इसी प्रकार अपनी 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' में भी ऋषि ने मैक्समूलर की पोल खोली है । पर सबसे बड़ी पोल तो मैक्समूलर ने खुद खोल रखी है । दुनिया भर को धोखे में डालने वाला यह कुटिल अपनी "धर्मपत्नी" के नाम एक पत्र में १८६६ में लिखता है—

"This edition of mine and the translation of Veda will here after tell to a great extent on the fate of India. It is the root of their religion and to show them what the root is I feel sure, is the only way to uproot all that has sprung from it during the last three thousand years"

—(From Life and letters of Frederick Max Mueller)

अर्थात्—"वेद का अनुवाद और मेरा (सायण भाष्य सहित ऋग्वेद का) यह संस्करण उत्तर काल में भारत के भाग्य पर दूर तक प्रभाव डालेगा । यह उनके धर्म का मूल है और मैं निश्चय अनुभव करता हूँ कि उन्हें यह दिखाना कि यह मूल कैसा है, गत तीन हजार वर्ष में उससे उपजने वाली सब बातों के उखाड़ने का एकमात्र उपाय है ।"

वेदों के बारे में मैक्समूलर की धारणा क्या थी ?

"Large number of Vedic hymns are childish in the extreme tedious, low, common place." Chips from a German workshop second edition, 1866 Page 27

अर्थात्—वैदिक सूक्तों की एक बड़ी संख्या परम बालिश (बच्चों की सी) जटिल, अधम और साधारण है।

इसी पापात्मा ने अपने कुकृत्यों का हवाला देते हुए इंग्लैंड की सरकार में भारत के लिए जो मन्त्री था—ड्यूक आफ आर्गायल को १६ दिसम्बर १८६८ में एक पत्र लिखते हुए कहा है—

The ancient religion of India is doomed and if christianity does not step in whose fault will it be ?"

"भारत का प्राचीन धर्म नष्ट प्रायः है और यदि ईसाई धर्म उसका स्थान नहीं लेती तो यह किसका दोष होगा ?"

इसी तरह विदेशी साम्राज्यवाद के एजेण्ट बनकर दर्जनों विदेशी धूर्त विद्वानों ने हमारे धर्म और संस्कृति को नष्ट करने का एक महाघृणित प्रयास किया । उनके लगभग १०० वर्ष के इस प्रचार से उन्हें आशातीत सफलता मिली और १९४८ में जब अंग्रेजों को इस देश का शासन छोड़कर जाना पड़ा तो उन्हें इस देश में विदेशियों के जूठन खाकर पूंछ हिलाने वाले बहुत से काले अंग्रेज मिले जो अंग्रेजों के जाने के बाद अपनी 'स्वामिभक्ति' का परिचय देते हुए वेद और वैदिक संस्कृति को दूषित करने का निरन्तर प्रयास कर रहे हैं । के० एम० मुंशी के भारतीय विद्या भवन से प्रकाशित हुई "वैदिक एज", बंगाल के प्रसिद्ध इतिहासज्ञ डा० आर० सी० मजुमदार की "एन्शिएन्ट इन्डियन हिस्ट्री", भारत सरकार द्वारा प्रकाशित—"नेशनल गजेटियर" आदि सैकड़ों ग्रंथ हैं जो आज भी पूरी कोशिश से अपनी नमकहलाली का परिचय दे रहे हैं । राजधर्म के पृष्ठों पर हम समय समय पर इन देशद्रोहियों के काले कारनामों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत करते रहेंगे ताकि इस राष्ट्र की युवा पीढ़ी अपने दुश्मनों को ठीक से पहचान सके और उनके दूषित षड्यन्त्रों से बचते हुए एक ऐसी सामाजिक-वैचारिक क्रान्ति की प्रचण्ड ज्वाला दहका सके जिसमें ये हमारे राष्ट्रिय कलंक के धब्बे जलकर भस्म हो जायें !

—श्यामराव

सामयिकी—

चन्दगीराम जी ! बधाई है

साधारणतया पहलवान 'भारत केसरी' या इस तरह के दंगल जीतने के बाद फिर उसी प्रतियोगिता में भाग नहीं लेते क्योंकि उन्हें डर होता है कि कहीं हार गये तो पिछला यश भी धूल में मिल जायगा पर आप जैसे शेर के हिम्मत की हम दाद देते हैं जो दहाड़ कर आप दंगल में कूद पड़े और बड़े आत्म विश्वास के साथ प्रचण्ड कुश्ती करके एक गर्वगण्ड के घमण्ड को खण्ड-खण्ड कर दिया। यह जीत केवल चन्दगीराम की मेहरदीन पर जीत नहीं पर देव की दानव पर, शाकाहार की मांसाहार पर, ब्रह्मचारी की व्यभिचारी पर, एक आर्य की अनार्य पर जबरदस्त जीत है। यही कारण है कि आज आपकी जीत पर देश का समस्त राष्ट्रवादी वर्ग बल्लियों उछल रहा है।

एक बात और है—आपने कई बार सार्वजनिक रूप से यह कहा है कि आप आर्यसमाजी हैं, आपको ब्रह्मचर्य की प्रेरणा ऋषि दयानन्द के जीवन से मिली और सत्यार्थ-प्रकाश का आप हमेशा स्वाध्याय करते हैं—इस सच्चाई के लिए हम हृदय से आपका अभिनन्दन करते हैं। आर्य-समाज और दयानन्द से प्रेरणा लेकर जीवन में बड़ी-बड़ी सफलता प्राप्त करने वाले तो बहुत हैं पर एक बार लोक-प्रिय होने के बाद उन्हें अपने आपको आर्यसमाजी और दयानन्द का शिष्य कहलाने में लज्जा अनुभव होती है और यह भय होता है कि लोग उन्हें "संकीर्णवादी" न समझ बैठे। आपका यह साहस दंगल जीतने के साहस से कम महत्वपूर्ण नहीं। इससे आपने एक ओर जहाँ आर्यों के हृदय को जीत लिया है वहाँ दूसरी ओर उन कृतघ्नों के मुँह पर चपत लगाई है जो थोड़े से लोकैषणा में आकर 'सर्वप्रिय' बनने की इच्छा से अपनी मां को मां कहने में शरमाते हैं।

भारतकुमार मुरारीलाल वर्मा की जीत भी हमारे लिए विशेष प्रसन्नतादायक है क्योंकि वे भी एक शुद्ध शाकाहारी आर्य नवयुवक हैं। आने वाले वर्षों में हमें उनसे बड़ी आशायें हैं।

विशेष :—राजधर्म शीघ्र ही इन शाकाहारी पहलवानों के अभिनन्दन में एक पहलवान विशेषांक निकालन जा रहा है जिन महानुभावों के पास इसके लिए जो भी उपयुक्त सामग्री हो—भेजने की कृपा करें।

एक आदर्श

कलकत्ते के बड़ा बाजार आर्यसमाज के उत्साही नवयुवक कार्यकर्ताओं ने एक प्रशंसनीय और अनुकरणीय कार्य किया है। इस वर्ष अपने वार्षिकोत्सव पर उन्होंने आर्य जगत के दो विशिष्ट विद्वानों का स्वागत किया, अभिनन्दन पत्र दिये और एक-एक हजार रुपये की धन राशि भेंट की। संस्कृत के उद्‌भट विद्वान् एवं पूर्वी भारत में आर्यसमाज के महान् स्तम्भ आचार्य रमाकान्तजी शास्त्री तथा अपनी तड़पती वाणी से आर्यों को झकझोर कर एक क्रान्ति का संगीत सुनाने वाले कुँवर सुखलाल आर्य मुसाफिर के इस अभिनन्दन से एक आदर्श उपस्थित हुआ है कि आर्य जगत ने एक ओर जहाँ पौराणिक पाखण्डवाद पर आधारित मुर्दों के श्राद्ध को अपने बीच से उखाड़ फेंका है वहां अब वह दूसरी ओर सच्चे वैदिक आदर्शों के अनुरूप जीवित पितरों के श्राद्ध में भी तत्पर होने लगा है। आशा है आर्यसमाज बड़ा बाजार कलकत्ता द्वारा प्रस्तुत यह उदाहरण अन्य समाजों को भी प्रेरणा देगा और इन वयोवृद्ध आर्यों के आशीर्वाद से आर्यसमाज पल्लवित और पुष्पित होता रहेगा।

ग्राहक ध्यान दें।

आपको यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता होगी आपका यह प्यारा राजधर्म अब आर्य जगत का सर्वप्रिय पत्र हो गया है। केवल छः महीनों के अन्दर इसके तीन हजार ग्राहक बन गये हैं और विशेषांक १०-१० हजार छप रहे हैं। इस सफलता का बहुत बड़ा श्रेय आप के सहयोग को है। हमारा विचार है कि इसके १० हजार ग्राहक बनते ही इसे हम 'साप्ताहिक' कर दें और सामग्री भी बढ़ा दें। काम कठिन नहीं हैं। यदि प्रत्येक ग्राहक इस सूचना को पढ़ते ही तीन दिन के अन्दर एक और ग्राहक बनाने का संकल्प कर ले तो काम सरल हो सकता है और आप तो एक ही क्यों, चाहें तो दस ग्राहक भी बना सकते हैं। एक पोस्टकार्ड पर नये ग्राहक के नाम और पते लिखकर डाल दें। हम रसीद अंक के साथ भेज देंगे। जो सज्जन १० या अधिक की एजेन्सी लेना चाहें तो हम उन्हें २५% कमीशन भी देंगे। यदि पत्रिका के समय पर न मिलने की कोई शिकायत हो तो कृपया सूचित करें और यदि गलती से एक ही पते पर दो पत्रिकायें जाती हों तो एक को उसी समय Redirect वापस कर दें।

हमें विश्वास है कि आप 'राजधर्म' को अपनी पत्रिका समझकर इसकी सफलता में हार्दिक सहयोग देते रहेंगे। समय-समय पर आपके सुझाव भी आते रहें तो हमें बड़ा बल मिलेगा।

—श्यामराव

असली जवाहरलाल नेहरू

● गुरुदत्त

सन् १९०५ में जवाहरलाल को हैरो स्कूल में स्थान मिल गया। यह स्कूल लंदन से दस मील के अन्तर पर स्थित था। इस स्कूल में धनी-मानी माता-पिताओं के लड़के ही प्रवेश पा सकते थे। उन दिनों महाराज गायकवाड़ और महाराज कपूरथला के लड़के यहां पढ़ते थे।

जवाहरलाल जी की, स्कूल के दिनों की कोई विशेष बात पता नहीं है। इन्होंने वहाँ कोई विशेषता प्राप्त नहीं की। अपने स्कूल जीवन के विषय में वे स्वयं लिखते हैं—

I was never an exact fit. Always I had a feeling that I was not one of them, and the others must have felt the same way about me. I was left a little to myself.

......"I took my full share in the games, without in any way shining at them, and it was, I believe, recognised that I was no shirker.[16]

(मैं स्कूल में कभी भी ठीक 'फिट' नहीं रहा। मेरे मन में सदा यह विचार रहा था कि मैं उन (स्कूल साथियों) में से नहीं हूँ। दूसरे भी मेरे विषय में अवश्य वैसा ही विचार करते होंगे।

मैं खेल-कूद में पूरा भाग लेता रहा था। इस पर भी किसी खेल में प्रख्यात नहीं हुआ। केवल इतना समझा जाता था कि मैं खेलों में चोर नहीं हूँ।)

स्कूल के हेड-मास्टर थे रेवरेण्ड जोसफ वुड डाक्टर आफ डिविनिटी (Rev. J. W. Divinity) स्कूल के कई घर थे। जवाहरलाल जी हैडमास्टर के घर (hostel) में रहते थे। घर का सुप्रिन्टैण्डैन्ट रेवरेण्ड एडागर स्टोडगन (Rev. Edgar Stodgan) था। ये सज्जन पीछे हैरो के धर्मोपदेशक (Vicar) नियुक्त हुए थे।

इस सब का अभिप्राय यह है कि नेहरू जी पर ईसाई धर्म की छाप लगाने का पूरा प्रबन्ध था। यह प्रभाव घर पर ही आरम्भ हुआ था और स्कूल में भी जारी रहा।

डाक्टर वुड, बहुत ही सामान्य भाव में जवाहरलाल जी के विषय में, स्कूल काल से पैंतीस वर्ष बाद लिखते हैं, 'मैं उन दिनों जब नेहरू जी 'हैरो' में थे, हाउस मास्टर था। उस हाउस में नेहरू एक अच्छा लड़का था, शान्त और सभ्य। वह शोख नहीं था। इस पर भी यह देखा जा सकता था कि उसमें चरित्र की दृढ़ता थी।'

नेहरू जी के जीवन चरित्र में फ्रैंक मोरस (Frank Moraes) नेहरू जी के अध्यापक के उक्त कथन के विषय में लिखते हैं : 'यह अनुमान स्पष्ट ही है कि इसमें कुछ छिपाकर रखा गया है। यह छिपाना इस कारण भी हो सकता है कि नेहरू जी और उनके साथियों के मानसिक विकास में अन्तर था।'

जवाहरलाल जी दो वर्ष से कुछ दिन कम स्कूल में रहे।

अक्टूबर १९०७ में आप कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में प्रवेश पा गये। तीन वर्ष तक विश्वविद्यालय में स्कूलों से अधिक स्वतन्त्रता रहती है। इसका अनुभव भी नेहरू जी को हुआ। वे लिखते हैं—'मैं बचपन की बेड़ियों से मुक्ति पा गया था और अनुभव करने लगा था अपने में स्वाभिमान को। तब मैं बड़ा हो जाने का दावा करने लगा था। मैं विश्वविद्यालय के बड़े-बड़े प्राँगणों में और कैम्ब्रिज की भारी गलियों में घूमता था और किसी परिचित से मिलकर प्रसन्नता अनुभव करता था।'

जवाहरलाल जी ने पढ़ाई में विज्ञान लिया था। विषय थे कैमिस्ट्री, जियालोजी और बोटीनी (रसायन शास्त्र, भूगर्भ शास्त्र और वनस्पति शास्त्र)। इस पर भी उनकी रुचि सामान्य साहित्य में ही थी। इनके प्रिय लेखक थे निशे (Nietzsche), बर्नार्ड शॉ, लास डिकन्ज इत्यादि।

जवाहरलाल जी का कॉलेज का जीवन अति साधारण प्रकार का था। इस जीवन में वे किसी प्रकार की ख्याति

प्राप्त नहीं कर सके। जहां तक संगत का प्रश्न है, वे स्वयं मानते हैं कि वे उन दिनों भ्रान्त मन (confused brain) थे और मिथ्या विचार ग्रस्त (सोफिस्टिकेटिड) थे।

वे यौन सम्बन्धी बातें करने में रुचि रखते थे। इस विषय पर पढ़ते भी थे। वे लिखते हैं—

'हम (मित्र मंडली) में से बहुत थे, जो प्रबल यौन आकर्षण अनुभव करते थे और मुझ को संदेह नहीं कि हममें से कोई भी इसको पाप नहीं समझता था। हम पर मजहबी प्रतिबन्ध नहीं था। हम इसको ऐमोरल (amoral), न तो नैतिक (moral) और न ही अनैतिक (immoral), मानते थे।

'जीवन के विषय में एक अस्पष्ट सिरेनैसिज्म' का सा व्यवहार था। जवानी के कारण था अथवा 'आस्कर वाइल्ड' तथा 'वाल्टर पीटर' के पढ़ने के कारण था, कहा नहीं जा सकता।'

सिरेनैसिज्म एक प्रकार की जीवन-मीमांसा है जिसमें यौन क्रियाओं को सब के सामने करने में हानि नहीं मानी जाती।

जवानी तो सब को आती है और प्रायः युवकों का मन विचलित करती रहती है, परन्तु जो कुछ श्री नेहरू जी ने अपने और अपने साथियों के विषय में लिखा है, वह तो पूर्ण मानव समाज को ही मूर्ख और मिथ्या पथगामी मानने के तुल्य है।

कम से कम यह भारतीय जीवन-मीमांसा के अनुकूल नहीं है। यह ठीक है कि भारत में छोटी आयु में विवाह होते रहते थे, परन्तु जीवन में शील का सदा मान किया जाता था। यदि यूरोपियन वैज्ञानिकों की पद्धति अर्थात् विकासवाद को भी स्वीकार कर लें तब भी मनुष्य ने उस पशुपन के व्यवहार को अस्वीकार कर दिया हुआ है, जिसको, उनके विचार के अनुसार भी, मनुष्य ने पशुओं से सीखा था। संसार भर के मानव, यहां तक कि बहुत असभ्य जातियों ने भी, सार्वजनिक यौन-क्रियाओं को त्यज्य माना है।

परन्तु श्री जवाहरलाल जी से किसी भारतीय परम्परा के अनुकरण की आशा की भी नहीं जा सकती थी। वे तो सोलह वर्ष की आयु तक पिता की कोठी में लगभग एक कैदी की भांति रखे गये थे। कोठी में भी जो कुछ उन्होंने देखा था, वह पिताजी के आचरण को पर्दे के पीछे से झांक-झांक कर देखा था।

जवाहरलाल जी कैम्ब्रिज के दिनों में राजनीति के अध्ययन में रुचि लेते रहे थे। इस विषय में भी उनके बाल्यकाल के संस्कार ही उनका पथप्रदर्शन करते रहे हैं।

बोर-युद्ध में अंग्रेजी सैनिक दुर्बलता, तत्कालीन रूस की सैनिक शक्ति का बढ़ा-चढ़ा कर वर्णन और उसका एक एशियाई देश से पराजित होना, मध्य पूर्व में ईसाइयों का हत्याकाण्ड, ये कुछ घटनाएँ थीं, जिनसे एशिया के रहने वालों के मन में उत्साह भर रहा था। जवाहरलाल जी इस उत्साह में भागीदार थे। इससे उनके मन में राजनीति का अध्ययन करने की रुचि उत्पन्न हो गई थी।

इस समय जे० एम० ट्रेवेलिन द्वारा लिखी गेरीबाल्डी की जीवनी उन्होंने पढ़ी इसको पढ़ने से उनके मन में राजनीति के लिये रुचि और भी अधिक हो गई।

इन दिनों इंग्लैंड की उदारदलीय सरकार के हिन्दुस्तान के वाइसराय, सेक्रेटरी आफ स्टेट लार्ड मिन्टो और लार्ड मारले द्वारा आयोजित राजनीतिक सुधारों ने भी इन पर प्रभाव उत्पन्न किया था।

इधर भारत में भारी हल-चल थी। बंगाल प्रान्त के विभाजन के कारण और श्री बाल गंगाधर तिलक, श्री विपिनचन्द्र पाल तथा लाला लाजपतराय के कारण हिन्दुस्तान में एक नया राजनीतिक पक्ष तैयार हो रहा था। इन में से दो नेता, श्री बाल गंगाधर तिलक और लाला लाजपतराय तो भारतीय धर्म और भारतीय संस्कृति से अति प्रभावित थे। तीसरे विपिनचन्द्र पाल बंगाल में हिन्दुओं की विक्षुब्ध अवस्था तथा बंकिम इत्यादि के लेखों के प्रभाव में थे। बंकिम चन्द्र द्वारा लिखित गीत 'वंदे मातरम्' चमत्कारक स्फूर्ति उत्पन्न करने वाला सिद्ध हुआ था।

इन नेताओं के कार्यों का एक धीमा सा भास जवाहरलाल जी को भी प्रतीत हुआ था। इस विषय में वे लिखते हैं—

News of Tilak's activities and his conviction, of Aravindo Ghose and the way the masses of Bengal were taking the swadeshi and boycott pledge stirred all of us Indians

in England. Almost without an exception we were Tilakites or Extremists as the new party was called in India. [१७] (तिलक के कार्य और कैद होने का समाचार, अरविन्द घोष और बंगाल के जन-जन के स्वदेशी तथा विदेशी माल के बहिष्कार के समाचार, इंग्लैंड में रहने वाले हिन्दुस्तानियों के मन में भारी हलचल पैदा कर रहे थे। हम सब के सब, बिना एक भी अपवाद के, तिलक के पक्ष में अर्थात् उग्रवादी थे। नया दल इसी नाम से पुकारा जाता था।)

परन्तु उस समय हिन्दुस्तान में एक और पक्ष था। यह था श्री वीर सावरकर और उनकी 'अभिनव भारत' संस्था का। इसके साथ ही बंगाल में कई अन्य क्रान्तिकारी दल थे। इनके विषय में जवाहर लाल जी के मन में उस समय भी किसी प्रकार के अच्छे विचार नहीं थे। श्री सावरकर, उन दिनों इंग्लैंड में ही थे और लंदन में अपना क्रान्ति-विषयक कार्य कर रहे थे। उस समय में अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं और सरकारी क्षेत्रों में सावरकर जी का आतंक सा छा चुका था। इस आतंक का रूप क्या था, और लोग सावरकार जी के विषय में क्या सोचते थे, यह निम्न घटना से पता चलता है।

सन् १९०९ जुलाई मास में लंदन में एक विद्यार्थी मदन लाल ढींगरा ने सर कर्जन वाइली की, गोली मार कर, हत्या कर दी थी। इस हत्या से इंग्लैंड में भारी आतंक उत्पन्न हुआ था और वहाँ के सब समाचार पत्रों में इसकी चर्चा हुई थी। हिन्दुस्तानियों की घोर निन्दा भी की गई थी।

श्री धनंजय कीर, श्री सावरकर जी की जीवनी में लिखते हैं—

India was the subject in every British Cottage, in every paper, in trains, in trams, at public squares and in markets, palaces and the British Parliament. The atmosphere became tense. [१८]

(इस हत्या की घटना से प्रत्येक अंग्रेजी घर, समाचार पत्र, रेल गाड़ियों, ट्राम गाड़ियों, सार्वजनिक स्थानों, दुकानों, महलों और ब्रिटिश पार्लियामेंट में भारत की चर्चा होने लगी थी। वायु-मंडल अत्यन्त तनाव का था।)

इस घटना के सम्बन्ध में कुछ हिन्दुस्तानी सरकार भक्तों ने ढींगरा की निन्दा करने के लिए और वाइली की स्त्री से सहानुभूति प्रकट करने के लिए एक सभा कैक्स्टन हाल में बुलाई। इसमें सर मानचरजी भवानगरी, सर आगा खां, सर सुरेन्द्र नाथ बैनर्जी, श्री विपिनचन्द्र पाल और श्री खापर्डे भी उपस्थित थे। इन सब ने ढींगरा की निन्दा में एक प्रस्ताव पास करना चाहा। सभा के प्रधान, सर आगा खां ने प्रस्ताव पढ़कर सुनाया और घोषणा की कि यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित किया जाता है। इस पर उपस्थित लोगों में से एक ने बहुत ऊँची आवाज में कहा—'No ! not unanimously ! (नहीं, सर्व सम्मति से नहीं)।'

अध्यक्ष ने क्रोध में पूछा, 'कौन है, जो 'नहीं' कहता है।' उत्तर मिला, 'मैं हूं।'

अध्यक्ष ने नाम पूछा। इस पर कुछ लोग बोल उठे, 'इसे बैठा दो। इसे बाहर निकाल दो।' मानचर जी भवानगरी मंच पर से कूद कर नीचे आ गए और उस तरफ को लपके जिधर से आवाज आई थी। इस शोर को सुन फिर आवाज आयी, "मैं बोल रहा हूं। मेरा नाम सावरकर है।"

इससे हाल में बैठे लोग कांपने लगे। लोगों के मन में विचार आया कि क्रान्तिकारी सभा में बम्ब फेंकेंगे। औरतें चीखने लगीं। कुछ लोग हाल से बाहर को भागने लगे, दूसरे मुक्का-मुक्की करने लगे। एक यूरोपियन सावरकर जी पर पिल पड़ा। इस दंगे में सावरकर जी को बहुत चोटें आईं। पीछे पुलिस आ गई और सभा बिना प्रस्ताव पारित किये विसर्जित हो गयी।

इस घटना का समाचार 'लंदन टाइम्ज' में छपा और उसी में सावरकर जी के अपने कार्य की सफाई भी छपी। सावरकर जी ने लिखा था, 'मुझे श्रीमती वाइली कर्जन से पूरी सहानुभूति है। मेरा विरोध प्रस्ताव के दूसरे अंश के साथ था। उसमें अभियुक्त के काम की निन्दा की गयी थी। मेरा विरोध इस कारण था कि ढींगरा के विरुद्ध मुकद्दमा अभी अदालत में (sub-judice) चल रहा है। इस अवस्था में अभियुक्त के विपरीत निन्दा का प्रस्ताव करना अदालत की मान हानि हो जाती।"

इस वक्तव्य पर समाचार पत्र की टिप्पणी भी थी कि 'सावरकर ठीक था।'

इन दिनों जवाहरलाल जी कैम्ब्रिज में थे और वे लिखते हैं कि इंग्लैंड में हिन्दुस्तान के समाचार कम छपते थे।

परन्तु ऐसी बात नहीं थी। ऐसा प्रतीत होता है कि नेहरू जी को ऑस्कर वाइल्ड पढ़ने से अवकाश ही नहीं था। वास्तविकता यह है कि जवाहरलाल जी की रुचि नरम दल वालों में थी और ब्रिटेन के समाचार पत्रों और वहाँ की जनता को उन नौकरी और पदवियों के भूखों में रुचि नहीं थी। न तो उनसे सहानुभूति थी और न ही उनका विरोध था। तिलक आदि की खबर, कभी-कभी छपती रहती थी। जिनके समाचारों की वहाँ धूम थी, उनके विषय में जवाहरलाल जी को रुचि ही नहीं थी।

जवाहरलाल जी को क्रांतिकारी दल का उस समय कुछ भी ज्ञान नहीं था। इनके पिता मोतीलाल जी तो तिलक आदि के भी विपरीत थे। जवाहरलाल जी ने लिखा है कि वे निस्संदेह Moderate of the moderates (नरम दल वालों में भी नरम प्रवृत्ति वाले) थे। आप आगे लिखते हैं—

The Swadeshi and boycott movements did not seem to him to carry matters far. And then the background of these movements was religious nationalism, which was alien to his nature.[१९]

(पिताजी को स्वदेशी का आन्दोलन और विदेशी का बहिष्कार कुछ अधिक प्रभावी पग दिखाई नहीं देता था। साथ ही इन आन्दोलनों की पृष्ठ-भूमि में मजहबी राष्ट्रीयता थी और यह विचार उनकी प्रकृति के विपरीत था।)

जवाहरलाल जी अपने पिता के विषय में और भी लिखते हैं—

He looked to the West and felt greatly by Western progress, and thought that this could come through an association with England.[२०]

(वे पश्चिमी देशों की उन्नति से बहुत आकर्षित हुए थे और विचार करते थे कि ऐसा ब्रिटेन की संगत में रह कर ही हो सकेगा।)

मोतीलाल जी के इस प्रकार के विचारों का ही प्रभाव जवाहरलाल जी पर जीवन भर रहा है। जवाहरलाल जी की वन्देमातरम् गीत के लिए घृणा, उनकी देश को यूरोप के पदचिह्नों पर ले जाने के लिए देश को पुनः दासता में फँसा देने का खतरा मोल ले लेना, उक्त विचारों का ही परिणाम है।

यही विचार थे, जिनके कारण सावरकर इत्यादि देशभक्तों का उनके मस्तिष्क पर कुछ भी प्रभाव नहीं हुआ। जवाहरलाल जी अपने विषय में भी लिखते हैं—

In London, we used to hear also of Shyamji Krishnavarma and his India House but I never met him or visited that house. Sometimes we saw his, 'Indian Sociologist.' Long afterwards, in 1926, I saw Shyamji in Geneva. His pockets still bulged with ancient copies of 'Indian Sociologist' and he regarded almost every Indian who came near him as a spy sent by the British Government.[२१]

(लंदन में हम श्यामजी कृष्ण वर्मा और उनके इण्डिया हाउस के विषय में सुना करते थे, परन्तु मैं उससे कभी नहीं मिला या इंडिया हाउस गया। कभी-कभी उनके 'इंडियन सोश्योलोजिस्ट' को देख लेता था। इसके बहुत पीछे सन् १९२६ में, जनेवा में श्याम जी को देखा था। तब भी उनकी जेबों में सोश्योलोजिस्ट के पुराने पर्चे भरे रहते थे और वे प्रत्येक हिन्दुस्तानी को, जो उनसे मिलने आता था, अंग्रेजी सरकार का भेजा हुआ भेदिया मानते थे।)

जवाहरलाल जी के अपने इन विचारों से पता चलता है कि वे हिन्दुस्तानी क्रान्तिकारियों के विषय में कितनी घृणा रखते थे। वे श्यामजी कृष्ण वर्मा को पागल हो गया प्रकट करने का यत्न कर रहे हैं।

कालान्तर में जवाहरलाल जी का सुभाषचन्द्र बोस से व्यवहार उनके उक्त वाक्यों को पढ़ने के उपरान्त समझ में आ जाता है।

हिन्दुस्तान में राष्ट्रीय आन्दोलन के विषय में आप लिखते हैं—

Socially speaking the revival of Indian nationalism in 1907 was definitely reactionary. Inevitably, a new nationalism in India, as elsewhere in the East, was a religious nationalism.[२२]

(सामाजिक विचार से हिन्दुस्तानी राष्ट्रवाद का पुनरुत्थान १९०७ में निश्चय ही प्रतिक्रियावादी था। स्वाभाविक रूप में हिन्दुस्तानी-राष्ट्रवाद अन्य पूर्वी देशों की भांति मजहबी राष्ट्रवाद था।)

स्वप्नदोष और उसकी चिकित्सा

● आचार्य भगवान्देव जी

स्वप्नदोष क्या है ?

अर्ध निद्रा में मनुष्य अनेक प्रकार के स्वप्न देखता है। जैसे संस्कार विचार होते हैं, वैसे ही रात्रि में स्वप्न आते हैं। हमारे माता पिता आदि पूर्वजों ने हमारे उत्पन्न करने के लिए कोई तैयारी नहीं की। लगभग सभी गृहस्थ कामवासना में अन्धे होकर व्यभिचार करते हैं। इसी पाप के फलस्वरूप हमारी उत्पत्ति होती है। यों कहिये हम विषय भोगों के कीड़े-मकोड़े अपने पूर्वजों के गंदे संस्कारों का भार सिर पर लाद कर गर्भ से बाहर आते हैं और पैदा होने के पीछे न हमें ब्रह्मचर्य की शिक्षा मिलती है और न ही हमारे पालन-पोषण में स्वास्थ्य के नियमों का ध्यान रखा जाता है। सबके पेट उष्ण, उत्तेजक व वीर्य-नाशक पदार्थों से ठूस-ठूंस कर भर दिये जाते हैं। हम चरित्र-हीन नीच साथियों के साथ खुले रूप से खेलते-कूदते हैं। हमें कोई रोकने-टोकने वाला नहीं होता।

ब्रह्मचर्य का कौन सा नियम है जिसको हमारे देश के बालक गिन-गिन कर जानबूझ कर प्रतिदिन तोड़ते न हों, इस कारण जानबूझ कर जागृत अवस्था में तथा बिना जाने स्वप्न अवस्था में वीर्य-पात (वीर्य का निकल जाना) स्वप्नदोष कहलाता है। यह भंयकर रोग है। हजारों में एकाध सौभाग्यशाली युवक व विद्यार्थी होगा जो इससे बचा हुआ हो। आज सारा संसार इससे दुःखी है। यह सब हमारे पापों का ही फल है, इसलिए बिना इच्छा के भी यह होता रहता है। कई बार तो मनुष्य इसको दूर करने के लिए घोर पुरुषार्थ और यत्न करता है और यह फिर भी हो जाता है। कितने ही ब्रह्मचर्य प्रेमी युवक और विद्यार्थी इस रोग के कारण महाःदुखी और निराश दिखाई देते हैं। कितने ही स्वप्नदोष के रोगियों के पत्र मेरे पास आते रहते हैं। एक विद्यार्थी के एक पत्र का कुछ भाग नीचे देता हूँ—

"हमारे विद्यालय में आपने ब्रह्मचर्य के बारे में व्याख्यान दिया। आपकी बातों का मेरे ऊपर काफी असर पड़ा। मैंने भी कुछ प्रतिज्ञायें की। किन्तु आज तक मैं अपनी प्रतिज्ञा में पास नहीं हुआ जिसने मुझे पास नहीं होने दिया वह चीज मेरे वीर्य का बाहर निकल जाना है। मैंने इसको रोकने के लिए हजार कोशिश की, किन्तु सब फेल हुईं। एक वैद्य ने मुझे कई प्रकार की दवाई दी किन्तु कुछ असर नहीं हुआ। बहुत दिन तक आसन और प्राणायाम किये, किन्तु अपनी प्रतिज्ञा में असफल हुआ। मैं सन्ध्या और हवन भी काफी करता हूँ और मन को भी काफी शुद्ध किया। जब मैं जागता हूँ तो मन ठीक रहता है किन्तु स्वप्न खराब हो जाता है। कई बार वीर्य निकल जाता है तो मरने को जी चाहता है। श्रीमान जी! आपका अहसान मेरे से कभी भी भूला नहीं जा सकता, यदि आप मुझको इस बीमारी से बचा दें। श्रीमान् जी की बड़ी कृपा होगी।"

इस रोग को दूर करने के उपायों पर कभी विस्तार पूर्वक लिखा जावेगा। किन्तु अब तो संक्षेप से लिखने के लिए ही विवश हूँ: जिन कारणों और भूलों से स्वप्नदोष का भयङ्कर रोग आ चिपटता है, उनको दूर कर दो यह स्वयं भाग जायगा। इसको लोग जितना भयङ्कर समझते हैं यह उतना भयानक नहीं। कुछ उपाय तथा नियम हैं। यदि इनका सावधानी से पालन किया जाए तो जीवन भर कभी भी स्वप्नदोष नहीं हो सकता। हमने इन्हें कितने ही युवकों और विद्यार्थियों पर बार-बार अनुभव किया और आजमाया है, जिसने जितनी सावधानी और तत्परता से इन नियमों का पालन किया उतनी ही सफलता मिली कई बार तो छोटी २ भूलों से ही युवकों को स्वप्नदोष होता रहता है।

इस रोग को दूर करने के उपाय और चिकित्सा

१. दुष्ट विचारों का परित्याग

मनुष्य का मन चित्र खींचने वाले कैमरे के समान है, जो भी वस्तु चित्र खींचते समय कैमरे के सामने आती है, उसी का चित्र खिंच जाता है। यही अवस्था मन की है जैसी बातें मनुष्य कानों से सुनता तथा मुख से कहता और जैसे कार्य आंख से देखता या इन्द्रियों वा शरीर से करता है, वैसा ही चित्र हमारा मन रूपी कैमरा खींचता रहता है। हमारी प्रत्येक क्रिया या विचार की छाप हमारे मन पर लगती रहती है। जैसे फोटोग्राफर अनेक प्रकार के चित्रों की प्लेट्स छापे एकत्रित (इकट्ठी) करता है उसी प्रकार मनुष्य भी जैसे-जैसे कार्य करता रहता है वैसी-वैसी प्लेट्स (चित्र) हमारा मन भी संग्रह करता रहता है और हमें पता भी नहीं चलता जब हमारा मन जागृत वा स्वप्न अवस्था में कार्य रहित (खाली) रहता है फिर उन्हीं संग्रह किए चित्रों की देख पड़ताल करता है। हम सारे दिन अश्लील (गन्दे) विचारों में डूबे रहते हैं। अतः हमें स्वप्न भी गन्दे ही आते हैं। जागते हुए मुख से कहा वा कानों से सुना हुआ एक अश्लील (गन्दा) शब्द भी अनेक अपवित्र संस्कारों की याद दिलाता है और हमारे नाश का कारण बनता है।

प्रिय पाठक! मुझे क्षमा करें। मैं पूछता हूँ कि क्या कभी आपको मूत्र (पेशाब) पीने व मल (पाखाना) खाने का स्वप्न भी आया है?, आप सबका उत्तर यही होगा कि नहीं। इनके खाने पीने का विचार हमें कभी नहीं आता। हमें इनसे अत्यन्त घृणा है। इसी प्रकार जिन विचारों वा कार्यों से हम दिन में घृणा करते हैं या मन में स्थान नहीं देते, उनके स्वप्न भी हमें रात्रि में नहीं आते। हम तो दिन में उपन्यास, नाविल आदि गन्दी-पुस्तकें पढ़ते हैं। (नीचे गिरे हुए) साथियों के साथ मिलते जुलते, खेलते-कूदते तथा खाली पड़े रहते हैं। इस प्रकार दिन में पर्याप्त गन्दी सामग्री हमारे मन को स्वप्न अवस्था के लिए मिल जाती है। जो गन्दे स्वप्नों वा स्वप्नदोषों से बचना चाहता है उसे चाहिये कि दिन में सावधान रहे। बुरे विचारों को मन में न आने दे तो रात को स्वयं बचा रहेगा। जो दिन में गन्दे विचारों का स्वागत करते हैं। सोते समय भी वे विचार उनके मन को घेर लेते हैं। जैसे आपके घर पर यदि कोई अतिथि (बटेऊ) आया है तो आप उसका यथायोग्य भोजन आदि से आदर सत्कार करते हैं तो उसकी आपके यहाँ आने की फिर इच्छा होती है। यदि आप उसका तिरस्कार निरादर कर दें, या उसके लिए अपना द्वार बन्द कर दें तो वह कभी भी न आयेगा। इसी प्रकार जिन विचारों का हम स्वागत या आदर करते हैं, वे बार-बार हमारे मन में आते हैं, यदि हम गन्दे विचारों का तिरस्कार तथा इनसे घृणा करें तो ये हमारे पास आना छोड़ देंगे। यदि कोई गन्दा विचार आये, उसे धिक्कार दो। उत्साह पूर्वक कहो ओ गन्दे विचार? दूर भाग। हमारा द्वार तेरे लिये बन्द है। इस प्रकार अभ्यास करने से हमारा मन जागते समय गड्ढों में नहीं गिरने पायेगा। इससे हम स्वप्नावस्था में भी बचे रहेंगे। दुष्ट विचार हमारे सबसे बड़े और भयंकर शत्रु हैं।

यदि हमारे शरीर पर कोई शत्रु कुल्हाड़ी, तलवार आदि किसी शस्त्र का प्रहार वा वार करे तो क्या निकलेगा, रक्त (खून)। किन्तु एक युवक जो आज अखंड ब्रह्मचारी है, वह कुछ दिन वा एक-आध मास कुसंग में रह जाये, गन्दी बातें कहे सुने वा देखे, तो उसका मन गन्दे विचारों का स्थान बन जायेगा। मन व शरीर में उष्णता, गर्मी और उत्तेजना पैदा होगी, दुष्ट विचार उसके सारे शरीर को मथ वा बिलो डालेंगे। जो वीर्य सारे शरीर में रमा हुआ था, जिसका शरीर से बाहर निकलना एक मास पूर्व असम्भव था, आज वह गन्दे विचारों की उष्णता से अनायास ही शरीर से बाहर निकलने लगता है। वीर्य की अधोगति हो जाती है। वीर्य पतला पड़ जाता है और नीचे को बहने लगता है। जैसे दूध के बिलोने से घी बाहर ऊपर आ जाता है उसी प्रकार दुष्ट विचारों का प्रहार चोट तलवार आदि शस्त्रों से भी अधिक घातक तथा भयंकर है जो एक सदाचारी युवक के ब्रह्मचर्य को भी नष्ट कर डालता है। वीर्य के लिए शुद्ध और पवित्र विचारों से बढ़कर कोई सहायक नहीं। जागृत अवस्था में जिन्हें विचार कहते हैं, वे ही सोते हुए स्वप्न का रूप धारण करते हैं। दिन में गन्दे विचारों से का[illegible]

अग्नि भड़क उठती है। उसके फलस्वरूप रात को स्वप्न-दोष होकर ही रहता है।

इसलिए दिन में कोई भी कार्य ऐसा न करो जिससे आपके मन में कोई गन्दा विचार उत्पन्न हो वा कामुकता के विचार आयें। भय, चिन्ता, क्रोध और शोक आदि के विचार भी स्वप्नदोष के कारण हैं। अपने विचारों को सदा दृढ़ रखो, मन में भी निर्बलता न आने दो, काम, क्रोध आदि के विचार मनुष्य के शरीर में उत्तेजना और उष्णता उत्पन्न करते हैं और इसका परिणाम वीर्यनाश है। जब उत्तेजना होती है, तो सब स्नायुतन्तुओं में तनाव उत्पन्न होता है, काम-तन्तु उत्तेजित हो जाते हैं। मूत्रेन्द्रिय में रक्त (खून) उतर आता है और इसका आकार लम्बाई-मोटाई बढ़ जाती है। इस प्रकार की उत्तेजना काम, क्रोध तथा चिन्ता आदि के विचारों और स्वप्नों से उत्पन्न होती है। यह उत्तेजना चाहे जागृतावस्था में हो वा स्वप्नावस्था में, वीर्यनाश तथा स्वप्नदोष का कारण ही बनती है। उत्तेजना होने से पीछे ही स्वप्न आता है, वा स्वप्न के पीछे उत्तेजना होती हैं। निष्कर्ष यह है—चाहे स्वप्न पहले हो वा उत्तेजना पहले हो, बिना उत्तेजना के स्वप्न-दोष वा वीर्यनाश नहीं होता। काम, क्रोध, भय और चिन्ता आदि के विचार उत्तेजना के (जनक) कारण हैं। ऐसे विचार को उत्पन्न न होने देना ही स्वप्नदोष की सब से भारी औषधि है। भय, शोक तथा चिन्ता आदि को अपने पास न फटकने दो। सदैव प्रसन्न (खुश) रहो। मन में निर्बलता न आने दो।

स्वप्नदोष हानिकारक तथा बुरा है। किन्तु स्वप्न-दोषों को देखकर चिन्ता करना व घबराना इससे भी बुरा है। चिन्ता से इनकी संख्या घटती नहीं, बढ़ जाती है। इसलिये युवको! घबराओ नहीं। स्वप्नदोष की चिन्ता करना इसे पुनः बुलाना है। यदि एक खिलाड़ी किसी सम्मुख मैच में दौड़ लगाता हुआ गिर जाता है तो क्या उसे वहाँ पड़े रहकर रोने लग जाना चाहिए? नहीं, वहाँ बैठकर रोना अपना समय खोना है। जो उसी समय उठ कर भागने लगता है मानो वह गिरा ही नहीं। प्रिय युवक! तू बार-बार क्या यदि हजार बार गिर चुका है तो भी घबरा नहीं। यह मत समझ कि सदा गिरा ही रहेगा। चिन्ता छोड़। घबराना कायर और हीजड़े का काम है। तू ब्रह्मचारी है। ईश्वर पर विश्वास कर, वह हमारे सत्कर्मों में सहायक है। "अजैष्माद्य" मैं आज ही जीतूँगा—इस भावना को दृढ़ कर। रोने-धोने से कुछ नहीं बनता। तू प्रभु का अमृत पुत्र है। उसने यह वीर्य जो तेरे शरीर का सार व अमूल्य रत्न है, मल-मूत्र के समान बाहर निकालने के लिए नहीं बनाया। यह संजीवनी तेरे शरीर का अङ्ग है। यदि तू भूल न करे तो यह कभी बाहर नहीं निकल सकता।

वह परमेश्वर निराशों की आशा है। उसे किसी अवस्था में मत भूल। जिस प्रकार प्रातःकाल का किया हुआ भोजन हमें सायंकाल तक कार्य करने की शक्ति देता है और सायंकाल का भोजन रात भर के लिए शक्ति प्रदान करता है, उसी प्रकार प्रातःकाल का किया हुआ हुआ सन्ध्या-भजन व ईश्वर चिन्तन सायंकाल तक बुरे विचारों तथा पापों से बचाता है और सायंकाल की हुई ईश्वर-उपासना रात्रि भर पापों और गन्दे विचारों तथा स्वप्नों से बचाती है। जिस प्रकार हम अपने माता-पिता के सम्मुख चोरी, व्यभिचार आदि पाप कर्म नहीं करते। उसी प्रकार पिताओं के पिता और माताओं के माता ओ३म् है, जो सब कुछ देखता है और हमारे कर्मों का का फल सुख-दुःख के रूप में देता है। उससे छुपकर हम कुछ भी नहीं कर सकते। चाहे हम उसे न देख सकें। किन्तु वह बार-बार हमें सचेत करता है। जब हमारे मन में पाप की भावना आती है, वह हमें अन्दर से बार-बार टोकता है। हम यह अनुभव भी करते हैं। किन्तु प्रभु की चेतावनी को अनसुनी कर देते हैं। जब हम अपने सच्चे रक्षक की भी नहीं सुनते तो वह भी हमें भूल जाता है। वह किसी कुकर्मी का साथी नहीं। इसलिए उस अदृश्य शक्ति को कभी मत भूलो। सोते समय भी उस परम रक्षक ओ३म् का (शिव संकल्प के छः वेद मन्त्रों द्वारा) स्मरण करते-करते सो जाओ। वह स्वप्न में भी तुम्हारी रक्षा करेगा। यह स्वप्नदोष की एक अचूक औषधि है। यदि मन में उस परमपिता की आज्ञा का कि 'पापी नृष-द्रो जनपो' आलसी मनुष्य पापी होता है। ध्यान रखो और मन व शरीर से सारे दिन इतना कार्य लो कि वह पूर्णतया थक जाये, जिससे रात्रि में इतनी गाढ़ निद्रा आये कि मन को स्वप्न देखने का अवसर ही न मिले, तो सर्वथा

स्वप्नदोष से बच जाओगे। यथार्थ स्वप्नरहित निद्रा ही तो निद्रा है। यदि हमारी नींद बीच में टूट जाती है और हमें स्वप्न आते हैं तो यह दशा हमारे आलस्य और प्रमाद को प्रकट करती है। ब्रह्मचारी को स्वप्नरहित एक अटूट निद्रा चाहिये।

ध्यान दें

निद्रा आदि (शयन) के विषय में मेरी 'जीवन संदेश' अथवा 'ब्रह्मचर्यामृत' नाम की पुस्तिका को ध्यान पूर्वक पढ़ो। जो इससे पूर्व पृथक् प्रकाशित हो चुकी है। इसी प्रकार शौच, स्नान, व्यायाम, भोजन आदि ब्रह्मचर्य के नियमों पर पर्याप्त प्रकाश उसी पुस्तिका में डाला है। उन्हें पुनः लिखना व्यर्थ है। वही बार-बार पढ़ो और उनका आचरण करो। ब्रह्मचर्य के सभी नियमों का पालन किये बिना स्वप्नदोषादि रोगों से छुटकारा मिलना असम्भव है।

कुछ भयंकर भ्रम और उनका निवारण

जिन युवकों को मास में अनेक बार स्वप्नदोष हो जाता है, वे इसे दूर करने का यत्न भी करते हैं किन्तु वे वीर्य रक्षा में सफल नहीं होते तो यह विचार उन्हें बार-बार तंग करता है कि वीर्य तो शरीर में रहना नहीं। इसे तो नष्ट होना ही है, फिर क्यों न इससे विषयभोग, मैथुन, व्यभिचार का आनन्द ले लिया जाये। यह बड़ा भयंकर तथा विनाशकारी भ्रम है। स्वप्न-विज्ञान के वेत्ता लिखते हैं कि बड़े से बड़ा स्वप्न ५ सैकिन्ड में समाप्त हो जाता है, स्वप्नदोष होते समय अधिक से अधिक पांच सैकिन्ड लगते हैं, किन्तु सब प्रकार के अन्य प्राकृतिक मैथुनों वा व्यभिचार में पर्याप्त समय लगता है, यही अनुभवी लेखक लिखते हैं। निष्कर्ष यह है, कि स्वप्नदोष में तो वह वीर्य जो हजम होने, पचने से बच जाता है अर्थात् शरीर का अंग नहीं बनता, नष्ट होता या बाहर निकलता है किन्तु विषयभोग व मैथुन से एक धक्का सारे शरीर पर लगता है। जो वीर्य शरीर का अंग बन चुका होता है वह पिघल-पिघल कर पतला होकर निकलता है और स्वप्नदोष की अपेक्षा अधिक मात्रा में निकलता है। मैथुन से तो स्वप्न-दोष की संख्या और बढ़ जाती है, और प्रमेह आदि भयंकर रोग उत्पन्न हो जाते हैं जो मृत्यु का कारण बन जाते हैं। अतः इस भयानक भ्रम में फँस विनाश के गढ़े में पड़ कर मृत्यु को न बुलाओ और मैथुनों से सर्वदा दूर रहो।

कई मूर्ख डाक्टर यह कहते हैं कि स्वप्नदोषादि के द्वारा वीर्य का निकल जाना स्वाभाविक है। और इससे कोई हानि नहीं होती यह अत्यन्त मिथ्या कल्पना है वीर्य की दो गति हैं—(१) अधोगति (नीचे को जाना) (२) ऊर्ध्वगति (ऊपर को जाना) जिस प्रकार शरीर, रस, रक्त आदि अन्य छः धातुयें धारण करता है और शरीर का अंग बन जाती हैं, कभी बिना निकाले बाहर नहीं निकलतीं। इसी प्रकार वीर्य जैसा अमूल्य तत्त्व जो सब धातुओं का सार है जिसमें आश्चर्यजनक शक्ति है; वह मनुष्य की इच्छा और भूल किये बिना बाहर नहीं निकल सकता। वीर्य का स्वयं शरीर से बाहर निकलना तो दूर की बात है। (किन्तु रोग के अतिरिक्त) मल-मूत्र भी तो बिना इच्छा के बाहर नहीं निकलता। अतः स्वप्नदोष जिसमें अनजाने वीर्य निकलता है सर्वथा अस्वाभाविक रुग्णावस्था है। पूर्ण युवावस्था में शरीर में वीर्य की उत्पत्ति पर्याप्त मात्रा में होती है। जब आरम्भ में कभी स्वप्नदोष द्वारा शरीर से वीर्य निकलता हैं तो उससे हानि व बुरा प्रभाव दिखाई नहीं देता। नया उत्पन्न होने वाला वीर्य इस थोड़ी सी हानि की पूर्ति कर देता है। मूर्ख मनुष्य यह समझने लगता है—मुझे कोई हानि नहीं हुई वीर्य के एक बिन्दु का नाश भी हानिकारक है और मृत्यु की ओर ले जाने वाला है। जो बालक धार्मिक माता पिता की संतान हैं। आरम्भ से जिसे सदाचार की शिक्षा दी जाती है, वह सदा सत्संग या अच्छे साथियों के साथ रहता है, शुद्ध और सात्विक भोजन करता है, व्यायाम प्राणायामादि ब्रह्मचर्य के सभी नियमों का पालन करता है, वह सौ वर्ष या इससे भी अधिक जब तक वह जीवित रहता है उसे कभी भी स्वप्नदोष नहीं होगा। उसका वीर्य शरीर के अन्दर खप जाता है। अर्थात् शारीरिक बल व शक्ति का रूप धारण करता है। उसके वीर्य की सदा ऊर्ध्वगति रहती है। जिस प्रकार जलते हुए दीपक का तेल वर्त्तिका (बत्ती) के सहारे ऊपर चढ़ कर प्रकाश के रूप में बदल जाता है; उसी प्रकार शुद्ध आहार व्यवहार, व्यायाम और प्राणायाम द्वारा यह शरीर का अंग बनकर बल व शक्ति का रूप धारण करता है अथवा विचाराग्नि में जलकर मस्तिष्क व बुद्धि का

धारण करता और विद्या के भंडार को भर देता है। निष्कर्ष यह है कि वीर्य शरीर में शक्ति के रूप में रहता है वीर्य के रूप में नहीं। इसलिए प्राचीन काल में विद्यार्थी वीर्य की रक्षा करके शारीरिक और मानसिक उन्नति करते थे। अनेक ऋषि महर्षि लोग तो ऊर्ध्वरेता होते थे अर्थात् सारी आयु भर अखंड ब्रह्मचर्य का पालन करते थे।

ऊर्ध्वरेता होने की प्राचीन विद्या

ऊर्ध्वरेता होने की एक विशेष विद्या थी। जिससे वीर्य की गति सदा के लिए ऊर्ध्व हो जाती है। उसी विद्या की कुछ झलक व रूप-रेखा आदर्श ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द के ग्रंथों में मिलती है। अनेक वर्ष इसकी खोज तथा अनुभव मैं भी करता रहा हूँ। इसका अनुभव मेरे अनेक ब्रह्मचर्य प्रेमी साथियों ने किया व कराया है। जिसने इसका अनुभव किया उसने ही मुक्त कंठ से प्रशंसा की। जो इसका दीर्घ काल तक श्रद्धा पूर्वक और निरन्तर सेवन करेगा वह निश्चय पूर्वक ऊर्ध्वरेता हो जायेगा। उसकी इच्छा के बिना वीर्य का एक बिन्दु भी उसके शरीर से बाहर नहीं निकल सकता। उस विधि का कुछ भाग ब्रह्मचर्य प्रेमियों के लाभार्थ नीचे देता हूं।

यह एक प्राणायाम की विधि है। इसके केवल पढ़ने मात्र से कार्य नहीं चलेगा। ब्रह्मचर्य के अन्य नियमों का पालन करते हुए प्राणायाम का प्रतिदिन अभ्यास करना है। आजकल कुसंग तथा कुसंस्कारों के कारण बालक हस्त-मैथुन गुदा-मैथुन, पशु-मैथुन आदि कुटेवों (बुरी आदतों) और पापों में फंसकर बार-बार वीर्य का नाश करते हैं। इस से वीर्य की अधोगति होती है और वह बिना इच्छा के भी स्वप्नदोष आदि द्वारा बाहर निकलता रहता है। ऐसे बालक सत्संग व स्वाध्याय से हस्तमैथुन आदि कुटेवों को छोड़ देते हैं और वीर्य-रक्षा के यत्न करते हैं। किन्तु उसकी इच्छा के विरुद्ध स्वप्नदोष आदि के द्वारा वीर्य निकलता रहता है तो बड़े दुःखी रहते हैं। ऐसे ही गृहस्थ के नाम पर घरेलू व्यभिचार करने वाले नामधारी गृहस्थियों की दुर्दशा होती है। यहां तक कि कितने ही युवक तो हस्तमैथुनादि अप्राकृतिक मैथुन और स्वप्नदोष आदि रोगों से नपुंसक बन जाते हैं। जब एक बालक या युवक बार-बार कुचेष्टाओं या व्यभिचार से वीर्य नष्ट करता है तो उस के शरीर में कई बार उत्तेजना होने से एक भयानक धक्का शरीर को लगता है। कामाग्नि से सारा शरीर जलने लगता है। शरीर के अन्दर जमा हुआ वीर्य पिघलने लगता है। जैसे शीत में जमा हुआ घृत अग्नि पर रखने से पिघल कर पतला हो जाता है, इसी और पात्र (बर्तन) में छेद होने से बाहर निकल जाता है, इसी प्रकार छोटे-छोटे बालकों में भी छोटी आयु में कामाग्नि जल उठती है और उनका वीर्य पतला होकर बहने लगता है और नाभि के नीचे मलाशय मूत्राशय के समीप जो वीर्य का कोष (खजाना) है उसमें ठहरने लगता हैं। और वीर्य से वीर्य कोष भर जाता है। यह वीर्य लौट कर शरीर में ऊपर नहीं जाता और स्वप्नदोषादि के द्वारा बाहर निकल जाता है। इसी प्रकार वीर्य का कोष बार-बार भरता और खाली होता रहता है। वह वीर्य जो शरीर का राजा है जिसे शरीर का अंग बनाना था जो २५ वर्ष की आयु से पहले कभी भी वा आयु भर शरीर से बाहर नहीं निकल सकता था तथा जो ऊर्ध्वगति होकर शरीर और मस्तिष्क की शक्ति का रूप धारण करता। आज इच्छा के विरुद्ध और शरीर का सार अमृत रूपी वीर्य मूत्र के समान बुरी तरह टपक-टपक कर निकल रहा हैं, ऐसी अवस्था में बालक और युवक धाड़ मारकर रोते और चिल्लाते हैं।

उनके आंसू पूंछने के लिए यह ऊर्ध्वरेता होने का गुप्त रहस्य कर्त्तव्य भावना से लिख रहा हूँ। इस से शुक्राशय (वीर्य के खजाने) में पड़ा हुआ वीर्य फिर ऊपर को जाने लगेगा। जैसे दीपक का तेल जाता है। यह ऋषियों की गुप्त विद्या है जो आज लाखों रुपये खर्च करने पर नहीं मिलती। कितने ब्रह्मचर्य के दीवाने इसकी रक्षा करने में रात-दिन एक कर देते है, भयंकर से भयंकर पर्वतों की गुफाओं और कन्दराओं को छान मारते हैं तब जाकर इसका भेद मिलता है। इसलिए इसको पढ़कर व्यर्थ न समझ लेना, इसका श्रद्धा पूर्वक अभ्यास करो। इससे स्वप्नदोषादि रोगों से अवश्य ही पिंड छूट जायेगा और वीर्य की रक्षा में सफल हो जावोगे।

२. प्राणायाम-विधि

पहले सिद्ध आसन पर बैठ जाओ। उसकी विधि इस प्रकार है। बांये पैर को एड़ी अण्डकोष और गुदा इन्द्रिय

के बीच में जो स्थान है उस पर लगाओ। यह वह स्थान है जहां से वीर्य वाहक नाड़ियां जाती हैं। इन ही में से वीर्य बाहर निकल जाता है। इसलिए पैर की एड़ी को इन नाड़ियों पर दबा कर लगाना चाहिए। दायें पैर की एड़ी मूत्र इन्द्रिय के ऊपर जहां बाल उगते हैं, लगाओ। दोनों पैरों के गट्टे मिले हुए हों। दोनों पैरों के घुटने भूमि पर लगे हुए हों। सिर, ग्रीवा (गर्दन) मेरुदण्ड (रीढ़ की हड्डी) सब सम रेखा में (सीधी) रहने चाहिए। एक कपड़े की छोटी गद्दी बनाकर गुदा के नीचे रख लो। जिससे वीर्य वाहक नाड़ियों पर अधिक बल पड़े। दोनों हाथों को तान-कर दोनों घुटनों पर रखो। शरीर सारा खिचा हुआ होना चाहिए। छाती तनी हुई तथा आगे को उभरी हुई हो। ठोड़ी का झुकाव थोड़ा सा छाती की ओर हो। केवल लंगोट लगाकर आसन में बैठो तो अच्छा होगा। यदि केवल मात्र इस सिद्धासन का ही अभ्यास किया जाये तो यह भी वीर्य रक्षार्थ तथा स्वप्नदोष को दूर करने में अत्यन्त हितकर है।

प्राणायाम करने से पूर्व यदि बायाँ स्वर चलता हो तो अच्छा है। जिधर से वायु आती हो उधर मुख रखो। जैसे अत्यन्त वेग से वमन (कै) होता है और अन्न-जल बाहर निकल जाता है, वैसे ही प्राण (श्वास) को बल से बाहर फेंक दो। एक ही बार निरन्तर एक श्वास में सारी वायु निकल जाय। झटके दे-दे कर नहीं। श्वास निकलने से पूर्व नाभि के नीचे से मूत्र-इन्द्रिय का ऊपर संकोच करो (खींचो)। पहिले हृदय की वायु बल से बाहर निकालो, फिर ऊपर के फेफड़े का श्वास निकाल कर खाली करना चाहिए, फिर उदर (पेट) को खाली करना। * किन्तु ध्यान रखो—सारा प्राण एक श्वास में ही बाहर निकल जाये। श्वास तोड़-फोड़ कर कभी न निकलो। श्वास को लम्बा करके तथा निरन्तर गति देते हुए ही बार निकाल दो। जब श्वास सारा हृदय, फेफड़ों और उदरादि का बाहर निकल जावे तो उदर को अन्दर की ओर खींचे रहो। श्वास को यथा शक्ति बाहर ही रोको। जब घबराहट हो तब धीरे-धीरे वायु को ले लो, किन्तु अन्दर नहीं रोको। यह एक प्राणायाम हुआ।

फिर उसी प्रकार दूसरा प्राणायाम, फिर बाहर निकाल कर बाहर ही रोक कर करो। इसी प्रकार तीन प्राणायाम करो। अन्दर नहीं रोको। पहिले बाह्य कुम्भक (बाहर रोकने) का ही अभ्यास करो। बाह्य विषय वा बाह्य कुम्भ का अभ्यास कम से कम एक वर्ष तक यह सिद्ध न हो जाय तब तक दुहरा प्राणायाम जो अन्दर रोकने का है (इसे आभ्यान्तर कुम्भक कहते हैं) नहीं करना चाहिए। लोग अन्दर और बाहर रोकना दोनों एक साथ आरम्भ कर देते है। इसलिए लाभ तथा उन्नति नहीं होती। जब पहिले प्राणायाम में सफलता मिल जाये तब दूसरे का अभ्यास करना चहिए। एक मास तक तीन प्राणायाम सायंकाल करो। फिर शनैः शनैः प्रतिमास संख्या बढ़ाते जाओ। यदि गो-दुग्ध, घृत वा अन्य पौष्टिक भोजन पर्याप्त खाने को मिलें तो दोनों समय अभ्यास करना चाहिए और संख्या बढ़ाते-बढ़ाते इक्कीस[२१] प्राणायाम तक कर सकते हैं। पौष्टिक भोजन का अभाव न करो, न ही नाक पकड़कर अधिक देर बलात् (जबरदस्ती) वायु रोकने का यत्न करो। इस प्राणायाम में आरम्भ से लेकर अन्त तक एक विशेष क्रिया का ध्यान रखना तथा अभ्यास करना है। श्वास निकलने से पूर्व जो नाभि के नीचे मूलाधार को खींचा था उसे खींचे ही रखना है ढीला नहीं छोड़ना और इसे खींचे रखने का तो अभ्यास करना है। जितनी देर वा जितने प्राणायाम करो मूलाधार को खींचे ही रखो। पहिले-पहल कुछ कठिनाई वा कष्ट प्रतीत होगा, किन्तु कुछ दिन अभ्यास से ठीक हो जायगा। फिर मूलाधार को खींचने से मूत्रेन्द्रिय तथा गुदा खिची रहेगी और वीर्य-कोष जहां वीर्य ठहरता है वह भी ऊपर को खिचा रहेगा। मूलाधार खीचते समय मन से नाभि के ध्यान नीचे करें कि हम अपने वीर्य को ऊपर खींच रहे हैं। सारे प्राणायाम में यह ध्यान करते रहो।

कुछ समय के अभ्यास से वीर्य ऊपर को यथार्थ खिचने तथा जाने लगेगा और जब आप निरन्तर अभ्यास करते-करते इक्कीस (२१) तक पहुंच जायेंगे तो वीर्य की पूर्ण तथा ऊर्ध्व हो जायेगी। वीर्य ऊपर को मस्तिष्क की ओर बहने लगेगा। आप ऊर्ध्वरेता हो जायेंगे। आपका वीर्यकोष खाली हो जायेगा और इसमें वीर्य आना ही बन्द हो जायेगा। फिर स्वप्नदोष कैसे होगा। आपकी

*श्वास शनैः शनैः विधिपूर्वक निकलने में स्वयं हृदय, फुफ्फुस और पेट की वायु कमशः एक बार में ही निकल जाती

के बिना वीर्य का एक बिन्दु भी शरीर से बाहर नहीं निकल सकता। फिर कैसा स्वप्नदोष और प्रमेह होगा? किन्तु यह निरन्तर दीर्घ काल तक श्रद्धापूर्वक अभ्यास करने से होगा। मैं यह कई बार लिख चुका हूँ।

आप इसे दूसरी प्रकार से भली भांति समझ जावेंगे। जब आप लघु शंका (पेशाब) करने जाओ और मूत्र-त्याग (पेशाब) करते समय बीच में ही नाभि के नीचे के भाग मूत्रेन्द्रिय को खींचो तो गुदाइन्द्रिय और मूत्रेन्द्रिय भी एक साथ खिंचेगी और इससे मूत्र निकलना एकदम बन्द जायेगा और जब तक आप इसे ढ़ीला न छोड़ेंगे एक बूंद भी मूत्र बाहर नहीं निकल सकता। यह अनुभव आप करके देख लें या जब कुछ मास तक आप प्राणायाम का अभ्यास कर लेंगे और आपको मूलाधार खींचे रहने का अभ्यास पक्का हो जायेगा तब आप देखेंगे कि स्वप्नों और स्वप्नदोषों की संख्या घटती चली जायेगी। रात्रि को ऐसी अवस्था भी आयेगी कि कभी आपको स्नप्नदोष होने का अवसर आयेगा तो अर्धनिद्रा में आप मूलाधार को खींच लोगे और आपकी आंखें खुल जायेंगी, आप स्वप्नदोष से बच जाओगे। आपकी विजय होगी। यदि सोने से पूर्व खाली पेट ही यह प्राणायाम किया जाय तो शीघ्र लाभ रहेगा। आपकी विजय और हार आपके अभ्यास पर है। कम से कम एक वर्ष तक आप अभ्यास कर लें तो आगे का प्राणायाम मुझ से पत्र द्वारा वा मिलकर पूछ लें। इस प्राणायाम की जितनी प्रशंसा करें थोड़ी है, सब ऋषियों और विशेषतया पूज्यपाद महर्षि दयानन्द की कृपा है जो ऐसी विद्या इस गिरे हुए संसार को मिली है। इस प्राणायाम के अभ्यास से जहाँ स्वप्नदोषादि रोग दूर होंगे वहाँ शरीर में वीर्य वृद्धि को प्राप्त होकर स्थिर बल, पराक्रम और जितेन्द्रियता की प्राप्ति होगी। सब शास्त्र और विद्याओं को थोड़े ही काल में समझकर विद्यार्थी उपस्थित कर लेगा। इसका अभ्यास सब युवकों, विद्यार्थियों तथा ब्रह्मचर्य-प्रेमियों, स्त्री तथा पुरुषों को करना चाहिए। इससे मन और इन्द्रियों के सब दोष क्षीण और दूर हो जाते हैं और मनुष्य इनको अपने वश में कर लेता है। यह वीर्यरक्षा का सर्वोत्तम साधन और परम औषध है।

३—यन्त्र चिकित्सा

स्वप्नदोष क्षीण और दूर करने के लिये एक यन्त्र भी तैयार किया जाया है। एक लोहे वा पीतल का स्प्रिंग वाला छल्ला बनता है जिसके अन्दर स्प्रिंग लगा होता है। इसके कुछ ऊपर बाहर की ओर चारों ओर छल्ले में ही कांटे लगे रहते हैं। स्प्रिंग वाला छल्ला छोटा बड़ा हो सकता है। स्वप्नदोष का रोगी इस से मूत्रेन्द्रिय पर पहन कर सो जाता है। जब स्वप्नदोष से पूर्व उत्तेजना होती है, तो कांटे मूत्रेन्द्रिय में चुभने से आंखें खुल जाती हैं और स्वप्नदोष से बच जाता है। किन्तु इससे पूर्ण सफलता नहीं मिलती। कुछ लाभ हो जाता है। यह किसी मिस्त्री से तैयार कराया जा सकता है।

४—जल चिकित्सा

स्वप्नदोष से बचने के लिए प्रतिदिन दोनों समय शीतल जल से स्नान करो। प्रतिदिन सोते समय भी स्नान से बड़ा लाभ होता है।

स्नान के समय नाभि के नीचे शीतल जल की खूब देर तक धार डालो। साथ ही प्रतिदिन जब शौच या लघुशंका करने जावो तो शीतल जल का एक बड़ा पात्र साथ ले जाओ और मूत्रेन्द्रिय के अगले भाग पर छिद्र के ऊपर बारीक धार पाँच मिनट तक डालो। यह मूत्रेन्द्रिय स्नान सोने से पूर्व भी करो। अण्डकोष और मूत्रेन्द्रिय के पास के भागों को धो डालो। इससे मसाने में ठण्डक रहेगी। सोने से पूर्व हाथ, पैर सिर, ग्रीवा (गर्दन) धो डालो। इन सब क्रियाओं के करने से ५० प्रतिशत स्वप्नदोष की संख्या घट जाती है। बहुतों का स्वप्नदोष तो सर्वथा इससे दूर होता जाता है।

५—मलाशय और मूत्राशय की चिकित्सा

सोने से पूर्व अधिक खाने-पीने से मलाशय तथा मूत्राशय भर जाते हैं और मल-मूत्र का दबाव वीर्यकोष पर पड़ता है जिससे स्वप्नदोष हो जाता है। 'एकभुक्त, रोगमुक्त' होता है। अतः स्वप्नदोष के रोगी को एक समय भोजन करना चाहिए वा सोने से तीन या चार घण्टे पूर्व थोड़ी सी मात्रा में गोदुग्ध ले ले वा हल्का सा भोजन करे। सोते समय खाली पेट हो। कई युवकों वा बालकों को सोते समय दूध वा जल पीने से ही स्वप्नदोष होने लगता है। अतः सोने से तीन चार घण्टे पूर्व खाना-पीना बन्द कर देना चाहिए। बहुत बार तो स्वप्नदोष पेट के भारी होने से तथा खाने-पीने की छोटी-छोटी भूलों से ही

होता है। अजीर्ण (कब्ज) कभी न होने दो। अजीर्ण दूर करने के लिए आसन-व्यायाम प्रतिदिन करो। मलमूत्र के वेग को कभी न रोको। रात्रि में आंख खुलने पर लघुशंका अवश्य कर लो। आलस्य न करो। प्रातःकाल ३ वा ४ बजे के बीच में उठ कर मल-मूत्र का त्याग करो। उस समय सोते रहने से मल-मूत्र से मलाशय और मूत्राशय भरे हुए रहते हैं। उनका वीर्यकोष पर दबाव पड़ने से वीर्यनाश हो जाता है मल-त्याग करने (शौच) का स्वभाव दोनों समय का बनाओ। पेट में मल भरे रहने से भी स्वप्नदोष हो जाता है।

६—औषध-चिकित्सा

जिसको अजीर्ण रहता है वे चार-छः छटांक त्रिफला को कपड़े में छानकर १ छटांक गोघृत वा बादाम रोगन में भिगो और चार छटांक खांड में मिला कर रख लें। रात को यह १ तोला औषध थोड़े से (नाम मात्र) गरम दूध वा ताजे जल के साथ सेवन करें। इससे अजीर्ण तथा प्रमेह भी दूर हो जाता है। कफ प्रकृति वालों के लिए रामबाण है।

(२) सितावर १ छटांक, सुगन्ध नागोरी १ छटांक, विधारा के बीज १ छटांक, (लकड़ी नहीं केवल बीज ही लेने हैं) इन सब को बारीक पीस कर कपड़छान कर लो। इसमें ३ छटांक खांड वा मिसरी मिला लो। यह सबके लिए अत्यन्त आवश्यक है। स्वप्नदोष को यह औषध अवश्यमेव दूर करती है। कितने ही अच्छे-अच्छे वैद्यों ने इसे हजारों बार अनुभव किया है। यह औषध ऐसे युवकों के लिये जो स्कूल वा कालिज आदि में पढ़ते हों, अविवाहित हों, बहुत ही लाभदायक सिद्ध होता है। किन्तु इतना ध्यान रखना चाहिये यदि स्वप्नदोष का रोगी शरीर से बलवान् है और साथ ही ब्रह्मचारी है जिसके शरीर में वीर्य पर्याप्त मात्रा में है, ऐसे युवक वा विद्यार्थी को स्वप्नदोष वीर्य की अधिकता के कारण हो, तो उसे ताजे जल के साथ ही २ वा ३ माशे से अधिक न दें। आरम्भ में एक माशा ही दें। किन्तु जो रोगी अपने हाथों अपना सर्वनाश कर चुका हो और इसी प्रकार की गुदा मैथुनादि कुटेवों के कारण इस स्वप्नदोष को खरीदा हो उसे पहिले तो सब बुराइयाँ छोड़ देनी चाहिएँ। फिर इस औषध को ३ माशे से ६ माशे तक दोनों समय ताजा धारोष्ण गो दुग्ध (ताजा निकले हुए गाय के दूध) के साथ प्रयोग करें। इससे स्वप्नदोष ही दूर नहीं होता किन्तु इससे शरीर में वीर्य की वृद्धि प्रर्याप्त मात्रा में होती है। वीर्य गाढ़ा हो जाता है। खूब बल और शक्ति बढ़ती है। यह औषध रामबाण है।

३—आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला गुरुकुल भज्जर ने स्वप्नदोष की चिकित्सार्थ "स्वप्नदोषामृत" औषध बनाई है। अनेक रोगियों पर हमने प्रयोग करके देखा है, स्वप्नदोष के रोगियों के लिये यह अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुई है।

व्यायाम किये बिना वीर्य रक्षा असम्भव है। व्यायाम से वीर्य शरीर का अङ्ग बन जाता है। स्वप्नदोषादि विकार बहुत कुछ व्यायाम से दूर हो जाते हैं। व्यायाम में शीर्षासन तो स्वप्नदोष तथा प्रमेह की अचूक औषध है। शीर्षासन दस सैकिण्ड से आरम्भ करके शनैः-शनैः प्रतिदिन बढ़ायें। बढ़ाते समय अपनी शक्ति और भोजन का ध्यान रखें। यह अनुभव सिद्ध है कि जब शीर्षासन का १० वा १५ मिनट तक अभ्यास हो जाता है तो स्वप्नदोष तथा वीर्य सम्बन्धी सभी रोग दूर भाग जाते हैं। स्वास्थ्य आदर्श तथा मुख तेजस्वी हो जाता है। बुद्धि और मस्तिष्क की शक्ति की वृद्धि होती है। शीर्षासन सब व्यायामों से पूर्व करो तथा दोनों समय (शौच से पीछे) सिर के नीचे कपड़े की गद्दी रख कर करो। इसकी विधि किसी पुस्तक में देख लो।

यद्यपि लेख संक्षेप में लिखा गया है। तदर्थ क्षमा करें। किन्तु जो साधन स्वप्नदोष को दूर करने के लिये लिखे हैं वे सुने-सुनाये नहीं, अपितु अनेक रोगियों पर अनुभूत हैं। आप स्वयं परीक्षण करके देखेंगे तो आयु ऋषियों के गुण गाते-गाते नहीं थकेंगे। यदि विद्यार्थियों वा युवकों ने इस लेख से लाभ उठाया मैं अपने आपको कृतार्थ समझूँगा। ॥ ओम् शम्॥

* विधारा के बीजों को शुद्ध करके ही प्रयोग लाना चाहिये। शोधनविधि—बीजों को चतुर्गुण गोदुग्ध में उबाल कर उष्ण जल से धोकर सुखा देने से शुद्ध हो जाते हैं।

रिक्त राजनीति : विरक्त आर्य देश का दुर्भाग्य

● प्रो० उमाकान्त उपाध्याय, एम. ए., कलकत्ता

१९४७ में स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ पाकिस्तान के निर्माण के कारण देश पर जो सङ्कट पड़ा, उसने सही दिशा में सोचने का अवसर न दिया। जो हो गया, सो हो गया। आर्य समाज तो विशेष रूप से विभाजन का शिकार बना और जिस कार्य की आकांक्षा देश निर्माण में आर्य नेताओं से की जाती थी वह पूर्ण न हुई। परिस्थिति ही कुछ ऐसी थी। संस्थाओं की दृष्टि से देखा जाय तो विभाजन का सबसे बड़ा क्रूर प्रहार आर्य समाज पर ही हुआ था। यह भी सच है कि अन्य कोई संस्था, स्यात्, जीवन सङ्कट का सामना करती, पर आर्यसमाज किसी न किसी रूप में बच गया और अब फिर पुराने घाव भरने लगे हैं। इस परिस्थिति का यह दुष्परिणाम तो हुआ ही कि देश के राजनीतिक दायित्व में आर्य समाज को जो कार्य करना था, वह न कर सका।

आर्यों का एक दल बने—इस समय तक कई लोग यह भी सोचने लगे थे कि आर्यसमाज को राजनीतिक संस्था के रूप में काम नहीं करना चाहिए। इसमें जो भी तर्क थे, किन्तु इतना तो सत्य अवश्य है कि राजनीति से आर्यसमाज अलग नहीं रह सका। चाहे हिन्दी के नाम पर, चाहे हिन्दुत्व के नाम पर, चाहे सभ्यता और संस्कृति तथा देश और जाति के नाम पर, किन्तु राजनीतिक लेख, राजनीतिक व्याख्यान आर्यसमाज के पत्रों में एवं आर्यसमाज की सभाओं में सदा स्थान पाते रहे हैं। बल्कि बड़ी-बड़ी सभाओं की एक विशेष स्थिति यह थी कि मञ्च पर रोब सदा राजनीतिक वक्ताओं का ही रहता था। यही स्थिति चल रही है। जिस समाज के अधिकारी अधिक सजग सतर्क नहीं हैं उनके जलसों पर राजनीतिक व्याख्यान धड़ल्ले हो रहे हैं। कांग्रेस की आलोचना करने में सभी वक्ता समान हैं, निर्माणत्मक बात करने में सभी लगभग-लगभग समान रूप से असमर्थ हैं। बात भी ठीक ही हैं, असन्तोष व्यक्त करने में समानता स्वाभाविक है, पर क्या कर्तव्य है कि कि वैदिक शिक्षा का प्रचार हो, विदेशी प्रभाव शिक्षा सभ्यता संस्कृति के क्षेत्र से दूर हो, भ्रष्टाचार समाप्त हो, बेईमानों से छुट्टी मिले। ये सारे काम होने चाहिएँ, पर करे कौन ?

जो आर्य राजनीति में काम कर रहे हैं वे अलग-अलग दलों में विभक्त पड़े हैं। चोटी के लोग हैं, आर्य समाज के प्रतिनिष्ठावान् हैं। पर साथ ही किसी और राजनीतिक दल का सदस्य होने के कारण सारे आर्य समाजी राजनीति में काम करके भी एकत्र नहीं हो पा रहे हैं। अब तक आर्यसमाजी इकट्ठे अपना राजनीतिक दल नहीं बना सके तो उसका फल हम भोग चुके हैं और भोगेंगे भी। अब भी यदि हमारी शक्ति अलग-अलग राजनीतिक दलों का सम्पोषण करती रही तो भविष्य भी हमारे हाथ से निकल जायगा।

कांग्रेस ने स्थान रिक्त किया—इस समय यह स्थिति सुस्पष्ट दिखाई पड़ रही है कि राजनीति के क्षेत्र में कांग्रेस का पतन हो गया है। जो कुछ कमी इस दिशा में रह गई है, वह बड़ी शीघ्रता से पूर्ण हो जाने वाली है। आज तो स्वयं कांग्रेसी नेता भी कांग्रेस के अन्तिम दिनों की गणना में लग जाने के लिए बाधित हो गये हैं। कई बार तो यह भी सरलता से बुद्धि गम्य हो जाता है कि कांग्रेस के केन्द्रिय नेता भी समझने लगे हैं कि १९७२ के साधारण निर्वाचन में केन्द्र में भी कांग्रेस की सरकार नहीं बनेगी। एतदर्थ अन्य पार्टियों के साथ तालमेल-जोड़ का चक्र उच्चतम स्तर पर अभी से परिलक्षित हो हो रहा है। लगता है कि १९८५ में अपनी शत वार्षिकी

मनाने से पूर्व ही कांग्रेस कार्य क्षेत्र से हटकर म्रियमाण होकर रोग जर्जरित अवस्था में समाप्ति के दिन गिनने लगेगी।

सच बात तो यह है कि यह १८८५ में स्थापित कांग्रेस का अन्त नहीं होगा, उसका अन्त तो १९४७ में स्वतन्त्रता दिवस के साथ ही हो गया। यह मरण तो १९४७ में सत्ताधारी का कांग्रेस हो रहा है। इतने अल्प समय में, २५-३० वर्षों में ही कांग्रेस जैसी संस्था का अन्त इसके पतन के कारणों पर विचार करने के लिए बाधित करता है। न जवाहरलाल नेहरू की जनप्रियता, न गान्धी जी का आर्शीवाद, न लालबहादुर शास्त्री की बहादुरी, कुछ भी तो कांग्रेस का पतन रोकने में समर्थ सिद्ध न हुए।

कांग्रेस के पतन के कारणों पर विचार आवश्यक है और भविष्य में जो भी दल सत्तारूढ़ होंगे उन्हें उन भूलों का ध्यान रखना होगा। कांग्रेस के पतन के अनेक कारण हैं। यहां हम एक दो पर ही विचार करते हैं। एक बड़ा कारण है—कांग्रेस के भीतर दलबन्दी और इसी दलबन्दी पर न्याय और औचित्य का बलिदान।

दूसरा इससे भी बड़ा कारण है—भ्रष्टाचार को प्रश्रय। यदि कांग्रेस भ्रष्टाचार को दबा पाती तो इतना शीघ्र इसका पतन न होता।

तीसरा पतन का कारण है—विदेशी विचारधारा को पोषण देना। इस पर थोड़ा विचार अपेक्षित है।

श्री नेहरू जी अपने को समाजवादी कहते थे। आरम्भ से ही उन्होंने समाजवादी नारे लगाने आरम्भ कर दिये थे। कहने को तो इन नारों में निर्धन मानव का कल्याण छिपा था। पर वस्तुतः नारे तो नारे ही रह गये और पूंजीवादी चक्कर में कांग्रेस और स्वयं नेहरू जी भी गोते लगाने लगे। पूंजीवाद समाप्त नहीं हुआ—कांग्रेस समाप्त हो गई।

भारत में स्वतन्त्र भारत में अर्थ नीति बनी, पर विदेशी माडल पर, शिक्षा नीति बनी, वह भी विदेशी माडल पर, राजनीति भी विदेशी माडल पर। राजनीति अर्थ नीति, समाज नीति, शिक्षा, व्यवस्था, शासन, न्याय, सब कुछ सर्वथा विदेशी माडल पर; चूडान्त विदेशी हो गया। ज्ञानदाता विदेशी, परामर्शदाता विदेशी, अर्थदाता विदेशी, योजना विदेशी, सब कुछ विदेशी के मध्य सहस्राब्दियों से अपनी परम्परा को सञ्चित किये भारत की जनता चकरा गई। नेता भी चकराये। रूस अपनी परम्परा का आदर करता है, चीन अपनी परम्परा का गर्व करता है। हम अपनी परम्परा का त्याग करने लगे।

फलतः हमारी योजनाओं की जड़ हमारी धरती से खाद्य न लेकर विदेशों की धरती के खाद्य से अनुप्राणित होती रही। कांग्रेस की यह विदेश भक्ति उनकी जड़ें गहरी न कर सकी और फल-फूल लगने से पहले कांग्रेस सूख गई। अब राजनीति का मञ्च तीव्रता से रिक्तता की ओर अग्रसर हो रहा है। इस रिक्तता की पूर्ति कौन करे?

(१) जनसंघ—कहने को जनसंघ की विचारधारा भारतीय है। आरम्भ में बहुत सारे आर्यजन इसकी ओर आकृष्ट हुए थे। आज भी बहुत से आर्य जन जनसंघ में हैं। किन्तु भविष्य की आशा इससे भी नहीं है। प्रशासनिक स्वच्छता और प्रबन्ध की दक्षता का अभाव सर्वत्र खटकता है, यह एक बात हुई। इससे भी अधिक है इनका पूँजीवादी रूप और पूँजीपतियों द्वारा इनका समर्थन। एक दिन एक नवयुवक ने जनसंघ के सम्बन्ध में एक पुरानी कविता की एक कड़ी सुना दी—

"यह भी पूँजीवादी चक्कर,
हम क्यों न दौड़ कर लें टक्कर?
जब डूब रहा है शत्रु—
इसे धक्का दें? या कि बचायें?"

कुछ राष्ट्रियता वादी (सम्भवतः संकीर्ण) विचार ही तो पर्याप्त नहीं हैं। दरिद्र मानव के शोषण के विरुद्ध इनकी कोई योजना बनती नहीं लगती। कभी-कभी पूँजीपति विरोधी बातें सुनने में तो आती हैं, किन्तु यह स्वदेशी कम तथा विदेशी विचारों का स्वदेशी संस्करण अधिक होता है। जो भी हो—जनसंघ से एक आशा थी। पिछले साधारण निर्वाचन ने जनसंघ के भविष्य के सम्बन्ध में जो कुछ व्यक्त किया उससे यह निष्कर्ष निकालना कठिन नहीं कि जनसंघ के दिन लद गये। इसके उत्थान पतन की समालोचना इतिहास करेगा। यद्यपि हाथ पाँव मारने की चेष्टाएँ चल रही हैं, पर लक्षण उत्साह जनक नहीं हैं।

(२) कम्यूनिज्म—कांग्रेस ने स्थान रिक्त किया है। उसकी पूर्ति करने के लिए कम्यूनिस्ट भी बढ़ रहे हैं।

बड़ी आशा से, बड़ी योजना से ? आज कलकत्ते की दीवारों पर आप कई जगह निम्न प्रकार के नारे पढ़ सकते हैं—

(१) साम्राज्यवादी भारत ने चीन पर हमला किया और चीन की भूमि हड़प ली; चीन ने भारत पर कभी आक्रमण नहीं किया।

(२) नागालैण्ड में भारत की साम्राज्यवादी नीति नहीं चलेगी।

(३) नक्सलवाड़ी की कृषि क्रान्ति एकमात्र उपाय है। इत्यादि।

इधर ये नारे, उधर का पुरुषता की चरमस्थिति। कम्युनिस्ट न भारत की परम्परा को मानते हैं, न प्रजातन्त्र को। पर इन्हें विदेशों से सहायता मिलती है और ये दरिद्र मानव के शोषण के विरुद्ध संघर्षरत रहने की बात करते हैं। ये प्रचण्ड भौतिकवादी, वेदशास्त्र, दर्शन उपनिषद् सबके विरोधी हैं। आज कम्युनिस्ट विद्यार्थी तुलसी जयन्ती और रवीन्द्र वार्षिकी से पराङ्मुख हो गये हैं। गोर्की की कीर्ति के गीत गाये जा रहे हैं। एक कालेज की पत्रिका पर एक प्राध्यापक ने "सहनाववतु सहनौ-भुनक्तु........." का उपनिषद् मन्त्र देना चाहा। कम्युनिस्ट विद्यार्थियों ने उसे हटा दिया। और यह कह कर हटा दिया कि कम्युनिस्टों का उपनिषदों की विचारधारा से विरोध है। ऐसे सभ्यता संस्कृति भारतीयता विरोधी दल का प्रचार बंगाल और केरल में हो रहा है। दोनों जगह कांग्रेस मञ्च से उतर चुकी है और उसकी जगह ये भारतीयता विरोधी बढ़ रहे हैं। यदि जनसम्पर्क किया जाय तो इनका उपाय हो सकता है, नहीं तो छलछद्म सब कुछ चालू है और साम्राज्यवादी योरुप तो चाहे कुछ नीति अनीति सोचता भी था, किन्तु कम्युनिस्टों की नीति में सब कुछ उचित है।

यद्यपि अभी इनका प्रचार नगण्य जैसा ही है पर एक तो केन्द्रिय कांग्रेस का एक प्रधान दल इनकी सहायता से केन्द्र में १९७२ में सत्तारूढ़ होने के लिए अभी से प्रयत्नशील है। इसीलिए इनका मन बढ़ गया है। दूसरे इन्हें विदेशों से बड़ी सहायता मिलती है। और विदेशी शक्तियाँ इनके लिए यहाँ सचेष्ट रहती हैं। अतः इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि अभी रिक्त स्थान की पूर्ति करने की इनमें शक्ति नहीं आई, पर इनके मनसूबे, इन की योजना, इनकी व्यवस्थित कार्य-प्रणाली इत्यादि को आँखों से ओझल भी नहीं किया जा सकता।

(३) सोशलिस्ट, प्रजा सोशलिस्ट आदि—ये सब तो आरम्भ से ही कांग्रेस के ही असन्तुष्ट संस्करण हैं। इनसे न कोई आशा है और न इनकी कोई योजना। ये व्यक्तियों के पीछे जीती हैं और मरती हैं।

(४) स्वतन्त्र दल—ये लोग बहुत दूर तक वामपंथी राजनीति के विरोधी और दक्षिणपंथी नीति के समर्थक हैं। पर इनको तो पूंजीपतियों का समर्थक कह कर ही उड़ा दिया जाता है। भारतीय राजनीति में इनका भी कोई स्थान बनता नहीं लगता।

(५) भारतीय क्रान्ति दल—है तो यह भी कांग्रेस का "असन्तुष्ट संस्करण" ही। किन्तु इसके नेता चौधरी चरणसिंह से, कम से कम उत्तर प्रदेश की जनता, भ्रष्टाचार रहित स्वच्छ शासन की आकांक्षा रखती है। भारतीय क्रान्ति दल की रीति-नीति सिद्धान्त अभी सुस्पष्ट नहीं हुए। नहीं ही इसका अखिल भारतीय रूप। अतः रिक्त स्थान की पूर्ति इससे भी सम्भव नहीं लगती।

आर्यों का कर्त्तव्य—इस सन्दर्भ में आर्य जनों की उदासीनता घातक सिद्ध होगी। देश चूर-चूर होने जा रहा है। आवश्यकता है सदाचारी स्वच्छ शासन की, शासक की। आर्य जन इसे कर सकते हैं। अराष्ट्रिय एवं भौतिकतावादी कम्युनिस्टों को सैद्धान्तिक उत्तर भी आर्य समाज दे सकता है। भारतीय विचारधारा से ओत-प्रोत शासन प्रणाली भी दे सकता है। आवश्यकता है कि सभी बिखरे आर्यसमाजी विभिन्न दलों से एकत्र हो जायें। आर्यसमाज के पास नेता भी हैं सिद्धान्त भी हैं। हमारे सामाजिक और आर्थिक विचारों के सामने पूंजीपति भी पराजित होंगे और कम्युनिस्ट भी पराजित होंगे। कम्युनिस्टों का वैज्ञानिक भौतिकवाद अवैज्ञानिक सिद्ध हो जाएगा। किन्तु आर्यों को अपना राजनीतिक रूप लेकर सामने आना होगा। बहुत विलम्ब आगे से ही हो गया है, यह देश का दुर्भाग्य रहा है। अब यदि आर्य पुनरपि विरक्त रहे तो देश का दुर्भाग्य होगा और महर्षि दयानन्द के सपने भी अपूर्ण रह जायेंगे।

***

वर्तमान भारतीय चुनाव पद्धति में-एक संशोधन

● नेत्रपाल शास्त्री आर्यसमाज हजूरी बाग श्रीनगर (काश्मीर)

नगर से गांव पर्यन्त आज देश में ऐसा कोई भी व्यक्ति नही है जो वर्तमान चुनाव प्रणाली से परिचित न हो परिचित ही नहीं वरन् अब तो निरन्तर तीन-चार चुनाव लड़ लेने के उपरान्त चुनाव क्षेत्र में पक्का खिलाड़ी हो गया है। चुनाव सम्बन्धी हथकण्डों को समझने लगा है। लोक तन्त्र की जीविनी शक्ति मतदाता में समाविष्ट है यह भी समझता जा रहा है। प्रत्याशी भी अब यह अनुभव करने लगा है कि मत झपटने का समय तो चला गया अब तो केवल अपने पक्ष में मतदाता की भावना को येन-केन प्रकारेण उभार कर ही हथियाये जा सकते हैं।

मतदाता के पक्ष में हो सकता है तथाकथित बातें सत्य हों, तथापि इस मूलभूत तथ्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती कि हमारे लोकतंत्र के उपदेष्टाओं ने अपने मतदाता की निष्ठा और विश्वास को राष्ट्र के साथ न जोड़ कर दलगत, प्रान्तवाद, जातिवाद, भाषावाद, व्यक्तिवाद के निकृष्टतम स्वार्थमय दल-दल में जा छोड़ा है।

होना तो यह चाहिए था कि "राष्ट्र कल्याण में ही सब का कल्याण है, इस सर्वोदयी भावना से मन अनुप्रेरित हो, राष्ट्रहित में मतदाता अपने मत का प्रयोग किया करते किन्तु हो इसके सर्वथा विपरीत रहा है। आज का मतदाता अपने मत का प्रयोग राष्ट्र को खण्ड-खण्ड करने में खुलकर कर रहा है। दलवाद, प्रान्तवाद, जातिवाद, भैया-भतीजा वाद, व्यक्तिवाद के प्रशिक्षण ने मतदाता को अविवेकी और अनुदार बना दिया है। आज का मतदाता संकुचित भावनाओं में अटक गया है। जिसका परिणाम परस्पर विद्वेष, कलह, फूट, पक्षपात—के रूप में गाँव-गाँव में दिखाई दे रहा है। ग्राम चुनावों ने शताब्दियों से चले आ रहे सौहार्दमय व्यवहार को शत्रुता में बदल दिया है। एक खानदान दूसरे खानदान का पक्का वैरी हो गया है। चकबन्दी जिससे किसान बुरी तरह लुटा, लाभ कुछ भी नहीं हुआ, ने भाई-भाई को लड़ा दिया। जो थोड़ी बहुत कमी रह गई थी उसको मध्यावधि चुनावों ने पूरा कर दिया। खुलकर, जमकर, डटकर जातिवाद को उभार कर मत प्राप्त किये गये! यहाँ तक ही नहीं, सुनने में तो यह भी आया है कि उत्तर-प्रदेश में तो डाकूवाद को भी उभारा गया। इससे ही सुविज्ञ अनुमान लगा सकते हैं कि देश की राजनीति कितनी पतनोन्मुखी होती चली जा रही है।

इसमें दोषी मतदाता नहीं है। दोषी हैं स्वयंभू नेताओं की जमात जिन्होंने सत्ता को हथियाने के लिए मतदाताओं की भावनाओं से खिलवाड़ की। जो अपने आचरण से घृणित स्वार्थ के अतिरिक्त जनता के सम्मुख कोई उच्चतम आदर्श प्रस्तुत न कर सके। जिन्होंने राजनीति को एक अच्छा-खासा व्यवसाय बना दिया है, व्यवसाय नहीं है तो और क्या है? मुझे कोई समझाये—एक प्रत्याशी चुनाव जीतने के लिए एक-एक, डेढ़-डेढ़ लाख रुपये तक खर्च करता है और वह करता है जिसकी छान पर फूंस तक नहीं हाता। कहाँ से करता है? और क्यों करता है? निर्वाचित होने पर उसको पाँच वर्ष में साठ हजार से अधिक नहीं मिल सकेंगे। जिसने अपने चुनाव पर एक लाख रुपया खर्च किया है उसको तीस चालीस हजार का तो विशुद्ध घाटा है। घाटे का सौदा हमने कोई करते देखा नहीं है फिर यह एम० पी० नामक व्यक्ति क्यों करता है? स्पष्ट है प्रान्तीय राज्य के बजट के समान घाटे का बजट होते हुए भी आपने किसी एम० पी० को घाटे में नहीं देखा होगा। होगा तो वही होगा जिसने समय के साथ चलना नहीं सीखा।

वास्तव में यह आज के युग में ऐसा धन्धा है जिसमें अपनी गुडविल तो कुछ है नहीं किन्तु धन-वैभव, हकूमत,

सम्मान के रूप में लाभ ही लाभ है। योग्यता का कोई मापदण्ड है नहीं।

कहने का तात्पर्य यह है कि वर्तमान चुनाव पद्धति को विपरीत दिशा दिये जाने के समय आज की राजनीति में सुयोग्य व्यक्ति भाग लेने से कतराते हैं। वे इस पचड़े में पड़ना नहीं चाहते। वर्तमान चुनाव प्रणाली ने देश में ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है कि सज्जन पुरुष तो नीची गर्दन करके चलते हैं और असज्जन पुरुष सीना तान कर चल रहे हैं।

देश में छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा नेता अपना-अपना गिरोह बनाये हुए है। जिसका जितना शक्तिशाली गिरोह है वह उतना ही अपनी मनमानी करता और करवाता है। चुनाव के समय प्रत्येक दल को विवश हो, इन्हीं गिरोहबन्द गुरुओं को ही टिकट देना पड़ता है।

"सम्प्रदायवादी भावनायें देश के लिए घातक हैं", ऐसा सभी राजनीतिक पार्टियाँ स्वीकार कर करती है तदापि चुनाव आने पर वही पार्टियाँ टिकट देती हैं जातिवाद और साम्प्रदायवाद के आधार पर। जिस क्षेत्र में जाट अधिक हैं लगभग सभी पार्टियों ने अपना टिकट जाट को ही दिया है और दण्डातंत्र प्रणाली के आधार पर जीता भी जाट ही। ब्राह्मण, ठाकुर, अहीर, गूजर, काछी, चमार, मुसलमान, सिख, आदि—जातियाँ, जहाँ जिसकी आबादी अधिक है, वहाँ उसी जाति के प्रत्याशी को टिकट दिया जाता है। बहुसंख्यक जाति अपने मध्य रहने वाली अल्पसंख्यक जातियों से दण्ड तंत्र के आधार पर मत प्राप्त करती है। इससे एक जाति दूसरी जाति से आतंकित हो चुकी है। अविश्वास और अस्थिरता के मध्य अपना जीवन व्यतीत कर रही हैं। इसका प्रमाण आगामी चुनावों में मिल जायेगा। यदि समय रहते इस ओर ध्यान न दिया गया तो आगामी चुनाव रक्त-पात के मध्य ही होंगे।

वर्तमान चुनाव प्रणाली अपने उद्देश्य से बहुत परे हट गई है। देश की अपेक्षा प्रान्त का हित, प्रान्त की अपेक्षा, कमिश्नरी और जिले का हित, जिले की अपेक्षा दल का हित, दल की अपेक्षा अपना हित सर्वोपरि हो गया है। राष्ट्र स्वार्थ के वशीभूत हो चुका है। इसलिए देश आज छोटे-छोटे टुकड़ों में विभक्त होता जा रहा है। यदि भविष्य में यही स्थिति बनी रही तो निश्चित रूपेण देश की स्वतन्त्रता खतरे में पड़ जायेगी।

भावी संकट से देश को बचाने के लिए देश की वर्तमान चुनाव प्रणाली में मेरा एक छोटा सा संशोधन है। मेरे संशोधन की रूप रेखा यह है अब तक जितने भी चुनाव हुए हैं उन में जनता के सामने व्यक्ति आया है और उसके समर्थन में पीछे रही है पार्टी।

प्रारम्भ में ही लोकतन्त्र के रथ को अबाध गति से चलाने के लिए जो चुनाव पद्धति की सड़क बनाई गई। इसके निर्माता इन्जिनीयरों ने मौलिक भूलें की जिस का परिणाम है कि आज इस चुनाव रूपी सड़क में स्थान-स्थान पर गढ्ढे पड़ चुके हैं। अब इन गढ्ढों को भरने के लिए एक ही उपाय है कि प्रत्येक राजनीतिक पार्टी व्यक्ति को आगे न लाकर स्वयं अपने-अपने निशान पर चुनाव लड़े। ऐसा करने से हजारों समस्याओं का समाधान स्वतः ही हो जायेगा।

मण्डल अथवा प्रान्त में जिस पार्टी को जितने मत मिले उनको सर्वसम्मत निर्धारित की हुई अनुपातित संख्या से विभाजित कर दिया जाये। जिस पार्टी को जितने सदस्य भेजने का अधिकार मिले वह पार्टी उतने ही सदस्य चुनकर भेज दिया करे। ऐसा करने से दल बदल की बीमारी समाप्त हो जायेगी। रिक्त स्थान होने पर बीच में चुनाव नहीं होगे। जिस किसी पार्टी का किन्हीं भी कारण से स्थान रिक्त होता है वही पार्टी अपना आदमी चुनकर भेज दिया करेगी। हो सकता है इस प्रकार भी प्रणाली में कुछ कानूनी अड़चनें सामने आयें उन को दूर किया जा सकता है।

उक्त संशोधन से प्राजतन्त्र प्रणाली में कोई बाधा भी नहीं आती साथ ही—वर्तमान चुनावों में जो अगणित विकृतियां पनप उठी हैं वे सब दूर हो जायेंगी।

कुछ तड़प कुछ झड़प

● आध्यापक राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

मनुष्यों का अकाल

जन संख्या बढ़ रही है पर मनुष्यों का अकाल पड़ गया है। देश में सर्वत्रचरित्रवान, उत्तरदायी, कर्मठ, निस्वार्थी व दक्ष लोगों की माँग है। आर्यसमाज ने देश में अनेक परोपकारी संस्थाओं की स्थापना करके अपने कार्य व कीर्ति का विस्तार किया परन्तु आज इन संस्थाओं को सम्भालने वालों का अभाव है। अन—आर्य समाजी यत्र तत्र समाज का हानि पहुँचाने के लिए इन संस्थाओं पर अपना अधिकार जमा रहे हैं। इन संस्थाओं की तो छोड़िये अब समाजों के मन्दिरों की देख-भाल करने वालों का भी कई स्थानों पर अकाल पड़ गया है। बैंगलूर, कोल्हापुर बम्बई आदि बड़े नगरों में भी समाजों के भवन हथियाने वालों ने हथिया लिए। आर्य समाज के गढ़ पंजाब व हरियाणा में भी कई स्थानों पर यही अवस्था देखकर दुःख होता है। कशमीर में प्रचार की कमी के कारण बहुत कुछ नष्ट हो गया। कोल्हापुर की ऊपर चर्चा की है। मैंने वहां जाकर देखा। समाज की लाखों की सम्पत्ति व आय कुछ लोगों के हाथ में है। सम्पत्ति है समाज नहीं। दयानन्द स्कूल में वहाँ मैंने मुर्गियाँ विचरती देखीं। ऋषि दयानन्द कौन थे यह वहां किसी को पता ही नहीं था। मैंने जितना कुछ हो सकता था किया पर सार्वदेशिक सभा वहां के लिए कुछ स्थायी व्यवस्था बना सकी। किसी ने जाकर देखा भी नहीं।

गत दिनों कशमीर से मेरे विद्यार्थी जीवन के एक अभिन्न आर्य बंधु का पत्र आया कि यहाँ किसी को भेजो। आए दिन आर्य संस्थाओं के कुछ सज्जन आर्य शिक्षकों के लिए लिखते रहते हैं। पत्र पढ़ता हूँ तो अनायास मुख से निकलता है 'मनुष्यों का अकाल पड़ गया।'

ऐसा क्यों हुआ ? पूरा समय देने वाला समाज के पास कोई नेता नहीं। एक भी तो शीर्षस्थ नेता समाज को पूरा समय नहीं दे पा रहा। स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज, पं० भोजदत्त जी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द आदि विभूतियों ने जीवन खपा कर समाज को कितने नर रत्न दिये। आज भी यदि समाज के वे लोग जो लीडर हैं, कुर्सियों पर विराजमान हैं, सभाओं के अधिकारी है समाज के संगठन के लिए पूरी शक्ति लगा दें तो यह अकाल दूर हो सकता है। आर्यसमाज के नेता आश्रम व्यवस्था का पालन करते हुए यदि आश्रम बदलें तो अनार्यता की बाढ़ रोकी जा सकती है। कांग्रेस, कम्युनिस्ट, संघ, समाजवादी दल, अकाली दल के पास पूरा समय देने वाले शीर्षस्थ नेता हैं। भला आर्य समाज केवल भाषणों व प्रस्तावों से आगे कैसे बढ़ सकता है ? आर्य जनता इस भावना को वेग प्रदान करे तो हो सकता है नेता भी कुछ सोचने पर विवश हों।

भ्रान्ति निवारण—राजधर्म १६.४.६६ के अङ्क में यह पढ़कर बड़ा आश्चर्य व दुःख हुआ कि श्री पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री ने एक सभा में अध्यक्ष पद से बोलते हुए कई बार यह कहा कि आर्य समाज हिन्दु धर्म की चार प्रमुख धाराओं में से एक है। प्रो० श्यामराव जी ने इसके प्रतिवाद में जो कुछ लिखा है वह उनका व्यक्तिगत दृष्टिकोण नहीं। वेदवादी ऋषि दयानन्द के प्रत्येक सैनिक का यही दृष्टिकोण है। कुछ लोगों की ओर से सुनियोजित ढंग से फैलाई जा रही इस भ्रान्ति के निवारण करने के लिए हमें जागरूक होकर प्रयास करना चाहिए। महर्षि दयानन्द ने केवल मानव धर्म वेद को मान्यता दी है। महान् विद्वान श्री गंगाप्रसाद जी सेवा निवृत्त न्यायाधीश टेढी गढवाल ने 'Fountain head of religions' पुस्तक में यही तो सिद्ध किया था कि धरती के सब मत पंथों का स्रोत वेद है। वेद किसी की धारा नहीं। वेद की सुपावन ज्ञान धारा से अन्य मत लाभान्वित हुए हैं।

ऋषि ने लिखा है कि वह कोई नया मत चलाने नहीं आए। उनका प्रयोजन अनादि वेद धर्म का प्रकाश था। आर्य समाज वेद की निर्मल ईश्वरीय ज्ञानधारा को प्रवाहित करने के लिए जन्मा है। यदि शास्त्री जी की बात मानें तो इसका अर्थ यह होगा कि आर्यसमाज हिन्दूधर्म

का $\frac{1}{4}$ है। तीन चौथाई धर्म से यह अछूता है। यह विचार भ्रान्तिपूर्ण है। वेद धर्म में, ऋषि की विचारधारा में कोई न्यूनता हम नहीं मानते। प्रभु के कार्य त्रुटि रहित हैं। वेद भी त्रुटि रहित हैं। प्रभु हमें सुमति दें।

जड़ पूजा का महारोग :—मैंने आर्यसमाज के एक शीर्षस्थ विद्वान् नेता को एक प्रतिमा पर फूल चढ़ाते देखा तो इस हृदय विदारक दृश्य को देखकर उनका भाषण सुने बिना सभा से लौट आया। उक्त नेता जी भारतीय क्रान्ति दल में सम्मिलित हो चुके हैं। एक अन्य आर्यसमाजी कहलाने वाले नेता को मैंने एक समाधि पर फूल चढ़ाते देखा। वह श्रीमान जी कांग्रेस में हैं। वर्षों युवकों को मूर्ति पूजा से बचने की प्रेरणा देने वाले एक अन्य श्रीमान् जी के बारे में अब सभी जानते हैं कि वह मूर्ति पूजा करने में किसी से पीछे नहीं। जड़ पूजा अब उनको अखरती नहीं। अब लकड़ कपड़ पूजा को वह पाप नहीं मानते। वह श्रीमान संघ में विलीन हो चुके हैं। मैंने लीडरों की इस नैतिक करवट को देखकर पुनः सत्यार्थ प्रकाश का बार बार पाठ किया। मुझे तो अब भी मूर्ति-पूजा एक मानवीय रोग ही दीखता है। मैं अब भी इसे भारत के पतन का कारण मानता हूँ। मैं कबर पूजा, समाधि पूजा आदि को वेद विरुद्ध समझता हूं। यह जड़ पूजा ऋषि की मान्यताओं के सर्वथा विपरीत है। यदि मैं भूल पर हूँ तो सुविज्ञ पाठक इस विषय पर प्रकाश डालें। यदि नेता भटक गये हैं तो भटके, अटके व लटके नेताओं को सन्मार्ग दर्शन करायें। मुझे हर्ष है कि राजधर्म के २६-४-६६ के अङ्क में मेरी स्थान पूजा टिप्पणी पर श्री राधेमोहन जी आर्य आदि गणमान्य आर्य विद्वानों ने हर्ष व्यक्त किया है। उन्होंने जड़ पूजा स्थान पूजा का घोर विरोध किया है। राज धर्म को ऋषि की आवाज ऊंची करने पर बधाई हो।

उठो ! उठो !!

उठो कि सो चुके बहुत !
उठो कि खो चुके बहुत !
उठो कि रो चुके बहुत !

उठो ! धरा वसुंधरा नितान्त शोक ग्रस्त है !
तिमिर निश्शंक व्याप्त आज ज्ञान सूर्य अस्त है !
न न्याय दीखता कहीं विभव लुटा लुटा पड़ा !
कि देश का सुपुत्र, लखं अभाव, सुन्न त्रस्त है !
कराहती पुकारती धरा कि सो चुके बहुत !
उठो कि खो चुके बहुत !
उठो कि रो चुके बहुत !

कहाँ सुविज्ञ भाल वह कहाँ भुजा महाबली ?
कहाँ सुवर्ण--पर्ण--विटप--वाटिका वनस्थली ?
कहाँ श्रमी सुदेह जो कि साज स्वेद से करे ?
दिशा दिशा निहार अक्षिका निराश ही चली !
निगाह को सचेत कर उठो कि खो चुके बहुत !
उठो कि रो चुके बहुत !
उठो कि सो चुके बहुत !

उठो उठो कि वेद की ऋचा ऋचा पुकारती !
देव दयानन्द की गिरा गिरा पुकारती !
समाधियां सजीव बन पुकारती उठो उठो !
प्रभात रश्मियां खड़ीं उतारने को आरती !
सुयोग को टटोलते सुमित्र ! रो चुके बहुत !
उठो कि सो चुके बहुत !
उठो कि खो चुके बहुत !

"कुलदीप"

प्रचार यात्रा

अब की बार बम्बई जाना पड़ा। आर्यावर्त के पश्चिमी द्वार पर खड़ा यह प्रहरी अपने वैभव और शालीनता के कारण सारे संसार में प्रसिद्ध नगर है। पर इतने विशाल नगर में मेरा एक भी सुपरिचित व्यक्ति न था—कुछ दैवी प्रेरणा कहिये—१ मई को बम्बई सेन्ट्रल स्टेशन पर ऋषि के एक अनन्य भक्त श्री लालचन्द जी चोपड़ा से आकस्मिक भेंट हो गई और फिर उनके साथ ही हो चला। बारह दिन के प्रवास में सबसे अधिक सहयोग और स्नेह चोपड़ा जी के परिवार से मिलता रहा। उनके सौजन्य से अनेक आर्य परिवारों से सम्पर्क हुआ। बावा सोहनसिंह, लाला ओ३म् प्रकाश जी मेहरा, लाला रामप्रकाश जी मेहरा, गोवर्धन जी टी० शाह, बनारसीदास जी अरोड़ा आदि लोगों का हमें सहयोग प्राप्त हुआ। आर्य समाज चर्च गेट (प्रेम कुटीर) के माध्यम से सर्वप्रथम मैंने बम्बई नगरी में अपने विचार रखे। उसके उपरान्त आर्यसमाज कांकड़वाड़ी (जिसे देव दयानन्द ने सर्वप्रथम अपने करकमलों से स्थापित किया था) एवं अनेक पारिवारिक सत्संगों में अपने विचार रखने का अवसर मिला। आर्यसमाज—कांकड़वाड़ी को कई वर्षों के संघर्ष के बाद युवक शक्ति ने नया जीवन प्रदान किया है और उनके उत्साह को देखकर लगता है कि थोड़े समय में ही यह समाज अपने ऐतिहासिक गौरव के अनुरूप कार्य करने लगेगा।

आर्य समाज शान्ताक्रूज के युवा-पुरोहित पण्डित दयाशंकर जी विशेष कर्मठ और निष्ठावान आर्यसमाजी हैं। प्रधान—श्री अर्जुनभाई पटेल की सादगी और आर्य समाज के प्रति लगन सराहनीय है। आर्य स्त्री समाज की मन्त्राणी श्रीमती पुष्पा मल्होत्रा जी भी बड़े उत्साह से साप्ताहिक और पारिवारिक सत्संगों का आयोजन करती है। महाशय जी ने तो सारा समय समाज को ही समर्पित कर दिया है। इस तरह शान्ताक्रूज की समाज देश के प्रबुद्ध समाजों में से है। इस समाज के सुयोग्य अधिकारियों ने परिषद् के प्रति बड़े सहयोग की भावना दिखाई।

बम्बई की केन्द्रीय प्रचार समिति में सेठ शूरजी प्रताप भाई, माता लीलावती आर्या, श्री जयदेव जी आर्य आदि का विशेष सहयोग रहा इसी प्रकार श्री वेदमित्र जी, श्री भगवानदेव जी आर्य, माता सुशीला साहनी श्री हंसराज जी आर्य आदि का सहयोग हमारे लिये बहुत लाभप्रद रहा। नवभारत टाइम्स के श्री सुदर्शन आर्य, और श्री हरिश्चन्द्र जी का सहयोग सराहनीय रहा। दानवीर सेठ बद्रीप्रसाद जी भोड़का के अस्वस्थ होने के कारण हमारी सफलता पूर्ण न हो सकी। बाद में उनका दुःखद देहान्त हमारे लिये कठिन हो गया। फिर भी उनके परिजनों से जो सद्भावना प्राप्त हुई उसके लिये हम आभारी हैं।

इस तरह बम्बई में बारह दिन रहकर शोलापुर गया। प्रो० हीरालाल औलक और उनके मेधावी पुत्रों से मिलकर हार्दिक प्रसन्नता हुई। १३ मई की रात को एक ट्रक की छत पर बैठकर ५० मील दूर औराद ग्राम में पहुंचा। वहाँ मराठवाड़ा के आर्य युवक नेता ब्रह्मचारी हरिश्चन्द्र गुरुजी के संचालन में तीन दिन का शिविर लगा। सब मिलाकर १५०-१७५ नवयुवक थे। शिविर की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि एक अत्यन्त छोटे से ग्राम में जेठ की तपती हुई दोपहरी में गांव के बाहर खेत में दो सघन आम के वृक्षों की छाया में शिविर चलता और रात को युवक उसी खेत में सो जाते, पास बहती हुई नदी में स्नान करते और घण्टों-घण्टों गंभीर चर्चाओं में पूर्ण अनुशासन पूर्वक भाग लेते! दूसरी विशेषता यह थी इतने

लोगों के भोजनादि का सारा प्रबन्ध गांव वालों ने अपने हाथों ले लिया—और गांव का बड़ा से बड़ा व्यक्ति भी साधारण से साधारण काम करने में गर्व का अनुभव करता। गांव के सरपंच और धनी जमींदारों को मैंने कन्धों पर पानी ढोते देखा। सचमुच, यदि आर्य नेता अपने ख्याली पुलावों और स्टंण्ट बाजियों को छोड़कर जनता के बीच कार्य करने उतरें तो आर्य जन बड़े से बड़ा बलि-करने को तत्पर हैं। शिविर में दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय के उपाचार्य पण्डित सत्यप्रिय जी के ओजस्वी व्याख्यान और पं० विश्वनाथ जी के जोशीले भजन हुए। श्री शेषराव जी वाघमारे द्वारा शंका समाधान बहुत ही मनोरंजक रहा। युवकों ने **राजधर्म** को घर-घर पहुँचाने का संकल्प लिया और ब्रह्मचर्य त्याग, अनुशासन और स्वाध्याय का व्रत लेकर ग्राम-ग्राम युवक परिषद् के गठन की योजना बनाई।

औराद से पं० कालीचरण जी के साथ रातों रात, उमरगा, लातूर, नान्देड़ होता हुआ मैं निजामाबाद के उत्सव पर पहुंचा। यह तो वहां के उत्साही नवयुवक कार्यकर्ताओं का स्नेहपूर्ण आग्रह था जो मुझे वहां खींच ले गया। निजामाबाद में पण्डित नरेन्द्र जी, पण्डित रुद्रदेव जी, प्रो० वेदमित्र जी और प्रो० कृष्णचन्द्र जी के साथ-साथ श्री ओ३म्प्रकाश जी वर्मा के बड़े ओजस्वी विचार सुनने को मिले। कई वर्षों के बाद आयोजित इस उत्सव में हजारों की संख्या में नरनारी उपस्थित होते और बड़ी श्रद्धा के साथ वैदिक संस्कृति की बातें सुनते। दक्षिण भारत की जनता की बड़ी विशेषता यह है—तीन-चार घण्टों के कार्यक्रम में बिना हिले-डुले बैठना और चाहे रात के बारह बज जांय पर पूरी सूचना सुनके शान्ति पाठ करके विसर्जित होना। निजामाबाद में श्री मनसाराम जी गुप्त द्वारा संचालित एक सुन्दर गोशाला देखी और मन प्रसन्न हो गया। गोशाला तो हमारे भिवानी में भी देखी पर जहाँ भिवानी वाली हमेशा हजारों के घाटे पर चलती है वहाँ यह गोशाला साल में हजारों का लाभ देती है। मन्त्री बाबूलाल जी और हरिश्चन्द्र जी, गोवर्धनलाल जी और अन्य लोगों का उत्साह सराहनीय था। १९ मई की शाम को हैदराबाद से विमान द्वारा वापस अपने कार्यालय में आ गया।

मराठवाड़ा, कर्नाटक और आन्ध्र के नवयुवकों में मुझे अब एक विद्रोह की भावना परिलक्षित हुई जो अवगुण्ठन को तोड़कर आर्यसमाज के वास्तविक गौरव की स्थापना के लिये संघर्ष करने के लिए तैयार है हैदराबाद सम्मेलन के बाद लोगों में बड़ा जोश उमड़ा है और अब उत्सवों पर आन्दोलन, युद्ध और आर्यराज्य की स्थापना की बातों में बड़ा आनन्द आता है। जहाँ जहाँ आर्यों ने निज़ाम सरकार के अत्याचार के विरुद्ध बग़ावत की आवाज बुलन्द की थी वहाँ यहाँ क्रान्ति की चिन्गारियां अब फिर युवक हृदयों में सुलगने लगी हैं। पता नहीं सब किस अत्याचारी, गोहत्यारी, मद्यमांस प्रचारिणी, चरित्रनाशिनी डायन के सरकार की बारी है?

—श्यामराव

याद रखें!

हमारा नाम	—	आर्य !
हमारी भाषा	—	आर्य भाषा !
हमारा देश	—	आर्यावर्त !
हमारा धर्म	—	वेद !

आर्यसमाज क्रान्ति करे !

ओ३म्प्रकाश आर्य (कलकत्ता)

पिछले कुछ दिनों से आर्यसमाज में यह प्रसंग चल रहा है कि आर्यसमाज को राजनीति में भाग लेना चाहिए या नहीं ? इस विषय में आर्य युवक परिषद् के पाक्षिक पत्र "राजधर्म" में श्री इन्द्रदेव जी मेधार्थी के विचार काफी आ चुके हैं। मैं श्री इन्द्रदेव जी के विचारों से पूर्णत: सहमत हूँ। आर्यजनों को पहले सोचना यह चाहिए कि राजनीति है क्या ? राजनीति किसी बिमारी या गन्दी चीज का नाम नहीं है। हमारे जीवन की प्रत्येक व्यवस्था में राजनीति है, चाहे वह सामाजिक व्यवस्था हो या आर्थिक व्यवस्था, अर्थात् मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, वह समाज से अलग रहकर अपना अस्तित्व कायम नहीं रख सकता है उसी तरह समाज में रहकर राजनीति से दूर रहकर अपना अस्तित्व नहीं बनाये रख सकता। अब सवाल यह है कि आर्यसमाज को राजनीति से दूर रहते हुए काफी समय हो गया है। हम हिसाब लगायें कि हमने समाज को राजनीति से दूर रखकर क्या कमाया और क्या खोया है। मेरे हिसाब से तो समाज ने राजनीति से दूर रहकर कुछ खोया ही है। आज की आर्यसमाज का वही हाल है जो कि अन्य राजनैतिक दलों का। जिस तरह राजनैतिक दलों में स्वार्थी तत्व घुस गये हैं, उसी तरह आर्यसमाज में भी ऐसे ही तत्वों का बोलबाला हो गया है, जो कि आर्यसमाज को केवल हवन करने तक ही सीमित रखकर समाज में परिवर्तन और विश्व को आर्य बनाना चाहते हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वेदों के आधार पर पूर्णत: घोषणा कर रखी है कि हम संसार पर चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित करना चाहते हैं। समझ में नहीं आता है कि जो लोग यह बात कहते हैं कि समाज को राजनीति में भाग नहीं लेना चाहिए, वे या तो स्वामी जी के कहे हुए वक्तव्यों का अर्थ नहीं समझते या उन्हें कोई स्वार्थ है। हवन से वायुमण्डल शुद्ध हो सकता है पर हम विश्व को आर्य नहीं बना सकते, आज विश्व की बात करना तो दूर रहा, पहले ऋषि की जन्मभूमि भारत में ही इतनी गन्दगी है कि हवन से दूर नहीं हो सकती। कहने का अर्थ यही है कि अब आर्यसमाज का नेतृत्व युवक हाथों में आना चाहिए और हम समाज में परिवर्तन करते हुए शीघ्र यह घोषणा करें कि हम राजनीति से दूर रहकर सामाजिक ढाँचा न[ही] बदल सकते, राजनीति में भाग लेकर ही हम आ[र्य] साम्राज्य स्थापित करके सामाजिक, आर्थिक तथा रा[ज]नैतिक व्यवस्था बदलते हुए विश्व को आर्य बनाने [की] कोशिश करेंगे। हमारा अपना साम्राज्य स्थापित कि[ये] बिना हम कुछ भी नहीं कर सकते हैं। यह जरुर क[र] सकते हैं कि सम्मेलनों में प्रस्ताव पारित करते रहें, जलू[स] निकालते रहें। इससे कुछ होने का नहीं लगता।

राजनीति में भाग लेने का अर्थ यह नहीं है कि ह[म] राजा बन जायेंगे। राजनीति में भाग लेने का अर्थ यह [है] कि हम सच्चे जनसेवी तथा त्यागी उम्मीदवार खड़ा करें। उदाहरण के लिए ही ले लीजिए, हरियाणा में ८[१] विधायक चुने जाते हैं। हम प्रथम चुनाव में ८१ उम्मीदवार खड़े करें, चाहे उनमें से २० ही विजयी हो, इ[स] तरह हम जनता जनार्दन के सामने अपने विचार र[खें] उनकी सेवा करें तो यह निश्चय है कि दो चुनावों में ह[म] हरियाणा में अपनी सरकार बना सकते हैं। आज हरियाण[ा] का सालाना बजट लगभग ७० करोड़ है। साल में ७[०] करोड़ रुपया खर्च होता है फिर भी वहाँ की हालत देखिए शराबखोरी, जातिवाद आदि अन्य बुराइयाँ बढ़ रही हैं अगर हरियाणा में हमारी सरकार हो और हमारे हा[थ] ७० करोड़ रुपये खर्च का प्रबन्ध हो तो देखिए हरियाण[ा] में क्या होता है। हरियाणा देश का सबसे छोटा और खुश[]हाल प्रदेश है। हम अपना काम हरियाणा से ही शुरु क[रें] धीरे-धीरे सारे देश में। अपना काम हरियाणा पर अधि[]कार करने के बाद हरियाणा देश का नेतृत्व कर करता है लोग यह कहेंगे कि आप कुर्सी के भूखे राजनीति में प्रवेश करना चाहते हैं। ऐसी बात नहीं हे। हम चाहते हैं कि देश पर हमारा शासन कायम हो तो सर्व प्रथ[म] हम देश के आन्तरिक शत्रुओं को कुचल [दें] देश के आन्तरिक शत्रु हैं ईसाई पादरी, जो कि अपने प्रचार से भारत में ईसाईयत फैला रहे हैं और देश में फूट डाल रहे हैं। उनके द्वारा शिक्षण संस्थाओं का संचा[]लन हो रहा है, उन पर प्रतिबन्ध अनिवार्य है। शिक्षण संस्थाओं पर सरकार का अधिकार हो, व्यक्तिगत को[ई] भी शिक्षण संस्था नहीं चलनी चाहिए। शिक्षा का स्त[र]

सारे देश में समान हो। यह नहीं कि अमीर के लड़के जन्म से ही देहरादून पढ़े और गरीब के लड़के म्युनिसिपल की स्कूल में। जैसा कि अब हो रहा है। इसका परिणाम होता है कि अमीर के बच्चे ही सरकारी अफसर बन सकते हैं। या पैसा कमा सकते हैं। क्योंकि उनकी शिक्षा उच्च होती है, गरीब का लड़का क्लर्क तैयार होता है। इससे समाज में नौकरशाही का बोलबाला पढ़ता है। हम चाहते हैं कि शिक्षा व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए जिसमें अमीर-गरीब का भेद ना हो और प्रत्येक नागरिक के बच्चे एक साथ बैठकर पढ़े बचपन से ही उनमें समानता का भाव उत्पन्न हो ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए। इसी तरह समाज के वर्तमान ढाँचे में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करते हुए देश में एक ऐसा वातावरण पैदा हो जिससे प्रत्येक व्यक्ति अपने आपको खुशहाल समझें, ऐसा तभी सम्भव है जब कि युवा वर्ग एक विशुद्ध राजनैतिक दल बनाकर, सच्ची भावना को मन में लेकर यह संकल्प करें कि मुझे देश की वर्तमान शासन व्यस्था बदलकर इसकी जगह नई शासन व्यवस्था कायम करते हुए देश का गन्दा वातावरण बदलना है। प्रत्येक युवक के दिमाग में देश की भावी तस्वीर होनी चाहिए। देश की समस्याओं को लेकर युवक विचार करने लगेंगे तो उन्हें अपने आप रास्ता दिखाई देने लगेगा कि हम क्या करें। आज का युवक नेतृत्व के अभाव में भटक रहा है। ऐसे समय मे आर्य समाज को आगे आकर युवा पीढ़ी का नेतृत्व करना चाहिए और देश में फैले असत्य, अन्याय और व्यभिचार को दूर करते हुए आर्य साम्राज्य स्थापित करना चाहिए तथा आर्यसमाज को सारे देश में क्रान्तिकारी परिवर्तन करने के लिए राजनीति में भाग लेना चाहिए।—

शोक !

आर्य समाज और महर्षि दयानन्द पर अटूट श्रद्धा रखने वाले, इस देश के सबसे बड़े यातायात प्रतिष्ठान "ट्रान्सपोर्ट कारपोरेशन ऑफ इण्डिया" के मालिक श्री बद्रीप्रसाद जी भोड्का का देहावसान हो गया। हम आर्य युवकों को उनके निधन से बड़ी हानि हुई क्योंकि जब पिछले अक्टूबर वे हमारी पदयात्रा में सम्मिलित हुए थे और आर्य राज्य की स्थापना का उद्देश्य उन्होंने सुना तो हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त करते हुए सभी प्रकार की सहायता का वचन दिया था। पर दुर्भाग्य से यहाँ से वापस जाते ही उन्हें दिल का दौरा हुआ और तब से मृत्युपर्यन्त वे शैय्याग्रस्त रहे। स्वास्थ्य की दृष्टि से उनसे किसी के भी मिलने की अनुमति नहीं थी। फिर भी १० अप्रेल को बम्बई में उनके निवास स्थान पर मैं जब उनसे मिला तो यह देखकर प्रसन्नता हुई थी कि उनका स्वास्थ्य क्रमशः सुधर रहा है। पर विधाता को कुछ और ही मंजूर था। तीन दिन बाद ही उनका देहान्त हो गया। चारो वेदों का अंग्रेजी में अनुवाद कराना, सत्यार्थप्रकाश को भारत की सभी भाषाओं में प्रकाशित कराना और सबसे अधिक, ऋषि के सिद्धान्तों पर चलकर आर्य राज्य की स्थापना में सहयोग देना उनके विशेष लक्ष्य थे। उनके सुयोग्य उत्तराधिकारी भोड़का जी के सपनों को मूर्तरूप देने में विशेष प्रयत्नशील होगें ऐसी हमें पूरी आशा है। हम सब मिलकर इन पवित्र कार्यों में अपना पूरा सहयोग करें—यही सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी—

—श्यामराव

समाचार दर्शन

[१६ से २७ मई १९६९]

संकलन कर्ता

ज्ञानेश्वर शास्त्री

१६

भारत ने पाकिस्तान के साथ अपने सारे विवाद शान्तिपूर्ण रीति से सुलझाने की सिफारिश की।

× ×

हनोई ने उन अमरीकी प्रस्तावों को ठुकरा दिया—जिसमें दोनों ओर की सेनाओं को पीछे हटने की शर्त थी।

× ×

लाजपतनगर पुलिस थाने में केवलकृष्ण नामक युवक द्वारा आत्महत्या के बाद वहाँ के क्रुद्ध जन-समूह ने थाने का घेराव किया और पत्थर बरसाए।

१७

मलयेशिया के प्रधान मंत्री तुंकु अब्दुल रहमान ने कहा कि देश में अशान्ति फैलाने में केवल कम्युनिस्ट ही जिम्मेवार नहीं हैं—देश में विद्यमान विघटनकारी तत्त्वों का भी बराबर हाथ है।

× ×

फ्रांस के कार्यकारी राष्ट्रपति एलेन पोहर ने कहा कि उनके राष्ट्रपति पद पर निर्वाचित हो जाने से फ्रांस की पश्चिम एशियाई और निःशस्त्रीकरण नीति में फर्क आएगा।

× ×

नेहरू पुरस्कार खान अब्दुल गफ्फार खाँ को दिए जाने की घोषणा की गई।

१८

मलयेशिया में तनाव आज भी कायम है। दंगे पूर्ववत् जारी हैं।

× ×

केरल संयुक्त मोर्चा समन्वयन समिति ने प्रदेश में व्याप्त भ्रष्टाचार के निरोध के सम्बन्ध में जो सभा बुलाई थी—वह बिना किसी निर्णय पर पहुंचे भंग हो गई।

× ×

एक ओर दार्जिलिंग की पहाड़ियों को मिलाकर राज्य बनाने की तो दूसरी ओर मणिपुर को पूर्ण राज्य स्तर देने की आवाज उठ रही है।

× ×

कांग्रेस अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा चार सप्ता यूरोप यात्रा पर आज रवाना हो गए।

१९

स्वराष्ट्र मंत्री श्री चौहान ने वचन दिया कि बेरोजगार युवकों को संसद भवन पर प्रदर्शन कर गिरफ्तार किया गया है, उन्हें पुनः छोड़ देने के में सहानुभूति पूर्वक विचार किया जाएगा।

× ×

मलयेशिया में आन्तरिक शान्ति बनाये रखने के स्वयंसेवक दल का गठन किया गया।

× ×

सुप्रसिद्ध न्यायविद् पुरुषोत्तम त्रिकमदास का सान।

× ×

विधि उपमंत्री यूनुस सलीम के मामले को राज्य सभा में बड़ी सरगर्मी रही।

२०

तुंकु द्वारा नवगठित मंत्रिमंडल में ३ चीनी भारतीय मूल के मंत्री शामिल किए गए।

× ×

बम्बई में महिलाओं का एक शिष्ट-मंडल प्रधा श्रीमती इन्दिरा गांधी से मिला और रवीन्द्र सरो के लिए न्यायिक जांच की मांग की।

२१

उपद्रव ग्रस्त अलीपुर द्वार (बंगाल) में जारी है।

× ×

मलयेशिया का वातावरण लगभग शान्त हो चला है।

× ×

सीलीगुड़ी जाने वाली यात्री गाड़ी में अचानक विस्फोट से ४ व्यक्ति मरे और १२ घायल हुए।

× ×

अमेरिका ने तीन यात्रियों सहित अपोलो—१० नामक चन्द्रयान छोड़ा।

२२

कश्मीर के मुख्यमन्त्री श्री सादिक और प्रदेश कांग्रेसाध्यक्ष श्री कासिम के मत-भेद दूर करने के लिए स्वराष्ट्र मंत्री श्री चौहान ने प्रयास प्रारम्भ किया है।

× ×

सरकारी कर्मचारियों के लिए "आनन्द मार्ग" वर्जित घोषित किया गया।

× ×

आंधी और तूफान से आन्ध्रप्रदेश में अब तक ६१८ व्यक्ति प्राण गँवा चुके हैं।

२३

उपप्रधान मंत्री श्री मोरार जी देसाई और अमरीकी परराष्ट्र मन्त्री रोजर्स ने परस्पर हितों पर बातचीत की।

× ×

मलयेशिया में साम्प्रदायिक दंगों के फलस्वरूप अब तक लगभग ५०० आदमी मारे जा चुके हैं।

× ×

कश्मीर विवाद सुलझाने के लिए स्वराष्ट्र मंत्री श्री चौहान श्रीनगर रवाना हुए।

२४

चीन के रूस के साथ अपने विवाद शान्तिपूर्वक सुलझाने का वचन दिया।

× ×

भारत को सहायता देने वाले देशों ने मत व्यक्त किया कि इस देश को इस वर्ष ५२५ करोड़ रुपये की आवश्यकता है।

× ×

पाक राष्ट्रपति याहियां खां ने अमरीकी परराष्ट्र मंत्री से अधिकाधिक शस्त्रास्त्रों की मांग की।

२५

सूडान में प्रधान मन्त्री मुहम्मद महगोब की सरकार को भंग करके सैनिक क्रान्तिकारी परिषद् ने सत्ता संभाल ली।

× ×

आन्ध्रप्रदेश में तूफान से मरने वालों की संख्या १२०० तक पहुँच चुकी है।

× ×

स्वराष्ट्र मंत्री श्री चौहाण श्री मध्यस्थता से कश्मीर के मुख्यमंत्री सादिक व प्रदेशकांग्रेसाध्यक्ष कासिम में मतभेद दूर हो गया है।

२६

अपोलो—१० चन्द्रयान १९२ घंटे की यात्रा समाप्त कर पृथ्वी पर वापस।

× ×

जनसंघ, स्वतंत्र पार्टी तथा भारतीय क्रान्तिदल ने परस्पर विलय के लिए वार्ता शुरू की।

× ×

लखनऊ में मुसलमानों के दो सम्प्रदाय—शिया और सुन्नी—में संघर्ष के फलस्वरूप दो व्यक्ति मरे व अनेक घायल हो गए।

× ×

राजदूतों के सम्मेलन से मत व्यक्त किया कि अरब देशों से मैत्री का परिणाम अच्छा रहा है क्योंकि अधिकांश अरब देश कश्मीर पर भारत का समर्थन करने लगे हैं।

२७

स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू की पांचवीं पुण्यतिथि पर समस्त देश में श्रद्धांजलि अर्पित की!

× ×

जनसंघ, स्वतंत्र, भाक्रांद की विलयवार्ता बिना किसी निष्कर्ष पर पहुंचे ही स्थगित हो गई।

× ×

राष्ट्रपति पद के लिए उपयुक्त व्यक्ति की तलाश में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने विरोधी दलों से बातचीत की।

× ×

सोवियत प्रधान मंत्री ने पाकिस्तान जाने की नाटकीय घोषणा की।

शंका-समाधान

आप शंका करें, हम उसके समाधान का प्रयत्न करेंगे। हम यह दावा नहीं करते कि हमारा समाधान सर्वोत्तम समाधान होगा। प्रश्नकर्त्ता अपना नाम पता दें। यदि नाम गुप्त रखना चाहें तो सूचित कर दें। एक बार में एक प्रश्न कर्ता के अधिक से अधिक दो समाधान किये जायेंगे। अंक के सबसे सुन्दर प्रश्न कर्ता को बधाई दी जायगी। प्रश्न मुख्यत: आर्य राजनीति, अर्थनीति एवं धर्मनीति से सम्बन्धित हों।

—सम्पादक

प्रश्न १—आर्यसमाज में प्रवेश करने के समय हिन्दुओं को केवल प्रवेशपत्र भरना होता है। फिर मुसमान और ईसाइयों के प्रवेश के समय शुद्धि करने की क्या आवश्यकता है ?

उत्तर—वस्तुत: आर्यसमाज में प्रवेश करने की एक ही विधि सब समय उचित है। हिन्दु हो या मुसलमान, ईसाई हो या अन्य कोई, समाज में प्रवेश करने की विधि में कोई विषमता नहीं लानी चाहिए। यह ठीक है कि यदि सम्भव हो तो प्रत्येक व्यक्ति के समाज प्रवेश के समय उसे यज्ञ में भाग लेने के लिए कहा जाय और अन्य आर्यजन उसके साथ यज्ञ में भाग लें तथा यज्ञ शेष का वितरण सब उपस्थित जनों में करें। जिस प्रकार एक आर्य के आचार होते हैं, प्रवेशार्थी को शिखा सूत्रधारी होना चाहिए।

किन्तु ऐसा समझना कि हिन्दू को शुद्ध करने की कोई आवश्यकता नही और मुसलमान ईसाई को एक विशेष प्रकार के कर्मकाण्ड द्वारा पवित्र करके ही आर्यसमाज में सम्मिलित किया जा सकता है, उचित नहीं है। यह भेद परक नीति है। इसमें लाभ तो कोई लगता नहीं, उल्टे संकुचित दृष्टिकोणों का प्रचार, विरोध की भावना कुछ अधिक बढ़ जाती है। आर्य जनोचित आचार विचार वाला व्यक्ति, वैदिक धर्म की मान्यताओं में विश्वास करने वाला कोई भी व्यक्ति अपने जन्म कुल के, बिना किसी भेदभाव के आर्यसमाज में प्रवेश पा सकता है। हां, आर्यसमाज के प्रवेशपत्र पर हस्ताक्षर करके यह घोषणा अवश्य करनी चाहिए कि वह आर्यसमाज के नियमों को मानता है और तदनुकूल आचरण का आश्वासन देता है।

प्रश्न २—क्या आर्यसमाजी ही आर्य हैं, अन्य सम्प्रदाय वाले अनार्य (दुष्ट) हैं और नरक के हक़दार हैं ?

उत्तर—आपकी भाषा से ऐसा जान पड़ता है कि आप 'अन्य सम्प्रदाय वालों' की तरह आर्यसमाज को भी एक सम्प्रदाय समझते हैं। यह ठीक नहीं है। आर्यसमाज साम्प्रदायिकताओं से परे वैदिक सिद्धान्तो पर आधारित संसार के उपकारार्थ एक क्रियाशील संघटन है। इसके

उद्देश्य और मान्यताएँ आर्यसमाज के नियमों के वर्णित हैं।

जो आर्यसमाजी हैं वे अच्छे आचार विचारों के होंगे ही। हाँ, कुछ ऐसे भी व्यक्ति हो सकते हैं जो आचार विचार में वेदानुकूल होकर भी, अपनी सुविधा, स्वार्थ, अवकाश, अन्य व्यस्तताओं के कारण आर्यसमाज न सदस्य बनते हैं न संस्था रूप में आर्यसमाज का सहयोग करते हैं। वे आर्यसमाजी न हों, पर उनके आर्य होने में कठिनाई नहीं है।

हाँ, अनार्य अवश्य वे हैं जो अशुद्ध विचार धारा को मानते हैं और तदनुकूल आचार विचार के कायल हैं। उदाहरणार्थ अवतार पैगम्बर मसीहा वाद में विश्वास रखना, जलस्थल में तीर्थ की भावना और उन्हें मुक्ति का साधन समझना, इत्यादि संकीर्ण सम्प्रदायिक विचार हैं, इनके मानने वाला, इनका प्रचार करने वाला अवश्य ही अनार्य (जो आर्य न हो) है, और उसकी सद्गति नहीं हो सकती। यदि किसी सदाचार की परिभाषा में रामकृष्ण को परमात्मा का अवतार मानना, ईसा मूसा मुहम्मद को परमात्मा का पैगम्बर मानना आवश्यक हो, तो ऐसी विचारधारा सङ्कीर्ण, एवं साम्प्रदायिक, साथ ही मानव-समाज के लिए अहितकारी है। ऐसी विचारधाराओं के मानने वालों का जीवन भी सङ्कीर्ण ही होगा। सङ्कीर्णताओं का प्रचार करने वाले, मनुष्य को मनुष्य से व्यर्थ लड़ाने वाले अपने स्वार्थीविचारों के पोषण के लिए जनता को ठगने वाले लोग निस्संदेह दुष्ट हैं और उन्हें नरक ही मिलेगा, यह निश्चित है।

प्रश्न ३—अगर आर्य राज्य स्थापित हो गया तो क्या दूसरे धर्म वाले दुःखी न होंगे ?

उत्तर—प्रथम तो यह बात ध्यान देने की है कि धर्म एक ही है और वह मानव मात्र के लिए एक ही है। अन्य तो सम्प्रदाय, दल, या इसी तरह के संकुचित दृष्टिकोण वाले होते हैं। अतः दूसरे धर्म वालों के सुख-दुःख का तो कोई प्रश्न नहीं है, हाँ, दूसरे सम्प्रदाय वालों के दुःखी होने की बात अवश्य विचारणीय है।

यदि आर्य राज्य स्थापित हो गया तो व्यवस्था सम्प्रदाय या दल या वर्ग विशेष को ध्यान में रख कर नहीं की जायगी। आर्य राज्य में साम्प्रदायिक या दलगत स्वार्थों के आधार पर काम नहीं होगा। अतः कोई दल, वर्ग, या सम्प्रदाय किसी अन्य दल वर्ग सम्प्रदाय की अपेक्षा तिरस्कृत या उपेक्षित अनुभव नहीं करेगा। जब न्याय के आधार पर, समस्त राष्ट्र बिना किसी दल, वर्ग, सम्प्रदाय, राज्य या भाषा के भेदभाव के, राष्ट्रीय स्वार्थ को वरीयता देगा तो अन्य वर्ग या दल न असन्तुष्ट होगा न दुःखी। देश का स्वार्थ सर्वोपरि होगा—तो कोई कुछ बुरा नहीं मानेगा।

पिछले बीस वर्षों में कांग्रेस ने, उसके नेताओं, साम्प्रदायिकता, प्रान्तीयता, दल इत्यादि के विरुद्ध गाल तो बहुत बजाये; किन्तु मन्त्री बने तो इन्हीं साम्प्रदायिक, प्रान्तीय, दलगत आधारों पर; चुनाव के टिकट दिये गये इन्हीं आधारों पर छात्रवृत्तियों में, नौकरियों में सर्वत्र इन हानिकारी तत्त्वों को सहारा दिया गया है। इसी बीस वर्ष की पक्षपात पूर्ण न्याय-क्षमता-दक्षता- राष्ट्रिय स्वार्थ रहित कांग्रेसी नीति का ही दुष्परिणाम है कि सारा राष्ट्र आज प्रान्त, भाषा, जाति, वर्ग, सम्प्रदाय इत्यादि के संकुचित स्वार्थों में ही सोचता है। अतः एक दल की तुलना में दूसरा दल दुखी रहता है।

जब सारी व्यवस्था न्याय और राष्ट्रिय स्वार्थ को दृष्टि में रखकर की जायगी तो ये संकुचित स्वार्थ वाले दब जायेंगे। न्याय पूर्वक पक्षपात रहित शासन में किसी को दुखी होने का अवसर नहीं मिलेगा। आर्य राज्य का आधार न्याय और राष्ट्रिय स्वार्थ होगा ? अतः इस दल-वर्ग, सम्प्रदाय-प्रान्त-भाषा-निर्विशेष व्यवस्था में कोई दुःखी न होगा। इस प्रकार एक और सुविधा होगी कि कोई भी इस प्रकार की स्वार्थी मांग नहीं करेगा।

श्री रामचन्द्र जी मालवीय नगर—नई दिल्ली को उनके आर्य राज्य सम्बन्धी प्रश्न के लिये बहुत बहुत बधाई है !

—समाधान कर्ता—उमाकान्त उपाध्याय

'काले अंग्रेजों' की शिक्षा व्यवस्था को समूल नष्ट कर वैदिक शिक्षाप्रणाली की स्थापना का 'राजधर्म' ने जो शंखनाद किया है उसका हम हार्दिक स्वागत करते हैं।

—लालमन आर्य

श्री ....

श्री कुलपति जी
गुरुकुल कांगड़ी, सहारनपुर

विज्ञापन शुल्क

(एक बार के लिये)

कवर पृष्ठ ४	पूरा—	२०० रु०
कवर पृष्ठ ४	आधा—	१५० रु०
कवर पृष्ठ ३	पूरा—	१५० रु०
अन्य पृष्ठ	पूरा—	१०० रु०
अन्य पृष्ठ	आधा—	५० रु०

राजधर्म (पाक्षिक)
वार्षिक शुल्क १० रुपये

ओ३म
राजधर्म (पाक्षिक)
आर्यसमाज मन्दिरमार्ग नईदिल्ली-१
दूरभाष—४२०४९

संपादक
प्रो० श्यामराव

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद के लिये प्रो० श्यामराव द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित।

सम्राट प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६

राजधर्म

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का पाक्षिक मुखपत्र

सम्पादक
प्रो० श्यामराव

वर्ष-१ : अंक-१६
वार्षिक शुल्क—१० रु०
एक प्रति ५० पैसे

२५ जून १९६९
दयानन्दाब्द १४५

"इतिहास बदलना होगा ?"

"शील चौधरी" (बम्बई)

मरे हुए शब्दों का अर्थाभास बदलना होगा,
समय आ गया फिर हम को इतिहास बदलना होगा ।

देख चुके नाटक कितने विश्वास दिलाने वाले;
सुन-सुन कर पक गए कान, न थके सुनाने वाले !
ऊंचे आदर्शों की दे-दे कर दिन रात दुहाई,
रंग-बिरंगे रूप बदल कर लूट-खसोट मचाई ।

अब इन मीठे वायदों का मोह-पाश बदलना होगा ।
समय आ गया फिर हम को इतिहास बदलना होगा ।

नई रगों में नया रक्त ले रहा कहीं अंगड़ाई;
गमंच की तसवीरों की चौंक रही अरुणाई !
घिसते-घिसते चन्दन भी भड़का देता अंगारे;
न्याय रहेगा कब तक चुप अन्याय-चक्र के मारे ?

भाग्य भरोसे नहीं, इसे सायास बदलना होगा !
समय आ गया फिर हम को इतिहास बदलना होगा ।

नव यौवन की आशा में बचपन का काल बिताया,
पर यौवन के आंगन में विकराल कुहासा छाया ।
अब इस भूखे यौवन का संसार सजाना होगा,—
वर्षों का उजड़ा सूना घर-बार बसाना होगा ।

मुक्ति का जन-मुक्ति में उल्लास बदलना होगा ।
समय आ गया फिर हम को इतिहास बदलना होगा ।

सम्पादकीय

हम क्या चाहते हैं ?

"हम" से अभिप्राय 'सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्' से है। पिछले वर्ष १३ जुलाई को हम एक निश्चित कार्यक्रम लेकर एक नये क्षेत्र में प्रविष्ट हुए। सावन-भादों की उमड़ती-घुमड़ती घटाओं ने हमारा स्वागत किया और बादलों की गर्जन से स्वर मिला कर हमने भी अपने क्रांति गीत दुनियां के सामने रखे।

तब और अब······बीच में एक वर्ष का समय। इस एक वर्ष में हम कहाँ से कहाँ पहुंच गये। साधनों के नाम पर हमारी जवानी और उसे संघठन के लिये समर्पण की भावना हमारे पास थी—सहायता के नाम पर परमपिता परमात्मा का आशीर्वाद और पूर्वजों की शुभ कामनायें साथ थीं। क्रान्तदर्शी दयानन्द के जीवन की एक एक घटना हमारे जीवन के एक एक सांस का सम्बल बनकर हमें प्रेरणा देती रही है। जब कभी किसी ने हम से यह पूछा—"आखिर आप लोग चाहते क्या हैं?" हमने यही उत्तर दिया—"देव दयानन्द की मान्यताओं के आधार पर वैदिक स्वराज्य और आर्य राष्ट्र की स्थापना!" चाहे हम गांवों में बच्चों को इकट्ठा कर ब्रह्मचर्य शिविर लगाते रहे हों, चाहे हम युवकों में क्रान्ति की भावना भरकर सैकड़ों मील की पद यात्रा का आयोजन करते रहे हों, चाहे झोंपड़ियों में बैठकर किसान, मजदूरों से वार्तालाप का प्रसंग रहा हो अथवा दिल्ली, हैदराबाद, कलकत्ता के विशाल जन समूहों में भाषण का प्रसंग रहा हो—इसी एक बात और इसी एक लक्ष्य को सामने रखकर हम आगे बढ़ते गये। राजधर्म पत्रिका का एक-एक पृष्ठ इसी उद्देश्य के लिये समर्पित रहा और देश के कोने कोने में हजारों नवयुवक हृदयों को इसी भावना से तरङ्गित करता रहा।

इस लगभग वर्ष भर के संघर्ष ने—इस आन्दोलनात्मक जीवन में हमें बड़ी मजबूती प्रदान की—हमारे हौसले—हमारी उमंगें बढ़ती गईं। इस संघठन को जीवन दान देने वालों की संख्या एक से इक्कीस हो गई—सैकड़ों नये साथी और हजारों सहानुभूति रखने वाले मिले। यही हमारी सबसे बड़ी पूंजी और सबसे बड़ी उपलब्धि रही। इन उपलब्धियों के बल पर हमने इस वर्ष भर में एक भी दिन निराशा के दर्शन नहीं किये। बरन् प्रत्येक नया दिन हमारे जीवन में आशा और उल्लास का नया प्रभात लेकर आया।

—२० जुलाई १९६९ को गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में हमारा वार्षिक साधारण अधिवेशन होगा। पिछले पूरे वर्ष भर का लेखा-जोखा देकर हम अगले वर्ष के लिए अपनी स्पष्ट योजना रखेंगे। योजना का प्रारूप कुछ इस प्रकार होगा—हमारे सहयोगियों से प्रार्थना है कि इस पर वे स्वयं भी चिन्तन कर इस दिशा में हमारा मार्ग दर्शन करें।

सर्वप्रथम हम यह अनुभव करते हैं कि इस राष्ट्र में आज एक प्रचण्ड वैचारिक क्रान्ति की आवश्यकता है और इस क्रान्ति का बीजारोपण नवयुवक मस्तिष्कों में ही अधिक सम्भव है। राष्ट्र का नवयुवक जिन शिक्षणालयों में प्रेरणा प्राप्त करने के लिए ठोकरें खा रहा है वहाँ एक स्पन्दनहीन-स्फुरण शून्य वातावरण व्याप्त रहा है। यदि हम इन विद्या मन्दिरों को अपना कार्य क्षेत्र बना कर संघठित प्रयास करते हैं तो एक ओर हमारी कार्य शक्ति का सही परीक्षण भी होता है और दूसरी ओर इन अनुशासन हीनता और उद्देश्यहीनता के शिकार कालेजों, यूनिवर्सिटियों और गुरुकुलों में युवा शक्ति का रचनात्मक संघठन हो सकता है। उदाहरण के लिए यदि हम हरयाणा प्रान्त को ले लें—यहाँ लगभग ४० कालेज, एक मेडिकल कालेज, पांच शिक्षक-प्रशिक्षण केन्द्र और एक विश्वविद्यालय और चार-पांच स्तर के गुरुकुल हैं। सारे प्रान्त की युवा शक्ति—या यों कहिये कि वैचारिक क्रान्ति में सक्रिय योगदान करने में सक्षम शक्ति इन ५० संस्थाओं में हमें

इकट्ठी मिल सकती है। यदि हमारे पास विचार हैं और वे विचार नौजवानों में तड़प पैदा कर सकती हैं तो इससे अच्छा कार्य क्षेत्र और क्या होगा ? यदि हमारे पास आज के जर्जरित समाज को नष्ट कर नव-निर्माण की खेती के लिये अच्छे बीज हैं तो इससे सुन्दर उपजाऊ धरती हमें और कहाँ मिलेगी ? क्या हम अगले एक वर्ष में इन पचास संस्थाओं को अपने प्रचार अपने शिविरों और अपने कार्य-क्रमों से झकझोर नहीं सकते ? यह एक चुनौती है जिसकी उपेक्षा करके हम आगे नहीं बढ़ सकते।

दूसरी योजना साहित्य प्रचार की है। आज हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि अवैदिक मत-मतान्तरों के मुकाबले में हमारे साहित्य सृजन का और साहित्य प्रचार का काम बहुत ढीला है। पिछले ५०-६० वर्षों में प्रचार के तरीकों में एक जो महान् परिवर्तन आया, उसने उच्चारित शब्द (Spoken word) की अपेक्षा लिखित शब्द (Written word) को अधिक महत्त्वपूर्ण बना दिया है इसीलिए आज चाहे कम्यूनिज्म का प्रचार हो या ईसाइयत का प्रचार हो—साहित्य सबसे प्रमुख साधन बना हुआ है। नये मनोवैज्ञानिक ढंग से लिखे हुए तथा सस्ते सुन्दर ढंग से प्रकाशित किए साहित्य की आज जबरदस्त भूख है पर हम इस दिशा में बहुत पिछड़े हुए हैं। इस दिशा में हमारी योजना है एक सुविज्ञ आर्य लेखक संघ की स्थापना करना, आर्थिक और राजनैतिक समस्याओं पर मण्डनात्मक और खण्डनात्मक साहित्य तैयार कराना और पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से अपने विचारों की धूम मचा देना। आज देश में जितने भी दैनिक पत्र निकलते हैं चाहे वे आर्य भाषा के हों या अंग्रेजी, बंगाली, मराठी आदि हों—एक आध को छोड़कर किसी में भी वैदिक मान्यताओं की कोई चर्चा नहीं दिखाई पड़ती। इसमें उन पत्रों का असहयोग उतना बड़ा कारण नहीं है जितना हमारी अपनी उदासीनता है। हमारी यह योजना हो कि वर्ष भर में योजना पूर्वक ५० दैनिक पत्रों में हमारे विचारों से सम्बन्धित लेख प्रकाशित हों और "सम्पादक के नाम पत्र" के माध्यम से कम से कम ५ ऐसे पत्रों में प्रति सप्ताह एक पत्र प्रकाशित होता रहे। कम से कम ५० हजार रुपये का साहित्य ट्रैक्ट्स और पुस्तकों के रूप में प्रकाशित हो और नवम्बर तक राजधर्म पाक्षिक के दस हजार ग्राहक बना कर इसे 'साप्ताहिक' कर दें।

तीसरी योजना—"कार्यकर्ता प्रशिक्षण केन्द्र" से सम्बन्धित है। पिछले एक वर्ष के अनुभव से हमें ऐसा लगता है कि एक जोशीला, लगनशील और विद्वान् प्रचारक उतना कार्य नहीं कर सकता जितना एक सुप्रशिक्षित प्रचारक कर सकता है। हमारी प्रचार-प्रणाली में "प्रशिक्षण" को वह स्थान नहीं मिल सका जो आवश्यक है। हम अब एक ऐसे प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना का प्रयत्न कर रहे हैं जहाँ एक वर्ष में कम से कम १०० नवयुवक एक एक महीने का प्रशिक्षण प्राप्त कर एक मिशनरी की तरह सुदीक्षित होकर प्रचार कार्य में प्रवृत्त हो सकें। एक ऐसा केन्द्र जहाँ वर्ष भर योग्य विद्वानों के संरक्षण में सैद्धान्तिक और संगठनात्मक प्रशिक्षण चलता रहे। यहीं से वैदिक धर्म का पत्राचार-शिक्षण (Correspondence Course) भी चालू किया जाय।

"ग्रामाञ्चलों में विशेष प्रचार" की चौथी योजना भी महत्त्वपूर्ण है। शहर के लोग इतने चिकने घड़े होते हैं कि रंग चढ़ना कठिन होता है और यदि मेहनत से एक बार रंग चढ़ाया भी जाय तो उतरते देर नहीं लगती-आज का हमारा शहरी जीवन कृत्रिमता से भरा है—व्यस्त इतना कि चौबीस घंटे भी कम पड़ जाते हैं पर व्यस्तता का सारा कारण अर्थोपार्जन होता है। पर ग्रामीण जनता का ढंग ही और है। एक गाँव में साल में एक सम्मेलन कर दीजिए। कम से कम साल भर तक उस गाँव में और आस-पास के चार पाँच गांवों में उसकी चर्चा बनी रहती है—समय के नाम पर यदि कोई काम लेना जानता हो तो साल में तीन चार महीने तो हर किसान दे सकता है। अपनी स्थिति के अनुसार किसान दान देने में भी शहरी की अपेक्षा अधिक उदार होता है। और शहरों में तो विभिन्न संस्थाओं के प्रचारकों की प्रतिद्वन्द्विता सी चलती है पर गाँवों में तो क्षेत्र खाली पड़ा रहता है। इस दृष्टि से हमने सोचा है कि अगले वर्ष हम हरयाणा के कम से कम दो-तीन जिलों में प्रचार की धूम मचा देंगे। इस दिशा में हमारा एक और चिन्तन यह है कि वैदिक सिद्धान्तों के सुयोग्य उपदेशक तथा भजनोपदेशकों का एक संगठन बनाया जाय ताकि उपदेशक वर्ग पूरे सम्मान के साथ और जीविका के साधनों के साथ इस पवित्र कार्य

में लग सके और नये उपदेशकों को इस जीवन के प्रति आकर्षण हो। यदि हम भजनोपदेशकों का एक मजबूत संगठन बना कर और आत्म सम्मान पूर्वक उनकी जीविका का प्रबन्ध कर सकें तो एक वर्ष में ग्रामाञ्चलों में भजनोपदेशकों का जाल बिछ सकता है और आर्य राज्य की स्थापना के लिए हजारों कार्यकर्ता (Field workers) तैयार किये जा सकते हैं।

इस प्रकार यदि वर्ष भर इन चार कामों पर ही शक्ति केन्द्रित की जाय और कार्यक्षेत्र भी अधिक न फैला कर कुछ चुने हुए जिलों तक सीमित रखा जाय तो परिणाम अवश्य ही चमत्कारिक हो सकता है।

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् अग्रसर है। यह एक ऐसी संस्था है जो वैदिक धर्म की स्थापना के लिए सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक क्रान्ति में विश्वास रखती है। इस क्रान्ति का सूत्रपात हरियाणा की वीर भूमि में हो रहा है—यहाँ वह आग की लपटें सुलगनी आरम्भ हो गई हैं जो कुछ ही वर्षों में एक प्रचण्ड ज्वालामुखी बनकर विस्फोट करेंगी और दानवता के दरिन्दों को भून कर आर्य सिद्धान्तों के दिव्य प्रकाश से दिशाओं को देदीप्यमान करेंगी।

—श्यामराव

●

ऋग्वेद-फारसी में

ईरान की सरकार ने तेहरान विश्वविद्यालय के द्वारा विश्व की सर्वाधिक पुरातन पुस्तक ऋग्वेद का फारसी अनुवाद कराने की योजना बनाई है। इस पर दस लाख रुपये का व्यय आयेगा। इस सरकारी निर्णय का स्वाकत करते हुए सरकारी समाचार पत्र ने लिखा है कि ऋग्वेद पर हर ईरानी गर्व कर सकता है। क्योंकि इसके रचयिता आर्य हमारे पूर्वज थे।

● ईरान के इस समाचार से प्रत्येक वैदिकधर्मी को प्रसन्नता होगी पर यहाँ स्पष्ट करना आवश्यक है कि आर्य वेदों के रचयिता कदापि नहीं। वेद तो परमपिता परमात्मा की रचना है और ऐसा ही प्राचीन काल से अब तक आर्य मानते रहे हैं।

—सम्पादक

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का वार्षिक अधिवेशन

रविवार २० जुलाई १९६९ — स्थान—गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ

परिषद का वार्षिक अधिवेशन २० जुलाई रविवार १२ बजे से गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में हो रहा है। आर्य कुमार सभा युवक परिषद् तथा अन्य आर्य युवक संगठन अपने प्रतिनिधियों के नाम शीघ्र कार्यालय में भेजें।

मन्त्री परिषद् आर्य समाज मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली

सामयिकी–

काला अंग्रेज : राजेन्द्र अवस्थी

एक मासिक पत्रिका निकलती है "नन्दन" प्रकाशक हैं दि हिन्दुस्तान टाइम्स लि० और इसके सम्पादक हैं एक काले अंग्रेज-राजेन्द्र अवस्थी। पिछले वर्ष मार्च में इन्होंने 'नन्दन' का एक "प्राचीन भारतीय कहानियां" विशेषांक निकाला और इसमें इस राष्ट्र की प्राचीन वैदिक संस्कृति को पानी पी पीकर गालियां दी हैं। अपने सम्पादकीय—बड़े भइया की चिट्ठी—में अवस्थी जी इस देश के कोमल मस्तिष्क के बच्चों से कहते हैं—"यह अंक इस वर्ष के लिए हमारा विशेष उपहार है। इसे तुम सब पढ़कर सुरक्षित रखना। आगे हम तुम्हारे काम आएगा। इस अंक के बारे में यह तुम्हारी प्रतिक्रिया जानना चाहेंगे। पूरा अंक पढ़कर संक्षेप में यह लिखकर भेजो कि तुम्हें इस अंक में क्या अच्छा लगा और क्यों? जिसकी सम्मति सबसे अच्छी होगी, हम उसे ५ रू० से १० रू० तक पुरस्कार देंगे"। छोटे बच्चों को इस प्रकार बरगला कर और पुरस्कार का लालच दिलाकर आइये देखें कि अवस्थी जी उन्हें क्या बताना चाहते हैं? अपने सम्पादकीय में वे लिखते हैं—"वेद आर्यों के धार्मिक ग्रन्थ रहे हैं। इनकी संख्या चार है (१) ऋग्वेद (२) सामवेद (३) यजुर्वेद (४) अथर्ववेद। ऋग्वेद में स्तुतियाँ और देवताओं का इतिहास है··· आज से ५९६८ वर्ष पहले ऋग्वेद रचा गया था। ऋग्वेद के कुछ मन्त्र सस्वर गाये जाते थे। इन्हीं का नाम सामवेद है। यजुर्वेद में यज्ञ के समय पढ़ने के लिये देवताओं की स्तुति के मन्त्र संग्रह किये गये हैं। अथर्ववेद में जादू-टोना और बीमारियों के इलाज की चर्चा है। यह वेद अधिक प्राचीन नहीं है।

"वेद किसी एक व्यक्ति ने नहीं लिखे। प्रत्येक सूक्त में जिस ऋषि का नाम है, वही उस सूक्त का रचियता है। कहते हैं, समाधि की अवस्था में ऋषियों को ऋचाओं का ज्ञान मिला। वेद काल में लिखने की प्रथा नहीं थी—इसलिये महाकवि व्यास ने सारी ऋचाओं को एकत्रित किया और उन्हें ऊपर के चार ग्रन्थों में बांट दिया। इसीलिये व्यास को वेद व्यास कहा गया है।"

इसी प्रकार का प्रलाप ब्राह्मण ग्रन्थों के बारे में किया है। इस सम्बन्ध में वे कहते हैं—"वेदों से ब्राह्मण तक "कर्मकाण्ड" कहलाता है।" आरण्यक और उपनिषदों के बारे भी बकवास कर रखी है। पुराणों के बारे में लिखते हुए अवस्थी जी कहते हैं—"वैदिक युग उत्तर भारत तक सीमित था।" बाद में राजाओं ने दक्षिण भारत को भी जीता और यहाँ की संस्कृति वहाँ तक गई।

रामायण के बारे में लिखते हुए तो अवस्थी जी ने हद कर दी। लिखते हैं—"राम जन्म के पहले ही वाल्मीकि ने रामायण लिख दी थी" एक ओर तो वेदों में इतिहास बताया दूसरी ओर इस ऐतिहासिक ग्रन्थ रामायण को कहीं का न रखा। महाभारत के बारे में अवस्थी जी की रिसर्च कम तगड़ी नहीं। कहते हैं—"महाभारत के तीन रूप हैं। पहले वह छोटा था। फिर बड़ा हुआ।"

अपने विशेषांक की तारीफ में वे लिखते हैं कि चूंकि इन सारे ग्रन्थों का पढ़ना आसान नहीं इसलिये वे "इसमें इन सबसे चुनी हुई सामग्री का संकलन अपने "नन्दन" में कर रहे हैं।

"अश्वमेध यज्ञ" के बारे में अवस्थी जी की खोज कमाल की है—"अश्वमेध यज्ञ जनता की भलाई के लिये राजाओं द्वारा किया जाता था। ऋग्वेद की ऋचाओं से पता चलता है कि यह ऋग्वेद की रचना से पूर्व भी प्रचलित था। अश्वमेध की व्याख्या करते हुए यह निर्बुद्ध लेखक लिखता है—"घोड़े को छोड़ते ही राजा यज्ञ आरम्भ कर देते थे और पूरे वर्ष तक यह यज्ञ चलता रहता था। घोड़े के वापस आने पर उसे यज्ञ मण्डप में लाया जाता था। उसके साथ बकरे भी होते थे। यज्ञ मण्डप में उसको अग्नि की तीन परिक्रमाएँ करवायी जाती और फिर बकरों के साथ अश्व का बलिदान

कर दिया जाता था ।

इस प्रकार की अनर्गल बकवासों से अवस्थी जी का यह विशेषांक भरा पड़ा है—इन बेहूदे लेखों के साथ साथ वैदिक कालीन देवी देवताओं के नाम पर बड़े गन्दे, बीभत्स और भोंड़े चित्र इन्होंने छाप रखे हैं । मैं पाठकों से प्रार्थना करूंगा कि यदि सुविधा हो तो कहीं से मंगा कर इसका अंक वे स्वयं देख लें । और केवल इसी अंक में ऐसा किया हो ऐसी बात नहीं । इन काले अंग्रेजों का यह सुनियोजित षड्यन्त्र है और इसीलिये इन्हें इन पदों पर बैठाया गया है ।

क्या इसमें जरा भी सन्देह हो सकता है कि वे और इनकी बिरादरी के सैकड़ों दूसरे लेखक, सम्पादक ईसाइयों के एजेन्ट नहीं हैं ? क्या इस प्रकार के जहरीले साहित्य के द्वारा इस राष्ट्र में वैदिकधर्म और वैदिक मान्यताओं को समूल नष्ट करने का कुत्सित प्रयास नहीं किया जा रहा है । इस राष्ट्र की मूलभूत मान्यताओं के विरुद्ध प्रचार करने वाला क्या राष्ट्रघाती और देशद्रोही नहीं माना जायगा ? और क्या इन राष्ट्रघातियों से हमारा वही व्यवहार नहीं होना चाहिये जो हमारे वीर जवानों ने पाकिस्तानी दरिन्दों से किया था ? ये कुछ प्रश्न हैं जिनका प्रत्येक वैदिक धर्मी को ईमानदारी से उत्तर देना होगा ।

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के संरक्षण में

व्यायाम शिक्षण शिविर

१—ग्राम बय्यांपुर, सोनीपत में पं० मनुदेव जी व्यायाम शिक्षक की अध्यक्षता में व्यायाम शिक्षण शिविर का आयोजन १९ जून से २९ जून तक हो रहा है । अनेक युवक आसन प्राणायाम लाठी आदि भारयीय व्यायाम तथा आर्य समाज के विचारों का शिक्षण प्राप्त कर रहे हैं :

—मा० रत्न लाल आर्य

२—ग्राव जूवां में श्री देवव्रत जी व्यायामाचार्य की अध्यक्षता में ११ जून से २३ जून तक व्यायाम शिक्षण शिविर का आयोजन हुआ । ५० युवकों ने भारतीय व्यायामों का शिक्षण प्राप्त कर आर्य युवक परिषद् में प्रवेश किया ।

—धर्मपाल आर्य

३—बहादुरगढ़ में आत्मशुद्धि आश्रम के तत्वाधान में श्री देवव्रत जी व्यायामाचार्य की अध्यक्षता में २४ जून से ३० जून तक शिविर का आयोजन हो रहा है अनेक युवकों ने अति उत्साह से शिविर में भाग ले रहे हैं ।

—धर्मवीर सन्तोषी

४. पटौदी गुड़गांवा में श्री देवव्रत जी व्यायामाचार्य की अध्यक्षता में १ जुलाई से ९ जुलाई तक युवक शिक्षण शिविर का आयोजन होगा । शिविर में पहलवान भवानीसिंह आर्य भी अपने शारीरिक बल का प्रदर्शन करेंगे ।

—भगत मंगतुराम आर्य

५—ग्राम बालदन रिवाड़ी में पं० मनुदेव जी व्यायाम शिक्षक की अध्यक्षता में २ जुलाई से १२ जुलाई तक शिविर का आयोजन हो रहा है । क्षेत्रीय आर्य कार्यकर्त्ता विशेष उत्साह से भाग ले रहे हैं ।

—राम करण आर्य

६—ग्राम धनोन्दा महेन्द्रगढ़ में स्वामी योगानन्द जी व्यायाम शिक्षक की अध्यक्षता में २५ जून से ७ जुलाई तक शिविर का आयोजन हो रहा है । ७ जुलाई को प्रो० श्याम जी दीक्षान्त भाषण के लिये पहुंच रहे हैं ।

—मा० तुलसीराम आर्य

● रामसिया सिंह

हम गरीब क्यों हुए ?

'गरीबी' सापेक्षिक शब्द है। दुनिया के अनेक देशों की तुलना में हिन्दुस्तान सम्पत्ति, शक्ति, स्वास्थ्य, जीवन-स्तर आदि के मामलों में बहुत पीछे है। भारत में प्राकृतिक साधन भारी मात्रा में है। केवल बिहार और बंगाल में ही ६० अरब टन कोयला मौजूद है, इसमें से २० अरब टन उपयोग में आ सकता है। पूरे भारत में ३ अरब टन लोहा है जब कि इंगलिस्तान में सवा दो अरब टन और जर्मनी में ६ अरब ३७ करोड़ टन लोहा है। केवल अमरीका और फ्रांस में ही भारत से अधिक लोहा है। अमरीका में करीब १० अरब टन और फ्रांस में लगभग साढ़े चार अरब टन लोहा है। पूरे भारत में २५ करोड़ टन बाक्साइड मौजूद है। भूगर्भ में छिपी दौलत वर्तमान पूंजीवादी व्यवस्था में उभर नहीं पा रही हैं। इसी तरह जलशक्ति के मामले में भी भारत बहुत समृद्ध है। १९३९ में अमरीका अपनी जलशक्ति का ५३ फीसदी, जापान ७२ फीसदी और फ्रांस ८८ फीसदी हिस्सा उपयोग करता था जब कि भारत केवल १.३ फीसदी हिस्सा उपयोग कर पाता था (वर्ल्ड अलमैनेक, १९३९)। आजाद भारत में बड़े बांधों के प्रयत्न किये गए हैं, पर वे भी नाकाफी हैं।

भारत में एक ओर तो गाँवों का स्वावलम्बी आर्थिक जीवन टूट चुका है, दूसरी ओर शहरों में उत्पादन के साधनों का केन्द्रीकरण हो गया है। पूँजी, उद्योग आदि पर पूँजीपतियों का एकाधिकार है, किसान-मजदूर वंचित हैं। सरकारी और गैर सरकारी कारखानों में मजदूर और साहब वर्ग के बीच लगभग समान फर्क है। तब यह संशय उत्पन्न होता है कि राष्ट्रियकरण का बहु-प्रचारित अस्त्र क्या वस्तुतः गरीबी को समाप्त करने में सक्षम हो सकता है या नहीं।

हिन्दुस्तान में ५० लाख लोग ही आर्थिक और राजनीतिक मामलों में सर्वेसर्वा हैं, बाकी दलित, शोषित ४७.५० करोड़ जन समूह निरीह दर्शक बना हुआ है। देश की ९८ फीसदी आबादी न अखबार पढ़ पाती है, न उसकी गरीबी दूर करने वाली कोई राजनीति ही निर्णायक मोड़ ले पाती है। भारत की एक खरब सत्तर अरब रुपये सालाना आमदनी का एक तिहाई हिस्सा मुट्ठी भर पूंजीपतियों, सेठों, सामन्तों और साहबों की जेब में जाता है। बाकी में आबादी का ९८ फीसदी हिस्सा गुजारा कर रहा है। भारत की गरीबी का रहस्य इन्हीं मुट्ठी भर लोगों के हाथ में दौलत के केन्द्रीकरण में छिपा हुआ है जो उत्पादन और उपभोग दोनों मामलों में राजशक्ति का उपयोग करने में समक्ष हैं और करते हैं। गुलाम भारत में जिन पूंजीपतियों ने लड़ाई में अंग्रेजी सरकार को ८० करोड़ रुपये की धनराशि प्रदान की थी, उन्हीं पूंजीपतियों के द्वारा चीनी आक्रमण के कारण जब देश की आजादी जाने का खतरा उत्पन्न हो गया था, तब केवल ८ करोड़ रुपये की धनराशि राष्ट्रीय सुरक्षा कोष में प्रदान की गई। इसी से अन्दाजा लग सकता है कि भारत का पूंजीधारी वर्ग क्या चाहता है।

विश्व की आधी आबादी रूसी और अमरीकी गुट की है (चीन सहित) बाकी अफ्रीकी, एशियाई आदि गरीब राष्ट्रों की। रूसी-अमरीकी गुट के पास संसार की ९४ फीसदी दौलत है, बाकी आधी आबादी ६ फीसदी पर गुजारा कर रही है। हथियार के मामले में भी भीषण गैर बराबरी है। रूसी-अमरीकी गुट के पास ९६ फीसदी हथियार हैं, बाकी के पास ४ फीसदी। यह अन्तर्राष्ट्रीय असमानता विश्व की गरीबी का सबसे बड़ा कारण है। रूस और अमरीका चाहें तो दुनिया की गरीबी कुछ सप्ताहों में ही मिटा सकते हैं—किन्तु विश्व

की सम्पत्ति के या तो राज्य में या पूंजीपतियों के हाथों में केन्द्रीकरण के कारण गरीबी बरकरार है।

मौजूदा अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में पूंजीवादी और साम्यवादी दोनों ही व्यवस्थाएँ गरीबी को बढ़ाने में उत्तरदायी हैं। एक देश के श्रम का दूसरे देश में शोषण होता है। उपनिवेशवादी तथा अर्थ और जमीन की साम्राज्यशाही पद्धति ने मार्क्सवादी सिद्धान्तों को भी चकनाचूर कर दिया है। हिन्दुस्तान के श्रमिक का शोषण अमरीकी पूंजीपतियों के विशाल कारखानों में भी हो रहा है। इसी तरह लंदन और वाशिंगटन की दौलत अभी भी अनेक अफ्रीकी-एशियाई देशों के श्रम का शोषण कर रही है। असम के चायबागानों में १० लाख श्रमिक हैं जिन की मेहनत की फसल पर विदेशियों का कब्जा है।

१९१४ में हिन्दुस्तान की गरीबी का चित्र खींचते हुए प्रमुख अर्थशास्त्री शाह और खम्भाता ने लिखा था—

'भारतीयों की औसत आय इतनी होती है कि उससे या तो आबादी के हर तीन आदमियों में से दो को रोटी दे दी जाय, या पूरी आबादी को जितनी बार भोजन की आवश्यकता होती है उनमें हर तीन बार में से केवल दो बार उसे रोटी दी जाय, और इतना भी सिर्फ इस शर्त पर मिल सकता है कि पूरी आबादी नंगे घूमना कबूल करे, बारहों महीने घर के बाहर खुले में रहे, किसी प्रकार के मनोरंजन या खेलकूद में भाग न ले, तथा—भोजन के सिवा—और वह भी सबसे नीचे स्तर के, सबसे ज्यादा मोटे ढंग के और सबसे कम पोषण-शक्ति वाले भोजन के सिवा—और किसी भी चीज की मांग न करे।'

दुनिया के किसी भी भाग में रहने वाले व्यक्तियों में सबसे कम भारतवासियों को ही पोषण शक्ति उपलब्ध है। पाश्चुर इंस्टीट्यूट, कुन्नूर में अभावजन्य बीमारियों के अनुसंधान के संचालक लैफ्टिनैण्ट कर्नल एच० मैकहैरिसन ने कहा था—"भारत में जनता जिन अनेक अभावों से दुखी है, उनमें शायद सबसे बड़ा पोषण-शक्ति का अभाव है।' राष्ट्रसंघ के खाद्य तथा कृषि संगठन ने १९५१ में ३४ देशों की पोषण सम्बन्धी स्थिति की जाँच कर जो प्रतिवेदन किया था, उससे पता चलता है कि १० देशों में प्रतिदिन पोषण का औसत स्तर ३००० कैलोरी फी आदमी से अधिक था। २२ देशों में २००० से ३००० कैलोरी के बीच था। इस सूची में सबसे नीचे इण्डोनेशिया और हिन्दुस्तान का स्थान था। जिनमें पोषण-स्तर २००० कैलोरी से भी नीचे था। सं० राष्ट्र संघ की १९५३ की वार्षिकी में हिन्दुस्तान में पोषण स्तर को दुनिया में सबसे नीचा बताया गया है। वार्षिकी के अनुसार हिन्दुस्तान में हर रोज हर व्यक्ति को केवल १५९० कैलोरी भोजन ही मिल पाता है।

जहाँ तक देश के मजदूरों का सवाल है स्थिति और भी भयावह है। व्हिटले कमीशन ने अपने प्रतिवेदन में बताया था—

'सफाई की तरफ जो लापरवाही बरती जा रही है, वह अक्सर सड़ते कूड़े के ढेरों और मैले से भरे गड्ढों के रूप मे जाहिर होती है और पाखानों के अभाव के कारण हवा और मिट्टी में गन्दगी बढ़ जाती है मकान के नाम पर अक्सर केवल एक कोठरी होती है जिसकी न तो कोई नींव होती है, न उसमें खिड़कियां होती हैं और न ही हवा के आने-जाने का काफी रास्ता होता है। कोठरी का दरवाजा इतना नीचा होता है कि बिना झुके उसमें से निकला नहीं जा सकता। पर्दा करने के लिए मिट्टी के तेल के पुराने टिनों की दीवार उठा दी जाती है और कोई पुराना बोरा टाँग दिया जाता है. इस तरह की कोठरियों में इन्सान पैदा होते हैं, सोते और खाते हैं, जीवन बसर करते हैं और मर जाते हैं।'

रहन सहन के सम्बन्ध में आज से तीस वर्ष पहले की स्थिति आज भी बनी हुई है। १९३१ की जनगणना से बम्बई का जो खाका उभारा था वह द्रष्टव्य है—बम्बई की आबादी के एक-तिहाई लोग एक-एक कोठरी मे पांच से भी अधिक की तादाद में रहते थे। एक कोठरी में ६ से लेकर ९ आदमी तक रहने वालों की संख्या २,५६,३०९ थी। एक कोठरी में १० से लेकर १९ तक रहने वालों संख्या ८,१३३ थी; और एक कोठरी में बीस या उससे भी अधिक रहने वालों की संख्या १५,४९० थी।

हिन्दुस्तान की आर्थिक परिस्थितियों की सुविख्यात विदुषी वेरा एंस्टे के अनुसार—"भारत में जितने लोग मरते हैं, उनमें चार में से तीन आदमी 'गरीबी की

बीमारियों' से मरते हैं।" १९५३ में प्रकाशित 'समुद्र पार के देशों का आर्थिक सिंहावलोकन' नामक पुस्तक में भारत की भूखमरी का चित्र देखिए—

'अनुमान लगाया गया है कि पूरे भूखण्ड में कम-से-कम १० करोड़ आदमी हर साल मलेरिया से बीमार पड़ते हैं; और इस मर्ज से मरने वालों की संख्या भारत में हर साल शायद १० या १५ लाख तक पहुंच जाती है। अनुमान किया जाता है कि हर साल लगभग २५ लाख आदमी तपेदिक से बीमार रहते हैं और अकेले इस मर्ज से हर साल ५ लाख आदमी मर जाते हैं।.....

खराब भोजन या कम भोजन मिलने के कारण जनता के एक काफी बड़े भाग के बदन में जीवन-शक्ति और बीमारियों से बचने की ताकत कम हो जाती है। लोगों के भोजन की जाँच-पड़ताल करने पर पता चला कि ३० प्रतिशत परिवार ऐसा भोजन करते हैं जो बदन में आवश्यक शक्ति पैदा करने के लिए अपर्याप्त होता है।' १९२७-२८ में बंगाल के स्वास्थ्य-संचालक ने अपने प्रतिवेदन में लिखा था—

'बंगाल में आजकल के किसानों का अधिकांश भाग ऐसा भोजन खाने लगा है जिसे खाकर चूहे भी पाँच सप्ताह से ज्यादा जिन्दा नहीं रह सकते।'

शाह और खम्भाता ने सिद्ध किया था कि राष्ट्रीय आय का एक-तिहाई हिस्सा आबादी के केवल १ प्रतिशत लोग ही हड़प जाते हैं; भारत की ६० फीसदी आबादी तो राष्ट्रीय आय का केवल ३० प्रतिशत भाग ले पाती है। इसी प्रकार साइमन कमीशन की रपट के अनुसार भी भारत की आबादी के विशाल हिस्से की औसत आय प्रतिदिन एक पेनी से लेकर सवा पेनी तक थी। ब्रिटिश भारत की विषम परिस्थिति न्यूनाधिक आज भी विद्यमान है। आज भी भारत की ६५ प्रतिशत आबादी हर दिन २० पैसे में गुजारा करती है। आज भी देश की एक-तिहाई आमदनी ५० लाख बड़े लोग हड़प जाते हैं, बाकी का बचाखुचा निचले गरीब तबके तक पहुंच पाता है।

बढ़ती हुई आबादी की थोथी दलील

हिन्दुस्तान की विकराल गरीबी का कारण कुछ लोग बढ़ती हुई आबादी दे देते हैं। आज इस दलील की चीख शासन की ओर से भी खूब प्रचारित की जा रही है। परिवार-नियोजन का हौवा खड़ाकर यह दिखाने का प्रयत्न किया जा रहा है कि गरीबी का एकमात्र कारण आबादी बढ़ना है। यदि यह सही भी हो तो क्या यदि आबादी आज से आधी होती तो २७ करोड़ को ३ आना के बजाय ६ आना रोज ही न मिल पाता। तब इस भीषण गरीबी का क्या कारण दिया जाता? वस्तुतः आबादी के जरूरत से ज्यादा बढ़ जाने के कारण पूंजीवादी राज्यों में जनता की गरीबी के बढ़ने की माल्थस की धारणा सर्वथा उपयुक्त नहीं कही जा सकती। भारत की आबादी रफ्तार यूरोप के कई देशों की अपेक्षा मन्द रही है। १८७० से १९१० के बीच के आंकड़े देखिए—

आबादी में प्रतिशत वृद्धि—रूस ७३.९, हांलैंड ६२.०, जर्मनी ५९.०, इंगलैंड आर वेल्स ५८.०, बेल्जियम ४७.८, भारत १८.९; योरुप का औसत ४५.४।

इस बीच फ्रांस के अलावा यूरोप के हर देश की अपेक्षा हिन्दुस्तान की आबादा कम रफ्तार से बढ़ी है।

'१८७१ से लेकर १९४१ तक भारत की आबादी के बढ़ने की औसत रफ्तार लगभग ०.६० प्रतिशत सालाना रही। १८५० से लेकर १९४० तक के काल में पूरी दुनिया की आबादी के बढ़ने की रफ्तार का जो अनुमान लगाया गया है (अर्थात् ०.६९ प्रतिशत), उससे भारत की रफ्तार थोड़ी कम थी। प्रो० किंग्सले डेविस : भारत और पाकिस्तान की आबादी, १९५१)

उत्पादनका केन्द्रगामीतरीका और आर्थिक जकड़

गरीबी का रहस्य बढ़ती हुई आबादी नहीं, बल्कि भारत के उत्पादन के केन्द्रगामी तरीके में छिपा हुआ है। साम्राज्यवादी शासन से उद्भूत पूंजीपंथी व्यवस्था में पोषित पल्लवित होने वाली परिस्थितियाँ ही मुख्य रूप से हिन्दुस्तान की गरीबी के लिए जिम्मेदार हैं। भारत और यूरोप की आर्थिक प्रसार स्थिति में निर्णायक अन्तर आबादी की रफ्तार के कारण नहीं है, वरन् उत्पादन के विस्तार और आर्थिक प्रसार की वे परिस्थितियाँ हैं जो योरप में परिपक्वता की ओर अग्रसर हो चुकी हैं; किन्तु भारत में पूंजीपंथी शासन के कारण अवरुद्ध है। यह अवरोध साम्राज्यवादी शासन ने सुनियोजित रूप से उत्पन्न भी किया था, और आज भी पूंजीपंथी शासन उसे

बढ़ाता जा रहा है। विदेशी शासन ने देश की दौलत को खींचा औद्योगिक विकास को भी अवरुद्ध किया।

आज उत्पादन के तमाम बड़े साधन इजारेदारों के कब्जे में है। इन मायापतियों के चंगुल से निकलकर जब तक माया तमाम समाज में नहीं फैलती, छोटे-छोटे शक्ति-चलित उद्योग-धन्धों के द्वारा गांव-गांव में औद्योगिक उत्पादन का जाल नहीं बिछ जाता, तब तक उत्पादन का यह अधोगामी केन्द्रीभूत तरीका भारत की गरीबी को और भी बढ़ाता जायगा। औद्योगिक शक्ति करोड़ों और अरबों के कारखानों के साथ-साथ सैकड़ों और कुछ हजारों के छोटे ग्रामीण उद्योगों में जब तक नहीं फैलती, पूंजीपंथी शोषण रुक नहीं सकता और आर्थिक जकड़न से मुक्ति कदापि नहीं मिल सकती। राज्यकेन्द्रित उत्पादन और तमाम उत्पादन-साधनों के राष्ट्रीयकरण से भी नौकरशाही और राज्य की दासता का खतरा ही अधिक होगा। जरूरी है कि उत्पादन यन्त्र पर उपभोक्ता और उत्पादक का सन्तुलन कारी आधिपत्य हो।

आबादी का विशाल भाग ढाई हजार वर्ष पूर्व की स्थिति में है, उसी पुरातन प्रणाली से जमीन को कुरेदकर कुछ उपजा लेता है। हिन्दुस्तान में खेती लायक जितनी जमीन हैं, उसका एक-तिहाई भाग अभी भी टूटा नहीं है। आबादी का चौथाई भाग जो बेरोजगारी का शिकार है, इस भूभाग को तोड़कर खाद्य समस्या को आसानी से हल कर सकता है। फिलहाल २९ लाख आदमी ४० लाख एकड़ जमीन को तोड़कर खेती करना शुरू करें, तो देश नई जान आ सकती है। मगर इसे तोड़ने से आज का कानून भूमिहीनों को क्यों रोक रहा है। जाहिर है यदि गरीब के पास उत्पादन का कोई जरिया आ पहुँचा तो वह आज इजारेदारों को माटी के मोल अपनी मेहनत और लोहू नहीं बेच सकेगा। मेहनत की महँगाई को हाँकने के लिये ही पूंजीपंथी तानाबाना, जो आज शासन से लेकर समाज और धर्म में भी छाया हुआ है, देश के छिपे साधनों को बाहर नहीं आने देता और बनावटी भुखमरी, अकाल और बेरोजगारी बनाए हुए है।

विदेशी पूंजीवाद के द्वारा भारत की ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था जड़मूल से चकनाचूर कर दी गई, और पूंजी-वादी शोषण का प्रसार गांव-गांव में भी हो गया। अंग्रेजों के पहले के विजेताओं ने भारत की अर्थव्यवस्था पर आमूल चोट करने की हिम्मत नहीं की। किन्तु इंगलैंड ने तो भारतीय समाज के पूरे ढांचे को ही छिन्न-भिन्न कर दिया और उसकी जगह कोई नई समाज रचना भी नहीं ले सकी।

किन्तु इस सन्दर्भ में एक चीज याद रखने की है कि इसमें जहाँ एक स्वतन्त्र अर्थव्यवस्था छिपी हुई थी, वहीं इसमें रूढ़िवादी, पुरातनपंथी, प्रतिक्रियावादी समाज और अर्थव्यवस्था भी छिपी हुई थी, जो हर नूतन उत्पादन के साधन औ प्राविधि का विरोध करती थी और जिस ने गरीब तबके को सदा के लिए गरीबी में जकड़ दिया; जहाँ अर्थ का उत्पादन कर्म से घटने-बढ़ने के बजाय भाग्य की धुंधली परिधि में जकड़ गया और ऊर्ध्वगामी शक्तियाँ सहस्राब्दियों तक सुप्त पड़ी रहीं।

कई शताब्दियों से भारत अपना कपड़ा दुनियां के विभिन्न स्थानों को भेजता आया था। किन्तु १८५० तक तो उल्टे उसे इंगलैण्ड से कपड़ा मंगाना पड़ने लगा। १८१४ में इंगलैण्ड में बने कपड़े की खपत १० लाख गज से कुछ कम थी १८३५ तक यह बढ़कर ५१० लाख गज से कुछ अधिक हो गई। दूसरी ओर इस काल में भारत में बने सूती कपड़ों के कटपीस की खपत १२ लाख से गिरकर ३ लाख ६ हजार हो गई। १८४४ तक आते-आते इंगलैण्ड में केवल ६३,००० कटपीस की खपत हो पाई। उद्योग-धन्धों के विनाश का यह एक नमूना है। ब्रिटेन की औद्योगिक नीति द्रुतगति से शोषण की थी—अर्थात् भारत को ब्रिटिश पूंजीवाद का एक ऐसा खेतिहर उपनिवेश बनाना जो अपना कच्चा माल दिया करे और उससे कल-कारखानों का बना माल खरीदे। मैंचेस्टर के चैम्बर आफ कामर्स के अध्यक्ष श्री थामस बैजले ने १८४० में ब्रिटिश नीति स्पष्ट करते हुए कहा था—"भारत एक बहुत ही विशाल देश है और वहाँ की आबादी इतना अधिक अंग्रेजी माल खरीदा करेगी कि उसकी कोई सीमा न होगी। हमारे भारतीय व्यापार की पूरी समस्या यह है कि हम जो माल वहां भेजने को तैयार हैं, उसकी कीमत क्या भारत के लोग अपनी धरती की पैदावार देकर अदा कर सकते हैं।" १८६० में सर हेनरी कोटन ने कहा—

"ऐसा कोई साल नहीं जाता जब कमिश्नर और जिलों के अफसर इस बात की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित नहीं करते कि देश के सभी हिस्सों में उद्योग-धन्धों से जीविका चलाने वाले वर्ग चोट होते जा रहे हैं।"

१९११ की जनगणना से पता चलता है कि यह प्रक्रिया यथावत् चालू थी। आजाद हिन्दुस्तान में अभी रफ्तार पुरानी ही है।

अनाज का निर्यात बनाम अकाल और मौत

डब्ल्यू० एस० लिली ने अपनी पुस्तक "भारत और उसकी समस्या' में अकाल से मरने वाले लोगों का हवाला देते हुए सरकारी आंकड़ों के आधार पर लिखा है—

१८०० २५ के सालों में	१० लाख
१८२५-५० में	४ लाख
१८५०-७५ में	५० लाख
१८७५-१९०० में	१,५० लाख
लोग अकाल से मरे	कुल २१४ लाख

एक शताब्दी में २ करोड़ १४ लाख लोग भूख से तड़ा कर अपनी जान खो बैठे और दूसरी ओर भारत का अनाज विदेशों को भेजा जाता था। १८४९ में ८ लाख ५८ हजार पौंड, १८५८ में ३८ लाख पौण्ड, १८७७ में ७९ लाख पौण्ड और १९०१ में ९३ लाख पौण्ड कीमत का अनाज भारत से बाहर भेजा गया। १९१४ में ११३ लाख पौण्ड कीमत का अनाज विदेशों को भेजा गया। क्या यह पूंजीवाद के क्रूरतम घृणित स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए काफी नहीं है कि एक ओर तो लाखों लोग भूख से दम तोड़ रहे हैं और दूसरी ओर पूंजीपति अपनी तिजोरी और वजनी करने के लिए अनाज दूसरे देशों को भेज रहे हैं?

भारत की गरीबी का बहुत बड़ा कारण यहाँ के बीस करोड़ लोगों का निठल्ला बैठा रहना है। अमरबेल की तरह दूसरे लोगों की कमाई पर जीने वाली यह करोड़ों की जनशक्ति काम करे, तो देश की काया पलट दे। भारतीय अकाल कमीशन ने १८८० में अपनी रपट में लिखा था—

"भारत के लोगों की गरीबी और अन्न संकट के समय उनको जिन खतरों का सामना करना पड़ता है, उनकी जड़ में सबसे बड़ी बात यह शोचनीय परिस्थिति है कि आबादी के अधिकांश भाग का एकमात्र व्यवसाय खेती है, और मौजूदा बुराइयों को दूर करने के लिए ऐसा कोई भी उपाय पूरी तरह कारगर नहीं हो सकता जिसमें लोगों के लिए तरह-तरह के बहुत से धन्धे जारी करना शामिल नहीं हो। कारण कि आज जो फालतू आबादी खेती के धन्ने में लगी हुई है, उसे वहाँ से हटाने और उद्योग-धन्धों में या ऐसे ही किसी और काम में लगाने का यही तरीका है।"

बिना उद्यम के दूसरों की कमाई पर जीने वाले भारत के निवासी देहातों में ५४.९ प्रतिशत और ५ हजार से अधिक आबादी वाले शहर में ६६.५ प्रतिशत हैं। हमारी गरीबी को बढ़ाने में इस जनसमूह का भार शोचनीय है। शहरी औरतें करीब ८८.९ प्रतिशत और देहात में करीब ६८.९ प्रतिशत औरतें निठल्ली रहती हैं। इसका सीधा मतलब हुआ जब दो लोग काम करते हैं तो तीसरा मुफ्त में ही उनकी रोटी छीन लेता है।

	१८४२	१८५२	१८६२	८१७२	१९११	१९२२	१९[illegible]
रोजाना मजदूरी (बिना भोजन के) आनों में	१	$1\frac{1}{2}$	२	३	४	४-६	८-[illegible]
चावल का भाव (फी रुपया) सेरों में	४०	३०	२७	२३	१५	२३	१[illegible]

खेतिहर मजदूरों की भयावह स्थिति

१९५१ में भारत में खेतिहर मजदूरों की संख्या ३ करोड़ ५० लाख थी। यह संख्या खेती में काम करने वालों की ३/१ थी। (देखिए लेबर गजट, नवम्बर १९५४)। १८४२ से १९२२ तक ८० वर्षों का इतिहास उनकी कठिन स्थिति पर रोशनी डालता है। इस बीच उनकी आय देखिये :

१९२२ तक मजदूरी जहाँ ४ या ६ गुना बढ़ी, चावल का भाव ८ गुना बढ़ गया। आज तो हर खेतिहर मजदूर औसतन ८-१० आना या ८-१० छटाँक चावल हर दिन कमा पाता है जिस पर उसे अपने परिवार का भोजन, कपड़े आदि का सारा खर्च चलाना पड़ता है। इतने पर भी साल में १०० दिन से भी ज्यादा उसे बेकार रहना पड़ता है।

लगान और कानून का जादू

सरकारी लगान और कर्ज के बोझ से दबा हुआ किसान ब्रिटिश भारत में एक रपट के अनुसार ४२ रु० सालाना कमा पाता था। 'दक्षिण भारत के एक गाँव का अध्ययन' में एन० एस० सुब्रह्मण्यम ने गाँव के प्रत्येक निवासी की सालाना औसत आय ३८ रु० दर्शायी है। सरकार की मालगुजारी, साहूकार का सूद और जमींदार का लगान देने के बाद उसके पास १३ रु० बच पाते थे। अर्थात् आमदनी का दो-तिहाई हिस्सा दूसरों के लिए कमाता था।

फ्रांसीसी क्रान्ति के पूर्व कार्लाइल ने वहाँ के किसानों की दशा का चित्र इन शब्दों में खींचा था—

'विधवा अपने बच्चों का पेट भरने के लिए जंगल में जड़ें चुन रही हैं; और होटल के बरामदे में नजाकत के साथ लेटे हुए चिकने-चुपड़ भद्र पुरुष के पास एक ऐसा जादू है जिससे वह बुढ़िया की हर तीसरी जड़ छीन लेगा और कहेगा कि यह लगान और कानून का जादू है।"

अंग्रेजी राज्य में तो तीन जड़ों में से दो जड़ें छीनने का जादू था। आज भी आजाद हिन्दुस्तान में शोषकों का यह जादू किसी न किसी रूप में चल रहा है। बड़े बड़े कारखानों में पूंजीपतियों का जादू, खेतों में बड़े-बड़े किसानों का जादू राजनीति में अंग्रेजी दां बड़ी जातियों का जादू, समाज में कट्टरपंथी कुरीतियों का जादू आज भी देश के साढ़े सैंतालीस करोड़ को पीस रहा है। केवल मुट्ठी भर ५० लाख अपनी जादू की छड़ी घुमाकर आज भी करोड़ों को भेड़-बकरी की तरह हाँक रहे हैं। १५ अगस्त १९४७ का दिन भी इस जादुई छड़ी को शोषक श्रेणी के हाथों से नहीं छीन सका।

जातपांत की चक्की

पिछले २७०० साल से भारतीय समाज को जात-पांत ने इस कदर बाँध रखा है कि इसकी घुटन सभी महसूस करते हैं, मगर इसके बाहर नहीं निकल पाते। जन्म, विवाह, मौत सभी जातपांत से जुड़े हैं। इसका भयंकर परिणाम हुआ समाज की बौद्धिक और भौतिक शक्ति उच्च जातियों के पास सिमट गई और करोड़ों वनवासी, कर्मकार, उद्योगों में लगे व्यक्तियों को उनका दास मात्र निरूपित किया गया। यह व्यवस्था ही कुछ ऐसी जादुई है कि श्रम या उत्पादन का सारा भार अद्विज पर पड़ा और उपभोग का सारा अधिकार द्विजों का। स्मृतियाँ इन रहस्यों से भरी पड़ी हैं। जिन्दगी भर नीची जातियां क्यों न कमाती रहें उनकी कमाई तो समाज के चन्द शोषकों की ही जेब में जाती थी। इस शोषण के औचित्य को भाग्यवाद, कर्मवाद की डोरों से जकड़ कर धार्मिक, ईश्वरीय और नैतिक स्वरूप प्रदान करने में भी शोषक श्रेणी नहीं हिचकचाई।

परिणामतः एक ओर जहाँ श्रमिकों को कहा गया—'धन माया है, उससे दूर रहो, दूसरी ओर उसी धन से मालामाल हो रहे हैं समाज के कर्णधार। निचले तबके की चिन्तनशक्ति को कुंठित करने के लिये वेदों का पठन भी उनके लिए मना कर दिया गया। शिक्षा तो कोसों दूर थी ही। फिर वर्ग चेतना और क्रान्ति का सपना भी वे कैसे देख सकते थे। आज भी इस भ्रष्ट नीति के अवशेष भारत के गांवों में देखे जा सकते हैं। जिन्दगी भर घड़े, बांस की डलिया, जूते या हल बनाने वाला जिन्दगी भर गुलाम जैसा जिया और देश आर्थिक सड़न से कभी उभर न सका, समाजशक्ति, धर्मशक्ति, अर्थशक्ति, मानसिक शक्ति, पंडोंपुरोहितों की शक्ति और साथ-साथ रक्षा-

शक्ति सभी का सहारा उच्च श्रेणी निम्न श्रेणी को दबाने में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से ले सकती थी और लेती रही।

लेकिन जातपांत की चक्की बिना किसी को पीसे रुक नहीं सकती। जब छोटी जातियाँ पिस गई, तब बड़ी जातियों के अन्दर भी इसने गरीबों को पीसना शुरू किया।

गरीबी कैसे दूर हो ?

भारत की गरीबी दूर करने के लिए हमें समस्या को एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में भी देखना पड़ेगा। इस समस्या के हल के लिए निम्न कदम आवश्यक हैं।

(१) बालिग मताधिकार पर आधारित विश्वसंसद का होना जरूरी है, वह हथियारों पर बन्दिश लगायेगी और पूंजीवाद-साम्यवादी देशों की दौलत के केन्द्रीकरण को ढीला कर सकेगी।

(२) भारत की ८२ फीसदी आबादी खेती में लगी है, पर हमें अनाज की भीख माँगनी पड़ती है। इसका मुख्य कारण है किसान को पैदावार का उचित मूल्य न मिलना। किसानों के श्रम के अप्रत्यक्ष रूप से करोड़पतियों द्वारा शोषण के कारण ही खेती पिछड़ा है। सारी खेती के लिए सिंचाई का इन्तजाम हो, किसान को फसल का उचित दाम मिलें और १६ फीसदी से अधिक मूल्य दो फसलों के बीच न घटे बढ़े तभी किसान की हालत सुधर सकती है। आज हिन्दुस्तान की सब सरकारें करीब ४० अरब रुपया सालाना खर्च कर रही हैं, इसमें से करीब २० अरब रुपया खपत के आधुनीकरण में खर्च हो जाता है। इस खर्च को रोककर या कम करके नये कारखाने और खेती की ओर बढ़े तो नई दौलत उत्पन्न हो सकती है।

(३) आजादी के समय चीन और भारत में इस्पात का उत्पादन लगभग बराबर था मगर १९६२ तक भारत हर साल ३० लाख टन इस्पात उत्पादन बढ़ा पाया जबकि चीन ने १५० लाख टन तक बढ़ा लिया। भारत की आबादी का गांवों में ५४.९ फीसदी और शहरों में ६६.५ फीसदी हिस्सा निठल्ला बैठा रहता है। खेती के योग्य जमीन का एक-तिहाई से भी ज्यादा हिस्सा बेकार पड़ा है। यह आधे से अधिक बेकार आबादी बेकार पड़ी जमीन पर खेती करे और कारखानों में जुट जाय तो दौलत आसानी से बढ़ सकती है और गरीबी दूर हो सकती है।

(४) हमें न्यूनतम आमदनी को ऊंचा उठाना होगा। २७ करोड़ के ३ आने को कम-से-कम ८ आने भी बढ़ा सके, तो बहुत होगा। इसके लिए ऐश-आराम के साधनों के आयात पर रोक और ५० रुपये रोज से अधिक खर्च पर बन्दिश का कानून तुरन्त लागू हो। बचत का उपयोग नये छोटे कारखाने खड़े करने में किया जाय।

(५) समाजशक्ति और अर्थशक्ति दोनों का विकेन्द्रीकरण जरूरी है। जब तक विशेष अवसर के द्वारा देश का ८५ फीसदी तबका नहीं उठता, जब तक १५ फीसदी बाकी आबादी हाथ के काम को भी समान महत्व नहीं देतीं, छोटे शक्ति-चालित कारखाने गांव-गांव में नहीं बिछ जाते और समाज-शक्ति का निचले से निचले तबके में भी समानता के आधार पर फैलाव नहीं होता तब तक सही अर्थों में विकेन्द्रीकरण नहीं हो सकता। आज तीन आने रोज वाला तबका अर्थ, समाज और राजनीति तीनों की मार सह रहा है। उसकी गरीबी दूर करने के लिए तीनों शक्तियों का विकेन्द्रीकरण जरूरी है। धर्म सम्पत्ति के मोह को खतम करने की बात हजारों साल से हो रही है, किन्तु न तो वह उसमें कामयाब हुआ है और न साम्यवाद ही सम्पत्ति की वास्तविकता को खतम कर पाने में सफल हो पाया है। विश्व संसद के माध्यम से दोनों कदमों का सामंजस्य करते हुए जब समाजवादी शक्तियाँ एक होकर राज्यव्यवस्था और अर्थव्यवस्था का नियमन करेंगी, तभी गरीबी इस संसार से विदा हो सकेगी।

*

● प्रो० जयदेव आर्य्य एम० ए०,
वेदाचार्य विद्यावाचस्पति,
प्रवक्ता—संस्कृत विभाग,
छाजूराम स्मारक,
जाट महाविद्यालय, हिसार।

आर्यसमाज का नव-निर्माण

...दूसरी ओर हम हैं जो एक दिन एक आन्दोलन छेड़ते हैं और दूसरे दिन दूसरा, बीस वर्ष से प्रत्येक सम्मेलन में, प्रत्येक आर्यसमाज के उत्सव पर वही घिसे पिटे प्रस्ताव दुहराते हैं—सरकार से प्रार्थनायें करते हैं, रोते हैं, गिड़गिड़ाते हैं पर परिणाम वही ढाक के तीन पात !

महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना किसी सम्प्रदाय के रूप में नहीं की थी अपितु उनका उद्देश्य एक ऐसी गतिशील सार्वभौम संस्था की स्थापना करना था जो समस्त संसार में वैदिक आदर्शों का प्रचार एवं प्रसार कर सके और सारे संसार को समानता, स्वतन्त्रता एवं विश्व-बन्धुत्व का पावन सन्देश देकर सुखमय बना सके। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर उन्होंने आर्यसमाज के छठे नियम में स्पष्ट लिखा था कि सारे संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना। आर्यसमाज ने अपने जन्मकाल से ही लेकर इस देश में तथा कुछ सीमा तक विदेश में भी अपने महान् क्रान्तिकारी कार्यों से घूम मचा दी और विश्व को एक नव संदेश दिया परन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि समय ज्यों-ज्यों आगे बढ़ा, आर्यसमाज के पग पीछे हटते गए और आज स्थिति यह है कि आर्यसमाज मन्दिरों से बाहर निकल कर आज विश्व और सारे भारत की तो बात ही क्या, हमारे अपने इस उत्तरी भारत के क्षेत्र में, किसी समय आर्यसमाज का गढ़ समझे जाने वाले इस पंजाब, हरियाणा, दिल्ली और उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में भी, क्या सामाजिक और क्या धार्मिक, क्या साहित्यिक और क्या राजनीतिक, किसी भी क्षेत्र में आर्य समाज का प्रभाव दृष्टि गोचर नहीं होता। हमारे देखते-देखते मुस्लिम लीग ने देश की एकता की जड़ें काट कर पाकिस्तान बना लिया और आज भी केरल जैसे प्रदेशों के मन्त्रिमण्डल में अपनी जड़ें जमाकर वह निरन्तर इस्लामी प्रभाव का प्रसार कर रही है और पंजाब में कल उत्पन्न हुए अकाली दल ने कांग्रेस के तथाकथित सैक्यूलरवाद को दफना कर शुद्ध खालसा राज्य स्थापित कर दिया है और वह कर के रूप में पंजाब के और केन्द्रीय सहायता के रूप में भारत के भी हिन्दूओं से बटोरे गए, धन के बल बूते पर उन्हीं की जड़ें काटकर विश्व भर में सिक्खी का छाती ठोंक कर प्रचार कर रहा है। दूसरी ओर हम हैं जो एक दिन एक आन्दोलन छेड़ते हैं और दूसरे दिन दूसरा, बीस वर्ष से प्रत्येक सम्मेलन में, प्रत्येक आर्यसमाज के उत्सव पर वही घिसे पिटे प्रस्ताव दुहराते हैं, सरकार से प्रार्थनाएं करते हैं, रोते हैं, गिड़गिड़ाते हैं पर परिणाम वही ढाक के तीन पात। क्यों हैं ऐसी स्थिति ? क्या हमने असफलता के कारणों को मिल बैठकर संगठित रूप से, गंभीर होकर, कभी सोचने और उनका निराकरण करने का प्रयास किया ? उत्तर हैं नहीं, नहीं और नहीं ?

बार-बार वही सम्मेलन, वही प्रस्ताव, वही बड़े-बड़े दावे, वही प्रदर्शन ! क्या हम इस गति से कहीं पहुँच भी सकेंगे या कोल्हू के बैल की तरह एक ही स्थान पर चक्कर काट कर आत्म प्रवंचना करते रहे हैं कि हम उन्नति कर रहे हैं। आर्यसमाज का प्रत्येक हितैषी इस स्थिति पर शान्तिपूर्वक और गम्भीरता से सोचे, प्रत्येक आर्य नेता सोचें पर पृथक्-पृथक् नहीं, अपितु सब के साथ बैठकर—इसी उद्देश्य को लेकर कुछ विचार आर्य जनता और विशेष कर आर्यवीरों के समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूं।

आर्यसमाज के उद्देश्य की पूर्णता में दोनों ही प्रकार के कारण बाधक हैं, आन्तरिक भी और बाह्य कारणों से तो सफलता पूर्वक लड़ना हमारा साध्य है और आन्तरिक कारणों का दूर करना उसका साधन। उस शरीर को, जिसमें रोग के कीटाणुओं के प्रतिरोध की क्षमता हो, बाहर के रोगाणु कुछ भी हानि नहीं पहुंचा सकते और वह प्रतिदिन पुष्ट होता रहता है, पर जिस शरीर का आन्तरिक संघठन दोषपूर्ण हो गया हो, उसके ऊपर बाहर के कीटाणु उत्पन्न होकर उसे छिन्न-भिन्न कर डालते हैं, अतः प्रथम शरीर का नीरोग होना आवश्यक है और फिर उसे पुष्ट आहार का मिलना। इसी प्रकार समाज की भी प्रथम आवश्यकता अपने संघठन के दोषों को दूर कर अपनी जीवन-शक्ति को बढ़ाना है और दूसरी आवश्यकता बाहर के लोगों को अपनी ओर आकर्षित करना है। जो लोग हमारे इस बाहर के प्रचार में अनुचित रूप से विघ्न डालते हैं, उनसे संघर्ष करना भी इसी दूसरी श्रेणी में सम्मिलित है। जैसे हम विश्व भर में आर्यत्व के प्रचार का अधिकार अपने लिए चाहते हैं, उसी प्रकार हम दूसरे मतावलम्बियों के भी प्रचार के अधिकार को स्वीकार करते हैं, अतः आपत्ति की बात वहीं रह जाती है जहाँ सैक्यूलर होने का दम्भ करने वाली भारत सरकार-अन्य अहिन्दुमतावलम्बियों को तो अपने मत के प्रचार प्रसार में भरपूर सहयोग देती है और हिन्दुओं के मार्ग में न केवल स्वयं बाधा बन कर खड़ी हो जाती है अपितु अपने आचरण से उन दूसरे मतावलम्बियों को भी हिन्दुओं हर आक्रमण करने के लिए प्रोत्साहित करती है। पंजाब और काश्मीर जैसे प्रान्तों में तो जहाँ इन तथा-कथित अल्पमत वाले सिक्खों तथा मुसलमानों का बहुमत है, वहाँ पर तो खुली साम्प्रदायिकता का राज्य है और प्रत्येक क्षेत्र में हिन्दुओं के अधिकारों का खुला हनन किया जा रहा है और सैक्यूलर वादी केन्द्र मौन साध कर सब कुछ देखता रहता है। अतः अपनी जीवन-रक्षा के लिए हमें दुहरा संघर्ष करना पड़ेगा—आन्तरिक भी और बाह्य भी।

आन्तरिक रूप से हमारा संघटन आज शिथिल हो चुका है यद्यपि बाहर से देखने पर उसकी दृढ़ता का मिथ्या भ्रम हमें होता है। कौन सा ऐसा समाज या सभा जिसमें दलबन्दी नहीं है और अपने नेतृत्व को बनाए रखने के लिए नेता लोग जनता से वेदप्रचार के नाम पर किए गए एकत्रित धन को निर्दयतापूर्वक न्यायालयों में और वकीलों को नहीं लुटा रहे हैं ! आर्यसमाज की न्याय-सभाओं तथा न्यायालयों द्वारा अपराधी घोषित किए जाने पर भी वे अपने पदों पर दनदनाते रहते हैं और आर्य जनता विवश भाव से कभी एक ओर कभी दूसरे का अनुसरण करती है, पर आर्यसमाज की प्रगति सर्वथा अवरुद्ध होकर रह गई है। अधिक से अधिक सप्ताह में एक बार आर्यसमाज मन्दिर में सन्ध्या-हवन कर लेने तक ही आर्यसमाज का प्रचार सीमित होकर रह गया है। ऐसी स्थिति में स्वर्गीय श्री मैथिली शरण गुप्त की यह पंक्ति स्मरण में आ जाती है :—लगता है विद्रोह मात्र ही, अब इसका प्रतिकार है।

बहिष्कार करो !

यह अप्रिय पर आवश्यक कार्य आज आर्य युवकों को ही करना होगा। आज आवश्यकता है कि कुछ आर्य युवक जो आर्य समाज के सिद्धान्तों के अच्छे मर्मज्ञ हैं और जिनके हृदय में आर्य समाज को आगे ले जाने की तड़प है, वे एक समिति गठित करें जो समूचे आर्य जगत् की कार्य प्रणाली एवं गतिविधि का सम्यक् आलोचन कर वैदिक धर्म प्रचार की सार्वदेशिक या सार्वभौम वार्षिक, द्विवर्षीय या पंच-वर्षीय योजना बनाए और प्रत्येक प्रान्त में पृथक २ रूप से भी प्रान्तीय समितियों का गठन करे। यह समिति आर्य समाज के वर्तमान गठन, निर्वाचन-प्रणाली आदि के गुणदोषों का भी विवेचन कर उसमें सम्यक् सुधार के लिए

आन्दोलन चलाए । जो नेता उन सुधारों का स्वार्थ के कारण विरोध करें, उनके विरुद्ध स्थान २ पर प्रदर्शन किए जाए, उन नेताओं का आर्य समाज के मंच से बहिष्कार कराने के लिए आन्दोलन चलाया जाए जिन आर्य समाजों या आर्य संस्थाओं पर अन्-आर्य समाजी लोग अधिकार जमाए बैठे हैं, उनके विरुद्ध संगठित अभियान प्रारम्भ किया जाए । इस बात का प्रयत्न किया जाए कि प्रत्येक सभा तथा समाज से प्रचार मन्त्री, प्रचाराधिष्ठाता या अन्य महत्त्वपूर्ण कुछ पद आर्य समाज के सिद्धान्तों के मर्मज्ञ वेद के विद्वानों के लिए सुरक्षित किए जाऐ, जो देखें कि समाज में विद्वानों के उचित अधिकारों की रक्षा हो, उनको अपनी सहित्यिक एवं प्रचार सम्बन्धी गतिविधियों में पूर्ण सहयोग तथा प्रोत्साहन मिले । समाजों में यथासम्भव योग्य लग्नशील पुरोहित रखे जायं और उनको अच्छा वेतन दिया जाय । उत्सवों पर अच्छे योग्य विद्वानों को निमन्त्रित किया जाय । क्या यह हमारे लिए लज्जा की बात नहीं है कि पिछले कई वर्षों में आर्य समाज पर कई आर्य समाजी विद्वानों ने महत्त्वपूर्ण शोध-प्रबन्ध लिखे हैं, जिन पर विश्व-विद्यालयों ने उन्हें पी० एच० डी० की उपाधि से अलंकृत किया है पर कभी किसी भी सभा या समाज ने उनका सार्वजनिक अभिनन्दन करने या उन्हें पुरस्कृत करने या उन्हें उन शोध-प्रबन्धों को प्रकाशित करने के लिए कुछ आर्थिक सहायता प्रदान करने की ओर कोई ध्यान नहीं दिया ? इसका परिणाम यह है कि न तो वे शोध-प्रबन्ध प्रकाशित ही हो पाए हैं, न उन विद्वानों को साधारण जनता जानती ही है जबकि अनेक नेता नामधारी प्राणी आर्य समाज के मंचों पर प्रतिदिन पुष्प मालाओं से सम्मानित किये जाते हैं । जब तक आर्य समाज में इन विद्वानों का यथा योग्य सम्मान न होगा तब तक आर्य-समाज सुरक्षित समुदाय में कभी भी प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं कर सकेगा ।

मठाधीश

आर्य समाज के पास सारे देश में शतशः शिक्षण-संस्थाएं हैं जिनमें लाखों विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते हैं पर इन संस्थाध्यक्षों की उदासीनता, स्वार्थपरता के कारण आर्यसमाज के जीवन दायी सन्देश से यहां के विद्यार्थियों को परिचित ही नहीं करवाया जाता और यदि किसी का सन्देश पहुँचता है तो साम्यवादियों का या गान्धीवादियों का या स्वच्छन्दता वादियों का । यह स्थिति खेदजनक है । यदि इन संस्थाओं के सभी पारितोषिक-अवसरों पर आर्य समाज का ही उच्च-कोटि का साहित्य वितरित किया जाए, समय २ पर आर्य समाज के विशेष उच्च-कोटि के साहित्यकारों, आर्य समाजी शिक्षा-शास्त्रियों तथा आर्य विद्वानों के विभिन्न विषयों पर भाषण कराए जाएं, अन्तः कालेज वाद-विवाद तथा भाषण-प्रतियोगिताएं आयोजित की जाएँ, तो कोई कारण नहीं है कि विद्यार्थियों पर आर्य समाज की छाप न पड़े । पर जब तक इन मठाधीशों के विरुद्ध कोई सशक्त आन्दोलन नहीं होगा जब तक आर्य समाजों पर भी उन्हीं का एकच्छत्र अधिकार बना रहेगा, तब तक इस बात का होना सम्भव नहीं है और आर्य संस्थाओं के इस शुद्धीकरण आन्दोलन को कोई चला सकता है तो केवल आर्य-युवक ही । जब अनेक विश्वविद्यालयों में विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग या विश्वविद्यालय स्वयं गान्धी-पीठ, नानक और गोविन्द सिंह-पीठ, विवेकानन्द-पीठ आदि की स्थापना कर सकते हैं तो डी० ए० वी० कालेज जालन्धर तथा अजमेर जैसे वे बड़े कालेज, जो दयानन्द विश्वविद्यालय बनने के लिए लपलपा रहे हैं, दयानन्द अनुसन्धान पीठों और शोध-पत्रिकाओं की स्थापना क्यों नहीं कर सकते, जहां आर्य समाज के उच्च कोटि के अनुसन्धित्सुओं को लैक्चरर्, रीडर और प्रोफेसर के पदों पर नियुक्त किया जाए । पर यह हो तो तब, जब इन मठाधीशों को वेद, दयानन्द या आर्य समाज से प्रेम हो । उनके सामने तो नित्य खजाना भरने की ही चिन्ता में लगे सेठ की भाँति प्रतिदिन अपनी संस्थाओं की संख्या बढ़ाने तथा उनके माध्यम से अपने सगे-सम्बन्धियों के स्वार्थ सिद्ध करने या अपने नेतृत्व को चमकाने का ही लक्ष्य प्रधान है । नाम है दयानन्द का पर शासन मैकाले का या मार्क्स का या गान्धी और नेहरू का है । वहां संस्कृत उपेक्षित है, हिन्दी उपेक्षित है और दयानन्द आर्य समाज तथा वेद उपेक्षित हैं । क्या इस स्थित को बिना सशक्त अन्दोलन के बदला जा सकता है ? कदापि नहीं । और यह कार्य आज युवक-शक्ति को ही करना होगा ।

राजनीति के खिलाड़ी

दुर्भाग्य का विषय यह कि आज अनेक आर्य समाजों तथा सभाओं के अधिकारी वैदिक सिद्धान्तों और संस्कृत

से सर्वथा अनभिज्ञ हैं और न हीं खिलाड़ी हैं और वे न तो आर्य समाज के प्रचार की समस्याओं से परिचित हैं और न ही विद्वानों का सत्कार करना आवश्यक समझते हैं। अनेक नेता राजनीति के ही खिलाड़ी हैं और वे आर्य समाज को अपने राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति का साधन मात्र ही समझते हैं। आर्य समाज के अनेक उपदेशक और प्रचारक भी विशेष शिक्षण की व्यवस्था के अभाव में आज भी प्रचार के बहुत पुराने ढर्रे पर चल रहे हैं जबकि आर्य समाज की मान्यताओं से परिचित तो हैं परन्तु उनेक विरुद्ध उन्होंने नई २ अनेक युक्तियां और प्रमाण ढूंढ निकाले हैं जिनका निराकरण नए ढंग से ही किया जाना चाहिए, जिसकी ओर आज आर्य समाज के उपदेशकों और प्रचारकों की प्रवृत्ति दिखलाई नहीं पड़ती। ठोस सैद्धान्तिक साहित्य लिखने वाले विद्वान् भी आज गिने चुने ही हैं जिनका साहित्य हमारे दूषित संघठन के कारण अन्-आर्य समाजी जनता तथा विद्वानों तक पहुँच ही नहीं पाता और न उस साहित्य का प्रकाशन ही व्यवस्थित रूप से हो पाता है। कहना होगा, आज अनेक आर्य समाजी ऋषि दयानन्द की क्रान्तिकारी और प्रगतिशील विचारधारा से सर्वथा अपरिचित हैं और वे ऋषि दयानन्द को एक संकुचित सम्प्रदायवादी आचार्य के रूप में ही लोगों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। आर्य समाज में आज एक चिन्तन की जड़ता अपना प्रभुत्व जमा चुकी है। ऐसी कोई गोष्ठियां आयोजित नहीं की जातीं जहां आर्य समाजके विद्वान कभी मिल कर गम्भीर सैद्धान्तिक चिन्तन कर सकें और नेता लोग कोई ठोस प्रचार की योजना बना सकें। बड़े २ सम्मेलनों में सिवाय धूआंधार लैक्चरबाजी के अतिरिक्त कोई मौलिक चिन्तन नहीं हो सकता। आर्य समाज के पत्रों में भी प्रायः बहुत हल्के स्तर की ही सामग्री रहती है। सब की अपनी २ डफली और अपना २ राग है। एक कुछ लिखता और कहता है, तो दूसरा कुछ। यह स्थिति आर्य समाज के लिए घातक सिद्ध हो रही है।

हमारी असफलता

इस स्थिति से बचने के लिए आवश्यकता है कि विशेष विशेष अवसरों पर विद्वद्गोष्ठियां और कार्यकर्ता सम्मेलन हो, जहां भाषण न हो कर विचार विमर्श हुआ करे। विद्वान् लोग मिलकर अपना २ विशेष क्षेत्र चुनकर उसी के भीतर ठोस साहित्यिक रचनाएं लिखें, जिनका प्रकाशन भी किसी केन्द्रिय प्रकाशन-केन्द्र से हो। ऐसे केन्द्र की स्थापना सहकारी रूप में भी हो सकती है। सार्वदेशिक सभा को चाहिए कि वह आर्य जगत् के चुने हुए विद्वानों से प्रकाशन के लिए उनके ग्रन्थ मंगवाए और फिर उनमें से उत्तम २ ग्रन्थों को प्रकाशित करे और लेखकों को उचित परिश्रमिक दे। आज स्थिति यह है कि गान्धी, नानक, गोविन्द सिंह, विवेकानन्द, मुहम्मद साहब आदि महापुरुषों के जीवन एवं कार्यों के विशेषज्ञों की महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में मांग है और उपयोगिता है, पर महर्षि दयानन्द के साहित्य-विशेषज्ञों की न कोई उपयोगिता है और न कहीं पूछ। किसी डी० ए० वी० कालेज में भी नियुक्ति के समय न उनको वरीयता दी जाती है और न ही आर्य समाज सम्बन्धी अनुसन्धान का कोई प्रबन्ध है और न ही स्वतन्त्र रूप से लिखने वालों के ग्रन्थों के प्रकाशन का कोई समुचित प्रबन्ध है। आर्य समाज के पत्र और पत्रिकाएं भी इन शिक्षाण-संस्थाओं में नहीं मंगाए जाते। महर्षि दयानन्द पर शोध करने वाले छात्रों को भी कहीं कोई प्रोत्साहन या सुविधा प्राप्त नहीं होती है। तभी तो जब श्री रघुवीर सिंह जी शास्त्री ने पश्चिमी जर्मनी के एक विश्वविद्यालय में महर्षि दयानन्दकृत वेदभाष्य देखने की इच्छा प्रकट की तो उत्तर मिला कि वह भाष्य अनुसन्धान के लिए किसी काम का नहीं है, अतः हम उसे अपने पुस्तकालय में स्थान नहीं देते। क्या यह समूचे आर्य समाज के लिए अपमान की बात नहीं देते। क्या यह हमारी असफलता का मुँह बोलता चित्र नहीं है ?

युवक शक्ति एक हों !

एक ओर तो यह हमारी आन्तरिक दुर्बलता है जो हमें आगे बढ़ने नहीं देती और लोग आर्यसमाज की ओर आकृष्ट नहीं होते। दूसरी ओर हम थोड़ा बहुत जो प्रचार करते हैं, उसमें हमें विरोधियों के षड्यन्त्रों के कारण कठिनाइयों का भारी सामना करना पड़ता है। गत सौ वर्षों में पंजाब में आर्यसमाज ने तो हिन्दी का प्रचार किया, उसे कांग्रेस, अकाली दल तथा जनसंघ ने समाप्त करके रख दिया है। एक ओर जा पंजाब और पंजाबी विश्वविद्यालय सिक्खी के प्रचार में जोर से संलग्न है और दूसरी ओर आकाशवाणी जालन्धर ने प्रातः काली

बन्दना कार्यक्रम से संस्कृत श्लोकों को भी हटा दिया है। एक ओर पंजाब सरकार गुरुद्वारा दुःख निवारण की सड़कों की मरम्मत के लिए लाखों रुपए स्वीकार करती है, तो दूसरी ओर पटियाला और दूसरे नगरों में हिन्दू मन्दिरों की भूमि को अधिगृहीत करने के निर्णय कर रही हैं। आज पंजाब का शासन अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर से होता है। आज गुरु नानक विश्वविद्यालय बनने जा रहा है और हम अनेक वर्षों से दयानन्द विश्व-विद्यालय के लिए असफल शोर मचा रहे हैं। हमें मुस्लिम साम्प्रदायिकता के कारण अनेक बलिदान करने पड़े पर भारत सरकार खुले रूप से उसे बढ़ावा दे रही है और सैक्युलरिज्म का ढोंग रचती हुई भी अपने व्यय पर भारत के मुस्लिमों को क्वालालम्पुर में हुए मुस्लिम देशों के सम्मेलन में भेजती है, जैसे भारत भी एक मुस्लिम देश है। जम्मू-काश्मीर सरकार सम्प्रदाय के आधार पर अधि-कारियों की पदोन्नति डंके की चोट करती है। कोई मुस्लिम, ईसाई, साम्यवादी या सर्वोदयी देश हित के विरुद्ध कितनी ही बातें कहे या खून खराबे की धमकी तक दे तो भी उस पर कोई कार्यवाही नहीं की जाती और यदि कोई हिन्दु कुछ भी अनुचित बात कह दे तो उसे संसद में सभी दलों के सदस्य फांसी पर लटकाने तक की मांग करते हैं। यह सब इसलिए है कि हमारा राज-नीतिक अस्तित्व कोई नहीं है। इस मध्यावधि चुनाव में पंजाब तथा उत्तर प्रदेश में कुछ आर्यसमाजियों में चुनाव लड़ने की बात चली, पर अन्त में सब 'टांय-टांय फिस' ही रहा। इससे पूर्व महानिर्वाचन में हरियाणा में भी यही तमाशा हुआ था। आर्य वीर दल के रूप में भी युवक शक्ति का संघटन होना चाहिए पर आज तक उस का कोई शक्तिशाली रूप नहीं बन सका। इसका मुख्य कारण यह है कि संघ के श्री गोलवलकर की तरह ही इस कार्य के प्रति ही एकनिष्ठ नेता उसे कोई नहीं मिला, जिसका एकमात्र कार्य आर्यवीर दलसंघटन हो। विभिन्न आर्यकुमार सभाएं तथाआर्य युवक समाजें भी इसी प्रकार कोई केन्द्रिय संघटन न होने से विशृंखलित हैं और कई बार तो इनमें से किसी एक शाखा के नेता दूसरी शाखा को अपना प्रतिद्वन्द्वी तक समझते हैं। हमें इस स्थिति को समाप्त कर ऐसा प्रबल संघटन बनाना चाहिए जिसका शीर्षस्थ नेतृत्व एक ही हो और वह आर्य समाज के लिए एक शक्ति का स्रोत सिद्ध हो।

इस समग्र विवेचन के आधार पर मेरा निष्कर्ष यह है कि आर्यसमाज के सुचारु संचालन के लिए १. आर्य वीर दल जिसमें उच्चकोटि की सैनिक शिक्षा दी जाय। २. आर्य युवक समाज—जिसके सदस्य युवक हों। ३. आर्य कुमार सभा—जिसका लक्ष्य छोटे बच्चों का संघटन हो। ४. आर्य लेखक या विद्वत्परिषद्—जिसका कार्य आर्यसमाज की साहित्यिक गतिविधियों का केन्द्रीय करण हो। और जो शिक्षण संस्थाओं में भाषणों का भी आयोजन करे। ५. आर्य प्रचारक संघ—जो अच्छे वक्ताओं का संघटन करे। ६. आर्य विद्या परिषद्—जो आर्य शिक्षण संस्थाओं की गतिविधियों का संचालन करे और ७. आर्य राज सभा जो राजनीति में सक्रिय भाग ले। इस प्रकार ये सात विभाग हों। इनमें से आर्य राज सभा के संघटन को छोड़कर शेष छः का सम्बन्ध सार्वदेशिक सभा से हो या जो कम से कम उसके निर्देशन में मिलजुल कर कार्य करें। इन सभी विभागों की सुदृढ़ता के अभाव में आर्यसमाज का कार्य सुचारु रूप से नहीं चल सकता। बल्कि इनके अति-रिक्त १. विदेश प्रचार समिति २. आर्य पुरोहित संघ आदि अन्य विभाग भी हो सकते हैं जो अपने-अपने क्षेत्र को अधिकाधिक उपयोगी बनाने के लिए सावधान रहें इस प्रकार आर्यसमाज का नव निर्माण हो सकता है। ●

---

* राममक्त लंगायन एम० ए०
रिसर्चस्कालर,–पंजाबी विश्वविद्यालय
पटियाला

"दलितों के प्रति आर्यों का कर्तव्य

वास्तव में शंकराचार्य ने स्त्री और शूद्र के लिये अभिशाप ही वर में दिया था—यह अभिशाप अपना असर तब तक करता रहा जब तक आर्यसमाज की स्थापना नहीं हुई···

स्वामी विवेकानन्द ने एक बार अपने भाषण में कहा था कि स्त्री-शिक्षा, भारत की स्वतन्त्रता और अछूतों की समस्या ये तीन हमारे देश के सन्मुख मुख्य समस्याएं हैं। आज उनके देहावसान के एक शताब्दी बाद केवल अछूतों की समस्या ही शेष रह गई है, बाकी दो समस्याएं काफी सीमा तक हल हो चुकी हैं।

जाति-पाँति की यह समस्या बहुत पुरानी है जिसको दूर करने के लिए समय-समय पर इस भूतल पर महान् आत्माओं ने जन्म लिया। महात्मा बुद्ध इसका विरोध करने वाले सर्वप्रथम पुरुष थे। बुद्ध धर्म में हिन्दु धर्म की विषैली इस जाति-पाँति की कुरीति से बचने के लिए बहुत सारे शूद्र कहे जाने वाले लोग दीक्षित हो गए थे। लेकिन कुछ समय बाद हिन्दु धर्म का फिर उद्धार हुआ और इसने फिर पुराना वातावरण फैलाना शुरू कर दिया। उसी समय मूल शंकराचार्य का भी जन्म हुआ जिन्होंने वेदान्त सूत्रों, उपनिषदों आदि पर भाष्य लिखे। इसमें सन्देह नहीं कि वह अपने समय के अद्वितीय विद्वान् थे, लेकिन वह भाष्य करते हुए उस समय की प्रचलित प्रथाओं से बच न सके और वेदान्तसूत्रों का भाष्य करते हुए मौलिक रूप से 'अपशूद्राधिकरण' अध्याय बनाना पड़ा जिसमें उन्होंने वेदान्तसूत्र १/४/३५-३८ पर भाष्य करते हुए शूद्रों को वेद का सुनना, अध्ययन करना पाप ठहराया। यहां तक लिखा 'शूद्राय मतिं न दद्यात्' शूद्र को मति (बुद्धि) न दी जाए।

ये थे उद्गार और वरदान श्री शंकराचार्य के जो शूद्रों के लिए अत्याचार सिद्ध हुए। उसी ब्राह्मणी धर्म ने शंकराचार्य की स्मृति में भारत के चारों ओर ४ गद्दियां स्थापित की जो आज भी उन्हीं आदर्शों को मानते हैं जिनका उपदेश शंकराचार्य ने दिया था। वास्तव में शंकराचार्य ने स्त्री और शूद्र के लिए अभिशाप ही वर में दिया था। यह अभिशाप अपना असर तब तक ही करता रहा जब तक आर्यसमाज की स्थापना नहीं हुई और भारत आजाद नहीं हुआ। अछूतों की अवस्था पाताल में चली गई, बुद्धिहीन ये मनुष्य अपने विषय में कुछ सोच भी न सके, सोच भी कैसे सकते थे जब मानवीय विकास का मौलिक 'दण्ड' स्वतन्त्रता उनसे छीन लिया गया। उनकी आत्मा सो गई; जिसको जगाने के लिए प्रथम स्वामी दयानन्द सरस्वती ने जन्म लिया। डा० अम्बेडकर ने शूद्र जाति में जन्म लिया। यदि शंकराचार्य के शब्दों में 'शूद्रायमतिं न दद्यात्' अर्थात् शूद्र को पढ़ाओ ही नहीं; यह नियम भीमराव अम्बेडकर पर लागू होता तो कैसे हो सकता था कि वह हमारे भारत के पवित्र संविधान का निर्माण कर जाते। उनको आरम्भ में छुपाकर पढ़ाया, उन्होंने तत्कालीन हिन्दूधर्म में रूढ़ियों के विषय को सहज-रूप से हंसी-हंसी से पीया, लेकिन वे उसे अन्तिम समय तक पचा न सके क्योंकि वह कुरीतियों के कारण बढ़ता गया और परिणामस्वरूप अपने मरने से केवल १ मास पूर्व उन्होंने बौद्ध धर्म की दीक्षा ली। आरम्भ से ही

उनका यह नारा था कि जात-पात हिन्दु धर्म का शत्रु है; जब तक हिन्दु धर्म इसे हटा नहीं देता यह उन्नति नहीं कर सकता। बाबा साहेब के ये शब्द अक्षरशः सत्य निकले। आज हमारे देश में ईसाइयत का कितना प्रचार हो रहा है; कितने अछूत कहलाने वाले भाई हिन्दुसमाज में जाति-पाति के अत्याचार से बचने के लिए अपना धर्म परिवर्तन कर रहे हैं। इस समय आर्य-बन्धुओं का कर्त्तव्य है कि वे स्वामी दयानन्द के कथित मार्ग पर चलकर सच्चे वैदिक धर्म को लोगों के सामने लाएं और इस नकली हिन्दु धर्म को असली बना दें।

महर्षि दयानन्द हिन्दु धर्म की जिन कुरीतियों से लड़े वे श्लाघनीय और स्मरणीय हैं। उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना इसलिए की जिससे जगके सभी लोगोंको आर्यपुरुष बनाया जाए। उन्होंने वेदाधिकार सबके लिए बताया जिसका समर्थन स्वयं वेद करता है। सत्यव्रत सामश्रमी ने महर्षि के शूद्रों के वेदाधिकार विषय को समर्थन करते हुए कहा था—

'शूद्राय वेदाधिकारे साक्षात् वेदवचनमपि प्रदर्शितं स्वामीदयानन्देन यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्याम् शूद्राय च स्वाय चारणाय च॥ यजुर्वेद २६/२ तदेव वेदविधेः पक्षपात दोषभाकत्वं न कथमपीति सिद्धम्॥ एतरेयालोचनम् पृ० १७

इस महर्षि की उदारता को श्रद्धाञ्जलि प्रकट करते हुए जगत्-विख्यात विचारक रोमां रोलां ने ठीक ही कहा था :

'It was in truth an epoch making date for India when a Brahman not only acknowledgea that all human beings have the right to know the Vedas, whose study had been preiviously prohibited by orthodox Brahmans; but insisted that their study and propaganda was the duty of every Arya.' Life of Ramkrishan by Roman Roland. A.59.

इस प्रकार का कार्य निस्संदेह स्वामी दयानन्द के समय में एक महान् वीरता का कार्य था। खेद है कि वह अपने जीवनकाल में इस कार्य को पूरा न कर सके और उसकी पूर्ति की जिम्मेवारी अपने आर्य बन्धुओं पर छोड़ गए। इस समय आर्ययुवकों का कर्त्तव्य है कि वे मानवता के उस वैदिक धर्म का शंखनाद बजा दें जहां सहानुभूति, समता, प्रेम, परोपकार, त्याग का राज्य था। आज आर्य-समाज को भारतीय दलित वर्ग की समस्या फिर आह्वान कर रही है; पुरी के शंकराचार्य जैसे उनकी आंखों को खोल रहे हैं। यह आर्यों का कर्तव्य है कि वे विद्या का प्रचार करें, अविद्या को समूल नष्ट करें। ज्ञान का प्रकाश करें और अज्ञान को नष्ट करें। श्री शंकराचार्य के विरुद्ध मुकदमे को इसलिए बहाल कर दिया क्योंकि उन्होंने छूत-छात के विरुद्ध कोई उपदेश नहीं दिया। सब डिविजनल मजिस्ट्रेट ने कहा कि छूतछात करने का उपदेश देना कानून के विरुद्ध है। कैसी विडम्बना है, एक ही जगह पर पानी और आग का संगम कैसे रह सकता है; एक का नाश अवश्यम्भावी है। यदि हम चाहते हैं कि हिन्दुधर्म का प्रसार हो तो जाति-पाति का भेद भाव मिटाना होगा; यदि तुम चाहते हो कि छूतछात यह हमारा धर्म है तो हिन्दू धर्म को गर्त में गिराना होगा।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अब समय बदल गया है। स्वतन्त्रता ने सभी की आंखें खोल दी हैं। कोई भी व्यक्ति अत्याचार नहीं सह सकता। मूल शंकराचार्य की भांति आज की गद्दी पर आरूढ़ जगद्गुरु शंकराचार्य व्याख्यान नहीं दे सकता जिससे किसी पर प्रहार हो। हमें सच्चे वैदिक धर्म से हिन्दू धर्म को मिलाना होगा। यदि हिन्दु धर्म में यह अस्पृश्यता बनी रही तो शीघ्र ही हिन्दु धर्म नष्ट हो जाएगा।

इस विषय में प्रो० श्यामराव के 'राजधर्म' अप्रैल के सम्पादकीय लेख के शब्द प्रशंसनीय और स्मरणीय हैं "कैसी विडम्बना है कि एक तरफ तो हम धर्म का प्रचार करके उसे समृद्ध करना चाहते हैं और दूसरी तरफ हम अस्पृश्यता की संकुचित भावना अपने साथ चिपकाए हुए हैं।" धन्य हैं प्रो० श्यामराव जैसे स्पष्ट वक्ता जिनके सर्वप्रथम मैंने ऐसे उद्गार पढ़े। वास्तव में उनका ध्येय पाशविक साम्राज्य को मिटाकर मानवीय साम्राज्य स्थापित करना है। इस ओर मैं उनको स्वामी दयानन्द और डा० अम्बेडकर के बाद प्रथम व्यक्ति समझूंगा जो मानव जाति के लिए अपना सर्वस्व देने के लिए मैदान में आए हैं। यह है वास्तविक वैदिक धर्म का आदर्श जिससे आकर्षित होकर, जिसके गूढ़ तत्त्व को समझकर मानव हित ही

जिनका क्षेत्र बन गया है।

सभी मानव समान हैं, जाति एक है। मनुष्य गुण; कार्य और स्वभाव से यथा स्थान प्राप्त कर सकता है। मनुष्यों में शील ही प्रधान है जो उसे इतर मनुष्यों से श्रेष्ठ बनाता है। यदि हम स्वामी दयानन्द का नारा और वेदों का नारा 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' को सार्थक बनाना चाहते हैं; तो हमें उस सच्चे वैदिक युग की ओर दृष्टिपात करना होगा जहां हमें समन्वयवाद, सौहार्द, सहानुभूति, उपकार और समानता आदि का साम्राज्य दृष्टिगोचर होता है। वह वैदिक धर्म आर्यपुरुषों द्वारा ही रक्षित रहा है वरना यह लुप्तप्राय हो जाता। इसके आदर्श इसकी नित्यता के मूलाधार हैं। आज भी आर्यसमाज उन आदर्शों से मुख नहीं मोड़ सकता क्योंकि उसकी स्थापना का उद्देश्य ही यह था कि मानव मानव में समानता, दयालुता, प्रेम, सहानुभूति और संगठन की भावना पैदा करना है। उपकार और निःस्वार्थ सेवा वैदिक धर्म के मुख्य आदर्श थे। यश ही उनका श्रेष्ठ कर्म था। सभी लोग समान थे; वेद उपदेश देता है।

संगच्छध्वं संवदध्वं संवोमनांसि जानताम्।
देवाभागं यथापूर्वे संजानाना उपासते ॥ ऋ०१०/१९२/१
समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥

अर्थात् :—सब मनुष्य भली प्रकार मिलकर रहें, प्रेमपूर्वक आपस में वार्तालाप करें, सबके मनों में ऐक्य भाव हो और वे अविरोधी ज्ञान प्राप्त करें। जिस प्रकार विद्वान् लोग सदा से ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करते हुए उनकी उपासना करते हैं; उसी प्रकार तुम भी ज्ञान और उपासना में दत्तचित रहो। सब लोगों के संकल्प, निश्चय, अभिप्राय एक से हों; सबके मनों में एक सी उच्च भावना पाई जाए और सब लोग सहयोग पूर्वक अच्छी तरह से कार्यों को करें।

इसी प्रकार अथर्वेद का उपदेश है 'सब लोग एक मत के हों, प्रतिकूल बातें करने वाले भी परस्पर में अनुकूल हो जा[एं]। हे सर्वशक्तिमान् परमात्मा! अपने पराए दोनों प्रकार के मनुष्यों की समान मनोवृत्तियां हों। हम अपने मन को दूसरे के मन के साथ जोड़ें और मिलकर सत्कार करें।

वैदिक धर्म में दूसरे की पीड़ा को अपनी पीड़ा सम[झा] जाता था। स्वार्थी को पापी कहा जाता था। वैमनस[्य] नहीं था। शान्ति की ही कामना की जाती थी। सभी को मित्र भाव की दृष्टि से देखने की प्रार्थनाएं की जाती थीं।

सच पूछें तो वैदिक धर्म 'आत्मवत् सर्वं भूतेषु' [और] 'वसुधैव कुटुमबकम्' अर्थात् अपनी तरह ही सब लोगों में [दृष्टि] रखें और सारा संसार एक परिवार है, यह आदर्श [था] जिसमें जाति-पाति या अस्पृश्यता का नाम निशान नहीं था। सर्वमेध अर्थात् सभी की बुद्धि का विकास कर[ना] और आत्मत्याग जिसमें विकास के उत्तम साधन थे। यदि आज हम चाहते हैं कि मानव की सेवा हो, यदि हम चाहते हैं कि हिन्दू धर्म चिरस्थायी रहकर अपने उत्त[म] स्थान पर पहुंचे, तो हमें उन सभी रूढ़ियों को निका[ल] फेंकना होगा जो वेद से इतर सूत्र और स्मृति आदि ग्रन्[थों] में अनार्य भाव लिए हुए घुसी हुई हैं। अतः इस समय [फिर] उस वैदिक यश (आत्म समर्पण) की भावना को बुलन्[द] करना है। आज त्याग और निःस्वार्थ सेवा की आवश्य[]कता है जिससे मानवीय वैदिक धर्म का सच्चा रूप प्रत्ये[क] व्यक्ति के सामने लाया जा सके और आर्यों का जो सन्[]नारा है वह अन्वर्थ सिद्ध हो सके।

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते
संभ्रातरो वावृधुः सौभगाय
युवा पिता स्वपारुद्र एषां सुदुधा
पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः (ऋग्वेद ५/६०/५)

इनमें से जन्म से कोई छोटा बड़ा नहीं है। सब मनुष्य भाई-भाई हैं क्योंकि परमेश्वर उन सबका पिता और पृथ्वी माता है। ऐसा मानकर व्यवहार करने से ही मनुष्यों की वृद्धि होती है।

"वह और मैं"

रमेश बतरा

कई वर्ष से मैं लगातार प्रतिदिन मन्दिर जाता हूँ। प्रातः एवं संध्या दोनों समय पूजा-पाठ और कीर्तन आदि किया करता हूँ। परन्तु फिर भी मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मैं वह नहीं हूँ जो कि मुझे होना चाहिये। मानसिक सन्ताप की प्रचण्डता मुझे अपनी उष्मा के घेरे से निकलने ही नहीं देती। न जाने कितनी बार ईश्वर की मूर्ति के समक्ष नाक रगड़-रगड़ कर प्रार्थना कर चुका हूँ, "हे ईश्वर मुझे शांति दो।" सदैव यही प्रयत्न करता हूँ कि पाप एवं दुष्कर्मों से बचा रहूं। परन्तु फिर भी कोई परिवर्तन नहीं आता। अपनी अवस्था देख कर मुझे ऐसा प्रतीत होता है जैसे मैं एक ऐसा पापी हूँ जिसे क्षमा किया ही नहीं जा सकता। मन्दिर आदि में आने-जाने वाले लोग मुझे नेक पुरुष मानते हैं और वहाँ के पुजारी गण प्रतिदिन मुस्करा कर मेरा स्वागत करते हैं। परन्तु इस स्वागत में मुझे कुछ ऐसा दिखाई देता है जो ठीक नहीं। परन्तु उसमें बुराई क्या है, इसे मैं नहीं समझ पाता।

× × ×

मेरा एक मित्र बताया करता है कि बचपन में वह और कहीं से भी नहीं, मन्दिर से पैसे चुराया करता था। बस, पैसे उठाते समय ईश्वर की मूर्ति के आगे हाथ जोड़ कर कह दिया करता, "भगवान में अबोध बालक हूं। मेरी भूल-चूक क्षमा करना।" उन्हीं चुराए हुए पैसों में से कुछ का प्रसाद बांट कर वह समझता कि ईश्वर उस का अपराध क्षमा कर देंगे। मैं सोचता हूँ कि उसने चोर बनकर महापाप किया था, उसे तो ईश्वर द्वारा अत्यन्त कड़ा दण्ड मिलना चाहिये। लेकिन उसकी अवस्था देखकर मैं हताश रह जाता हूँ। वह कभी मन्दिर नहीं जाता और न ही कभी नाक रगड़ कर क्षमा प्रार्थना ही करता है। परन्तु फिर भी लगता है कि ईश्वर ने उसके समस्त पाप क्षमा कर दिए हैं। सम्भवतः उसके पापों का दण्ड मुझे दिया जा रहा है। मैं सदैव रोता सा रहता हूँ। जब कभी स्वयं को परखता हूं तो प्रत्येक बार अपने में अधिक बातें कम पाता हूँ। वह जब भी मुझे मिलता है उसे सदा हंसता हुआ पाता हूं। उसके चेहरे पर संतोष और शान्ति की रेखाएँ देख कर मैं यह सोचने के लिए कटिबद्ध हो जाता हूँ कि आखिर इसका रहस्य है तो है क्या ?

× × ×

अभी-अभी कुछ ही मिनट पूर्व स्नानादि से निवृत्त होकर मैं घर से मन्दिर जाने के लिए निकला हूँ। अचानक गली के मोड़ पर मुझे अपना वही मित्र दीख पड़ा। कुछ समीप आते ही उसने सदैव की भाँति पूछा—कहो, कैसे हो ?

"ठीक हूँ" मैंने मृत सा उत्तर दिया है।

"ईश्वर तुम्हें प्रसन्न रखें" कह कर वह जाने लगा है। परन्तु मैंने साहस करके उसे रोकते हुए कहा है, "यदि बुरा न मानो तो एक बात पूछूं ?"

क्यों नहीं, अवश्य पूछो।

तुम ने तो घोर पाप किए हैं, परन्तु फिर भी प्रसन्न रहते हो। परन्तु मैंने तो कभी कोई ऐसा-वैसा काम नहीं किया, फिर भी प्रसन्न क्यों नहीं रह पाता ?

"क्योंकि मैं लकीर का फकीर नहीं हूँ" उसने हंसते हुए कहा है, बचपन की बात बचपन के साथ गई। अब मैं वह काम नहीं करता ? अब मैं प्रत्येक कार्य को भलाई की ओर मोड़ने का प्रयत्न करता हूं। लेकिन तुम प्रत्येक कार्य को धर्म की संकीर्ण दृष्टि से देखते हो।

"मैं समझा नहीं मैंने सर खुजाते हुए कहा है।"

तुम में और मुझ में अन्तर यह है कि तुम भलाई में से बुराई खोजने का प्रयत्न करते हो और मैं बुराई में से भलाई को ढूँढ़ता हूँ।

"मैं फिर नहीं समझा" मैंने भलाई और बुराई के बीच उलझते हुए कहा है।

"सीधी सी बात है—" उसने मेरे कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा है, "तुमने कभी सोचा है कि आखिर

कौन सी ऐसी बात है जो तुम्हें सन्तोष से कोसों दूर ले जा चुकी है ? बस, कोई भी बात हो मूर्ति के आगे जाकर प्रार्थना कर देते हो। जैसे वह उठकर तुम्हारे साथ चल देगी और तुम्हारी प्रत्येक इच्छा पूर्ण कर देगी। अरे! ईश्वर भी केवल उनकी सहायता करता है जो प्रयत्न करते हैं। हम स्वयं उत्सुक होते हैं तो वह कोई ऐसा कारण बना देता है जिससे हमारा काम हो जाता है। तुम सन्तुष्ट इसलिए नहीं होते कि ईश्वर के समक्ष तुम्हारी मांगें बहुत अधिक हैं। बिना कुछ किए वह पूर्ण नहीं हो पाती, इसलिए तुम्हें शान्ति प्राप्त नहीं होती। मैं ईश्वर से कुछ नहीं मांगता। बस, परिश्रम करता हूं और उसके बदले में वह जो कुछ दे देता है उसे सहर्ष स्वीकार कर लेता हूँ।

लेकिन मन्दिर में जाना और पूजा-पाठ करना कोई बुरी बात तो नहीं ?

मैं कब कहता हूं कि यह बुरी बात है ? उसने आंख के संकेत से पूछा है, 'जिस के मन को जो भाए सो करे। परन्तु यदि उसे मालूम हो कि जो कुछ वह कर रहा है, वह ठीक नहीं है। तब तो उसे वह काम नहीं करना चाहिए न ?'

हां, यह तो ठीक है। बिल्कुल नहीं करना चाहिए।

आज तुम्हारी इस अवस्था में यदि तुम्हें कोई थोड़ा सा धन देकर तुम से कोई अनुचित कार्य करने को कहे तो सम्भवतः तुम तैयार हो जाओ।

यह तो कोई आवश्यक नहीं।

ठीक है कि यह आवश्यक नहीं। परन्तु धन तो आवश्यक है ?

हाँ, सो तो है।

बस, यहीं आकर तुम्हारा सब कर्म-धर्म समाप्त हो जाता है। धन के लिए उस समय आवश्यक होगा कि तुम अनुचित कार्य करो। साथ ही कभी यह भी हो सकता है कि धन के लिए तुम अपना धर्म भी छोड़ दो। क्योंकि इसे तुम आवश्यक समझते हो।

यही तो मैं तुम से पूछना चाहता हूं कि आखिर मैं इसे एक परम आवश्यक वस्तु क्यों मानता हूं ?

क्योंकि नाक रगड़-रगड़ कर तथा कुछ पाने के लालच में भक्ति करके तुम्हारा मन इतना सुदृढ़ नहीं हो पाया कि तुम............खैर, जानते हो कि आज हमारे लाखों भाई अपना धर्म छोड़ छोड़ कर दूसरे धर्मों में प्रवेश क्यों करते जा रहे हैं ?

नहीं तो, क्यों और किस लिए ?

क्योंकि मन्दिर में बैठे हुए पुजारी हमारे धर्म की जड़ें खोखली करते जा रहे हैं। जिस प्रकार एक दुकानदार या व्यापारी प्रत्येक आने वाले ग्राहक का स्वागत करता है, उसी प्रकार ये लोग भी प्रत्येक महिला या पुरुष का स्वागत करते हैं। परन्तु इनकी मुस्कराहट में वही व्यापारियों वाली लाभ प्राप्त करने की भावना छुपी होती है। कुछ हमारे नाम पर और कुछ मृतों के नाम पर वह हमें ठगते हैं।

"समझा !" मैंने चकित होते हुए कहा है, "मुझे भी उनकी मुस्कराहट में कुछ ऐसा खटकता अवश्य था, परन्तु मैं समझ नहीं पाता था।'

खैर, छोड़ो इसे। पहले मेरी एक बात का उत्तर दो।

बोलो ?

बता सकते हो कि मन्दिर में शूद्रों को प्रवेश क्यों नहीं करने दिया जाता ? क्या उनका रंग, रूप और आकार हमारे जैसा नहीं ?

वह गन्दा काम करते हैं, इसलिए।

'भोले हो' उसने मुझसे दृष्टि मिलाते हुए कहा है, भोले भाई विश्वास करो, यदि हमारे पूर्वज कभी शूद्रों का पूजन करने लगते तो आज वह स्थान द्विजों का होता जो कि उन बेचारों का है। जिस प्रकार यदि कोई 'रोटी' को 'सोटी' कहे तो कुछ ठीक सा नहीं लगता। परन्तु यदि पहले ही इसका नाम 'सोटी' रख दिया जाता तो आज हमें 'रोटी' शब्द बुरा एवं अशुद्ध लगता। हमें मालूम है कि दोनों में कोई अन्तर नहीं। रोटी को कुछ भी कहा जाए वह रहेगी तो रोटी ही न ? किन्तु इसे हम समझ नहीं पाते। आज हमारी दशा उन बहरों जैसी हो गई है जो...... कहते कहते वह अचानक रुक कर बोला है, सुनो ! तीन बहरे थे। एक दिन जब तीनों इकट्ठे बैठे हुए थे तो उनमें से एक बोला, चलो आज बाग में घूमने चलते हैं। तब दूसरे बहरे ने कहा, मैं सोच रहा हूँ कि हमें बाग में घूमने चलना चाहिए। इस पर

तीसरे ने झट उत्तर दिया, हम बाग में चलकर बैठें तो ठीक रहेगा। परन्तु कोई भी एक दूसरे की बात नहीं सुन पाया। एक ही ध्येय होते हुए भी वह नहीं जानते कि तीनों एक ही स्थान पर जाना चाहते हैं। ठीक इसी प्रकार आज हम विभिन्न धर्मों के लोग जाना तो बाग रूपी एक ही ईश्वर के पास चाहते है, लेकिन प्रत्येक कोई समझता यह है कि केवल वही एक अकेला ही वहां जा रहा है। शेष सब केवल भटक रहे हैं। तुम्हीं बताओ कि क्या हमारे पास चार पाँव है जो ईश्वर के पास शूद्रों से शीघ्र या पहले पहुँच जायेंगें। जिस रामायण को हम अपने माता-पिता से भी ऊँचा स्थान देते हैं, उसका मूल लेखक इन्हीं लोगों में से एक था। भक्त रदास के दोहे आज भी प्रत्येक ब्राह्मण के मुख से सुने जा सकते हैं।

अचानक न जाने क्या सोचकर वह चुप हो गया है। सम्भवत:, वह देख रहा है कि मुझ पर उसके शब्दों का क्या प्रभाव पड़ा है अथवा कुछ प्रभाव पड़ा भी है या नहीं। न जाने अभी कितनी देर और मेरी ओर देखता हुआ वह अनुमानलगाता रहे इसलिए मैंने पूछा पूरी बात का सारांश क्या हुआ?

सारांश? उसने आंख उठाकर कहा है, तुलसीदास जी के शब्दों में जाकी रही भावना जैसी ता तिन मूरत देखी वैसी—के अनुसार हमारा मन साफ होना चाहिए। अपने प्रयत्न से जो कुछ प्राप्त हो उसी में सहर्ष संतुष्ट रहना चाहिए। बस, और मैं कुछ नहीं जानता, कह कर उसने एक पांव आगे बढ़ाते हुए कहा है, अच्छा, अब मैं चलता हूं। स्वामी जी के व्याख्यान का समय हो रहा है।

लेकिन............,

हां-हां, जल्दी बोलो?

लेकिन तुम तो मन्दिर भी नहीं जाते?

हां, मैं वहां नहीं जाता। बस, विद्वानों की लाभदायक बातें, जो केवल हमारे लिए ही नहीं देश के लिए भी लाभदायक होती हैं, सुनने के लिए आर्य-समाज जाता हूं। मन्दिर में न जाकर घर में ही संध्या आदि करता हूं। क्योंकि मेरा ईश्वर मेरे मन में बसता है। मैं उसे मोटी-मोटी दिवारों और लोहे की सीखचों के पीछे बन्द नहीं बल्कि जगत के प्रत्येक कण में विचरित होते देखना चाहता हूं। ताकि वह अधिक से अधिक स्थानों पर अपने चमत्कार दिखा सके। वह मुझे यह नहीं कहता कि तुम जीवित माता-पिता को तो तड़पा-तड़पा कर मार दो और उनके मरने के पश्चात् सैंकड़ों रुपये पुजारियों और पण्डों के पेट में डाल दो। वह तो केवल यह कहता है कि सदैव सुन्दर कर्म करते हुए अच्छे हृदय वाला प्राणी बनने का प्रयत्न करो तथा अपने इस सुन्दर धर्म के प्रति इतने निष्ठावान बनो कि स्वयं ईश्वर भी तुमको तुम्हारी राह से न हटा पाए।

बात समाप्त करके अकस्मात् 'अच्छा नमस्कार' कह कर वह शीघ्रता से आगे बढ़ गया है। मुझे लगा है जैसे मेरे हृदय में से कुछ निकल कर आकाश में उड़ गया है और मैं पहले से बहुत हल्का हो गया हूं। 'रुको' मैंने लगभग चिल्लाते हुए कहा है, 'ठहरों मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूं।'

अच्छा? सम्भवत: वह चकित हो गया है।

'तो आओ' कह कर उसने अपना हाथ मेरे हाथ में डाल दिया है।

अब उसके साथ स्वामी जी का व्याख्यान सुनने के लिए जाते हुए मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है जैसे मैं शीघ्र ही वह हो जाऊंगा जो कि मुझे होना चाहिए।

रमेश बतरा
६१९, शिवाजी नगर,
गुड़गांव, (हरयाणा)

प्रभाताश्रम

स्व० स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती जी द्वारा स्थापित वर्णाश्रम संघ के इस प्रमुख केन्द्र प्रभाताश्रम—ग्राम टीकरी—मेरठ का वार्षिकोत्सन २६-२७ जून को बड़े समारोह से सम्पन्न होने जा रहा है। आर्य जगत के विद्वान नेताओं की उपस्थिति में आश्रम में "अग्निलोक" की स्थापना की जायगी। इस अवसर अधिक से अधिक संख्या में भाग लेकर स्व स्वामी जी की इस संस्था का तन-मन-धन से सहयोग करें

स्वामी विवेकानन्द सरस्वती
प्रधान—वर्णाश्रम संघ

शंका-समाधान

प्रश्न १—क्या वैदिक धर्म भी अन्य धर्मों की भाँति पाप क्षमा का नुस्खा बतलाता है ? अल्लाबख्श आर्य, गुड़गावां

उत्तर—प्रथम तो प्रश्नकर्त्ता महानुभाव को यह समझ लेना आवश्यक है कि धर्म तो सत्य-सनातन वेदों पर आश्रित एक ही होता है, जिसे वैदिक धर्म कहते हैं अन्य सब तो मत-सम्प्रदाय अथवा दल होते हैं।

हाँ तो वैदिक धर्म जो है वह पाप क्षमा का नुस्खा नहीं बतलाता किन्तु वह तो यह कहता है कि—जो किये हुए कर्म हैं उनका फल तो भोगना ही पड़ेगा। वैदिक गीता के शब्दों में—"अश्वमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।"

वेद ईश्वरोपासना की एक सच्ची रीति सिखलाता है, जिसके द्वारा परमेश्वर की महान् शक्तियों का अनुभव होने लगता है, फिर जब उपासक अपने आप को चौबीसों घण्टे परमेश्वर की आँखों के सामने विचरते देखता है तो वह धीरे-धीरे पहले किये गए पाप कर्मों का फल भोगकर आगे स्वतः ही पाप कर्मों से मुक्ति पा लेता है। अन्य जितने भी मत हैं वे मनुष्य कृत हैं, कोई भी मनुष्य सब विषयों में आदर्श नहीं स्थापित कर सकता। ये सब सम्प्रदाय तो पेट-पूजा के लिये ही चलाये गये हैं, इन सब मतों के प्रचालकों ने जिस भी तरह भोले लोगों को अपने चक्कर में फसते देखा, वही सस्ता और लुभावना उपाय पोथियों में लिख कर जनता के सामने रख दिया, जिसमें सिर खपा-खपा कर ये अपना सर्वनाश ही कर डालें।

प्रश्न २—हमारी सरकार लूप-निरोध आदि पर प्रति वर्ष करोड़ों रुपया खर्च करती है, क्या इसी तरह ब्रह्मचर्य को प्रोत्साहन देने में भी कुछ सहायता करती है ?

अशोक कुमार (महाराष्ट्र) का एक छात्र

उत्तर—जिस सरकार को परिवार नियोजन का ऐसा सरल उपाय जिसमें त्याग तपस्या की तो कोई आवश्यकता ही नहीं, साथ में काम वासनाओं की तृप्ति भी खूब हो वह भला संयम और तपस्यामय ब्रह्मचर्य पालन को खर्चा करके क्यों बढ़ावा देने लगी, इससे तो उनकी गद्दियों को और खतरा होने की सम्भावना हो सकती है।

वर्तमान भारत सरकार परिवार वृद्धि पर अंकुश लगाने के लिये जिन लूप-निरोध आदि उपायों का सहारा ले रही है, यह सरकार के दिवालियेपन का सबसे बड़ा चिन्ह है। निरोध आदि को प्रोत्साहित करके सरकार भारतवर्ष को हिजड़ा और नपुंसक बना कर पुनः विदे- शियों के हाथों सौंपने की तैयारी कर रही है। बुद्धिमान व्यक्ति वह होता है जो समय के अनुसार अच्छाई-बुराई की पहचान करके तदनुसार आचरण करे। परिवार-नियो- जन के लिये लूप-निरोध आदि का सहारा लेना एक महा घृणित कार्य है।

जो व्यक्ति अन्तःकरण में जैसे विचार रखता है, व प्रत्यक्ष में भी वैसा ही आचरण करता है। हमारी वर्तमा[न] सरकार का एक-एक पुर्जा इंग्लैंड और अमेरिका [की] सड़ी हुई गलियों में तैयार हुआ है, तब स्वभावतः ही इ[न] शासनाधिकारियों के मस्तिष्कवासनाओं के कीचड़ से [भरे] हुए हैं, उन्हीं की तृप्ति के लिये इन द्वारा यह सबसे अच्छ[ा] उपाय निकालकर करोड़ों रुपये नष्ट करके स्वयं तथा अन्य द्वारा पालन किया व करवाया जा रहा है।

ब्रह्मचर्य तो उन्हीं द्वारा पालित होगा जो वेद प्रति- पादित भारतीय संस्कृति के उपासक ऋषि-मुनियों [के] आश्रमों वा गुरुकुलों से दीक्षित होकर शासनाधिकारी बनेंगे, इन पाश्चात्य विधर्मियों से तो आशा करना [ही] व्यर्थ है।

प्रश्न ३—महर्षि जी ने हिन्दु शब्द के स्थान पर आ[र्य] शब्द को क्यों अपनाया ?

— एक कट्टर हि[न्दु]

उत्तर—प्रथम तो हिन्दु और आर्य शब्दों के अर्थ [को] समझ लेना आवश्यक है। हिन्दु शब्द डाकू-चोर-लुटेरा निन्दक आदि अर्थों में व आर्य शब्द श्रेष्ठ-सत्पुरुष-आ[गे] में गति करने वाला आदि अर्थों में प्रयुक्त होता है।

किसी भी व्यक्ति को जिस किसी शब्द से सम्बोधि[त] करके पुकारेंगे, उसकी चेष्टाओं-क्रियाओं पर स्वभाव[तः] उसके अर्थों का कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य ही पड़ेगा भारतवर्ष के वीर श्रेष्ठों को कायर और कमजोर ब[ना]

के लिये मुसलमान शासकों ने आर्य शब्द हटाकर हिन्दु शब्द का प्रयोग किया। हिन्दु शब्द का उपरोक्त अर्थ अरबी-फारसी की पुस्तकों में आज भी मिलता है। हमें सन्तुष्ट करने के लिये कह दिया जाता है। हिन्दु नाम सिन्धु नदी के वासी होने के कारण पड़ा किन्तु नदी-भाषा व प्रान्त का नाम वही का वही रहना और दूर-दूर तक बसने वाले भारतवासियों का नाम हिन्दु हो जाना यह कहाँ का नियम है, समझ नहीं आता। यह भी एक कारण है कि हम ऐसे घृणित और निकृष्ट शब्दों से प्रयुक्त होते हुए आलसी-कायर कमजोर और निर्वीर्य बन गये।

ऋषि दयानन्द ने इस महान् षडयन्त्र को समझा और हमें पुनः हमारा प्राचीन गौरव याद करवाने के लिये, ऐसे पवित्र और तात्त्विक शब्द आर्य का प्रयोग हमारे लिये अपने समस्त ग्रन्थों में किया। परन्तु आज खेद इसी बात का है कि हमारी रक्षा का इतना प्रयत्न होने पर भी हमारे अग्रणी, कहलाने वाले नेता गण हमें अब भी भूल भुलैया में डालकर लकीर के फकीर बने हुए हैं।

समाधान कर्त्ता—
सत्यव्रत 'निपुण'

*

पुस्तक परिचय

ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज को संस्कृत साहित्य को देन

ले०—डा० भवानीलाल भारतीय
प्रकाशक :—श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट अमृतसर।
मूल्य ६. ०० रुपये पृष्ठ संख्या ३८८

इस ग्रंथ रत्न के लेखक आर्य गौरव डा० भवानीलाल जी भारतीय के नाम से समस्त आर्य जगत सुपरिचित है। उक्त ग्रंथ उनके पी० एच० डी० के लिए स्वीकृत प्रबन्ध का संशोधित परिवर्तित रूप है। इसे पढ़कर अनायास मुख से फारसी की यह उक्ति निकलती है :—
'ईं कार अज तो आयद, वा मर्दा चुनीं कुनन्द।'

अर्थात् यह कार्य तुमने किया है और पौरुष वाले पुरुष ऐसे ही किया करते हैं।

उपसंहार व चार परिशिष्टों के अतिरिक्त इस पुस्तक के आठ अध्याय हैं। एक से एक बढ़कर उपादेय एवं स्तुत्य है। लेखक का परिश्रम समुद्र मन्थन से कम नहीं। हाई स्कूल, कालेज, गुरुकुल के प्रत्येक छात्र, अध्यापक व प्राध्यापक के लिए यह ग्रंथ पढ़ने योग्य है। सब आर्यो के लिए यह पुस्तक उपयोगी व प्रेरणाप्रद है। संस्कृत साहित्य, आर्यसमाज व आधुनिक भारत के साँस्कृतिक इतिहास के पाठकों व विद्वानों के लिए यह एक अमूल्य निधि है।

विद्वान् लेखक ने आर्यसमाज के संस्कृत साहित्य के पुस्तकालयों में स्वतन्त्रानन्द पुस्तकालय अमृतसर की चर्चा नहीं की। उर्दू में संस्कृत साहित्य सम्बन्धी आर्य ग्रंथों यथा वैदिक स्वर्ग (पं० चमूपति), कलाम—उर-रहमान वेद या कुरान (पं० धर्म भिक्षुजी) ईशोपनिषद् (स्वामी वेदानन्द जी) आदि ग्रंथों की चर्चा नहीं की। तैलगु भाषा में श्री पं० मदनमोहन जी विद्यासागर, पं० गोपदेव जी आदि द्वारा प्रकाशित ग्रंथ रत्नों का भी उल्लेख नहीं। कन्नड़ भाषा में मान्य पं० सुधाकर जी चतुर्वेदी तथा मलायलम भाषा में श्री पं० नरेन्द्र भूषण जी द्वारा अनूदित एवं स्वलिखित ग्रंथों की चर्चा भी छूट गई है।

कला प्रेस, आर्यसमाज चौक प्रयाग, आत्मानन्द प्रकाशन मन्दिर यमुनानगर आदि कुछ महत्वपूर्ण प्रकाशन संस्थाओं का उल्लेख भी होना चाहिए था। एक ग्रंथ का नाम भी ठीक नहीं छपा। अगले संस्मरण में यशस्वी विद्वान् हमारे सुझाव ग्रहण कर ग्रंथ को और अधिक उपयोगी बनायेंगे ऐसी हमें आशा है।

वीर लेखराम के इस मानस पुत्र की अविरल व अविराम चलने वाली लेखनी द्वारा लिखे इस ग्रंथ को पढ़कर जी चाहता है कि इस ग्रन्थ का अधिक से अधिक प्रचार हो।

—राजेन्द्र जिज्ञासु

जगदीश सराफ
मन्त्री—आर्यसमाज भिवानी

आर्यसमाज में सात्विक विद्रोह की आवश्यकता

तत्व पाँच हैं। (१) पृथ्वी (२) जल (३) वायु (४) अग्नि (५) आकाश।

परन्तु हम देखते हैं कि आज पाँचों तत्व राजनैतिक वातावरण से प्रभावित हैं। यानि क्या समुद्र, क्या पृथ्वी आकाश, ग्रह, उपग्रह आदि सब पर राजनीति छाई हुई है। फिर प्रश्न पैदा होता है कि आर्य समाज राजनीति से पृथक् क्यों? स्वर्गीय पंडित मोतीलाल जी नेहरू के शब्दों में कि आजादी से पूर्व जबकि स्वतन्त्रता प्राप्ति का आन्दोलन चल रहा था, उस समय हमारे साथ कंधे से कंधा मिलाकर भारत माता को दासता की जंजीरों से मुक्त कराने के लिए आर्य समाज के ८०% ८५% व्यक्ति हमारे साथ जेलों में थे। परन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात् आर्य समाज राजनीति से पृथक् हो गया। इसका क्या कारण था। यह हमारी भूल हुई या हमारा लक्ष्य यहीं तक था या आर्यसमाज के उस समय के नेताओं का इसमें कोई स्वार्थ निहित था। कुछ नहीं कहा जा सकता। परन्तु यह निर्विवाद है कि हम चूके और हमने अदूरदर्शिता से काम लिया। और इसका नतीजा आज हमारे सामने यह है कि न तो देश ही इतने लम्बे समय के अन्दर समीचीन ढंग से सर्वाङ्गीण विकास कर सका है और आर्यसमाज की जो हालत है वह हमारे सामने है ही।

अब विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या हम अब भी इसी कुम्भकर्णी निद्रा में ही सोये रहेंगे या चेतेंगे। यदि हम कुछ दिन और इसी प्रकार से सोये रहे तो इसमें संदेह नहीं कि महर्षि का जो स्वर्णिम स्वप्न था कि "कृणवन्तो विश्वमार्यम्" क्या वह साकार सिद्ध हो सकेगा? कदापि नहीं हो सकेगा। अतः आवश्यकता है कि उसी भट्टी को पुनः प्रज्ज्वलित किया जाये जिसको देव दयानन्द ने अपने दिव्य जीवन को तिल-तिल जलाकर प्रज्ज्वलित किया और स्वामी श्रद्धानन्द, लेखराम, हंसराज, लाजपतराय आदि ने जिसमें जीवन आहुति डालकर उसको बढ़ाया। परन्तु सवाल यह है कि अब यह कैसे कायम रहे। इसका जवाब केवल एकमात्र यह है कि आर्यसमाज राजनीति में प्रवेश कर एक ऐसा सात्विक विद्रोह जगाये जिसमें हमारी सारी सामाजिक संकीर्णता, सारे ही धार्मिक अंध-विश्वास, अशिक्षा, बेरोजगारी, दरिद्रता, हीनता, जड़ता, विषमता, मादक द्रव्यों का सेवन, सामाजिक कुरीतियाँ, अन्ध-श्रद्धा, नैतिक पतन, भ्रष्टाचार, चरित्र हीनता, बेईमानी, ऊँच-नीच का भेद, जातिवाद, अराष्ट्रीयता आदि जल कर राख हो जायें। क्रान्ति की भीषण ज्वालायें शिखायें सारे समाज में चारों ओर फैल जायें और राष्ट्रवाद के लिए अनुकूल भूमि पूरी तरह तैयार हो जाये।

एक म्यान में दो तलवार

परन्तु आज आर्यसमाज की क्या हालत है, एक तरफ तो वह अपने आपको केवल धार्मिक संस्था के रूप में मानते हैं और दूसरी तरफ उसके नेता गण तथा उच्च पदाधिकारी विभिन्न रूपों में कोई किसी राजनैतिक संस्था से सम्बन्धित है और कोई किसी से। अब हम आर्यसमाज को राजनीति से पृथक् कहें या उसके साथ कहें। अभी हाल ही में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का चुनाव सम्पन्न हुआ है जिसमें बहुत से ऐसे नेता गण निर्वाचित हुए हैं जो कोई जनसंघ की तरफ से एम. पी० है कोई दूसरी पार्टी से, तो यह प्रत्यक्ष दुर्बलता और गलत रूप नहीं तो क्या है। यह एक म्यान में दो तलवार के माफिक है। मैं यह मानता हूँ कि निस्संदेह काफी चेष्टाओं के पश्चात् उनको मजबूरन यह रास्ता अपनाना पड़ा है और उनके कार्य और त्याग में कोई कमी नहीं है परन्तु अच्छा यह है कि हम किसी कीमत पर भी अपने मार्ग से न भटक कर अन्य मार्ग का अनुसरण न करें।

आदित्य ब्रह्मचारी, देव दयानन्द ने भारत की आजादी को तो केवल उसकी भूमिका मात्र बतलाया था उन्होंने कहा था कि हमारा अन्तिम लक्ष्य तो सारे संसार में आर्यों का 'अखण्ड चक्रवर्ती सार्वभौम साम्राज्य' स्थापित करना है। अतः क्या हम महर्षि के पद-चिन्हों पर अग्रसर हो रहे हैं, उत्तर स्पष्ट है कि हम अभी कोसों दूर हैं। आज आर्यसमाज में यह एक विवादास्पद विषय बना हुआ है कि आर्यसमाज केवल धार्मिक संस्था है और उसका राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं है। यदि वह राजनीति में चला जायेगा तो भ्रष्ट हो जायेगा कैसी अद्भुत विडम्बना है। क्या आर्यसमाज कोई बालू की दीवार है जो हाथ लगाने मात्र से ढह जायेगी या छुई मुई का पौधा है जो हाथ लगाने से मुरझा जायेगा या राज्य की कुर्सी कोई जादू की बनी हुई है जिसको छूते ही आदमी का

का क्या बन जाये और कुछ-कुछ बहने लग जाये। क्या समझ बै हम आर्यसमाज को। हम नारा लगाते हैं 'कृणवन्तो विश्वमार्यम्' परन्तु क्या केवल नारा लगाने मात्र से या आर्यसमाज हाल की चार दिवारी पर लिखने मात्र से लोग आर्य हो जायेंगे या सप्ताह में एक दिन रविवार को सामूहिक रूप से इकट्ठे होकर संध्या, हवन करने तथा वर्ष में तीन दिन वार्षिक-उत्सव मनाने मात्र से यह सब हो जायेगा। इससे वही होगा जो अभी तक होता आया है। मैं इन आवश्यक दैनिक शारीरिक और मानसिक प्रगति की क्रियाओं का स्वागत करता हूं। मेरा तात्पर्य इनसे विमुख होना या इनका विरोध करना नहीं है। परन्तु जैसे शरीर की आवश्यकता के लिए भोजन करना, सोना, बैठना, शौच आदि क्रियायें करते हैं वैसे ही आत्मिक प्रगति के लिए संध्या हवन आदि हैं। फर्क केवल मात्र यही है कि हम घर पर अकेले परिवार में करते हैं और आर्यसमाज में सामूहिक रूप से। परन्तु इससे अपने महान् कार्य की इतिश्री समझ लेना बुद्धिमत्ता नहीं है।

भूखे भजन न होय गोपाला

हम चले हैं लक्ष्य बनाकर कि समस्त दुनिया को आर्य बनायें, परन्तु प्रोग्राम हमारे पास उसके लिए कोई नहीं है, तो फिर यह कैसे हो सकेगा। आज देश की सीमाओं (लद्दाख, नेफा, कश्मीर आदि) पर शत्रु की आँखें लगी हुई हैं। देश का आन्तरिक वातावरण अत्यन्त दूषित है। विभिन्न प्रकार की सामाजिक बुराइयाँ, विषमतायें, छात्रों का आन्दोलन तथा असंतोष, व्यापारी वर्ग की समस्यायें, श्रमिक आन्दोलन, जनसंख्या की अबाध गति से वृद्धि, भाषावाद, जातिवाद, सम्प्रदाय, ईसाई मिशनरी का प्रचार, बेरोजगारी, भुखमरी आदि अनेक बुराइयाँ दिन प्रतिदिन पनप रही हैं। क्या हमने इनके प्रति कोई युक्तियुक्त समाधान खोज कर उसके लिए कोई प्रयत्न किया है या इनके लिए हमने कोई प्रोग्राम बनाया है। यदि ये वर्ग हमारे सामने आकर अपनी समस्याओं का समाधान चाहें और हम यह कहें कि आप आर्यसमाज मन्दिर में आओ और हवन, संध्या करो तो यह हास्यास्पद होगा। एक आदमी भूखा है और भूख से तड़पड़ा रहा है, कोई नंगा है और वह बगैर वस्त्र के शीत से ठिठुर रहा है, किसी के पास बैठने और रहने के लिए जगह नहीं है और हम उनको उपदेश करें वेदों का और ब्रह्मज्ञान की बातों का तो वह कभी नहीं सुनेगा। यह तो कहावत भी प्रसिद्ध है कि भूखे भजन न होये गोपाला यह लो अपनी कंठी माला।

झकझोर दें!

पहले आवश्यकताओं की पूर्ति की आवश्यकता है तत्पश्चात् वह हमारी ज्ञान की बातें सुनेंगे, अपनायेंगे और अनुसरण करेंगे। यह एक कटु सत्य है। हम इनसे अपनी आँखें नहीं मीच सकते। यह हकीकत है। अतः आओ और महर्षि के लिखे छठे समुल्लास के अनुसार राजधर्म कायम कर आर्यसमाज को वैसे ही झकझोर दें जैसे ऋषि दयानन्द ने गहरी नींद में सोये हुए अपने देशवासियों को झकझोर कर उठाया था। आज आर्यसमाज और देश के भविष्य को उज्ज्वल बनाने के लिए इस कायाकल्प की अत्यन्त आवश्यकता है। और यह कायाकल्प तभी होगा जब आर्यसमाज एक सूत्र में बन्ध कर शीघ्रातिशीघ्र राजार्य सभा कायम कर राजनीति में प्रवेश करे। और इस भ्रम धारणा को निकालें कि धर्म और राजनीति का कोई मेल नहीं। यह केवल भ्रम मात्र है। "वह राजनीति अधूरी है जिसमें धर्म का समावेश न हो" और इसके उदाहरण प्रत्यक्ष हमारे सामने हैं। आज रशिया तथा यूरोप के दूसरे देशों और कम्युनिस्ट देशों को देखिये उन्होंने धर्म और राजनीति का कोई मेल नहीं बैठाया और धर्म को अफीम की संज्ञा दी। उसके नतीजे हमारे सामने हैं कि वे देश हर दृष्टि से समृद्ध होते हुए भी आज वहाँ अशान्ति, कलह, आत्म हत्यायें, चरित्रहीनता अनीश्वरवाद, शोषण आदि बुराइयां फैल रही है और वे सुख तथा शान्ति से कोसों दूर हैं।

अतः हमें धर्म युक्त राजनीति कायम कर देश के सर्वाङ्गीण विकास करने के लिए अग्रसर होना है। इसके लिए हमें कुछ आभामयी, ज्योतिस्वरूप, देदीप्यमान किरणें आर्य युवक परिषद् के द्वारा प्रस्फुटित हुई दीखनी हैं और मेरा अनुमान है तथा पूर्ण आशा है कि परमपिता परमात्मा इस संस्था को बल प्रदान करें, ताकि जन-जागृति के जन्मदाता देव दयानन्द का स्वप्न साकार सिद्ध करने के लिए यह संस्था आर्यसमाज को कठोर हाथों में पकड़ कर झकझोर दे और भारत में ही नहीं अपितु विश्व में भी आर्य राज्य की स्थापना हो जाये।

कुछ तड़प कुछ झड़प

● प्राध्यापक राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

चुनौती स्वीकार—यह एक निर्विवाद सत्य है कि १९६७ के सामान्य निर्वाचन में आर्यसमाज के सत्ताधारी नेताओं ने सस्ती लोकप्रियता के लिए आर्यसमाज के गौरव को गिरवी रख दिया। अपने निजी हितों के लिए आर्य समाज के हितों की निमर्मतापूर्वक हत्या की। इन अदूरदर्शी लीडरों ने अपनी चौधर के लिए सब कर्त्तव्यों व मन्तव्यों को विसार दिया। इनकी अनैतिक नीति से दुखी होकर आर्यसमाज के मूर्धन्य विद्वान् श्री अमर स्वामी जी को कहना पड़ा कि—

"आर्यसमाज की पहली पीढ़ी के नेताओं ने अपना घर बार फूंक कर आर्यसमाज को बनाया परन्तु आज के नेता आर्यसमाज को फूंक कर अपने घर बना रहे हैं।"

परन्तु निराश हताश होने की आवश्यकता नहीं। हम आशावाद के अग्रदूत देव दयानन्द के मानस पुत्र हैं। राजधर्म के गत अङ्क में पाठक 'हम कब तक चुप रहेंगे' शीर्षक से आर्यसमाज की युवा पीढी के उर के उद्गारों से सुपरिचित हो चुके हैं। आर्य जनता को युवा पीढी विश्वास दिलाती है कि मां—आर्यसमाज के मान गौरव की रक्षा के लिए हम प्रत्येक सम्भव उपाय करेंगे। हर मूल्य पर आर्यसमाज की लुटती लाज को बचाया जाएगा। जनता कुछ दिन प्रतीक्षा करे। आर्य युवक शीघ्र ही अपने कार्यक्रम की घोषणा करेंगे।

चुप चाप नहीं हम रह सकते।
हम नहीं पाप को सह सकते॥

हमें देश तथा विदेश से आर्य जनता के सहयोग के पत्र आ रहे हैं। आर्य जगत इस समय मार्ग दर्शन की मांग कर रहा है। इन विकट विषम परिस्थितियों का सीना चीर कर हम आर्यसमाज के संगठन व मान मर्यादा की रक्षा तो करेंगे ही। १९७५ में आर्य समाज की आ रही शताब्दी के लिए गतिमान होकर विश्व व्या[पी] कार्यक्रम भी बनाने का हम ने दृढ़ शिव संकल्प किया है।

युवा पीढी पूरे आत्म विश्वास से रंग बिरं[गी] टोपियों वाले लीडरों की चुनौती स्वीकार करती है। आर्यसमाज के लिए जन्म और जावन जुटाने वाले त[पस्]वियों का हमें आशीर्वाद प्राप्त है। उर्दू कवि के श[ब्दों] में लीडरों से हम पुनः कहेंगे :—

कहो नाखुदा से कि लंगर उठा ले।
मैं तूफां की जिद देखना चाहता हूं॥

भ्रमोच्छेदन—दैनिक 'वीर प्रताप' जालंधर में कु[छ] दिन पूर्व जनसंघ के नेता श्री ओमप्रकाश त्यागी जी [का] छूतछात सम्बन्धी एक लम्बा लेख प्रकाशित हुआ है। उसमें आपने बार-बार यह लिखा है कि छूतछात हि[न्दू] धर्म के विरुद्ध है। आपने उसमें लिखा है कि हिन्दुओं [में] छूतछात केवल मध्य काल में आई। आपने अपने मत [की] पुष्टि में वेद के प्रमाणों के अतिरिक्त पुराण आदि पौरा[]णिक ग्रंथों के भी कुछ प्रमाण दिये हैं।

हमें इस लेख पर कई आपत्तियां हैं। पहिली यह [है] कि धर्म केवल एक है वह है ईश्वरीय ज्ञान वेद। त्या[गी] जी का यह लिखना सर्वथा ठीक है कि वेद में अस्पृश्यता [की] गंध भी नहीं। पर जनसंघी यदि अनार्ष ग्रंथों को अमा[न्य] घोषित नहीं करते तो उनका हिन्दू धर्म छूतछात [के] कलंक से बच नहीं सकता। त्यागी जी की जानकारी [के] लिए लिख दूं कि छूतछात मध्यकाल की देन नहीं। मध्य काल में तो कबीर, नानक, रविदास, तुकाराम आ[दि] कई सन्तों ने इसके विरुद्ध आवाज भी उठाई। जि[न] पुराणों के त्यागी जी ने प्रमाण दिये हैं। उन्हीं अन[्य] पुराणों में छूतछात का विधान है। क्या त्यागी जी इस[े] झुठला सकते हैं ? एकलव्य की कहानी पौराणिकों में औ[र] विशेष रूप से संघ में बहुत प्रचलित है। गुरु दक्षिणा

दिन तो उसे संघ में सर्वत्र सुनाया जाता है। वह कहानी मध्य काल की तो नहीं। ऋषि दयानन्द का विचार झुठलाया नहीं जा सकता कि महाभारत से भारत का पतन आरम्भ हुआ, मध्य कालसे नहीं।

आदि शंकराचार्य भी तो मध्यकाल में नहीं जन्मे। वह भी तो अस्पृश्यता के पोषक थे। त्यागी जी यदि छूतछात का उन्मूलन चाहते हैं तो हिन्दू धर्म के वकील न बनें। वह केवल महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित वैदिक धर्म को समझें और उसके प्रसार में जुटें। हिन्दु नहीं आर्य बनें। अनार्ष ग्रंथों को 'गुरुओं' से अमान्य घोषित करवायें। यही कल्याण मार्ग है।

ब्र० दयानन्द जी एम० ए०—कई मास से आर्य समाज के प्यारे लाल ब्र० दयानन्द एम० ए० (द्वय) लेखराम नगर कादियां का कुछ भी अता पता नहीं चल रहा हम समझते हैं कि हमारा प्यारा दयानन्द अब इस संसार में नहीं। तथापि यह कितनी लज्जाजनक बात है कि एक सुयोग्य, परोपकारी, सदाचारी, तपस्वी तरुण के साथ घटी घटना की केन्द्र या प्रान्तीय सरकार की ओर से पूरी-पूरी, निष्पक्ष न्यायिक जांच नहीं कारवाई जा रही। श्री गंगानगर में एक धनीमानी सज्जन के नौ वर्षीय बालक की निर्मम हत्या पर वहाँ जनता के व्यापक रोष व प्रबल आन्दोलन ने राजस्थान सरकार को जांच के लिए विवश कर दिया। कुछ ही दिन में सारे काण्ड का पता चल गया। इधर एक सुयोग्य वक्ता, लेखक आर्य युवक महीनों से··············पर सरकार मौन है। क्यों? क्या इसलिए कि दयानन्द जी के लिए कोई क्षुब्ध नहीं है या इसलिए कि वह आर्य समाजी था?

परम पूज्य—वेद में अग्नि शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुआ? अग्नि ईश्वर का एक प्रमुख नाम है। ईश्वर ज्ञान स्वरूप है, प्रकाश स्वरूप है इसलिए अग्नि कहलाता है। अग्नि हमारे उपास्य देव का नाम। और हमारा नाम क्या? वेद ने आर्यों को भी अग्नि कहा है। कारण? आर्य अघ अज्ञान का नाश कर ईश्वर के नियमों की व्यवस्था का प्रकाश करता है इस लिए आर्य को अग्नि कहा। अग्नि को वेद ने पावक कहा है।

पावक वह है जो दूसरों को पवित्र करे। दूसरों को अपने गुण दे। अग्नि का धर्म ही यही है। यदि हम दूसरों को पवित्र नहीं कर सकते। यदि हम औरों पर अपना रंग नहीं चढ़ा सकते तो हम आर्य नहीं।

दूसरों पर रंग क्या चढ़ाना है। हमारे संगठन व नीति की त्रुटियों के कारण दूसरे हम पर अनार्यता थोपने की कुचेष्टाएँ कर रहे हैं।

आर्य मित्र में श्री आचार्य विश्व श्रवा जी के एक लेख से पता चला कि एक सभा ने अपने एक प्रस्ताव में महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के नाम के साथ परम पूज्य शब्द जोड़ा है। एक सिद्धान्त प्रेमी आर्य ने मुझे लिखा 'मेरे परम पूज्य पिता जी······।' मेरे ही एक अभिन्न बंधु ने मुझे भावावेश में परम पूज्य लिख दिया।

हम राजधर्म द्वारा सब आर्यों को इस छूत की बीमारी से बचने के लिए सावधान करते हैं। यदि एक व्यक्ति परम पूज्य है तो परमेश्वर को क्या कहा जाए? महर्षि ने अपने लिए आर्यसमाज का 'परम सहायक' बनने पर यही तो आपत्ति की थी। आचार्य दयानन्द के पवित्र जीवन की यह घटना हमारे लिए अत्यन्त प्रेरणाप्रद है। परम पूज्य शब्द संघी भाइयों के लिए ही रहने दीजिए। हम ईश्वर विश्वासी आर्यों के लिए यह अशोभनीय है कि हम किसी जीव को परम पूज्य मानें।

प्रातः स्मरणीय—कुछ सज्जन किसी दिवगंत महात्मा हुतात्मा के लिए प्रातः स्मरणीय विशेषण का प्रयोग कर देते हैं। यथा प्रातः स्मरणीय स्वामी सर्वदानन्द जी""। यह भी अवैदिक भावना है। हम आर्यों के लिए प्रातः समय विश्व नियन्ता परमेश्वर ही वन्दनीय है। वही प्रातः काल के समय हमारे लिए हमारे श्रद्धेय आचार्य मनुजता के मान, श्रम की शान देव दयानन्द ने प्रातःकालीन मन्त्रों के पाठ का विधान किया है। यह मन्त्र ईश्वर प्रार्थना के हैं। इसलिए किसी पूज्य पुरुष को हमें प्रातः स्मरणीय नहीं कहना चाहिए।

★

विदेशों में "राजधर्म" की चर्चा

श्री सीताराम मंगल

भूतपूर्व कोषाध्यक्ष तथा संयुक्त मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा-पूर्वी अफ्रीका
वर्तमान—लन्दन स्थित—लिखते हैं

"राजधर्म पत्रिका अत्यन्त सुन्दर एवं पठनीय है। बड़े विद्वतापूर्ण लेख हैं—वैदिक धर्म के प्रचार का एक बड़ा साधन है। "कायाकल्प" जो कि एक पुस्तक के रूप में है, प्रत्येक पुस्तकालय में रखने लायक है। प्रत्येक युवक तथा वृद्ध को इस पुस्तक से लाभ उठाना चाहिये।"

डा० राजेन्द्र शर्मा

वेटेरिनरी डायगनास्टिक लोबोरेटरी
आयोवा स्टेट यूनिवर्सिटी
अमेज—आयोवा ५००१० यू. एस. ए. से लिखते हैं—

राजधर्म विशेषांक मिला—बहुत-बहुत धन्यवाद ! स्वामी समर्पणानन्द जी के दर्शन करने का मुझे मौका मिला था। आर्य समाज के विद्वान धीरे धीरे जा रहे हैं परन्तु नई पीढ़ी में अभी ऐसे तपस्वी कम नजर आते हैं—प्रभु हम सबको बल और ज्ञान देवे ताकि हम वेद के प्रसार को अपने में और दूसरे लोगों में फैलायें।······

श्री राजवीर शास्त्री

फरीदनगर, मेरठ—लिखते हैं—

"राजधर्म का "कायाकल्प" का अंक प्राप्त हुआ। यह अंक वर्तमान समय की परिस्थिति के अनुसार अत्यन्त ही उपयोगी है इसकी प्रतियां तो शिक्षित समाज में प्रत्येक व्यक्ति के पास अवश्य होनी चाहिये।

श्री युधिष्ठिर जी मीमांसक

रामलाल कपूर ट्रस्ट
२३२ एल. माडलटाउन
सोनीपत (हरयाणा) से लिखते हैं—

आपकी पत्रिका राजधर्म नियमित रूप से आती है। आपके विचारों से मैं प्रायः सहमत हूं। श्री वेदव्यास का कहना सर्वथा ठीक है "सर्वे धर्मा राजधर्मं निमिष्ठाः"।

श्री कृष्ण चन्द जी विद्यालंकार

सम्पादक "सम्पदा" मासिक

"मैं पिछले कुछ महीनों से राजधर्म को देख रहा हूं। मैं ऐसा अनुभव कर पाया हूँ कि इस पत्र के सुयोग्य सम्पादक श्री श्यामाराव के हृदय में देश की दुःखद परिस्थितियों को देखकर उसी तरह एक तड़प पैदा हुई है जिस तरह एक महान कर्मठ और विचारशील व्यक्ति में होनी चाहिए और जिस तड़प के बिना समाज की प्रगति की कोई प्रवृत्ति ही जन्म नहीं ले पाती। आज हमारे देश की सामाजिक और राजनैतिक, धार्मिक और नैतिक अवस्था बहुत दुःखद और चोट पहुंचाने वाली है। किन्तु जनसाधारण का ध्यान अपने निजी कामों में ही व्यस्त रहता है और उनके हृदय में कोई वेदना ही उत्पन्न नहीं होती। श्री श्यामाराव उन व्यक्तियों में है, जिनके हृदय में आज का अनाचार, आज की मानसिक दासता और आज की नेतृत्वहीन देश की गति को देखकर सचमुच गहरी वेदना उत्पन्न हुई है।

उनकी यह वेदना निष्क्रिय और विवेकशून्य लोगों की वेदना नहीं है। वह वेदना का प्रतिकार करने के लिए तत्पर हो उठे हैं और इसीलिए उनके 'राजधर्म' में हमें झड़प के भी दर्शन होते हैं। वह कुछ कर लेने को आतुर हैं और इसके लिए वह अपनी लेखनी का प्रयोग निर्भयता पूर्वक साहस से करते हैं। जहाँ भी उन्हें कहीं कमी या विचार 'विमूढ़ता दिखाई देती है वहाँ उनकी लेखनी कुठार बनकर उनका समूल नाश करने को उद्यत दीखती है। ऋषि दयानन्द से प्रेरणा पाकर यह तड़प और झड़प आर्य समाज की प्रारम्भिक विशेषता रही है, जो दुर्भाग्यवश आज क्षीण हो चुकी है। इसी विशेषता को श्री श्यामाराव अपनी योग्यता, गहरी संवेदन शीलता और विवेक के द्वारा निःस्वार्थ भाव से पुनः जाग्रत करना चाहते हैं और उसके लिए वह मित्र-अमित्र किसी के दोष को सहन नहीं करना चाहते। राजधर्म के तीनों विशेषांक इसी विशेषता को पुनः प्रबुद्ध करने वाले हैं।

भगवान करे कि प्रबुद्ध आर्य जनता उनके इस प्रयत्न में सहयोग दे और 'राजधर्म' देश में राष्ट्रीय और

सामाजिक चेतना के प्रसार में सफल हो।

श्री ओ३म्प्रकाश सी. सूर्यवंशी

मबुलगा—जि० उस्मानाबाद लिखते हैं —

मैंने आपके द्वारा प्रकाशित बहुत सी पुस्तकों का अध्ययन किया। उनमें इतना रहस्य है—अपने देश की स्वतन्त्रता के प्रेम से भरे हुए प्रकाशन आपने बहुत ही सुन्दर ढंग से किया और सत्य को अपनाकर असत्य को छोड़कर जो प्रकाशित किया है वह हमें बहुत प्यारा लगा। हमारे पास कुछ दो चार और सहयोगी हैं वे भी आपका राजधर्म पढ़कर खुश होते हैं।

श्री अशोक कुमार आर्य

उपप्रधान—आर्य समज, रानी-लिखते हैं—

मैं आपकी पाक्षिक पत्रिका राजधर्म नियमित समय पर पा जाया करता हूँ—इसके लिये धन्यवाद ! राजधर्म के सम्पादकीय, इन्द्रदेव जी, रामानन्द जी, के लेख एवं सामयिकी लेखों को पढ़कर प्रसन्न हो जाता हूँ। आपके पाक्षिक राजधर्म ने सारे आर्य जगत में हलचल मचा डाला है। इसके क्रान्तिकारी लेख लोगों के हृदय में समा गये हैं। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि यह पत्रिका आर्य जगत के उत्थान में सर्व श्रेष्ठ सिद्ध हो चुकी है। यदि इसमें, वेदामृत, बालमंजूषा, सत्यार्थ प्रकाश परीक्षा आदि स्तम्भ चलाये जायें तो बहुत सुन्दर होगा। राजधर्म को अब शीघ्र ही पाक्षिक से साप्ताहिक बनाने की कृपा करें—हम इसमें पूरा सहयोग देंगे।

काफी देर से आर्य समाज में अपने हिन्दी के किसी अच्छे पत्र का अभाव चला आ रहा था। जिस कारण आर्य समाज की आवाज दबती चली जा रही थी। आपने पुरुषार्थ कर 'राजधर्म' को चालू कर और बड़े थोड़े काल में ही इसे बहुत ऊंचे स्तर पर पहुँचाकर आर्य समाज की क्षीण होती चली जा रही देह में नवीन जीवन का संचार किया है। इसके लिए आप धन्यवाद एवं बधाई के पात्र हैं। निश्चय ही आपकी तपस्या तथा लग्न युवकों को आर्य समाज की ओर आकर्षित कर उन्हें देश धर्म तथा जाति के दीवाने बना सकेगी।

'सत्यार्थ प्रकाश परीक्षा' से युवकों में स्वाध्याय की रुचि बढ़ेगी। (यदि पूछे गये प्रश्नों का उत्तर भी राजधर्म में दिये जायें तो इसकी उपयोगिता और नहीं बढ़ेगी क्या ?) अंग्रेजी में छप रहे लेख अपने स्थान पर उपयोगी हैं। कालजों में विद्या ग्रहण कर रहे आज के युवकों का ध्यान चरित्र भ्रष्ट करने वाले नावलों तथा दूसरे पत्रों से हटा कर यह पृष्ठ उन्हें अपनी भारतीय संस्कृति में रुचि लेने तथा अपने धर्म पर हो रहे आक्रमण का मुकाबला करने के लिए अवश्य ही बाध्य करेंगे।

★

पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी

लेखक—श्री रामप्रकाश, एम० एस० सी०, पी० एच० डी०।

प्रकाशक—डा० स्वामी आत्मानन्द जी प्रकाशन मन्दिर वैदिक साधनाश्रम, यमुना नगर, हरियाणा।

पृष्ठ संख्या—१६३।

मूल्य—१ रुपया ३५ पैसे।

प्रस्तुत कृति में आर्यसमाज के एक जाने माने विद्वान् श्री गुरुदत्त का जीवन वृत्त है।

कहा जाता है कि पंडित गुरुदत्त जी घोर नास्तिक मनोवृत्ति के थे और अपनी नास्तिकता पर उन्हें गर्व था। संयोगवश, वे महर्षि दयानन्द के देहावसान काल में वहीं उपस्थित थे। इस मार्मिक दृश्य से वे इतने प्रभावित हुए कि उनमें ईश्वरीय भावना प्रादुर्भूत हो उठी। वे आस्तिक बना गए—महान् आस्तिक—तदनन्तर लाखों नास्तिकों को आस्तिकता की दीक्षा।

पंडित जी ने उच्चतम शिक्षा प्राप्त की थी। उन्हें अंग्रेजी, हिन्दी और संस्कृत पर समान रूप से अधिकार था। उन्होंने पाश्चात्य विद्वानों द्वारा लिखित भारतीय इतिहास व संस्कृत सम्बन्धी गलत व्याख्याओं का संशोधन किया। अपने ओज वी भाषणों द्वारा आर्य विद्या का भूरिशः प्रचार किया। अपनी पटु लेखनी द्वारा अनेक निधियाँ भावी सन्तति के लिए छोड़ गए।

पंडित जी का जीवन घटना प्रधान नहीं था अतएव लेखक डा० रामप्रकाश ने विस्तार से उनकी बहुमुखी विद्वत्ता पर ही डाला है।

पुस्तक सभी आर्यबन्धुओं द्वारा उपादेय है।

समीक्षक ज्ञानेश्वर शास्त्री

गन्दे पोस्टर व गन्दी फिल्मों के विरुद्ध अभियान

सत्यानन्द आर्य

इस समय भारत में चरित्रभ्रंश के कितने आयोजन हो रहे हैं। —सिनेमाघरों में गन्दी फिल्में युवकों को दिखाई जा रही हैं। जगह-जगह सरकार शराब के ठेके निलामी पर बेच रही है—नग्न अश्लील पोस्टरों से शहरों की दिवाल ढकी हुयी है। जहाँ भी जाते हैं सुनने को गन्दे गाने व देखने के लिए गन्दे दृश्य मिलते हैं। दिवारों पर इतने भद्दे चित्र देखने को मिलते हैं जिनके स्मरण से आत्मा में गहरी ग्लानि पैदा हो जाती है, क्रोध से हृदय बैचेन हो जाता है। —मातृशक्ति की अवहेलना, उसका दुरुपयोग, अपमान करके हम बड़े पाप के भागी बन रहे हैं। —यह अपमान बरदाश्त करना असह्य हो रहा है। इसका विरोध व प्रतिकार अगर अभी समय रहते न किया गया तो भारत का भविष्य भगवान के ही हाथों में है।

शहरों में बड़े बड़े इश्तिहार जगह-जगह लगे रहते हैं। सिनेमाओं, सौन्दर्य प्रसाधनों, व्यापारिक प्रतिष्ठानों के कितने गन्दे, भद्दे, अश्लील पोस्टर लगे होते हैं जिनकी तरफ देखना सभ्य पुरुषों के लिए कठिन होता है। इन अश्लील व वासनोत्तेजक पोस्टरों से समाज विशेषकर नवयुवकों के संस्कारों पर जो भयंकर प्रभाव पड़ रहा है वह किसी से छिपा नहीं है। जहां एक ओर ये पोस्टर हमारे युवकों में काम वासना को बढ़ाते हैं वहां छोटे-छोटे बच्चों के मस्तिष्क पर बुरा असर करते हैं। अपने आर्थिक लाभ के लिए लाखों नवयुवकों व शिशुओं के जीवन को कलुषित करने का यह प्रयास ज्यादा दिन तक चलने नहीं दिया जा सकता। इसके विरुद्ध-शीघ्रातिशीघ्र हम आर्य जनों को आवाज उठानी है।

सिनेमा अपने आप में कोई बुरी नहीं है। अच्छे-अच्छे चलचित्र बनते रहने चाहिए जिससे दर्शकों को अच्छी प्रेरणा मिले। यह भी शिक्षा का वैज्ञानिक साधन है। महापुरुषों के जीवन चरित्र पर फिल्म बनें; देश के चारित्रिक विकास के लिए फिल्म बनें, इसमें दो राय नहीं हो सकती। लेकिन गन्दे चित्रों का बहिष्कार करना ही पड़ेगा। ये चित्र देश के चरित्र के लिए घातक है। आज के चलचित्रों का यह परिणाम हुआ है कि चरित्र-भ्रंश और यौन अपराधों की भयानक वृद्धि हुई है। आज का अपराधी वही कार्य करता है जो वह फिल्मों में देखकर आया है आजकल बनने वाली फिल्में कत्ल, जुआ, शराब-खोरी, चोरी, छलकपट व अन्य इसी तरह की बातों से भरपूर रहती है। —अगर समय पर ही ऐसी फिल्मों पर रोकथाम न लगायी गयी तो ये समाज की मुख्य जड़ों को बुरी तरह विषाक्त बना देंगी। मालूम नहीं रवीन्द्र सरोवर-काण्ड जैसे कितने काण्ड देखने को मिलेंगे। जो चल-चित्र समाज का नैतिक ह्रास कर रहे हैं उनको तुरन्त बन्द करना ही पड़ेगा। सरकार को चाहिए कि वह इस संदर्भमें कानून बनाये। यदि इसे नहीं बन्द किये जासकते तो नैतिक कानून की रक्षा के लिए सरकार के कानून भंग करने का साहस हमें करना पडेगा। इन गंदी चीजों के खिलाफ हमको जिहाद शुरू करना पड़ेगा। ये गंदे दृश्य और गंदे गाने चलेंगे तो देश का विनाश हो जावेगा। उसकी प्रतिभा, तेजस्व नष्ट हो जायेगा। —लोग कहते हैं कि ये गन्दे पोस्टर, गन्दे गीत व फिल्म कला के नमूने व विज्ञान की देन हैं —हम कहते हैं कि इन तस्वीरों को अपने रंग महलों में लगाओ, चित्रों व गानों को अपने घर में देखो व सुनो। जब तक कला व विज्ञान के साथ अध्यात्म का समन्वय न होगा विकास संभव नहीं है।

बड़ा दुःख होता है यह देखकर कि आज भारत में सैंकड़ों राजनैतिक दल हैं पर वे इस दिशा में बिल्कुल मौन हैं। मानो उनका कुछ भी नैतिक कर्त्तव्य नहीं है। चुनाव लड़ना, भ्रष्टाचार फैलना और शासन करना ही केवल मात्र उनके अस्तित्व का उद्देश्य रह गया है। अगर हम पचासों पंचवर्षीय योजनाएें क्यों न बना लें पर जब तक देश का चरित्र ऊँचा न होगा देश का विकास समझना भूल है। भौतिक उन्नति से देश ऊँचा नहीं उठता।

आशा है हम आर्य जन अपनी नैतिक जुम्मेदारी समझते हुए इन गन्दे इतिहारों, गन्दी फिल्मों, गन्दे गानों, शराब के ठेकों के विरुद्ध अपना अभियान चलायेंगे। ज्यादा दिनों तक नैतिकता का पतन देखा नहीं जा सकता। लोकमत हमारे साथ है। नेतृत्व की जरूरत है। हम इस काम को उठायेगें तो फिर लाखों हाथ इस काम में हमारे साथ जुट जावेंगे।—

हिन्दुस्तान जनरल
इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
निर्माता :
रेलवे वैगन ● एयर क्राफ्ट रिफुएलर्स
क्रेन्स ● स्टील स्ट्रक्चस ● स्टोरेज टैंक्स
कारखाना : नांगलोई—दिल्ली
दूरभाष—२२६, २६०
कुतुब रोड—दिल्ली
दूरभाष—२६११८५
मैनेजिंग डायरेक्टर—श्री एम० आर० भल्ला

डी०—१६८

श्री ....
....
....
....

विज्ञापन शुल्क

(एक बार के लिये)

कवर पृष्ठ ४	पूरा—	२०० रु०
कवर पृष्ठ ४	आधा—	१५० रु०
कवर पृष्ठ ३	पूरा—	१५० रु०
अन्य पृष्ठ	पूरा—	१०० रु०
अन्य पृष्ठ	आधा—	५० रु०

राजधर्म (पाक्षिक)
वार्षिक शुल्क १० रुपये

ओ३म्
राजधर्म (पाक्षिक)
आर्यसमाज मन्दिरमार्ग नईदिल्ली-१
दूरभाष—४२०४९

संपादक
प्रो० श्यामराव

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के लिये प्रो० श्यामराव द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित।

सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६

ओ३म्

राजधर्म

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का पाक्षिक मुखपत्र

सम्पादक
प्रो० श्यामराव

वर्ष-१ : अंक-१७
वार्षिक शुल्क—१० रु०
एक प्रति ५० पैसे

१० जुलाई १९६९
दयानन्दाब्द १४५

सम्पादकीय—

३० जून का फैसला

जवानों ने मिलके फैसला किया है कि अब हम आर्यसमाज का मज़ाक उड़ता देख नहीं सकते। यदि हम संघठित होकर देव दयानन्द की इस पावन संस्था को पतित करने वाले चन्द अनार्य-समाजी नेताओं को आर्यत्व का आचरण अपनाने के लिये मजबूर नहीं कर सकते तो हमारा "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" तथा "आर्यराष्ट्र की स्थापना" का नारा लगाना कोई अर्थ नहीं रखता। आज आकाश बांधूं, पाताल बांधूं करने से पहले अपने चूते हुए छप्पर को बाँधने की जरूरत है। २९ और ३० जून १९६९ की उच्चस्तरीय युवक गोष्ठी में युवकों ने जिस गम्भीरता और जिस शालीनता के साथ अपने उत्तरदायित्व का परिचय दिया है उसे देखते हुए यह विश्वास होता है कि आर्यसमाज का भविष्य अत्यन्त उज्जवल है और आर्यसमाज के गौरव के साथ खिलवाड़ करने वाले व्यक्तियों को अब सावधान होकर अपनी चुहलबाजी पर नियन्त्रण करना होगा।

श्रद्धेय महात्मा आनन्द भिक्षु जी के नेतृत्व में संगठित इस युवक शक्ति ने आर्य जगत् के क्षितिज पर एक नई आशा की आभा बिखेरी है और परमात्मा की कृपा से जब शक्ति का पूर्ण उदय हो जायगा तब निराशा का अन्धकार पूर्णतया सिमट कर विधर्मियों के हिस्से जा पड़ेगा और अन्धकार को पसन्द करने वाले चमगादड़ों की उछलकूद कम्पनी अपना मुँह छिपाती फिरेगी। युवक गोष्ठी का समारम्भ करते हुए महात्मा जी के हृदय की वेदना जब आंसुओं की धारा बनकर फूट निकली और जब उन्होंने युवकों को ललकारते हुए कहा कि आर्यसमाज के इस अपमान को चुपचाप सहने के बदले तो हमारा मर जाना ही अच्छा है—हम युवकों ने पूरी गम्भीरता के साथ इस चुनौती को स्वीकार किया है। अब हमारा नम्र निवेदन है इन लड़ने वालों से कि वे शीघ्र ही परस्पर की कटुता और आलोचना-प्रत्यालोचना, मुकद्दमेबाजी आदि का परित्याग कर शुद्ध हृदय से बिछुड़े दिलों को जोड़ कर, कन्धे से कन्धा मिलाकर समय की पुकार और आर्य जनता की कराह पर ध्यान दें और आर्यसमाज का मार्ग प्रशस्त करें। यदि समय रहते हुए इस प्रार्थना को स्वीकार न किया गया तो युवा शक्ति भी करवट बदलेगी और अपने प्रचण्ड प्रवाह की चपेट में कइयों को समेट कर प्रलयंकर गान करेगी—

धारा के मग में अनेक पर्वत जो खड़े हुए हैं।
गंगा के पथ रोक इन्द्र के गज जो अड़े हुए हैं।
कह दो उनसे, झुकें अगर तो जग में यश पायेंगे।
अड़े रहे तो ऐरावत पत्तों से बह जावेंगे।

समस्या का समाधान

इन्द्रदेव मेधार्थी

आर्य समाज के क्षेत्र में पिछले कुछ वर्षों से विचित्र व्यामोह व्याप्त है। छोटे कार्यकर्त्ताओं से लेकर वीरष्ठ नेताओं तक में गहरी निराशा छाई हुई है। समाज की चिन्तन की धारा शनैः शनैः रचनात्मक कार्यक्रमों से हट कर आलोचना प्रधान बन गई है। आलोचना भी सिद्धांतों अथवा मन्तव्यों की नहीं अपितु भिन्न भिन्न दल बना कर ईर्ष्या पूर्ण व्यक्तिगत आलोचना में ही सब व्यस्त हैं, जिसके कारण आर्यसमाज का सुदृढ़ संगठन जर्जरित होता जा रहा है। झगड़ों तथा मुकदमों का इतना बाहुल्य है कि जनता अथवा संस्थाओं से जो धन वेद प्रचार के निमित्त सभाओं को प्राप्त होता है वह सब वकीलों की जेब में पहुँच जाता है। दोनों ही पक्ष बड़ी बेदर्दी से आर्य समाज की सम्पत्ति को पानी की तरह बहा रहे हैं। ऐसी स्थिति में आर्य समाज में नये व्यक्ति आ कर प्रभावित हों यह तो सम्भव ही नहीं, बहुत पुराने सक्रिय कार्य-कर्ता भी इस युद्ध की भयंकरता को देखकर खिन्न होते जा रहे हैं। समाज का आन्तरिक वातावरण स्नेह-उत्साह-आत्मीयता के स्थान पर विवाद-कलह-आलोचना एवं निन्दा से परिपूर्ण है।

समाज की वर्तमान स्थिति पर गम्भीरता से विचार विमर्श करने के लिये आयोजित आर्य युवक संगठनों के मुख्य कार्यकर्ताओं की सामूहिक दो दिवसीय बैठक में जो त्रिसूत्री कार्यक्रम बना वह विशेष महत्वपूर्ण है। यदि आर्य समाज के नेता इस कार्य क्रम को स्वीकार कर लें तो समस्या का समाधान अविलम्ब हो सकता है।

त्रिसूत्री कार्यक्रम

१. सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, प्रान्तीय आर्य-प्रतिनिधि सभा, एवं स्थानीय आर्य समाजों के अधिकारी तथा अन्तरंग सदस्य राजनीतिक दल के सदस्य न हों।

आज आर्य समाज में जो अन्तर्द्वन्द्व हमें दिखाई दे रहा है वास्तव में वह परोपकार की प्रबल भावना से प्रेरित होकर नहीं अपितु अपने स्वार्थों को सिद्ध करने के लिये ही किया जा रहा है। जो व्यक्ति आर्य सामाजिक संस्थाओं के अधिकारी बन जाते हैं, उन्हें जनता से सम्पर्क बनाने के लिये अनेक साधन मुफ्त में मिल जाते हैं। नेता लोग आर्य समाज के उपदेशक, भजनोपदेशक, समाचार पत्र आदि सभी साधनों का प्रयोग अपनी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा बनाने के लिये सरलता से कर लेते हैं, अतः झगड़ा आर्य समाज के प्रचार के लिये न होकर कांग्रेस, जनसंघ, भारतीय क्रान्ति दल आदि राजनीतिक पार्टियों को सुदृढ़ बनाने के लिये किया जा रहा है। जो व्यक्ति राजनीतिक दलों में सक्रिय कार्यकर्ता हैं उनके पास आर्य समाज के लिये समय नहीं रहता, फिर भी वे आर्यसमाज के नेतृत्व हथियाने के लिये संघर्ष करते हैं। इसमें अपने राजनीनिक दल का हित ही एक मात्र कारण है अतः विभिन्न राजनीतिक दलों के कार्य कर्ताओं को आर्यसमाज से पृथक् हो जाना चाहिये।

२. सार्वदेशिक तथा प्रान्तीय सभाओं के प्रधान तथा मन्त्री संगठन के लिये २४ घण्टे पूरा समय देने वाले हों।

शायद संसार में आर्य समाज ही एक ऐसी अभागी संस्था है जिसके मुख्य अधिकारियों के पास संगठन के लिये कोई समय नहीं। आर्य समाज के अधिकारी अपने बड़े-बड़े उद्योग धन्धों को सफलता पूर्वक सम्भालते हैं, राजनीतिक दलों में बढ़-चढ़ कर भाग लेते हैं और फिर आर्य समाज पर दया करके लड़ाई झगड़े करने के लिये अपनी प्रतिभा का चमत्कार भी खूब दिखाते हैं। आर्य

समाज के उपदेशकों के समक्ष क्या कठिनाई है, समाज की संस्थाओं की क्या स्थिति है, किन कारणों से हमारा कार्यक्रम आगे नहीं बढ़ पा रहा है, किस आचरण से जनता में हमारे प्रति क्या प्रतिक्रिया हो रही है आदि समस्याओं पर विचार करने को उनके पास कोई समय नहीं। केवल धन की प्रभुता के बल से समाज के अधिकारों पर बने रहने को ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ बैठे हैं। आर्य समाज को सशक्त संगठन के रूप में बनाने के लिये ऐसे कार्यकर्ताओं का होना आवश्यक है जो अहर्निश आर्य समाज के लिये ही सक्रिय रहें।

३. वर्णाश्रम के सिद्धान्तों के अनुसार आचरण करने वाले व्यक्ति ही समाज के कार्यकर्ता हों।

वैदिक धर्म वर्णाश्रम का धर्म है ! आर्य समाज अपने जन्म काल से ही "गुण कर्म स्वभावानुसार वर्ण आश्रम होना चाहिये" इस विषय पर धारावाही वक्तव्य प्रसारित करता रहा है। किन्तु इसे क्रियात्मक रूप देने के लिये आज तक कोई दृढ़ पग नहीं उठाया। जो व्यक्ति आजीवन समाज का मन्त्री, प्रधान, भजनोपदेशक बन कर निरन्तर वर्णाश्रम के सिद्धान्तों की दिव्यता संसार में सिद्ध करता है किन्तु वह स्वयं वर्णाश्रम में दीक्षित न होकर बाल बच्चों के मोह में पड़ा रहता है। ऐसे ही व्यक्तियों ने आर्य समाज को प्रभावहीन संस्था बना दिया है, आर्य समाज के सिद्धांत व्यवहारिक न होकर चर्चा का विषय मात्र बन के रह गये हैं। सभी कार्यक्रम कार्यकर्ताओं के अभाव में पुस्तकों के पृष्ठों तक ही सीमित पड़े हैं। सच्चे आर्यों के वास्तविक समाज का निर्माण तभी होगा जब हम वर्णाश्रम धर्म का पालन करेंगे। यदि अविलम्ब इस दिशा में आचरण न किया गया तो महर्षि दयानन्द तथा सहस्रों विद्वान् महात्माओं के बलिदान से बने पवित्र संगठन आर्य समाज को नष्ट करने का पाप तथाकथित वर्तमान नेताओं पर होगा।

●

बहे रक्त की धारा

देशधर्मद्रोही से लड़ना आज हमारा नारा है।
हटो नहीं तो कट जाओगे भारतवर्ष हमारा है॥
नहीं देश को लुटने देंगे अब कौमी गद्दारों से।
समरांगण में हम खेलेंगे अग्नि के अंगारों से।
रण चण्डी की प्यास बुझावें हम शोणित की धारों से॥
गूंज उठा है भूमण्डल अब युद्ध-युद्ध के नारों से।
बढ़े चलो महावीर समर का आ गया निकट किनारा है॥
बम्ब दमादम फटते हैं और चला करती हैं गोली भी।
लाशों के अम्बार लगें जाती हैं जान अनमोली भी॥
समर भूमि में बहनों की लुटती सुहाग की टोली भी।
फिर तैरती लाश खून में खिलें खून की होली भी॥
आर्यराज आने से पहले बहे रक्त की धारा है॥
संध्या हवन जलसे तक सीमित रह गया काम समाज का।
अथवा शोक प्रस्ताव पास करना है शिष्टम आज का॥
बहरा गूंगा और काना है नाविक आज जहाज का।
इतने पर भी अन्त नहीं है इसके नखरे नाज का॥
गर्वों की जय बोल रहा ये जिसपे चले कटारा है॥
पक्षपात को छोड़ के हमने सत्यासत्य है तोला ये।
पैर पिछाड़ी नहीं धरेगा मस्तानों का टोलाये॥
शीश हथेली पर लेकर चला पहर केसरी चोला ये।
गऊ घातकों के ऊपर पड़ना है बम का गोला ये॥
कहे भीष्म बम गोला भगतसिंह मारन चला दुबारा है।

स्वामी भीष्म जी घरौण्डा

वैदिक संस्कृति का स्वरूप

स्व० स्वामी समर्पणानन्द सरस्व

भारतीय वैदिक संस्कृति को समझने में अनेक भ्रान्तियाँ हैं, पूज्य गुरुवर्य स्व: स्वामी समर्पणानन्द जी के इस लेख में उसके वास्तविक स्वरूप का गवेषणात्मक दिग्दर्शन कराया गया है। अत: उसके प्रचारार्थ अग्निलोक (वेदानुसंधान विभाग) राजधर्म में प्रकाशित करने की अनुमति प्रदान करता है।

विवेकानन्द सरस्वती
अध्यक्ष वर्णाश्रम संघ एवं अग्निलोक

सब से प्रथम विचारना है कि संस्कृति कहते किसको हैं। तीन शब्दों को इकट्ठा पास-पास रखने से इस शब्द का अर्थ समझ में आ जायगा। वह तीन शब्द हैं प्रकृति, विकृति और संस्कृति। नाना प्रकार की अन्न प्रकृति हैं। उन्हें भोक्ता के लिए उपयोगी रूप देकर हलवा बना दिया यह संस्कृति हुई। और रात भर मनुष्य के पेट में रहकर जो हलवे की दशा हुई वह उसकी विकृति हुई। यह प्रयोग मनुष्य की अपेक्षा से किया गया है। जो मनुष्य की विकृति है हो सकता है कि शूकर उसे ही संस्कृति कहता हो। सो बात स्पष्ट है। जिस के जीवन के लिए जो पदार्थ अपेक्षित हैं उस के उपादान प्रकृति हैं। उसका सहयोगी रूप संस्कृति है तथा बिगड़ा रूप विकृति है।

अब मानव समाज के कल्याण के लिए मनुष्य प्रकृति है। इसी लिए संस्कृत भाषा में प्रजा को 'प्रकृतय:' कहा गया है। प्रजा को मानव राष्ट्र के लिए उपयोगी बनाने वाली मर्यादाओं का समूह संस्कृति है। उन मर्यादा को जीवन में ओत प्रोत करने के लिए जो अनुष्ठान कि जाते हैं वे संस्कार कहलाते हैं और उन संस्कारों परिणाम संस्कृति है।

जिस प्रकार मानव राष्ट्र एक है इसी प्रकार मा संस्कृति भी एक है। परन्तु जिस प्रकार एक भूमि मा के अंग काट कर सैकड़ों मातृ-भूमि बना दी गई हैं इ प्रकार एक मानव संस्कृति को काट कर युरोपि संस्कृति, भारतीय संस्कृति, इस्लामी संस्कृति, ई संस्कृति आदि अनेक संस्कृति बना दी गई हैं।

सृष्टि के आदि में एक भूमि माता थी और उस एक वैदिक संस्कृति जी। आज वह टुकड़े-टुकड़े हो बिखर गई है। भारतवासियों ने उस के बहुत से अं की विशेष रूप से रक्षा की है इसलिए भारतीय सं

के चाहे कितने गीत गा लीजिए, परन्तु संस्कृति एक है। वैदिक संस्कृति के दो मूल तत्त्व हैं—

(१) त्याग।
(२) एकाग्रता।

त्याग का अर्थ है स्वेच्छा पूर्वक समर्पण। भक्त प्रभु की आराधना के लिए स्वेच्छा पूर्वक अपना सब कुछ समर्पण कर देता है। वह प्रभु से मांगता कुछ नहीं। उस के निष्काम सेवा आदि गुणों पर मोहित है। उन गुणों का नित्य कीर्तन करता है। उस से इन गुणों को सीखता है और सीख कर गुरु दक्षिणा रूप में अपना सर्वस्व प्राणिमात्र की सेवा में अर्पण कर देता है। वह जनता से अथवा पशु पक्षियों से बदले में कुछ नहीं मांगता। उस का प्रभु भी तो कुछ नहीं मांगता। बस उस के इसी गुण पर तो वह सब से अधिक मोहित है। इसी लिए सेवा के बदले जब उसे पीड़ा मिलती है तो वह और अधिक आनन्दित होकर नाचता है, आज प्रभु और प्रसन्न होंगे। यह स्वेच्छा-पूर्वक त्याग ही संस्कृति की पराकाष्ठा है। पति पत्नीव्रत धर्म में कमाल दिखाए, अथवा पत्नीव्रत धर्म में कमाल दिखाए, दोनों में मूलतत्व एक ही हैं। स्वेच्छा पूर्वक त्याग। यह त्याग एकाग्रता के बिना नहीं हो सकता। आराध्य देव प्रतिदिन बदले तो कैसे हो? पत्नी के पति और पति के लिए पत्नी रोज बदलने लगे तो त्याग का अभ्यास नहीं हो सकता। इसीलिए अभ्यास के लिए इन सम्बन्धों को संकुचित कर दिया गया है। माता बच्चे के लिए और बच्चा माता के लिये जब तक त्याग करता है तब तक वह संस्कृत है। जहां त्याग नहीं वहां जंगलीपन है।

फिर समय-समय पर त्यागों में परस्पर संघर्ष खड़ा होता है। देश का भला करूं कि कुटुम्ब का? उस समय मनुष्य को तारतम्य निरूपण सिखाना पड़ता है। कौन सा कर्तव्य सत् है कौन सा कर्तव्य तम? इसलिये मनुष्य की विचार शक्ति को भी सुसंस्कृत करना पड़ता है। इसलिये शिक्षा भी संस्कृत का एक अंग है। सुशिक्षित हुए बिना मनुष्य सुसंस्कृत नहीं हो सकता। किन्तु संस्कृति बिना अक्षर ज्ञान के सत्संग मात्र से भी प्राप्त की जा सकती है।

जब हम किसी देश की संस्कृति का वर्णन करते हैं तो हमारा अभिप्राय होता है कि मानव से संस्कृति पर पहुंचने के लिये उस देश विशेष ने कौन सी मर्यादाएं नियत की हैं।

राम ने भरत के लिये तथा भरत ने राम के लिये जो राज्य को ठोकर मारी वह सारे मानव जगत के लिए त्याग का सुन्दर आदर्श है। उसे हम कार्य्य सुगमता के लिए अथवा अपने देशाभिमान की भावना के संतोष के लिये भले ही भारतीय संस्कृति कह लें। परन्तु वस्तुतः वह मानवीय संस्कृति है। हां, भारतवासी रात दिन इस कथा को सुनते हैं और वह भारत के जीवन का अंग बन चुकी है। परन्तु हमें यहां भूलना नहीं चाहिये कि वास्तव में इस प्रकार का सुसंस्कृत आचरण किसी देश का भी हो वह मानवीय संस्कृति है। जब वेद का प्रादुर्भाव हुआ उस समय मानव देश, जाति, रंग आदि किसी भेद में बटा हुआ न था। वह मनु अर्थात् मनन शक्ति का पुत्र मानव था। इसलिये हम वैदिक संस्कृति शब्द को मानव संस्कृति के पर्यायवाची रूप में भी व्यवहार कर देते हैं।

भारत में वैदिक परम्पराओं की बहुत कुछ रक्षा की गई है। इसलिए हम कभी-कभी देश भक्ति के आवेश में वैदिक संस्कृति और भारतीय संस्कृति को एक बना देते हैं। परन्तु वास्तव में देखा जाय तो वैदिक संस्कृति भारतीय नहीं किन्तु मानवीय संस्कृति है। यदि हम वैदिक संस्कृति के अत्यन्त समीप होने के कारण भारतीय संस्कृति का वैदिक संस्कृति के रूप में कभी-कभी उपस्थित कर दें तो हमें उस समय यह नहीं भूलना चाहिये कि भारत का इतिहास सदा वैदिक संस्कृति का आदर्श प्रतिबिम्ब तो नहीं रहा।

'अक्षैर्मादीव्यः' का घोष करने वाले वेद के भक्त कहलाने वालों में वह जुआरी राजा भी तो था जिस ने भरी सभा में अपनी पत्नी जुए में हारी थी, जिस समय और उस की चिल्लाहट की कुछ परवाह नहीं की थी। जिस समय वह जुआरी राजा धर्मराज कहलाया उस समय के पापियों का आचार कैसा भ्रष्ट होगा यह तो कल्पना से भी परे है।

हां फिर भी यह कह सकते हैं कि भारतीय संस्कृति में जो कुछ सर्वोच्च चमत्कार है वह वैदिक संस्कृति की

देन है । इस लिए हम यदि वैदिक संस्कृति के उदाहरण में भारतीय इतिहास की कुछ घटनाएं दे दें तो हमारा अभिप्राय ठीक समझा जा सकेगा । इसी भाव से हमें यह थोड़े शब्द वैदिक संस्कृति का सूक्ष्म मूलतत्व दिखाने के लिए लिखने पड़े—

'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा:'

भारतीय संस्कृति अथवा वैदिक संस्कृति का मूलाधार वेद का उपरिलिखित वाक्य है । तुम वह मांगो जो उसने तुम्हारे लिए त्याग दिया है । उस ने किसने ? वह जो परमाणु परमाणु का स्वामी उस में बस रहा है । बस उस का त्यागा हुआ तुम्हारा भोजन है । इसी सूत्र को जीवन के हर मार्ग में प्रयोग करने से वैदिक संस्कृति अथवा भारतीय संस्कृति का रूप खिल उठता है ।

शिष्य गुरु की सेवा कर रहा है । लकड़ी काट कर लाता है । पानी भरता है । गौवें चराता है । गुरु ने बुला कर कहा बेटा यह काम जो हम तुम से लेते हैं तो अपने आप को आलसी बनाने के लिए नहीं किन्तु तुम्हें कर्मण्य बनाने के लिये । परन्तु यह तो तुम्हारी शिक्षा का एक अंग है । आज तुम व्याकरण के पाठ में नहीं आये । निस्सन्देह तुम उस समय गो सेवा में लगे हुए थे । परन्तु वह समय गो सेवा करने का न था । आओ बैठ कर व्याकरण पढ़ो । यह बिना मांगे स्वयम् बुला कर दी हुई विद्या शिष्य का वह भोजन है जिसे—'तेनत्य-क्तेन भुञ्जीथा:'

अब गुरु के निषेध करने पर भी आग्रह-पूर्वक शिष्य द्वारा की गई गुरु सेवा जो गुरु को मिली है वही वह भोजन है जिसे वेद ने कहा—'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा:' बस—

'न याचितेन भुञ्जीथा: न वञ्चितेन भुञ्जीथा: न लुण्ठितेन भुञ्जीथा: नास्कन्दितेन भुञ्जीथ: न क्रीतेन भुञ्जीथा: किन्तु त्यक्तेन भुञ्जीथा:' इस वृत्ति के अभ्यास के लिये एकाग्रता आवश्यक है । इसलिए एक समय एक शिष्य का एक गुरु होना चाहिये । यदि नित्य गुरु बदलते रहें तो इस भावना का अभ्यास नहीं होता । इसी लिये हमारी संस्कृति का दूसरा अंग एकाग्रता है । नियत परमात्मा, नियत भक्त, नियत राजा, नियत प्रजा, नियत गुरु, नियत शिष्य, नियत पति, नियत पत्नी । नियत समय, नियत रागिणी, हर पहलू में नियति है । यह ठीक है कि जो राजा प्रजा, गुरु शिष्य, पति पत्नी, नियत नियम का पालन न करे उन्हें विवश हो कर सामाजिक नियमानुसार बदलना पड़ेगा । परन्तु वह इसी लिये कि उन्होंने नियन भंग किया है । नहीं तो हमारी संस्कृति में एकाग्रता है । और इसी लिये ध्रुवता है ।

आज चारों ओर चञ्चलता है ।

गुरु विरजानन्द दयानन्द का लाड न करते थे । लोगों ने कहा दण्डी जी इस इतनी बड़ी आयु के संन्यासी को तो न मारा कीजिये । शिष्य ने कहा मेरे कल्याण के लिये ही तो मारते हैं । तुम बीच में क्यों पड़ते हो ? एक दिन शिष्य ने गुरु का हाथ पकड़ लिया । क्या सचमुच आज सूर्य पश्चिम से उदय हो गया ? क्या आग ठण्डी हो गई ? क्या सृष्टि के नियम एक दम बदल गये ?

नहीं, कुछ नही ।

शिष्य दयानन्द ने गुरु विरजानन्द का हाथ पकड़ लिया । घर के अन्दर से एक लाठी लाए । गुरु के हाथ में दे कर कहा—भगवन् यह वज्र के समान कठोर देह है । आप ताड़ना तो करते हैं परन्तु ताड़ना तो आप के हाथ की होती है । अब से आप मेरी ताड़ना इस लाठी से किया कीजिये । यह है संस्कृति ।

मेरे विचार आप से नहीं मिलते । मेरी समझ में मैं भूल पर हूँ । दोनों एक दूसरे को समझाते, हैं । युक्ति बल तथा प्रेम बल का प्रयोग करते हैं । आप मूर्ति पूजा करते हैं । मैंने दण्ड दल का प्रयोग करके आप की मूर्ति तोड़ कर फेंक दी यह है 'त्यक्तेन भुञ्जीथा:।'

शंकर मण्डन के घर गये । किसलिये ? मण्डन के सिद्धान्तों का खण्डन करने के लिये । मण्डन हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया—भगवन् कैसे पधारना हुआ ?

शङ्कर—मण्डन का घर ढूंढ़ते हैं ।

मण्डन—भगवन् वह तो मेरा ही नाम है ।

शङ्कर—आहा आनन्द हुआ । आप के सिद्धांतों का खण्डन करने आया हूँ ।

मण्डन—भगवन् अहोभाग्य । आज कोई मण्डन से लोहा लेने वाला पैदा तो हुआ । परन्तु भगवन् ! पहिले मेरी एक शर्त स्वीकार करनी होगी ।

शङ्कर—वह भी कह दीजिये।

मण्डन—भोजन इस सेवक का स्वीकार करना होगा।

शङ्कर—ठीक। परन्तु हमारे बीच में मध्यस्थ कौन होगा।

मण्डन—जिसे आप कहें।

शङ्कर—जिसे मैं कहूं?

मण्डन—भगवन्, जिसे आप कहें।

शङ्कर—अच्छा तो हमारे इस शास्त्रार्थ में मध्यस्थ होगी आपकी विदुषी धर्मपत्नी। इसका नाम है संस्कृति।

मूलतत्व एक है—'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः।'

अतिथि गृहपति के घर आए। गृहपति ने भोजन कराया। परन्तु आश्चर्य कि धन्यवाद देने खड़ा हुआ गृहपति, भगवन्! मैं धन्य हूँ। आपने मेरा भोजन पवित्र किया। यह है संस्कृति।

अर्जुन ने गन्धर्व को युद्ध में जीता। राजा युधिष्ठिर की आज्ञा से शरणागत होने पर उसे अभय दान दिया। कृतज्ञ हो कर चित्ररथ नामक वह गन्धर्व अर्जुन को गुप्त यथा दूरस्थ दृश्यों को देखने की विद्या प्रदान करने लगा। अर्जुन ने कहा शरणागत को अभयदान क्षात्र धर्म की मर्यादा पालन करने के लिये दिया है। बदले में विद्या खरीदने के लिए नहीं। यह है

—'त्यक्तेन भुञ्जीथाः।'

अर्जुन कहता है—

यदि प्रीतेन मे दत्तं संशये जीवाश्रवा विद्या धन भुक्त्वाऽपि न तम् गन्धर्व रोचये।

महाभारत आदि० अ० १७०, श्लोक ५५

अन्त को अर्जुन ने अपनी विद्या गन्धर्व को दी। गन्धर्व ने अपनी अर्जुन को। इस प्रकार विनिमय द्वारा कार्य सम्पन्न हुआ। शरणागत को अभय दान देने में कहीं विद्या लोभ का दाग न लग जाय। इसका नाम है संस्कृति।

सीता-स्वयम्बर में लक्ष्मण राम से कहते हैं—

लक्ष्मण—आर्य निशाचर-पति रावण भी देवी सीता की कामना करता है।

राम—वत्स! साधारण राजा भी सीता की कामना कर रहे हैं, फिर भला जगज्जयी, परमेष्ठी प्रपौत्र रावण उसकी कामना क्यों न करे?

लक्ष्मण—आर्य में बहुत ही सौजन्य है। उस सहज वैरी रावण का भी इतना मान आप कर रहे हैं।

राम—रावण शत्रु है इसलिये उसका वध किया जा सकता है। परन्तु पराक्रमी अप्रमेय तपस्वी असाधारण शक्तिशाली रावण का साधारण व्यक्ति की भाँति नाम नहीं लिया जा सकता। उसका आदर से नाम लेना चाहिये।

इसका नाम है संस्कृति।

लक्ष्मणः—आर्य्य! निशाचरपतिर्देवीमिमा प्रार्थयते।

राम—वत्स!

साधारण्यान्निरातङ्कः कन्यामन्योऽपि याचते।

किम्पुनर्जगतां जेता प्रपौत्रः परमेष्ठिनः॥

लक्ष्मण—अति हि सौजन्यमार्यस्य, तस्मिन्नपि निसर्ग वैरिणि निशाचरे बहुमानः।

यो नस्त्रयीपरिध्वंसात् क्षात्रं तेजोऽपकर्षति।

अस्माकं यश्च राजानमनरण्यङ्क्लिावधीत्॥

रामः—कामं शत्रुरिति वध्यः स्यात्। न पुनरतिवीर्य्यमप्रमेयतपसमप्राकृतं प्राकृतवदर्हसि व्यपदेष्टुम्।

(महावीर-चरितं, प्रथम अंक)

सत्य

जो कुछ हमने ऊपर लिखा है, उससे स्पष्ट है कि एकाग्रता के लिए जिस गुण की सबसे अधिक आवश्यकता है वह है सत्य परायणता। यद्यपि यह संस्कृति का साधन है। तथापि कोई कोई साधन साध्य के इतना निकट होता है कि उसे साध्य ही मानना पड़ता है। इसीलिए वेद में लिखा—'सत्येनोत्तभिता भूमिः' यह भूमि सत्य के सहारे खड़ी है।

शतपथ ब्राह्मण में लिखा है—'सत्यं वै देवा अनृतम् मनुष्याः' असत्य देव को मनुष्य और सत्य मनुष्य को देव बना देता है।

मनु ने भी लिखा है—'नास्ति सत्यात् परोधर्म्मो नानृतात् पातकम् परम।'

कहाँ तक कहें। भारत का सारा साहित्य सत्य की महिमा से भरा पड़ा है। दूर क्या जाना है भारत के निकृष्टतम युग में धर्मराज युधिष्ठिर ने जो आदर्श दिखाया वह इसका प्रमाण है। जूए में पत्नी को हारना जहां

मूर्खता की पराकाष्ठा है, वहां वचन पालन के लिए शक्ति रखते हुये भी द्रोपदी का अपमान सहन करना सत्य परायणता की पराकाष्ठा है।

भारतीय संस्कृति के मूलतत्वों में से एकाग्रता नामक जिस तत्व का हम ऊपर वर्णन कर आए हैं वह सत्य परायणता के बिना कुछ नहीं। शिष्य ने गुरु सेवा का व्रत लिया, पति ने पत्नी परायणता का तथा पत्नी ने पति परायणता का, राजा ने प्रजा पालन का, प्रजा ने राजभक्ति का व्रत धारण किया। यह सब कुछ भी अर्थ नहीं रखते यदि उन में सत्य परायणता नहीं। हर्ष का विषय है कि भारत सरकार ने 'सत्यमेव जयते' को अपना महामन्त्र स्वीकार किया है। इससे भी स्पष्ट है कि जिन लोगों पर भारतीय संस्कृति का अनुचित रूप से पक्षपात करने का लांछन कोई नहीं लगा सकता उनको भी यह मन्त्र सूझा तो कहना चाहिये कि यह भारतीय संस्कृति का प्राण है।

एक और तथ्य है जिसके जाने बिना भारतीय संस्कृति की रूप रेखा भी सामने नहीं आ सकती। वह है भारतीय संस्कृति में अन्तः स्थिति का स्थान। वर्तमान युग परिस्थिति-बाद का युग है। हर बुराई का कारण परिस्थितियों का बिगड़ना तथा हर सुधार का साधन परिस्थिति का सुधार है। यदि मनुष्यों में बेईमानी है तो उसका कारण बताया जाता है पेट खाली होना। पेट भर दो ईमान स्वयम् फूट पड़ेगा। किन्तु देखने में जो यह आता है कि प्रायः खाली पेट वाले ईमानदार तथा भरे पेट वाले बेईमान होते हैं। और जिसका पेट जितना अधिक भरा है वह उतना ही बड़ा बेईमान है। यह इस परिस्थितिवाद के प्रचार का परिणाम है। जो काम किसी समय लोग कलियुग से लेते हैं। वे यह भूल जाते हैं कि जिसकी अन्तः स्थिति विकृत होगी वह निर्धनता में चोरी करेगा, धन प्राप्ति में डाका डालेगा। इसके विपरीत जिसकी अन्तः स्थिति ठीक होगी वह निर्धनता में मेहनत से कमाएगा, धनी होकर दान करेगा।

मनुष्य की परिस्थिति के सुधार की अपेक्षा उसकी अन्तः स्थिति के संस्कार की सहस्त्रगुणा अधिक आवश्यकता है। इसीलिए भारतीय संस्कृति अन्दर की ओर से बाहिर की ओर प्रवाहित होती है। संसार की अन्य संस्कृतियां बाहिर से अन्दर की ओर। इसीलिए भारतीय संस्कृति में शिक्षक को आचार्य कहते हैं जो बालक के आचार ठीक रखता है।

ब्रह्मचर्य

पति की सेवा पत्नी की ओर तथा पत्नी की पति की ओर एकाग्र है। ब्राह्मण सत्य में एकाग्र है। क्षत्रिय न्याय रक्षा में। वैश्य उत्पादन में। शूद्र सेवा में। प्रजा राजा को भक्ति में, राजा प्रजा पालन में। पर यह सब मिल कर किस एक ध्येय की आराधना कर रहे हैं यह ध्येय है परब्रह्म परमात्मा घट घट का व्यापक। जिसके लिये कहा—'ईशावास्यमिदं सर्वम्।'

बस उस ब्रह्म का ही दिया तो सबको खाना है। इसीलिये कहा—'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा।' जो वह तेरे लिये छोड़ दे उसके त्यागे हुए से तू गुजारा कर। बस उस ब्रह्म की दी हुई हर वस्तु को उसकी सेवा में लगाना ब्रह्मचर्य है। वीर्य उसकी दी हुई भौतिक सम्पत्तियों में से सर्व श्रेष्ठ है। इसलिए उसकी रक्षा का विशेष रूप से ब्रह्मचर्य नाम हो गया। परन्तु वस्तुतः ब्रह्मचर्य का अर्थ तो यही है कि हर वस्तु को ब्रह्म की सेवा में लगाना। यदि मैं उचित से अधिक खाता हूं और शरीर को प्रभु अर्पण न करके रोगार्पण करता हूं तो मेरा जरूर ब्रह्मचर्य भंग हुआ स्वामी का माल मैंने उदर शूल नामक चोर को दे दिया। मैं ब्रह्मचारी न होकर शूलचारी हो गया। यही ब्रह्मचर्य शब्द का अर्थ है। इस प्रकार का आचरण सिखा कर आचार्य हमें ब्रह्मचारी बनाता है। इसलिए व्यभिचार को दूर करने के लिये परिस्थिति की अपेक्षा अन्तःस्थिति के सुधार की अधिक आवश्यकता है। इसका परिणाम यह होता है कि विपरीत से विपरीत परिस्थिति में भी अर्जुन उर्वशी के और दयानन्द कू... द्वारा सिखा कर भेजी हुई वेश्या के पास में न फंसता। फंसे कैसे? रोम रोम तो ब्रह्मचर्य हो चुका। वहीं वि... रहा है। कुछ बचा हो तो वेश्या को मिले। वह अन्तः स्थिति का सुधार ही हमारा ध्येय है। आखिर परिस्थिति किसका नाम है। यदि हम सब अपनी अपनी अन्तःस्थिति सुधार लें तो सबकी परिस्थिति आप सुधर गई। अन्तः स्थिति के सुधार में मुझे केवल एक व्यक्ति पर श्रम करना है। परिस्थिति में अरबों मनुष्यों का सुधार करना है।

कहिये कौन सा सुगम है ?

हमारा यह तात्पर्य कदापि नहीं कि परिस्थितियों का सुधार हेय, अनादरणीय अथवा उपेक्षणीय है। हम तो केवल यह कह रहे हैं कि इन में से प्रधानता किस की है। मुर्दा कफन में लिपटा पड़ा है। आपने उसका कपड़ा उतार दिया, रस्सियें काट दीं। अब उससे कहिये कि परिस्थिति सुधर गई, अब उठ खड़ा हो। भला क्या वह उठ सकता है ? हां कोई जीवित मनुष्य जो रस्सियों से बंधा हो, छूटने के लिए छटपटा रहा हो छूट कर रहेगा। परन्तु रस्सियां काट देने से जल्दी छूट जायगा। परिस्थितियों का सुधार सहायक है। मूल प्रेरक नहीं। यही तथ्य है जिसे भारत को संसार के सामने उपस्थित करना है।

आर्य पुरुषो यह संसार अविद्या, अन्याय, अभाव से पीड़ित है। आओ सच्चे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य बन कर एकाग्र चित्त से सब शक्तियों को एकाग्र करके इनसे लड़ने निकल पड़ो।

परिस्थितियों की परवाह मत करो। जमाने की दुहाई मत दो। इस युग का राजा दयानन्द है।

दयानन्द जमाने के पीछे चलने नहीं आया था। वह जमाने को अपने पीछे चलने आया था।

देखो वह शरशय्या पर पड़ा हुआ एक ब्रह्मचारी चिल्ला कर कह रहा है—

कालो वा कारणं राज्ञो राजा वा कालकारणम्।
इति ते संशयो माभूद्राजा कालस्य कारणम्॥

बस आगामी युग को राजा दयानन्द का युग बनाकर छोड़ना है।

आर्यों, तुम काल के भी काल। तुम्हारा गुरु दयानंद महाकाल है। और उसकी सेना महाकाली है।

उठो, अन्धकार के राज्य में प्रलय मचा दो। परन्तु हां एक बात मत भूलना।

यह काली भद्र काली है।

(भद्राय कल्याणाय कालयति प्रेरयति)

बोलो युगराज योगिराज दयानन्द की जय !!

काला अंग्रेज : के० एम० मुन्शी

गुरुदत्त

ज्यों-ज्यों समय व्यतीत होया जाता है और सरकार के भाषा-नीति सम्बन्धी दुर्गुण प्रकट होते जाते हैं, अंग्रेजी पढ़े-लिखे और अंग्रेजी में व्यवहार करने वाले लोग भारत की दुर्व्यवस्था पर आँसू बहाने लगे हैं। इसका एक उदाहरण श्री के० एम० मुन्शी के 'भवन जनरल' दि० २३ फरवरी १६६९ के एक लेख से प्रकट होता है। इस लेख में श्री मुन्शी लिखते हैं :—

We are facing a tragic situation. I give you an instance. The Bhavan has been organised with help of friends all over the country. Moneys have come from all parts of India. The staff hail from different regions of the nation. But the tragedy is that our Colleges in Gujarat would be soon driven to take Gujarati as the medium. Maharashtra might follow suit by declaring Marathi as the medium for our colleges. Tamil Nadu has already switched over to Tamil, U. P. to Hindi and so on.

इस पद का अर्थ है कि एक भयंकर परिस्थिति हमारे सम्मुख आ गई है। मैं आपको एक उदाहरण देता हूं। भवन का संगठन देश भर के मित्रों की सहायता से हुआ है। रुपया भारत के सब क्षेत्रों से आया है। भवन के कर्मचारी भारतीय जाति के प्रत्येक अंग से लिये गये हैं। परन्तु अब दुर्घटना यह हो रही है कि गुजरात के कॉलिजों में शिक्षा का माध्यम शीघ्र ही गुजराती होने वाला है। महाराष्ट्र भी कदाचित् इसका अनुकरण करते हुए अपने कॉलेजों में मराठी स्वीकार करेगा। तामिल नाडु ने तो पहले ही तमिल को माध्यम बना लिया है उत्तर प्रदेश ने हिन्दी को बना लिया है और इसी प्रकार अन्य राज्य भी कर रहे हैं।

इस परिणाम पर मुन्शी जी की नींद हराम हो रही प्रतीत होती है। श्री मुन्शी के 'भवन' से पूर्ण साहित्य अंग्रेजी में ही निकलता है। इस 'भवन' को बने हुए आज तीस वर्ष हो चुके हैं और इन तीस वर्षों में इस 'भवन' ने लाखों रुपये इस साहित्य पर लगाये हैं। इस साहित्य से देश के भिन्न-भिन्न भागों और भिन्न-भिन्न समुदायों में कितना समन्वय हुआ है, एक विचारणीय बात है। 'भवन जर्नल' का मुख्य उद्देश्य देश की प्राचीन संस्कृति का वर्तमान युग के विज्ञान से समन्वय करना है। इस उद्देश्य में भी जो कुछ प्रगति हुई है और जिस दिशा में हुई है, वह सन्देहात्मक ही है। इस पर भी इस 'भवन' के संस्थापक और कर्त्ता-धर्त्ता श्री मुन्शी भविष्य का विचार कर शोक-ग्रस्त प्रतीत होते हैं।

इस विषय में हमारा यह मत है कि जो कुछ देश के आचार-विचार में विघटनात्मक स्थिति उत्पन्न हुई है, वह श्री मुन्शी जैसे अंग्रेजी भक्तों की करनी से ही हुई है। इन लोगों ने अपने पूर्वग्रहों से ग्रसित होकर यह यत्न किया कि पूर्ण देश की सम्पर्क भाषा अंग्रेजी बनी रहे। ये लोग हिन्दी की हंसी उड़ाते रहे और यह कहते रहे कि हिन्दी सम्पन्न भाषा नहीं है। अंग्रेजी सम्पर्क भाषा बनेगी अथवा नहीं बनेगी, यह भविष्यवाणी करनी अति कठिन है। परन्तु यह निश्चय है कि यदि इस देश की सम्पर्क भाषा अंग्रेजी बनी तो न देश में एकमयता रह सकेगी और न ही श्री मुन्शी के भवन का उद्देश्य कि प्राचीन संस्कृति को नये रंग-रूप में देखा जाये, सफल होगा।

श्री मुन्शी का भवन क्या, इस जैसे एक सौ भवन भी और बन जायें तो भी इतना साहित्य निर्माण नहीं हो सकेगा, जितना अंग्रेजी भाषा में इङ्गलैंड और अमेरिका से बनकर इस देश में आ रहा है। उस साहित्य में यह देश में यह घोषित किया जा रहा है कि यह भारत एक प्राय:द्वीप है; इसमें रहने वाली एक जाति नहीं, अपितु अनेक जातियां हैं; जो लोग अपने को आर्य-संतान

कहते हैं; वे इस देश के मूल निवासी नहीं हैं; वे कहीं बाहर से यहाँ पर आक्रमण कर आये हैं; प्राचीन काल में लोगों को न तो इतिहास लिखना आता था और न ही वे ज्ञान-विज्ञान के ज्ञाता थे; वेद शास्त्रों में गो-मांस खाना लिखा है और उसमें अनेक देवी-देवताओं की पूजा का विधान है। ऐसी तथा इसी प्रकार की अन्य अनर्गल बातें लिखकर यहाँ के लोगों के मस्तिष्क में परस्पर फूट, विद्वेष और घृणा उत्पन्न की जा रही है और ये महानुभाव उसी भाषा को अभी कुछ काल और चलाने का प्रचार कर रहे हैं।

आप लिखते हैं :—

As a practical measure I would make a humble request to the leaders : Apply moratorium to the language issue for a period of five years and work for agriculture instead of spending all the energy on this issue.

(एक व्यवहारिक योजना में अति विनम्र शब्दों में नेताओं के सामने रखता हूँ। वह यह कि भाषा के विषय में पांच वर्ष तक किसी प्रकार के परिवर्तन पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाये और जाति की पूर्ण शक्ति अन्न उत्पन्न करने में व्यय की जाये।)

यही बात देश के समस्त अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग, अंग्रेजी भाषा के समाचार-पत्र गला फाड़-फाड़ कर कह रहे हैं। वे यह चाहते हैं कि अंग्रेजी यहाँ की सम्पर्क भाषा बनी रहे और इस सम्पर्क भाषा को शिक्षा का माध्यम स्वीकार करते रहें। यह किसी प्रकार से नयी बात नहीं। इसको अंग्रेजी सरकार सन् १९३३ से कार्यान्वित करने में लगी हुई थी। इस अंग्रेजी भाषा की स्थिति को एक सम्पर्क भाषा एवं शिक्षा का माध्यम बनाने के लिये अंग्रेजी सरकार ने शिक्षा को १९२० में प्रान्तीय विषय बना दिया। प्रान्तीय भाषाओं को आगे लाने के लिए यत्न आरम्भ कर दिया। अंग्रेजी सरकार का यह विचार था कि प्रान्तीय भाषाओं को समान रूप में प्रोत्साहन देने से कोई भी प्रान्तीय भाषा इतनी प्रबल नहीं हो सकगी कि वह पूर्ण देश की एक भाषा बन सके। हिन्दी को, जिसे उस समय भी देश के साठ प्रतिशत से अधिक लोग बोलते और समझते थे, एक प्रान्तीय भाषा का पद दे दिया गया। यह भाषा अंग्रेजी की प्रतिस्पर्धा न कर सके, इस लिए इसकी और निन्दा की गयी। देश की किसी भी प्रान्तीय भाषा की इतनी निन्दा नहीं की गयी, जितनी कि हिन्दी की हुई है। इस निन्दा में श्री मुन्शी जैसे अंग्रेजी भक्तों का हाथ है। इसका सीधा परिणाम यह हुआ कि भारतीय भाषाओं में से वह भाषा जो अंग्रेजी की स्थानापन्न हो सकती थी, एक पंगु भाषा मान ली गयी और अंग्रेजी का मार्ग प्रशस्त कर दिया गया।

जबसे स्वराज्य मिला है, अंग्रेजी के भक्त जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में निरन्तर यत्न करते रहे कि हिन्दी राष्ट्र भाषा अथवा सम्पर्क भाषा न बन सके। श्री के० एम० मुन्शी इन समर्थकों में से एक थे। इक्कीस वर्ष के स्वराज्य काल में सरकार ने इन अंग्रेजी भक्तों की सहायता से देश में ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दी है कि देश की सम्पर्क एवं राष्ट्र भाषा हिन्दी नहीं बन सकी और क्षेत्रीय भाषायें अंग्रेजी को निकालने का यत्न करने लगी हैं। इसका अनुभव श्री मुन्शी को हुआ है और इन भोले-भाले अदूरदर्शी अंग्रेजी भक्तों के आंसू निकल आये हैं।

हमें कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि निकट भविष्य में गुजरात से शिक्षा का माध्यम गुजराती होगी। इस प्रकार महाराष्ट्र में मराठी, आन्ध्र में तेलुगू, मैसूर में कन्नड़, केरल में मलयालम, तमिलनाडु में तमिल, उड़ीसा में उड़िया, बंगाल में बंगला, पंजाब में पंजाबी, कश्मीर में कश्मीरी हो रही है। इनके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान और बिहार में हिन्दी होगी। अब इन अंग्रेजी पढ़े-लिखे बुद्धिमानों द्वारा यत्न यह किया जा रहा है कि बिहार में मैथिली भाषा चले। उत्तर प्रदेश में अवधी, ब्रज भाषा और खड़ी बोली चलें। हरयाणा और दिल्ली में हिन्दी चले। राजस्थान में राजस्थानी चले। यह ठीक है कि यह बात अभी होती प्रतीत नहीं होती, परन्तु इस ओर प्रयत्न आरम्भ हो गये हैं।

क्षेत्रीय भाषाओं के पनपने से अंग्रेजी भाषा बनी भी रही, तो भी यह वह सामर्थ्य प्राप्त नहीं कर सकेगी जो एक राष्ट्र भाषा में होनी आवश्यक है। इसमें कारण यह है कि अंग्रेजी भाषा भारत की सब क्षेत्रीय भाषाओं से दूर है। न तो उसकी लिपि न ही इसका शब्द कोष,

किसी भी क्षेत्रीय भाषा की लिपि अथवा शब्द कोश के साथ साझेदारी रखता है । अधिक से अधिक देश में चार-पाँच प्रतिशत लोग ऐसे हो सकेंगे जो भली-भांति अंग्रेजी लिख-पढ़ सकेंगे । आने वाले बीस-पच्चीस वर्ष तक यह हो सकेगा कि अंग्रेजी पढ़ने वालों की संख्या बहुत हो जाये, परन्तु इस भाषा में कोई भी गूढ़ बात लिखी हुई समझने की शक्ति तीन-चार प्रतिशत से अधिक में नहीं आ सकेगी । हिन्दी तो अंग्रेजी का विरोध करेगी ही । यह केवल इस कारण नहीं कि अंग्रेजी पढ़े लिखे लोगों ने हिन्दी का स्थान छीनने का यत्न किया है, वरंच इस कारण कि अंग्रेजी के समर्थकों ने देश की विघटनात्मक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन दिया है । यह देश द्रोह है । हिन्दी के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रीय भाषायें भी स्वभाविक रूप में अंग्रेजी के प्रसार में बाधक होंगी ।

परिणाम यह निकलने वाला है कि भारत पन्द्रह-सोलह भागों में विखंडित होगा । कदाचित् राजनीतिक दृष्टि से यह एक रह भी जाये, परन्तु सांस्कृतिक दृष्टि से यह एक नहीं रहेगा । इस पाप का श्रेय अंग्रेजी पढ़े-लिखे, अंग्रेजी के समर्थकों के सिर पर होगा । देश में राजनीतिक विचार से विखण्डता एक अच्छी बात न होते हुए भी इतनी बुरी नहीं, जितनी कि सांस्कृतिक विखण्डता है । श्री मुन्शी इसको रोकना चाहते हैं पांच वर्ष के लिये क्षेत्रीय भाषाओं की प्रगति को रोक कर ।, यह हो सके[illegible] अथवा नहीं हो सकेगा, इसकी भविष्यवाणी करनी कठि[illegible] है । परन्तु हमारे विचार में इसको रोकने का उपाय भि[illegible] है । वर्तमान परिस्थिति में क्षेत्रीय भाषाओं की प्रगति [illegible] रोकना बुद्धिमत्ता नहीं होगी । रोकने की वस्तु अंग्रेजी है [illegible] पांच वर्ष का ऐसा कार्यक्रम बनना चाहिए कि पांच व[illegible] के उपरान्त अंग्रेजी भाषा का स्तर वही रह जाये [illegible] फ्रांसीसी, जर्मन, रूसी इत्यादि भाषाओं का भारतवर्ष [illegible] है । केन्द्र अपनी राज्य भाषा हिन्दी बनाये और राज्यों [illegible] साथ उनकी क्षेत्रीय भाषाओं में पत्र-व्यवहार [illegible] सके । यह स्वीकृत हो कि कोई भी अहिन्दी-भाषी राज्[illegible] केन्द्र के साथ हिन्दी में पत्र-व्यवहार कर सकेगा । हिन्दी-भाषी राज्य अपने पड़ोसी राज्यों के साथ हिन्दी में प[illegible] व्यवहार करें, साथ ही उन राज्यों के पत्र उनकी अप[illegible] भाषा में लेने से इन्कार न करें । इनके साथ एक बा[illegible] और आवश्यक है कि क्षेत्रीय भाषाओं की संख्या [illegible] और अधिक न बढ़ायी जाये । यत्न यह होना चाहिये [illegible] सब क्षेत्रीय भाषाओं में संस्कृत के शब्दों का प्रयोग अधि[illegible] और अधिक किया जाये, जिनके फल स्वरूप देश में ए[illegible] भाषा होने की सम्भावना बढ़ सके । पूर्ण विवाद की ज[illegible] में अंग्रेजी भाषी लोग हैं । ये जानकर अथवा अनजाने [illegible] देश और जाति का अहित कर रहे हैं ।

बंसीलाल जी, हिम्मत है तो जवाब दो !

यह रहा आपकी शैतानियत का कच्चा चिट्ठा !

हरियाणा के विरोधी दलों के संयुक्त मोर्चे की ओर से कार्यवाहक राष्ट्रपति श्री वी० वी० गिरि को मुख्यमंत्री श्री बंसीलाल के खिलाफ एक आरोप पत्र दिया गया है। सबके सब आरोप एक दूसरे से बढ़ कर हैं। इन आरोपों की जांच के लिये एक आयोग नियुक्त करने की मांग की गई है। इंसानी शक्ल में इस किस्म के शैतान, जो सही अर्थों में "डाकू" हैं, का कांग्रेसी मुख्यमन्त्री के पद पर बने रहना वास्तव में हरियाणा की जनता पर अभिशाप और अत्याचार है। ये हैं आरोप पत्र के कुछ बिन्दु। इनका जांच होनी चाहिये। दोषी पाये जाने पर पद-मुक्ति ही नहीं कानून की अपनी अधिकतम सीमा में इन्हें दंडित करना चाहिये।

—वह चौधरी शेरसिंह का भाई था

● बंसीलाल ने अपने समर्थक केन्द्र के राज्यमंत्री चौ० शेरसिंह के भाई विजयकुमार को, जो कि नायब तहसीलदार थे, अचानक हरियाणा विधानसभा का उपसचिव नियुक्त कर दिया। इस पद पर आई० ए० एस० श्रेणी के अधिकारी को नियुक्त किया जाता था। इसका वेतन क्रम ६००-१२०० रुपये है। श्री विजयकुमार को नायब तहसीलदार के रूप में केवल ४०० रुपये वेतन मिलता था परन्तु रातों-रात नये पद पर नियुक्त किये जाने से उनका वेतन ८०० रुपये से भी अधिक हो गया। विजयकुमार को विधानसभा के कार्य का कोई अनुभव नहीं है। नये पद पर नियुक्त के मामले में राज्य जनसेवा आयोग से परामर्श तक नहीं लिया गया।

● मुख्यमंत्री ने भिवानी के श्री महावीर सिंह को भारी वेतन पर राजनीतिक सचिव नियुक्त किया जबकि उनकी योग्यता यह है कि जनाब ने ८ वीं जमात की शक्ल तक नहीं देखी है। ये एक ढाबा चलाया करते थे। इसके पश्चात् वह एक स्थानीय कपड़ा मिल में मजदूर के रूप में कार्य करते थे।

कनिष्ठ क्लर्क १५०० मासिक पर

● बंसीलाल ने अपने एक समर्थक देवी प्रसन्न नामक व्यक्ति को राज्य विद्युत बोर्ड का एक सदस्य नियुक्त कर दिया। यह व्यक्ति इस पद पर नियुक्त किये जाने से पूर्व पुनर्वास विभाग में कनिष्ठ लिपिक थे। उनकी योग्यता केवल मैट्रिक है। इनके अतिरिक्त चौ० सुखदेव सिंह मलिक नामक एक वकील को भी विद्युत बोर्ड का सदस्य नियुक्त किया गया है। इन दोनों का वेतन अब १५०० रु० मासिक हो गया है।

● मुख्यमंत्री ने सहकारिता विभाग के एक इन्सपेक्टर हुकमसिंह को अचानक तरक्की देकर सहायक रजिस्ट्रार नियुक्त किया है। अपने भाई को भी बस कंडक्टर से हिसार बस स्टैण्ड का इंचार्ज बना दिया। श्री रघुबीरसिंह नामक एक व्यक्ति को आपूर्ति अधिकारी नियुक्त किया है। इसके लिये राज्य सेवा आयोग से परामर्श नहीं लिया गया और न ही कोई इंटरव्यू आदि ही हुआ।

परिवार पर मेहरबानी

● महेन्द्रगढ़ जिले के दादरी में स्थित एक फर्म "ईश्वर उद्योग" को ५० हजार रुपये का कर्जा उद्योग विभाग से प्राप्त हुआ है। इस फर्म की मालिक बंसीलाल की सगी अनुजबधू है। यह उनके छोटे भाई रघुबीरसिंह की पत्नी है। मुख्यमन्त्री ने अपने छोटे भाई रघुबीरसिंह की फर्म "रघुबीर उद्योग" को अवैध रूप से काफी स्टेनलेस स्टील का कोटा दिया है और उसे काफी कर्जा भी दिया है। यहाँ पर उल्लेखनीय बात यह है कि स्वयं बंसीलाल ही उद्योग विभाग के मन्त्री हैं।

भला अपना खुद का किया चाहता हूँ

● मुख्यमन्त्री द्वारा नवजीवन संघ नामक एक संस्था को कुरुक्षेत्र समीप ३०० एकड़ भूमि ७०० रुपये प्रतिवर्ष

की दर से लीज पर १० वर्ष के लिये दी गई है। श्री बंसीलाल स्वयं भी इस संस्था से सम्बन्धित हैं। इस भूमि के साथ वाली भूमि के साथ वाली भूमि ५०० रुपये प्रति एकड़ के वार्षिक किराये पर अन्य लोगों ने प्राप्त की है। इस प्रकार से इस भूमि का वास्तविक लीज दर डेढ़ लाख प्रति वर्ष होता है।

समर्थक पर मेहरबानी

● राज्य के कोलोनाइजेशन विभाग ने हिसार जिला के सिरसा में भूमि का एक टुकड़ा सिनेमा घर बनाने के लिये २ अगस्त १९६५ में सरकारी आदेश नं० SE/Pat/B-C/A/65/A/6440/C द्वारा सुरक्षित किया था। परन्तु यह बात श्री बंसीलाल के समर्थक श्री प्रेममुख दास एम० एल० ए० को न भाई। क्योंकि सिरसा में उनके दो छविगृह हैं। प्रतियोगिता से बचने के लिये उन्होंने मुख्यमन्त्री से परामर्श किया। इस छविगृह के लिये निश्चित स्थान को बाजार में बदल दिया गया। उसे एक लाख रु० में प्रेमसुख दास को ही बेच दिया गया। इस भूमि को यदि नीलाम किया जाता तो उसका मूल्य ५-६ लाख रुपये से भी अधिक प्राप्त होता।

● बल्लभगढ़ हाट सहकारी समिति के फण्ड में ४० हजार रुपये का गबन पाया गया था। इस कारण इस समिति को भंग कर दिया गया था। इसके अध्यक्ष गुड़गांव जिला कांग्रेस के अध्यक्ष श्री गुरुदत्त थे। आप मुख्यमन्त्री की समर्थक विधायका श्रीमती शारदा रानी के पति हैं। इसलिये मुख्यमन्त्री के इशारे पर यह मामला दबा दिया गया और समिति पुनः बहाल कर दी गई। रोहतक के सहकारी बैंक में भी काफी गबन पाया गया परन्तु मुख्यमन्त्री के इशारे पर यह मामला भी दबा दिया गया।

बेचारे ने अधिवेशन के लिये धन एकत्र नहीं किया

● मुख्यमन्त्री फरीदाबाद कांग्रेस अधिवेशन के लिये धन इकट्ठा करना चाहते थे। उन्होंने उद्योग विभाग के निर्देशक श्री जे० डी० शर्मा आई० ए० एस० को एक बड़ी धनराशि एकत्र करने के लिये कहा। परन्तु जब वह लक्ष्य के अनुसार धनराशि न एकत्र कर सके तो उनका स्थानान्तरण कर दिया गया। इन्हें अपने पद का कार्यभार संभाले केवल दस मास ही गुजरे थे। इसके अतिरिक्त मुख्यमन्त्री ने चौ० सूबे सिंह (अध्यक्ष राज्य विद्युत बोर्ड) को भी अधिवेशन के लिये धन जमा करने का आदेश दिया। जब वह भी असफल रहे तो उन्हें भी पद से हटा दिया गया। उनके स्थान पर श्री० पी० एन० साहनी को नियुक्त किया गया, जिनके कार्य पर स्व० सरदार कैरों के सामले में दास आयोग द्वारा कड़ी आलोचना की जा चुकी है। इन्होंने उद्योगपतियों से काफी धन इकट्ठा करके मुख्यमन्त्री की भेंट किया।

सरकार का २० लाख कांग्रेसी खजाने में

● फरीदाबाद कांग्रेस अधिवेशन का सारा प्रबन्ध राज्य के लोककर्म विभाग और लोक स्वास्थ्य विभाग के हजारों कर्मचारियों ने किया और इनका सारा खर्च राजकीय कोष से हुआ। सरकार के सभी विभागों को कांग्रेस अधिवेशन की प्रदर्शनी में भाग लेने को विवश किया गया। इस प्रदर्शनी में भाग लेने वालों से ५० रुपये प्रतिवर्ग फुट किराया लिया गया। हरयाणा के विभिन्न सरकारी विभागों ने प्रदर्शनी में भाग लेने के लिए ५० हजार वर्ग फुट भूमि किराये के रूप में लेकर कांग्रेस को राजकीय कोष से २० लाख रुपये प्रदान किए।

विरोधियों की नगरपालिका खत्म कर दी गई

● भिवानी के एक व्यक्ति श्री गोपीराम को, जो कि मुख्यमन्त्री के समर्थक विधायक श्री दयाकिशन के निकटतम सम्बन्धी को दो लाख रुपये का कर्जा एक बोगस फर्म के नाम पर दिया गया। इसके अतिरिक्त उसे बड़ी मात्रा में नाईलोन धागे का कोटा दिया गया।

इस आरोप पत्र में विस्तृतरूप से इस तथ्य पर भी प्रकाश डाला गया है कि मुख्यमन्त्री ने अपने राजनैतिक स्वार्थों के कारण हिसार, करनाल, लोहारू, नीलीखड़ी, हांसी नगरपालिकाओं को भंग किया। क्योंकि इन नगरपालिकाओं में उनके विरोधियों का बहुमत था।

जिन्होने फर्जी मुकदमें नहीं बनाये

● मुख्यमन्त्री के इशारे पर उनके विरोधियों को परेशान करने के लिये पुलिस का खुलेआम उपयोग किया गया। जब आई० जी० श्री भगवानसिंह रोशी और डी० आई० जी० श्री रणदीप सिंह से प्रो० शेरसिंह को

डी० लिट की उपाधि दिलवाना चाहते थे परन्तु जब उक्त विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री दीपचन्द वर्मा ने मुख्य मन्त्री के इस आदेश को मानने से इन्कार कर दिया तो उनके खिलाफ पुलिस द्वारा जांच शुरू करवा दी गई है।

● भगवतदयाल के समर्थक विधायक महंत गंगासागर और विधायक भगतुराम को झूठे मुकदमों में गिरफ्तार करके और हथकड़ी लगाकर जुलूस निकाला गया। शाहबाद के विधायक जगदीशचन्द्र के दामाद के खिलाफ केस दर्ज किया गया। परन्तु जब उसने बंशीलाल का समर्थन करना स्वीकार किया तो यह केस वापिस ले लिया गया। विरोधी दल के विधायक जोगीन्द्रसिंह का राज्य की गुप्तचर पुलिस द्वारा अपहरण किया गया। मुख्यमंत्री के एक अन्य विरोधी विधायक जयसिंह राठी के भाई धर्मपाल सिंह राठी (अध्यक्ष, हरियाणा कृषि तथा उद्योग आयोग) को निलम्बित कर दिया गया। कई झूठे फौजदारी मुकदमें भी बनाए गए। इन मुकदमों में से एक यह है कि उन्होंने मिल से दो सौ ग्राम का बाट चुराया है। यहाँ पर उल्लेखनीय है कि अभियुक्त करनाल का का सबसे बड़ा भूमिपति है और उसकी लाखों की सम्पत्ति है।

मुकाबले में चुनाव लड़ने का दण्ड

● गत मध्यावधि चुनाव में उनके मुकाबले में खड़े होने वाले ठाकुर चरणजीत सिंह को उनके इशारे पर गिरफ्तार करवा कर भिवानी के बाजारों में घुमाया गया। इससे भयभीत होकर यह व्यक्ति हरियाणा छोड़कर उत्तरप्रदेश चला गया। उसके दो अन्य सम्बन्धियों के विरुद्ध भी केस बनवाए गए।

● मुख्यमंत्री कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय से प्रो० शेरसिंह को डी० लिट की उपाधि दिलवाना चाहते थे परन्तु जब उक्त विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री दीपचन्द वर्मा ने मुख्यमंत्री के इस आदेश को मानने से इन्कार कर दिया तो उनके खिलाफ पुलिस द्वारा जाँच शुरू करवा दी गई है।

स्थानान्तरण

● श्री बंशीलाल अपने राजनैतिक स्वार्थों के लिये उच्च सरकारी अधिकारियों को भी परेशान कर रहे हैं। उदाहरणस्वरूप श्री बी० एस० मनचन्दा (आई० ए० एस०) को योजना आयुक्त और वित्त सचिव के पद से स्थानान्तरित कर दिया गया। यही श्री० एस० के० छिब्बर के साथ भी हुआ। राज्य के गृहसचिव श्री पी० एन० भल्ला ने भी जब मुख्यमंत्री के विरोधियों के खिलाफ झूठे केस बनाने के आदेश छोटे अफसरों को देने से इन्कार कर दिया तो इन्हें भी स्थानान्तरित कर दिया गया।

उसने जाट शिक्षा समिति में विरोध किया था

● रोहतक के उपायुक्त श्री ईसादास के अवकाश प्राप्त करने में केवल चार मास ही रह गए थे। परन्तु उन्हें रातों-रात वायरलेस आदेश से पदमुक्त कर दिया गया। उनका अपराध यह था कि उसनें समर्थक विधायक चौ० भाईसिंह को अध्यक्ष बनवाने में सहयोग देने से इन्कार कर दिया था। करनाल के जिलाधीश श्री बनर्जी को भी स्थानान्तरित किया गया क्योंकि उन्होंने मुख्यमंत्री के समर्थकों के इशारे पर नृत्य करने से इन्कार किया था।

● हिसार के पुलिस अधीक्षक की बदली रातों-रात कर दी गई क्योंकि उसने मुख्यमंत्री के दो समर्थकों—विधायक श्री पोरखराम और भूतपूर्व विधायक श्री मनीराम गोदरा के पुत्रों के खिलाफ "एक थानेदार को पीटने और उससें पिस्तौल छिनने" के केस को वापिस न लेने का साहस किया था। पानीपत के एस० डी० एम० का तबादला एक सप्ताह में तीन बार किया गया और हर बार राजनैतिक दबाव के कारण उसे रद्द किया गया।

इस आरोप पत्र में विस्तारपूर्वक यह आरोप भी लगाया गया है कि मुख्यमंत्री के इशारे पर हत्या तक के मामले दबाए गए हैं।

—'पाञ्चजन्य' से साभार

साम्प्रदायिकता तथा विघटन का प्रतीक—पंजाबी विश्वविद्यालय

प्रो० जयदेव आर्य
जाट महाविद्यालय, हिसार

कई वर्ष पूर्व पंजाब विश्वविद्यालय के होते हुए भी जब पंजाबी विश्वविद्यालय की स्थापना की गई थी तो कहा था कि यह विश्वविद्यालय पंजाबी भाषा की उन्नति के लिए कार्य करेगा और पंजाबी भाषा केवल सिखों की ही भाषा नहीं है अपितु बिना किसी साम्प्रदायिक भेद-भाव के समस्त पंजाब-निवासियों की यह भाषा है। इसकी स्थापना के पश्चात् इस विश्वविद्यालय को पंजाब एवं केन्द्रिय सरकार के द्वारा समय २ पर पंजाबी भाषा की उन्नति के लिए एक विशाल अर्थ राशि मिलती रही है परन्तु अब तक इसने जो कार्य किया है उस पर एक विहङ्गम दृष्टि डालने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यह विश्वविद्यालय अधिकतर कार्य केवल सिख-पन्थ की उन्नति और प्रचार के लिए ही कर रहा है और सिक्खेतर सम्प्रदायों के साहित्य के प्रकाशन या उनके धर्माचार्यों के जीवन और कृतित्व के लिए इस द्वारा किया गया अथवा किया जाने वाला कार्य सर्वथा नगण्य है और पंजाबी भाषा का नाम केवल सिख-पंथ के प्रचार के लिए एक आड़ से अधिक कुछ नहीं है।

पंजाबी विश्वविद्यालय ने गुरु नानक एवं गोविन्द सिंह जी के जीवन एवं कार्य के विषय में बहुत कुछ शोध-कार्य की योजना बनाई है। यह विश्वविद्यालय समस्त भारत के विश्वविद्यालयों की एक सम्मिलित गोष्ठी (Seminar) बुलवा चुका है और गुरु नानक जयन्ती के अवसर पर एक अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी का आयोजन करने का उपक्रम कर रहा है। इस विश्वविद्यालय द्वारा यह घोषणा की गई है कि वह गुरु नानक देव के लंका-गमन के विषय में शोधन करवाएगा। इससे पूर्व ही पंजाब विश्वविद्यालय गुरु गोविन्द सिंह जी पर काफी साहित्य प्रकाशित करवा रहा है। कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के उपकुलपति ने भी गुरु नानक देव पर शोध के लिए कुरुक्षेत्र में एक पीठ की स्थापना की घोषणा की है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने भी मद्रास, राजस्थान आदि कई विश्वविद्यालयों को गुरु नानक भाषण-माला आदि के आयोजन के लिए अविभाजित पंजाब सरकार ने गुरु गोविन्द सिंह फाउण्डेशन के लिए १२ लाख रुपए का अनुदान दिया था। इस प्रकार भारत के अनेक विश्वविद्यालयों में सामान्यतः और पंजाबी विश्वविद्यालय में विशेषतः सिख गुरुओं के व्यक्तित्व और कृतित्व पर शोध के लिए भारी अर्थ-राशि व्यय की जा रही है—यह ऊपर के विवरण से स्पष्ट है। गिल सरकार ने भी सरकारी स्तर पर सिखों के एक तीर्थ पर सिख साहित्य के सन्दर्भ में एक गोष्ठी का आयोजन किया था।

जहां तक गुरुओं पर शोध-कार्य एवं राजकीय स्तर पर उनकी जयन्तियों को मनाने का प्रश्न है, उस पर किसी भी व्यक्ति को आपत्ति नहीं हो सकती और न होनी चाहिए पर आपत्ति तब अवश्य होती है जब विभिन्न महापुरुषों के मूल्यांकन में राजकीय स्तर पर भेद भाव किया जाता है अथवा किसी महापुरुष की शिक्षाओं को अपने स्वार्थों की सिद्धि के लिए अथवा देश में विघटन फैलाने के लिए गलत रूप में उपस्थित किया जाता है और हमें आपत्ति यही है कि गुरु नानक एवं गोविन्दसिंह जी के विषय में शोध के नाम पर यही कुछ आज किया जा रहा है।

प्रथम तो भेदभाव की बात ले लीजिए। हमारी सरकार ने कई वर्ष पूर्व बुद्ध जयन्ती का आयोजन अखिल भारतीय स्तर पर किया था और अब गांधी जी एवं गुरु नानक देव तथा गुरु गोविन्द सिंह जी की जयन्तियों के आयोजन की चर्चा जोर-शोर से चल रही है। बुद्ध जयन्ती के नाम पर अनेक हरिजनों को, जो हिन्दु धर्म का अङ्ग थे, बौद्ध बना दिया गया और बौद्धों को हिन्दुओं से पृथक माना गया। आज अनेक तथा कथित बौद्ध हिन्दु धर्म का विरोध करते हुए स्पष्ट ही अपने आपको

मुसलमानों के निकट मान रहे हैं और दिन रात हिन्दु धर्म ग्रन्थों एवं परम्पराओं का खुला अपमान करते हैं, यद्यपि महात्मा बुद्ध के उपदेशों में स्थान २ पर बौद्धों को 'हे आर्यो !' कह कर सम्बोधित किया गया है और प्राचीन वैदिक आर्य धर्म को श्रेष्ठ कहा गया है (ऐसी अवस्था में एक सम्प्रदाय के ही आचार्य के रूप में मान्य महात्मा बुद्ध को आधार बना कर अनेक लोगों को अपने समाज से पृथक होने का प्रोत्साहन देना क्या सैक्यूलरिज्म की मान्यता के विरुद्ध नहीं हैं ? पर फिर भी यदि महात्मा बुद्ध की जयन्ती सरकार मना सकती है तो बौद्ध धर्म के विरोधी विश्वविख्यात स्वामी शङ्कराचार्य की जयन्ती क्यों नहीं मनाती ? यदि अपने आपको हिन्दुओं से पृथक मानने वाले बौद्धों के आचार्य की जयन्ती सरकार मना सकती है तो अपने आपको हिन्दु धर्म का ही अङ्ग मानने वाले जैनियों के आचार्य महावीर स्वामी की जयन्ती क्यों नहीं मना सकती ? यदि पंजाबी विश्वविद्यालय सिख गुरुओं के सम्बन्ध में शोध के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयत्न कर सकता है। तो वह विश्वविद्यालय आधुनिक भारत के सामान्यतः और पंजाब के विशेषतः निर्माता महर्षि दयानन्द के विषय में कुछ भी क्यों नहीं करती ? क्या पंजाब, क्या कुरुक्षेत्र और क्या भारत के अन्य विश्वविद्यालय इन में से कोई भी तो उन के विषय में कुछ भी खोज करवाने की चिन्ता नहीं करता। क्या पंजाबी विश्वविद्यालय बतला सकता है कि गुरु नानक ने या गोविन्द सिंह ने इस तथा कथित पंजाबी भाषा में कितना साहित्य लिखा है ? और यदि नहीं लिखा तो फिर उनका सम्बन्ध इस विश्वविद्यालय से कैसे जुड़ा और दयानन्द का क्यों नहीं ? क्या वह नहीं जानता कि जहां गुरु नानक के लङ्का-गमन पर खोज की जानी चाहिए, वहां महर्षि दयानन्द ने १८५७ की क्रान्ति में क्या भाग लिया ? इस विषय पर भी खोज होनी चाहिए क्या ये सब विश्वविद्यालय और अनुदान आयोग नहीं जानते कि महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के सम्बन्ध में ब्रिटिश सरकार के रेकार्डों का भारत में तथा इण्डिया आफिस लाइब्रेरी लण्डन में और श्याम जी कृष्ण वर्मा के साहित्य का स्विट्जरलैण्ड में कोई अध्ययन या अनुसन्धान नहीं किया गया ? महर्षि दयानन्द के व्यक्तित्व और कृतित्व का गुरु नानक या गोविन्द सिंह, महात्मा गांधी, स्वामी विवेकानन्द, और महात्मा बुद्ध की तुलना में शतांश क्या, सहस्त्रांश भी अध्ययन या अनुसन्धान नहीं किया गया। १९२१ में दीपावली उत्सव की आर्य समाज कलकत्ता में अध्यक्षता करते हुए श्री विपिन चन्द्र पाल ने कहा था कि महर्षि दयानन्द ने यहां कई लोगों के आग्रह को स्वीकार कर उनको अपने जीवन की कई महत्त्वपूर्ण घटनाएं लिखवाई थीं और उनके कलकत्ता में दिए गए सभी भाषणों, वार्तालापों तथा शास्त्रार्थों को महर्षि देवेन्द्र नाथ ठाकुर, पं० ईश्वर चन्द्र विद्यासागर तथा केशवचन्द्र सेन ने कुछ विद्वानों को नियुक्त कर लिपिबद्ध करवाया था। अतः महर्षि दयानन्द की जीवनी के उन सभी अज्ञात अंशों की खोज होनी चाहिए। इन अंशों में से जो कुछ अंश प्राप्त हुए हैं, उन में से साधारण ब्रह्म समाज के आचार्य श्री अनाथ कृष्ण शील के घर से जो अंश प्राप्त हुआ हैं, उससे पता चलता है कि महर्षि दयानन्द ने साधु-सन्यासी तपस्वियों के सङ्गठन के लिए प्रयास किया था। उन्होंने १८५७ की क्रान्ति के नेताओं के साथ भी सम्पर्क स्थापित किए थे। नाना धोंधोपन्त राव पेशवा भी विचार-विमर्श करने के लिए उनसे मिलने आए थे। इस अंश को उस समय अवन्ती कान्त-चक्रवर्ती न्यायरत्न ने लिखा था। दूसरा अंश श्री शिवचन्द्र राय विद्यार्णव का लिखा हुआ म० देवेन्द्र नाथ ठाकुर के प्रपौत्र श्री क्षेमेन्द्र नाथ ठाकुर के घर से मिला है जिसमें लिखा है कि म० दयानन्द ने ५ वर्ष तक अनेक स्थानों में भ्रमण किया था और वह बैरकपुर सहित अनेक सैन्यावासों में गए थे। मंगलपाण्डे नामक सैन्य ने उनसे आशीर्वाद मांगा था आदि आदि इस विवरण से सिद्ध है कि म० दयानन्द के जीवन पर विशेष शोध-कार्य के लिए भी किसी विश्वविद्यालय को तथा राज्य सरकारों को आगे आना चाहिए था। महर्षि दयानन्द के आन्दोलन से अविभाजित पंजाब और उत्तर प्रदेश विशेष रूप से प्रभावित हुए और राजस्थान तथा कलकत्ता में भी उन्होंने बहुत समय प्रचार में लगाया अतः यह दायित्व पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान और बंगाल के विश्वविद्यालयों और उत्तर प्रदेशों की सरकारों तथा मुख्य रूप से केन्द्रिय सरकार एवं विश्वविद्यालय अनुदान

आयोग पर आता है कि वे इस सम्बन्ध में विभिन्न विश्वविद्यालयों में 'दयानन्द-पीठ' स्थापित कर महर्षि दयानन्द के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विशेष शोध करवाएं। यह बात और भी महत्त्वपूर्ण इसलिए हो जाती है कि १९७५ में जहाँ 'आर्य समाज स्थापना शताब्दी' आ रही है, वहां १९८१ में 'महर्षि दयानन्द निर्वाण शताब्दी' भी आ रही है। गुरुओं पर अनुसन्धान के लिए विशेष विभाग स्थापित करने वाले पंजाबी विश्वविद्यालय को तो इस दिशा में और भी अधिक सचेष्ट होना चाहिए, यदि उसका स्वरूप साम्प्रदायिक न हो तो।

एक और भयङ्कर बात इस विश्वविद्यालय ने जो की है, वह है यह कि इसने विश्व के महान् पांच धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए जो योजना बनाई है, उसमें इस्लाम, ईसाइयत और बौद्ध धर्म के साथ हिन्दु धर्म और सिख धर्म इन दोनों को पृथक २ माना गया है जो गुरुओं की शिक्षा और उनके मन्तव्य के सर्वथा विरुद्ध है। एक ओर हिन्दु-सिख एकता की दुहाई दी जा रही है तो दूसरी ओर हिन्दु सिख धर्म को पृथक २ माना जा रहा है। यदि सिख धर्म हिन्दु धर्म से पृथक है तो फिर जैन धर्म और आर्य समाज के अनुसन्धान के लिए भी पृथक विभाग क्यों नहीं खोले गए? क्या सिखों की संख्या इन से अधिक है? अब तक तो केवल कुछ सिख व्यक्तिगत रूप से ही सिखों को हिन्दुओं से पृथक सिद्ध करने का प्रयास करते थे पर अब सरकारी धन से इन दोनों से फूट डालने का कार्य पंजाबी विश्वविद्यालय ने सम्भाल लिया है। जहां एक ओर यह सिख धर्म को श्रेष्ठ सिद्ध करने का प्रयास कर रहा है, वहां इसी विश्वविद्यालय के एक विशिष्ट विद्वान डा० गण्डासिंह ने ट्रिब्यून में सम्पादक के नाम पत्र लिखकर वेदों में गोमांस भक्षण के विधान' को सिद्ध करने का प्रयास किया था। क्या पंजाबी विश्वविद्यालय के इस स्वरूप को बदलकर इसे सम्प्रदाय-निरपेक्ष बनाया जायगा?

आर्य युवक कार्यकर्त्ता ध्यान दें

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का वार्षिक साधारण अधिवेशन २० जुलाई रविवार मध्यान्ह १२ बजे से गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में हो रहा है। आर्य युवक परिषद राष्ट्र वादी युवकों का संगठन है। आर्यसमाज की युवक संस्थाओं के कार्य कर्त्ता प्रतिनिधि रूप में अधिवेशन में भाग ले सकेंगे। अधिवेशन में १ वर्ष के मुख्य पदाधिकारियों का निर्वाचन तथा स्थानीय कार्य कर्त्ताओं की नियुक्तियां होंगी। आगामी वर्ष के कार्यक्रम की रूप रेखा का भी निर्धारण होगा। स्थानीय संगठनों के जो कार्य कर्त्ता अधिवेशन में भाग लेना चाहते हैं वे १५ जुलाई तक अपना नाम तथा हरिचय परिषद् कार्यालय में भेज दें।

विशेष—गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ देहली से १० मील मथुरा रोड़ पर बदरपुर ग्राम के पास है। दिल्ली कश्मीरी गेट स्थित अन्तर्राज्यीय बस अड्डे से बसों की सुविधा है। बस नं० ४२ विशेष सुविधा जनक रहेगी।

निवेदक

इन्द्रदेव मेधार्थी	श्यामराव	बलजीत आर्य
प्रधान परिषद्	संयोजक परिषद्	मन्त्री परिषद्

क्रान्तदर्शी दयानन्द का दर्शन

श्री डाक्टर महेन्द्र कुमार जी शास्त्री, बम्बई

स्वामित्व, अधिकार और आसक्ति, ये तीनों बातें ही सब झगड़ों का मूल हैं। मैं इस पदार्थ का स्वामी हूँ मालिक हूँ मेरे सिवा अन्य कोई इसका मालिक नहीं हो सकता और इसका प्रयोग नहीं कर सकता, इत्यादि भावनाएँ लड़ाई की (व्यक्तिगत और राष्ट्रगत दोनों ही) कारण हैं यह मेरा अधिकार है। दूसरों को कोई अधिकार नहीं है। कर्त्तव्य और धर्माचरण की अपेक्षा लोग "अधिकार" की ही बात अधिक करते हैं आजकल जिसे देखो किसी न किसी पद आदि पर अधिकार जमाता फिरता है। इसीलिए आजकल राजनीतिक दलों के सदस्य अपने-अपने दल बदलते रहते हैं। मन्त्री बनने का अधिकार प्रत्येक निर्वाचित सदस्य का है और मुझे क्यों नहीं मिला, अन्य को क्यों मन्त्री पद मिल गया, अतः मैं वह दल बदल लेता हूँ। जहाँ मेरा अधिकार स्वीकार किया जाएगा। इसी प्रकार पदार्थों, भूमि, समान, धनादि पर अधिकार के कारण ही सब झगड़े होते हैं। स्वामित्व और अधिकार के साथ-साथ यदि कुछ उदारता हो तो भी झगड़े टल सकते हैं। किन्तु जब उदारता का स्थान आसक्ति ले लेती है तो "कड़वा करेला और नीम चढ़ा" की कहावत चरितार्थ हो जाती है।

आसक्ति मन की उस दशा का नाम है जिसमें मनुष्य समझता है कि वह सदा संसार में रहने वाला है और इस प्रकार भ्रमपूर्ण अमर जीवन के लिए इतनी साधन, सामग्री एकत्र कर लेना चाहता है जो कभी समाप्त न हो मानो वे भी उसका अपना ही अंग है। जो इस प्रकार अपने पुत्र पौत्रों के विषय में सोचता है और उनके लिए भी इतनी साधन सामग्री एकत्र करना चाहता है जो कभी समाप्त न हो और उनको इसके लिए कोई परिश्रम भी करना न पड़े। कंजूस के धन के समान वह न तो स्वयं इनका उपभोग करता है और न ही दूसरों को ही करने देता है। यह अत्यन्त संकुचित, क्षुद्र और स्वार्थी मनोवृत्ति है जिसमें एक प्राणी अन्यों के उपयोगार्थ संसारी पदार्थों का संग्रह कर लेता है। इस प्रकार दूसरों को उनके उचित अंश से वंचित करता है और अपनी आवश्यकता से अधिक पदार्थों को एकत्र कर अन्यों को दरिद्र और दुःखी बनाता है। इसे ही आजकल संग्रह=अपसञ्चय कहा जाता है। यही मनोवृत्ति धनी और दरिद्र वर्गों के निर्माण और कलह का कारण है।

ऋषि दयानन्द के समाज विज्ञान में उन तीनों ही प्रवृत्तियों को समाप्त कर दिया गया है।

कोई एक व्यक्ति और उसका परिवार ही सदा सर्वदा के लिए किसी वस्तु का स्वामी या अधिकारी नहीं हो सकता यदि उसमें उस तरह की योग्यता न हो। यदि योग्य का अधिकार हो तो उसके आधिपत्य में अवस्थित सब पदार्थों और ऐश्वर्य का उपयोग जहाँ उसके अपने परिवार के लिए होगा वहां समाज के कल्याण के लिए भी होगा। अतः संग्रह या बिना उपयोग पड़ा रहना जैसी अवस्थाएं उत्पन्न होंगी ही नहीं। पुनश्च जब समाज या राष्ट्र ने समस्त प्रजा की शिक्षा-दीक्षा तथा योग्यतानुसार कार्य वितरण का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया तो फिर परिवार के ज्येष्ठ को चिन्ता ही किस बात की रहेगी और वह संग्रह और संचय करेगा ही क्यों ?

आजकल के साम्यवादी और समाजवादी-राष्ट्रीयकरण में जहाँ सारा स्वामित्व सरकार के हाथ में, अर्थात् शासन चलाने वाली पार्टी के हाथ में रहता है जिसका उपयोग वह अपना स्वार्थ साधने और व्यक्तिगत स्वतन्त्र विचारों का गला घोटने के लिए करते हैं, वहाँ ऋषि के समाज में व्यक्तिगत सम्पत्ति आदि सम्पूर्ण अधिकार उसके अपने ही हाथ में रहेगा। उसकी वृद्धि और वितरण का अधिकार भी उसके ही हाथ में रहेगा—छिनेगा नहीं हाँ, उसका उपयोग वह अपनी इच्छानुसार समाज राष्ट्र और संसार के उपकार के लिए धर्मानुसार करे। यदि ऐसा नहीं करेगा तो उससे लेकर अन्य योग्य व्यक्ति को

देने का अधिकार समाज या राष्ट्र का रहेगा। याद रहे राष्ट्र या सरकार स्वयं नहीं लेगी अपितु योग्य व्यक्ति को सौंप देगी। इस प्रकार ऋषि की समाज रचना में शासन का हाथ बहुत ही कम रहेगा जनता स्वयं अपनी स्वामिनी होगी। पूर्ण व्यक्तिगत स्वतन्त्रता रहेगी।

शासन अन्यायी न हो जाए, इसके लिए भी ऋषि ने व्यवस्था कर रखी है, जिसका वर्णन यथास्थान किया जाएगा।।

इसी प्रकार ऋषि के यथा योग्य वाद पर आधारित समाज में स्वामित्व और अधिकार की बात और आगामी पीढ़ी के धनादि के संचय की बात स्वयं ही समाप्त हो जाती है। पुनश्च सबको यह भी ध्यान रहेगा कि यदि धर्मानुसार-यथायोग्य व्यवहार न किया तो उनसे सम्पत्ति आदि छिन सकती है। इस भय से कर्त्तव्य भावना को तो प्रोत्साहन मिलेगा ही धनादि में आसक्ति भी नहीं रहेगी क्योंकि सदा उनके मन में यह विचार उठता रहेगा कि कि यह छीनी भी जा सकती है। मिथ्या नियत्व की भावना ही समाप्त हो जायगी।

इसी प्रकार के सामाजिक प्रबन्ध को महात्मा गांधी जी ने ट्रस्टीशिप (धरोहर) की संज्ञा दी है।

यह धरोहर मनोवृत्ति की भावना ही आर्यो की आश्रम प्रणाली में निहित है। इतने समय तक इस आश्रम में रहकर मुझे इस आश्रम की सम्पत्ति और कर्त्तव्यों को आगामी पीढ़ी को सौंप जाना है। अतः मैं ऐसा कार्य करूँ कि भावी पीढ़ियाँ स्मरण करें और उनके सामने एक आदर्श उपस्थित कर जाऊँ। इसी दृष्टिकोण से जब कार्य होगा तो स्वामित्व अधिकारपना और आसक्ति का कहीं नाम भी नहीं रहेगी। सभी जन सभी कार्य समाज की भलाई के लिए करेंगे। और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता भी रहेगी। इससे अच्छा समाजवाद और क्या हो सकता है, कहाँ यह वैदिक समाजवाद है जिसका दर्शन क्रान्तदर्शी दयानन्द ने जगत् को कराया है और कहाँ मार्क्स आदि का समाजवाद, जिसमें हिंसा घृणा द्वेष व्यक्ति की गुलामी और एक पार्टी को ही आधिपत्य आदि अनेक दोष हैं।

यहाँ ही ऋषियों और साधारण बुद्धिमानों में भेद ज्ञात होता है। ऋषिरचित "ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका" से निम्न मन्त्र स्पष्ट रूप से वैदिक समाज रचना का चित्र प्रस्तुत करते हैं।

ईशा वास्यमिदँ सर्वं यत् किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्य स्विद् धनम्॥
(ईशोपनिषद्)

जान ले मनुज हे! ईशमय इस संसार को।
धर्म-श्रम से कमा कर ऐश्वर्य श्री सम्पन्न हो॥
पर द्रव्य, इच्छा स्वामित्व अरु स्वार्थभाव छोड़ दे।
त्याग पूर्वक भोगो इसे, परोपकार पर भी ध्यान दो॥

सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै।
तेजस्विनावधीतमस्तु। मा विद्विषावहै॥
(तैत्तरीय आरण्यक)

हे प्रभो! संसार में सुखशान्ति सबको दीजिए।
सहभोज, शिक्षा, तेज से दीप्त हमको कीजिये।
वैर भूलें, कर्म वर्चस्व के हम करते रहें।
सह सुरक्षा कर्म से हम विश्व में फूले फलें।

संगच्छध्वं संवदध्वं, सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथापूर्वे संजानाना उपासते।
(ऋ. प. ८/व. ४६/म. १)

प्रेम से मिलकर चलो, बोलो, सभी ज्ञानी बनों।
पूर्वजों की भांति, तुम कर्त्तव्य के मानी बनों॥

समानो मन्त्रः समितिः समानी
समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः,
समानेन वो हविषा जुहोमि॥
(ऋ. प्र. ८।अ. ८व.४१।मं-३)

समतन्त्रमन्त्रों को वरें चित्त में समताधरें।
ईश्वरीय ज्ञान प्राप्तकर वेदमत सम्मत रहें॥

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥
(ऋ. प्र. ८।अ.८। व. ४९।मं.४)

हों हृदय सभी के तथा संकल्प अविरोधी सदा।
मनभरे हों प्रेम से जिससे बढ़े सुख-सम्पदा॥

दृते दृँह मा मित्रस्य मा चक्षुषा
सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।
मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।
(यजु० अ. ३६। म. १८)

हे दयामय दुःखनाशक, ऐसी कृपा कीजिए।
मित्रभाव युत हो मानव सभी धर्मपथ में चलें॥
श्रमेण तपसा सृष्टा ब्रह्मणा वित्त ऋते श्रृता॥ ८
सत्येनावृता श्रियःप्रावृता यशसा परीवृता॥९
(अथर्व० का. १२।अनु५।मन्त्र १. २)
श्रमसत्य तपसे पूत हों
श्री सुशोभित जन बनें।
बल विद्या बुद्धि योग से,
चिरयशस्वी हम सब बनें॥

देखिए—परिश्रम की महत्ता वेद में सत्य और तप से भी पहले श्रम (मेहनत) को स्थान दिया गया है। अपनी मेहनत की कमाई खाओ यह वेद का सन्देश है। आज लोग श्रम की महानता का गीत गाते हैं किन्तु स्वयं परिश्रम से जी चुराते हैं। अनुचित मार्गों से और आसानी से धन कमाने का प्रयत्न करते हैं। इसीलिए समाज में अशान्ति है। समाज में जीवन किस प्रकार बिताना चाहिए, यह नीचे लिखे मन्त्र में कितनी अच्छी तरह और सम्पूर्णता के साथ बताया गया है।

स्वधया परिहिता, श्रद्धया पर्यूढा दीक्षया गुप्ता यज्ञे प्रतिष्ठिता लोको निधनम्।
(अथर्व० का. १२। ऋ५। म ३.७)
स्व परिश्रम प्राप्त ऐश्वर्य से हम सभी परिपूर्ण हों।
श्रद्धावन्त हो सत्यमें धर्ममय व्यवहार में॥
समाज का रक्षण करें वेद विद्या से भरपूर हों।
यज्ञ से हों सुशोभित, पुरुषार्थ हम करते रहें॥
वेद शिक्षा अनुकूल आर्यजन जीवन बिताते रहें।

उक्त वैदिक समाजवाद का आधार संक्षेप में निम्नलिखित तत्त्वों पर आधारित है।

व्यक्ति के स्वामित्व का अभाव :—

इस संसार के समस्त ऐश्वर्य का मालिक परमपिता परमात्मा है। उसने इसे प्राणियों की भलाई के लिए दान दिया है। सभी इस सम्पत्ति के स्वामी हैं। उनका अधिकार परिश्रमपूर्वक इसमें से अपने लिये उपयोगी पदार्थ प्राप्त करना है। इन्हें प्राप्त कर भी इनका उपयोग इस प्रकार प्रकार करना है कि अन्यों को हानि न पहुंचे। केवल अपनी आवश्यकताओं के अनुसार ही व्यय करने का प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है। इससे अधिक नहीं। ऐश्वर्य को प्राप्तकर केवल अपने लिए उपयोग करने वाले को निरुक्तकार यास्क ने 'पापी' कहा है" केवाल दो भवति केवाल दी इसका अभिप्राय हुआ कि समाज के विस्तृत स्वार्थ को सामने रखकर धनादि व्यय करना चाहिए। अर्थात् त्याग पूर्वक इसका उपयोग करना चाहिए।

व्यक्तिगत आवश्यकताएँ भी इतनी अधिक न होनी चाहिए। जिससे समाज के अन्य घटकों को हानि हो। यथा एक व्यक्ति का काम एक ही मोटर से चल सकता है। दूसरी मोटर रखने का लोभ त्याग देना चाहिए। इस प्रकार वह अन्य जन के काम आएगी। इस प्रकार बांटने से पदार्थों का उपयोग करना चाहिए। सन्तोष का अभिप्राय भी यही है। सन्तोष तथा सीमित आवश्यकता के सिद्धान्त के कारण बहुत से पदार्थ जनता के उपयोग के लिए मिल सकते हैं। इसीलिए बहुत से ऐश्वर्य धन-मकान आदि का व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए एकत्र करना अपसंचय सामाजिक अपराध है। "ईशावास्य" की यही भावना है। इसे ही ईसा ने ईश्वर का राज्य कहा है।

(२) सहयोग और समानता—ये दूसरे दो तत्व हैं जिन पर वैदिक समाज रचना आधारित है। परस्पर द्वेष-ईर्ष्या की भावना न रखकर मित्र की भावना से सहयोग द्वारा समाज को बढ़ाते रहना आवश्यक है।

इसीलिए गीता ने गाया है—

परस्परंभावयन्तः श्रेयः परमवाप्नुतः।

सहयोग ही संसार की उत्पत्ति और उन्नति का आधार है। परस्पर विरोधी गुणों वाली, तेल, आग और रूई सहयोग से ही दीपक के रूप में प्रकाश करते हैं। अन्यथा एक दूसरे को नष्ट कर दें। इसी प्रकार परस्पर सहयोग से समाज में विभिन्न विचारों, स्वार्थों और स्वभावों वाले घटकों को मिलकर चलना चाहिए। गुरु के सहयोग से ही शिष्य विद्या प्राप्त करता है। अनेकों के सहयोग से कितनी बड़ी कम्पनियाँ चलती हैं। एक दूसरे को नीचे न गिराते हुए हम समाज के सभी अंगों को आगे बढ़ाते रहें, विशेषकर निर्धन गिरे हुए लोगों को सहयोग देते रहें। इसी बात पर ऋषि दयानन्द ने बहुत अधिक बल दिया है। इसे महात्मा गांधी दरिद्रनारायण की सेवा कहते थे। दुःख की बात है कि आधुनिक यूरोपी ढंग का समाजवाद

जनता के विभिन्न वर्गों में द्वेष और घृणा तथा अविश्वास के बीज बोता है, जिससे वह परस्पर लड़ते मरते रहें। यह भेद है ईश्वर प्रदत्त वैदिक सभ्यता, संस्कृति में और अवैदिक अनार्य मनुष्यों की सभ्यता में।

समानता का अभिप्राय है कि प्रत्येक प्राणी को समान अवसर रहे। जन्म-कुल-देश आदि के कारण परस्पर विषमता न रहे। ऐसी परिस्थितियों में सभी अपनी-अपनी योग्यता अनुसार उन्नति न कर सकेंगे, सन्तुष्ट रहेंगे और मित्रभाव से सांसारिक अभ्युदय को प्राप्त करेंगे। इसका अर्थ यह नहीं है कि सब मनुष्य सभी बातों से समान हैं। किन्तु अपनी आवश्यकताओं में सभी समान हैं। यथा-भोजन-वस्त्र, निवास, शिक्षा, कार्य की प्राप्ति, धन कमाने के साधन आदि २ प्रारम्भिक आवश्यकताएँ जिन्हें प्राप्त करने के लिए सभी को समान अवसर मिलना चाहिए। दरिद्रता, सिफारिश की कमी के कारण किसी के साथ अन्याय नहीं होना चाहिए। सबको सामाजिक न्याय समान रूप से प्राप्त होना चाहिए। जो आजकल नहीं है। इस प्रकार समानता के कारण कोई किसी का अनुचित शोषण नहीं कर सकता है। आजकल के कम्युनिस्ट भाई यही कहकर तो साधारण जनता को बहकाते हैं कि एक वर्ग तुम्हारे परिश्रम की कमाई से मौज कर रहा है। तुम्हें चूस रहा है। इत्यादि। यदि सभी को उक्त प्रकार की समानता का व्यवहार समाज में मिले तो इनकी जड़ ही कट जाती है। दमन की अपेक्षा जनता को उन्नत करके विशेष कर धन-सम्पत्ति की उचित वितरण व्यवस्था करके कम्युनिस्टों के चंगुल से जनता को बचाया जा सकता है। किन्तु शोक, शासन तथा नेता ऐसा करने में असमर्थ रहे हैं और २० वर्षों के स्वराज्य के पश्चात् धनी और निर्धन की खाई अधिक बढ़ गई है कम होने की अपेक्षा। फलस्वरूप सर्वत्र असन्तोष-झगड़े आदि देखने में आते हैं। जब तक वैदिक समानता के सिद्धान्त पर न चलें तब तक कल्याण नहीं हो सकता यह निश्चित है।

(३) श्रम सत्य और तप—उल्लिखित सातवें वेद मन्त्र में परमात्मा उपदेश देता है कि तुम यश और समृद्धि ऐश्वर्य से सम्पन्न बनो, पर उसके तीन साधनों पर आचरण करके अपनी मेहनत की कमाई खाओ, उसी से धनादि प्राप्त करो। बिना परिश्रम किये दूसरों की जेबें काटकर न तो समृद्ध बनो और न ही इस प्रकार के धन का उपयोग अपने भोग ऐश्वर्य के रूप में करो। यदि इस पर आचरण किया जाय तो समाज से शोषण ही समाप्त हो जाए।

सभी व्यवहारों और आचरणों का मूल सत्य होना चाहिए। यही संसार के सुख की कुञ्जी है। सत्य पर ही तो संसार आधारित है "सत्येनोत्तमितं जगत्"। इस प्रकार सत्य व्यवहार से चोरबाजारी ही समाप्त हो जाएगी।

तप का अर्थ है तितिक्षा। सहन शक्ति हम में इतनी होनी चाहिए कि अभाव को सहन कर सके। कम में भी गुजारा कर सके। यदि शीतऋतु में हमारे पास एक ही गरम वस्त्र है तो उसी में गुजारा करें। समझिए कि समाज में सबकी आवश्यकता पूरी करने के लिए इतना ही गरम कपड़ा है कि एक एक कोट ही बन सकता है। ऐसी स्थिति में समाज की भलाई के लिए हमें एक ही कोट में सन्तोष करना चाहिए। चाहे हमारी सामर्थ्य दस कोट बनाने की क्यों न हो। शेष कपड़ा समाज के अन्य व्यक्तियों के लिए छोड़ देना चाहिए। इससे एक तो पदार्थों के भाव नहीं बढ़ेंगे दूसरे अभावग्रस्त नहीं रहेगा। सब सन्तुष्ट रहेंगे। और समाज सुखी रहेगा।

"सन्तोषः परमं सुखम्।" यह बात धन धान्य-मकान आदि के सम्बन्ध में है। इसी भावना से गांधी जी ने अपने कपड़ों का खर्च बहुत घटा दिया था। और लंगोटी मात्र पहन कर रहते थे। तप की भावना से ही संन्यासियों का वस्त्रादि का न्यूनतम उपयोग करने को कहा गया है। हमें सदा स्मरण रखना चाहिए कि साधन और साध्य दोनों पवित्र हों। ये दोनों एक ही पदार्थ के दो मुख हैं। हमारा उद्देश्य भी पवित्र और ऊँचा हो और उसकी प्राप्ति के साधन भी। गांधी जी का यही आग्रह था और वेद के श्रम-सत्य और तप इन तीनों उपायों का भी यही अभिप्राय है। मन्त्र में सत्य और तप से 'श्रम' को पहला स्थान देकर परिश्रम की महत्ता प्रतिपादित की गई है। आज कम्युनिस्ट भाई श्रम की महत्ता की दुहाई देते नहीं थकते। वे समझते हैं यह उनका महान् आविष्कार है किन्तु परमात्म-देव ने सृष्टि के प्रारम्भ में ही वेदों में सत्य और तप से भी अधिक श्रम को प्रधानता प्रदान की है। किन्तु जब हम

(शेष पृष्ठ २६ पर)

सामयिकी :—

काँग्रेस ने गद्दी छोड़ दी !

शायद इस शीर्षक को पढ़कर आपका दिल बल्लियों उछलने लगे और आप परमात्मा को धन्यवाद देने लगें कि बाइस वर्षों के दुराचार, अनाचार और कदाचार से पूर्ण कांग्रेसी शासन का अन्त हो गया। पर इतनी जल्दी न करें। बात ऐसी है कि 'गद्दी' दो प्रकार की होती हैं—एक तो हुई शासन की और सत्ता की गद्दी और दूसरी हुई रुई की मुलायम-मुलायम नरम-नरम गद्दी। आज तक कांग्रेस दोनों गद्दियों को अपना जन्म सिद्ध अधिकार मान कर प्रयोग करती रही है। शासन की गद्दी को बनाये रखने के लिये इसने कोई पाप का काम नहीं छोड़ा। प्रतापसिंह कैरों और बीजू पटनायक जैसे अत्याचारी मुख्य मन्त्रियों को प्रश्रय देकर, कट्टर कम्यूनिस्ट कृष्णमेनन जैसे देश द्रोही को रक्षामन्त्री बनाकर और चीन के हाथों भारत को पिटवाकर, शेख अब्दुल्ला जैसे धर्मान्ध मुसलमान और मास्टर तारासिंह जैसे अराष्ट्रिय सिख नेता को दूध पिला पिलाकर, राष्ट्र के पवित्र वातावरण में जातीयता, प्रान्तीयता और साम्प्रदायिकता का जहर घोल घोलकर कांग्रेस ने इस देश का सत्यानाश कर दिया है पर अभी भी यह गरीब जनता के खून की प्यासी, कांग्रेसी सरकार गद्दी छोड़ने का नाम तक नहीं लेती। हाँ—गद्दी छोड़ने के नाम पर एक जबरदस्त पाखंड का नाटक अवश्य रचा है। अब तक कांग्रेस के तमाम अधिवेशनों और महत्वपूर्ण बैठकों में कांग्रेसी नेता रुई की नरम मुलायम गद्दियों पर बड़ी बेहयाई से पसर कर ऐसी बेतकल्लुफी का नजारा पेश करते रहे मानो ये राष्ट्र की ज्वलन्त समस्याओं पर गम्भीर विचार करने न बैठे हों बल्कि किसी वेश्या के कोठे पर मुजरा सुन रहे हों। अब चारों ओर से जब पिटाई होने लगी है तब इनका बुरा हाल हो रहा है—बङ्गाल कांग्रेस का दफ्तर जो लोअर सर्कुलर रोड और चौरंगी के मोड़ पर है अब बिकने जा रहा है क्योंकि काले धन्धाधारी कांग्रेसी नेताओं ने कांग्रेस के फण्ड से भी पैसे गबन कर उसे ऐसा निहङ्गम बना दिया कि अब पुराना पैट्रोल बिल और कर्मचारियों के वेतन देने के लिए भी पैसा बाकी न रहा। पर इतनी पिटाई पर भी इनकी अक्ल सुधरने के बजाय बिगड़ ही रही है अब इन्होंने अपने नेताओं में 'चुस्ती' लाने के लिए एक नयी योजना बनाई है और वह यह कि अब मुलायम गद्दों की जगह ये टेबुल और कुर्सी का प्रयोग करेंगे। अरे ओ ! देश के बदनाम चोर बाजारी करने वाले पूंजीपतियों के टुकड़ों पर पलने वाले कांग्रेसियों—यदि तुम्हें परिवर्तन ही करना था तो अंग्रेजी गुलामी के प्रतीक इन टेबुल कुर्सियों का सहारा न लेकर तुम आचार्य चाणक्य को आदर्श मान किसी कुशासन का सहारा लेते, तब हम भी समझते कि कुछ-कुछ अकल आ रही है। पर जो ढंग तुमने अपनाया है उससे अब यह निश्चित ही होगा कि आज भले ही तुम रुई की गद्दी छोड़ने का 'स्टण्ट' रच लो पर जल्दी ही इस देश के नौजवान तुम्हें अपने शासन की गद्दी छोड़ने पर मजबूर कर देंगे।

बिस्त का बिस्तर गोल करो !

नेपाल के प्रधान मन्त्री श्री कीर्तिनिधि बिस्त ने बड़ी गैर जिम्मेदारी के साथ यह मांग की है कि काठमांडू से भारत का फौजी मिशन वापिस बुला लिया जाय नेपाल की सीमा चौकियों पर जो भारतीय दस्ते तैनात हैं उन्हें हटा लिया जाय। नेपाल की उत्तरी सीमा पर स्थित भारतीय सैनिक वहां नेपाल की सुरक्षा के साथ-साथ भारत की सुरक्षा के लिए भी तैनात हैं। नेपाल की स्थिति ऐसी है कि भारतीय सैनिकों द्वारा चीनी दरिन्दों से इसकी सुरक्षा उतनी ही आवश्यक है जितना कि भारतीय सीमा की रक्षा। यह बात नेपाल की सरकार भी अच्छी तरह जानती है। इसी बात के लिये भारत की सरकार नेपाल को करोड़ों रुपये की मदद भी करती है। जब तक तिब्बत आजाद था तब तक नेपाल का उतना महत्व नहीं था पर नेहरू जी की अदूरदर्शिता के कारण जब से तिब्बत चीनी कम्यूनिस्टों के हाथ में चला गया तब से भारत के

लिए नेपाल का सामरिक महत्व (Strategic importance) बढ़ गया। भारत की नेपाल से मैत्री सदियों पुरानी है और भारत ने अपनी शक्ति का उपयोग कभी नेपाल के हितों के विरुद्ध नहीं किया। ऐसी परिस्थिति में बिस्त महोदय का अचानक इस प्रकार का वक्तव्य देना भारत की शान के सर्वथा खिलाफ है। यह तो प्रत्येक समझदार व्यक्ति समझ सकता है कि इसके पीछे चीन का कितना बड़ा हाथ है और चीन भारत का कितना कट्टर दुश्मन है। चीन के साथ मैत्री करने के लालच में नेपाल ने ल्हासा से काठमाण्डू तक सड़क बनवा दी है। अब बिस्त जी के मुंह से माओ की आवाज सुनकर भारत को अपने विदेश नीति में गम्भीरता से विचार करना होगा। नेपाल हो या दुनिया का कोई दूसरा देश - यदि भारत की सीमा सुरक्षा से कोई खिलवाड़ करना चाहे तो उसके साथ कड़ाई से पेश चाहिये। राजनीति का सिद्धान्त है—The enemy of my enemy is my friend. मेरे शत्रु का शत्रु मेरा मित्र है। हम इसे दूसरे शब्दों में ऐसा भी कह सकते हैं—The friend of enemy is my enemy अर्थात् मेरे शत्रु का मित्र मेरा शत्रु है।

जब तेलंगाना जल रहा था……

उस समय श्रीमती इन्दिरा गांधी जापान की ठण्डी हवाओं में बहारों का मजा लूट रहीं थी। जब जनता जनार्दन की आवाज को कुचलने के लिए ब्रह्मानन्द रेड्डी की कांग्रेसी सरकार छोटे-छोटे मासूम, फूल से कोमल बच्चों को गोलियों से भून रही थी उस समय प्रधान मन्त्रिणी जापान में गुलदस्ते सजाना सीख रहीं थी।

लगभग ६ महीने पूरे होने आ रहे हैं। तेलंगाना आन्दोलन की आग में झुलसा हुआ आन्ध्र प्रन्त एक बरबादी का भयंकर नासूर बनकर पक रहा है। जनता की सही मांगों को जब वैधानिक रूप से सरकार के सामने लाया गया तो वर्षों तक उनकी अवहेलना की गई। कांग्रेसी राज में जनता ने मजबूर होकर यह सीख लिया है कि सरकार से न्याय पाने के लिए अहिंसा का रास्ता बेकार है और हिंसात्मक आन्दोलन छेड़े बिना सरकार ध्यान तक नहीं देती। लाचार होकर तेलंगाना की जनता ने हिंसात्मक आन्दोलन का सहारा लिया और परिणाम स्वरूप सैंकड़ों को मौत के घाट उतारा गया, लाखों करोड़ों की सम्पत्ति को जलाकर राख कर दिया गया—एक ही प्रान्त के अन्दर रहने वालों के बीच कटुता और वैमनस्य का जहर फैलाया गया।…… पर अभी भी सरकार जनता की भावनाओं को समझ नहीं पा रही है। ब्रह्मानन्द रेड्डी ने आज इतनी बरबादी के बाद जो त्यागपत्र दिया—यदि यही त्यागपत्र दो तीन महीने पहले दे दिया होता तो सैकड़ों माताओं की गोद सूनी न होती और सैकड़ों विधवाओं का कन्द्रन न गूंजता। पर आज इस त्यागपत्र से भी कुछ बनता नजर नहीं आता। इस त्यागपत्र का निश्चित परिणाम यह होगा कि अब ब्रह्मानन्द जी शीघ्र ही केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल में ले लिए जायेंगे अथवा कहीं गवर्नर या राजदूत बन जायेंगे। हाँ, यदि त्यागपत्र के झांसे में न आकर यह हिंसात्मक आन्दोलन और भड़क उठा तो सम्भवतः तेलंगाना की मांगें स्वीकार कर ली क्योंकि सरकार का इस प्रकार के आन्दोलनों के प्रति आज तक जो व्यवहार रहा है उसे हम चार स्टेजों (क्रम) में बांट सकते हैं—पहला—कदापि नहीं माना जायगा—दूसरा—दबाव में आकर कोई मांग स्वीकार नहीं की जायगी तीसरा—अपनी मांगों को छोड़कर और चाहे कुछ भी मांग लो और चौथा—मांगें स्वीकार की जायेंगी पर पहले अपना आन्दोलन वापस लो।

गोरों की सभ्यता का दीवाला

गोरी चमड़ी वाले (अंग्रेज, अमेरिकन और यूरोपियन) अपनी सभ्यता की दुहाई देते नहीं थकते पर आज इनकी सभ्यता का बुरी तरह दीवाला निकल रहा है। काली और गोरी चमड़ी के प्रश्न को लेकर ये दुनिया को ईसामसीह के शान्ति के उपदेश सुनाने वाले आज अत्याचार पर उतारू हो गये हैं। अमेरिका के अन्दर काले-गोरों की लड़ाई तो वहां के दैनिक जीवन का अङ्ग बन गया है। दक्षिण अफ्रीका के अन्दर गोरों की तानाशाही आयन स्मिथ के नेतृत्व में वहाँ के मूल निवासी नीग्रो पर अमानवीय अत्याचार कर रहे हैं। अब यह झगड़ा इस तथाकथित सभ्यता के अगुआ इंग्लैंड में तेजी से फैल रहा है। कजरवेटिव पार्टी के नेता श्री इनॉक पावेल ने इंग्लैंड में बसे काली चमड़ी वाले भारतीय, पाकिस्तानी

आफ्रिकन और दक्षिण अमेरिकन लोगों के विरुद्ध जहर उगलना शुरु कर दिया है। केवल रङ्ग भेद के नाम पर मनुष्य मनुष्य के बीच पाशविकता का वीभत्स नाटक खेला जा रहा है। जब इन कुटिल अंग्रेजों का हमारे देश पर शासन था तब यहां इन्होंने इस जहरीले वृक्ष के बीज बोने का प्रयास किया था। आर्यों के प्राचीन वेद सम्मत वर्णाश्रम प्रणाली को बिगाड़ कर अंग्रेज लेखक और उनका जूंठन खाने वाले भारतीय लेखक यह कहने लगे कि वर्ण का अर्थ तो रङ्ग होता है—इस देश में पहले काले रङ्ग के द्रविड़ों का राज्य था फिर मध्य एशिया से गोरे रङ्ग के आर्य आगये और द्रविड़ों को दक्षिण की ओर मार भगाया। इस प्रकार उत्तरी और दक्षिणी आर्यों के बीच रङ्ग भेद के आधार पर गृह युद्ध करवाने का दूषित षड़यन्त्र लेकर अंग्रेजों की कूटनीति की चाल खेली गई थी। और हालांकि तामिलनाडू की डी० एम० के०पार्टी ने इस अलगाव की भावना को भड़का कर राजनैतिक लाभ उठाना चाहा है पर सौभाग्य से दक्षिण भारत की जनता पर उनका कोई व्यापक प्रभाव नहीं पड़ा।

पासवां जब चोर हो……

महात्मा गांधी की जन्म शताब्दी का सरकार और कांग्रेसियों की ओर से विशेष शोर मचाया जा रहा है। पर केवल शोर शराब ही है कोई ठोस काम नहीं किया जा रहा! कुछ सच्चे लोगों ने मांग उठाई थी गांधी शताब्दी पर सारे देश में शराब बन्दी लागू कर दी जाय पर इस मांग की गोवा-कांग्रेस-अधिवेशन में वो धज्जी उड़ाई गई कि मांग करने वाले मुंह की खाकर चुप बैठ गये। कोटद्वार (गढ़वाल) में शराब की दुकानों को लेकर डा० सुशीला नैय्यर आदि ने भी बड़े हाथ पांव पटके और आमरण अनशन (ऐसा अनशन जिससे आज तक कोई नेता नहीं मरा) भी आरम्भ किया गया पर सारी की सारी स्टण्टबाजी बनकर रह गई। असल बात यह है कि आज हम शराब बन्दी की मांग उनसे कर रहे हैं जो स्वयं शराब के नशे में चूर रहते हैं। देश के बड़े बड़े मिनिस्टर, एम. पी. और एम. एल. ए शराबी हैं—देश के सेना के अधिकारी, पुलीस के अधिकारी, डिप्टी कलेक्टर और अन्य प्रशासनिक अधिकारी--इनमें अधिकांश शराब पिये बगैर काम नहीं कर सकते और इनसे ही आशा की जाती है कि शराब बन्द करवा देंगे! आज तो वस्तुस्थिति यह है कि ये 'बड़े लोग' जनता के गरीब किसान मजदूरों को शराब पिलाकर उनका शोषण कर रहे हैं। एक ओर तो देश की जनता दाने दाने को तरस रही है—दूसरी ओर ऐय्याशी का बाजार गर्म हो रहा है—जम्मू-कश्मीर के राज्यपाल ने १९६५-६६ में विदेशों से बढ़िया शराब और सिगरेट मंगाने के लिये ५०००) रु० का आयात (Import) लाइसेन्स केन्द्रीय सरकार से लिया। १९६७-६८ में पुनः ४५००रु० का लाइसेन्स इस काम के लिये प्राप्त किया गया। उत्तर प्रदेश के राज्यपाल ने १० ५ रु० के, उड़ीसा के राज्यपाल ने १००० रुपए के, राजस्थान के राज्यपाल ने ८९६ रुपए के बिहार के राज्यपाल ने ६६८ रुपए के, पंजाब के राज्यपाल ने (६६-६७में) १९६७ रुपए के और केरल के राज्यपाल ने (६७-६८ में) २००० रुपए के लाइसेन्स प्राप्त किये। और अपने विलासिता के अड्डे राज्यपाल भवनों में शराब पीकर ये राज्यपाल शराब बन्दी कार्यक्रमों का उद्घाटन करते रहे। यही या इससे भी बुरा हाल मिनिस्टरों का है—जब देश के रक्षक ही भक्षक बने बैठे हैं तो क्या सुधार होगा—

> पासवां जब चोर हो, तो कौन रखवाली करे
> उस चमन का हाल क्या, माली जो पामाली करे!

जनसंघ ने धोखा दिया

पंजाब के आर्यों ने राजनीति के क्षेत्र में जनसंघ का समर्थन कर बहुत बड़ी भूल की। और आज उस भूल का बड़ा मंहगा मूल्य उन्हें चुकाना पड़ रहा है। पंजाब का अकाली दल जिस साम्प्रदायिकता का नारा लेकर आर्यों को कुचल डालना चाहता था, उसके मुकाबले में जनसंघ का आर्यभाषा प्रेम और अखण्ड भारत का नारा बड़ा आकर्षक लगा। पर किसे पता था की भारतीय संस्कृति के त्याग वाद की दुहाई देने वाले-जनसंघी नेता अवसर वादिता के पुतले निकले और अपने नीति और सिद्धान्तों की हत्याकर अकालियों से जा मिले—मन्त्रिमण्डल की दो कुर्सियों के लिये! अब जब अकाली नेताओं ने सच्चर

फार्मूले की गर्दन मरोड़ दी, जनसंघ के नेता कर्तव्यहीनता की पराकाष्ठा पर पहुंच कर खामोशी साध रहे हैं। पठानकोट अधिवेशन पर जनसंघियों ने जो मगरमच्छ के आंसू बहाये उन्हें आर्य जनता अच्छी तरह समझती है, अमृतसर में आर्य समाज के तत्वावधान में आर्यभाषियों ने जबरदस्त मांग की है और अब इस परिवर्तित स्थिति का पंजाब की राजनीति पर दूरगामी प्रभाव पड़ सकता है! यदि पंजाब की आर्य समाज अपना राजनैतिक संघठन बनाकर मैदान में कूद पड़े और आर्य भाषा की रक्षा के प्रश्न के सामने रखकर आर्य राजनीति का घोषणा पत्र तैयार कर ले तो इस प्रान्त में पनप रही साम्प्रदायिक राजनीति के प्रभाव को शक्तिहीन बनाया जा सकता है। पर इसमें इस बात का पूरा ध्यान रखा जाये कि आर्य भाषा के प्रश्न को हिन्दू साम्प्रदायिकता के तक सीमित न रखा जाय वरन् एक राष्ट्रीय समस्या का रूप दिया जाय और हिन्दू-सिख-जैन सबका सहयोग प्राप्त किया जाय! यदि मजबूती से काम न लिया गया तो शीघ्र ही सारा पंजाब साम्प्रदायिकता के विष से विषाक्त हो जायगा और हमारी आंखों के देखते देखते एक 'सिख होम लैण्ड' भारत से टूट कर अलग हो जायगा! इसी अङ्क में एक अन्य लेख 'पंजाबी विश्वविद्यालय' पर है और अब तो गुरु नानक युनिवार्सिटी, गुरु गोबिन्द युनिवर्सिटी और न जाने कितने और साम्प्रदायिकता के गढ़ तैयार होंगे। इधर पंजाब विश्वविद्यालय से सम्बन्ध इस लिये विच्छेद किया जा रहा है कि इसका वाइस चान्सलर आर्य समाजी है। हरियाणा के ५ प्रतिशत सिखों के लिये तो गुरुमुखी पढ़ाने की मांग की जा रही (और बड़े दुःख से कहना पड़ता है कि हरयाणा के मुख्यमन्त्री श्रीबंशीलाल जी दबाव में यह कहने लगे हैं कि यदि किसी विद्यालय में १० विद्यार्थी भी चाहें तो गुरुमुखी की व्यवस्था की जायगी) पर पंजाब के ४० प्रतिशत आर्य भाषियों को कोई सुविधा नहीं दी जा रही। इसलिये अब समय की पुकार है कि पंजाब में राष्ट्रीय विचारधारा वाले सारे नागरिक आर्य समाज के नेतृत्व में संघठित हों और साम्प्रदायिकता और अवसर वादिता के विष वृक्ष को जड़ से उखाड़ फेंके।

(पृष्ठ २२ का शेष)

स्वाध्याय करें तब तो ज्ञान हो भी वेद का संकेत इस ओर है कि बिना श्रम के साथ तप का भी पालन नहीं किया जा सकता है। ८ वें मन्त्र में भी यही उपदेश है कि अपने सच्चे परिश्रम से प्रम ऐश्वर्य को प्राप्त करो। इस प्रकार प्राप्त पदार्थों से विद्या, शिल्प विज्ञान आदि प्रकाश संसार में करो, सत्य में श्रद्धा रखो, विद्वानों द्वारा प्रदर्शित मार्ग से जीवन व्यतीत करो। और यज्ञ करते हुए अर्थात् जनता जनार्दन की सेवा करते हुए अपना जीवन व्यतीत करो। इस प्रकार वैदिक समाजवाद की नींव परिश्रम, सत्य, तप और यज्ञ पर चारों कभी फेल न होने वाले पायों पर रखी गई है। आवश्यकता है हमें उन्हें समझें और उनके अनुसार आचरण करें। इसी में संसार का कल्याण है। वेदों में तो यह सब सिद्धान्त अनादि काल से ही प्रतिपादित है। किन्तु इन सबको सत्य रूप में हमारे सामने जिस ऋषि ने प्रतिपादित किया उस क्रान्तदर्शी दयानन्द को हमारा शतशः प्रणाम।

सभी सच्चे भारतीयों की यही भावना है। महात्मा गांधी, स्वामी विवेकानन्द आदि ने समाज रचना के इन्हीं सिद्धान्तों को स्वीकार किया है। सबसे अधिक खुले रूप में दीखने वाली आर्थिक बिषमता को विनष्ट करने के लिये इससे अधिक उत्तम उपाय हो ही नहीं सकते। यह हमारी निश्चित धारणा है। अर्थ अर्थात् धन बहुत बड़ी शक्ति है अर्थस्य पुरुषो दासः न दासोऽर्थः कस्यचित्। भीष्म पितामह की यह उक्ति है। चाणक्य ने भी कहा है अर्थो राजस्य कारणम्। धन ही राज्य प्रजा और समाज के संचालन का साधन है। अतः उस पर ही अधिक बल दिया जाता है। विद्या, आदि की विषमता पर कम ध्यान है क्योंकि वे प्रायः छिपे रहते हैं। किन्तु सभी प्रकार की विषमताओं को नाश करना और मनुष्य में सच्ची समानता सहयोग, श्रम, तप सत्य, ईश वश्य भावना, सन्तोष आदि पर आधारित सच्चे वैदिक समाजवाद का लक्ष्य है। यूरोपीय समाजवाद कम्यूनिज्म स्वयं उसके जन्म स्थान रूस, आदि में भी फेल हो रहा है। क्योंकि उनका दृष्टिकोण और उस समाजवाद के मूल सिद्धान्त ही गलत हैं। अतः वेद प्रतिपादित और क्रान्तदर्शी दयानन्द दर्शित समाजवाद की उपलब्धि के लिए सन्नद्ध होकर हमें काम करना चाहिए।।

शंका-समाधान

शंका १—स्वामी दयानन्द ने चाण्डाल के हाथ का खाना निषेध लिखा है, चाण्डाल कौन है ?

सुरेशकुमार चौधरी, कलकत्ता

समाधान—सत्यार्थ प्रकाश के दशम समुल्लास में महर्षि दयानन्द ने चाण्डाल आदि के हाथ का बना खाना निषेध किया है तथा इसमें कारण यह लिखा है कि चाण्डालादि का शरीर दुर्गन्ध के परमाणुओं से भरा रहता है और उनके संसर्ग से अन्य श्रेष्ठ पुरुषों में भी मांस, शराब सेवन के दोष की सम्भावना रहती है। चाण्डाल जन्म के आधार पर कोई वर्ग विशेष नहीं। जो व्यक्ति बुद्धिनाशक तामसिक वस्तुओं का सेवन करता है, स्वार्थवश हिंसादि क्रूर कर्म करता है तथा श्रेष्ठ मर्यादाओं के सदैव विरुद्ध आचरण करता है वही व्यक्ति चाण्डाल है।

शंका २—ईश्वर का नाम भगवान् है, रामकृष्ण आदि महापुरुषों को भी लोग भगवान् कहते हैं, तो राम कृष्ण आदि ईश्वर क्यों नहीं ? —अशोककुमार रानी

समाधान—ईश्वर, भगवान्, आदि शब्द प्रकरण तथा विशेषण के कारण भिन्न-भिन्न अर्थों के वाचक होते हैं। कहीं पर इन शब्दों से सर्वशक्तिमान् परमात्मा का ग्रहण होता है, और कहीं पर किसी व्यक्ति का ग्रहण होता है। इसे जानने की यही रीति है कि जहां-जहां स्तुति, प्रार्थना, उपासना, सर्वज्ञ, व्यापक, शुद्ध, सनातन और सृष्टि कर्ता आदि लक्षण लिखे हैं वहां-वहां इन नामों से परमेश्वर का ग्रहण और जहां इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख,दुःख, अल्पज्ञ आदि विशेषण हों वहां जीव का ग्रहण करना चाहिये। राम कृष्ण व्यक्तियों के गुण, कर्म, जीव के समान होने से वे ईश्वर नहीं हैं।

शंका ३—हिंसा का अर्थ हत्या करना ही नहीं, अपितु दूसरे का दिल दुखाना भी है। इस प्रकार तो गाय का दूध दुहने से भी हिंसा होती है। —रामदेव, उदगीर

समाधान—योग दर्शन के साधनपाद के सूत्र ३० का भाष्य करते हुये महर्षि व्यास अहिंसा की व्याख्या करते हुये लिखते हैं—"तत्राहिंसा सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानामनभिद्रोहः" अर्थात् किसी भी प्राणी का अनिष्ट न करना अहिंसा है और इसके विपरीत हिंसा है। गाय का दूध निकालने में गाय का स्वामी गाय के प्रति कोई अनिष्ट कार्य नहीं करता और न ही गाय को दूध निकालने से किसी प्रकार की पीड़ा ही होती है। इसके विपरीत दूध दुहने से गाय को सुख मिलता है। यदि दुधारू गाय का दूध न निकाला जाय तो वह निश्चय से रोगी हो जाती है। अतः गाय के दूध दुहने में कोई हिंसा नहीं। वास्तव में हिंसा, अहिंसा का सम्बन्ध न्यायपूर्वक आचरण से अपेक्षा रखता है। माता, पिता तथा गुरुजन भी अपनी सन्तान की ताड़ना करते हैं किन्तु वे हिंसक नहीं होते, इसी प्रकार राजा तथा न्यायाधीश अपराधियों को अनेक प्रकार के दण्ड देते हैं और मृत्यु-दण्ड तक भी देते हैं फिर भी वे हिंसक नहीं हैं। अतः हमें साम्प्रदायिक अव्यावहारिक अहिंसा के चक्कर में न पड़ अहिंसा के तात्विक स्वरूप को समझना चाहिये।

मनुष्य पशु-पक्षी आदि कैसे कैसे मरते और पैदा होते हैं—अशोक कुमार, रानी

समाधान—जीव नित्य होने के कारण उस का नाश कभी नहीं होता, अपितु अपने शुभाशुभ कर्मों के अनुसार भिन्न-भिन्न शरीरों को धारण करता रहता है। जीव के शरीर से पृथक् होने का नाम मृत्यु तथा पुनः दूसरे शरीर को धारण करने का नाम जन्म है। जीव के नाश का नाम मृत्यु तथा उत्पत्ति का नाम जन्म नहीं।

शंका ५—जाति-पाति नष्ट करने के लिये सरकार भी कहती है और आर्यसमाज भी, किन्तु दोनों ही असफल हैं, इस का वास्तविक समाधान क्या है ? रामदेव, उदगीर

समाधान—भारत वर्ष में वर्गवाद (जाति-पाति) की समस्या बड़ी गम्भीर तथा व्यापक है। देश का वातावरण इस दृष्टि से इतना विषाक्त है कि बाल्यकाल से बालक के मस्तिष्क में अन्य वर्गों के प्रति घृणा तथा अपने वर्ग के प्रति मिथ्याभिमान के संस्कार डाल दिये जाते हैं। वर्तमान सरकार इस समस्या का समाधान करने की अपेक्षा उलझन पैदा कर रही है। आर्यसमाज के द्वारा इसका उन्मूलन सम्भव था, किन्तु वह भी दृढ़ता से महर्षि के आदेश का पालन न कर सकी। आज आर्यसमाज मन्दिर में ही व्यक्ति आर्यसमाजी रहते हैं। वहां से घर लौटने पर वे अपने-अपने वर्ग के दृष्टिकोण के अनुसार ही सोचते-विचारते हैं। विवाह, उत्सव दुःख-सुखादि के अवसरों पर अपनी तथा कथित बिरादरी के लोगों से ही सहयोग लेते-देते हैं। जाति-पाति का उन्मूलन आज केवल युवा-पीढ़ी कर सकती है। हजारों युवक घोषणापूर्वक अपने जन्म के आधार के वर्ग की उपेक्षा कर गुणकर्मानुसार समान वर्ण की कन्याओं से विवाह सम्बन्ध करें। प्रारम्भ में कुछ सम्बन्धों में अस्थायित्व भी सम्भव है पुनरपि युवकों को यह क्रान्ति अवश्य करनी होगी, तभी वर्गवाद का उन्मूलन सम्भव है।

समाधान कर्ता—**सत्यव्रत वेदवागीश**

आर्य युवकों के निर्णय

महात्मा आनन्दभिक्षु जी की अध्यक्षता में आर्यवीर दल, पंजाब—हरियाणा, सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्, आर्यन यूथ लीग, प्रादेशिक आर्य युवक संगठन, आर्य युवक संघ महाराष्ट्र के तत्वावधान में बुलाई गई २९ और ३० जून, १९९९ की दो दिवसीय सम्मिलित बैठकों में आर्य युवक कार्यकर्त्ताओं ने सर्वसम्मति से निम्नलिखित विषयों पर निर्णय लिये :—

विचारणीय विषय

आर्य युवक शक्ति का एक संगठन हो।

इस विषय में निर्णय हुआ :—

कि सारे वर्तमान युवक संगठनों का विलय कर एक नया आर्य युवक संगठन बनाया जाय और इसे क्रियान्वित करने के लिये निम्न महानुभावों की एक उपसमिति गठित की गई :—

१. श्री प्रो० उत्तमचन्द जी 'शरर'
२. श्री वीरूराम जी
३. श्री ब्र० इन्द्रदेव जी मेधार्थी
४. डा० वेदीराम जी,
५. प्रो० राजेन्द्र जी जिज्ञासु
६. श्री हरिश्चन्द्र जी सूर्यवंशी
७. प्रो० श्यामराव जी।

इस सम्बन्ध में यह भी निश्चय हुआ कि जब सार्वदेशिक सभा के झगड़े समाप्त हो जायें और त्रिसूत्री सिद्धान्तों के आधार पर सभा का गठन हो जाय उस समय यह युवक संगठन अपना सम्बन्ध सार्वदेशिक सभा से कर ले।

व्याख्या त्रिसूत्री सिद्धान्त

१. सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा, प्रान्तीय आर्यप्रतिनिधि सभा एवं स्थानीय आर्यसमाजों के पदाधिकारी तथा अन्तरंग सदस्य किसी भी राजनीतिक दल के सदस्य न हों।

२. सार्वदेशिक एवं प्रान्तीय सभाओं के प्रधान तथा मन्त्री संगठन के लिए २४ घंटे का पूरा समय देने वाले हों।

३. जो व्यक्ति महर्षि दयानन्द प्रतिपादित वैदिक वर्णाश्रम के सिद्धान्तों पर क्रियात्मिक आचरण करता है वही सार्वदेशिक, प्रान्तीय एवं आर्यसमाज के संगठनों का अधिकारी हो सकता है।

इस दिशा में यह निर्णय किया गया कि उपर्युक्त उपसमिति आगामी विजयदशमी तक सामूहिक कार्यक्रम बनाकर सभी युवक संगठनों की अन्तरंग सभा में पहुँच कर उन्हें विलय के लिये तैयार कर ले।

आर्यसमाज के दलगत झगड़ों के बारे में आर्य युवकों का निर्णय :—

यह सम्मेलन सार्वदेशिक एवं प्रान्तीय स्तर पर हो रहे विघटनात्मक नेतृत्व को आर्यसमाज के पवित्र संगठन एवं आर्यों के लिए अत्यन्त दुःखद तथा लज्जाजनक समझता है। इस संदर्भ में नैतिक मूल्यों को भुला कर सार्वजनिक प्रचार और परस्पर विवादास्पद झगड़ों को लेकर राजकीय न्यायालयों में जाना संगठन की दृष्टि से अत्यन्त घातक, अशोभनीय एवं अवांछनीय है। सार्वदेशिक सभा के वर्तमान निर्वाचन से दो सार्वदेशिक सभाओं के बन जाने से आर्य जगत् के उच्चतम नेतृत्व के पतन की भी आशंका दिखाई देने लगी है जो इस सम्मेलन की दृष्टि में अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है। इन परिस्थितियों में युवकों की यह गोष्ठी आर्य जगत् की प्रतिक्रियात्मक भावनाओं का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन करने के उपरान्त सर्वसम्मति से इन सभी विवादों को समाप्त कराने और शान्तिमय वातावरण निर्माण कराने की दृष्टि से महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज को सर्वाधिकारी घोषित करता है जो अधिक से अधिक १५ व्यक्तियों की परामर्शदातृ सर्वोच्च समिति बनाकर आर्यजगत् पर आये हुए अप्रत्याशित संकट को शीघ्रातिशीघ्र समाप्त कराने का प्रयत्न करें। यह सम्मेलन स्वामी जी तथा इस सर्वोच्च समिति को पूर्ण विश्वास दिलाता है कि उसके आदेश एवं निर्देश पर सारे भारत की आर्य युवा शक्ति तथा भद्र आर्यजन हर प्रकार का बलिदान करने के लिये उद्यत रहेंगे।

स्वामी जी ने निम्न सदस्यों की समिति गठन की घोषणा की :—

(शेष पृष्ठ ३३ पर)

देश की विषम परिस्थिति में युवक संगठन की आवश्यकता

● विश्वम्भरसहाय प्रेमी, बाल शिक्षा विशेषज्ञ, हापुड़ (मेरठ

आज देश की जो विषम परिस्थिति है वह विश्व से छिपी नहीं है। प्रारम्भ से ही आर्यसमाज के कर्णधारों के सम्मुख यह प्रश्न उठता रहा है कि देश की इस विषम परिस्थिति को कैसे ठीक किया जाय, देश और जाति की उन्नति में धर्म और राजनीति का मुख्य स्थान है। राजनीति धर्म का एक अंग है इसलिए राजनीति को धर्म से पृथक् नहीं किया जा सकता। जहाँ धर्म है वहाँ राजनीति को भी अवश्य स्थान देना पड़ेगा। यदि देश में धर्म का प्रचार-प्रसार करना है और जन-जन में धर्म की भावना भरनी है तो धर्म के साथ-साथ राजनीति का प्रचार प्रसार करना और जन-जन में उसकी भावना कर संचार करना अति आवश्यक है। मेरी अपनी दृढ़ धारणा है कि धर्म और राजनीति को पृथक् करने से ही देश को इस विषम परिस्थिति से गुजरना पड़ रहा है। यदि आर्यसमाज के कर्णधार देश की उन्नति चाहते हैं और देश में सुख और समृद्धि लाना चाहते हैं और जन-जन में धर्म की भावना भरना चाहते हैं तो राजनीति को साथ लेकर चलना पड़ेगा, इतिहास इसका साक्षी है।

देश में जब राष्ट्रीय आन्दोलन चल रहा था उस समय भी यह प्रश्न आर्यसमाज के सामने था कि आर्यसमाज को सामूहिक रूप से राजनीति में भाग लेना चाहिए अथवा नहीं। उस समय आर्यसमाज में दो दल थे एक राष्ट्रीय विचार धारा का पोषक और दूसरा दल वह था जो विदेशी शासन के साथ साथ कधे से कधा मिलाकर उसकी हाँ में हाँ मिलाना चाहता था। उस समय जो आर्यसमाजी अथवा पदाधिकारी राष्ट्रीय विचारों के थे और किसी न किसी रूप में राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग ले रहे थे वे आर्यसमाज के सामूहिक रूप से राजनीति में भाग लेने के पक्ष में थे। परन्तु देश की शिरोमणि सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा के तत्कालीन कर्णधार अधिकतर सरकारी उच्चपदाधिकारी थे या अंग्रेजी सरकार से कोई न कोई पदक प्राप्त व्यक्ति थे, जैसे रायसाहब, रायबहादुर इत्यादि। सभा में उनका ही बहुमत था, प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं में भी वे ही लोग पदासीन थे। अतः दुर्भाग्यवश यह प्रस्ताव पास नहीं हो सका कि आर्यसमाज को सामूहिक रूप से राजनीति में भाग लेना चाहिये। कहना पड़ेगा कि यह देश का दुर्भाग्य ही था, उन्होंने एक बहुत बड़ी ऐतिहासिक भूल कर डाली, जिसका दुष्परिणाम जन-जन को भोगना पड़ रहा है। इस सम्बन्ध में मैंने उस समय सार्वदेशिक सभा के मन्त्री को एक पत्र लिखा उसका उत्तर जो आना था आया। क्या अच्छा होता कि हमारी शिरोमणी सार्वदेशिक सभा इस प्रस्ताव को पास करके श्रेय को प्राप्त कर लेती वह समय हमारे लिए बड़ा अनुकूल और हितकर था। परन्तु हमारे कर्णधारों ने दूरदर्शिता से काम नहीं लिया और उसका जो परिणाम होना था हुआ। उस समय ७५ प्रतिशत आर्य राष्ट्रीय विचारों के थे वे सब निराश होकर राष्ट्रीय आन्दोलन में कूद पड़े। उस समय राष्ट्रीय विचारों के उच्चकोटि के नेता भी आर्यसमाज में थे जैसे ला० लाजपतराय स्वामी श्रद्धानन्द, देशबन्धु दास गुप्ता इत्यादि जिनके साथ राष्ट्रीय क्षेत्र में पूरी शक्ति थी और उनकी आवाज में बड़ा बल था आर्यसमाज ने इतनी बड़ी शक्ति को अपने हाथों से ही खो दिया। जहाँ स्वामी श्रद्धानन्द जी जैसे सच्चे वीर और तपस्वी नेता, लाला लाजपतराय जी जैसे धुन के धनी देशभक्त, देशबन्धु जैसे देश हितैषी, क्रान्तिकारियों में अमर शहीद, रामप्रसाद बिस्मिल, चन्द्रशेखर आजाद, मदनलाल ढींगरा, सुभाषचन्द्र बोस जैसे वीर हों वहाँ विजय अवश्य पग चूमती और सफलता का सेहरा आर्य समाज के सिर बँधता।

स्वामी श्रद्धानन्द और राष्ट्रीय आन्दोलन

क्या स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान कुछ कम था, संन्यासी होते हुए उनमें युवक शक्ति कार्य कर रही थी, वह दिन हमें याद है जब स्वामी श्रद्धानन्द जी भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के दिल्ली में एक बड़े जलूस का नेतृत्व कर रहे थे, मस्ती से जलूस आगे बढ़ता चला जा रहा था उस जलूस में भी युवक शक्ति कार्य कर रही थी। उस समय अंग्रेजों का घातक शस्त्रों से सुसज्जित सैनिक टोली

जलूस को रोकने के लिए आगे आकर खड़ी हो गई और जलूस को भंग करने का आदेश दिया। स्वामी श्रद्धानन्द जी सच्चे आर्य वीर थे, वे आगे बढ़कर बोले, जलूस आगे जायगा। यदि तुम जलूस पर गोली चलाना चाहते हो तो पहले गोली मेरे सीने में मारो। अफसर का यह सुनना था कि उसने अपने जवानों को पीछे हटने का आदेश दे दिया यह आत्म शक्ति की विजय नहीं तो क्या है ?

लाला लाजपतराय और राष्ट्रीय आन्दोलन

जब देश मे राष्ट्रीय विचार धारा की अग्नि प्रज्वलित हो रही थी और जन-जन के हृदय में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध भावना उमड़ रही थी, देश में युवक शक्ति द्वारा क्रान्ति फैली हुई थी, उस क्रान्ति की अग्नि को ठंडा करने के लिए अंग्रेजों ने एक चाल चली और बात करने के लिए साइमन कमीशन को भारत भेजा। देश ने डट कर साइमन कमीशन का काले झंडों से स्वागत किया और एक जलूस लेकर आगे बढ़े। इस जलूस का नेतृत्व लाला लाजपतराय जी कर रहे थे, जिस समय जलूस आगे बढ़ रहा था पुलिस डंडों से जलूस को पीछे हटा रही थी लाला जी आगे बढ़े तो साइमन कमीशन का डंडा उनकी छाती में जाकर लगा जिसके कारण वह उठ नहीं सके। क्या उनमें आर्य युवकों की शक्ति कार्य नहीं कर रही थी।

देशबन्धुदास गुप्ता

देशबन्धुदास जी, उस समय अपने दैनिक पत्र 'तेज' द्वारा भारत निवासियों में देश भक्ति की भावना का संचार कर रहे थे। देश-भक्ति के समाचार प्रकाशित करने के कारण कई बार उनको जमानत देनी पड़ी और उन पर न्यायालय में अभियोग भी चलाये गये। परन्तु कभी भी उन्होंने अपना पग पीछे नहीं हटाया उनमें भी युवक शक्ति कार्य कर रही थी।

इसी प्रकार का हमारे क्रान्तिकारियों का जीवन है, उन्होंने धर्म और देश के लिए अपना जीवन प्रदान किया है बचपन में ही उनको आर्यसमाजी माता-पिता द्वारा धर्म की घूंटी पिलाने गई है। उनके अन्दर भी युवक शक्ति अपना प्रादुर्भाव जमाये हुए थे।

आर्यसमाज का इतिहास बलिदानों का इतिहास है। राष्ट्रीय आन्दोलन के लिए क्षेत्र तैयार करने का श्रेय राष्ट्र प्रवर्तक देश भक्ति के दीवाने, स्वराज्य के मंत्र द्रष्टा प्र- स्मरणीय वीर संन्यासी स्वामी दयानन्द को ही है। समय की और आज की परिस्थिति में आकाश पाताल का अन्तर है। परन्तु यह देखकर कि इस विषम परिस्थिति में भी युवक शक्ति अपनी जान की बाजी लगाने पर उद्यत है, हृदय गद्गद् हो जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मार्ग बड़ा कठिन है। परन्तु "युवक शक्ति असम्भव को भी सम्भव बनाने की क्षमता रखती है।" उस समय हमें विदेशी साम्राज्य से लड़ना पड़ा था और अब हमें अपनों से लड़ना पड़ेगा। मेरे विचार से उस समय की अपेक्षा आज की परिस्थिति कुछ दूसरे ढंग की है और अनुकूल है। युवक देश की आशाएँ हैं और जन-जन की आँखें उनकी ओर लगी हुई हैं अब और कोई चारा भी नहीं रह गया है।

भारत की आज की स्थिति—
क्या यह भारत देश है ?

जिस देश में शराब की दुकानें चलती हों। जहाँ माँस और अंडों का खुले आम प्रचार किया जा रहा हो। जिस देश के सिनेमाघरों में विलासिता की भट्टियां सुलग रही हों जहां हमारे युवक और युवतियों का चरित्र भ्रष्ट किया जा रहा है। जिस देश में मातृ शक्ति का बाजार में प्रदर्शन हो रहा हो। जिस देश की राजधानी के चौराहों पर हमारी मां-बहनों के नग्न चित्र दृष्टिगोचर हो रहे हों। जिस देश में युवक और युवतियों के चरित्र से खिलवाड़ की जा रही हो जिस देश में नौजवानों के चरित्र को भ्रष्ट करने के लिए अश्लील साहित्य का प्रचार हो रहा हो और जिस देश के स्कूल और कालिजें में अशिक्षा के अड्डे बन चुके हों। क्या वह देश संसार में पुनः गुरु स्थान पाने का अधिकारी है और क्या वह उन्नति की दौड़ में अग्र श्रेणी में अपना नाम लिखा सकने में सफल हो सकेगा।

देश की पूर्व की और आज की आर्थिक स्थिति—

जो देश संसार का गुरु रहा है जिस देश से अन्न के जहाज लद-लद कर विदेशों को जाते थे जिस देश के कण

को विदेशी महिलाएँ देवताओं का बुना हुआ समझती थीं जो देश स्वर्ण की चिड़िया कहलाता था। जिस देश में घी-दूध की नदियां बहती थीं, जिस देश के विश्वविद्यालय में—पंजाब का तक्षशिला विश्वविद्यालय और बिहार का नालन्दा विश्वविद्यालय—विदेशों से हजारों की संख्या में विद्यार्थी विद्या प्राप्त करने आते थे। आज उस देश के निवासी दाने-दाने को तरस रहे हैं। शुद्ध घी और शुद्ध दूध के दर्शन दुर्लभ हैं। खाद्य पदार्थों में मिलावट के कारण शुद्ध खाद्य पदार्थ मिलना कठिन हो गया है। दूध में पानी और शुद्ध घी में वनस्पति की मिलावट होने लगी है। पहले दूध में पानी मिलाया जाता था अब पानी में दूध मिलाया जाता है दूध के अभाव में देशवासियों को चाय पीनी पड़ रही है जिसके कारण हमारे नौजवान और विद्यार्थी प्रमेह और स्वप्नदोष जैसी घातक बीमारी से ग्रसित हैं। फैशन अपना अलग खेल खिला रहा है। हमारे देश के नौजवान फैशन के पीछे पागल होते जा रहे हैं। शुद्ध अशुद्ध और भक्ष-अभक्ष का विचार प्रायः समाप्त हो चुका है। सामाजिक रूढ़ियों ने हमारे देश को इतना जकड़ लिया है कि उससे छुटकारा पाना बड़ा कठिन हो रहा है। इन रूढ़ियों और कुप्रथाओं के कारण फिजूलखर्ची सीमा को लांघ चुकी है। इससे देश बरबाद होता जा रहा है।

आर्यसमाज के कर्णधार किस ओर—

आज की ऐसी विषम (नाजुक) परिस्थिति में भी आर्यसमाज के कर्णधार अपनी-अपनी पृथक् पार्टी बनाकर देश में दूषित वातावरण उत्पन्न कर रहे हैं उनके लिए यह शोभा नहीं देता। इससे समाज का बड़ा अहित हो रहा है। अभी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के झगड़ों का निर्णय भी नहीं हो पाया था कि हमारी शिरोमणि सार्वदेशिक सभा ने अपनी पृथक्-पृथक् दो पार्टी बनाकर पृथक्-पृथक् चुनाव कर डाले हैं क्या यह उनके लिए लज्जा की बात नहीं है। आर्यसमाज के कर्णधारों का यह पग भावी पीढ़ी के लिए बड़ा घातक है यह देश को रसातल में ले जाने के लक्षण हैं। जब नाविक ही आपस में लड़ने लगे तो समझ लो डूबने का समय आ गया है। आज आर्यसमाज के कर्णधारों को यही पता नहीं कि हवा किस ओर से और किस गति से चल रही है। अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि इस अवनति का कारण क्या है? इसका एक ही उत्तर है कि आपस की फूट और अविद्या, संघठन में ही शक्ति है। इतिहास साक्षी है कि देश के विनाश का मुख्य कारण आज से ५ हजार वर्ष पूर्व का यहाँ का ऐतिहासिक महाभारत का युद्ध था जिसके कारण यहाँ की लक्ष्मी, यहाँ का कला कौशल, यहाँ का विज्ञान और यहाँ की विद्या का लोप हो गया जिसके कारण आज तक भी भारत की दशा सुधर नहीं पाई। अब भी देशवासी उस विनाशकारी आपस की फूट के पीछे दौड़े जा रहे हैं।

युवक शक्ति का आह्वान—

आज की यह सब परिस्थिति देखकर युवक हृदय में धड़कन उत्पन्न हो चुकी है अन्दर से एक टीस उठ खड़ी हुई है। अब युवक शक्ति को आगे आना ही होगा और अपने सिर पर कफनी बाँध कर मैदान में कूदना पड़ेगा। जिस प्रकार बौद्धों ने विदेशों में अपने धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए बौद्ध-भिक्षुक संघ का निर्माण किया था वही परिस्थिति आज हमारे समक्ष है। अब हमें भी अराष्ट्रीय तत्वों से निबटने के लिए जन-जन में राष्ट्रीय विचारधारा का प्रचार प्रसार करने के लिए "राष्ट्रीय युवक संघ की स्थापना करनी है" जिसमें नवयुवक एक जुट होकर अराष्ट्रीय तत्वों को भारत से निर्मूल करके ही जायें और ओ३म् की पावन पताका लेकर जन-जन में वैदिक विचारधारा का प्रचार प्रसार कर वैदिक स्वराज्य की स्थापना का स्वप्न साकार करें और दयानन्द के वीर सैनिक बन दयानन्द का अधूरा कार्य पूरा करें। विश्व में विजय पताका फैलाकर समस्त विश्व को आर्य बनायें। प्रभु बल और शक्ति प्रदान करें यही कामना है।

●

देशी विदेशी

श्री ब्रह्मस्वरूप वर्मा
प्राध्यापक—गणित विभाग सेस्फोर्ड कालेज कैनेडा

रात्रि के साढ़े दस बजे थे। अल्बर्टा विश्व-विद्यालय में सब ओर शान्ति छाई हुई थी। केवल भौतिक विज्ञान के चौमंजिले भवन के एक कोने में चहलपहल थी। हिन्दी फिल्म 'मेंहदी लगी मेरे हाथ' का प्रदर्शन समाप्त हुआ था और लोग हँसते बोलते भवन के बाहर आ रहे थे। मेरे साथ मेरी पत्नी व बच्चों के अतिरिक्त दो मित्र थे। एक थे डाक्टर मनमोहन गुप्ता जो गणित में शोधकार्य कर रहे थे। कनाडा आने के पूर्व वे प्रयाग विश्वविद्यालय में 'रीडर' थे। दूसरे सज्जन, श्री धर्मपाल सिंह, जिन्हें सब लोग केवल 'पाल' कह कर पुकारते थे, सस्केचवान में अध्यापक थे।

वायु-अनुकूलित भवन के बाहर आते ही हम सबको ठंड-सी लगी। अब 'पाल' को ध्यान आया कि वे ओवर-कोट तो प्रदर्शन कक्ष में ही भूल आये। कुछ घबराहट के साथ बोले, मिस्टर वर्मा, मेरा ओवरकोट तो अन्दर ही रह गया। एक मिनट रुकना, मैं अभी आया।

थोड़ी देर बाद वे हँसते हुए वापस लौटे और कहने लगे, "गनीमत हुई मिल गया। यह तो कहो कनाडा है, हिन्दुस्तान होता तो कोई उड़ा ले गया होता।"

उनका यह आरोप हम लोगों को अच्छा न लगा। मनमोहन गुप्ता ने कुछ चिढ़कर कहा—"यार, ऐसी बात तो नहीं है। हिन्दुस्थान इतना बुरा नहीं है।"

"नहीं डॉक्टर गुप्ता," श्री पाल प्रतिवाद करते हुए बोले—"एक बार मैं अपने दस्ताने सिनेमा घर में भूल गया था। लौटकर पहुंचा तो कोई उन्हें उठा ले गया था। मुझे तो हिन्दुस्थान में सब जगह चोर ही दिखाई देते थे।"

"अब ऐसी बात नहीं," मैंने उनकी बात काटते हुए कहा "हिन्दुस्थान के बड़े-बड़े चोर देश छोड़कर कनाडा चले आये हैं।"

व्यंग तीखा था मिस्टर पाल खिसिया गये।

× × ×

गत वर्ष की घटना है। कैलगरी विश्वविद्यालय के जलपानगृह में मैं अकेला बैठा चाय पी रहा था। अचानक एक अन्य भारतीय सज्जन मुस्कराते हुए मेरे समीप आये, बोले "हैलो।"

"हैलो," मैंने उत्तर दिया, "आइये चाय पीजिये।"

"धन्यवाद! मैं अभी काफी पी चुका हूँ।" व कहते हुए व सामने रखी कुर्सी पर बैठ गये।

शीघ्र ही हम लोग इतनी आत्मीयता से बात करने लगे जैसे काफी पुरानी जान पहचान हो।

विदा होने के पूर्व उक्त (सतीशकुमार जैन) ने कहा "वर्माजी, अगले शनिवार को आप हमारे यहाँ आईये। डिनर हमारे साथ ही कीजिये।"

मैंने सहर्ष उनका निमंत्रण स्वीकार कर लिया—भारतीय भोजन चखे हुए मुझे तीन मास हो चुके थे।

चलते-चलते श्री जैन ने कहा—'मिस्टर वर्मा, अच्छा होगा कि आने के पूर्व आप मुझे फोन कर लें। आप यहाँ नये हैं। कनाडा में किसी के घर जाने के पूर्व फोन करना आवश्यक समझा जाता है।"

शनिवार को श्री जैन घर पर नही थे। उनके बड़े लड़के ने फोन उठाया। उसका बात करने का ढंग मुझे अच्छा नहीं लगा दो-तीन वाक्यों के आदान-प्रदान के बाद उसने कहा—"डैडी घर पर नहीं हैं। मैं नहीं जानता कि आप कौन हैं।" यह कहकर उसने फोन रख दिया।

रविवार को श्री जैन से सम्पर्क हुआ। फोन पर उन्होंने कहा "वर्माजी, कल मुझे एक भारतीय के अन्तिम संस्कार में जाना पड़ा था। सारा ढोंग मेरे सिर पर ही आ पड़ा था। यहाँ हिन्दुओं के जन्म से लेकर मृत्यु तक के सारे संस्कार मुझे ही कराने पड़ते हैं। अच्छा, आप कितनी देर में आ रहे हैं?"

थोड़ी देर बाद, जब मैं श्री जैन के घर पहुंचा तो लगभग पौने दस बजे थे। उनके बच्चे कहीं जाने

तैयारी में थे। उनमें से किसी ने भी नमस्ते या 'गुडमानिंग' कहने की परवाह न की। (कनाडा में बच्चों को यह शिष्टाचार सिखाया ही नहीं जाता)।

घर के अन्दर कुछ बच्चे अधिक शोर मचा रहे थे। श्री जैन ने उन्हें डाटते हुए कहा—"दस बजने वाले हैं। शीघ्रता करो। चर्च के लिए देर हो रही है।"

मैंने आश्चर्य से पूछा—"जैन साहब, क्या यहाँ कोई हिन्दू चर्च भी है?"

नहीं वर्माजी उन्होंने मुझे समझाते हुए कहा—बात यह है कि जिस समाज में रहना है, उसकी कुछ रीतियों का अनुसरण तो करना ही पड़ता है। उनका तर्क मुझे युक्तिसंगत नहीं लगा, फिर भी मैंने चुप रहना ही उचित समझा।

भोजन के समय परिवार के सब लोग एक ही मेज पर बैठे। मैंने देखा कि बच्चों की ओर टोस्ट, उबला हुआ मांस तथा अन्य कनाडियन ढंग का भोजन था, जब कि हम लोगों के सामने भारतीय व्यंजन रखे थे। यह सब मुझे कुछ विचित्र सा लगा। श्री जैन मेरी प्रतिक्रिया को समझ गए। कहने लगे, "वर्मा जी, जैसा देश वैसा भेष रखना ही पड़ता है मैं नहीं चाहता कि खान-पान के परहेज के कारण बच्चों को यहाँ के समाज में घुलने-मिलने में परेशानी हो। अतः मैंने इन्हें मांस देना आरम्भ कर दिया है।"

मैं सन्न रह गया। एक क्षण के लिए मेरा मस्तिष्क चक्करा गया।

श्रीमती जैन मेरी मनःस्थिति समझ गयीं। बोलीं, "भाईसाहब, मैं मांस छूती भी नहीं हूँ। मैंने इन्हें बहुतेरा समझाया कि कनाडा में बहने का यह अर्थ नहीं कि हमारे बच्चे अपनी भाषा, अपना धर्म और अपना खान-पान सब भूल जायं। परन्तु ये मेरी सुनते ही नहीं हैं।"

"मैं आपसे पूरी तरह सहमत हूं।" मैंने उत्तर दिया।

विषय बदलते हुए जैन साहब ने कहा "अरे यार, छोड़ों इन बातों को और भोजन करो।"

मेरी आत्मा घृणा से भर गयी थी और मेरी भूख मर चुकी थी, परन्तु औपचारिकतावश मैंने चुपचाप थोड़ा-सा भोजन किया।

चलते समय भगवान महावीर की भव्य प्रतिमा की ओर संकेत करते हुए श्रीमती जैन से कहा :; "बहनजी, मुझे विश्वास है कि आप ईसामसीह की मूर्ति को इनका स्थान नहीं लेने देंगी।"

(पृष्ठ २८ का शेष)

१. पूज्य स्वामी आनन्द भिक्षु जी (सर्वाधिकारी)
२. पूज्य आनन्द स्वामी जी
३. प्रिंसिपल भगवानदास जी
४. श्री ब्र० इन्द्रदेव जी मेधार्थी
५. प्रो० श्यामराव जी ६. ब्र० जगदीश जी विद्यार्थी
७. श्री बाल दिवकार जी 'हंस'
८. प्रो० रामप्रकाश जी ९. डा० वेदीराम जी
१०. प्रो० उत्तमचन्द जी 'शरर'
११. प्रो० राजेन्द्र जी जिज्ञासु
१२. श्री रामनाथ जी सहगल
१३. श्री हरिश्चन्द्र जी सूर्यवंशी (महाराष्ट्र)

१९७५ में होने वाली आर्य समाज की शताब्दी के लिये आर्य युवकों का विश्वव्यापी कार्यक्रम :—

यह गोष्ठी आर्य राष्ट्र की स्थापना का लक्ष्य लेकर १९७५ तक के लिये निम्नलिखित कार्यक्रम स्वीकार करती है :—

१. महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित शारीरिक, आत्मिक, सामाजिक और कृषि की आर्थिक नीति के आधार पर राजनीतिक मंच तैयार करना।

राष्ट्र में व्याप्त भयंकर आर्थिक विषमता एवं शोषण को ऋषि के वर्णाश्रम सिद्धान्त के आधार पर दूर करना अर्थात् जन्म के आधार पर सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारों को स्वीकार न करते हुए, व्यक्ति के गुण-कर्म-स्वभाव पर आधारित आर्थिक, सामाजिक व्यवस्था की स्थापना करना।

२. महर्षि दयानन्द द्वारा लिखित साहित्य और वेदादि ग्रन्थों का अत्यधिक प्रचार एवं प्रसार तथा उन पर अनुसन्धान एवं शोध के लिये आर्यसमाजान्तर्गत शिक्षा संस्थाओं विशेषकर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में शोध विभाग खोलने के लिये प्रेरित करना तथा देश के अन्य विश्वविद्यालयों से अन्य महापुरुषों की भांति दयानन्दपीठ स्थापित करने की मांग करना। उस दिशा में एक विशाल पुस्तकालय की स्थापना के लिये प्रयत्नशील होना।

३. समय-समय पर वेद-वैदिक धर्म-आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द के मन्तव्यों पर होने वाले आक्षेपों का प्रबल प्रतिवाद कर सत्य पक्ष की स्थापना करना।

४. मद्य-निषेधान्दोलन को और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिये पग उठाना।

५. राष्ट्रीय स्तर पर एक प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना कर एक एक मास के ठोस कार्यक्रम के द्वारा आर्य सिद्धान्तों एवं कार्यक्रमों में प्रशिक्षित करना।

श्यामराव (संयोजक)

डी०—१

महाशोक !

राजधर्म परिवार को यह जानकर बहुत अधिक वेदना होगी कि आर्य युवकों के प्रबल हितैषी एवं सक्रिय सहयोगी—

"इकानामिक ट्रान्सपोर्ट आर्गनाइजेशन"

के दरियागंज (दिल्ली) स्थित मुख्य कार्यालय में अचानक अग्निकांड से अपार क्षति हुई। जहां कई लाख रुपये की आर्थिक हानि हुई वहां १७ सुयोग्य व्यक्तियों का निधन महा-दुःखप्रद है इस अप्रत्याशित दुर्घटना से हम सब का हृदय व्यथित है। परम पिता से प्रार्थना है कि वह शोकाकुल परिवारों को धैर्य प्रदान करे !

—सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्

श्री.....................................

....

राजधर्म (पाक्षिक)
वार्षिक शुल्क १० रुपये

ओ३म
राजधर्म (पाक्षिक)
आर्यसमाज मन्दिरमार्ग नईदिल्ली-१
दूरभाष—४२...

संपादक
प्रो० श्यामराव

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद के लिये प्रो० श्यामराव द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित।

सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६

ओ३म्

राजधर्म

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का अधिवेशन विशेषांक

सम्पादक
प्रो० श्यामराव

वर्ष-१ : अंक-१८-१९
वार्षिक शुल्क—१० रु०
एक प्रति ५० पैसे

१० अगस्त १९६९
दयानन्दाब्द १४५

महात्मा आनन्द भिक्षु जी आमरण अनशन करेंगे।

नई दिल्ली ३ अगस्त। आर्य समाज के नेताओं के पारस्परिक विवादों को दूर करने के लिये चल रहे प्रयास को विफल होते देख कर "आर्यसमाज संगठन समिति" ने अपनी बैठक में महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज को आमरण अनशन करने की स्वीकृति दे दी है! इस समय आर्य समाजी नेताओं के झगड़ों के कारण दो सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, तथा दो पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा बनी हुई हैं। इसी प्रकार की दुर्भाग्य पूर्ण स्थिति भारत के अन्य प्रान्तों में भी बनने के लक्षण हैं। आर्य समाज की वर्तमान समस्या का कोई हल न देखकर संगठन समिति के द्वारा बलिदान के लिये आह्वान करने पर महात्मा आनन्द भिक्षु जी ने सर्व प्रथम स्वयं को इस कार्य के लिये समर्पित किया है जिसे बहुत विचार विमर्श के बाद दुखित हृदय से समिति ने महात्मा जी को आमरण अनशन करने की स्वीकृति दे दी है। समिति ने चारों पक्षों से प्रार्थना की है कि वे ९ अगस्त तक अपने सब मुकदमें वापिस ले लें। और आगे के लिये नये मुकदमें न करें। १४ अगस्त तक आपस में मिलकर कोई सुलह कर लें अथवा १७ अगस्त को महात्मा जी की अध्यक्षता में होने वाली बैठक में अपने ५५ प्रतिनिधि भेजकर परस्पर के विवाद समाप्त करने का समाधान ढूंढ लें,। चारों पक्षों के किसी सर्व सम्मत निर्णय पर न पहुँचने पर महात्मा जी महाराज २७ अगस्त रक्षाबन्धन के पावन पर्व से आमरण अनशन प्रारम्भ कर देंगे। स्मरण रहे महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज आर्यसमाज संगठन समिति के सर्वाधिकारी हैं।

आर्य समाजों के अधिकारियों से

जिस संकट की घड़ी को आज तक टालने का यत्न किया था वह हमारे दुर्भाग्य से हमारे सिर पर आ गई है—अब सभी आर्य समाजों के अधिकारियों से प्रार्थना है कि वे अपने आगामी साप्ताहिक अधिवेशन के अवसर पर प्रान्तीय एवं सार्वदेशिक स्तर की सभाओं से निवेदन करें कि वे अपने मुकदमों को शीघ्र वापस लें और सुलह करें। प्रस्ताव निम्नलिखित पतों पर भेजें। प्रस्ताव की एक प्रतिलिपि आर्य समाज संगठन समिति—मन्दिर मार्ग नई दिल्ली–१ को अवश्य भेजें।

१. प्रधान–सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
   रामलीला मैदान—नई दिल्ली-१.
२. प्रधान—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
   ३/३ रानी झांसी रोड—नई दिल्ली-१.
३. प्रधान—आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब
   १५ हनुमान रोड—नई दिल्ली-१.
४. प्रधान—आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब
   वीर प्रताप—जालन्धर।

—आर्यसमाज संगठन समिति

सम्पादकीय—

बैंकों का राष्ट्रीयकरण या "इन्दिराकरण"?

पिछले दिनों अपने देश में १४ प्रमुख बैंकों के 'राष्ट्रियकरण' को लेकर काफी सरगर्मी रही। प्रधान मन्त्रिणी देवी इन्दिरा ने यह कदम इतनी तेजी से और इतनी कठोरता से उठाया कि स्वयं उनकी कांग्रेस पार्टी और उनकी केबिनेट के कई साथी आश्चर्यचकित हो गये। देवी इन्दिरा जी की इस शीघ्रता को देखकर बहुतों को यह सन्देह होने लगा है कि इसके पीछे आर्थिक उद्देश्य कम और राजनैतिक उद्देश्य अधिक है। यदि राजनैतिक उद्देश्य न होता तो इतने गम्भीर कदम को संसद में पूरी तरह विचार करके उठाना चाहिए था जबकि संसद् का वर्षाकालीन सत्र ३ दिन बाद ही आरम्भ होने वाला था। पर देवी इन्दिरा जी ने भागते हुए राष्ट्रपति से अध्यादेश निकलवाकर अपनी राजनैतिक चाल को स्पष्ट कर दिया। जो भी हो हम निष्पक्ष भाव से इस कदम पर विचार करना चाहते हैं।

इन १४ बैंकों के पास जनता का जमा किया हुआ लगभग २० अरब रुपया था। इन बैंकों पर अधिकार भी देश के बड़े बड़े पूंजीपतियों ने कर रखा था। ये पूंजीपति जनता के धन का उपयोग अपने उद्योग-धन्धों में लगाते थे और नये अथवा छोटे उद्योगपतियों को ये सुविधाएँ न देकर स्वयं औद्योगिक जगत के भी मालिक बने बैठे रहते थे। इस अथाह धनराशि के बल पर ये किसान मजदूरों का शोषण करते और देश की राजनीति में अनधिकार हस्तक्षेप करते थे। इन्हीं पूंजीपतियों ने प्रजातन्त्र को पूंजीतन्त्र में बदल दिया और देश की आर्थिक, राजनैतिक प्रगति को कुण्ठित कर दिया था। इन अजगरों को समाप्त करने के लिए प्रधान मन्त्रिणी ने जो कदम उठाया है—उसे हम अत्यन्त साहस का कार्य कह सकते हैं पर इसके साथ-साथ कुछ अन्य पहलुओं पर भी विचार करना आवश्यक समझते हैं।

इस देश में आर्थिक समस्याओं का एक ही समाधान समझा जाता है और वह है—राष्ट्रियकरण। इसका कारण है कम्युनिस्टों का प्रभाव। कम्युनिस्ट विचारधारा यह मानती है कि सारी सम्पत्ति का 'राष्ट्रियकरण' हो और सारे उद्योग और व्यापार सरकार चलाये। हमारे देश के नेताओं में विदेशी विचारकों के जूंठन खाने वालों की कमी नहीं है—कोई पूंजीवादियों का जूंठन खाता है तो कोई साम्यवादियों का। कहा जाता है कि देवी इन्दिरा का झुकाव साम्यवाद की तरफ अधिक है इसी कारण उन्होंने बैंकों का राष्ट्रियकरण आवश्यक समझा। अभी तो प्रमुख १४ बैंक ही लिये हैं—शीघ्र ही बाकी की भी बारी आ जायेगी—धीरे-धीरे आवागमन के साधनों, विद्यालयों, समाचारपत्रों आदि सबका राष्ट्रियकरण होगा और इन सारे साधनों का उपयोग जो सत्ताधारी पार्टी होगी वह अपने हितों में करेगी। आज तक जितना 'राष्ट्रियकरण' हुआ है उसका क्या परिणाम हुआ—सरकार शासन पर कम ध्यान दे रही है और कारखाने खोलने, बसें चलाने और होटलों में चाय बेचने पर अधिक ध्यान दे रही है। वैदिक वर्णाश्रम धर्म के अनुसार राजा का व्यापार के क्षेत्र में यह अनुचित हस्तक्षेप है। वेद राजा के हाथ में दण्ड देता है और साधारण दण्ड नहीं वरन् मनु के शब्दों में—

यत्र श्यामो लोहिताक्षो दण्डश्चरति पापहा।
प्रजास्तत्र न मुह्यन्ति नेता चेत्साधु पश्यति॥

अर्थात् जहाँ कृष्णवर्ण रक्तनेत्र भयंकर पुरुष के समान पापों का नाश करने वाला (राजा का) दण्ड विचरता है वहाँ प्रजा मोह को न प्राप्त होके आनन्दित होती है। परन्तु जो दण्ड चलाने वाला पक्षपात रहित विद्वान् हो तो!

जब राजा के हाथ में दण्ड है तो वह नियमोल्लंघन करने वाले पर कठोर दण्ड प्रहार करे और उसे सुमार्ग पर लाने का प्रयत्न करे, यदि न सुधर सके तो उसे समाप्त कर दे। यदि बैंकों के धन का पूंजीपति दुरुपयोग कर रहे हैं तो लोकसभा कठोर दण्ड की व्यवस्था दे और उसके अनुसार सरकार दो-चार दुष्टों को गोली से उड़ा दे या आजीवन कारावास दे दे। फिर धन का दुरुपयोग नहीं हो सकेगा। अब यदि व्यक्ति के हाथों सम्पत्ति का सदुपयोग हो तो किसी को क्या दुःख हो? इसी तरह सभी क्षेत्रों में कठोर कानून बनाकर उनका कठोरता से यदि पालन कराया जा सके तो सरकार के व्यापार शिक्षा और अन्य क्षेत्रों में हस्तक्षेप की आवश्कता ही क्या रही। वेद के अनुसार (गुण, कर्म, स्वभाव

के अनुसार) ब्राह्मण का काम विद्या का प्रचार और स्मृति, कानून आदि की व्यवस्था देना है–क्षत्रिय (राजा) का काम इन कानूनों का दण्ड व्यवस्था द्वारा पालन कराना, वैश्य का कृषि और व्यापार द्वारा अभाव दूर करना और शूद्र का काम शारीरिक सेवा करना है । जब भी इस क्रम को तोड़कर कोई व्यतिक्रम रचा जाता है तब-तब शक्तिप्रतिमान (Balance of Power) में विषमता आ जाती है और सामाजिक अराजकता फैलने लगती है । आज जो हमारे देश में भयंकर अराजकता दिखाई पड़ रही है उसके पीछे राजा का शिक्षा, व्यापार आदि क्षेत्र में अनुचित हस्तक्षेप है । आज राजनीति और राजा ही सब कुछ बना बैठा है । एक ओर तो हम पूँजीपतियों को हटाना चाहते है इसलिए कि एक व्यक्ति के हाथ में पूँजी इकट्ठी हो जाती है पर उधर सरकार के हाथों सारा धन इकट्ठा करना चाहते हैं । यह कहां का न्याय है ? आज मेरे देश में सबसे दुष्ट, मदान्ध पूंजीपति है मेरी सरकार !

कुछ लोग कहते हैं कि 'राष्ट्रियकरण' होने के बाद जो लोग इन संस्थाओं को सम्भालते हैं वे जनता के प्रतिनिधि होने के नाते कभी भी धन का दुरुपयोग नहीं कर सकते पर जीवन बीमा कांड (L. I. C. Affair) में हम ने देखा कि जीवन बीमा का 'राष्ट्रियकरण' होते ही केन्द्रीय सरकार के वित्तमन्त्री श्री टी० टी० कृष्णमाचारी ने और रिजर्व बैंक के अधिकारी आदि ने हरिदास मूंदड़ा के साथ मिल कर करोड़ों का घोटाला कर दिया—इसी तरह श्री वी० के० कृष्ण मेनन ने "जीप स्कैण्डल" में करोड़ों का वारा न्यारा कर लिया । इस तरह एक दो नहीं सैंकड़ों केस हैं । अभी हाल में "स्टील कन्ट्रोलर" और "जयन्ती शिपिंग" के जो घोटाले हुए वे भी जनता के इन प्यारे प्रतिनिधियों द्वारा ही हुआ । प्रतापसिंह कैरों (भूतपूर्व मुख्यमन्त्री पंजाब) और बीजू पटनायक (भूतपूर्व मुख्यमन्त्री उड़ीसा) ने अपने जमाने में जो जनता के खून पसीने की कमाई दोनों हाथों लूटी—उसका हिसाब इन 'राष्ट्रियकरण' के हिमायतियों को भी याद होगा ।

असल में आज मेरे देश में व्यापक भ्रष्टाचार का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व वर्तमान भ्रष्टाचारी सरकार पर है । पूंजीपतियों से घूंस लेकर, चुनाव लड़ने के लिए पैसा लेकर, विदेशी शराब की बोतलें लेकर, मांस-मछली की दावत खाकर (और भी बातें हैं जो लिखी नहीं जा सकतीं) ये सरकार के मिनिस्टर और उनके अधिका[री] जनता के साथ क्या-क्या खिलवाड़ नहीं करते । कानू[नों] की कमी नहीं । आज जितने कानून हैं यदि सरकार ईमान[दा]री से उनका ही पालन करा सके तो कोई 'राष्ट्रियकरण' न करना पड़े । और यदि कानून पालन करा की क्षमता नहीं तो 'राष्ट्रियकरण' से तो और भी हानि होगी ।

बैंकों के समाजीकरण का कानून अभी हाल में लोकसभा में पारित हुआ था जिसके अन्तर्गत रिजर्व बैंक आफ इण्डिया को बहुत अधिकार दिये जा चुके थे—जो लोग उन अधिकारों का उपयोग पहले न कर सके अब 'राष्ट्रियकरण' के बाद कौन-सा परिवर्तन ले आयेंगे—यह तो समय ही बताएगा । इसलिए हम बैंकों के राष्ट्रियकरण को बैंकों का "इन्दिराकरण" अथवा "सरकारीकरण" कहें तो अधिक सत्य होगा ।

अन्त में हमें 'राष्ट्रियकरण' शब्द पर भी विचार कर लेना चाहिये । जब किसी संस्था का अधिकार प्रजा से छीन कर सरकार अपने हाथों ले लेती है—तो लोग कहते हैं कि "राष्ट्रियकरण" हो गया । राष्ट्रियकरण शब्द राष्ट्र से बना है—राष्ट्र एक भावना का प्रतीक है एक संस्कृति, एक धर्म, एक परम्परा और एक इतिहास का प्रतीक है–कोई संस्था यदि हमारी प्राचीन वैदिक संस्कृति, वैदिक धर्म, आर्य परम्पराओं और आर्य राष्ट्र के इतिहास की पवित्र भावनाओं से ओत-प्रोत हो जाय तो हमारा यह कहना उचित होगा कि उसका 'राष्ट्रियकरण' हो गया पर यदि किसी संस्था का अधिकार वैदिक संस्कृति की घोर शत्रु, वैदिक धर्म की धज्जी उड़ाने वाली, मद्य-मांस का बेहयाई से सेवन और प्रचार करने वाली अनार्य सरकार के हाथ में आ जाय और फिर भी हम कहें कि संस्था का 'राष्ट्रियकरण' हो गया तो हमसे बढ़ कर नादान और कौन होगा ? अरे ! यदि राष्ट्रियकरण ही करना चाहते हो तो होटलों, बसों और बैंकों को छोड़कर राष्ट्र के युवकों के मस्तिष्कों का राष्ट्रियकरण करो—इस देश का कुछ बन जायगा । पर युवकों के दिल और दिमाग को ईसाई भेड़ियों और कम्युनिस्ट दरिन्दों के मुँह में फेंक कर राष्ट्रियकरण करने का दम्भ भरने वालो ! तुम्हें अपनी नीचता की पराकाष्ठा पर-पहुंच कर भी शर्म नहीं आती !

वेद के अनुसार

चन्द्रमा पर मनुष्य बसते हैं।

क्या चाँद पर भी मनुष्य हैं? अभी तक वैज्ञानिकों की यह निश्चित धारणा है कि चन्द्र धरातल पर मनुष्य तो क्या, कोई भी प्राणी नहीं बस सकता क्योंकि वहां जीवन के लिये नितान्त आवश्यक ऑक्सीजन नहीं है। इसी कारण न तो वहां कोई जल है न ही वनस्पति है और न ही कोई जीवित प्राणी। आज तक तो इस सम्बन्ध में नाना प्रकार की अटकलें ही लगाई जाती रही पर अब श्री नील आर्मस्ट्रांग और श्री एडविन एल्ड्रिन के वहां जाकर लौट आने पर उनकी बातों से लोगों को यह विश्वास हो गया है कि वहाँ कोई प्राणी अथवा मनुष्य नहीं बसते। हम न तो वैज्ञानिक हैं और न ही हमें चन्द्रमा पर जाने का सौभाग्य मिला है। इसलिये हम चन्द्रयात्रियों को उनके साहसिक अभियान और अमेरिकन वैज्ञानिकों को उनकी अद्वितीय प्रतिभा के लिये बधाई देते हुए पूरे उत्तरदायित्व के साथ साथ यह कहना चाहते हैं कि वेदादि सत्य-शास्त्रों के अनुसार चन्द्रमा पर तथा चन्द्रमा की तरह अन्य लोकान्तरों पर मनुष्यादि प्राणी वास करते हैं। इस बात की पुष्टि के लिये प्रत्यक्ष प्रमाण तो चन्द्रमा अथवा अन्य ग्रहों पर जाने वाले यात्री काफी खोजबीन करके देंगे ही पर खोज की इस प्रारम्भिक अवस्था में हम विद्वानों के विचारार्थ निम्नलिखित प्रमाण देना चाहते हैं।

महर्षि दयानन्द ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के आठवें समुल्लास के अन्त में यही प्रश्न उठाया है और उसका वेदादि सत्य-शास्त्रों के आधार पर समाधान किया है। यथा—

पूर्व पक्ष—सूर्य, चन्द्र और तारे क्या वस्तु हैं? और उनमें मनुष्यादि सृष्टि है वा नहीं?

उत्तर पक्ष—ये सब भूगोल लोक हैं और इनमें मनुष्यादि प्रजा भी रहती हैं, क्योंकि—

एतेषु हीदं सर्वम्
वसु हितमते हीदं सर्वम्
वासयन्ते तद्यदिदं सर्वं
वासयन्ते तस्माद्वसव इति ।। (शत० १४।६।७।४)।

पृथिवी, द्यौ, अग्नि, वायु, अन्तरिक्ष, चन्द्र, नक्षत्र और सूर्य इनका वसु नाम इसलिये है कि इन्हीं में सब पदार्थ और प्रजा बसती है और ये ही सबको बसाते हैं। जिस लिये वास के निवास करने के घर है इसलिये इनका नाम वसु है। जब पृथिवी के समान सूर्य, चन्द्र और नक्षत्र वसु हैं पश्चात् उन में इसी प्रकार प्रजा के होने में क्या सन्देह? और जैसे परमेश्वर का यह छोटा सा लोक मनुष्यादि सृष्टि से भरा हुआ है तो क्या यह सब शून्य होंगे? परमेश्वर का कोई भी काम निष्प्रयोजन नहीं होता तो क्या इतने असंख्य लोकों में मनुष्यादि सृष्टि न हो तो सफल कभी हो सकता है? इसलिये सर्वत्र मनुष्यादि सृष्टि है।

पूर्व पक्ष—जैसे इस देश में मनुष्यादि सृष्टि की आकृति अवयव हैं वैसे ही अन्य लोकों में भी होंगी वा विपरीत?

उत्तर पक्ष—कुछ-कुछ आकृति में भेद होने का सम्भव है। जैसे इस देश में चीन, हबश और आर्यावर्त, यूरोप में अवयव और रंग, रूप आकृति का भी थोड़ा-थोड़ा भेद होता है? इसी प्रकार लोक-लोकान्तरों में भी भेद होते हैं। परन्तु जिस जाति की जैसी सृष्टि इस देश में है वैसी जाति ही की सृष्टि अन्य लोकों में भी है। जिस जिस शरीर के प्रदेश में नेत्रादि अंग हैं उसी उसी प्रदेश में लोकान्तर में भी उसी जाति के अवयव भी वैसे ही होते हैं, क्योंकि—सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ।। (ऋक् १०।१९०।३) (धाता) परमात्मा ने जिस प्रकार के सूर्य, चन्द्र, द्यौ, भूमि, अन्तरिक्ष और तत्रस्थ सुखविशेष पदार्थ पूर्व कल्प में रचे थे वैसे ही इस कल्प अर्थात् इस सृष्टि में रचे हैं तथा सब लोक-लोकान्तरों में भी बनाये गये हैं। भेद किंचिन्मात्र नहीं होता।

पूर्व पक्ष—जिन वेदों का इस लोक में प्रकाश है उन्हीं का उन लोकों में भी प्रकाश है वा नहीं?

उत्तर पक्ष—उन्हीं का है। जैसे एक राजा की राज्य व्यवस्था नीति सब देशों में समान होती है, उसी प्रकार परमात्मा राजराजेश्वर की वेदोक्त नीति अपने अपने सृष्टि रूप सब राज्य में एक सी है।

इस तरह जहाँ तक वेदोंका सम्बन्ध है तथा जहाँ तक हमारे प्राचीन ऋषियों का प्रश्न है हम उनकी बातों को इतनी सरलता एवं शीघ्रता से असत्य नहीं कह सकते—अतएव हमारा यही पक्ष होना चाहिए कि चन्द्रमा पर मनुष्य आदि प्राणियों का वास निश्चित रूप से है। ●

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के नवीन पदाधिकारी

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के २० जुलाई १९६९ के वार्षिक अधिवेशन में २०० आर्य युवक प्रतिनिधियों ने सर्वसम्मति से श्रद्धेय इन्द्रदेव जी मेधार्थी को आगामी वर्ष के लिए सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का प्रधान निर्वाचित किया और अन्य सभी पदों पर उन्हें ही नियुक्तियां करने का अधिकार दे दिया। उपस्थित प्रतिनिधियों की पूर्ण सहमति के आधार पर परिषद् प्रधान जी ने निम्नलिखिए नियुक्तियाँ कीं।

उपप्रधान—श्री प्रो० राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु'
मन्त्री—श्री प्रो० श्यामराव जी
उपमन्त्री—श्री जगदीश जी सर्राफ
कोषाध्यक्ष—श्री रामनाथ जी सहगल
पुस्तकाध्यक्ष—ब्र० जगदीश जी विद्यार्थी
लेखा निरीक्षक—श्री गुमानसिंह जी आर्य

हरयाणा प्रान्तीय आर्य युवक परिषद् के पदाधिकारी—

प्रधान—श्री उमेदसिंह जी
मन्त्री—श्री धर्मपाल जी आर्य
कोषाध्यक्ष—श्री रामफूल जी आर्य
लेखा निरीक्षक—श्री कृष्णदत्त जी आर्य

हरयाणा प्रान्तीय जिला संचालक—

हिसार—ब्र० इन्द्रदेव जी मेधार्थी
करनाल—प्रो० श्यामराव जी
रोहतक—श्री उमेदसिंह जी
गुड़गांवा—श्री रामानन्द जी
जींद—श्री कर्मपालसिंह जी

अन्य प्रान्तों व मण्डलों के प्रमुख अधिकारी निम्न प्रकार नियुक्त हुए—

उत्तर प्रदेश—प्रो० बलजीतसिंह जी
पंजाब—प्रो० राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु'
महाराष्ट्र—श्री हरिश्चन्द्र जी 'सूर्यवंशी'
बम्बई—श्री लालचन्द जी चोपड़ा
बंगाल—प्रो० उमाकान्त जी
कलकत्ता—श्री ओम्प्रकाश जी 'बहलवाला'
आंध्रप्रदेश—श्री राजवीर जी शास्त्री
जम्मू-कश्मीर—श्री नेत्रपाल जी शास्त्री
मध्यप्रदेश—श्री कृष्णलाल जी 'पाल'
राजस्थान—श्री प्रहलाद कुमार जी
उड़ीसा—श्री केशरीचन्द जी आर्य
हिमाचल प्रदेश—श्री सुरेशचन्द्र आर्य

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति, आर्यप्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश की आवश्यक बैठक और उसके निश्चय

आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय ५ मीराबाई मार्ग लखनऊ में दि० १३-७-६९ मध्यान्ह १२ बजे काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति की बैठक हुई, इस बैठक में नीचे लिखे निश्चय किये गये।

१—यह शताब्दी समारोह आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश द्वारा आनन्द बाग वाराणसी में १६ नवम्बर से २१ नवम्बर ६९ तक मनाया जावेगा। जिसमें देश विदेश के तथा सर्व धर्मालम्बी विद्वान भाग लेंगे। विषय-वेद ईश्वरीय ज्ञान।

२—१६ अक्तूबर से १५ नवम्बर तक सारे देश में आर्य विद्वानों की शास्त्रार्थ यात्रा होगी। विषय—मूर्तिपूजा वेदानुकूल है या नहीं।

३—प्राचीनकाल की शैली पर एक श्रौत यज्ञ। इस अभूतपूर्व यज्ञ की रूपरेखा भी पृथक् प्रकाशित की जावेगी।

४—सार्वदेशिक स्तर पर एक महिला सम्मेलन भी होगा।

५—आज से एक सौ वर्ष पूर्व संसार की जो विचारधाराएं थी, उनमें हमने कितना परिवर्तन किया है; इस पर संसार की सम्मतियाँ संग्रह करके प्रकाशित की जावेंगी।

—निवेदक
महेन्द्र प्रताप शास्त्री
संयोजक
काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति

ब्रह्मचर्य आवश्यक क्यों ?

ऋषि दयानन्द सरस्वती

यह मनुष्य—देह अच्छे प्रकार आयुबल आदि से संपन्न करने के लिये है। छोटे से छोटा यह पक्ष है कि २४ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य पुरुष और १६ वर्ष तक स्त्री ब्रह्मचर्याश्रम यथावत् पूर्ण करे। यह प्रातः सेवन कहाता है जिससे इस मनुष्य देह के मध्य वसुरूप प्राण प्राप्त होते हैं जो बलवान् हो कर सब गुणों को शरीर, आत्मा और मन के बीच में वास कराते हैं।

जो कोई इस २५ वर्ष के आयु से पूर्व ब्रह्मचारी को विवाह व विषय-भोग करने का उपदेश करे उसकी वह ब्रह्मचारी यह उत्तर देवे कि—

देख, यदि मेरे प्राण, मन और इन्द्रिय २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य से बलवान् न हुए तो मध्यम सेवन जो कि आगे ४४ वर्ष तक का ब्रह्मचर्य कहा है उसको पूर्ण करने के लिये मुझमें सामर्थ्य न हो सकेगा। प्रथम कोटि का ब्रह्मचर्य मध्यम कोटि के ब्रह्मचर्य को सिद्ध करता है। इसलिये क्या मैं तुम्हारे सदृश मूर्ख हूँ कि जो इस शरीर, प्राण, अन्तःकरण और आत्मा के संयोग रूप सब शुभ गुण कर्म और स्वभाव के साधन करने वाले, इस संघात को शीघ्र नष्ट कर के अपने मनुष्य देह धारण के फल से विमुख से रहूँ और सब आश्रमों के मूल सब उत्तम कर्मों में उत्तम कर्म और सबके मुख्य कारण ब्रह्मचर्य को खण्डित करके महादुःख सागर में डूबूं। किन्तु जो प्रथम आयु में ब्रह्मचर्य करता है वह ब्रह्मचर्य के सेवन से विद्या को प्राप्त होके निश्चित रोगरहित होता है इसलिये तुम मूर्ख लोगों के कहने से ब्रह्मचर्य का लोप मैं कभी न करूंगा।

जो ४४ वर्ष तक का ब्रह्मचर्य करता है वह ब्रह्मचारी रुद्र-रूप प्राणों को प्राप्त होता है कि जिस के आगे किसी दुष्ट की दुष्टता नहीं चलती और वह सब दुष्ट कर्म करने वालों को रुलाता रहता है।

यदि मध्यम ब्रह्मचर्य के सेवन करने वाले से कोई कहे कि तुम इस ब्रह्मचर्य को छोड़ विवाह करके आनन्द को प्राप्त हो उसको ब्रह्मचारी यह उत्तर देवे कि—

जो सुख अधिक ब्रह्मचर्याश्रम के सेवन से होता है वह ब्रह्मचर्य को न करने से स्वप्न में भी नहीं प्राप्त होता। क्योंकि सांसारिक व्यवहार विषय और परमार्थ संबंधी पूर्ण सुख को ब्रह्मचारी ही प्राप्त होता है अन्य कोई नहीं। इसलिये मैं इस सर्वोत्तम सुख प्राप्ति के साधन ब्रह्मचर्य का लोप न करके विद्वान् बलवान् आयुष्यमान् धर्मात्मा होके सम्पूर्ण आनन्द को प्राप्त होऊंगा। तुम्हारे निर्बुद्धियों के कहने से शीघ्र विवाह करके स्वयं और अपने कुल को नष्ट भ्रष्ट कभी न करूंगा।

अब ४८ वर्ष पर्यन्त उत्तम ब्रह्मचर्य से पूर्ण विद्या, पूर्णबल, पूर्णप्रज्ञा, पूर्ण शुभगुण, कर्म स्वभाव युक्त सूर्यवत् प्रकाशमान होकर ब्रह्मचारी सब विद्याओं को ग्रहण करता है।

यदि कोई इस सर्वोत्तम धर्म से गिराना चाहे उसको ब्रह्मचारी उत्तर देवे कि अरे! छोकरों के छोकरे! मुझ से दूर रहो। तुम्हारे दुर्गन्ध रूप भ्रष्ट वचनों से मैं दूर रहता हूँ, मैं इस उत्तम ब्रह्मचर्य का लोप कभी न करूंगा इस को पूर्ण करके सर्व रोगों से रहित सर्वविद्यादि शुभ गुण कर्म, स्वभाव सहित होऊंगा। इस मेरी शुभ प्रतिज्ञा को परमात्मा अपनी कृपा से पूर्ण करे जिससे मैं तुम निर्बुद्धियों को उपदेश और विद्या पढ़ा के विशेष तुम्हारे बालकों को आनन्द युक्त कर सकूं।

(वेदारम्भ प्र० पृ० ६१ संस्कारविधि)

गृहस्थी ब्रह्मचारी कैसे ?

जो कोई १६ वें वर्ष से लेके २५ वर्ष पर्यन्त वृद्धि की अवस्था में वीर्यादि धातुओं का नाश करेगा वह कुल्हाड़े से काटे वृक्ष या डंडे से फूटे घड़े के समान

अपने सर्वस्व का नाश करके पश्चात्ताप करेगा, पुनः उसके हाथ में सुधार कुछ भी न रहेगा। युवावस्था का आरम्भ २५ वें वर्ष से और पूर्ति ४० वें वर्ष में होती है।

२५ वर्ष से ४० वें वर्ष की जो युवावस्था है जो इस को यथावत् संरक्षित न कर रक्खेगा वह अपनी भाग्यशालीनता को नष्ट कर देवेगा। पूर्ण युवावस्था ४० में वर्ष में होती है। जो कई ब्रह्मचारी होकर पुनः ऋतुगामी, परस्त्रीत्यागी एक स्त्रीव्रत गर्भ रहे पश्चात् एक वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचारी न रहेगा वह भी बना बनाया धूल में मिल जायगा।

यदि किञ्चित् हानि के बदले वीर्य्य की अधिक हानि करेगा वह भी राज-यक्ष्मा और भगन्दरादि रोगों से पीड़ित हो जायगा और जो इन अवस्थाओं को यथोक्त सुरक्षित रक्खेगा वह सर्वदा आनन्दित होकर सब संसार को सुखी कर सकेगा। (सं० वि० वे० प्र०)

आदित्य ब्रह्मचारी ही राजा हो

वह ब्रह्मचारी वेद विद्या को यथार्थ जान के प्राण विद्या लोकविद्या को देखते हुये प्रजापति जो सबसे बड़ा सबका प्रकाशक परमात्मा है उसको प्रकट करता हुआ मोक्षविद्या-गर्भ में स्थित यथावत् ज्ञान प्राप्त कर सूर्यवत् प्रकाशित होता हुआ दुष्टकर्मकर्त्ता मूर्ख पाखण्डी दैत्यराक्षस स्वभाव वाले मनुष्यों को दूर करता है। जैसे इन्द्र जो सूर्य है, वह असुर अर्थात् मेघों और रात्रि को दूर करता है वैसे ही ब्रह्मचारी सब गुणों का प्रकाशक अशुभ गुणों का नाशक होता है।

ब्रह्मचर्य तप द्वारा ही राजा ठीक से प्रजा की रक्षा करने में समर्थ और आचार्य विद्या ग्रहण कर ब्रह्मचारी की इच्छा करता है। अर्थात् वही राजा उत्तम होता है जो पूर्ण ब्रह्मचर्य रूप तपश्चरण से पूर्ण विद्वान्, सुशिक्षित, सुशील, जितेन्द्रिय होकर राज्य को विविध प्रकार से पालन करता है और वही विद्वान् ब्रह्मचारी की इच्छा करता और आचार्य हो सकता है जो यथावत् ब्रह्मचर्य से संपूर्ण विद्याओं को पढ़ता है।

कन्यायें भी ब्रह्मचारिणी हों

जैसे लड़के पूर्ण ब्रह्मचर्य और पूर्ण विद्या पढ़ जवान हो के अपने सदृश कन्या से विवाह करें वैसे कन्या भी अखण्ड ब्रह्मचर्य से पूर्ण विद्या पढ़ पूर्ण युवति हो अपने तुल्य पूर्ण युवावस्था वाले पति को प्राप्त होवे। अनड्वान यह वेगवालों पशुओं का उपलक्षण है अर्थात् वे वेगवान बलवान पशु घोड़ा भी ब्रह्मचर्य अर्थात् सुनियम में रहने से घास की तरह अपने विरोधी पशुओं को युद्ध में जीतना चाहते हैं। इस कारण मनुष्यों को तो अवश्य ब्रह्मचर्य करना चाहिये यह अभिप्राय है।

देव विद्वान् लोग ब्रह्मचर्य अर्थात् वेदाध्ययन, ब्रह्म विज्ञान और तप अर्थात् धर्मानुष्ठान द्वारा जन्म मरण दुःख को दूर कर (मोक्ष प्राप्त करते) हैं, दूसरी प्रकार नहीं निश्चय ब्रह्मचर्य से अर्थात् सुनियम से जैसे (इन्द्र) सूर्य (देवों) इन्द्रियों को सुख और प्रकाश धारण करता (देता है) वैसे ही बिना ब्रह्मचर्य के किसी को भी विद्या और सुख नहीं मिलता। इसलिये ब्रह्मचर्यानुष्ठान पूर्वक ही गृहाश्रम आदि तीनों आश्रम सुखवर्धक होते हैं। नहीं तो मूल के अभाव से फिर शाखा कहाँ? किन्तु मूल दृढ़ होने पर शाखाफूल फल छायादि सब सिद्ध होते हैं। (ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका पृ० ३५४-५७ वर्णाश्रम विषय)

*

दल-बदलू जी

गयाराम सहसा ही हो गए आयाराम,
प्रातः ही मंत्रिमंडल में आ गया उनका नाम।
खूब मिले दाम,
बन गया काम,
श्रीमती जी हँस कर बोली, कृपा करी भगवान।

शुभाशीर्वाद !

श्रद्धेय महात्मा आनन्द स्वामी जी

मेरे प्यारे श्री श्यामराव जी,

प्रभु की अपार कृपा ही समझना चाहिये जो आप जैसे धर्म तथा राष्ट्रप्रेमी युवक के हृदय में आर्यसमाज की रक्षा के लिये सिर पर कफन बाँध कर कार्यक्षेत्र में कूद पड़ने की शुभ प्रेरणा हुई। प्रभु आप लोगों को शक्ति भक्ति प्रदान करते रहेंगे। मेरा ही नहीं, सब अनुभवी लोगों का यह निश्चय है और वेद का भी यही आदेश है कि ब्रह्मशक्ति और क्षात्रशक्ति दोनों के मिलाप से सफलता मिलती है। इसी को भौतिकवाद और आध्यात्मवाद कहते हैं। आर्यसमाज केवल भौतिकवाद में पड़ गया—आत्मा को भूल गया और आज उसमें शिथिलता नजर आ रही है।

युवकों को चाहिये कि वह इन दोनों शक्तियों को मिला कर चलें। Spiritualism + Materialism = Peace of Mind and Success यह नारा लगाते चलिये। मृतप्राय समाज में नवजीवन आने लगेगा। शाबाश ! निराश नहीं होना। मठधारियों की ओर से विरोध होगा परन्तु आप अपने उद्देश्य की ओर बढ़ते चलिये।

श्रद्धेय स्वामी ब्रह्मानन्द जी दण्डी
(आर्ष गुरुकुल यज्ञतीर्थ, एटा)

ब्रह्मबल से बलवान, ब्रह्मतेज से तेजस्वी, माया से रहित पण्डित श्याम जी महाराज, नमस्ते।

शुभाशीर्वाद भेज रहा हूँ। ईश्वर सदैव ऐसी ही प्रेरणा युवकों को करता रहे जो अब की है। ब्रह्मबल से सदाचार-शिष्टाचार से, नम्रता से, ईश्वर और ईश्वरी ज्ञान से संसार को भरपूर कर दें। ईश्वर कभी भी इनको ऐसी प्रेरणा न करे जो अर्थ, काम में फँस कर जीवन को बर्बाद करे। मेरा नित्याशीर्वाद है। दो-चार जन्म तक ब्रह्मचर्य से रहें। स्त्री संसार में है ही नहीं—विश्व में ऐसे युवक सदैव विजयी हुए हैं और होंगे।

श्रद्धेय आचार्य धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड

श्री प्रो० श्यामराव जी,

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि आप तथा आपके साथी २१ योग्य युवक जिनमें अनेक आचार्य, एम० ए०, एम० एस० सी० आदि भी हैं जीवन दान देकर अहर्निश युवक संघठन के कार्य में संलग्न हैं। आजकल विशेषतः देश की स्वतन्त्रता के पश्चात् मांस, मद्य, धूम्रपान, भ्रष्टाचारादि की बड़ी वृद्धि हो रही है। योग्य उत्साही युवकों के द्वारा इनके विरुद्ध प्रबल आन्दोलन की आवश्यकता है। साथ ही जातिभेद और अस्पृश्यता के विरुद्ध प्रबल आन्दोलन चलाने की आवश्यकता है। अविवाहित युवकों और युवतियों से अन्तर्जातीय अथवा जान-बूझ कर जाति-बन्धन तोड़कर ही विवाह करने की प्रतिज्ञा ली जाय।...... मैं आपके कार्य में पूर्ण सफलता चाहता हूँ।

श्रद्धेय आचार्य प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति
(उपकुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय)

प्रियवर श्यामराव जी,

आप युवक लोग आर्यसमाज की सेवा के लिए इस परिषद् के रूप में संगठित होकर जो कार्य कर रहे हैं— वह बहुत प्रशंसनीय है। आर्यसमाज को अपने महान लक्ष्य में अग्रसर होने के लिए अपने अन्दर अधिक से अधिक उत्साही युवकों की आवश्यकता है। आप लोगों के संगठन द्वारा आर्यसमाज की यह भारी आवश्यकता पूरी हो सकेगी इसकी मुझे पूर्ण आशा है। आप लोगों का उद्देश्य पूर्ण हो और आपके द्वारा आर्यसमाज की अधिक से अधिक उन्नति हो तथा वह अपने उद्देश्य में सफल हो--

मेरी यही कामना है। मैं आप लोगों के सत्य यत्न के साथ पूरी सहानुभूति रखता हूं।

●

श्रद्धेया शास्त्री देवी जी (आर्य-क्रान्तिकारी स्व० रामप्रसाद बिस्मिल जी की बहन)

सेवा में सविनय निवेदन है कि आपका कृपापत्र आज मिला। आपको कोटि-कोटि धन्यवाद देती हूं। सप्रेम आशीर्वाद देती हूँ, भाई साहब, मैं सदा आर्यसमाज की उन्नति चाहती हूं। ईश्वर आपके कार्यक्रम की उन्नति करे।

कर लो नाम भाइयो जिससे यह शां रहे।
दुनियां में तुम रहो या न रहो, यही निशां रहे।

●

श्रद्धेय स्वामी रामेश्वरानन्द जी सरस्वती (आचार्य-गुरुकुल घरौंडा)

प्रिय राव जी,

यदि कुछ करना है तो अति कटुता का त्याग करो तथा विशेषतया हरियाणा में आचार्य भगवानदेव जी को साथ लेकर चलो क्योंकि आचार्य जी में सब गुण हैं। यदि कुछ अच्छा क्रान्तिकारी कार्य करोगे तो मेरा आशीर्वाद भी आप लोगों के साथ है।

●

श्रद्धेय शिवकुमार जी शास्त्री (प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश तथा सदस्य लोकसभा)

श्री श्यामराव जी,

परिषद् की गतवर्ष की गतिविधियों को देखकर यह आभास हो रहा है कि आपकी सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् आर्यसमाज के संगठन को सशक्त बनाने के लिये उपयोगी कार्य कर सकेगी। दलबन्दी और पक्षपात से बचकर आर्यसमाज के कल्याण को ही दृष्टि में रखकर दृढ़ता से आप लोग अग्रसर हों यही मेरी शुभकामना है। आर्यसमाज का नभोमण्डल निराशा, अविश्वास और द्वेष के बादलों से घिरा हुआ है—इस समय उन्हें तेजस्विता से छिन्न-भिन्न करने की आवश्यकता है। प्रभू आपको शक्ति दें।

●

श्रद्धेय पण्डित फूलचन्द्र जी शर्मा 'निडर' (प्रधान-आर्यसमाज भिवानी)

'सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्' एक सच्ची लगन एवं त्याग तपस्या से कार्य कर रहा है। प्रो० श्यामराव जी तथा श्री इन्द्रदेव जी मेधार्थी से लगातार ६ मास तक भिवानी में हमारा निकट सम्पर्क रहा है। वेदमत की मौलिकता तथा उसके प्रचार कार्य के विषय में इन महानुभावों से किसी आर्य का मतभेद तो हो सकता है परन्तु इनमें कोई छल-कपट-स्वार्थ अथवा मानादि की चाहना हो ऐसा नहीं कहा जा सकता। हमें इस मण्डल की लगन से बड़ा संतोष एवम् प्रसन्नता होती है। भगवान् से प्रार्थना है कि ये युवक प्रतिदिन आगे बढ़ते रहें और अपने ध्येय में अवश्य ही सफलता प्राप्त करें। जो भी जिस योग्य हो और जिससे जो भी बने इनको प्रत्येक प्रकार से सहयोग देना चाहिये और इनकी सहायता करनी चाहिये।

●

श्रद्धेय पण्डित समरसिंह जी वेदालंकार (अध्यक्ष, हरयाणा वेद प्रचार मण्डल)

प्रिय संचालक महोदय श्यामराव जी,

इस अत्यन्त निराशापूर्ण घोर अन्धकारमय वातावरण में एकमात्र आशा की उषा आप की सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् ही दृष्टिगोचर होता है। आर्यसमाज की बागडोर प्रथम पीढ़ी के त्यागी तपस्वी पुरुषार्थी विद्वान संन्यासियों और उपदेशक प्रचारकों के हाथ से निकलकर व्यावसायिक व्यापारियों और अहंमन्य नेताओं के हाथ में जाने से समाज और देश की दुर्दशा हो गई है। इस बिगड़ी को बनाने और जीर्णोद्धार का कार्य केवल वही मौलिक विचारधारा वाले सुशिक्षित युवक ही कर सकते हैं जो परमुखापेक्षी न होकर स्वयं अपना मार्ग प्रशस्त करें।

"कार्यं वा साधयेयं, देहम् वा पातयेयं" का दृढ़संकल्प और तदनुकूल पुरुषार्थ ही इष्ट लक्ष्य तक पहुंचने का पाथेय है।

मेरी शुभकामनायें और आशीर्वाद पवित्र हार्दिक सदभावनाओं के रूप में सदा-सदा आप सज्जनों को स्वतः प्राप्त है। वर्षों से दबी हुई मेरी अन्तरात्मा की आवाज को आज के कुछ नवयुवकों ने सुना। वैदिक धर्म के अधूरे लंगड़े रूप को पूर्णरूप देने के प्रथम श्रेय के भागी भी आप युवक ही हैं। ब्रह्म और क्षत्र दोनों शक्तियों को जागृत करने का साहस खुले रूप में समाज में अंकुरित हुआ। वैदिक राजनीति धर्म की दक्षिण भुजावत् कटी पड़ी थी—जोड़ने का प्रयत्न सराहनीय है।

●

श्रद्धेय ओम्प्रकाश जी त्यागी (संसत्सदस्य, उपमन्त्री सार्वदेशिक सभा)

श्रीयुत भाई श्यामराव जी,

आर्य जगत् की नवयुवक शक्ति संगठित होकर महर्षि दयानन्द के मिशन को गति दे ऐसी मेरी हार्दिक अभिलाषा है। आर्यसमाज के वर्तमान दलदल से यदि नवयुवक संगठन अलग रहकर कार्य करता रहेगा और आवश्यकता पर आर्यसमाज को यथाशक्ति सहयोग देगा तो सफलता इसे मिलेगी अन्यथा नवयुवक संगठन दलदल में विलीन हो जायगा।

●

श्रद्धेय पण्डित ओम्प्रकाश जी शास्त्री (खतौली)

श्रीयुत भाई श्यामराव जी,

मैं स्वयं गत कई वर्षों से आर्यसमाज की वर्तमान तथा भावी आनुमानिक स्थिति से चिन्तित तथा खिन्न हूं जिसके लिये वर्तमान नेतृत्व ही उत्तरदायी है। जिनके लिये आर्यसमाज जीवन का साध्य नहीं अपितु जो अपनी वैयक्तिक महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिये आर्यसमाज साधन-मात्र के रूप में स्वीकारते तथा भाषण मात्रों में उपयोग करते हैं—ऐसे कतिपय स्वार्थपरायण, राजनैतिक क्षेत्र के कबड्डी विशेषज्ञ आर्यसमाज के भाग्य विधाता तथा कर्णधार बन बैठे हैं।

ऐसी स्थिति में मैं स्वयं किसी ऐसे युवक-समाज की आवश्यकता का अनुभव कर रहा था जिसके क्रान्तिकारी कार्यक्रम से आर्य समाज में नये रक्त का संचार हो सके साथ ढोंगी, स्वार्थतत्पर, चरित्रहीन (जो न अर्थ शुचिः हैं और न काम शुचिः) व्यक्तियों से आर्यसमाज जैसी चरित्र प्रधान संस्था को पवित्र कर सकें।

सम्प्रति, आप इस उद्देश्य के लिये प्रयत्नशील हैं,यह जानकर प्रसन्नता हुई। मेरा आशीर्वाद आप जैसे कर्मठ तथा त्यागी व्यक्तियों के सर्वदा साथ है। मेरी सेवा की जब और जो आवश्यकता हो वह मुझे लिख सकते हैं। यथासामर्थ्य उसे पूरा करने का मैं आपको विश्वास दिलाता हूं।

●

श्रद्धेय स्वामी भीष्म जी (घरौण्डा)

बढ़ो जवानो समर में करके नाहर नाद
सदा तुम्हारे साथ है मेरा आशीर्वाद !

●

श्रद्धेय रामगोपाल जी शालवाले—संसद सदस्य (लोकसभा)

आर्य युवक परिषद् अपने दूसरे वर्ष में पदार्पण कर रहा है—यह जानकर मुझे प्रसन्नता हुई। युवकों में वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार व प्रसार करने की आपकी भावी योजना सफल हो ऐसी मेरी हार्दिक इच्छा है।

आर्यसमाज की वर्तमान प्रचार शैली में आमूल चूल परिवर्तन करने की आवश्यकता है। अनुशासनात्मक शैली से प्रशिक्षित नवयुवक आर्यसमाज के प्रचारक रूप में एक एक क्षेत्र में रह कर काम करें, नवयुवकों में अनुशासन और स्वाध्याय की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन दिये जायें—इस प्रकार के कैम्प लगाये जायें जहाँ आर्यसमाज की दूषित चुनाव प्रणाली तथा झूठी नेतागिरी की भावना से ऊपर उठकर कुछ लोग काम करें। इसके साथ महर्षि दयानन्द द्वारा प्रदर्शित और वैदिक धर्म पर आधारित राजनीति का उच्चकोटि का प्रशिक्षण भी युवकों को मिलना चाहिए।

●

श्रद्धेय महात्मा आनन्द भिक्षु जी (सर्वाधिकारी-आर्यसमाज सगठन समिति)

श्री महामान्यवर आदर्शव्रती आदर्श त्यागी श्री प्रो० श्याम राव जी महाराज,

आपकी पत्रिका 'राजधर्म' के वीरता पूर्ण लेख पढ़ करके हार्दिक प्रसन्नता हुई। आप लोगों ने जो 'सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्' का सुन्दर संगठन किया हुआ है यह राष्ट्र के अन्दर एक नई चेतना देने वाला है। इस संगठन की अत्यावश्यकता थी जो आप लोगों ने पूरी की है। भगवान करे आप इससे अधिक सफल हों। हमारी मंगल कामनायें आपके साथ हैं।

●

श्रद्धेय वीरेन्द्र जी (संचालक-दैनिक प्रताप व वीर प्रताप)

श्री श्यामराव जी,

मैं अपने आपको इस योग्य नहीं समझता कि किसी को कोई संदेश दे सकूँ। आपको केवल एक परामर्श देना चाहता हूं, वह यह कि नेताओं से बचो। यदि सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् ने वर्तमान नेताओं के पीछे चलना शुरू कर दिया और अपने लिये कोई नया स्वतन्त्र मार्ग अपनाने का यत्न न किया तो इसका भी अन्त में वही हाल होगा जो आर्यसमाज की दूसरी संस्थाओं का हो रहा है। इसके लिये मैं तो केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि नेताओं से बचो।

●

श्रद्धेय मुलखराज जी भल्ला (प्रधान—आर्य समाज मन्दिर मार्ग)

Dear Shri Shyam Rao,

I am glad that you are commencing the second year of Sarvadeshik Arya Yuvak Parishad.

The work done during the last year is quite heartening. The objectives for which the Parishad has been started are praiseworthy and will go a long way in building the character and health of the youth. I wish the Parishad a great success.

●

श्रद्धेय स्वामी व्रतानन्द जी (गुरुकुल चित्तौड़गढ़)

श्रीमान् प्रियवर संयोजक जी !

ओम् की दया से आप आनन्द युक्त होंगे। सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् पर मुझे बहुत अधिक आशायें हैं। यह सकल भूमण्डल को वेदानुकूल आदर्श समाज बनाने में पूर्ण सफलता प्राप्त करेगी। इसके पारिषद्यों का संगठन आदर्श प्रीति से परिपूर्ण होगा और प्रत्येक पारिषद्य आर्यसमाज के दशों नियमों एवं इक्यावन सिद्धान्तों का परिपालन स्वयं करेगा तथा भूमण्डलवासियों से पालन कराने के लिए पूर्ण प्रयत्न करेगा।

मुझे पूर्ण विश्वास है आपके प्रत्येक पारिषद्य का और सम्पूर्ण परिषद् का भविष्य उदात्त उज्ज्वल होगा।

●

श्रद्धेय स्वामी सर्वानन्द जी, (दयानन्द मठ दीनानगर)

श्रीमान् प्रो० श्यामराव जी !

श्री ब्र० इन्द्रदेव जी मेधार्थी तथा आपके नेतृत्व में आर्ययुवक परिषद् बहुत अच्छा कार्य कर रही है, यह जानकर बड़ी प्रसन्नता है। इस समय युवकों में कार्य करने की अत्यन्त आवश्यकता है। उन्हें परिषद् से उत्तम दिशा मिलेगी और देश व मानव का हित होगा। परिषद् की सफलता के लिए गली-गली की लड़ाई तथा पारस्परिक विवादों से अवश्य ही बचना होगा। ईश्वर आप सब को इस कार्य में सफलता प्रदान करें।

●

श्रद्धेय श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री (संसद-सदस्य)

श्रीमान् संयोजक जी !

आप सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का वार्षिक अधिवेशन कर रहे हैं, यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई। विज्ञान एवं आर्थिक प्रगति के नाम पर बढ़ती हुई नास्तिकता के परिणाम-स्वरूप युवकों में अनुशासनहीनता, अनैतिकता एवं अमर्यादा फैल रही है। देश में कानून, शान्ति एवं व्यवस्था को भंग करने वाले तत्त्व सक्रिय होते जा रहे हैं। अराजकता एवं दिग्व्यामोह में फंसा समाज छटपटा रहा है। ऐसी स्थिति में सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् एक सुन्दर भूमिका बना रही है। मैं प्रभु से आपके सत्प्रयास की सफलता की कामना करता हूँ।

●

श्रद्धेय श्री युधिष्ठिर जी मीमांसक (रामलाल कपूर ट्रस्ट)

श्री माननीय महोदय जी !

आपका प्रयत्न स्तुत्य है। राजधर्म का प्रकाशन उचित रूप से हो रहा है। प्रभु करें आप लोगों का प्रयास सफल हो और स्वार्थ-पदलोलुपता-अनाचार आदि के भंवर में डूबती आर्यसमाज की नौका सही रूप से अपने मार्ग की ओर अग्रसर हो।

श्रद्धेय पं० जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती शास्त्री (सम्पादक—आर्यमर्यादा)

श्री प्रो० श्यामराव जी !

वैदिक सिद्धान्तों और महर्षि दयानन्द द्वारा स्वीकृत वैदिक मन्तव्यों के अनुसार सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् कर्मठ रूप में आगे बढ़ती रहे, जिससे आर्यावर्त राष्ट्र की युवक शक्ति में चैतन्य होकर शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति अपने उत्कर्ष को प्राप्त कर सके। परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि आर्य युवक परिषद् के सदस्यों में यह भावना सदा जागरित रहे। परिषद् की मैं सर्वात्मना उज्ज्वल कीर्ति की कामना करता हूँ।

श्रद्धेय पं० वीरसेन जी वेदश्रमी (वेद-सदन, महारानी पथ, इन्दौर-२)

श्री श्यामराव जी !

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् की स्थापना एवं उसकी गतिविधि का परिचय प्राप्त कर प्रसन्नता हुई। जो राष्ट्र-समाज-जाति या संस्था युवक शक्ति की पूर्ण उपेक्षा कर, अकर्मण्यता और पद-लोलुपता के वशीभूत होकर अपने वर्तमान एवं भविष्य पर किंचित् भी दृष्टिपात नहीं करती वह अवश्यमेव संसार में जीवित नहीं रह सकती। महर्षि दयानन्द द्वारा समिद्ध की गई दिव्य वैदिक ज्योति, ईर्ष्या, द्वेष, स्वार्थ एवं अविवेक के कारण संसार से विलुप्त न हो, इस ध्येय से सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् द्वारा नवयुवकों में आदर्श वैदिक भावनाओं की सुफलदायक क्रियात्मक प्रगति स्वागत योग्य है। परमात्मा उसे सफलता प्रदान करें।

श्रद्धेय पं० शान्तिप्रकाश जी आर्योपदेशक (जैकमपुरा गुड़गांवा छावनी)

माननीय श्री श्यामराव जी !

मैं आर्यसमाज में युवक शक्ति को उभरते-फलते-फूलते और सर्वांगीण उन्नति करते देखने की तीव्र लालसा रखता हूं कि आर्य युवक ही भारत तथा संसार की गतिविधियों में हलचल पैदा कर रहे हों। आर्य युवकों का विशाल संगठन सर्वत्र प्रगति का कारण हो।

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् इस अङ्कुरित युवक शक्ति को वृक्षाकारता का रूप देकर विश्व भर में उसकी शाखा-प्रशाखाओं का विस्तार कर दें। यही मेरी मनःकामना है। परमात्मा आपके सत्प्रयत्नों को सफल करें।

श्रद्धेय सन्तराम अजमानी जी (सम्पादक—आर्य गजट उर्दू)

प्रिय म० श्यामराव जी !

मैंने सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का साहित्य और उनके कार्य का अध्ययन किया है। मेरा विश्वास है कि युवक ही आर्यसमाज को निराशावाद के गर्त से निकाल सकते हैं, और हम सब का कर्त्तव्य है कि परिषद् को पूरा-पूरा सहयोग दें।

मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मैं तथा आर्यगजट आपको इस पवित्र कार्य में पूरा सहयोग देंगे।

श्रद्धेय प्रकाशवीर शास्त्री (सदस्य लोकसभा)

श्री श्यामराव जी !

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के कार्यक्रम का दूसरा वर्ष प्रारम्भ कर रहे हैं। आर्यसमाज युवकों को सही दिशा देने का काम पिछले कुछ वर्षों से समाप्तप्राय हो चला था। कुछ दिन पूर्व आर्य कुमार परिषद् ने इस दिशा में अच्छा योगदान किया था। परन्तु वह भी अब समाप्त सी हो गई है। दूसरे फिर आर्यसमाज जैसे सजीव संगठन को समय के साथ अपने कार्यक्रमों में परिवर्तन करते रहना चाहिए। इसलिए भी आपके इस संगठन का महत्व और

अधिक बढ़ जाता है। निष्ठावान् और ईमानदार कार्यकर्ता निश्चय ही अपने लक्ष्य पर पहुँचेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

इस अवसर पर मेरी ओर से हार्दिक शुभकामनायें स्वीकार करें।

श्रद्धेय अमर स्वामी जी परिव्राजक [भूतपूर्व पं० अमरसिंह जी]

कर्मवीर त्याग मूर्ति श्री उपाध्याय श्यामाराव जी, आपने और विद्वद्वर श्री पं० इन्द्रदेव जी ने अपने बहुमूल्य जीवन आर्यसमाज को अर्पण कर दिया है। आप लोगों ने सर्व प्रकार के लोभों, लालचों, सुखों और आरामों को छोड़कर आर्यसमाजों को बढ़ाने का प्रण लिया है। आप लोगों के अद्भुत त्याग को देखकर और भी कई युवकों ने इसी प्रकार प्रतिज्ञा की है और आर्यसमाज में नव जीवन लाने के लिये एक वर्ष में जो कार्य आप लोगों ने किया है वह कई वर्षों के कार्य के बराबर है। आपके द्वारा सम्पादित और संचालित 'राजधर्म' पाक्षिक पत्र मुझको बहुत ही प्यारा लगता है। मैं चाहता हूँ कि उस पत्र के अधिक ग्राहक बनें और सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् आर्य समाज को अधिकाधिक उन्नति दे सके। आपके उद्देश्य के साथ मेरी हार्दिक सहानुभूति और सहमति है।

●

महात्मा आनन्द भिक्षु जी की अध्यक्षता में सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के प्रधान—श्री इन्द्रदेव जी मेधार्थी का सर्वसम्मति से निर्वाचन हुआ—चित्र में प्रधान जी युवक प्रतिनिधियों को सम्बोधित कर रहे हैं।

क्या आपने कभी सोचा ?

कि इतने दिनों से आप राजधर्म के एक-एक लेख को ध्यान से पढ़ते रहे पर कभी यह लिख कर नहीं भेजा कि इसमें प्रकाशित सामग्री आपको कैसी लगती है। कोई सुझाव या सहायता आप देना चाहते हों! आपकी बातों से हमें बड़ा बल मिलता है पर आप लिखें तब न ?

एक बात और ! कोई शिकायत हो या पता ही बदलवाना हो तो कृपा करके अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखा करें।

—सम्पादक

आर्यसमाज का भविष्य

सन्तराम अजमानी
सम्पादक आर्य गजट (उर्दू)

आज चारों दिशाओं से यह आवाज आ रही है कि आर्यसमाज निर्बल हो रहा है। देश-विभाजन के पश्चात् यह आशा थी कि आर्यसमाज और कांग्रेस मिलकर देश के उत्थान के लिये प्रयत्न करेंगे। परन्तु जहाँ दूसरे देश उन्नति के पथ पर चढ़ रहे हैं वहाँ भारतवर्ष दिन प्रतिदिन अवनति की ओर सरपट जा रहा है। कांग्रेस में तो भ्रष्टाचार इस गिरावट का कारण हो सकता है परन्तु आर्यसमाज में तो कोई भ्रष्टाचार नहीं है। यहाँ जो उदासीनता दृष्टिगोचर हो रही है उसका क्या कारण हो सकता है? मैंने इस विषय पर बहुत विचार किया है कि पहले लाहौर में हमारा केवल एक डी० ए० वी० कालेज था हम संख्या में कम थे। हमारे साधन भी कम थे। हमारा एक गुरुकुल काँगड़ी में था। एक कन्या महाविद्यालय जालन्धर में था अधिक आर्यसमाजी तथा आर्यसमाजें अपना कार्य उर्दू भाषा में करते थे। हिन्दी जानने वाले आर्य भाई बहुत कम थे। हमारे पास उपदेशक भी कम थे। परन्तु हमारी धाक चारों दिशाओं में फैली हुई थी। विपक्षी आर्यसमाज के सामने आने से काँपते थे। ईसाई पादरी और मौलवी, आर्यसमाजों के नाम सुनकर भाग खड़े होते थे। दसवार्षिक जनगणना में हर बार हमारी शत-प्रतिशत वृद्धि होती रही। एक मित्र ने मुझसे पूछा अजमानी जी, इसका क्या कारण है आज हमारे पास कालेज, गुरुकुल महाविद्यालय, समाजें अधिक हैं, विद्वान्, त्यागी, संन्यासी, उपदेशक सब अधिक हैं, प्रत्येक नगर में दयानन्द कालेज है, अंग्रेजी, संस्कृत, विज्ञान के महापण्डित युवक भी बहुत हैं, धन की भी कमी नहीं है फिर भी यह शिकायत सुनी जा रही है कि आर्यसमाज शिथिल हो रहा है। दो-तीन सप्ताह हुए आर्य के दो युवक रत्न श्री राजेन्द्र जिज्ञासु एम० ए० तथा प्रो० श्यामराव जी एम० ए० सम्पादक राजधर्म, मोती नगर में मुझसे मिलने आये। बड़ा मधुर मिलन था। बात-चीत में यही प्रश्न सामने आया कि आर्यसमाज की वर्तमान अवस्था का क्या कारण है? मैंने उत्तर दिया कि एक ही कारण है और वह यह कि पहले हम आशावादी थे। हमारा दृष्टिकोण Optimistic था। हम जिधर भी पग उठाते थे सफलता हमारा स्वागत करती थी। मनोविज्ञान का सिद्धान्त है कि आशावादी के आगे सफलता हाथ जोड़ कर खड़ी रहती है परन्तु निराशावादी मन्दभाग होता है उसे चारों दिशाओं से फटकार ही मिलती है। मेरे पास अभी एक पुस्तक Success in thirty days आई है जो मैंने खोल कर राजेन्द्र जी को दिखाई। उनको वह पुस्तक इतनी अच्छी लगी कि उन्होंने उसका वह स्थल अपनी नोट बुक में लिख लिया वह स्थल इतना सुन्दर है कि मैं आपके अवलोकनार्थ उसे यहाँ लिख रहा हूँ। देखिये—

One reason why the United States of America has reached the height of material prosperity is probably because "success stories" are widely publicised there, throught, Press, Radio and Television. These stories act as a constant incentive and source of inspiration to young men & women of America. There is also an abundance of books and magazines on self-improvement and positive thinking to direct and encourage youth of country to achieve success and fulfil their duty towards their country and humanity.

Success in life is based on planning, hard work & positive thinking. Planning includes vocational guidance so that our young workers may avoid becoming misfits. There must be a closer liaison between educational institutions & personnel departments in Trade and Industry. Such facilities are not yet available in our country and even books on these subjects is limited.

हम तीनों इस बात पर सहमत हैं कि इस समय आर्यसमाज का मार्ग-दर्शन ठीक दिशा में नहीं हो रहा। निराशावादी हर स्थान पर छाये हुए हैं। हमने निश्चय किया कि आर्यसमाज के लेखक संघ को संगठित किया जावे ताकि आर्य समाचार-पत्रों में जो निराशावाद के लेख देखने में आते हैं वह बन्द हों और हम हर समय रोना न रोते रहें अपना आर्यसमाज को आशावाद के मार्ग पर डालकर म० दयानन्द के स्वप्न को साकार कर सकें। हम आर्य लेखक संघ की एक Conference भी शीघ्र देहली में करना चाहते हैं। हमारा विश्वास है कि युवक आर्य लेखक संघ के सहयोग से हम आर्यसमाज को उन्नति के मार्ग पर डाल सकेंगे और एक दिन फिर संसार दयानन्द की जय पुकारेगा—

पुकारेगा एक स्वर से फिर जगत सारा।
दयानन्द स्वामी गुरु है हमारा॥

वार्षिक अधिवेशन

—एक प्रेक्षक—

राजधर्म तथा आर्यसमाज की अन्य पत्र-पत्रिकाओं में "सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्" के क्रान्तिकारी कार्य-क्रम की चर्चा पिछले कुछ मास से आर्यों के लिये विशेष आकर्षण का विषय बनी हुई है। कुछ युवकों ने अपना जीवन दानकर संगठन का निर्माण किया है, युवकों का आदर्श आर्य-राज्य की स्थापना है, युवक आर्थिक विषमता को महर्षि दयानन्द के आर्थिक सिद्धान्तों के आधार पर दूर करना चाहते हैं तथा समाज को जाति-पांति, प्रान्त-वाद और अन्य संकीर्ण रुढ़ियों से दूर करना चाहते हैं आदि जनश्रुति मेरे मन में जिज्ञासा उत्पन्न कर रही थी। इसी कारण परिषद् के कार्यकर्त्ताओं से सम्पर्क बनाने के लिये २० जुलाई को गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ पहुँचा।

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ पहाड़ की चोटी पर विशाल दुर्ग के आकार में स्वामी श्रद्धानन्द जी के महान् व्यक्तित्व का प्रबल प्रमाण है। भारत की राजधानी से १० मील की दूरी पर स्थित सुदृढ़ भवनों तथा चारों ओर प्रसृत पर्वतशिलाओं से सहज में अनुमान लग जाता है कि स्वामीजी यहाँ क्या करना चाहते थे, और किस प्रकार कर्मशील विद्वान् युवक तैयार करके वैदिक संस्कृति की स्थापना करने का उनका संकल्प था? शायद गुरुकुल की इस पृष्ठभूमि को विचारकर ही परिषद् के कार्य-कर्त्ताओं ने अधिवेशन के लिये इस स्थान का चयन किया होगा।

भारत के अनेक प्रान्तों से एकत्रित युवकों के अधि-वेशन में जहाँ युवकोचित उत्साह अपनी चरम सीमा पर था वहां विचार गाम्भीर्य भी विद्वानों में कम न था। प्रत्येक युवक अपने विचारपूर्ण उत्तरदायित्व के साथ व्यक्त कर रहा था। आर्यसमाज के सिद्धान्तों को मूर्त रूप देने के लिये जो हृदय की तड़प और मौलिक विचार मुझे वहाँ युवकों से सुनने को मिले वे मेरे लिये अपूर्व थे। आर्य-समाज के संगठन में आये शैथिल्य को दूरकर सुदृढ़ एवं सक्रिय बनाने के लिये त्रिसूत्री कार्यक्रम भी युवकों की विशेष सूझ बूझ तथा योग्यता का परिचायक है, आर्य समाज के नेताओं को उसे अविलम्ब स्वीकार कर लागू कर देना चाहिये।

स्नेह तथा अनुशासन

आज का युवक उद्दण्डता एवं उच्छृंखलता के लिये कुख्यात है, किन्तु आर्य युवकों का चरित्र जिस प्रकार का होना चाहिये, मुझे परिषद् के युवकों में उसी के दर्शन हुये। अपनी ही बात को मनवाने का दुराग्रह, पद प्राप्ति के लिये बेचैनी आदि से दूर, एक दूसरे का परस्पर सम्मान करते हुये अपनी भावना को स्पष्ट व्यक्त करना और दूसरे के विचारों को समझने का यत्न करना, आदि योग्य-ताओं से मैं विशेष प्रभावित हुआ। आगामी वर्ष के पदा-धिकारी निर्वाचन का दृश्य भी अपूर्व था। एक युवक ने खड़े होकर सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के प्रधान पद के लिये एक नाम उपस्थित किया, दूसरा कोई युवक खड़ा होकर प्रस्तुत नाम का समर्थन करना ही चाहता था कि तालियों की गड़गड़ाहट तथा हर्षध्वनि से वातावरण गूंज उठा। अन्य चुनाव के सब अधिकार प्रधानजी को दे दिये जायें, यह प्रस्ताव भी क्षण भर में सर्वसम्मति से पारित हो गया और प्रधान महोदय ने खड़े होकर सार्व-देशिक तथा प्रान्तीय स्तर की कार्यकारिणी की घोषणा कर दी। इन सब कार्यक्रमों में पांच मिनट से अधिक समय नहीं लगा। सभी युवक पदाधिकारियों के चुनाव से प्रसन्न थे, सन्तुष्ट थे तथा आगामी वर्ष के प्रति मधुर आशा से प्रफुल्लित दिखाई दे रहे थे। अधिवेशन की कार्य-वाही का संयोजन श्री प्रो० श्यामराव जी कर रहे थे, जिनके ओजस्वी शब्दों से प्रत्येक व्यक्ति प्रभावित होता था। युवकों में सहोदर भाइयों से अधिक स्नेह परिलक्षित

हो रहा था। सबका जीवन सादा सात्त्विक एवं प्रभावशाली था। भोजनशाला में जाकर और भी अधिक आश्चर्य हुआ। शाक में नमक मिर्च तथा अन्य स्वादु मसाले डाले ही नहीं गये थे। मांगने पर पिसा हुआ नमक तथा नीम्बू का प्रबन्ध था। मेरे लिये इस प्रकार का भोजन देखने का अवसर प्रथम ही था।

अधिवेशन का वातावरण जहाँ सबल एवं पवित्र था वहाँ दो-तीन व्यक्ति "मन्थरा" का कार्य भी कर रहे थे। उन्होंने घूम-घूम कर पांच-सात युवकों के कान के पास फुसफुसा कर भ्रम उत्पन्न करने का असफल प्रयास भी किया। किन्तु वातावरण की सजीवता के कारण दूषित कीटाणुओं का प्रभाव नाम मात्र को भी नहीं हुआ, और वे बेचारे अपने मनोरथ के प्रति शीघ्र ही निराश हो गये।

आर्य युवक परिषद् के अधिवेशन को देखकर मुझे विशेष हर्ष हुआ है। मेरा विश्वास है कि यदि आर्य युवक ज्ञान वृद्ध अनुभवी विद्वानों के विचारों का मान करते हुये, पक्षपातपूर्ण दलीय झगड़ों से पृथक् रहकर इसी उत्साह से जुटे रहे तो अवश्य ही मार्ग प्रशस्त रहेगा। भगवान् आर्य युवकों की विवे -शक्ति को प्रबुद्ध रखें।

●

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्

आय-व्यय विवरण १ अप्रैल १९६८ से ३१ मार्च १९६९ तक

आय

	रु० पै०
१. दान	१५,९२७. १२
२. मोटर साईकिल मध्ये दान	६,११४. ४३
३. दो साईकिल मध्ये दान	३७६. ००
४. युवक क्रान्ति अभियान	५,५१५. ००
५. साहित्य बिक्री	१,०१४. ८५
योग	२८९४७. ४०

व्यय

	रु० पै०
१. वस्तु भंडार	२९०. ४०
२. साहित्य	३,६८५. २४
३. साईकिल (२)	३७६. ००
४. मार्ग व्यय	४,२१८ १६
५. मोटर साईकिल	६,११४. ४३
६. कार्यालय सम्मेलन व्यय	३,८६१. ३३
७. डाक तार दूरभाष पर व्यय	१५९. १५
८. कार्यकर्ताओं पर व्यय	५,६०५. ४९
९. मोटर साईकिल तेल, मरम्मत, इन्स्योरेन्स आदि	६५४. ८१
१०. छपाई कागज आदि	७८१. ४५
११. विज्ञापन	१,५६२. २३
१२. विविध	५९७. २६
योग	२७,९०८. २८
शेष	१,०३९. १२
योग	२८,९४७. ४०

राजधर्म [पाक्षिक]

आय व्यय विवरण ५ नवम्बर १९६८ से ३१ मार्च १९६९ तक

आय

	रु० पै०
१. ग्राहक शुल्क	१७,५७०. ००
२. रामप्रसाद बिस्मिल विशेषांक बिक्री	१,५००. ००
३. राष्ट्रवादी दयानन्द विशेषांक बिक्री	१,५००. ००
४. सत्यार्थ प्रकाश	१,०००. ००
५. सम्राट प्रेस का जमा	१,५१५. ००
६. पी० ओबराय का जमा	१,३७६. ३८
७. विज्ञापन	१,५५०. ००
योग	२६,०११. ३८

व्यय

१. राजधर्म छपाई	५,०१८. ३७
२. कागज	४,३३४. ९७
३. डाक व तार	९४१. ७८
४. विज्ञापन	१०. ००
५. राजधर्म कार्यालय	१,०००. ००
६. सत्यार्थ प्रकाश	१,३००. ००
७. टंकण यंत्र	५००. ००
८. धरोहर	३,०००. ००
९. विज्ञापन मध्ये प्राप्तव्य	१,५५०. ७०
१०. विविध	३६. ००
योग	१७,६९९. ८२
शेष	८,३११. ५६
योग	२६,०११. ३८

कृष्णवत्स प्रभाकर—(हिसाब परीक्षक)

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्‌ राजधर्म (पाक्षिक) पत्र सम्बन्धी

१९६९-७० का बजट

आय

	रु० पैं०
१. ग्राहक शुल्क	७०,०००. ००
२. विज्ञापन	१०,०००. ००
३. विशेषांक	१०,०००. ००
४. दान	१०,०००. ००
योग	१००,०००. ००

व्यय

१. छपाई	३५,०००. ००
२. कागज	३५,०००. ००
३. डाक	५,०००. ००
४. कार्यालय	५,०००. ००
५. विज्ञापन	१०,००. ००
६. ब्लाक	२,०००. ००
७. कमीशन	२,०००. ००
८. मार्ग व्यय	५,०००. ००
९. लाभ	६,०००. ००
१०. विविध	१,०००. ००
योग	१००,०००. ००

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्‌

१९६९–७० का बजट

आय

	रु० पैं०
१. दान	१००,०००. ००
योग	१००,०००. ००

व्यय

१. कार्यालयों पर व्यय	७,०००. ००
२. मार्गव्यय	१,००००. ००
३. कार्यकर्ता व्यय	१८,०००. ००
४. छपाई कागज	१८,०००. ००
५. डाक तार दूरभाष	२,००० ००
६. मोटर साईकिल	१०,०००. ००
७. जीप मरम्मत तेल आदि	५,०००. ००
८. विज्ञापन	१,००० ००
९. साईकल यन्त्र	२,०००. ००
१०. प्रशिक्षण केन्द्र एवं सम्मेलन शिविर आदि	१२,०००. ००
११. जीप	१५,०००. ००
योग	१००,०००. ००

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्
के
संविधान का प्रारूप

१. नाम—इस संगठन का नाम 'सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्, होगा। सुविधा एवं व्यवहार की दृष्टि से इस संविधान में उपर्युक्त नाम सर्वत्र 'परिषद्' शब्द से लक्षित होगा।

२. कार्यक्षेत्र—परिषद् की शाखाएँ संसार के सभी देशों में और विशेषकर आर्यावर्त में होंगी।

३. कार्यालय—परिषद् का मुख्य कार्यालय आर्यावर्त (भारत) की राजधानी दिल्ली में होगा। सुविधानुसार उप-कार्यालय अन्य स्थान पर भी हो सकेगा।

४. उद्देश्य—युवक शक्ति को संगठित कर महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित वैदिक मान्यताओं की स्थापना करना।

५. उद्देश्यपूर्ति के प्रकार –

१. आर्यसमाज तथा आर्ययुवक संगठनों का सहयोग प्राप्त करना।

२. युवकों में चारित्रिक तथा राष्ट्रिय विचारों का प्रचार करना।

३. वादविवाद व्याख्यान तथा निबन्ध लेखन द्वारा युवकों में तर्क एवं वाक् शक्ति को बढाना तथा स्वाध्याय मन्दिरों की स्थापना करना।

६. ब्रह्मचर्य साधना के लिये कार्यकर्ता प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन करना।

५. शारीरिक और आत्मिक उन्नति के लिये योगाश्रम व्यायामशालायें, अखाड़े आदि खोलना तथा खेल प्रतियोगिताओं का आयोजन करना।

६. आत्म-रक्षा के लिये राजकीय अथवा सामाजिक संस्थाओं के सहयोग से शस्त्र-प्रशिक्षण की व्यवस्था करना।

७. युवकों को वर्णाश्रम की दीक्षा देकर व्यवसाय तथा जीवन लक्ष्य सम्बन्धी तथा भौतिक विद्याओं विषयक तकनीकी प्रशिक्षण देना दिलवाना।

८. संस्कृत तथा आर्य भाषा का प्रयोग, प्रचार तथा प्रसार करना तथा करवाना।

९. बाल-विवाह, दहेज-प्रथा, छूत छात, जाति-पाति कामुकता-प्रधान सिनेमाओं, अश्लील साहित्य आदि सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने का प्रयत्न करना।

१०. मादक द्रव्यों तथा अभक्ष्य पदार्थों के सेवन तथा अनावश्यक व्यय से बचाकर भोगविलास के जीवन का तिरस्कार कर सादे जीवन की प्रवृत्ति बढ़ाना।

११. सुयोग्य किन्तु साधनहीन आर्य छात्रों की सहायतार्थ ट्रस्ट बनाना।

१२. आयसमाज के कार्यक्रमों में सहयोग करना।

१३. गुरुकुल, वानप्रस्थ आश्रम तथा वैदिक साधनाश्रम की स्थापना करना।

१४. चल अचल सम्पत्ति प्राप्त करना।

१५. विचार प्रसारण हेतु पत्राचार पाठ्यक्रम, पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन करना।

१६. विभिन्न कार्यक्रमों को चलाने के लिये समिति-उपसमिति गठन करना।

१७. अराष्ट्रीय प्रवृत्तियों और विधर्मियों के षड्यन्त्र के विरुद्ध आर्यों को संगठित करना और "शुद्धि आन्दोलन में सक्रिय सहयोग करना।

१८. जन्म के आधार पर सामाजिक, आर्थिक अथवा राजनैतिक अधिकारों को समाप्त कर गुण, कर्म, स्वभाव पर आधारित अधिकारों को प्रश्रय देना।

१९. उद्देश्य पूर्ति हेतु न्यायोचित संघर्ष करना।

६. सदस्यता—

१. सदस्य—जो व्यक्ति परिषद् के उद्देश्य तथा कार्यक्रम में आस्था रखता हों तथा परिषद् की स्थानीय शाखा को एक रुपया वार्षिक शुल्क देता हो।

२. सक्रिय सदस्य—परिषद् को (२४) घंटे यानी पूरा समय देने वाला कार्यकर्ता कार्यकारिणी की स्वीकृति पर सक्रिय सदस्य माना जायगा। इस की आयु कम से कम १८ वर्ष की होगी।

३. प्रतिष्ठित सदस्य—किसी भी सक्रिय सदस्य

के अनुमोदन तथा कार्यकारिणी के ज्ञान से किसी भी व्यक्ति को कार्यकारिणी दानशीलता, विद्वत्ता, योग्यता तथा संगठन के लिये उपयोगिता, राष्ट्रीय तथा सामाजिक सेवा के आधार पर प्रतिष्ठित सदस्य घोषित कर सकती है।

७. संगठन—परिषद का संगठन स्थानीय माण्डलिक तथा प्रान्तीय सार्वदेशिक स्तर पर होगा।

स्थानीय—कम से कम ११ सदस्य मिल कर स्थानीय परिषद का गठन करेंगे। जो अपनी व्यवस्था हेतु प्रधान मन्त्री तथा कोषाध्यक्ष एवं आवश्यकतानुसार अन्तरंग सभा का निर्वाचन करेंगे।

मण्डलीय—एक मण्डल (जिले) में चालू समस्त शाखाओं का संचालन एवं व्यवस्था सक्रिय सदस्य के नेतृत्व में होगी जो मण्डल-प्रधान शब्द से लक्षित किया जायगा। सक्रिय सदस्य के अभाव में एक मण्डल-प्रधान के अन्तर्गत एक से अधिक मण्डल भी हो सकेंगे। मण्डलाधिपति का कार्य परिषद् की रीति-नीति का पालन करवाना एवं स्थानीय शाखाओं से सम्बन्ध स्थापित करना होगा। परिषद् के लिये वार्षिक दान-संग्रह भी एक मुख्य कर्तव्य होगा। स्थानीय शाखाओं की समस्याओं का समाधान एवं स्थानीय शाखा के सदस्यों की भावनाओं को प्रधान परिषद् तक पहुंचाना तथा स्थानीय शाखाओं को सर्व प्रकार व्यवस्थित रखना मुख्य कर्तव्य होंगे। स्थानीय शाखाओं पर मण्डलाधिपति का निर्णय माननीय होना। असंतुष्टि की अवस्था में प्रधान परिषद् का निर्णय सर्वमाननीय होगा।

मण्डल-प्रधान की सहायता के लिये एक कार्यकारिणी होगी जिसमें मन्त्री, कोषाध्यक्ष के अतिरिक्त अन्तरंग सदस्य होंगे।

प्रान्तीय—एक प्रान्त के सभी मण्डल-प्रधानों के ऊपर एक प्रान्तीय कार्यकारिणी का गठन होगा जिसमें एक सक्रिय कार्यकर्ता के नेतृत्व में मन्त्री, कोषाध्यक्ष तथा अन्तरंग सदस्य सम्मिलित होंगे।

सार्वदेशिक परिषद्

सार्वदेशिक स्तर पर सभी व्यवस्था के लिये एक कार्यकारिणी होगी। कार्यकारिणी की रीति नीति व्यवस्था नियुक्ति एवं अपदस्थता सम्पति रक्षण तथा न्याय आदि के प्रति जिम्मेदार होगी। कार्यकारिणी की सलाह पर प्रधान द्वारा घोषित नीति एवं वक्तव्य व स्पष्टीकरण ही के लिये परिषद् बाध्य होगी।

परामर्शदातृ समिति

प्रधान अपने निजी ज्ञान अथवा किसी सदस्य के अनुमोदन पर देशी अथवा विदेशी सक्रिय एवं प्रतिष्ठित सदस्यों का विस्तृत परिचय प्राप्त कर परिषद् के हित में परामर्श योग्य सदस्यों की एक परामर्शदातृ समिति का गठन करेंगे। जिन सदस्यों को बुलाकर अथवा पत्र द्वारा विचार-विमर्श कर नीति निर्माण करेंगे। आवश्यकतानुसार मण्डलाधिपतियों से भी विचार विनिमय करते रहेंगे।

कार्य के संचालन तथा नीति प्रसारण करने के लिये एच्छिक कार्यालय में काम करने वाले कर्मचारी अथवा अधिकारी की नियुक्ति सक्रिय सदस्यों में से करेंगे। कार्य के विभाग के अनुसार उन्हें विशेष-विशेष कार्य के मन्त्री आदि नियुक्ति कर सकेंगे। उन्हें प्रधान अपने अधिकार भी हस्तान्तरित (डेलीगेट) कर सकेंगे। जो स्वतन्त्र रूप से अथवा कृते प्रधान कार्य करेंगे। सक्रिय एवं प्रतिष्ठित सदस्यों में से आवश्यकतानुसार प्रधान, उपसमिति भी किसी कार्य विशेष के लिये बना सकेंगे।

न्याय सभा

व्यवस्था एवं अन्य विषयों पर मतभेद पर प्रकाश एवं स्पष्टीकरण प्राप्त करने के लिये प्रधान महोदय एक न्याय सभा गठित करेंगे जिनमें एक कानूनी विशेषज्ञ, एक संन्यासी एवं एक वानप्रस्थी होगा। न्याय सभा से विचार-विमर्श कर दिया निर्णय अन्तिम होगा किन्तु प्रभावित व्यक्ति द्वारा पुष्ट तथ्यों के आधार पर प्रधान को पुनर्विचार के लिये आवेदन कर सकेंगे। प्रधान महोदय उस पर पुनर्विचार करके अपना निर्णय देंगे अथवा उस आवेदन को ही अस्वीकृत कर देंगे।

कार्यकारिणी

परामर्शदातृ समिति से प्राप्त परामर्शों पर निर्णय लेने के लिए प्रधान परिषद् सक्रिय सदस्यों में से योग्य व्यक्तियों की कार्यकारिणी नियुक्त करेंगे जिसकी संख्या कम से कम ११ होगी। इस कार्यकारिणी में प्रधान के अन्तर्गत कार्यालय में कार्य करने वाले मंत्री आदि भी सदस्य हो सकेंगे।

वर्ष

परिषद् का वर्ष सृष्टि सम्वत् होगा जो प्रति वर्ष चैत्र

शुक्ल प्रतिपदा से आरम्भ हुआ करेगा। पत्र-व्यवहार में सदैव सृष्टि संवत् तथा ईसवी संवत का उपयोग हुआ करेगा।

मतदाता मंडल

देश-विदेश में कार्यरत केवल सभी सक्रिय सदस्य ही जिसमें अधिकारी भी सम्मिलित हैं मतदाता मंडल का निर्माण करेंगे।

चुनाव

१—परिषद् के प्रधान का चुनाव गुप्त मत द्वारा होगा।
२—चुनाव सक्रिय सदस्यों की सभा बुला कर होगा।
३—किसी कारणवश किसी सक्रिय सदस्य के उपस्थित न हो सकने पर मत-पत्र डाक द्वारा भी भेजा जा सकेगा।
४—मत-पत्र सीधे केन्द्रीय कार्यालय को भेजे जायेंगे।
५—चुनाव बहुमत से स्वीकार किया जायेगा।
६—नव-निर्वाचित प्रधान अपने कार्यालय का भार चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को आवश्यक रूप से ले लिया करेंगे।

वार्षिक अधिवेशन

प्रत्येक वर्ष परिषद् का एक वार्षिक अधिवेशन शिवरात्रि के अवसर पर हुआ करेगा। इस अधिवेशन की प्रधानता आवश्यक रूप से नव-निर्वाचित प्रधान किया करेंगे।

नियुक्तियाँ

प्रत्येक मण्डल के लिये मण्डलाधिपति तथा प्रान्तों के लिये प्रान्ताधिपति की नियुक्तियां प्रधान महोदय सक्रिय सदस्यों में से किया करेंगे।

नियुक्त व्यक्ति को किसी आपत्ति पर कारण बताने का अवसर दें तथा बयान संतोषजनक न होने पर प्रधान ऐसे व्यक्ति को अपदस्थ भी कर सकेंगे।

प्रधान को अपदस्थ करना

प्रधान के विरुद्ध सक्रिय सदस्यों की कुल संख्या के २५% सदस्यों द्वारा प्रधान में अविश्वास प्रकट करते हुए, को हटाने विषयक आवेदन करने पर प्रधान महोदय चुनाव नियमों के आधार पर सक्रिय सदस्यों का मत जानकर आवश्यक आचरण करेंगे। निर्णय कुल सक्रिय सदस्यों की संख्या के तीन चौथाई मतों के बहुमत से होगा।

प्रधान का कार्यकाल

प्रधान का कार्यकाल केवल एक वर्ष होगा। कोई भी प्रधान अपने पद पर निरन्तर ३ वर्ष से अधिक नहीं रह सकेगा।

अयोग्यता

परिषद् के प्रधान तथा अन्य नियुक्त अधिकारी आवश्यक रूप से किसी भी राजनैतिक संगठन के सदस्य नहीं होंगे।

अचल सम्पत्ति

परिषद् की सार्वदेशिक मांडलिक प्रान्तीय तथा स्थानीय स्तर पर प्राप्त समस्त अचल सम्पत्ति का पंजीकरण सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद के नाम में होगा।

चल सम्पत्ति

परिषद के केन्द्रीय, प्रान्तीय मांडलिक तथा स्थानीय स्तर पर प्राप्त अथवा खरीदी हुई चल सम्पत्ति के प्रयोग का अधिकार प्राप्त कर्ता यूनिट को होगा।

धनसंग्रह

परिषद की स्थानीय यूनिट अपने आवश्यकतानुसार धनसंग्रह कर व्यय करती रहेगी।

श्रावणी पर्व से लेकर विजय-दशमी पर्व के समय तक प्रत्येक स्थानीय यूनिट केन्द्रीय परिषद की रसीद बुकों पर केन्द्र के लिए धनसंग्रह करेंगी। यह सभी धन विजय-दशमी के एक सप्ताह बाद तक आवश्यक रूप से केन्द्र को भेज दिया जायेगा अथवा केन्द्र के आदेश पर रुपया केन्द्र के नाम में किसी स्थानीय बैंक में जमा करवा दिया जायेगा। इस अवसर पर प्रत्येक सदस्य से आशा की जाती है कि वह अपनी वार्षिक आय का शतांश दान रूप देंगे तथा जनता-जनार्दन से अधिकाधिक धन प्राप्त करेंगे।

भरण-पोषण

सक्रिय सदस्यों के भरण-पोषण का व्यय केन्द्रीय परिषद् सहन करेगी।

विशेष प्रक्रिया नियम

परिषद् के संविधान में अंकित व्यवस्थाओं के स्पष्टीकरण एवं पालन करने हेतु विशेष प्रक्रिया नियम समय एवं आवश्यकतानुसार बना कर प्रधान परिषद् प्रचलित कर सकेंगे।

संशोधन

परिषद के उद्देश्य पालन में सहायक किसी नवीन व्यवस्था को जोड़ने एवं संगठन हानिकारक किसी व्यवस्था को समाप्त करने व संशोधन करने के सुझाव कोई भी सदस्य प्रधान के पास भेज सकता है। प्रधान महोदय आवश्यक विचार-विमर्श कर मतदाता मंडल के बहुमत की स्वीकृति प्राप्त कर व्यवस्थाओं में नवीन लगाव संशोधन तथा समाप्ति आदि कर सकेंगे।

विलयीकरण

प्रधान परिषद् कार्यकारिणी की स्वीकृति प्राप्त कर किसी भी अन्य युवक संगठन का विलय सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् में कर सकेंगे ऐसे विलय होने वाले संगठन की सभी चल तथा अचल सम्पत्ति का उत्तराधिकारी सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् को होगा।

●

ध्यान दें !

संविधान का प्रारूप आपके हाथों में है। कृपा करके इसको ध्यान से पढ़कर अपने अमूल्य सुझाव स्पष्ट लिखकर १५ अगस्त से पहले 'सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् मन्दिर मार्ग नई दिल्ली-१' भेजने का कष्ट करें। आपके सुझावों पर गम्भीरता से विचार होगा। विशेष ध्यान देने की बात चुनाव प्रणाली है जिसमें केवल सक्रिय सदस्य मतदाता मण्डल का निर्माण कर अपने बीच से एक प्रधान का निर्वाचन करते हैं और पश्चात् प्रधान अपनी कार्यकारिणी की नियुक्ति करता है। प्रान्तों के प्रधान तथा जिला प्रधान भी नियुक्त ही होते हैं। आशा है आपका सहयोग हमें अवश्य मिलेगा !

—मन्त्री

राजधर्म का महत्व

मज्जेत् त्रयीदण्डनीतौ हतायां सर्वे धर्माः प्रक्षेपेयुर्विबुद्धाः।
सर्वे धर्माश्चाश्रमाणां हताः स्युः क्षात्रे त्यक्ते राजधर्मे पुराणे॥
सर्वे त्यागा राजधर्मेषु दृष्टासर्वा दीक्षा राजधर्मेषु चोक्ताः।
सर्वाविद्या राजधर्मेषु युक्ताः सर्वे लोका राजधर्मे प्रविष्टाः॥

—महाभारत, शांतिपर्व २८-२९

जब राजधर्म निर्जीव हो जाता है तो वेद डूब जाते हैं। सभी विकसित धर्मों (सभ्यता का आधार आदि) का पूर्णतः पराभव हो जाता है। जब परम्परागत राजधर्म का परित्याग कर दिया जाता है सर्व आश्रम व्यवस्थायें खण्डित हो जाती हैं। राजधर्म में ही सर्वत्याग परिलक्षित होते हैं। सम्पूर्ण दीक्षायें राजधर्म में ही निहित हैं। राजधर्म में ही सभी विद्यायें समाहित हैं और राजधर्म में ही सर्वलोक केन्द्रित हैं।

क्या भारत में क्रान्ति होगी ?

●अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार

हमारे देश में अनेक फैशन प्रचलित हैं। इनमें एक है : 'मंचीय भाषण'। इसका अर्थ है कि वक्ता जिस पर स्वतः तो विश्वास नहीं करता, परन्तु श्रोताओं का हृदय जीतने के लिए उस बात को लच्छेदार और भावपूर्ण सुन्दर भाषा में कहता है और श्रोता मंत्र-मुग्ध होकर उसको सुनते हैं और उस पर जोरों की करतल-ध्वनि करते हैं।

एक-दो उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हो जाती है :—

१—वक्ता "सत्य सनातन वृद्ध भारतवर्ष" इस वाक्यांश का बार-बार अपने भाषण में प्रयोग करते हैं। भारतीयता के ह्रास पर नक्राश्रु भी बहाते हैं। परन्तु दिल्ली में वर्षों रहने के बाद भी अंग्रेजी या राष्ट्रभाषा से भिन्न भाषा में भाषण देते हैं।

२—एक वर्ग विशेष के हितों की रक्षा के लिए जोरदार भाषण देते हुए वक्ता आवेश में वर्गहीन समाज की स्थापना की बात कहता है, और उसका मनोरम एवं हृदयग्राही चित्र अपने श्रोताओं के मन में खींचता है। एक नूतन आशा जगाकर करतल-ध्ववि के बीच भाषण समाप्त करता है।

कोठियों से झोंपड़ियों में

इस प्रकार जब कोई विक्षोभकारी घटना घटती है, और जन-विक्षोभ प्रचण्ड रूप धारण करता हुआ दिखाई देता है, तो उस पर पानी डालने के उद्देश्य से कहा जाता है, धीरज रखो, भारतीय जन-क्रान्ति आ रही है। यह एक अपूर्व महाक्रान्ति होगी। विश्व के इतिहास में बेजोड़ और अनूठी होगी। सामाजिक एवं आर्थिक विषमतायें दूर हो जायेंगी। ऊँच-नीच का भाव सदा के लिए जाता रहेगा और अमीर-गरीब का भेद भी न रहेगा। नवीन भारतीय समाज में जाति-भेद और छुआ-छूत भी मिट जायगा। यह कह कर वक्ता भारतीय जनता को एक नूतन आशा अवश्य प्रदान करता है, परन्तु जनता को मनोवृत्ति को क्रान्तिकारी नहीं बनाता। क्योंकि उसका अपना जीवन क्रान्ति से बहुत दूर होता है। कोठियों और बंगलों में रहने वाले क्या कभी झोपड़ियों में रहने को तैयार होंगे? इससे क्या यह प्रमाणित नहीं होता कि भारतीय जनता की प्रकृति में क्रान्ति की भावना का ही अभाव है।

संशोधन, सुधार और परिवर्तन को क्रान्ति नहीं कह सकते। क्योंकि ये मूल को नहीं बदलते। क्रान्ति की सफलता इसमें है, कि वह पुरानी व्यवस्था को समाप्त करके नवीन व्यवस्था स्थापित करे। आंधी और झंझावात तथा मन्द-मन्द मलयानिल में जो अन्तर है, वही अन्तर क्रान्ति और सुधार में है। परिवर्तन धीरे-धीरे शनैः-शनैः भी हो जाता है, पर क्रान्ति में मन्द गति को स्थान नहीं है, यह सुनार की खुट-खुट नहीं है, यह तो लोहार के हथौड़े या घन का प्रहार है। क्रान्ति में महान् वेग है। बड़ी बेचैनी है। उसमें सन्तोष नहीं है। वह झटपट क्षण भर में, निमेष भर में व्यवस्था को उलटने में विश्वास करती है।

प्रश्न यह है कि क्या भारतीय जनता की प्रकृति और प्रवृत्ति इस ढंग की है, जिसको कहा जाय कि वह क्रान्ति के योग्य है?

एक उदाहरण से बात स्पष्ट हो जाएगी :—

जयप्रकाश नारायण और उनकी पार्टी समाजवादी दल का १९५१ में एक नारा था :—

"इस सड़ी गली सरकार को
एक धक्का और दो।"

इस नारे से कनाट प्लेस गूंज उठा था। इस घटना को आज १८ साल बीत गए। क्या सड़ी गली सरकार गिर गई? चीन से पराजित, पाकिस्तान से लांछित एवं एंग्लो-अमेरिका से अपमानित

सड़ी गली सरकार आज भी मौजूद है। इसको धक्का देने वाले ही राजनीति के क्षेत्र से धकेल दिए गए। क्या यह क्रान्तिकारी मनोवृत्ति का परिणाम है ?

फ्रेंच राज्य-क्रान्ति १७९३ से चलती हुई, १८७० में समाप्त हुई, जब राजवंशों का हमेशा के लिए अन्त हो गया। ऐसा अन्त हुआ कि डी गाल भी राजवंश स्थापित करने का साहस न कर सका यद्यपि उसने नेपोलियन का पथ ग्रहण किया।

अनुपयुक्त, अनुपयोगी, असामयिक व समय की मांग के प्रतिकूल सामाजिक एवं आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था को क्रान्ति आमूल-चूल बदल देती है, या नष्ट कर देती है। पुरानी व्यवस्था की जगह क्रान्तिकारियों की कल्पना के मनोनुकूल नूतन व्यवस्था की स्थापना होती है। क्रामवेल ने चार्ल्स प्रथम को फांसी चढ़ाकर ब्रिटिश क्रान्ति को जन्म दिया। राजा नाम-मात्र का रह गया, शोभा-मात्र रह गया।

संयुक्त राज्य अमेरिका में क्रान्ति हुई। यूरोपियन उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद को अमेरिका से हट जाना पड़ा।

क्रान्ति की सफलता के लिए सिद्धान्त और आदर्श के प्रति दृढ़ निष्ठा, अखण्ड श्रद्धा, अटूट विश्वास और उसको मूर्त रूप देने के लिए प्राण तक देने का संकल्प होना चाहिए। सोडावाटरी जोश से क्रान्ति नहीं हो सकती। क्रान्ति पराजित होना नहीं जानती। वह रुकती नहीं, सदा आगे बढ़ती रहती है। सदा तूफानों वेग रहे, यह जरूरी नहीं। पर संघर्ष का किसी न किसी रूप में जारी रहना आवश्यक है।

प्रचण्ड राष्ट्रवाद

इसके सिवाय अपने देश भारत के प्रति उत्कट अनुराग होना चाहिए। प्रचण्ड राष्ट्रवाद की भावना आवश्यक है। सोवियत रूस की सेना एक बार जापान से पराजित हुई थी। रूस में शौर्य की कमी नहीं थी। पर सेना-नायक विश्वासघाती और रिश्वतखोर थे।

१९१४ के महायुद्ध में नेपोलियन को पराजित करने वाली रूसी सेना कैसेर में हार रही थी। रूसी साम्राज्य का एक भाग निकल गया। लेटविया लिथूनिया, फिनलैण्ड, पोलैण्ड आदि स्वतन्त्र हो गए। लेनिन के कम्युनिज्म ने पराजित रूस को पराजय की लज्जा बचाने के लिए आँचल दिया और १९४५ में जापान को पराजय करके साभिमान स्तालिन ने कहा, 'हमारी पराजय का प्रतिशोध हो गया।' रूस में कम्युनिज्म राष्ट्रवाद के सहारे आया और इस कारण पचास साल बाद भी वह वहाँ टिका हुआ है। राष्ट्रीय बानो उसने धारण कर लिया है। कार्ल मार्क्स नहीं, पीटर दी ग्रेट आराध्य देव हैं।

भारत में क्या प्रचण्ड राष्ट्रवाद है ? क्या यहाँ भारतीयता के कहीं दर्शन होते हैं ? कृष्णा-गोदावरी के पानी का विवाद, नर्मदा के जल के उपयोग का विवाद आदि यह सब क्या सूचित करता है ? महाराष्ट्र और मैसूर की सीमा का विवाद लीजिए। इसके कारण जो उत्पात हुए, वह क्या सूचित करते हैं ? भारत में क्या कोई अपने को भारतीय कहता है ? इस देश का संविधान तक इस देश का नाम भारत नहीं कहता। इस देश की सरकार, संयुक्त राष्ट्र एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं में इस देश का 'भारत' नाम कम-से-कम पांच हजार साल पुराना है। परन्तु इस देश की सरकार देश का प्राचीन नाम स्वीकार न करके विदेशियों के दिये नाम से ही गुजारा करती है। क्या यह राष्ट्रवाद को उत्पन्न होने दे सकता है ? इस देश के नाम से ही जब नफरत है, तब भारतीय राष्ट्रवाद कैसे उत्पन्न हो सकता है ? पानीपत की पहली लड़ाई के बाद से भारतीय राष्ट्रवाद तिमिरावृत्त और मेघाच्छन्न रहा है। भारतीय राष्ट्रवाद को मेघमुक्त करने के लिए किए गए प्रयत्नों को विफल बनाने में ही जीवन की सफलता एवं कृतार्थता मानी गई।

विदेशी शासन के समान वर्तमान शासन ने भी भारतीय राष्ट्रवाद को मेघमुक्त नहीं होने दिया। **वर्तमान सरकार आधुनिक भारत की जीवन-**

धारा को साढ़े तीन अरब साल पुरानी भारतीय जीवन-धारा से जोड़ने को तैयार नहीं है। वह लोक गीत और लोक नृत्यों का संग्रह करती है। आदिवासियों के मनोरंजन के लिये उनकी पोशाक भी धारण कर लेती है परन्तु 'वेद' को राष्ट्रीय सम्पत्ति नहीं मानती और न उसकी रक्षा करती है। वेद मंत्रों की ध्वनि से भारतीव आकाश को गुंजरित करना तो दूर रहना। वेद प्राचीनतम ग्रन्थ हैं, यदि भारत वेद की रक्षा न करेगा, तो और कोई रक्षा न करेगा। उसकी रक्षा करने का अर्थ है, भारतीय जीवन-धारा को अविच्छिन्न रखना और भारतीयों में यह गर्व उत्पन्न करना कि वह विश्व के सबसे पुराने राष्ट्र के नागरिक हैं। उनकी परम्परा गौरवमयी है। वर्तमान शासन इसको करने को उद्यत नहीं है। **क्योंकि यह देश वस्तुतः स्वाधीन नहीं है। १५ अगस्त १९४७ को केवल शासन का हस्तान्तरण हुआ है। इम्फाल से कोहिमा तक १५०-१६० मील लम्बे मोर्चे पर आजाद हिन्द फौज और सेनानी नेताजी सुभाषचन्द्र बोस को लड़ते देखकर भयभीत ब्रिटिश पूंजीवाद ने भारत में विकसित हो रहे पूंजीवाद से सांठ-गांठ की और ब्रिटिश पूंजी की रक्षा करने के लिए अपने एजेण्टों, मुनीमों, गुमाश्तों और कारिन्दों के हाथ में सत्ता सौंप दी। इसी कारण इस देश में आज भी अंग्रेजी है।** ब्रिटिश कानून प्रचलित हैं। विधि मंत्री उनको समाप्त करने की बात भी सोचने में असमर्थ हैं। **मनु, नारद, बृहस्पति सदृश स्मृतिकारों का देश ब्रिटिश कानूनों का अनुवाद करे, यह कहते हुए भारतीय नेताओं को शर्म तक** नहीं आती। जिस देश के नेताओं में इतना भी आत्म-विश्वास नहीं, उस देश की जनता क्या क्रान्ति कर सकती है ?

क्यों कि इस्लाम प्यारा था

यहाँ की सड़कों के नाम किस की स्मृति दिलाते हैं ? बाबर से लेकर बहादुरशाह के नाम पर सड़कें हैं। परन्तु हुमांयू को भारत से खदेड़ देने वाले शेरशाह सूरी, अकबर के सामने झुकने से इन्कार कर देने वाले राणा प्रताप, औरंगजेब की प्रभुता मानने से इन्कार करने वाले राठौर वीर दुर्गादास के नाम पर कोई सड़क नहीं है। औरंगजेब के नाम पर सड़क है, किन्तु बोटी-बोटी कटा देने वाले वीर सम्भाजी के नाम पर कोई सड़क नहीं है, यह क्या अकारण है ?

ब्रिटिश शासकों के नाम पर अभी तक सड़कों के नाम चल रहे हैं। यदि हैली रोड 'टालस्टाय मार्ग' हो सकता था, तो केनिंग लेन क्या स्वातंत्र्य वीर सावरकर मार्ग नहीं हो सकता था ? यह मनोवृति क्या सूचित करती है ? यही न कि इस देश की जनता में स्वाधीनता की भावना नहीं है ?

ब्रिटिश शासन ने जब १८५३ में घोषणा की थी कि नौकरी उसी को मिलेगी जो अंग्रेजी जानता होगा, तब उन्होंने फारसी को तो समाप्त कर दिया पर उर्दू को चलने दिया। क्योंकि ब्रिटिश शासन का भारत में सबसे बड़ा सहायक निजाम था। उसके खातिर इस्लाम को प्रसन्न करना जरूरी हो गया और विदेशी लिपि उर्दू चलती रही। आज बिहार में यह लिपि अदालतों में हैं। १९३७ से पहले यह प्रचलित नहीं थी। वहां कैथी, (मगही की लिपि) प्रचलित थी। **परन्तु कांग्रेसी शासन ने आकर बिहार की अदालत में उर्दू प्रचलित कर दी। क्योंकि उसको देश से अधिक इस्लाम प्यारा था।** इस्लाम का बल उसको चाहिए था। उर्दू लिपि विदेशी है, परन्तु वह जारी है। यह मानते हुए भी कि सब भाषायें नागरी

लिपि में लिखी जानी चाहिए, उर्दू लिपि का परित्याग नहीं किया गया। जो जनता विदेशी लिपि का मोह छोड़ नहीं सकी, उसमें क्या स्वतन्त्रता की भावना और देश-प्रेम जीवित रह सकता है ? उसके अभाव में क्या भारतीय जनता की मनोवृत्ति क्रान्तिकारी हो सकती है ? भारतीय जनता में स्वाधीनता का अभाव है, इसी कारण श्री जयप्रकाश नारायण की गली सड़ी सरकार आज भी इस देश में टिकी हुई है।

ब्रिटिश शासन के मुनीम

चीन से पराजित सरकार से किसीने प्रदर्शनात्मक त्यागपत्र देने की भी मांग नहीं की। **गांधी जी के वध पर जयप्रकाश नारायण ने सरदार पटेल से इस्तीफा देने का आग्रह किया था। किन्तु चीन से पराजित नेहरू से किसी ने भी इस्तीफा देने के लिए नहीं कहा।** सारे देश ने देखा कि सायंकाल को उनके प्रधान मन्त्री ने पाकिस्तान से सन्धि वार्ता चलाने से इन्कार कर दिया था। परन्तु रात एक बजे जब एंग्लो-अमेरिकी परराष्ट्र मंत्रियों ने भारत के प्रधान मन्त्री को जगाया, तब भारत के प्रधान मन्त्री ने निष्फल और अनुपयोगी स्वर्णसिंह भुट्टो वार्ता को चलाया। काँजरकोट से कराची की ओर बढ़ती विजयवाहिनी को प्रधान मन्त्री श्री विल्सन के अनुरोध पर रोक दिया गया। चीन ने जब अणुबम का पहला विस्फोट किया, तब भारत की सरकार ने अणुबम बनाने से इन्कार कर दिया, और संरक्षण पाने के लिए भारत का प्रधानमन्त्री दौड़ा हुआ लन्दन गया और वहाँ से अणु छत्री लाया। १९६५ में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण किया, एक मास तक तो भारत सरकार चिल्लाती रही, पाकिस्तानी उनके देश में घुस आये हैं, जब रूसी युद्ध सचिव ने भारत के राजदूत से कहा—यह शोर करने से क्या लाभ ? घर में चोर घुस जाने पर पहले चोर से निपटा जाय, या पड़ौसियों को जगा कर कहा जाता है कि घर में चोर आ गया ? तब इस देश ने बन्दूक उठाई। पर लाहौर विजय नहीं किया। **कर्नल नासर के शब्दों में यह भारी भूल थी। कर्नल नासर क्या जाने ? भारत के शासक वस्तुत: भारत के शासक नहीं हैं। यह तो ब्रिटिश शासन के मुनीम हैं।**

१९६४-६७ में दिल्ली में त्रि-शिखर सम्मेलन हुआ। इसमें भारत के प्रधान मन्त्री ने भाषण अंग्रेजी में दिया। तब भारत की स्वाधीनता कितनी नकली है, यह इससे समझा जा सकता है। इस अवस्था में क्या भारत में राष्ट्रवाद उत्पन्न और विकसित हो सकता है ? भारतीय जनता यह लांछन सह रही है। भारत सरकार का चपरासी होने के लिए सात समुद्र पार की ब्रिटिश भाषा का ज्ञान होना आवश्यक है। जो जनता यह अपमान सह सकती है, उसमें क्या राष्ट्रीयता और भारतीयता जन्म ले सकती है ? इसके अभाव में क्या भारत में क्रान्ति कभी आ सकती है ?

भारतीयता के विकास को रोकने और भारतीय जन क्रान्ति को उदित होने से रोकने के लिए अनेक उपाय किए गए हैं। भारतीय जनता को यथा-सम्भव अधिक से अधिक भागों में विखण्डित कर दिया गया है। ब्रिटिश शासन ने मुस्लिम और गैर मुस्लिम इन दो भागों में भारतीय जनता को विभक्त कर दिया था। भारत विभक्त हुआ इसी आधार पर।

भारत में नस्ल, जाति और रक्त के आधार पर अल्पसंख्यक वर्ग नहीं माने गए हैं, इसके विपरीत मजहब देश, और भाषा के आधार पर अल्पसंख्यक वर्ग उत्पन्न किए गए हैं। वर्तमान शासन ने हरिजन वर्ग उत्पन्न करके विशाल बहुसंख्यक जन समाज को 'सवर्ण और हरिजन' में विभक्त कर दिया है। हरिजन वर्ग का आधार पेशा नहीं है, जाति है। हरिजन वर्ग के रहते हुए क्या भारत से जाति भेद का अन्त हो सकता है ?

एक नया वर्ग उत्पन्न किया गया है। वह है

आदिवासियों का। ब्रिटिश शासन ने इस वर्ग को बहुसंख्यक समाज से सदा अलग रखा। इण्डिया-एक्ट १९१९ में इनका निर्णय मंत्रियों को हस्तान्तरित नहीं किया गया। खीरे की फांक के समान विभक्त भारतीयता के अभिमान से शून्य भारतीय जनता क्या कभी क्रान्ति कर सकेगी ?

भारतीय जनता में जब स्वाधीनता के प्रति अनुराग नहीं है, भारत के प्रति अटूट भक्ति नहीं हैं, भारतीय होने का अभिमान नहीं है, प्राचीन भारत के प्रति गौरवपूर्ण आस्था नहीं है, तब क्या भारत में क्रान्ति का उदय होना सम्भव है ?

भारत में क्रान्ति हो सकती थी, यदि जनता में विजयाभिलाषा और आत्मविस्तार की प्रबल इच्छा होती। मार्शल अयूब खाँ ने 'फौरन अफेयर' (१९६५) में इस भय को प्रकट किया था और अमेरिका को चेतावनी दी थी कि वह भारत को शस्त्रास्त्र देने की भूल स्वप्न में भी न करे। क्योंकि भारत यदि शक्तिमान और बलवान हुआ, तो भारतीय पुनः बृहत्तर भारत का निर्माण करेंगे और उसकी सीमा तीमोर तक सीमित न रह कर लेटिन अमेरिका तक आएगी।

मार्शल अयूब खां पठान हैं, अतः उनको बृहत्तर भारत की कल्पना गुदगुदा सकती है, और इससे पाकिस्तान को भय है, यह मानकर वह चिन्तित हो सकते हैं। परन्तु इस देश के शासकों ने अमेरिका के कहने से परिवार नियोजन की योजना स्वीकार की, पर कभी यह नहीं सोचा कि निर्जन अमेजन घाटी को आबाद कर लेटिन अमेरिका में लेटिन के बीस देशों के सहयोग से संयुक्त राज्य अमेरिका के मुकाबले नूतन भारतीय साम्राज्य का निर्माण करे। इसका श्रीगणेश वहाँ और हिमालय में भारतीयों को आबाद करके किया जाय। **परिवार नियोजन पर खर्च किया जाने वाला ५० करोड़ रुपया क्या निर्जन अमेजन घाटी को भारतीय बस्ती में बदलने पर किया नहीं जा सकता था ?**

यह ठीक है कि यदि बृहत्तर भारत के पुन-निर्माण की इच्छा भाषा में प्रबल हो उठे, तो भारतीय क्रान्ति के उदय में सब अवरोधक व बाधक बांध उसके प्रबल राष्ट्रवाद के प्रवाह में बह जा सकते हैं। परन्तु यह बात आगे आने में अभी देर है। पाकिस्तान, सीलोन, केनिया, बर्मा से लौट रहे भारतीयों को भी लेटिन अमेरिका में जाकर अपना भाग्य-निर्माण करने की प्रेरणा नहीं दी गई। लेबनान के व्यापारी लेटिन अमेरिका में बस कर वहाँ के मन्त्री हो सकते हैं। परन्तु भारतीय व्यापारी यह साहस करने को प्रस्तुत नहीं हैं। विस्थापितों को बसाने में ५ अरब रुपये से अधिक खर्च किया गया है, क्या इस राशि से भारतीय लेटिन अमेरिका में नहीं बस सकते थे ? इसके लिए आवश्यक भारत-भक्ति, राम-भक्ति का जब तक इस देश में अभाव है, तब तक यह आशा कैसे की जा सकती है ? यह स्थिति उत्पन्न न हो, इसी कारण से क्या देश में पूंजीवाद की दृढ़ आधार पर स्थापना नहीं की गई ?

पूंजीवाद को उखाड़ो !

समाजवाद को सदा के लिए नमस्कार कर दिया गया है। घाटे की वित्तीय व्यवस्था को अनिष्टकर नहीं, इष्टकर माना जाता है। इसको 'त्रिविध अरिष्ट शामिनी और विविध ताप नाशिनी' माना जा रहा है। यही नहीं, १९४० ई० से जिस महंगाई को अभिशाप माना जा रहा था, संकट माना जाता था, आज उसी को मंगलमय और वरदान माना जा रहा है। महंगाई को कायम रखने के लिए राज्य-कृषि-मन्त्री यह प्रचार करते हुए शर्माते नहीं हैं कि भारतीय जनता की सस्ता अनाज खाने की मनोवृत्ति ठीक नहीं है। उसको अपनी यह मनोवृत्ति बदलनी चाहिए। महंगा अनाज खरीदने और खाने की आदत डालनी चाहिए।

१९५३-५४ में गेहूँ का भाव उतर कर ८ रु० मन हो गया था। और सरकार ने भाव को और नीचे जाने से रोकने के लिए २० रु० समाहरण का भाव

नियत किया था। यह था, उस समय का समाजवादी श्री रफी अहमद किदवई। भारत-पाक संग्राम से पहले गेहूं का भाव ६०-६५ रु० क्विटल था। १९६२ में गेहूं के समाहरण का भाव ८०-७१ रु० प्रतिक्विंटल घोषित किया है। इसका अर्थ है कि बाजार में ९५-९८ रु० प्रति क्विंटल गेहूँ बिकेगा, और सरकार का भाव ८०-८१ प्रति क्विंटल होगा। **सरकार यह भूली हुई है कि पश्चिमी जर्मनी में भी पूंजीवाद है, पर वह राष्ट्रीय है, भारत का पूंजीवाद एंग्लो-अमेरिकी पूंजीवाद का वशंवद है।**

भारतीय पूंजीवाद राष्ट्रीय नहीं है। इस कारण वह एक देश में चीनी का दो भाव चलता देख कर प्रसन्न होता है। उसकी पीठ ठोक रहा है। उसने वर्तमान बढ़ा-चढ़ा भाव स्थिर करने का निश्चय कर लिया है। यह क्या प्रतिक्रान्ति के आगमन की सूचना नहीं है।

प्रतिक्रान्ति के बलवान होने की स्थिति में क्या भारत में क्रान्ति की आशा की जा सकती है? क्रान्ति के आने का सुनहरा स्वप्न चित्रित करने वाले क्या भारतीत जनता के साथ वैसा व्यवहार कर रहे हैं? ●

गोरक्षा का विशेष कार्यक्रम

पश्चिम बंग सरकार की ओर से समय-समय पर उन गायों, बछड़ों की नीलामी की जाती है, जिन्हें सरकार अपने हरिंघाटा व कल्याणी पशु केन्द्रों में नहीं रखना चाहती। यह नीलाम यद्यपि उन्हें ही दिया जाता जो इन पशुओं को पालना चाहते हैं, किन्तु यह सहज अनुमान किया जा सकता है कि ये पशु सरकारी केन्द्रों से निकल कर जीवन के अन्तिम क्षणों की प्रतीक्षा किया करते हैं। कई गो भक्तों के परामर्श से आर्यसमाज कलकत्ता ने सरकार से प्रार्थना की कि इन पशुओं के जीवन की रक्षा होनी चाहिये। आर्यसमाज की इस प्रार्थना पर सरकार ने आर्यसमाज को नीलामी के आधे मूल्य पर इन पशुओं को देना स्वीकार कर लिया। कलकत्ता के गो भक्त समाज ने-आर्यसमाज के साथ चेष्टा की और गो भक्त दानियों के पुण्य दान से ४४०००) चवालीस सहस्र रुपये एकत्र करके ६६१ पशुओं को सरकार से लेकर कलकत्ता पिंजरापोल सोसाइटी को सौंप उनके जीवन की रक्षा की गई। जिनमें काफी गाय गर्भवती हैं तथा कुछ दूध भी देती हैं। गो भक्त समाज का यह कार्य अत्यन्त प्रशंसनीय है।

अति शीघ्र द्वितीय चरण को भी सम्पूर्ण करने का संकल्प किया गया है। इसके लिये ७०००) रुपयों की आवश्यकता है। इस रकम द्वारा कुल १०२ पशु लिये जायेंगे। अतः महानुभावों से प्रार्थना है कि इस पुनीत कार्य को आगे बढ़ाने में सहयोग प्रदान करें।

ये प्राप्त किये जाने वाले पशु कलकत्ता पिंजरापोल सोसाइटी को दिये जायेंगे। अगर कुछ पशु सोसाइटी लेने में अपने को असमर्थ पाती है तो उन्हें लेने को उत्तरप्रदेश और बिहार की अनेक गोशालायें तैयार हैं। इस आशय के पत्र भी हमें मिल चुके हैं। जो सज्जन प्रथम चरण में प्राप्त पशु देखना चाहें वे कलकत्ता पिंजरापोल सोसाइटी के अधिकारियों से सम्पर्क कर कचड़ापाड़ा केन्द्र में उन्हें देख सकते हैं। आपको ताज्जुब होगा कि इन पशुओं से में अधिकतर गायें गर्भवती होकर दूध देने लायक हैं जब कि बछड़े सुन्दर सांढ़ या बैल बन सकते हैं। आशा है आप लोगों का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

भवदीय
छबील दास सैनी
मन्त्री
आर्यसमाज, कलकत्ता
१९, विधान सरणी,
कलकत्ता—६

अमर शहीद सरदार भगतसिंह जी की पूज्या माताजी से एक भेंट

●वीरेन्द्र कुमार

आज हम स्वतन्त्र भारत में रह रह रहे हैं, प्रतिवर्ष स्वतन्त्रता-दिवस धूमधाम से मनाते हैं। परन्तु क्या हम जानते हैं कि कितने रणबाँकुरों ने राष्ट्र की बलिवेदी पर अपने प्राणों की आहुति दी ? कितनी बहनों ने अपने प्रिय भाइयों को इस स्वतन्त्रता के लिए न्यौछावर किया ? कितनी माताओं ने अपने हृदय के टुकड़ों को हँसते-हँसते भारत मां की भेंट कर दिया ?·········नहीं, आज हम उन्हें भूल चुके हैं ? यह हमारा दुर्भागय नहीं तो और क्या है ? स्मरण रहे, जो राष्ट्र स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर मर मिटने वाले देश के वीर सपूतों को भूल जाता है वह राष्ट्र मृतक के समान है·········· आओ ! मैं आपको कुछ क्षण के लिए स्वतन्त्रता के परवाने अमर शहीद सरदार भगतसिंह की पूज्या माताजी के पास ले चलूं।

२५ मई को मैं अपनी मौसी जी के पास जालन्धर गया, वहाँ पहुँचते ही मुझे मेरी छोटी बहन इन्दु ने बताया कि अमर-वीर भगतसिंह जी की आदरणीय माता जी यहां हस्हताल में बीमार हैं। उनकी अस्वस्थता का समाचार सुनकर चिंता हुई लेकिन साथ ही प्रसन्नता भी हुई क्योंकि चिरकाल से मेरे हृदय में उस महान् माता के शुभ-दर्शनों की प्रबल इच्छा थी। बस उसी क्षण मैं अपनी बहन के साथ, जो पहले से ही माता जी से परिचित थी, माता जी के शुभ-दर्शनों हेतु हस्पताल चल पड़ा। हस्पताल निकट ही था। माता जी के कमरे में प्रवेश करते ही सामने शहीद भगतसिंह का चित्र दिखाई दिया व साथ ही अन्य क्रान्तिकारियों चन्द्रशेखर— आजाद, राजगुरु सुखदेव आदि के चित्र भी थे। निकट ही पूज्या माता जी चारपाई पर लेटी हुई थी और कुछ व्यक्ति उनसे बातचीत कर रहे थे। मैंने उन्हें प्रणाम किया तथा उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। उनको जो भी मिलने आता सब का वह हँस कर स्वागत करती व अपना आशीर्वाद देतीं। कुछ देर बैठने के पश्चात् मैं वापस घर आ गया। इस प्रकार दो तीन बार उनमें जालन्धर रहते हुए भेंट हुई और में अन्य लोगों के साथ हो रही पूज्या माता जी की बातें सुनकर आ जाता लेकिन अपनी कोई निजी बातचीत न हुई। उसके बाद में अपने गांव जलालाबाद चला गया व गाँव से लौटने पर पता चला कि माता जी अब जिला-परिषद् के विश्राम-गृह में ठहरी हुई हैं। मैं उनसे मिलने के लिए वहां गया। वहां पर शहीद भगतसिंह की बहन बीबी अमरकौर जी तथा उनके सपुत्र श्री जगमोहन सिंह जी भी उपस्थित थे। मैं माता जी को प्रणाम करके उनके समीप ही बैठ गया। वहाँ पर कई बच्चे, नवयुवक व वृद्धजन आते और माता जी के दर्शन करके चले जाते। निश्चित रूप से यह भी तीर्थ-स्थल है जिन्हें हम भुला चुके हैं। मेरे समीप श्री भगतसिंह जी राजधर्म' का 'रामप्रसाद 'बिस्मिल' अंक पढ़ रहे थे उन्होंने बताया कि इस अंक की उन्होंने एक सौ प्रतियां मंगाई हैं और अब वह इसका पंजाबी भाषा में अनुवाद भी कर रहे हैं। मैं उनके साथ क्रान्तिकारियों के बारे में चर्चा कर रहा था और माता जी (जिनका नाम है माता विद्यावती) बड़ेध्यान से हमारा वार्तालाप सुन रहीं थी। श्री जगमोहन सिंह जी ने मुझे क्रातिकारियों के कई लेख व चित्र दिखाए। उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जैसे वह साक्षात् हमारे सामने खड़े हैं। एक लेख में सरकार भगतसिंह ने यों लिखा था :—

राष्ट्र के निर्माता नवयुवक ही हुआ करते हैं, किसी ने सत्य ही कहा है :—

सुधार बूढ़े आदमी नहीं किया करते, वे तो बहुत बुद्धिमान व समझदार हुआ करते हैं। सुधार तो होते हैं नवयुवकों के परिश्रम, साहस, बलिदान व इरादे के साथ जिनको भयभीत होना ही नहीं आता है और जो विचार कम तथा अनुभव अधिक करते हैं।

इसी बीच मैंने माता जी से भी बातचीत प्रारम्भ कर दी। मैंने उन्हें 'सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्' के क्रांतिकारी कार्यों के बारे में भी बताया तथा मैंने कहा कि आप इन्हें आशीर्वाद दें ताकि यह आर्य युवक मंडली अपने कार्य

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

भारत की वर्तमान राजनीति

●स्वर्गीय स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती

आज हमारे देश में भिन्न-भिन्न राजनैतिक दल हैं और वे सब पाश्चात्य पद्धति के अनुसार चलते हैं। हमारी दृष्टि में भारत की राजनीति जिन सिद्धान्तों के अनुसार चलनी चाहिये उनकी गणना इस लेख में करना चाहते हैं। हमारी दृष्टि में भारत की राजनीति में पांच मुख्य बातों का ध्यान रखा जाना चाहिये।

विश्व की एकता

हमारी दृष्टि में भारत की राजनीति में विश्व की एकता को मुख्य स्थान मिलना चाहिये।

इस विषय में ऋषि दयानन्द का स्थान अद्वितीय है।

विश्व की एकता की आवश्यकता सब अनुभव करते हैं परन्तु आर्यसमाज के आधारभूत दस नियमों में से छठा नियम इस प्रकार हैं :—

'संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है।'

इस प्रकार "मुख्य उद्देश्य" की पदवी देकर विश्व की एकता को जो स्थान ऋषि दयानन्द ने दिया है उसे अद्वितीय तो कहना पड़ता है।

यही नहीं सत्यार्थप्रकाश के छठे समुल्लास में सार्वभौम महाराज सभा का स्पष्ट वर्णन करके ऋषि दयानन्द ने स्पष्ट दिखा दिया कि राजनीति को अपना मुख किस ओर रखना चाहिये।

कौन नहीं चाहता कि विश्व में एकता हो किन्तु धार्मिक एकता, आर्थिक एकता, सामाजिक एकता सब अधूरी है जब तक विश्व में राजनैतिक एकता न हो। राजनैतिक एकता का अर्थ है एक कोष, एक विश्व सेना, एक विश्व-पुलिस, एक विधान सभा, एक विश्व न्यायालय। इसका अर्थ यह नहीं कि पृथक्-पृथक् देशों की अपनी सत्ता बिलकुल नष्ट कर दी जाय किन्तु जिस प्रकार एक राज्य के भिन्न-भिन्न प्रान्त अपनी सत्ता रखते हुए भी राष्ट्र भावना में एक केन्द्र के अधीन रहते हैं। इसी प्रकार देशभक्ति की भावना धरती माता के प्रति हो तथा राष्ट्रीयता की भावना मानवराष्ट्र के प्रति हो।

विज्ञान ने आज दूरी का अन्त कर दिया है किन्तु विज्ञान तो शरीरों को ही एक दूसरे के समीप होते हैं। परन्तु वहाँ भिन्न-भिन्न राष्ट्रों के स्वार्थ विश्व की एकता उत्पन्न नहीं होने देते परिणाम यह हो रहा है कि दूरी के कारण जो युद्धों का संकट टला रहता था वह अधिक भयानक रूप से सामने खड़ा हुआ है।

दो मनुष्यों के हृदय में द्वेष की भावना को दूर करने में दूरी भी सहायक होती है। दो लड़े हुए व्यक्ति यदि एक दूसरे के सामने न पड़ें तो धीरे-धीरे उत्तेजना कम होकर पूर्ण शान्ति न सही, व्यावहारिक शान्ति तो आ जाती है परन्तु आज के युग ने शरीरों की दूरी जितनी दूर कर दी है आन्तरिक दूरी उतनी ही बढ़ा दी है।

इसलिये अब समय आ गया है कि

(१) एक विधान सभा

(२) एक न्यायालय

(३) एक सेना

(४) एक पुलिस

(५) एक कोष

का लक्ष्य सुदूर स्वप्न की कोटि से निकाल कर हमारी व्यावहारिक राजनीति का अंग बन जाय और राष्ट्र में इसकी गर्मागर्म चर्चा हो इसके लिये आन्दोलन हो, उद्योग हो, चिन्ता हो, प्रचार हो।

साथ ही यदि विश्व के एक व्यावहारिक भाषा भी हो तो विश्व का और भी अधिक कल्याण होगा। हमारी सम्मति में यह पदवी पाने का अधिकार संस्कृत भाषा को है। परन्तु इस विषय में प्रमाण तो विश्व की जनता की सम्मति ही मानी जायगी और यदि विश्व की जनता किसी और भाषा के पक्ष में निर्णय करे तो हमें आर्य समाज के दशम नियम के आगे सिर झुकाना भी सीखना चाहिये, हां यदि हम इसे ठीक समझते हैं तो इसके पक्ष में प्रचार हमें अब से ही करना चाहिये कि सब उसे अति सुगमता से सीख सकें।

गुण-ग्राहकता

भारत की राजनीति के आधार स्तम्भों में जो दूसरी बात आवश्यक है वह है गुण-ग्राहकता। राजनैतिक दलबन्दी में प्रायः यह एक धार्मिक नियम सा बन गया है कि दूसरा दल यदि कोई अच्छा कार्य भी करे तो उसकी प्रशंसा कभी भूलकर भी न करना।

वास्तव में यह मनुष्यों के एक स्वाभाविक दोष का परिणाम है। मनुष्य सदा बड़ा बनना चाहता है। बड़ा बनने के दो उपाय हैं। या तो अपना कद बढ़ाना या दूसरे का छोटा करना। यह दूसरी पद्धति बहुत आसान है। इसलिये प्रायः लोग इसकी ओर ही झुकते हैं। इस लिये मनुष्यों को परनिन्दा में बहुत रस अनुभव होता है। परनिन्दा करते हुए उसे एक मिथ्या सन्तोष होता है कि मैं कितना ऊंचा हूं। यही प्रवृत्ति अन्त में राजनैतिक दलों में भी प्रकट होती है क्योंकि दल भी तो अन्ततोगत्वा व्यक्तियों के ही बने होते हैं।

परन्तु जो सचमुच महान् होते हैं वे प्रथम तो नया दल बनाना ही नहीं चाहते, परन्तु यदि वे कभी पृथक्-दल बनाते हैं तो वे विश्व को जो महान् संदेश देना चाहते हैं। उसकी उच्चता में उनको इतना गहरा विश्वास होता है कि उन्हें परनिन्दा द्वारा दूसरे को नीचा दिखाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती।

हमारा यह कदापि तात्पर्य नहीं कि यदि किसी दल का कोई व्यवहार सचमुच लोकहित की विघातक हो तो उसकी कड़ी आलोचना न की जाय किन्तु केवल अपने दल का महत्त्व बढ़ाने के लिये दूसरे दल के अच्छे कार्यों को जिन्हें हम स्वयं अच्छा समझते हों? बुरा कहना अन्याय है।

उदाहरण के लिये यदि कांग्रेस सरकार अपनी योजनाओं की पूर्ति के लिये कर लगाती है तो देश की उन्नति के लिये कौन सी सरकार है जो कर नहीं लगाएगी। इसलिये जब तक हम उस लोकहितकारी कार्य को किस प्रकार किसी दूसरे उपाय से पूरा कर सकें तो व्यर्थ भारी करों के विरुद्ध चिल्लाना राष्ट्र की त्याग-भावना को दुर्बल करता है। इसलिये करों के विरुद्ध यह समझ कर बोलना चाहिये कि यदि हमारे दल के हाथ में सत्ता आ गई तो हम यह कार्य किस प्रकार पूरा कर सकेंगे।

अपना वैशिष्ट्य

परमात्मा ने हर राष्ट्र को तो क्या, हर व्यक्ति को कोई न कोई अद्भुत शक्ति दी है जिसका सूक्ष्म अध्ययन तथा प्रयत्नपूर्वक विकास करके वह उस विषय में अद्वितीय बन सकता है। इस गुण को वैदिक भाषा में त्वष्टा देवता के नाम से पुकारा जाता है। परन्तु भारत का परम दुर्भाग्य है कि उसकी नौका के कर्णधार लोग उस भण्डार से सदा दूर रहते हैं जिसमें भारत की वह विशिष्टता निहित है। वह भण्डार है संस्कृत साहित्य और उस में भी वेद।

यद्यपि श्री लालबहादुर शास्त्री के प्रधान मन्त्री पद पर आने से कुछ आशा बनने लगी कि कदाचित् भारत अपनी विशिष्टता का विकास करके विश्व को श्रेष्ठ रत्नों का उपहार कर सकें और अभी दिन ही कितने हुए हैं* फिर पाकिस्तान की समस्या भी उन्हें उलझा रही है। परन्तु यह आशा जिस भारतीयता को महात्मा गांधी जी ने जन्म दिया था वह फूलेगी और फलेगी यह आशा कुछ-कुछ धूमिल होती जा रही है। भगवान् शास्त्री जी को सामर्थ्य दें कि वह अपने उत्तरदायित्व को समझें और उसे ठीक निभा भी सकें।

वह विशिष्टता क्या है? वह विशिष्टता है मनुष्यत्व का गौरव संसार से सब राष्ट्रों में झगड़ा शासन प्रणाली का है। शासन पूंजीवाद के अनुसार होगा अथवा कम्यूनिज्म के आधार पर होगा यही समस्या संसार भर के मनुष्यों को उद्वेलित कर रही है। परन्तु सबसे गम्भीर प्रश्न प्रणालियों का नहीं मनुष्यों का है धूर्त अथवा मूर्ख मनुष्यों के हाथ में पड़ कर अच्छी से अच्छी प्रणाली मनुष्यों के जीवन को नरक बना सकती है। दूसरी ओर सदाशदे तथा बुद्धिमान् मनुष्यों के हाथ में रद्दी से रद्दी प्रणाली भी सुख की वर्षा करती है। इस घोर पतन के युग में भी भारत ने गांधी सरीखे मनुष्य पैदा किये जिनके मार्ग पर चल कर लूथर किंग आज अमेरीका की वर्ण भेद समस्या के समाधान में लगे। दूसरी ओर ब्रिटेन और अमेरिका की सरकारों की कूटनीति भारत के लिये पाकिस्तान की समस्या खड़ी करके अपने उस सब उपकार पर पानी फेर रही हैं जो उन्होंने संकट में सहायता द्वारा भारत पर किया है। सब कुछ हैं मनुष्य

*यह लेख सन् १९६५ में लिखा गया था।

नहीं, यह मनुष्य निर्माण ही भारत की विशेषता है ।

भारत की राजनीति में एक अत्यन्त आवश्यक बात वह है कि हर भारतवासी अपनी इस विशिष्टता को समझे। परन्तु दुःख की बात तो यह है कि देश की नौका के कर्णधार भी इस ओर ध्यान नहीं देते। हमारे देश में जो शिक्षा दी जाती है उसमें मनुष्यों के मस्तिष्क का निर्माण तो होता है। वह बच्चा गणित, इतिहास, विज्ञान आदि में विशिष्ट योग्यता प्राप्त करे इस बात का पूरा ध्यान शिक्षा विभाग रखना चाहता है और इसीलिये उस दिशा में उन्नति भी हो रही है। हमारे देश में इतिहासज्ञ गणितज्ञ, वैज्ञानिक तो एक से एक बढ़कर बन रहे हैं परन्तु मनुष्यता कहाँ है ?

हमारा यह अभिप्राय कदापि नहीं कि देश के शिक्षित वर्ग में अच्छे मनुष्य कोई भी पैदा नहीं हो रहे है परन्तु यदि हो रहे हैं तो उस का श्रेय शिक्षा विभाग को नहीं अध्यापक वर्ग में जो आचारवान् पुरुष हैं उन को है। शिक्षा विभाग को इसकी तनिक भी चिन्ता नहीं और सबसे बड़ी बात तो यह है कि राष्ट्र को शिक्षा विभाग की बिलकुल चिन्ता नहीं। केन्द्र से लेकर छोटे से छोटे राज्यों तक में यही प्रवृत्ति है कि मन्त्रिमण्डल में जो सबसे नगण्य व्यक्ति हो उसे शिक्षा विभाग सौंप दिया जाता है। जिसको राष्ट्र के भविष्य का निर्माण करना हैं उसे राष्ट्र के भूत का कुछ ज्ञान है वा नहीं, वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद्, मनु, याज्ञवल्क्य, वसिष्ठ, व्यास तथा वाल्मीकि भी इस विषय में कोई मार्ग बता गए हैं वा नहीं यह जानने की चिन्ता किसी को नहीं। महात्मा गांधी का नाम तो सब लेते हैं किन्तु वह तो अपने उस गुरु को आज तक कृतज्ञता पूर्वक याद करते थे जिसने उन्हें संस्कृत पढ़ा कर गीता समझने के योग्य बना दिया।

भारत ने यदि किसी विद्या में विशेष प्रयत्न किया है तो वह मनुष्य निर्माण की विद्या है परन्तु भारत की इस विशिष्टता की ओर किस का ध्यान है। भारत के राष्ट्रपति पद पर इस समय एक संस्कृत का विद्वान् प्रतिष्ठित है। भारत का प्रधान-मन्त्री भी एक शास्त्री है परन्तु शिक्षा-विभाग !

यह विभाग ही सबसे हतभाग्य है। पहले इस आसन पर मौलाना थे। उन्हें भी संस्कृत साहित्य का ज्ञान नहीं था। परन्तु महात्मा गांधी का सत्संग तो प्राप्त था। अब, अब छागला साहब आए वे तो ठहरे पूरे साहब लोग। पूरे अंग्रेजी के भक्त। संस्कृत साहित्य का रत्न भण्डार किसके कर्मों का रोए।

शिक्षकों की दशा देखिये उनका भी बुरा हाल है।

इसलिये यदि भारत की राजनीति को ठीक मार्ग पर चलना है तो शिक्षा विभाग का गौरव इस राष्ट्र को समझना होगा।

●

विलय वार्ता

आर्य युवक संगठनों ने ३० जून १९६९ को जो विलय का फैसला किया था उसमें अब तक आशाजनक सफलता मिली है। सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् की कार्यकारिणी ने युवकों के एक सम्मिलित संगठन में विलय स्वीकार कर लिया है। आर्य वीर दल पंजाब-हरियाणा के प्रमुख कार्यकर्ताओं ने भी विलय की शीघ्र घोषणा का आश्वासन दिया है। आर्यन यूथलीग एवं प्रादेशिक आर्य युवक संगठन भी इस दिशा में काफी सक्रिय है—परमात्मा की कृपा से विजयादशमी से पहले ही सारे संगठनों के एक हो जाने की आशा है।

—संयोजक

इन्द्रदेव मेधार्थी

(पृष्ठ २८ का शेष)

व उद्देश्य में सफल हो। यह सुनकर वह चारपाई पर उठ कर बैठ गई। मैंने उन्हें शहीद रामप्रसाद बिस्मिल अंक के विषय में भी बताया तो उन्होंने कहा कि "यह नौजवानों ने बहुत अच्छा किया है जो शहीदों को पुनः याद किया है, दुनियां भूल चुकी थी, नौजवान फिर याद कर रहे हैं। जो शहीदों को याद करते हैं मैं उनका धन्यवाद करती हैं। शहीदों के स्वप्न नौजवानों ने ही पूरे करने हैं, उन जैसे त्याग, साहस और निष्काम सेवा भावना से"

इसके पश्चात् मैंने पूज्या माता जी से पूछा कि आपको स्वतंत्रता से पहले और आज के नवयुवकों में क्या अन्तर दिखाई देता है? उन्होंने कहा कि "वे बहुत बहादुर थे, हम पर दूसरे देश वाले राज्य करते थे परन्तु वे उनसे भी नहीं डरते थे बल्कि बहादुरी के साथ उनका सामना करते थे" आजकल के नवयुकों के प्रति उन्होंने संकेत करते हुए कहा कि "जो अच्छा कार्य करते हैं वे अच्छे हैं, लेकिन बेईमानी फैली हुई है, दुनिया रिश्वतखोर हो गई है।" मैंने माता जी से पूछा कि नवयुवकों को आप और क्या संदेश देना चाहती हैं, तो उन्होंने कहा, शराब न पियो, रिश्वतखोरों को पकड़ो, भ्रष्टाचार दूर करो। जो शराब पीता है उसे जनता के सामने जूतियां लगाओ, पाँच या दस दिन जेल में बन्द कर देने से कुछ नहीं बनता। रिश्वतखोरों को मारो, उन्हें कहो, क्यों भ्रष्ट मार्ग अपनाते हो कुछ होश करो।" वस्तुतः यह सत्य है और इसके बिना देश उन्नत भी नहीं हो सकता।

तत्पश्चात् मैंने माता जी से आर्यसमाज व महर्षि दयानन्द के विषय में बात करनी चाही तो उन्होंने कहा कि "हम आप आर्य हैं। भगतसिंह के दादा जी मांस खाते थे, शराब पीते थे व सब कुछ करते थे परन्तु जब वह आर्य बन गए तो कट्टर आर्य बन गए तथा सब कुछ छोड़ दिया।" पूज्या माता जी ने बताया कि शहीद भगतसिंह जी के दादा जी (सरदार अर्जुन सिंह जी) ने ही सरदार भगतसिंह और उसके भाई का यज्ञोपवीत संस्कार करवाया था। उन्होंने कहा कि उनकी तो तीनों पीढ़ियाँ ही देश की स्वतन्त्रता के कार्यों में लगी रहीं। सरदार अर्जुन सिंह जी (भगतसिंह के दादा जी) का प्रभाव आने वाली अपनी संतान पर अति गहरा था। स्मरण रहे कि भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह और चाचा सरदार अजीतसिंह जी का स्वतन्त्रता-संग्राम में तीव्र योगदान हैं। माता जी ने कहा कि भगतसिंह और उसके साथी स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए इन्कलाब लाए थे और आज भी इन्कलाब की आवश्यकता है निर्धनता व सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध। इसके पश्चात् माता जी ने विश्राम चाहा व मैंने आगे बात करना उचित न समझा। डेढ़ घंटे का समय मुझे पता ही नहीं कब समाप्त हो गया? न चाहते हुए भी मैंने जाने की आज्ञा ली। मैंने पूज्या माता जी के पवित्र चरणों में सादर प्रणाम कर आशीर्वाद प्राप्त किया और घर वापिस लौट आया।

देशवासियो! आज समय है शहीदों को पुनः याद करने का, उनके क्रांतिकारी कार्यों का अनुसरण करने का। अपने प्रिय देश के लिए सर्वस्व न्योछावर करने वाले उन वीर सपूतों को यदि हम भूल जाएंगे तो भविष्य हमें कोसेगा, धिक्कारेगा। संभलो! और पूज्या माता जी की आज्ञा के अनुसार नवयुवको उठो और संसार को अपनी शक्ति से हिला दो। आर्य नवयुवक जब कोई उद्देश्य लेकर चल पड़ते हैं तो संसार की कोई भी शक्ति उन्हें रोक नहीं सकती।

१७०-ए, नई कालोनी,
गुरुग्राम (हरियाणा)

●

क्षमा करें!

इस बार २५ जुलाई का अंक न निकल सका। कारण अधिवेशन का भार था। कुछ दूर तक उस कमी की पूर्ति इस अंक में करने का प्रयत्न किया गया है पर फिर इसे हम अपनी भूल मानकर आपसे क्षमा चाहते हैं—

—सम्पादक

समाचार दर्शन

ज्ञानेश्वर शास्त्री

मोरारजी की विदाई

आपसी फूट की वात्या ने कांग्रेस के नीड़ को झकझोर कर इस तरह बिखेर दिया है कि इसका तिनका-अलग हो गया है। इन्हें इकट्ठा करने वाला कोई सामने नहीं आता। देशवासियों की नजर कभी इस पर टिकती है, कभी उस पर!

बंगलौर अधिवेशन में भिन्न-भिन्न मठों के मठाधीश कांग्रेसी इकट्ठे हुए और आपस में सिर फुटौवल करने के बाद अलग हो गए। वैसे होने को तो बहुत कुछ हुआ। लेकिन सबसे अधिक बुरा हुआ मोरारजी देसाई का। श्रीमती इन्दिरी गांधी ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि मोरारजी की आर्थिक नीति मुझे कतई पसन्द नहीं। वे अर्थ विभाग संभालने में सर्वक्षा अक्षम है। इन्दिरा ने अपने विशेषाधिकार का प्रयोग करके उनसे वित्तमंत्रालय छीन लिया। मोरारजी ने आवेश में आकर पूरे मंत्रिमण्डल से त्यागपत्र दे दिया। न वे वित्तमंत्री रहना चाहते, न उपप्रधानमंत्री!

श्री कामराज, निजलिंगप्पा, चह्वाण प्रभृति ने हजार प्रयत्न किये कि प्रधानमंत्री व उपप्रधानमंत्री के बीच सौमनस्य स्थापित हो लेकिन सारे प्रयत्न विफल गए। इन्दिरा ने मोरारजी का त्यागपत्र स्वीकार कर लिया, फलस्वरूप वे मंत्रिमण्डल से पूर्णतया बाहर हो गए।

मोरारजी देसाई देश के सुप्रसिद्ध विद्वान् और बहुत परिपक्व राजनीतिज्ञ हैं किन्तु बेचारे हैं किस्मत के निर्धन! जैसा कि एक अंग्रेजी दैनिक ने लिखा है कि मोरारजी पर दुहरी मार पड़ी है। नेहरू ने इनको मारा —नेहरू की बेटी ने भी इनको मारा!

दूसरे दिन संसद में उन्होंने बड़ी मार्मिक गाथा दुहराई यानी कि बहुत बे-आबरू होकर तेरे कूचे से हम निकले!

उत्तराधिकार की कहानी

श्री लालबहादुर शास्त्री नेहरू जी के अन्तिम दिनों में उनके समीप ही रहने लगे थे और सबको यह विश्वास हो गया कि वे ही देश के भावी प्रधान मंत्री हैं, लेकिन जैसा कि श्री कुलदीप नैयर अपनी पुस्तक—Between the lines में लिखते हैं—शास्त्री जी ने नेहरू जी के मन को टटोलने की चेष्टा की थी और वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि नेहरू जी अपनी बेटी इन्दिरा को प्रधानमंत्री बनाना चाहते थे—न कि शास्त्री जी को!

श्री नेहरू का देहावसान

श्री शास्त्री का देहावसान और चतुर्थ आम-निर्वाचन के बाद—इन तीन कालों में उत्तराधिकार का जो संघर्ष छिड़ा—इन सबका विवरण प्रस्तुत करते हुए श्री नैयर लिखते हैं कि कामराज योजना के फलस्वरूप शास्त्री जी मंत्रिमण्डल से बाहर जा पड़े थे लेकिन नेहरू जी जब रुग्ण हुए तो शास्त्री जी को वापस बुलाया गया। शास्त्री जी नेहरू जी के सारे कामकाज देखते थे किन्तु उन्होंने कभी यह सोचा हो कि इस प्रकार वे प्रधानमंत्री बनने लगे हैं तो यह उनकी भूल मानी जाती! नेहरू जी जैसे ही स्वस्थ हुए—सबकी सब फाइलें सीधे उनके पास जाने लगीं और शास्त्री जी को इस विषय में कई दिनों के बाद किसी सचिव या उपसचिव की मार्फत पता चलता था। शास्त्री जी कहा करते थे—मैं तो अच्छा खासा एक क्लर्क हूँ।

शास्त्री जी ने सोचा भी कि मंत्रिमण्डल छोड़कर अलग हो जायें लेकिन ऐसा इसलिए नहीं कर पाये कि सिण्डीकेट यह नहीं चाहता था कि वे मंत्रिमण्डल से अलग हों—यद्यपि उनका स्थान चतुर्थ था। दूसरा कारण यह था कि नेहरू जी ने उन्हें अपने स्थानापन्न रखा था और लोगों में यह जो आम धारणा बनने लगी थी कि वे देश के भावी प्रधानमंत्री हैं—वे चाहते थे कि यह धारणा बनी रहे।

इन्दिरा जी शास्त्री जी से ईर्ष्या करती थीं और अपने पिता के सामने शास्त्री जी की गलत तस्वीर पेश करती थीं। नेहरू जी ने इस मनमुटाव को तूल पकड़ने नहीं दिया। इधर शास्त्री जी अपने आप में ज्यादा आश्वस्त नहीं थे कि नेहरू के बाद वही सर्वेसर्वा हैं, वे सोचने लगे थे कि उनके अलावा और भी कोई है।

श्री नैयर लिखते हैं कि मैंने एक दिन शास्त्री जी से पूछ लिया – आपके विचार में श्री नेहरू किसको अपना उत्तराधिकारी चुनना पसन्द करेंगे ?

'अपनी बेटी को !' शास्त्री जी ने एकदम जवाब दिया जैसे उन्होंने पहले से ऐसा सोच रक्खा हो ! 'लेकिन यह बात सहज बनने वाली नहीं है।' शास्त्री जी फिर बोले !

'लोगों का ख्याल है कि आप नेहरू जी के शिष्य हैं, इसलिए उनके देहावसान के बाद आप उनकी बेटी इन्दिरा गांधी को सिंहासन पर बिठाने के लिए यत्न करेंगे !' मैंने प्रश्न किया !

'मैं इतने हद तक साधु नहीं हूं जितना कि आप सोचते हैं।' शास्त्री जी ने स्पष्टीकरण किया।

परन्तु जाने क्या हुआ कि नेहरू जी के देहावसान के बाद शास्त्री जी ने अपनी साधुता ही दिखाई और इन्दिरा जी के पक्ष में सर्वसम्मति पाने के लिए यत्न करने लग पड़े जिसमें दुर्भाग्यवश उन्हें सफलता नहीं मिली।

मोरारजी देसाई आड़े आते थे। शास्त्री जी ने मध्य प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री द्वारकाप्रसाद मिश्र के मार्फत देसाई जी से कहलवाया कि वे इन्दिरा जी के पक्ष में अपना नाम वापस ले लें। श्री देसाई ने इस प्रस्ताव को बिल्कुल ठुकराते हुए कहा कि वे शास्त्री जी के पक्ष में अपना नाम वापस ले सकते हैं—न कि इन्दिरा के पक्ष में !

शास्त्री जी प्रधानमंत्री पद पर आरूढ़ होने के दो वर्ष पश्चात् चल बसे। फिर श्री कामराज ने इन्दिरा जी को प्रधानमंत्री बनाया। कांग्रेस अध्यक्ष ऐसा करने के लिए किस प्रकार पहले से वचनबद्ध थे इस सम्बन्ध में श्री नैयर ने रहस्योद्घाटन किया है कि नेहरू जी की रुग्णावस्था में जब शास्त्री जी कामकाज चला रहे थे तब भुवनेश्वर में श्री नेहरू व कामराज के बीच बड़ी दिलचस्प वार्ता हुई थी ! श्री कामराज ने नेहरू जी से पूछा 'शास्त्री जी की बनिस्बत इन्दिरा जी अच्छी रहेंगी !' कहते हैं, नेहरू कुछ देर चुप रहे, फिर बोले 'नहीं, अभी नहीं, फिर देखेंगे !' कामराज ने मन ही मन ठान लिया कि फिलहाल शास्त्री जी ठीक हैं, इसके बाद इन्दिरा जी को ही प्रधान मंत्री बनाऊँगा !'

कामराज ने अपना वचन पूरा कर दिखाया। शास्त्री जी के बाद उन्होंने तिकड़म भिड़ाकर इन्दिरा जी को प्रधानमंत्री बना दिया।...सवाल यह है कि नेहरू जी ने इन्दिरा को अपना उत्तराधिकारी चुना था ? कामराज यह प्रश्न पूछना भूल गए नेहरू जी से !

चीनी आक्रमण की चर्चा करते हुए श्री नैयर लिखते हैं कि नेहरू जी तथा उनके सहयोगियों ने चीनियों की युद्धविराम घोषणा व भारतीय भूमि से वापसी की बात भी अखबारों में पढ़कर जाना। इससे पूर्व वे लोग कुछ नहीं जानते थे।

गौहाटी की मांग थी कि केन्द्रीय मंत्रिमण्डल का कोई वरिष्ठ मंत्री आसाम आकर यहां की स्थिति का अध्ययन करे। निर्णय किया गया कि शास्त्री जी को आसाम भेजा जाये।

२१ नवम्बर १९६२ को समाचारपत्रों ने चीनियों की युद्धविराम घोषणा की खबर छापी ! आश्चर्य की बात है कि इससे पूर्व स्वराष्ट्र मंत्रालय व गुप्तचर विभाग को इस विषय में कुछ पता नहीं था। स्वराष्ट्र मंत्री उसी दिन हवाई अड्डे पर ठीक प्रातः छः बजे पहुँचे। उन्होंने जब खबर पढ़ी तो चकित होकर कहा—'मुझे अपनी यात्रा रद्द करनी पड़ेगी। फिर भी प्रधानमंत्री से बातचीत तो कर लूं।'

श्री नेहरू सोकर उठे तो युद्धविराम की बात सुनी। यह खबर जब कि अखबार वालों को ५-६ घंटे पहले ही प्राप्त हो चुकी थी, उन्हें सवेरे उठने के बाद पता चला। उन्होंने अपनी प्रतिक्रिया जाहिर की—'चलो अच्छा ही हुआ। मैं ऐसा सोच ही रहा था।' उन्होंने अखबार पढ़कर समाचार की पुष्टि कर ली।

शास्त्री जी ने पूछा कि आसाम जाना अब जरूरी तो नहीं रह गया है ? नेहरू जी ने कहा कि यात्रा रद्द नहीं करनी चाहिए। घूम फिर आओ, मगर जल्दी वापस

आ जाना !

वे वापस हवाई अड्डे पर पहुँचे तभी सुना कि राष्ट्रपति कनेडी के निजी दूत एवरेल हैरिमन यहाँ आ रहे हैं। वे बोल पड़े – 'चीनियों ने इसलिए युद्ध विराम की घोषणा की है कि हम अमरीका से इस निमित्त शस्त्रास्त्र न ले सकें।'

भारत इण्डोनेशिया पुनर्मिलन

भारतेतर देशों में भारतीय संस्कृति के सर्वाधिक अवशेष जहाँ मिलते हैं वह देश है इण्डोनेशिया ! यद्यपि वहां के निवासी बहुसंख्यक मुसलिम हैं किन्तु वहां भारतीय रामायण और महाभारत का प्रचलन है। यह बात दूसरी है कि वे लोग इनकी व्याख्या अपने ढंग से करते हैं। भारत इण्डोनेशिया की दोस्ती पारम्परिक और पुरातन है। लेकिन पिछली दशाब्दी में तत्कालीन राष्ट्रपति डाक्टर सुकर्ण की घिनौनी राजनीति ने हम दोनों के बीच मनमुटाव का बीजवपन किया।

डाक्टर सुकर्ण चीनी मदारी के इशारे पर यों नाचने लगे कि – भारत को पानी पी-पीकर कोसना शुरू किया। हमें अमरीका का पिछलग्गू, सम्राज्यवादी अगुआ और जाने क्या-क्या कहना शुरू कर दिया। उन्होंने भारत का नैतिक बहिष्कार किया। व्यापार सम्बन्ध सब दफना दिये। विमान का गमनागमन तक बन्द करवा दिया। हिन्द महासागर का नाम बदलकर इण्डोनेशियन महासागर रखने पर आमादा हो गए। भारत-पाक संघर्ष में उन्होंने पाकिस्तान को शस्त्रास्त्र ही नहीं दिये बल्कि स्वयंसेवक भेजने की भी घोषणा की।

विधि का विडम्बना देखिए कि डाक्टर सुकर्ण की सत्ता दिन-दहाड़े छिन गई। जब से जनरल सुहर्त राष्ट्रपति पद पर आसीन हुए हैं उन्होंने भारत के प्रति सुकर्णवादी नीति का परित्याग किया है। उन्होंने मलयेशिया के सभी झगड़े समाप्त किए हैं और भारत के प्रति मैत्री का हाथ बढ़ाया है। अभी हाल में प्रधान मंत्री इन्दिरा गांधी से वार्तालाप में उन्होंने अपनी नीति का स्पष्टीकरण किया कि वे भारत-पाक झगड़े में तटस्थ रहेंगे। उन्होंने भारत से व्यापार सम्बन्ध, सांस्कृतिक सम्बन्ध, सबका नये सिरे से समारम्भ किया है। भारत ने भी इण्डोनेशिया को दीर्घ अवधि के लिए ऋण देने की घोषणा की है। व्यापार और तकनीकी मदद के सिलसिले में भारतीय शिष्टमंडल वहां जाने वाला है। दोनों देशों की दोस्ती का जीर्णोद्धार किया इन्दिरा और सुहर्त ने।

भारत-इण्डोनेशिया संयुक्त विज्ञप्ति में दोनों देशों ने तटस्थ नीति पर बल दिया है। दोनों ने आर्थिक सहयोग को प्रोत्साहन देने का व्रत लिया है। भारत ने इण्डोनेशिया की विकास योजनाओं में मदद देने का वचन दिया है जब कि इण्डोनेशिया ने भारत के प्रति आभार प्रकट किया है। हमें आशा है कि भारत-इण्डोनेशिया की मैत्री का नया अध्याय स्वर्णाक्षरों में लिखा जाने योग्य होगा।

नेपाल के हित में

राजनीति वस्तुतः एक कुत्सित खेल है—कि जिसमें, कहते हैं, अपनापन, अपनी संस्कृति व परम्परायें सब दफना दी जाती हैं। भारत-चीन संघर्षकाल में नेपाल ने गुरु गर्जना की थी कि चीनी सेनायें नेपाल होकर भारत में प्रवेश नहीं कर सकतीं—यदि ऐसा करेंगी तो नेपालियों के शव पर ही। नेपाल भारत का तीर्थस्थल है जब कि भारत नेपाल का गुरु देश है। हमने नेपाल को बहुत कुछ दिया है—हमने नेपाल को 'देश' कहलाने योग्य बनाया है।

इतनी अनन्य मैत्री के बावजूद भी राजनीतिक कारणों से नेपाल ने हम पर उंगली उठाया। नेपाल के वर्तमान प्रधान मन्त्री श्री कीर्तिनिधि बिष्ट ने भारत से कहा है कि हम अपने सैनिकों को उनकी सीमान्त चौकियों से हटा लें। नेपाल हमारे साथ विशेष प्रावधान को भी मानने पर राजी नहीं।

देश के प्रमुख समाचार पत्रों ने श्री बिष्ट के वक्तव्य में चाऊ एन लाई की आवाज को प्रतिध्वनित पाया है। चीन की मनसा यही है कि भारत के सभी पड़ोसियों को भारत के खिलाफ उभाड़ कर भारत को ब्लैकमेल करे। पाकिस्तान को अनाप-शनाप हथियारों की सहायता देना, बर्मा से मनमानी सीमा-सन्धि कर लेना, सिक्किम भूटान

इत्यादि में सैनिक खलबली मचाते रहना—यह सब भारत को ब्लैकमेल करने के तरीके हैं। इधर कुछ अरसे से चीन ने नेपाल में अपना पिछलग्गू वर्ग पैदा किया है—जो समय-समय पर 'भारत मुर्दाबाद' के नारे लगाया करते हैं। भारत को प्रतिक्रियावादी,साम्राज्यवादी बताया करते हैं, भारत के विरुद्ध—नाना प्रकार से विष वमन किया करते हैं।

विश्व में एक ही हिन्दू राष्ट्र है—वह है नेपाल ! भारतीय हिन्दुओं का मस्तक ऊँचा हो उठता है—नेपाल का शुभस्मरण कर। हम धर्मनिरपेक्षतावाद के अनावश्यक परिवृत्त में जब कि कैद हैं—हमें हिन्दू राष्ट्र नेपाल पर गर्व है। नेपाल के राष्ट्र विधायकों से हम आग्रह करना चाहेंगे कि वे हमारी पुनीत भावना की कद्र करें और चीन की प्रवंचना में न पड़ें।

मुसलिम गुण्डों को जमानत नहीं

इन्दौर में भारत केसरी चन्दगीराम की शोभायात्रा के दिन साम्प्रदायिक कलह के लिए दोषी चार मुसलिम गुण्डों—इकबाल बेग (बेला), मुमताज बेग (बाबू), राजकुमार (हिन्दू से मुसलमान बना) और अहमद खां की जमानत की अर्जी रद्द कर दी गई है। फिलहाल, इन्हें हिरासत में ही रहना पड़ेगा।

सत्र-न्यायाधीश श्री एम. एल. मालिक ने इन्हें जघन्य अपराधी बताया। इन लोगों ने पूर्व नियोजित विधि से भारत केसरी पर हमला किया—और शहर में साम्प्रदायिक कलह की बुनियाद डाली। पुलिस ने जब कि दंगा पर काबू पाने की चेष्टा की तो इन्होंने उन पर भी वार किया। साम्प्रदायिक कलह ने विराट रूप धारण किया—निर्दोष व्यक्तियों की जानें गईं—सारा शहर अस्तव्यस्त हो गया।

न्यायाधीश श्री मलिक ने कहा कि इन्हें इसलिए मुक्त नहीं किया जा सकता कि शहर में पुनः आंतक उभरने का डर है। इन पर मुकदमा जारी है।

आर्यसमाज सिवानी मण्डी के तत्त्वावधान में

१ जुलाई १९६९ की सायं प्रो० श्यामराव की अध्यक्षता में आयोजित एक सार्वजनिक सभा ने सर्वसम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किया—

सिवानी मण्डी तथा सिवानी क्षेत्र की जनता हरियाना की सरकार से यह मांग करती है कि जल्दी से जल्दी इस इलाके की गरीबी को दूर करने के लिये यहां की प्यासी धरती की प्यास बुझाने के लिये नहर का प्रबन्ध करे। यदि दो मास के अन्दर-अन्दर हमारी इस प्रार्थना को स्वीकार कर उचित कार्यवाही शुरू नहीं की जाती तो मजबूर होकर इस इलाके की जनता को आर्यसमाज के नेतृत्व में आन्दोलन करना पड़ेगा और तब इस इलाके में आने वाले मिनिस्टरों और प्रतिनिधि लोगों का स्वागत फूलमालाओं से करने के बदले विरोध प्रदर्शन से किया जायेगा।

हम आशा करते हैं कि हमारी बेबसी और गरीबी का मजाक न उड़ाते हुए हरियाणा की सरकार अविलम्ब हमारे खेतों के लिए जल की व्यवस्था करने में सक्रिय कदम उठायेगी।

इसी सम्बन्ध में जन-जागृति के लिये पदयात्रा का आयोजन भी किया जा रहा है जिसमें नशाबन्दी, बड़वा में शराब का ठेका बन्द करने और नहर लाने के लिये प्रचार किया जायेगा। यह पदयात्रा श्री मेहरचन्द महाशय की प्रधानता में निकाली जायेगी जो कि सिवानी मण्डी से शुरू होकर ईशरवाल तक पदयात्रा की जावेगी।

वैदिक शान्ति आश्रम सिवानी मण्डी
जिला हिसार (हरियाणा)

आखिर सवाल क्या है ?

● गुरुदत्त

आर्यसमाज को स्थापित हुए व्यानवे वर्ष से अधिक हो चुके हैं। सन् १८७७ में लाहौर में इसकी स्थापना हुई थी। यों तो बम्बई में इसकी स्थापना इससे भी पहले हुई थी, परन्तु इसका वर्तमान रूप तो लाहौर में ही बना था। सवाल यह है कि इसकी स्थापना किस कारण की गई थी और उद्देश्य की पूर्ति कहां तक हुई है ?

जब लाहौर में महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती को वेद-प्रचार करने में बावली साहब में सिक्खों द्वारा बाधा उपस्थित की गई। तदनन्तर रतनचन्द दाढ़ीवाले की सराय से भी उनको निकाल दिया गया और हस्पताल रोड पर ब्रह्मसमाज वालों ने भी वेद-प्रचार करने की स्वीकृति नहीं दी तो स्वामीजी किसी ऐसे स्थान के निर्माण के विषय में विचार करने लगे जहां वे अबाध रूप में अपने ढंग से वेद-प्रचार कर सकें। उस समय स्वामीजी एक मुसलमान के बंगले में ठहरे हुए थे और स्वामीजी के भक्त उनसे विचार-विनिमय कर रहे थे। यह निश्चय हुआ कि ब्रह्मसमाज की भांति नगर में आर्यसमाज की स्थापना की जाय, जिससे वेद-प्रचार का कार्य अबाध रूप से हो सके।

अपने विचार से तो हिन्दू समाज के विद्वान् वेद-प्रचार करते ही थे। स्थान-स्थान पर सामान्य रूप से और काशीजी में विशेष रूप में वेदादि शास्त्रों का पठन-पाठन होता था, परन्तु स्वामीजी के मतानुसार जो कुछ उस समय हिन्दू समाज के विद्वान् पढ़ते-पढ़ाते थे, वे न तो वेद थे और न ही उनका पढ़ना-पढ़ाना वेदानुकूल था। अनेक प्रकार के कपोल-कल्पित ग्रन्थ एवं कथायें वेद के नाम पर प्रचलित थीं और उनको पढ़ कर ही हिन्दू समाज में वेद की प्रतिष्ठा अथवा अप्रतिष्ठा बन रही थी। इन अनार्ष ग्रन्थों और उनमें लिखे अनार्ष कथानकों से समाज में अति भयंकर अनाचार सम्पन्न हो रहा था। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती इस प्रकार के मिथ्यावाद को सहन नहीं कर सके और वेद के वास्तविक स्वरूप तथा उसमें कही गयी वास्तविक शिक्षा को संसार में विख्यात करने के लिए वे भाग-दौड़ कर रहे थे। इस भाग-दौड़ में उनको आर्यसमाज की स्थापना की आवश्यकता अनुभव हुई थी

आर्यसमाज की स्थापना के छः-सात वर्ष उपरान्त ही स्वामीजी का देहान्त हो गया और वे अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक संसार में वेद-प्रचार से मानव-कल्याण करने की इच्छा करते रहे।

मानव-कल्याण किस बात में है और वह किस प्रकार किया जा सकेगा ? यह स्वामीजी के कार्य का आधार था। उनका विचार था कि वेद मानव-कल्याण के लिए ईश्वर ने रचे हैं और इनसे ही वास्तविक कल्याण की आशा की जा सकती है। अतः यह बात निर्विवाद है कि आर्यसमाज की स्थापना वेद-प्रचार के लिए ही की गयी थी।

स्वामीजी ऋक्, यजु, साम और अथर्व को ही वेद मानते थे। वेदों की शाखाओं, ब्राह्मण ग्रन्थों एवं उपनिषदादि ग्रन्थों को वेद नहीं मानते थे। इनको केवल मात्र वेद के व्याख्यान समझते थे। वेद की शाखाओं तथा उपनिषदादि ग्रन्थों के कहनेवाले मनुष्य थे, परन्तु संहिताओं (ऋक्, यजु, साम और अथर्व) को वह अपौरुषेय मानते थे। यह परमात्मा की वाणी है और लोक-कल्याण के लिये सृष्टि पर प्रकट हुई थी, ऐसा स्वामीजी का मत था।

क्योंकि स्वामीजी वेदों को ईश्वरीय ज्ञान का मूल स्रोत मानते थे, इस कारण वह सामान्य रूप में मानव समाज और विशेष रूप में हिन्दू समाज के लिये इसे संगठन का केन्द्र बनाना चाहते थे। उनकी यह उत्कट इच्छा थी कि कम से कम भारत में समाज की प्रत्येक गतिविधि वेदानुसार कर दी जाये। इसके लिए वह देश के एक कोने से दूसरे कोने तक भ्रमण करते रहे और लोगों को ऐसा करने के लिए उत्साहित करते रहे। यह स्वामीजी के अद्वितीय सम्मोहन का प्रभाव था तथा

उनकी प्रगल्भ वाक्-शक्ति के कारण था कि जो कोई भी उनके सम्पर्क में आता था, वह उनका अनुयायी हो जाता था और उनके कार्य में सहायक हो जाता था। जब लाहौर में आर्यसमाज की स्थापना हुई तो प्राय: वे लोग उसमें सम्मिलित हुये जो पहले ब्रह्मसमाज में सम्मिलित थे। रायबहादुर मूलराज, लाला साईदास, लाला लाल चन्द और अन्य अनेक ब्रह्मसमाज के सदस्य ब्रह्मसमाज को छोड़कर आर्यसमाज में सम्मिलित हुए। उन्हें ब्रह्मसमाज में कुछ अभाव प्रतीत हुआ था और उस अभाव की पूर्ति आर्यसमाज में दिखायी दी थी। वे लोग आर्यसमाज में आये और अपने चारों ओर अन्य हिन्दू समाज के लोगों को एकत्र करने लगे।

यदि स्वामीजी का जीवन लम्बा होता तो वह वेद-प्रचार के कार्य को क्या रूप देते और किस प्रकार वेद को आधार बनाकर समाज का संगठन करते, कहा नहीं जा सकता। आर्यसमाज की स्थापना के सात वर्ष उपरान्त उनका स्वर्गवास हो गया। इतने से काल में उन्होंने अजमेर में वेद-प्रचार का केन्द्र परोपकारिणी सभा स्थापित कर आरम्भ किया, परन्तु उनके पास समय इतना कम था कि देशव्यापी संगठन निर्माण नहीं हो सका। स्वामी जी का अपना वेद-भाष्य भी अपूर्ण ही रह गया। स्वामी जी के देहान्त के उपरान्त आर्यसमाज का मुख्य कार्य वेद-प्रचार और वेद के आधार पर देश के समाज का संगठन करना समाज के सदस्यों पर आ पड़ा।

अत: सवाल यह है कि आर्यसमाज के सदस्यों ने इस कार्य को कहाँ तक किया और उसमें क्या सफलता प्राप्त की? हमारे विचार में आर्यसमाज के तत्कालीन सदस्य यह समझ ही नहीं सके कि वेद-प्रचार और वेद के आधार पर समाज का संगठन मुख्य बात थी अथवा हिन्दू समाज की विधर्मियों से रक्षा मुख्य थी? मोटी दृष्टि से ये दोनों बातें एक ही प्रतीत होती हैं, परन्तु हिन्दू समाज की विधर्मियों से रक्षा तो बिना वेद-प्रचार के भी की जा सकती थी और ऐसा ही इन लोगों ने करने का यत्न किया जिन्होंने महर्षि की प्रथम स्मृति में दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज की नींव रखी। उस समय यह विवाद उठ खड़ा हुआ था कि स्वामीजी की स्मृति में स्कूल-कालेज स्थापित किया जाये और चलाया जाये अथवा वेद-प्रचार के कार्य पर बल दिया जाये। प्राय: ब्रह्मसमाज से निकल कर आये हुए आर्यसमाजी भटक गये और वे हिन्दू समाज की रक्षा को वेद की रक्षा पर उपमा दे बैठे। जो लोग दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज की स्थापना का विरोध कर रहे थे, वे चाहते थे कि यदि कोई शिक्षण संस्था स्वामीजी की स्मृति में खोली जाये तो वह केवल मात्र वेदादि शास्त्र के पढ़ाने के लिये ही हो, परन्तु इन लोगों की संख्या और प्रभाव ब्रह्मसमाज से आये आर्यसमाजियों से कम था। परिणामस्वरूप डी० ए० वी० स्कूल और कालेज स्थापित हुए और सन् १८८५ से लेकर आज तक आर्यसमाज के एक विशाल जनसमूह की पूर्ण शक्ति डी० ए० वी० स्कूल और कालेजों के चलाने में व्यय हो रही है।

हम इन स्कूल, कालेजों की स्थापना के विरुद्ध नहीं हैं और न ही हम इनको निरर्थक मानते हैं। इनका अपना कार्य है और प्राय: डी० ए० वी० स्कूल और कालेज हिन्दू समाज के विकास में एक विशेष स्थान रखते हैं, परन्तु इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि यह न तो स्वामीजी का जीवन-कार्य था और न ही आर्यसमाज की स्थापना में उद्देश्य।

आर्यसमाज में कुछ लोगों ने इन स्कूलों, कालेजों की स्थापना में त्रुटि देखी और उन्होंने गुरुकुल स्थापित किये। सबसे प्रथम और प्रमुख गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार में स्थापित हुआ और महात्मा मुंशीरामजी, जो आगे चलकर स्वामी श्रद्धानन्द के नाम से विख्यात हुए, इसके संचालक बने।

हमारे विचार में गुरुकुल आन्दोलन वेद-प्रचार के लिये और जनता में वेदानुकूल जीवन-पद्धति निर्माण करने के लिये चलाया गया था, परन्तु ऐसे संस्थान स्कूल और कालेजों का स्थानापन्न नहीं हो सकते थे। सारा अभिप्राय है कि स्कूल और कालेज सामान्य शिक्षा के केन्द्र हैं। वहां पर सहस्रों की संख्या में विद्यार्थी एकत्र कर जीविकोपार्जन के योग्य बनाये जाते हैं, किन्तु हमारी कल्पना गुरुकुल आन्दोलन की इससे सर्वथा भिन्न है। गुरुकुलों में जीविकोपार्जन मुख्य विषय नहीं होना चाहिये था। इनमें वेदमत के प्रचार और प्रसार के लिये विद्वान् उपदेशक निर्माण करने का उद्देश्य होना चाहिये था। ये लोग संख्या में कम, परन्तु विद्वत्ता में अनुपम होने चाहिये थे। दूसरे शब्दों में हमारी कल्पना गुरुकुल शिक्षा से वेद के प्रचारक

निर्माण करना था। यदि ऐसा किया जाता तो पिछले पैंसठ वर्ष में हिन्दुस्तान में वेद-प्रचार का डंका बज चुका होता।

आरम्भ में तो गुरुकुल आन्दोलन का उद्देश्य कुछ ऐसा ही समझ आया था, जैसा कि हमने वर्णन किया है। यह समझा जाता था कि गुरुकुल में पढ़े हुए स्नातक त्याग और तपस्या का जीवन व्यतीत करते हुए 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का उद्देश्य पूर्ण करेंगे। यह आशा नहीं की जाती थी कि गुरुकुलों में सहस्रों की संख्या में विद्यार्थी भरती होंगे, परन्तु यह आशा अवश्य की जा रही थी कि जितने भी स्नातक गुरुकुलों से निकलेंगे, उनके जीवन-यापन का प्रबन्ध आर्य समाज करेगी और वे लोग महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के उद्देश्य की पूर्ति करेंगे। परन्तु धीरे-धीरे गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार को डी० ए० वी० स्कूल-कालेजों का विकल्प बनाने का यत्न किया गया और आज तो गुरुकुल देश के किसी भी विश्वविद्यालय का विकल्प बनने का यत्न कर रहा है। देश में विश्वविद्यालय स्वामी जी के उद्देश्य की पूर्ति में स्थापित नहीं किये गये। उनका उद्देश्य देश में युवकों को जीविका चलाने के योग्य बनाना है। यह ठीक है कि देश के जन-जन की जीविका के लिये औद्योगिक विकास के लिये विश्वविद्यालयों की शिक्षा को विशेष दिशा मिलनी चाहिये, परन्तु वेद-प्रचार का कार्य तो इससे भिन्न और इससे ऊपर है। देश में दस-बीस गुरुकुल होते जिनमें दो-चार सौ स्नातक प्रति वर्ष तैयार किये जाते जो वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् बन कर स्वामीजी के स्वप्न, कि जीवन का आधार वेद हो, को साकार कर सकते। यह विद्वान देश के साठ सत्तर विश्वविद्यालयों से निकलनेवाले लाखों की संख्या में स्नातकों को दिशा प्रदान कर सकते। ये लोग सुसंगठित रूप में वेद-प्रचार का कार्य करते और वर्तमान शिक्षितों में वैदिक रंग भर सकते।

आखिर सवाल यह है कि आर्यसमाज क्यों और क्या है? जो झगड़े आर्यसमाजों में व्यापक रूप में पिछले कुछ वर्षों से चल रहे हैं, समाज की उद्देश्य पूर्ति में नहीं हैं। देश में आर्यसमाजों की संख्या कई सहस्र हैं और स्वामी दयानन्द जी महाराज की शैली पर वेद-प्रचार करनेवालों की संख्या नगण्य है। यों तो प्रत्येक समाज में जब भी कोई उपदेशक प्रार्थना अथवा उपदेश करता है तो वह वेद-मन्त्र बोलकर ही करता है, परन्तु ये लोग अथवा अन्य कोई आर्यसमाज के संस्थानों से शिक्षित विद्वान् वेद पर चढ़ी हुई कोई जो उव्वट, सायण, महीधर अथवा मैक्समूलर, मैकडानल्ड इत्यादि ने एकत्र कर दी है, को छिन्न-भिन्न करने में समर्थ नहीं है। अब तो ऐसे आर्य समाज के वेद पण्डित उत्पन्न होने लगे हैं कि जो मैक्समूलर के भाष्य से उद्धरण देते हैं और सायण को वेद का विद्वान् माननेवाले तो आर्यसमाज में अनेक हैं। पिछले पचहत्तर वर्ष में आर्यसमाज में किसी एक वेद के अनार्य भाष्य को अप्रमाणित एवं अयुक्तिसंगत सिद्ध करने का यत्न नहीं किया। जहाँ आर्यसमाज ने करोड़ों रुपये यूनिवर्सिटी-शिक्षा देने के लिये शिक्षण-संस्थाओं में लगाये हुए हैं, वहाँ इनका एक भी ऐसा संस्थान नहीं है जहाँ वेद-निन्दकों द्वारा किये गये भाष्यों का प्रतिवाद किया जाता हो। क्या ही अच्छा होता कि दस-बीस आर्यसमाजी विद्वान् पण्डित एक स्थान पर बैठकर सायण अथवा मैक्समूलर इत्यादि के भाष्यों का मन्त्र-मन्त्र लेकर खण्डन करते और बताते कि क्यों वे भाष्य प्रमाणित नहीं हो सकते?

इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि ईसाईयों और मुसलमानों के हिन्दू समाज पर कुठाराघात कर खण्डन करना अत्यावश्यक है। हिन्दू समाज को यह बताने के लिये कि ईसाई पादरी विदेशी से रुपया मंगवा कर किस प्रकार हिन्दू समाज का विनाश कर रहे हैं, जितना भी शोर मचाया जाये, कम है। परन्तु यह मूल कार्य नहीं है। मूल कार्य है देश भर के विश्वविद्यालयों में मैकाले की शिक्षा से शिक्षित प्राध्यापकों के सामने मैक्समूलर प्रभृति को अविद्वान् सिद्ध करना।

पिछले वर्ष वेदों में गो-हत्या और गो-मांस खाने की चर्चा चली थी। विश्वविद्यालयों के कई प्राध्यापकों ने इस विषय में अपना मत वेदों में गो-हत्या होने के पक्ष में दिया था। सवाल यह है कि आर्य समाज ने इसके प्रतिवाद में क्या किया? कौन सी पुस्तक ऐसी छपवायी गयी जिसमें उन वेद-मन्त्रों का स्पष्टीकरण किया हो, जिनको गो-हत्या के विषय में उपस्थित किया जाता है। यदि किसी इक्के दुक्के व्यक्ति ने व्यक्तिगत रूप में कुछ लिखा भी तो उसका प्रचार नहीं हो सका। हमारा मत है कि आर्यसमाज अपने मूल उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर रही। इस दिशा में क्या होना चाहिये, यह इस लेख का विषय नहीं है। इस लेख का विषय तो यही है कि क्या आर्यसमाज ने अपनी स्थापना के उद्देश्य को पूर्ण किया है अथवा पूर्ण करने में यत्न किया है? हमारा मत है कि नहीं किया।

मंजूषा

ज्ञानेश्वर शास्त्री

मैं सभी परिस्थितियों का सामना करने के लिए तैयार हूँ। परमेश्वर जो करता है, अच्छा ही करता है।

—मोरारजी देसाई

व्यं० व० गिरि और संजीव रेड्डी दोनों ही मेरे मित्र हैं, मैं दोनों का भला चाहता हूँ।

—आचार्य कृपलानी

राष्ट्रपति के पास कोई अधिकार नहीं है। वह तो सोने के पिंजरे में बन्द एक पँछी के समान है। इसलिए मैंने राष्ट्रपति-पद के लिए अपना नाम प्रस्तावित नहीं किया।

—जयप्रकाश नारायण

दुर्बल मन वाले ही सोचा करते हैं कि जो करे, सरकार करे ! फिर जनता के लिए करने योग्य क्या है ?

—च० राजगोपालाचारी

साम्यवाद को परेशान कर रहा है—एक भूत ! वह भूत कौन है ? उसका अपना ही खोखलापन !

—न्यू स्टेट्समैन

[मैं घेराव का समर्थक हूँ, परन्तु] मैं स्वयं डरता हूँ कि लोग कहीं मेरा ही घेराव न कर लें !

—ज्योति बसु

सरकार चलाना मेरे वश का रोग नहीं !

—भोलापाशवान शास्त्री

मेरी समझ में चीन से फिलहाल कोई खतरा नहीं है।

—इन्दिरा गांधी

कांग्रेस से बाहर रहकर जो समाजवाद का विरोध करते डरते थे, वे कांग्रेस में आ घुसे हैं।

—कामराज

चीन के जाल में पड़कर तो आप उलझ जायेंगे। लेकिन अमरीकी जाल में गिरने का तो अभिप्राय है अपना निधन !

—सैंच्यूरी

दूसरों को राजसिंहासन पर बिठाने वाले कभी स्वयं भी इस पर बैठने के लिए ललायित हो सकते हैं।

—जी. के. रेड्डी [कामराज के सन्दर्भ में]

आंधी—और तूफान,
बवंडर—बियावान।
प्रलय के दृश्य देखकर
क्या होना है भयभीत ?
नहीं !
क्योंकि पुरातन का ध्वंस हो रहा है।
नव-निर्माण अवश्यम्भावी है।

—स्कोरपियो (ब्लिट्ज)

[महात्मा गांधी की इच्छा थी कि आजादी के बाद कांग्रेस को समाप्त कर दिया जाये] गांधी-शताब्दी वर्ष में कांग्रेसियों को अपने राष्ट्रपिता की इच्छा पूरी करनी चाहिये। यानी कांग्रेस को समेट देना चाहिये।

—विजयकुमार मल्होत्रा

हम [कांग्रेस प्रतिनिधिगण] कांच के महल में बैठे हैं इसलिए हमें एक दूसरे पर पत्थर नहीं फेंकना चाहिए।

—नागप्पा अलवा

मौरीशस में प्रचारक चाहियें

मौरीशस से 'सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्' के लिये एक पत्र आया है जिसमें उन्होंने परिषद् को कोई विद्वान् युवक वैदिक धर्म के प्रचारार्थ भेजने की प्रार्थना की है। यदि कोई युवक कम से कम दो साल के लिये यह काम करना चाहे तो वह शीघ्र अपनी योग्यता आदि का परिचय देते हुए परिषद् कार्यालय से पत्र द्वारा सम्पर्क करें।

—सम्पादक

वैदिक अर्थव्यवस्था का स्वरूप

रामानन्द एम० ए० (अर्थशास्त्र)

आर्यावर्त की सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं आर्थिक स्थिति को विशृंखल करने का जितना दोष पाश्चात्यों पर लगाया जाता है उससे अधिक दोषी एतद्-देशीय लोग हैं। क्योंकि पराधीनता की स्थिति में शासित राष्ट्र अधीन राष्ट्र की संस्कृति को समूल रूप से नष्ट कर अपने देश की संस्कृति की स्थापना करता है। यह सर्व-मान्य तथ्य है। किन्तु स्वाधीन राष्ट्र होने पर अपने देश-वासी अपनी संस्कृति एवं आर्थिक व्यवस्था की उपेक्षा कर विजातीय आर्थिक व्यवस्था का जो अन्धानुकरण कर रहे हैं यह उनकी बुद्धि के दिवालिया होने की पराकाष्ठा एवं एतद्देशीय संस्कृति से शून्य रहने का प्रमाण है।

अर्थव्यवस्था के स्वरूप का तात्पर्य

अर्थव्यवस्था के स्वरूप से हमारा तात्पर्य अर्थ की पूर्ण प्रक्रिया से है अर्थात् अर्थ का उपार्जन, अर्थ की वृद्धि एवं अर्थ के वितरण से हैं। जैसा कि यजुर्वेद आदेश देता है:—

'विभक्तकारं हवामहे वसोश्चित्रस्य राधसः।
(यजुः ३०।४)

अर्थात् सम्पत्ति का वितरण करनेवाले को ठीक-ठीक परखकर सम्पति को वितरित करना चाहिए। ठीक परख का आधार ऋग्वेद के शब्दों में ही सुनिये—
'न वा उ देवाः क्षुदयिद्वधं ददुः' (ऋ० १०।११।७१)

अर्थात् सम्पत्ति का वितरण ऐसे व्यक्तियों के हाथ में होना चाहिए कि कोई क्षुधित न रहने पाये।

अर्थव्यवस्था के स्वरूप का आधार

वैदिक अर्थव्यवस्था के स्वरूप का आधार जन्मगत न होकर कर्मगत था अर्थात् जो व्यक्ति गुण, कर्म, स्वभाव से सम्पत्ति को अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति न समझकर राष्ट्र की सम्पत्ति समझता है और इसी कारण सम्पत्ति का संकुचन न करके सम्पत्ति को सभी में वितरित करने में ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझता है और वह किसी पर आश्रित न होकर अपने पुरुषार्थ पर आश्रित रहता है जैसा वेद आदेश करता है:—

'कृतम्मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः।
(अथर्व०—७।५०।८)

अतः वैदिक व्यवस्था के अनुसार व्यक्ति जन्माधिकार के कारण नहीं अपितु कर्माधिकार और सदुपयोग के आधार पर अर्थपति (वैश्य) घोषित किया जाता था। इस व्यवस्था के लिए प्रत्येक बच्चे को ७ वर्ष की आयु से २५ वर्ष की आयु तक गुण, कर्म, एवं स्वभाव के अनुसार प्रशिक्षण दिया जाता था और यदि जन्म वैश्य कुल में हुआ हो और गुण,कर्म,स्वभाव,वैश्य कर्त्तव्य से विपरीत है और ब्राह्मण-क्षत्रिय या शूद्र के कर्म, स्वभाव या गुण हैं तो वैश्य उत्पन्न बालक क्रमशः गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र, माना जाता था।

वर्तमान समय में सभी विवादों का मूल कारण आज यही जन्मगत अधिकार है। कर्मगत नहीं। जन्मगत होने के कारण हमारे समाज में अन्याय अभाव और अज्ञानता अपने प्रचण्ड रूप में मानवता की लाश पर ताण्डव नृत्य कर रही है और जब तक ये तीनों रणचंडियां अपना नृत्य करेंगी तब तक समाज में समस्यायें ज्यामितीय रूप से बढ़ेगी और यदि समाज को इन कालों से वंचित कर सम्पन्नता एवं प्रेम-स्नेह सहानुभूति से सम्पन्न निर्मित करना चाहते हो तो आओ आज व्रत लेकर वेद की आज्ञा को कार्यान्वित करने में अपने को इदन्न मम् करें:—

क्योंकि मनुस्मृति जो वैदिक अर्थव्यवस्था का व्यावहारिक रूप उद्घोष करती है:—

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च॥
(मनु० १०।६५)

अर्थ वितरित करने का दूसरा आधार दक्षिणा मघोनी

दक्षिणा मघोनी से तात्पर्य यथायोग्य दक्षिणा देने है

है और यथायोग्य का आधार कर्मगत है और कर्मगत का साधन शिक्षा व्यवस्था है। अतः ७ वर्ष से लेकर २५ वर्ष पर्यन्त अर्थ सम्बन्धी विद्याओं का अध्ययन कर श्रीपति वैश्य जब कर्त्तव्य क्षेत्र में पदार्पण करता है तो उसके सामने उसका सबसे बड़ा शत्रु बेकारी, भुखमरी, अभाव, आर्थिक असमानता रहता था और अपने शत्रुओं को चुन चुन कर समूल नष्ट करने के लिए वह प्रत्येक स्थान से सम्पत्ति लाकर समाज में यथायोग्य वितरित करता था। He brought to life from out of water, from stones, from out of forest trees and herbs that grows on ground."

इसके अतिरिक्त—'वस्वो रायः पुरुश्चन्द्रस्य प्रजावतः स्व पत्यस्य शाग्धिनः (ऋग्वेद)

"Help us to wealth, exceeding good and glorious, abundant rich in children and their progeny."

अर्थात् वह गोपालन द्वारा समाज में व्यक्तियों को पुष्टिवर्द्धक भोजन की व्यवस्था करता था। अतः समाज में सभी स्वस्थ्य, हृष्ट पुष्ट एवं नीरोग रहते थे। किन्तु वर्तमान मांसाहारियों ने अपने उपलक्षण के रूप में राष्ट्रीय पशु शेर घोषित किया है। क्यों न घोषित करें क्योंकि भारतवर्ष की ८०% ग्रामीण व जनता का रक्त पीकर मोटे होकर तथा मीठी २ बातें बताकर शेर को राष्ट्रीय पशु नहीं घोषित करेंगे तो किसे घोषित करेंगे ?

वर्तमान रक्त-पिपासु नरभोजी शासक अब गाय का दूध न पीकर शेरनी का दूध पियेंगे। किन्तु शेरनी के दूध पीने की कल्पना करनेवालो, तुम नहीं जानते कि ज्यों ही तुम उसके पास जाओगे वह तुम्हें बख्सेगी नहीं। अतः इन रक्त-पिपासु वर्तमान काले अंग्रेजों ने अपने मरने की तैयारी कर ली है।

अतः राष्ट्र-भक्त मानव-भक्त जीव गाय-भक्त आर्य पुरुषो आओ, संगठित होकर आर्य राष्ट्र की स्थापना अपने मर्यादा की स्थापना करें। वर्तमान नरभोजियों से आशा रखना छोड़ दो। यदि समय के रहते हुये नहीं पहचाना तो आगे आने वाला इतिहास कभी क्षमा नहीं करेगा।

कर्मगत अधिकार एवं राष्ट्रीयकरण में अन्तर

राष्ट्रीयकरण का आधार धरती की असमान आर्थिक अवस्था है। राष्ट्रीयकरण में विश्वास रखने वाले समाजवादी या साम्यवादियों के अनुसार सम्पत्ति राष्ट्र (अर्थात् शासक वर्ग-विशेष) के हाथ में रहने पर राष्ट्र से आर्थिक अन्याय, अभाव एव अज्ञान को समाप्त किया जा सकता है। अतः व्यक्ति चाहे कितना ही योग्य क्यों न हो, सम्पत्ति का अधिकारी नहीं हो सकेगा।

इसके विपरीत वैदिक अर्थ व्यवस्था (आर्य राज्य में) अर्थ का स्वामित्व गुण-कर्म-स्वभाव वाले व्यक्ति के हाथ में होगा किन्तु इसका निर्धारण विद्या सभा और राजार्य सभा करेगी।

अतः आज साम्यवादी अर्थ व्यवस्था में भी बेकारी एवं आर्थिक असमानता दृष्टिगत होती है पूर्ण रोजगार सम्पन्न व्यवस्था (equilibrium of full employment) आज साम्यवादी अर्थ व्यवस्था में भी नहीं है। पूर्ण रोजगार सम्पन्न व्यवस्था वैदिक अर्थव्यवस्था के अनुसार सम्भव है क्योंकि इस व्यवस्था के अनुसार सम्पत्ति का स्वामित्व उसी व्यक्ति के हाथ में होगा जो आर्थिक असमानता एवं अन्याय को मिटाने में सक्षम एवं समर्थ है। और ऐसे व्यक्ति का निर्धारण गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार विद्यार्य सभा करेगी तथा राजार्य सभा इस प्रकार की व्यवस्था में सहायक सिद्ध होगा। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि सम्पूर्ण वैदिक वाङमय में बेकारी (unemployment) शब्द नहीं है क्योंकि इस व्यवस्था में शिक्षण का उद्देश्य था राष्ट्र से आर्थिक सामाजिक अन्याय अभाव एवं अज्ञान के साथ संघर्ष करने वाले सच्चे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य उत्पन्न करना, आज की व्यवस्था की तरह आलसी अभिमानी अराष्ट्रीय एवं अमानवीय नागरिक बनाना नहीं।

वैदिक अर्थव्यवस्था की विशेषता

वैदिक अर्थव्यवस्था की प्रमुख विशेष एक स्वामित्व केवल एक व्यक्ति को, अर्थात् जिसे श्रीपति बनाया जाता था तो वह ब्राह्मण की तरह ऊँचा सम्मान एवं क्षत्रिय की तरह कुशल शासक के सम्मान से वंचित रहता था।

अर्थात् शक्ति का विकेन्द्रीकरण (decentralisation) था जैसा यजुर्वेद कहता है।

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत बाहु राजन्यो कृतः।
उरु तदस्य यद्वैश्य पद्भ्यां शूद्रो अजायत
(यजुः ३१।११)

वर्तमान समाजवादी एवं पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था का मुख्य दोष शक्ति का केन्द्रीकरण (centralisation) है जिसके कारण आज समाज में बढ़ता हुआ दोष ही दोष दिखाई देता है।

वर्तमान समय में वैदिक अर्थव्यवस्था की व्यावहारिकता

यदि राष्ट्र से अन्याय, अभाव एवं अविद्या को हटाना चाहते हैं तो प्रत्येक को एक सि वातावरण में रख कर शिक्षित करना होगा किन्तु यह कार्य राजसत्ता के आधार पर किया जा सकता है।

मध्य समय में प्रत्येक आर्य युवक को यह व्रत लेना होगा कि हम केवल एक क्षेत्र के ही अधिकारी बनेंगे विभिन्न क्षेत्रों के नहीं। उदाहरण के लिए यदि कृषक का लड़का अध्यापक है तो उसे वर्तमान समय में अध्यापन कार्य से प्राप्त दक्षिणा से संतोष करना होगा तथा पिता की भूमि से अपनी इच्छा से अपने आपको अधिकारों से वंचित रखना होगा। इसी प्रकार यदि वैश्य का लड़का डाक्टर है या अध्यापक तो उसे पूर्ववत ही संतोष करना होगा तथा अपने पिता की सम्पत्ति से अपने आपको अधिकारों से वंचित रखना होगा। तथा समाज में वैदिक ब्राह्मणों का या क्षत्रियों का स्थान पाने के लिए संघर्ष करना होगा। यदि इतना करने के लिए युवक तैयार हो जायें तो निश्चय ही समाज से प्रत्येक समस्या को सदैव के लिए निकाला जा सकता है।

अतः सुन्दर न्याय सम्पन्न ज्ञान से पूर्ण आर्य (वैदिक) अर्थव्यवस्था को चाहने वाले आर्य युवको, आओ अब आर्य युवकों की सेना में भरती होकर वैदिक आर्य व्यवस्था (आर्य राज्य की अर्थव्यवस्था) को पुन. स्थापित करें तभी राष्ट्र में सुख चैन स्थापित हो सकता है।

वैदिक अर्थव्यवस्था की आर्थिक नीति

पूंजीवादी अर्थ व्यवस्था की आर्थिक नीति (Laissej Faire or policy of non-intervention) अहस्तक्षेप की है अर्थात् जो व्यक्ति जो कुछ करना चाहे अर्थ के संचय में करे उसे पूर्ण छूट का परिणाम शोषण, चोर बाजारी धन संचय (hoarding) एवं अनेक वर्तमान पूंजीवादी कुपरिणाम आज हमारे सामने हैं।

समाजवादी या साम्यवादी अर्थव्यवस्था की आर्थिक नीति (principle of intervention) हस्तक्षेप की नीति है। अर्थात् प्रत्येक कार्य का राष्ट्रीयकरण होगा जिसका परिणाम आज साम्यवादी देशों का असंतोषपूर्ण वातावरण है जिसमें राष्ट्रीयकरण के नाम पर कितने अमानवीय कृत्य हो रहे हैं इसका प्रमाण रूस और चीन की घटनायें है।

वैदिक अर्थव्यवस्था की आर्थिक नीति (priority not by birth but by action traits and nature) गुण, कर्म स्वभाव हैं।

अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति समाज हितकारी नियम में परतन्त्र एवं प्रत्येक हितकारी नियम में स्वतन्त्र होगा।

वर्तमान पूंजीवादी एवं समाजवादी या साम्यवादी व्यवस्थाओं से समाज का अहित हो रहा है। अतः दोनों व्यवस्थायें पूर्णरूप से अव्याहारिक एवं अमानवीय हैं।

अतः वैदिक अर्थ नीति गुण, कर्म, स्वभावगत है जिसका आधार शिक्षा है इसलिए ऐसी व्यवस्था में पूर्ण आर्यराज्य (वैदिक राज्य) सम्भव है। इसके विपरीत अन्य व्यवस्थाओं में असम्भव है। क्योंकि ये दोनों व्यवस्थायें अमानवीय हैं जैसा कि आज की घटनायें प्रमाण है।

वैदिक अर्थव्यवस्था का अनुकरण अब तक क्यों नहीं किया गया ?

जैसा कि महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश ग्यारहवें समुल्लास में बताया है :—

"यह संसार की स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि जब बहुत सा धन असंख्य प्रयोजन से अधिक होता है तब आलस्य पुरुषार्थ रहितता, ईर्ष्या, द्वेष विषयासक्ति और प्रमाद बढ़ता है। इससे देश में विद्या, सुशिक्षा नष्ट होकर दुर्गुण और दुष्ट व्यसन बढ़ जाते हैं। जैसे की मांस सेवन, बाल्यावस्था में विवाह और स्वेच्छाचारादि दोष बढ़ जाते हैं। और जब युद्ध विभाग मे युद्धविद्याकौशल और सेना इतनी बढ़े कि जिसका सामना करने वाला कोई न रहे तो

उन लोगों में आपस में अन्याय बढ़ जाता है।

अतः परस्पर अन्याय बढ़ने के कारण वैदिक अर्थव्यवस्था का प्रचलन महाभारत के युद्ध के बाद से अब तक नहीं किया गया।

वैदिक अर्थव्यवस्था का दार्शनिक दृष्टिकोण

वर्तमान अर्थव्यवस्था का दार्शनिक रूप सीमित साधन एवं असीमित इच्छायें हैं। अतः समाज की प्रत्येक हितकारी एवं अहितकारी कृत्य पर प्रतिबन्ध लगाना अपेक्षित है। इस व्यवस्था का परिणाम अर्थासक्ति एवं अर्थ के लिए अनेक प्रकार के संघर्ष समाज में है। धनपति सारी सम्पत्ति को अपने नियंत्रण में रखता है न स्वयं व्यय करता है और न राष्ट्र को व्यय करने के लिये देता है। अर्थात् स्वयं आलसी एवं प्रमादी बन कर राष्ट्र में आलस्य एवं प्रमाद को बढ़ावा देता है।

इसके विपरीत वैदिक अर्थव्यवस्था का दार्शनिक दृष्टिकोण असीमित साधन एवं असीमित इच्छायें हैं। असीमिति इच्छाओं को तुष्ट करने के लिए अनवरत प्रयास करना चाहिए। उदाहरण के तौर पर माल्थस ने बताया कि जनसंख्या अधिक तेजी से बढ़ती है और साधन कम तेजी से अतः जनसंख्या पर प्रतिबन्ध लगना चाहिए। जब कि अथर्ववेद कहता है—

असंवाणं मध्यतो मानवानां यस्या उद्वतः प्रवतः समं बहु।
नानावीर्या ओषधीर्या विभर्ति पृथ्वी नः प्रथतां राध्यतां नः।

(अथर्व० १२ कांड अ० १-मन्त्र २)

अर्थात् पृथ्वी पर जनसंख्याधिक्य कभी भी नहीं हो सकता क्योंकि पृथ्वी पर अनेक उच्च कोटि की भूमियां है जिसका सदुपयोग करके पृथ्वी सदैव सुख सम्पन्न रखी जा सकती है।

इसी भाव को ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश तृतीय समुल्लास में निम्न प्रकार से व्यक्त किया है :— "पृथ्वी से लेकर आकाश पर्यन्त की विद्या को यथावत् सीख के जो अर्थ को बढ़ाने वाला है, उत्तम शिक्षा प्राप्त होके मनुष्य लोग कृतकृत्य हो कर सदा आनन्द में रहें।

इस प्रकार वैदिक अर्थव्यस्था का आधार कर्मगत है और जिस का आधार शिक्षा व्यवस्था है। अतः यदि हम वर्तमान समय में अनेक विवादों को छोड़ दें और राष्ट्र को सुसम्पन्न बनाने के लिए कर्मगत आर्थिक नीति को चरितार्थ करने के लिए कटिबद्ध हो जायें तो निश्चय ही राष्ट्र से अन्याय अभाव एवं अज्ञान को हटाकर चारों ओर न्याय-सम्पन्नता एवं ज्ञान का राज्य (आर्य राज्य) निर्मित किया जा सकता है।

किन्तु इसके लिए वर्तमान युवा पीढ़ी को संकुचित दृष्टिकोण को त्याग कर विशाल दृष्टिकोण अपनाना होगा अर्थात् बहुक्षेत्रों के जन्मगत स्वमित्व को त्याग कर कर्मगत स्वामित्व पर दृढ़ रहना होगा। यदि इतना करने के लिए युवक दृढ़व्रती हो जायें तो निश्चय ही वैदिक अर्थव्यवस्था को कार्यान्वित किया जा सकता है और राष्ट्र में वैदिक (आर्य) राज्य की पुनःस्थापना की जा सकती है।

अतः आर्य राज्य स्थापना की चाह करने वालो, अपने जन्मगत स्वामित्व को ठुकरा दो और कर्मगत स्वामित्व पर दृढ़ता रखते हुये आर्य युवकों की सेना में आ मिलो, निश्चय अन्तिम जीत हमारी होगी। आज इस कार्य को कार्यान्वित करने के लिए २१ युवक इकट्ठे हो गए हैं। अब इनका साथ देने के लिए यदि आप अपने जन्मगत अधिकारों की बलि करते हो तो निश्चय ही सही अर्थ में आप आर्य हैं और आर्य व्यवस्था को चाहते हैं। आर्य व्यवस्था (राज्य) पुनः स्थापित होकर रहेगा यदि जन्मगत स्वामित्व का परित्याग करोगे अन्यथा इसकी स्थापना में अभी समय लगेगा किन्तु व्यवस्था अब आर्यव्यवस्था ही होगी।

क्रान्ति के पथ पर

आज से साल भर पहले जब हमने अपने वर्ष भर के कामों की योजना बनाई और उसे 'क्रान्ति के पथ पर' नामक एक पतली सी पुस्तिका के रूप में वितरण किया तो बहुत कम लोगों को यह विश्वास था कि इसमें जो कुछ लिखा है वह कभी पूरा भी हो सकेगा। उस पुस्तिका के दूसरे पृष्ठ पर लिखा था—

"पर क्रान्ति के स्फुलिङ्ग सर्वथा बुझे नहीं हैं। राख की परत को चीर कर कुछ चिनगारियां उभर रही हैं। बंगाल, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, हरयाणा और पंजाब से चल कर कुछ 'सिर फिरे' युवक वैदिक संस्कृति की गरिमा को दिल में संजोये आज इकट्ठे हो रहे हैं। पता नहीं, इन युवकों पर कब क्या गुजरेगी और इनके कारण औरों पर क्या गुजरेगी पर इसमें सन्देह नहीं कि क्रान्तदर्शी दयानन्द की वाणी को अपने हृदय में झंकृत किये ये नवयुवक कुछ कर गुजरेंगे।"

कुछ लोग इस वाक्य को पढ़ कर होंठ दबाकर हँसा करते थे—और हँसते क्यों न? साधन-हीन अपरिचित दो-चार-दस जवानों की इन 'बहकी बहकी' बातों पर कइयों को हँसी आ ही जाती थी। जब हमने कहा कि हम २०० युवकों को लेकर कुरुक्षेत्र से लाल किले तक विशाल पद-यात्रा—'युवक क्रान्ति अभियान' करेंगे तो फिर लोगों को हँसी आ गई। जब 'राजधर्म' नामक पत्रिका चलाने की बात की तब लोगों ने हमें सचमुच 'सिर फिरे' समझा। पर जब एक के बाद एक सफलता के चरण क्रान्ति के पथ पर आगे बढ़ने लगे, जब रात्रि के निबिड़ अंधकार को चीर कर लाल किले की प्राचीर के सामने जलती मशालों को हाथ में लेकर २०० युवकों ने आर्य राष्ट्र के स्थापना की प्रतिज्ञा ली—जब बिना एक पैसे के आरम्भ करके साल भर में ७५ हजार रुपये खर्च होने लगे, जब हर पन्द्रह दिन में ३ हजार ग्राहकों के माध्यम से कम से कम १५ हजार युवक हृदयों में "राजधर्म" के तड़पते हुए अंगारे धधकने लगे—जब आर्य जगत के ऊपर छाई निराशा की काली घटा को फाड़कर आशा के सूर्य की तरुण रश्मियां फूटने लगीं तो लोगों को कहना पड़ा—

जिन्हें देखकर डोल गई, हिम्मत दिलेर मरदानों की
उन मौजों पर चली जा रही, किश्ती कुछ दीवानों की

यह सब कुछ कैसे हुआ? इतने कम समय में आर्य जनता का इतना सहयोग—आर्य नेताओं का इतना आशीर्वाद हमें कैसे मिल गया? हमने जब भी इस पर विचार किया तो एक ही उत्तर मिला—परमपिता परमात्मा की असीम कृपा! आदित्य ब्रह्मचारी देव दयानन्द को हमने जब अपना नेता मान लिया तो वेद और परमात्मा की कृपा तो उत्तराधिकार में मिलनी ही थी।

लक्ष्य के रूप में हमारी सुस्पष्ट घोषणा रही है—आर्य राष्ट्र की स्थापना। हम वेद और दयानन्द के राष्ट्रवादी स्वरूप के उपासक हैं और यही लक्ष्य हमारे जीवन की एक-एक सांस का सम्बल है। इस लक्ष्य को सामने रखकर हमने इस वर्ष विस्तृत कार्य (Extensive work) की अपेक्षा सघन कार्य (Intensive work) को अपनाया है। सघन कार्यक्षेत्र की दृष्टि से हरयाणा प्रान्त पहले से ही चुना हुआ था—अब इसके प्रत्येक जिले में एक पूरा समय देने वाले योग्य कार्यकर्त्ता की नियुक्ति हुई है और यह निश्चय किया गया है कि प्रत्येक जिले (मण्डल) के गाँव-गाँव तक पहुँचने की दृष्टि से अगले वर्ष प्रत्येक जिले में कम से कम २०० आर्य युवक परिषद की शाखायें होंगी और हर जिले में कम से कम १००० राजधर्म के ग्राहक बनाये जायेंगे। जिलान्तर्गत सभी कालेजों में विशेष संगठन का निर्माण होगा जिला स्तर पर अध्यापकों का संगठन बनाया जायगा और एक तगड़ा प्रशिक्षण केन्द्र बना कर प्रान्त भर में कम से कम ५०० प्रशिक्षित कार्यकर्त्ताओं (Trained workers) का जाल बिछा दिया जायगा। अर्थ-नीति और राजनीति पर जिले स्तर पर सम्मेलन और विद्वत्गोष्ठियों का आयोजन होगा और इन विषयक साहित्य प्रचुरता में प्रकाशित होकर वितरित होगा। इस तरह विद्यार्थी वर्ग और शिक्षक वर्ग को सुसंगठित कर आर्थिक-राजनैतिक क्रान्ति की पृष्ठभूमि तैयार

की जायगी। दूसरी ओर किसान मजदूरों की स्थानीय समस्याओं के समाधान का प्रयत्न किया जायगा और शराब बन्दी आन्दोलन को तीव्र कर पदयात्राओं द्वारा जनमत संगठित किया जायगा।

इसके साथ-साथ अन्य प्रान्तों में परिषद् की गतिविधियों का विस्तार होगा। आडम्बर को बहुत कम महत्त्व देते हुए ठोस कार्यकर्त्ताओं के निर्माण और आर्थिक-राजनीतिक सम्बन्धी ठोस साहित्य के सृजन पर अधिक बल दिया जायगा। इस सबके साथ-साथ एक कठोर अनुशासन और सुदृढ़ संगठन की परम्परा स्थापित की जायगी। कार्यकर्त्ताओं को समझौतावाद से दूर रखकर सैद्धान्तिक कट्टरता की ओर प्रेरित किया जायगा। रचनात्मक कार्यों के साथ-साथ प्रबल खण्डन की आवश्यकता पर जोर दिया जायगा।

आने वाला वर्ष हमारी परीक्षा का वर्ष होगा। एक-एक कदम बड़ी निष्ठा और मजबूती से रखना होगा। कुछ अनार्य तत्त्व इस नवजात संगठन को छिन्न-भिन्न करने के लिए घात लगाये बैठे हैं। ऐसे लोगों को मुँह-तोड़ उत्तर देने के लिए हमें सच्चे अर्थों में शक्ति का संचय करना होगा और कवि की इस चेतावनी को नहीं भुलाना होगा—

लहू गरम रखना चाहो तो
रक्खो ज्वलित विचार।
सतत शान्ति रक्षार्थ चाहिये
किन्तु खड्ग तैयार।

आर्य वीर दल का शिविर

२९ जून से ६ जुलाई तक आर्य वीर दल गुड़गावां मंडल की ओर से डी० ए० वी० हाई स्कूल गुड़गावां में बौद्धिक शिक्षण शिविर सम्पन्न हुआ। इस शिविर में ६० मैट्रिक पास युवकों ने भाग लिया। शिविर में आर्य समाज के मुख्य सिद्धान्तों पर आर्य जगत् के उच्चकोटि के विद्वानों ने भाषण दिये तथा शंका समाधान किया। प्रत्येक युवक को एक-एक सत्यार्थप्रकाश बिना मूल्य दी गई। शारीरिक उन्नति हेतु व्यायाम तथा लाठी चलाने की शिक्षा भी दी गई।

६ जुलाई को माननीय प्रो० उत्तमचन्द्र जी 'शरर' संचालक प्रान्तीय आर्य वीर दल की अध्यक्षता में दीक्षान्त समारोह हुआ। इस अवसर पर पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज तथा माननीय प्रो० श्यामराव जी ने आर्य वीरों को कार्य में जुट जाने का प्रेरणा तथा आशीर्वाद दिया।

निवेदक—
शिवदत्त आर्य
मन्त्री
आर्य वीर दल गुड़गावां मण्डल

धन्यवाद !

हैदराबाद के दशम सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन नवम्बर १६६८ के अवसर पर एकत्र आर्य जनता ने सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के प्रधान श्री इन्द्रदेव जी मेधार्थी व संयोजक प्रो० श्यामराव जी के प्रति जिस आत्मीयता का प्रदर्शन किया वह एक ऐतिहासिक स्मरणीय घटना है। प्रो० श्यामराव जी के ओजस्वी भाषण के बाद बिना किसी अपील के आर्य श्रद्धालुओं ने जिस अगाध उदारता के साथ अचानक धन की वर्षा कर दी उसका पूरा विवरण तो नहीं रखा जा सका पर जितनी जानकारी मिल सकी वह निम्नलिखित है। इनमें से जिस किसी को रसीद न मिली हो वे शीघ्र लिखें। सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् की ओर से इन महानुभावों का हार्दिक धन्यवाद किया जाता है और आशा की जाती है—भविष्य में भी इसी प्रकार सहयोग कर आर्य युवकों का उत्साह बढ़ाते रहेंगे।

रामनाथ सहगल
कोषाध्यक्ष

६ एकड़ भूमि श्री शेषराव जी बाघमारे, निलङ्गा, महाराष्ट्र द्वारा परिषद् के लिए श्यामराव जी को जीवन पर्यन्त पश्चात् आर्यसमाज को।

१००१) श्रीमती विद्या कपूर, बंगलोर (वचन)
१००१) श्री मदनलाल राठी एडवोकेट, नान्देड़ (वचन)
१०१) आर्यसमाज, हिंगोली
१०१) श्री सी० नारायण रेड्डी, निजामाबाद,
१०१) आर्यसमाज चर्चगेट, बम्बई,
१०१) श्री मुरलीधर अट्टल, निजामाबाद,
१०१) श्री निवास बंग, निजामाबाद,
१०१) श्री गोवर्धनलाल जी जाजू, निजामाबाद,
१०१) श्री शिवजीराम सालग्राम, मानकोट (लश्कर)
१०१) श्री कलमके आच्युतराव वेदपाठक,
१०१) श्री जनता हार्डवेयर स्टोर, मारवाड़ी रोड, भोपाल,
५१) श्री दिनकर जी देशपाण्डे, गुंजोटी (इक्यावन रुपये प्रतिवर्ष देंगे)
५१) श्री एन. नरुसय्या, अमिष्टापुर,
५१) श्री विजयकुमार जी सिंह, लातूर,
५१) श्री बाबूराव जी, तेरकर,
५१) श्री प्रेम जी केशव जी, लातूर,
५१) श्री देवानन्द क्लॉथ स्टोर, गुलबर्गा,
५१) श्री जे० मानीकराम जी रेड्डी, कोदन, निजामाबाद,
३१) श्रीमती सावित्रीदेवी जी भुनडा, परमणी,
२५) श्री बलभीमराव देवराव शेलके बोरडेकर (पच्चीस रुपये जीवन भर हर वर्ष देंगे)
२५) आर्यसमाज बोधन,
२५) श्रीमती प्रयागबाई शिंदे,
२५) श्री सी. एच. कनकय्या शास्त्री, करीमाबाद, वारंगल,
२५) श्री कृष्णा कामथ, बंगलोर
२१) श्री पद्म लक्ष्मीनारायण जी
२१) श्री शिवराम जी आर्य, कमलपुर, गुलबर्गा,
२१) श्री एशियाला हाउस, हैदराबाद,
२१) श्री दिगम्बर चिंचणे, परमणी
१५) श्री शापुर गोपाल,
११) श्री बी. वेंकटराजय्या, निजामाबाद,
११) श्री रामणा खेव जी, मुधोल, गुलबर्गा,
११) आर्यसमाज अम्बुलगा, बजरू, निलंगा,
११) श्री बाबूराम साठे, काठेवाड़ी, उमरगा, धाराशिव,
११) श्री परमानन्द सोलंकी मन्त्री आर्यसमाज लान्हला, झाबुआ, (म० प्र०)
११) श्री एम. बासवराज प्रधान आर्यसमाज कोसगी,
११) श्री विष्णुपंत जी की माता जी जानबाई तेरकर,
१०) श्रीरामचन्द्र आर्य, नारसिंग, ता०-मेदक,
१०) श्री भूपतिराव, प्रज्ञापुर,
१०) श्री धर्मवीर आर्य सावनकर, बल्हारशाह, आर्यसमाज,
१०) श्री कोंदीराम जी तांबारे, आंदुरेकर,
६) श्री बलवनराव जोशी, दैठना,
५) श्री देवीदास जी आर्य पेंदे, तुलजापुर, उस्मानाबाद (पांच रुपये प्रतिवर्ष श्रावणी पर देंगे)
५) श्री सुधीर प्रह्लाद पण्डित, उदगीर,
५) श्री प्रभाकर जी वलांडी,
५) श्री मणिक जी सांवल आर्य करडखेलग, उदगीर,

५) श्री यासम नारायण रेड्डी खुदासपली,
५) श्रा जोतीराम जी भोंसले आर्य, लातूर,
५) श्री गुल्कू-रामलू नारायण मिक्कनूर
५) श्री तायाराम पटेल, रामेगांव, औसा,
५) आर्यसमाज सुलतानपुर,
५) श्री ए. रामलू, साइकिल शॉप, कोत्तागुड़ा,
५) श्रीमती अम्बिकादेवी जुमले, सदस्या आर्यसमाज पादोट अमरावती,
५) श्री विट्ठलराव तुकाराम सुभाष, गुलबर्गा,
५) श्री के. बाललिंगम मिक्कनूर,
२) श्री वल्लनमल जी, निजामाबाद,
—सैकड़ों रुपये बिना नाम पता के प्राप्त हुए।

इसी प्रकार कलकत्ते से

२०१) श्री सीताराम जी जायसवाल
१५१) श्री हीरालाल जी आर्य
१०१) श्री मोहनलाल जी अग्रवाल (राजधर्म पत्रिका के लिये)
१०१) श्री अमीलाल जी आर्य,
४) श्री शंभुनाथ जायसवाल,
२) श्री रामशबर सिंह

उबलते शोणित की बूँदें चाहियें!

प्रो० ओमकुमार आर्य

वसुधा का हर कोना श्मशान बना है,
आदर्श, मर्यादा, परम्परायें जल रही हैं,
धू धू करके।
सिसकती हवाओं में भरी है एक सडांध,
और यह सब करतूत है, मानव की,
उस मानव की, जो सजा धजा है ऊपर से,
कितना कुरूप और नग्न है असल रूप में,
यह घोर नग्नता देख सिमट जाती हैं,
मेरी नजरें, खुद अपने में!
पर कब तक ?
पलायनवाद और लुकाछिपी तो अभिशाप है,
कायरता है, व्यर्थ बोझ है,
शायद इसीलिये इतिहास का एक पृष्ठ,
गुनगुनाता है धीरे धीरे—
"रचनात्मक करवट लेनी होगी,
यही करवट तो क्रान्ति है,
इसके अंकुर उगते हैं, इसी धरा पर,
लेकिन उनके लिए बेबस अश्क नहीं,
उबलते शोणित की बूँदें चाहियें।"

जनतन्त्र !

जनतान्त्रिक शासन-व्यवस्था का गढ़ स्विट्जरलैंड। वहाँ के एक छोटे-से कस्बे के चुनाव में वहां के कुल १०० निवासियों में से ५० लोग चुनाव के लिए खड़े हो गए। बाकी लोग इन्हीं उम्मीदवारों के सगे सम्बन्धी थे। अतः वोट गिनने के लिए दूसरे कस्बे से अफसर बुलवाए गए।

एक वसीयत यह भी !

—मेनचेस्टर की लिली शेनकविच नामक एक धनी महिला अपने भतीजे के नाम अपनी सारी जायदाद कर गई है। बस, शर्त एक है—कि वह आजन्म कुंआरा रहे और संसार की हर स्त्री को अपनी बहन समझे।

राजधर्म कार्यालय की व्यवस्था तथा परिषद् के हिसाब-किताब की व्यवस्था के लिये हमें एक अनुभवी कार्यकर्ता के सहयोग की आवश्यकता है—कार्यालय में ऐसे व्यक्ति के रहने और भोजन की पूरी व्यवस्था है।

—सम्पादक

खंजर सिर तक आ पहुँचा है

ओ उपवन के रसिक मधुकरो ! गुंजन रण-भेरी में बदलो,
अपना बाग बहार लूटते, पतझर घर तक आ पहुँचा है ।

जहां जली धूनी ऋषियों की वहां धधकतीं आज चितायें,
मन्त्र जहां गूंजे वेदों के, वहां पड़ी बेकफ़न ऋचायें ।

मेरे देश उदास न हो पर, आंख न कर आंसू से गीली,
जागा है इन्सान तभी जब, पानी सिर तक आ पहुँचा है ।

शांति शक्ति की सगी बहन है, तभी विचरती है यह घर में,
दीवारें कमजोर न हों जब और दुधारे हों कर-कर में ।

उनकी शांति विवशता है जो, हिंसा-भय से फेंक धनुष को,
लेकर बस खड़ताल, कीर्तन करते हैं बिड़ला मन्दिर में ।

मौसम की साजिश अब भी पहचान, अरे ओ मेरे नाविक !
दिखी भंवर से बच कर बेड़ा छिपी भंवर तक आ पहुँचा है ।

शांति तभी तक ठीक कि जब तक शांति न बन जाये कमजोरी,
उससे नहीं दोस्ती मुमकिन बांटी जिसने कभी तिजोरी ।

समझौते की करो न चर्चा, सन्धि-पत्र का अर्थ नहीं कुछ,
कातिल का खंजर दामन को चीर जिगर तक आ पहुँचा है ।

—नीरज

श्री कुलपति गुरुकुल कांगड़ी,
सहारनपुर।

विज्ञापन शुल्क

(एक बार के लिये)

कवर पृष्ठ ४	पूरा—	२०० रु०
कवर पृष्ठ ४	आधा—	१[illegible]० रु०
कवर पृष्ठ ३	पूरा—	१[illegible]० रु०
अन्य पृष्ठ	पूरा—	१०० रु०
अन्य पृष्ठ	आधा—	५० रु०

राजधर्म (पाक्षिक)
वार्षिक शुल्क १० रुपये

ओ३म्
राजधर्म (पाक्षिक)
आर्यसमाज मन्दिरमार्ग नईदिल्ली-१
दूरभाष—४२०४१

संपादक
प्रो० श्यामराव

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के लिये प्रो० श्यामराव द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित।

सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली

राजधर्म

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का पाक्षिक मुखपत्र

सम्पादक
प्रो० श्यामराव

वर्ष-१ : अंक-२०
वार्षिक शुल्क—१० रु०
एक प्रति ५० पैसे

२१ अगस्त १९६९
दयानन्दाब्द १४५

ओ३म्

आर्यसमाजों के विवाद समाप्त होने की आशा

आर्यसमाज संगठन समिति की बैठक दिनाङ्क ३-८-६६ में किये गये निश्चय संख्या ३ के आधार पर दिनाङ्क १७ अगस्त १९६९ को मध्याह्नोत्तर ३ बजे आर्यसमाज मन्दिर नया बांस, दिल्ली में समिति के सर्वाधिकारी पूज्यपाद महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज की अध्यक्षता में विवाद सम्बद्ध सभाओं के सम्पन्न प्रतिनिधियों की एक आवश्यक बैठक अत्यन्त सद्भावना पूर्ण वातावरण में हुई। बैठक में आर्यसमाज के अनेक शुभ चिन्तक भी उपस्थित थे। बैठक में चौधरी देशराज जी, प्रो० रामसिंह जी, श्री नवनीत लाल जी एडवोकेट, लाला रामगोपाल जी शालवाले, कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर, श्री सत्यदेव विद्यालंकार पं० शिव कुमार शास्त्री, स्वामी अखिला नन्द, महाशय वीरेन्द्र, श्री बाल मुकन्द आहूजा, श्री सोमनाथ मरवाहा श्रीशिवचन्द्र, जी ला० चतुरसेन गुप्त, आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

पूज्यपाद स्वामी जी महाराज ने सभी उपस्थित व्यक्तियों से प्रार्थना की कि वे सभाओं के वर्तमान विवादों को हल करने के लिये अपने-अपने उपयोगी सुझाव प्रस्तुत करें जिससे किसी सर्वसम्मत निर्णय पर पहुँचा जा सके। अनेक उपयोगी सुझाव प्रस्तुत किये गये। श्री वीरेन्द्र जी ने कहा कि मैं अपनी (नई) आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से बिना किसी शर्त के महात्मा आनन्द भिक्षु जी का विवाद समाप्त कराने के सर्वाधिकार सौंपता हूं। स्वामी जी महाराज का प्रत्येक निर्णय हमें सर्वथा मान्य होगा। प्रो० राम सिंह जी [प्रधान (पुरानी) पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा तथा (नई) सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा] ने आश्वासन दिया कि वे दोनों सभाओं की अन्तरंग सभा का बैठक २४ अगस्त १९६९ तक बुलाकर उस में यह निर्णय कराने का पूर्ण प्रयत्न करेंगे कि वे अपने सब विवाद पूज्य स्वामी जी को सौंप दें। लाला रामगोपाल जी शालवाले ने कहा कि (पुरानी) सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री प्रतापसिंह शूरजी से पूज्य स्वामी जी अविलम्ब सम्पर्क स्थापित कर उनसे आग्रह करें कि वे भी इस सम्बन्ध में कोई निर्णय लेकर स्वामी जी महाराज को सूचित करें।

पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षुजी का आमरण अनशन

इस बैठक की समाप्ति के पश्चात आर्यसमाज संगठन समिति की बैठक हुई जिस में उपर्युक्त सभा में लिये गये निर्णयों पर सन्तोष प्रगट करते हुए निश्चय किया गया कि यदि २४ अगस्त तक चारों पक्षों के विवाद समाप्त होने की दिशा में अनुकूल परिणाम न निकला तो असहयोग करने वाले पक्ष के विरुद्ध अपने पूर्व घोषित निर्णय के अनुसार महात्मा आनन्द भिक्षु जी २७ अगस्त १९६९ श्रावणी से अपना आमरण अनशन आरम्भ कर देंगे।

भवदीय

जगदीश विद्यार्थी मन्त्री

आर्यसमाज संगठन समिति

आर्यसमाज मन्दिर मार्ग नई दिल्ली-१

आर्य जन!

उपर्युक्त विज्ञप्ति की गम्भीरता पर ध्यान दें। क्या हम और आप सब मिल कर अपने नेताओं को सुलह का रास्ता अपनाने पर मजबूर नहीं कर सकते? क्या हमारी उदासीनता के कारण हम एक वीतराग तपस्वी महात्मा को आमरण अनशन की धधकती चिता पर बैठा कर शान्त तमाशा देखते रहेंगे? आर्यो! सावधान हो जाओ - तुम्हारी परीक्षा की असली घड़ी आ गई है। तुमने हिन्दी की रक्षा और गाय की रक्षा के लिये महान् बलिदान किये—क्या आज आने पूज्य महात्मा जी की प्राणों की रक्षा के लिये, प्राणों से भी प्यारे अपने आर्य समाज की रक्षा के लिये अभूतपूर्व बलिदान नहीं करोगे?

—सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्

सम्पादकीय—

कांग्रेस टूटेगी

जब हमसे लोग पूछते थे—आप रेड्डी के पक्ष में हैं या गिरि के—तो हमने हमने साफ कहा था—न हम रेड्डी के पक्ष में हैं न गिरि के हम। तो कांग्रेस के टूटने के पक्ष में हैं। अब चाहे रेड्डी हारे या गिरि हारे, जीत हमारी होगी। अब गिरि के राष्ट्रपति बनने पर कुछ कांग्रेसी जीत की खुशी मना रहे हैं पर बकरे की मां कब तक खैर मनायेगी? कैसी विडम्बना है? कांग्रेसी प्रधानमन्त्री और कांग्रेसी नेता खुशी मना रहे हैं—किस बात पर? कि प्रधानमंत्री द्वारा प्रस्तावित कांग्रेसी उम्मीदवार नीलम संजीव रेड्डी हार गया!

पिछले २०-२२ वर्षों से सत्तारूढ़ कांग्रेस पार्टी एक भानुमती का कुनबा बनी हुई थी। इसमें बहुत सारे बहुरुपिये घुसकर अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहे थे। इसमें एक ओर पूंजीपतियों के एजेन्ट थे दूसरी ओर कम्यूनिष्टों के—एक ओर अंग्रेजी और अंग्रजियत के समर्थक थे तो दूसरी ओर हिन्दी के कट्टर हिमायती भी! एक ओर शुद्ध शाकाहारी—हाथ से कूटे चावल खाने वाले थे तो दूसरी ओर शराब और मांस का खुलकर उपभोग करने वाले भी थे। गो रक्षक और गो भक्षक, साथ-साथ चलते, हाथ की बुनी खद्दर और छः-छः लाख की मिन्क कोट अपने सह अस्तित्व के सिद्धान्त (Principle of Co-existence) का परिचय देते थे। गरीबों की सेवा पर गरमागरम भाषण देने के बाद एयरकन्डीशन कमरों में बैठकर बर्फ युक्त काफी का आनन्द लेते थे। दो परस्पर विरोधी विचार-धाराओं के बीच खड़ा एक तीसरा गुट तेल देखता और तेल की धार देखता था। इन सबका एक और एक ही स्वार्थ था—कुर्सी से चिपके रहना।

पर लगता है इस देश पर अब भगवान् की कुछ कृपा हुई है। बहुत दिनों तक मुफ्त माल को आपस में बांटकर खाने वालों में अब भयंकर झगड़ा हो गया है। एक गुट के नेता हैं श्री मोरारजी देसाई और दूसरी के श्रीमती इन्दिरा गांधी। श्री देसाई के साथी हैं सिन्डिकेट कहलाने वाले घाघ—जिन्हें जनता देखना तक नहीं चाहती, जिन्होंने काला बाजारी करने वाले धन्ना सेठों को अपनी ओर मिलाकर प्रजातन्त्र को पूंजीतन्त्र में परिणत कर दिया था—बङ्गाल में श्री अतुल्य घोष, महाराष्ट्र में श्री एस० के० पाटिल और आन्ध्र प्रदेश में श्री संजीव रेड्डी के लिये कोई इज्जत बाकी नहीं है। दूसरी और श्रीमती इन्दिरा के साथी हैं श्री वी० के० कृष्णमेनन, श्री फखरुद्दीन अली अहमद, श्री भूपेश गुप्त आदि जिनकी राष्ट्रियता पर ही लोगों को सन्देह है—चीन के हाथों भारत को अपमानित करा जो आज भी चीन से ही प्रेरणा प्राप्त करते हैं—जो रूस के इशारों पर नाचते हैं—जो भारत को "चेकोस्लोवाकिया" बनाना चाहते हैं या पाकिस्तान से सांठगांठ किये रहते हैं। इक्के-दुक्के अच्छे आदमी दोनों तरफ हैं पर बेचारे अधिक प्रभाव नहीं डाल पाते।

दुर्भाग्य रहा इस देश का कि आज तक यहाँ कोई ऐसा राजनैतिक दल नहीं बना जो इस देश के करोड़ों गरीबों और शोषितों के हित में सोचता, पर प्रेरणा के लिये रूस और चीन की ओर न देखकर इस राष्ट्र के प्राचीन वैदिक संस्कृति और इतिहास की ओर देखता। कुछ लोग भारतीय संस्कृति का नाम लेकर उठे तो सही पर उन्हें आज तक ठीक-ठीक यही पता नहीं चल सका कि हमारी वैदिक संस्कृति है क्या चीज? ठोस अर्थ नीति के अभाव में, भूखे मर रहे करोड़ों के हित-चिन्तन के अभाव में उनकी संस्कृति का अर्थ निकला कुछ कठमुल्लापना, कुछ नारेबाजी, कुछ पूंजीवाद का पृष्ठपोषण! मतलब कि आज तक जो किसान मजदूरों के हित के नारे लगाते वे साथ-साथ वेद, उपनिषद् और राम, कृष्ण आदि का मज़ाक भी उड़ाते रहे और लेनिन और मार्क्स

की पूजा भी करते रहे—दूसरी ओर संस्कृति के नारे लगाने वाले—हिन्दू, हिन्दी, अखण्ड भारत, गोरक्षा आदि के नारे लगाने वाले किसान मजदूरों से तादात्म्य स्थापित करने के बदले पूंजीपतियों से अधिक निकट सम्बन्ध रखते, करोड़ों ग्रामीण गरीब जनता के मुकाबले शहरी बाबूओं का अधिक ध्यान करते रहे। परिणाम यह हुआ कि आज जाने अनजाने जो राजनैतिक ध्रुवीकरण हुआ है वह कुछ ऐसा है कि धर्म और संस्कृति का सम्बन्ध पूंजीवाद से और गरीबों के हित चिन्तन का सम्बन्ध रूस और चीन के कम्यूनिज्म से।

कांग्रेस पार्टी इन दोनों प्रकार के विचारधारा वालों के लिये एक सम्मिलित प्लेटफार्म का काम करती रही—और आरम्भ से ही एक प्रकार से दोनों पक्षों की रस्साकशी चलती रही। पर नेहरू जी अपने व्यक्तित्व के प्रभाव से और शास्त्री जी अपनी विनम्रता और सूझ-बूझ से इन्हें बाँधे रखते थे। यह देवी इन्दिरा की योग्यता कहें या अयोग्यता, उसने दोनों को अलग-अलग कर दिया और स्वयं एक गुट से जा मिलीं। यह ठीक भी हुआ है। बहुत दिनों से इकट्ठी हो रही सड़ान्ध अब असहनीय स्थिति पर पहुँच चुकी थी—पीब से भरा हुआ फोड़ा बहुत अधिक पक चुका था। गांधी जी ने तो इसे सन् १९४७ में ही फोड़ देने को कहा था पर लोग टालते रहे। अब उनके योग्य शिष्यों ने सोचा कि कम से कम उनकी जन्म-शताब्दी पर तो गांधी जी की इच्छा को पूरी कर दें।

अब ऐसी स्थिति हो चुकी है कि आज नहीं तो कल कांग्रेस टूटेगी और जरूर टूटेगी। और यदि इतने सैद्धान्तिक विरोध के बाद भी नहीं टूटती तो हम यही समझेंगे कि कांग्रेसियों से बढ़कर सिद्धान्तहीन और आत्म-सम्मानहीन अब धरती पर दूसरे नहीं हैं। पर प्रश्न कुछ और है। और वह ये कि क्या देश इसी तरह पूंजीवादियों और साम्यवादियों के थपेड़े खाता रहेगा? क्या देव दयानन्द द्वारा प्रतिपादित "यथायोग्यवाद" आर्यसमाज के सातवें नियम के पाठ तक ही सीमित रह जायगा? क्या इस कैपिटलिज्म और कम्यूनिज्म को समाप्त करने के लिये हम "वैदिक सेलेक्शनिज्म" (वर्णाश्रमवाद) का झंडा नहीं उठायेंगे। यदि उठायेंगे, तो आज है वह मौका! कांग्रेस के टूटने से इस देश में एक शक्ति शून्यता आयेगी। कांग्रेस स्वयं विशुद्ध पूंजीवादी अथवा विशुद्ध साम्यवादी गुट में ध्रुवीकरण को प्राप्त होगी। ऐसे समय में दयानन्द के आर्य सैनिकों को एक चुनौती है। विशुद्ध भोगवादी पूंजीवाद और साम्यवाद का मुकाबला दयानन्द का बताया त्रैतवाद और वर्णाश्रमवाद ही कर सकता है। पर इसके लिये मैदान में आना होगा और यह सिद्ध करना होगा कि वेद को न तो साम्यवादियों की गालियों से दबाया जा सकता और न ही पूंजीवादियों की तिजोरियों में ही बन्द किया जा सकता है। हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि वैदिक वर्णाश्रमवाद के द्वारा ही भोगवाद और त्यागवाद का समन्वय सम्भव है—इसी के द्वारा आर्थिक शोषण की चक्की में पिस रहे लाखों करोड़ों किसान मजदूरों को उनका न्याय मिल सकता है—इसी के द्वारा भौतिकवाद और आध्यात्मवाद एक दूसरे के पूरक बन सकते हैं—इसी के द्वारा अज्ञान, अन्याय व अभाव को मिटाकर मानव समाज को सुखी और समृद्ध बनाया जा सकता है।

हम आर्ययुवक अपने महान् उत्तरदायित्व से परिचित हैं। समय के बहाव में आकर कभी इधर कभी उधर का छिछलापन हमें वाञ्छित नहीं। हम समाज से गरीबी और आर्थिक विषमता दूर करना चाहते हैं पर इसके लिये हम कम्यूनिस्ट या सोशलिस्ट का कलंक टीका अपने माथे पर लगाना आवश्यक नहीं समझते—हम वैदिक धर्म और वैदिक संस्कृति की स्थापना कर प्रचण्ड राष्ट्रवाद को जन्म देना चाहते हैं पर इसके लिये पूंजीपतियों के पैर की जूती बनना निन्दनीय समझते हैं। अब समय आ गया है और शीघ्र ही आर्ययुवक देव दयानन्द के नेतृत्व में वैदिक वर्णाश्रमवाद की स्थापना का प्रबल शंखनाद करेंगे।

●

सामयिकी—

काला अंग्रेज : जी० डी० खोसला

पाश्चात्य सभ्यता संस्कृति और अंग्रेजी शिक्षा का हमारे देश पर क्या बुरा प्रभाव पड़ रहा है—यदि देखना हो तो पंजाब उच्च न्यायालय के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधिपति श्री जी० डी० खोसला को देख लो। काली अंग्रेजियत का जीता-जागता चलता-फिरता पुतला—जी० डी० खोसला। भारत सरकार की ओर से भारतीय चल-चित्रों का जो सेन्सर होता है उसकी उपयोगिता और उपादेयता पर विचार करने के लिये एक कमीशन नियुक्त हुई जिसके अध्यक्ष श्री खोसला साहब बनाये गये। इस कमीशन की नियुक्ति तो इसलिये की गई थी कि चल-चित्रों में पाश्चात्य सभ्यता की नकल पर जो अश्लीलता दिनों दिन बढ़ रही है उसे नियन्त्रित करने के उपाय सोचे जायें पर वाह रे भारत सरकार! ऐसे व्यक्ति को अध्यक्ष नियुक्त किया जो नंगे नाच और व्यभिचार को भी अश्लील नहीं मानता। वरन् इस बेहूदगी और पाशविक वासना की अभिव्यक्ति को सभ्यता का तकाजा मानता है। परिणाम वही हुआ जो इन्दिरा की सरकार चाहती थी—खोसला साहब ने महीनों गरीब जनता के खून-पसीने की कमाई पर मौज उड़ाकर फतवा दे दिया कि चल-चित्रों में चुम्बन और नग्न प्रदर्शन पर कोई रोक आवश्यक नहीं।

आज मेरे देश की एक भयंकर समस्या है-युवक-युवतियों में फैल रही चरित्र हीनता और इस चरित्र-हीनता का सबसे बड़ा कारण है—आधुनिक चल-चित्र। सैकड़ों में दो चार को छोड़कर शेष सारे चल-चित्र निकृष्ट काम वासना की धुरी पर घूमते हैं—कई बार तो विशुद्ध राष्ट्रीय भावना अथवा सांस्कृतिक भावना से प्रेरित चलचित्र भी इस दोष से अछूते नहीं रहते। इस प्रकार के चित्रों की बहुलता का भी कारण स्पष्ट है—इस देश में कतिपय ऐसे गद्दार पूंजीपति रहते हैं जो अपने धन की लिप्सा शान्त करने के पीछे राष्ट्र के सुकुमार मस्तिष्कों को कलुषित करने, देश के गरीब किसान मजदूरों की गाढ़ी कमाई को सस्ते और भोंड़े मनोरंजन के बदले लूटने में जरा भी संकोच नहीं करते। भारत जैसे अविकसित राष्ट्र में चलचित्र जैसे उत्तम साधन का प्रयोग प्रचण्ड राष्ट्रवाद की स्थापना, युवकों में वीरता, ब्रह्मचर्य, आदि के प्रचार आदि के लिये तथा अश्लीलता की जड़ को काटकर "मातृवत् परदारेषु" की भावना प्रज्वलित करने हेतु होना चाहिये था। इस सब के विपरीत सरकार भोगी विलासी पूंजीपतियों की कुटिल वासना में सहायक बनकर राष्ट्र के चरित्र को विनष्ट करने पर उतारू है। आज स्थिति ऐसी है कि मर्यादा का पालन करने वाली एक मां अपने सगे बेटे के साथ बैठकर औसत भारतीय चलचित्र को नहीं देख सकती। चलचित्र देखना तो दूर—इन गन्दे चलचित्रों का विज्ञापन सड़कों पर पोस्टर आदि द्वारा इतना बीभत्स होता है कि एक बहन अपने सगे भाई के साथ आँख उठाकर सड़क पर नहीं चल सकती। इस सब के साथ इस इन्दिरा सरकार की" ऑल इन्दिरा रेडियो" पर चलचित्रों के इतने अश्लील और कामुकता भरे गीत गाये जाते हैं कि बहुत से सभ्य परिवारों में लोग घर पर रेडियो रखना ही लज्जास्पद समझते हैं।

इस भयावह स्थिति में राष्ट्र को डालकर हमारे कर्णधारों (?) को संतोष नहीं हुआ—जी० डी० खोसला जैसे अमेरिकापरस्त, उन्मुक्त वासना के प्रबल हिमायती, सार्वजनिक व्यभिचार को 'कला' के नाम पर पोषण करने वाले सर्वथा अनुपयुक्त व्यक्ति को इस महान् उत्तर-दायित्व पूर्ण काम को सौंपकर कोढ़ में खाज पैदा कर दिया। इस भयंकर बीमारी के प्रति आज तक की हमारी उदासीनता भी अक्षम्य अपराध रहा—पर इसका प्रायश्चित्त करने का यही मौका है—राष्ट्र की समस्त आर्य शक्ति को

संगठित होकर इस अनार्य भोगवादी विचारधारा की धज्जी धज्जी उड़ाने के लिये कमर कस लेना चाहिये। निहित स्वार्थियों का दम्भ चूर-चूर करने के लिये एक प्रबल जन आन्दोलन का वातावरण बनाना होगा। कई कुटिल अभिनेताओं का जिन्होने खोसला रिपोर्ट का स्वागत किया है— सामाजिक बहिष्कार करना होगा। प्रसन्नता इस बात की है कि कतिपय अभिनेत्रियों ने मातृत्व का परिचय देते हुए खोसला कमीशन की कठोरता से भर्त्सना की है—यदि ये अभिनेत्रियां वर्तमान अश्लील 'रोल' को भी इसी प्रकार ठुकरा सकें तो उनका कदम साहसपूर्ण कहा जा सकेगा।

देश के कोने-कोने से केन्द्रीय सूचना प्रसारण मन्त्री श्री इन्द्र कुमार गुजराल को विरोध पत्र भेजे जाने चाहियें तथा इन्हें स्थानीय समाचार पत्रों में प्रकाशनार्थ भेजना चाहिये। खोसला कमीशन की रिपोर्ट के जहरीले पृष्ठों में आग लगाकर उसकी राख भी मन्त्री महोदय को भेजनी चाहिये।

पाकिस्तान से कुछ सीखो—

पाकिस्तान में याहया खान की सरकार ने आते ही शिक्षा में कई बड़े परिवर्तन किये। अयूब सरकार ने शिक्षालयों के माध्यम से अयूब को खुदा बनाना आरम्भ कर दिया था। "चेयरमैन माओ" से प्रेरणा लेकर बच्चों की पाठ्य पुस्तकों में अयूब की कहानियां घुसा रखी थीं। अयूब की स्वलिखित आत्मचरित्र "फ्रेन्ड्स, नॉट मास्टर्स" को उच्च श्रेणियों के लिये पाठ्य पुस्तक बनाया हुआ था—इन सारी चीजों को अब निकाल दिया गया। पर इस सबके साथ एक और बड़े साहस का काम याहया खान ने किया और वह ये कि पाकिस्तान में विदेशी पादरियों द्वारा संचलित जितने भी स्कूल-कालेज थे—उनसे छीनकर पाकिस्तानियों को सौंप दिया। इसका कारण देते हुए उसने यह स्पष्ट कहा है कि—

1. Such institutions impart instruction on lines totally against the ideological concept of Pakistan and of Islam;

2. They are a network for the spread of foreign influence;

3. Management is still in the hands of foreigners while no Pakistani, however able, is given a position of real responsiblity.

अर्थात् इन विद्यालयों की शिक्षा पाकिस्तान और इस्लाम की विचारधारा के एकदम विरुद्ध है और इनका उद्देश्य हमारे देश में विदेशी प्रभाव का जाल बिछाना है। इनका प्रबन्ध हमेशा विदेशी पादरियों के ही हाथ में रहता है और किसी भी पाकिस्तानी को चाहे वह कितना ही योग्य क्यों न हो किसी भी उत्तरदायित्व पूर्ण स्थान पर नहीं बैठाया जाता।

कितनी स्पष्ट नीति है—कितना स्पष्ट कदम है। पर धर्मनिरपेक्षता का दम भरने वालों को ऐसी सूझ कहां? यहाँ तो बड़े बड़े मिनिस्टरों और सरकारी एवं सैनिक अधिकारियों के बच्चे विदेशी पादरियों द्वारा संचालित स्कूलों में ही भरती कराये जाते हैं और फिर इन्हीं विद्यालयों में पढ़े लोगों को उनके अंग्रेजी के विशेष ज्ञान के कारण बड़े बड़े सरकारी पदों पर नियुक्त किया जाता है। ईसाइयत और अंग्रेजियत का एक दूषित चक्र (vicious circle) बना हुआ है। सरकार हस्तक्षेप करती भी है तो उनके ऊपर जो कुछ राष्ट्रीय और धार्मिक भावना वाले हैं—अराष्ट्रीय और विदेशियों को तो यहां प्रोत्साहन दिया जाता है। बैंकों के सरकारीकरण के मामले में भी एकतरफा कदम उठाया गया—देशी बैंकों को तो हथियाया गया पर विदेशी बैंकों को जैसे—फर्स्ट नेशनल सिटी बैंक, चार्टर्ड बैंक आफ अमेरिका, नेशनल एण्ड ग्रिन्डलेज बैंक आदि को छुआ तक नहीं गया। देसी बैंकों में कोई बेइमानी भी करे तो पैसा तो देश में रहता है पर इन विदेशी बैंकों का सारा लाभ तो विदेशों को जाता है—पता नहीं चलता कि यह सरकार इस देश के लाभ के लिये बनी है या किसी और देश के?

सहगल जी का आदर्श!

पिछले १० अगस्त को आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली का वार्षिक अधिवेशन था। देश की राजधानी में स्थित होने के साथ साथ दिल्ली की लगभग १५० आर्यसमाजों और आर्य संस्थाओं की प्रतिनिधि संस्था होने के कारण केन्द्रीय सभा का आर्य जगत में विशेष महत्त्व है। यही कारण है

कि इस सभा द्वारा आयोजित ४-५ विशेष कार्यक्रमों में दिल्ली की और आस पास की जनता उमड़ पड़ती है और बड़े उत्साह का वातावरण बन जाता है। हमारा लगाव इस सभा के प्रत्येक अधिकारियों से विशेष रूप से इसलिये भी हो गया कि इस सभा ने आर्य युवकों को सदैव विशेष प्रोत्साहन दिया। पिछले वर्ष हमारे युवक-क्रान्ति-अभियान में कुरुक्षेत्र से पैदल आ रहे २०० आर्य युवकों का दिल्ली की समाजों द्वारा जो शानदार स्वागत हुआ उसमें इस सभा की ही विशेष कृपा थी। इसी तरह स्पेशल ट्रेन के समय और अन्य उत्सवों में युवक शक्ति का हौसला बढ़ाकर इस सभा ने हमारा हार्दिक सहयोग किया। इसी लगाव और महत्व को दृष्टिगत रखते हुए हम सभा के साधारण अधिवेशन में दर्शक के रूप में उपस्थित हुए। सारा कार्यक्रम प्रभावशाली रहा पर विशेष प्रभावित करने वाली बात थी—भाई रामनाथ जी सहगल का अनुकरणीय कदम! सहगल जी अपनी पूर्ण तरुणाई में इस सभा के उपमन्त्री के रूप में आये और लगातार आठ वर्ष इसकी एकनिष्ठ सेवा की। पिछले तीन वर्षों से वे इस सभा के प्रधान मन्त्री रहे और अपनी लगन, उत्साह और ईमानदारी पूर्वक सेवा द्वारा उन्होंने केन्द्रीय सभा को गौरवान्वित किया और आर्य जनों में लोकप्रिय हो गये। जब अधिवेशन में उनके पुनर्निर्वाचन का समय आया और समस्त प्रतिनिधियों ने एक स्वर से उनका नाम प्रस्तावित किया, उस समय एक आदर्श का परिचय देते हुए बड़ी गम्भीरता और बड़े साहस के साथ सहगल जी ने कहा कि लगातार तीन वर्ष प्रधान मन्त्री रहने के बाद यह मेरा नैतिक कर्तव्य हो जाता है कि स्वेच्छा से पदत्याग करके अपने वरिष्ठ सहयोगी श्री ओमप्रकाश जी को इस पद के लिए प्रस्तावित करूँ"। सहगल जी की इस निःस्वार्थ भावना का प्रत्येक ने हार्दिक स्वागत किया। लोगों के मन में यही असर था कि कहाँ तो बूढ़े बूढ़े लोगों द्वारा मरते दम तक पदों से चिपटे रहने की भावना, कुर्सियों के लिये ही गालियाँ खाते, झगड़ते, मुकदमे बाजी करते-संगठन को छिन्न भिन्न करने वाले नेता और कहाँ जवानी में ही पदलोलुपता से रहित, सेवा और त्याग का सुन्दर समन्वय, करने वाले हमारे रामनाथ जी सहगल !

दफा १०९

कानूनों में प्रशासन और नागरिक दोनों की ही दृष्टियों में आवारा दफा १०९ सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है, इस कानून के अन्तर्गत कोई भी बेरोजगार व्यक्ति, जिस के पास जीवन यापन का कोई प्रकट साधन न हो, अगर संदेहास्पद परिस्थितियों में पाया जाये तो पुलिस उसे गिरफ्तार कर सकती है, अदालत ऐसे व्यक्ति से नेकचलनी की जमानत माँग सकती है और जमानत न देने पर एक साल तक कैद की सजा दे सकती है, नेकचलनी की जमानत में तरह-तरह की शर्तें लगाई जा सकती है, जैसे यह कि अभियुक्त एक खास अवधि तक किसी खास शहर, गाँव, जिला या प्रदेश में प्रवेश नहीं करेगा, या किसी खास इलाके के बाहर नहीं जाएगा।

ऐसा अनुमान है कि किसी भी समय भारतीय जेलों में कुल जितने कैदी होते हैं उन में से कम से कम एक चौथाई दफा १०९ के अंतर्गत पकड़े गये होते हैं। पुलिस प्रशासन के लिए यह धारा उपयोगी होती है, क्योंकि पुलिस को जब किसी व्यक्ति पर किसी अपराध का संदेह होता है, लेकिन प्रमाण नहीं होता, तो उसे दफा १०९ में गिरफ्तार करके जेल भेज दिया जाता है। शराब, अफीम आदि की तस्करी या जुआ जैसे मामलों में पुलिस का संदेह अगर सही हुआ तो इससे अपराध कुछ समय के लिए अगर बन्द नहीं होते तो कम हो जाते हैं। इस प्रकार पुलिस अपनी वास्तविक अक्षमता को प्रकट सफलता और कार्यकुशलता का रूप दे देती है। ऐसा भी होता है कि जब अपराध बढ़ते हैं तो ऊँचे अफसर थानों से माँग करते हैं कि अपने इलाके के अपराधियों के खिलाफ कार्यवाही करें और थाने दफा १०९ के अंतर्गत अन्धाधुन्ध गिरफ्तारियाँ करते हैं। कभी-कभी ऐसी गिरफ्तारियों की माँग जेलों की तरफ से भी आती हैं। जेल एक पूरी बस्ती होती है, जहाँ हर काम कैदियों से लिया जाता है—ब्राह्मणों से रसोइयों का और इसी प्रकार धोबी, नाई, मोची आदि से उनके अलग-अलग काम। अगर इन में से किसी एक वर्ग के कैदियों की कमी पड़ जाये तो जेल की व्यवस्था अस्त-व्यस्त होने लगती है। तब उस खास वर्ग के लोग दफा १०९ में गिरफ्तार करके जेल भेज दिये जाते हैं।

जहाँ तक नागरिकों का सम्बन्ध है दस-बारह साल पहले दिल्ली के एक मजिस्ट्रेट को, जिन्हें पतलून के पाँयचे चढ़ा कर सूरज निकलने से पहले टहलने का शौक था, गश्त के सिपाहियों ने दफा १०९ में बन्द कर दिया। बाद में जब कागजी कार्यवाही के लिए नाम-पता पूछा गया तो पता चला कि आवारागर्दी में पकड़े गये महोदय मजिस्ट्रेट थे।

देश की जनसंख्या का बहुत बड़ा हिस्सा, जो नियोजित बेरोजगारी का शिकार है, अपने आप ही दफा १०९ के दायरे में आ जाता है, खास तौर पर गाँवों से जो किशोर और नवयुवक रोज़गार की तलाश में बड़े शहरों की ओर जाते हैं उनका एक हिस्सा तो स्टेशन या बस अड्डे से सीधे थाने पहुँचता है और थाने से जेल। अगर अदालत ने मेहरबान हो कर छोड़ भी दिया तो मुकद्दमे के दौरान कम से कम तीन-चार महीने जेल में कट जाते हैं। अधिकांश मामलों में जेल से रिहा होने की नौबत आने तक अपराधियों के किसी गिरोह की संख्या में एक की वृद्धि हो जाती है।

कानून में जो संदेहास्पद परिस्थितियों का हवाला है वह एक ऐसी औपचारिकता है जिसे पूरा करने में पुलिस को कोई दिक्कत नहीं होती, कोई लोहे की छड़, एक मोमबत्ती, एक ब्लेड, ये अदालत में पेश कर दिये जाते हैं कि अभियुक्त के पास ये सामान निकला है, जिससे साबित होता है कि वह चोरी करने जा रहा था। एक अदालत में काम आने के बाद फिर वही चीजें दूसरी अदालत में काम आती हैं।

●

हरयाणा में सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के बढ़ते चरण—

२० जुलाई के वार्षिक अधिवेशन के पश्चात् सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के संचालन में हरयाणा में निम्न कार्यक्रम किये गये—

१. श्री विश्वामित्र जी की भजन मण्डली द्वारा—जीन्द जिले के नारनौद, भैणी, बुडाना, अहबतपुर राखीगढ़ी, मिलकपुर, मिज और मिर्जापुर ग्रामों में भजनों द्वारा प्रभावशाली प्रचार किया गया।

श्री ब्र० रामकिसन जी की भजन मण्डली द्वारा—हिसार जिले के मुहाना, मित्ताथल, कालुवास आदि ग्रामों में अपने जोशीले प्रचार द्वारा जनता को उत्साहित किया गया।

श्री रामचन्द्र जी व श्री मौजी राम जी की भजन मण्डली द्वारा वामला, खरक, बरोदा, खानपुरखुर्द आदि ग्रामों में भजनों द्वारा प्रचार किया गया।

२. परिषद् के व्यायाम शिक्षकों द्वारा निम्न ग्रामों में व्यायाम-ब्रह्मचर्य शिक्षण शिविर लगाये गए—

१ से १० अगस्त तक बामला (हिसार) में श्री स्वामी योगानन्द जी व्यायाम शिक्षक द्वारा।

७ से १७ अगस्त तक मीसा (गुड़गांवा) में श्री ब्र० देवव्रत जी व्यायामाचार्य द्वारा।

१ से १५ अगस्त तक बरोदा (रोहतक) में श्री मनुदेव जी व्यायाम शिक्षक द्वारा।

५ से १२ अगस्त तक देशावर खेड़ी (रोहतक) में श्री आर्य मुनि जी व्यायाम शिक्षक द्वारा।

११ से २० अगस्त तक मुन्ढाल (हिसार) में श्री स्वामी योगानन्द जी व्यायाम शिक्षक द्वारा।

प्रत्येक शिवर के पश्चात् युवकों द्वारा व्यायाम प्रदर्शन व रात्रि को युवक सम्मेलनों का आयोजन किया गया। हजारों व्यक्तियों ने सम्मेलनों में सोत्साह भाग लिया। सैंकड़ों व्यक्तियों ने यज्ञोपवीत ग्रहण किये व शराब हुक्का आदि छोड़ने की प्रतिज्ञायें की। प्रत्येक ग्राम में आर्य युवक परिषद् तथा आर्यसमाजों की स्थापना हुई। सम्मेलनों में सर्व श्री ब्र० इन्द्रदेव जी मेधार्थी जी, उमेदसिंह जी श्री रामानन्द जी, श्री धर्मपाल जी, श्री ओमप्रकाश जी, श्री कर्मपाल जी आदि युवक नेताओं ने भाग लिया।

४—नवीन क्षेत्रीय कार्यालयों की निम्न स्थानों पर स्थापना हुई—

१. आर्यसमाज, माडलटाउन रोहतक।
२. आर्यसमाज, हिसार।
३. शहीदी स्मारक गुलकणी, पो० रामराय, जीन्द।
४. आर्यसमाज, न्यू कालोनी गुड़गांवा।

वर्णव्यवस्था की आर्थिक नीति

●स्वामी विवेकानन्द सरस्वती

मनुष्य जीवन को पूर्ण सुखमय बनाने के लिए आर्थिक सम्पन्नता ही पर्याप्त नहीं। इसका अर्थ यह नहीं कि अर्थ का सुख-शान्ति प्रदान करने में कोई स्थान ही नहीं है। बड़े से बड़ा नीतिशास्त्रवेत्ता, विज्ञानवेत्ता, संगीतज्ञ, वेदज्ञ, शास्त्रविशारद—यदि उनको भोजन न मिले तो उनकी सारी विद्यायें एक ओर ही रक्खी रह जावेंगी "भूखे भजन न होई गोपाला" के अनुसार उनकी सारी प्रतिभा को क्षुधारूपी पिशाचिनी ग्रस लेगी। अन्त में विवश होकर उन्हें रोटी के लिए प्रयत्न करना पड़ेगा। क्योंकि "बुभुक्षतैर्व्याकरणं नाधीयते, पिपासितैः काव्यरसः न पीयते" उक्ति पूर्णरूपेण चरितार्थ होगी। यह भी सम्भव है कि वे अपने धर्म के कार्यों को त्याग कर रोटी के लिए पाप कर्म में भी प्रवृत्त हो जावें।

"बुभुक्षितः किं न करोति पापम्" भूखा मनुष्य क्या पाप नहीं करता? अर्थात् सब पाप करने को उद्यत हो जाता है। इसलिए यह जान पड़ता है कि यद्यपि अर्थ मनुष्य जीवन को पूर्ण सुखमय बनाने में एकमात्र साधन नहीं, तथापि यह वह साधन है जिसके अभाव में कोई भी व्यक्ति, समाज, या राष्ट्र अपना सर्वाङ्गीण विकास नहीं कर सकता। अतः आज हम उसी विषय पर विचार करते हैं कि वर्णव्यवस्था में आर्थिक नीति क्या रहेगी जिसके आधार पर अवलम्बित मनुष्य जाति सुखमय जीवन बिता सके।

वर्णव्यवस्था की अर्थनीति को समझने से पूर्व हम एक वाक्य में यह बतलाना आवश्यक समझते हैं कि आखिर यह वर्णव्यवस्था है क्या बला जिसके लिए महर्षि दयानन्द जी महाराज तथा उनके अनन्य भक्त सुयोग्य विद्वान् स्वामी समर्पणानन्द अपने जीवन की आहुति दे गये। "वर्णव्यवस्था वह व्यवस्था है जो किसी व्यक्ति का जन्म के आधार पर धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक अधिकार न मानकर व्यक्ति के चुने हुए गुण, कर्म, स्वभाव पर मानती है।" जिस प्रकार किसी भी वकील या अध्यापक का लड़का इसलिए वकील या अध्यापक नहीं बनाया जाता कि वह वकील या अध्यापक का पुत्र है। पुत्र को उस पद को प्राप्त करने के लिए उन पदों की योग्यता और प्रमाणपत्र प्राप्त करने होंगे। विना उसकी योग्यता के वकील के पुत्र को वकील बनाना या अध्यापक के पुत्र को अध्यापक बनाना समाज के साथ अन्याय करना होगा। ठीक इसी प्रकार किसी भी पूंजीपति का पुत्र इसलिए पूंजी का स्वामी नहीं बनेगा कि वह पूंजीपति का पुत्र है। बल्कि पूंजी का स्वामी वह तब बन सकता है जब उसके योग्य हो। यही अवस्था धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्र में भी है।

वैदिक वर्णव्यवस्था की अर्थनीति के अनुसार सम्पत्ति पर अधिकार वैश्य का होगा परन्तु वह होगा पूर्ण सदुपयोग की मर्यादा से बंधा हुआ। यदि उस निश्चित की हुई मर्यादा का कोई भी वैश्य उल्लंघन करता है तो सम्पत्ति पर उसका अधिकार नहीं रहेगा। जिस प्रकार अच्छी शासन व्यवस्था में कोई पुलिस या अध्यापक या अन्य कोई अधिकारी अपने अधिकार या कर्त्तव्य का ठीक-ठीक पालन नहीं करता तो वह अधिकार उससे छीन लिया जाता है और वह अधिकारी उस पद से च्युत कर दिया जाता है। ठीक इसी प्रकार का नियम वैश्य वर्ग के साथ भी होगा। अब एक दूसरा यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि इस अर्थनीति में अधिक से अधिक एक व्यक्ति कितनी सम्पत्ति रख सकता है या स्वामी बन सकता है? इसका उत्तर यह है कि इसकी कोई मात्रा निश्चित नहीं। जो जितना ही योग्य होगा वह उतनी ही अधिक सम्पत्ति का स्वामी बन सकता है। इस अवस्था के ऊपर तीसरा आक्षेप यह किया जा सकता है कि तब तो यह

व्यवस्था भी नामभेद मात्र से पूंजीवाद को बढ़ावा देने वाली हुई, क्योंकि इससे भी अधिक से अधिक सम्पत्ति एक स्थान पर इकट्ठी होगी और इसमें भी वही दोष आयेंगे जो पूंजीवाद में पहले आ चुके हैं। सच तो यह है कि यह है ही पूंजीवाद का प्रच्छन्न रूप। किन्तु हम इसके उत्तर में यह कहते हैं कि यदि अर्थ की मात्रा निश्चित कर दी जायेगी कि अधिक से अधिक इतने धन का एक व्यक्ति स्वामी हो सकता है तो यह विशुद्ध वर्णव्यवस्था रह ही नहीं जावेगी क्योंकि इसमें अपने चुने हुए वर्ण के अनुसार पूर्ण विकास का स्थान नहीं। जिस प्रकार ब्राह्मण या क्षत्रिय वर्ग के सम्बन्ध में यह निश्चित कर दिया जाये कि ब्राह्मण अमुक सीमा तक अपना ज्ञान क्षेत्र बढ़ा सकता है, क्षत्रिय इस सीमा तक अपना बल-पौरुष बढ़ा सकता है, इससे अधिक नहीं तो ऐसी व्यवस्था से समाज या राष्ट्र की यह तो क्षति होगी, समाज के विकास की जड़ कट जायेगी। यह तो रही विकास सम्बन्धी क्षति—दूसरी ओर मान लीजिए कि निश्चित मात्रा कर दी गई और उस मात्रा के अन्दर रहने वाला ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य अपने ज्ञान, बल और धन से प्रजा के अज्ञान, अन्याय,अभाव को दूर न करके उल्टा इनका प्रसार करने लगे तो क्या उसने राज्य की निश्चित मात्रा का उलंघन किया है इसलिए उनको इतना अत्याचार करते हुए भी छोड़ दिया जावेगा ? नहीं,कदापि नहीं ! हां इसके विपरीत यह तो अवश्य ही निश्चित किया जायेगा कि न्यून से न्यून इतनी योग्यता, त्याग और सदाचार से युक्त व्यक्ति ही ब्राह्मण माना जायेगा,अन्य नहीं। इसी प्रकार क्षत्रिय,वैश्य, बनने की भी मर्यादा निश्चित होगी। अपने-अपने क्षेत्र में उन्नति करके ब्राह्मण, ब्राह्मणतर, ब्राह्मणतम—क्षत्रिय, क्षत्रियतर, क्षत्रियतम—वैश्य, वैश्यतर, वैश्यतम होंगे।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के उत्तराधिकार का निर्णय सरकार द्वारा नियुक्त धर्मार्य सभा या अन्य कोई सभा विद्यार्थी के स्नातक बनने के पश्चात् उसकी योग्यता के अनुसार करेगी, सम्पत्ति कमाने का अधिकार केवल वैश्य वर्ग को होगा। ब्राह्मण, क्षत्रिय पर तो नहीं किन्तु वैश्य वर्ग पर यह आपत्ति उठाई जा सकती है कि जब वैश्य के पास अधिक सम्पत्ति का संचय होगा तो पूंजीवादियों के दोष से बचना कठिन होगा। इसका उत्तर यह है कि सम्पत्ति का संचय स्वयं में कोई बुरी वस्तु नहीं। बुरा तो तब है जब वैश्य उस सम्पत्ति से अपनी भोग तृष्णा को संतृप्त करता है, अपने कार्यकर्त्ताओं को अपना सहयोगी न समझकर उनके साथ आत्मीयता का व्यवहार न करके उनके पेट की रोटी काटकर अपने सुरा की बोतल और तेल-फुलेलों पर व्यय करता है, अपनी नाक ऊंची करने में दूसरों के रक्त चूसता है। यदि संपत्ति का संचय अपने आप में बुरा है तब तो सरकारी कोष में रक्खा हुआ रुपया भी बुरा है,मालगोदाम में रक्खे हुए अन्नादि बुरे हैं। यदि इन्हें पूंजीवाद कहा जायेगा तो क्या पूंजीवाद के भ्रम से उन कोषों या मालगोदामों को जला या नष्ट कर दिया जायेगा। ऐसा कहना या करना अपनी बुद्धि के दिवालियेपन के परिचय देने के सिवाय और कुछ नहीं होगा। क्योंकि देश में कोष या मालगोदाम इसलिए सुरक्षित रक्खे जाते हैं कि संकटकालीन समय में काम आ सकें सेना संचय, सुरक्षित सेना भी इसी लिए रक्खी जाती है। यदि अपने पास संचित कोष, सेना न होगी तो आपत्ति काल में किससे कार्य चलायेंगे, उस समय परमुखापेक्षी होकर दूसरे राष्ट्रों का मुख देखना पड़ेगा, कहीं यदि उनके यहाँ भी यही व्यवस्था रही या अन्य किसी कारणवश वे सहायता नहीं कर सकते तो राष्ट्र की प्रजा भूखों मरेगी। इससे यह सिद्ध होता है कि संचय अपने आप में कोई बुरी वस्तु नहीं किन्तु अच्छी वस्तु है और हर राष्ट्र, हर समाज, हर संगठन को संचय करना चाहिए। हां उसका उद्देश्य भोग-विलासिता की सामग्री बढ़ाना न होकर देश व समाज के प्रत्येक व्यक्ति को आलम्बन पदार्थ भोजन, वस्त्र, निवास-स्थान का प्रदान तथा यथाशक्ति अनुबन्ध पदार्थ (शिक्षा-दीक्षा) का प्रत्येक व्यक्ति के लिए उचित प्रबन्ध करना होगा। यदि सेठ भामाशाह की समस्त सम्पत्ति देश-सुरक्षा के कार्य में आ सकती है तो यह क्यों आवश्यक है कि उसकी सम्पत्ति छीनकर दूसरे जो इसके योग्य नहीं है केवल झूठे कोरे समाजवाद या साम्यवाद का नारा लगाकर बांट दी जाय।

यदि वैश्य अपने कार्यकर्ताओं को उनके परिश्रम के अनुसार पारिश्रमिक देता है, उन्हें पुत्रवत् या सहयोगी बन्धु

के तुल्य समझता है, इसके अतिरिक्त जो कुछ सम्पत्ति शेष है, उससे देश में विद्यालय खोलकर शिक्षा का प्रसार या देश में सड़क विज्ञानशाला, धर्मशाला, पुस्तकालय का निर्माण करवाता है तो उसकी सम्पत्ति किसीको भी नहीं अखरेगी। इसका अर्थ यह कदापि नहीं समझना चाहिए कि वह किसी प्रकार से अपनी आय बढ़ा ले, दिखाने के लिए एकाध रुपया उधर भी फेंक देवे। सदुपयोगवाद का इतना लचीला अर्थ नहीं। सदुपयोगवाद तो यह कहता है कि जिस मिल, जिस कारखाने, जिस भूमि, जिस गोपालन विभाग का वह स्वामी नियुक्त किया गया है, उस विभाग में कार्य करने वाले श्रमिकों को उनके परिश्रमानुकूल पारिश्रमिक देकर, उस मिल, कारखाने या अन्य विभाग में जो व्यय हुआ है, उसे निकाल कर जितने से उसका अच्छी तरह निर्वाह हो सके (निर्वाह करने योग्य ही नाक ऊँची करने योग्य नहीं) उतने धन को छोड़कर समस्त धन देश या प्रजा की सेवा में सहर्ष प्रदान करे। उसकी सम्पत्ति 'परोपकाराय सतां विभूतयः' के अनुसार प्रजा मात्र के हित के लिए हो—सदुपयोगवाद तथा पूंजीवाद का क्या ही सच्चा चित्र किसी कवि ने इस श्लोक में किया है।—

विद्या विवादाय, धनं मदाय, शक्तिः परेषाम् परिपीडनाय।
खलस्य साधोर्विपरीतमेतद् ज्ञानाय, दानाय च रक्षणाय॥

दुष्ट व पूंजीवादी की विद्या, धन, शक्ति, विवाद, अहंकार और दूसरे को दुःख देने के लिये होती है, सज्जन सदुपयोगवादी की विद्या, धन, शक्ति, ज्ञान दान और दूसरे की रक्षा के लिए होते हैं।

इस समय संसार में चारों ओर अशान्ति की लहर चल पड़ी है। चतुर्दिक् हा, हन्त, त्रायध्वम् की पुकार हो रही है। इसको दूर करने के लिए अनेक वाद प्रचलित हैं पूंजीवाद, श्रमाधिकारवाद, साम्यवाद, समाजवाद। पूंजीवाद के द्वारा यह अशान्ति दूर हो इसकी तो कल्पना भी नहीं की जा सकती क्योंकि यह तो अशान्ति की जननी ही है। अब रहे श्रमाधिकारवाद,साम्यवाद, समाजवाद, इनकी भी थोड़ी हम परीक्षा करते हैं। किसी व्यक्ति का सम्पत्ति पर इसलिए अधिकार हो कि उसने उसे अपने श्रम से उपार्जित किया है। तो क्या जब वह उस सम्पत्ति को जलाने या पानी में डालने लगे तो समाज या राष्ट्र उसे ऐसा करने देगा। कदापि नहीं। अब यदि वह उस सम्पत्ति का सदुपयोग करता है तो उसे ऐसा करने से कोई भी शिष्ट समाज या राष्ट्र नहीं रोकेगा। इसलिए श्रम के नाम पर किसी का सम्पत्ति पर अधिकार ठीक नहीं रहा। समाजवाद यह तो केवल एक कोरी कल्पना और आडम्बर मात्र है। साम्यवाद तो न कभी विश्व में हुआ है न होगा। इनकी विस्तृत आलोचना के लिए पूज्य स्वा० समर्पणानन्द लिखित ग्रन्थ कायाकल्प का परिशीलन करे।

सम्पत्ति रखने की कोई निश्चित मात्रा न होगी, वैश्य अपने व्यापार को कितना ही बढ़ाये जाय सदुपयोग-वाद के अनुसार उसकी समस्त सम्पत्ति प्रजा और राष्ट्र की सेवा के लिये होगी न कि अपनी भोग-विलास की तृष्णा की तृप्ति और नाक ऊंची करने के लिए।

धन कमाने का अधिकार केवल वैश्य वर्ग को होगा वह भी केवल गृहस्थाश्रम में ही २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य या वानप्रस्थाश्रम में नहीं।

स्नातक बनने पर जिसको धर्मार्य सभा या राज्यार्य सभा निश्चित करेगी वही वैश्य वर्ग में जाकर धनोपार्जन करेगा।

सम्पत्ति पर अधिकार व्यक्ति का होगा किन्तु वह तब तक ही होगा जब तक वह उसका सदुपयोग कर रहा हो अन्यथा उससे सम्पत्ति छीनकर जो उसके योग्य होगा उसको दी जायेगी।

ये हैं वर्णव्यवस्था के अर्थ नीति के ५ मूल सूत्र जिस पर चलाई गई अर्थ नीति से राष्ट्र का सर्वाङ्गीण विकास होगा। इस अर्थ नीति के द्वारा चलाई गई अर्थ व्यवस्था में न कभी पूंजीवाद का भय होगा न कभी साम्यवाद की अकर्मण्यता और आलस्य का सब को अपने विकास का सुयोग्य अवसर प्राप्त होगा। प्रभु हमें शक्ति प्रदान करे जिससे हम ऐसी स्वर्णिम व्यवस्था की स्थापना करके विश्व भारत ही नहीं विश्व को सुख और शान्ति वातावरण में विचरण करा सकें।

●

जनसंघ जवाब दे !

प्रो० जयदेव आर्य

पंजाब के जनसंघी बन्धुओं का विचार है कि उन्होंने पंजाब में हिन्दू-सिख-एकता, जो कांग्रेस अपने २० वर्ष के शासन में न कर सकी थी, करके दिखा दी है और वे पंजाब के शासन में अकालियों के समान बराबर के अधिकारी हैं। पर खेद है कि तथ्य उनके इस दावे को मिथ्या सिद्ध कर रहे हैं। कुछ नमूने देखिए :—

पंजाब सरकार ने सन्त गुरबचनसिंह का दाह संस्कार राजकीय सम्मान के साथ राज्य की ओर से किया। क्या जनसंघी बन्धु यह दावा कर सकते हैं कि वे भी कभी किसी हिन्दुओं के धार्मिक नेता की अन्त्येष्टि इसी प्रकार राजकीय सम्मान के साथ करवा सकते हैं ? यदि नहीं, तो फिर यह बराबर की हिस्सेदारी कैसी ?

पंजाब सरकार ने सब जिलाधिकारियों को आदेश दिया है कि जो नगरपालिकाएँ गुरुनानक जयन्ती मनाने के लिए धन स्वीकृत करना चाहें, उन्हें ऐसा करने की अनुमति दे दी जाए। क्या जनसंघी बन्धु किसी हिन्दू महापुरुष शंकर, महावीर, दयानन्द आदि की शती राजकीय स्तर पर मनाने के लिए कोई प्रस्ताव करेंगे और नगरपालिकाओं का धन इसके लिए प्राप्त कर सकेंगे ? साथ ही सैक्युलरिज्म के ठेकेदार कांग्रेसियों से जनता पूछे कि क्या यह चित्र तुम्हारे सैक्युलरिज्म के फ्रेम में ठीक बैठता है ? तुम वही हो न जो सिन्ध की मुस्लिम लीगी सरकार द्वारा सत्यार्थप्रकाश पर लगाए गए प्रतिबन्ध के विरुद्ध प्रस्तुत भाई परमानन्द के प्रस्ताव पर तटस्थ होकर मौन साध गए थे ?

पंजाब सरकार ने गुरुद्वारा दुःख निवारण की सड़कों आदि की मरम्मत के लिए दो लाख रुपयों की स्वीकृति इस बजट में दी है और इतनी ही स्वीकृति शायद अगले बजट में दी जाएगी पर पटियाला के एक सनातन धर्म मन्दिर की १९ एकड़ भूमि को अधिगृहीत करने का निर्णय किया है। क्या किसी गुरुद्वारे की भूमि के अधिग्रहण और किसी हिन्दू मन्दिर की मरम्मत का प्रश्न भी तुम्हारे विचाराधीन आया क्या ? जनसंघी बन्धुओ ! बोलो !

पंजाब सरकार ने गुरुनानक विश्वविद्यालय अमृतसर में बनाने की स्वीकृति दे दी और उसके लिए कई लाख रुपये भी दे दिए जायेंगे। पर जनसंघी बन्धुओ ! जालंधर में दयानन्द विश्वविद्यालय और दयानन्द पीठ की स्थापना के लिए भी तो कुछ करो।

पंजाब सरकार ने देश के उन सब विश्वविद्यालयों को, जो अपने यहां गुरुनानक पीठ की स्थापना करेंगे, उन पीठों का आधा व्यय देने का आश्वासन दिया है। इस पर जनसंघी बन्धुओं और सैक्युलर कांग्रेसियों का क्या विचार है ?

जनसंघ ने सरकारी स्कूलों में शिक्षा का एकमात्र माध्यम पंजाबी को मान लिया है। कुछ प्राइवेट स्कूलों को शिक्षा के माध्यम की छूट दिलाकर अपने आप को हिन्दी का परम हितैषी सिद्ध करने का स्वांग रचकर भला पंजाब के हिन्दुओं की आंखों में धूल झोंकने का तुम्हारा प्रयास सफल हो जायगा क्या ? और यह लीजिए। अब हिन्दी का उद्धार करने के लिए सनातन धर्म के ठेकेदार कांग्रेसी सन्त श्री हंसराज शर्मा भी आमरण अनशन की धमकी देने लगे हैं। पहले तो हिन्दी का 'झटका' करवा दिया और अब अपने मगरमच्छी आंसुओं का अमृत उस पर छिड़क कर उसे पुनः जीवित करने का स्वांग कर रहे हैं।

पंजाबी विश्वविद्यालय के ही विकास निदेशक डॉ० जसवीर सिंह अहलुवालिया ने कहा है कि अब सिख धर्म और दर्शन की नई व्याख्या की जाएगी जिसमें 'सब धर्म एक ही सच्चाई का उपदेश करते हैं' इस दूषित और गलत दृष्टिकोण को त्याग कर यह दर्शाया जाएगा कि हर मजहब एक नई और मौलिक बात लेकर आता है जिसका पुरानी मान्यताओं से कोई सम्बन्ध नहीं होता और इस दृष्टि से सिख धर्म भी एक नवीनता को लेकर

अवतीर्ण हुआ है और इसका दर्शन भी अन्य दर्शनों से सर्वथा पृथक और मौलिक है। अब हिन्दू-सिख एकता की दुहाई देने वाले जनसंघी भाई और सब धर्मों की मौलिक एकता का शोर मचाने वाले सैक्युलर गान्धीवाद कांग्रेसी ही बताएं कि वे अब किस कुएं में जाएंगे। और मजा यह है कि सिख गुरुओं और धर्म का हुलिया बिगाड़ने की इस योजना में पंजाब और भारत के हिन्दुओं से कर रूप में प्राप्त धन को पानी की तरह बहाया जा रहा है। इसे कहते हैं—जिसकी जूती, उसी के सिर।

तो हां! पंजाबी विश्वविद्यालय में एक विभाग गुरुग्रन्थ साहब अध्ययन पीठ ही पृथक् खोला गया है। भला कोई बताए कि गुरुग्रन्थ का पंजाबी से क्या सम्बन्ध है जिसका प्रमुख ग्रन्थ 'हीर रांझा' है? पटना के सिख विद्वान् डॉ० महीपसिंह के अनुसार गुरु गोविन्द सिंह के दशम ग्रन्थ के तो १४२५ पृष्ठों में से १३७५ पृष्ठों की कविता हिन्दी में है और शेष ५० पृष्ठों की पंजाबी, फारसी आदि में। इसी प्रकार ग्रन्थ साहब भी मुख्यतया हिन्दी में ही है, फिर भला! यदि पंजाबी भाषा सभी पंजाबवासियों की है तो उनकी उन्नति के लिए खोले गये विश्वविद्यालय में सिख गुरुओं की शिक्षाओं का हुलिया बिगाड़ने के लिए जनता का इतना पैसा क्यों व्यय किया जाता है? वहां जैनियों, सनातनियों एवं आर्यसमाजियों की अध्यक्षता में उन-उन द्वारा मान्य धर्मग्रन्थों के अध्ययन के लिए ग्रन्थ साहिब की तरह पृथक्-पृथक् विभाग क्यों नहीं खोल दिए जाते? क्या पंजाब के जनसंघी और कांग्रेसी इस साम्प्रदायिक भेदभाव के विरुद्ध कुछ आवाज उठाएंगे?

लीजिए! दिल्ली में स्वा० श्रद्धानन्द की मूर्तिस्थापना का प्रस्ताव जनसंघ ने पास कर ही दिया जिसे मुसलमानों की जूती कांग्रेस सरकार ने बीस वर्ष में पास न होने दिया। पर यह बात समझ में न आई कि इसकी स्थापना पर होने वाले सारे व्यय का भार आर्यसमाजियों पर क्यों डाला गया जबकि अभी कुछ दिन पूर्व दिल्ली प्रशासन ने गुरु तेगबहादुर के स्मारक के लिए १६ लाख रुपए की मांग केन्द्रिय सरकार से की। क्या यह बात आर्य नेताओं के प्रति भेदभाव की या जनसंघियों के मन में सिखों के भय की परिचायक नहीं है?

दिल्ली में रैदासियों के दो मन्दिर थे। क्योंकि गुरु रैदास की वाणी ग्रन्थ साहब में ही है अतः वहां ग्रन्थ साहब रखा गया था पर सिखों ने 'जहां ग्रन्थ साहब, वहीं गुरुद्वारा' के अपने शाश्वत सूत्र के अनुसार उन मन्दिरों पर बलात् कब्जा कर लिया। गुरुद्वारा आन्दोलन के समय भी इन अकालियों ने अनेक हिन्दू धर्मशालाओं, मन्दिरों एवं पंचायती स्थानों पर इसलिए कब्जा कर लिया था कि वहां गुरुग्रन्थ स्थापित था। यह भला कोई धर्म है या खुली गुण्डागर्दी का प्रदर्शन! कांग्रेस के रामराज्य की बलिहारी है।

दिल्ली में जनसंघ ने साहस से काम लेकर सरकारी भूमि पर अवैध रूप से बनी मस्जिदों एवं कब्रिस्तानों को हटाने का कार्य प्रारम्भ किया तो साम्प्रदायिकता के कीचड़ में ही पलने वाले कांग्रेसी कीटों ने मुसलमानों को भड़काकर उनके वोट बटोरने के लिए सत्याग्रह तक करने की धमकी देनी प्रारम्भ कर दी। हे देशद्रोहियो, चीन और पाकिस्तान से अपनी भूमि लेने के लिए तो तुम्हारी जबान से एक भी शब्द नहीं निकला या निकलता पर साम्प्रदायिकता का विष भारत की नस नस में फैलाने के लिए तुम्हारी यह उछल-कूद! धिक्कार है तुम्हें।

लीजिए! एक सुसमाचार भी सुनिए। पिछले दिनों हांगकांग में भारत के प्रसिद्ध नर्तक श्री प्रताप पंवार ने अपने नृत्य का कार्यक्रम प्रस्तुत करने से इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा कि आज इस होटल में हुए भोज में क्योंकि शराब परोसी गई है और शराब मेरे धर्म के विरुद्ध है अतः मैं यहां नृत्य नहीं कर सकता। इस पर होटल के अधिकारियों ने खेद प्रकट किया कि उन्हें इस बात का पता नहीं था अतः ऐसा हुआ। आज भारत को और आर्य धर्म को ऐसे सपूतों की आवश्यकता है। गांधीवाद-गांधीवाद चिल्लाने वाले मद्यप कांग्रेसियों की नहीं।

●

अमरशहीद भक्त फूलसिंह

● इन्द्रदेव मेधार्थी

संसार का इतिहास उन व्यक्तियों के उज्ज्वल चरित्र से सदैव अनुप्राणित रहा है जिन्होंने उच्च एवं पवित्र आदर्शों की पूर्ति के लिए महान् से महान् त्याग किया, और समय आने पर इसके निमित्त अपने जीवन का उत्सर्ग भी कर दिया। भारतवर्ष में इस कोटि के महापुरुषों की परम्परा निरन्तर प्रचलित रही है। जब भी देश में अज्ञान, अन्याय, अभाव की प्रबलता होने लगी और मानव-जाति अविद्यान्धकार में त्रिविधतापों से त्राहि माम्-त्राहि माम् करने लगी, तभी किसी महापुरुष ने अपने आत्मिक बल एवं शौर्य से पथभ्रष्ट मानव का मार्ग दर्शन किया है। पिछली अनेक सदियों से देश में निरक्षता एवं दासता के कारण उत्पन्न हुई अन्ध परम्परा का सर्वनाश कर नव युग का आरम्भ करने के लिये महान् पथ-प्रदर्शक महर्षि दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ। महर्षि ने जिस पवित्र एवं महान् लक्ष्य के लिए जिन घोर कष्टों, यातनाओं और आपत्तियों से संघर्ष किया उन्हें सुनने मात्र से ही सामान्य हृदय कांप उठता है। उनके अद्वितीय बलिदान के प्रभाव से ही आर्यसमाज क्रान्तिकारी संस्था के रूप में अग्रसर हुई और महर्षि के अनुयायी आर्यसमाजियों ने भी अपने आचार्य के पदचिन्हों पर चलते हुये बलिदान की परम्परा को प्रचलित रखा।

हरयाणा क्षेत्र में आर्यसमाज

हरयाणा प्रान्त की भूमि प्रगतिशील विचारों के लिये विशेष उपजाऊ है। देश के किसी भी कोने से उत्पन्न होने वाले क्रान्तिकारी आन्दोलन का यहाँ के लोगों ने सदैव उत्साह से स्वागत किया है। जिन परिस्थितियों में आर्यसमाज का उद्घोष महर्षि ने जिस प्रचण्ड रूप में किया था उसकी कल्पना वर्तमान पीढ़ी के लोग सहज में नहीं कर सकते। उस समय आर्यसमाज का सदस्य बनना जहां सामाजिक बहिष्कार का कारण बनता था वहां अंग्रेज सरकार की कोपभाजनता भी अनायास ही मिल जाती थी। हरयाणा क्षेत्र में आर्यसमाज की लहर महर्षि के जीवन-काल में ही तेजी से फैलने लगी थी। ऐतिहासिक कुम्भ के मेले पर जब हरिद्वार में महर्षि को पाखण्ड खण्डनी पताका फहरा कर अपनी दिग्विजय का सिंहनाद प्रारम्भ किया उस समय स्वर्गीय पं० बस्तीराम आदि अनेक सज्जनों ने महर्षि से आर्य धर्म की दीक्षा ग्रहण की। बाद में महर्षि दिल्ली से राजस्थान जाते समय रिवाड़ी रुके और वहां के राजा राव युधिष्ठिर भी अपने दुर्गुणों को छोड़ कर आर्य धर्म में दीक्षित हुये। स्वामी श्रद्धानन्द की इस क्षेत्र पर विशेष कृपा दृष्टि रही। भाई परमानन्द, लाला लाजपतराय, स्वामी ब्रह्मानन्द आदि महापुरुषों की कर्म-भूमि भी यह क्षेत्र रहा। इसी के परिणाम-स्वरूप हरयाणा के ग्रामों तक में आर्यसमाज के विचार फैल गये और अमर शहीद भक्त फूलसिंह सदृश पुरुष सिंहों का प्रादुर्भाव हुआ। १४ अगस्त को भक्त जी का बलिदान दिवस है अतः पाठकों की जानकारी के लिए उनके जीवन की घटनाएं लिखनी अनावश्यक न होगी।

जीवन संघर्ष

स्वर्गीय भक्त फूलसिंह का जन्म जिन परिस्थितियों में हुआ वे मनुष्य को स्वतः संघर्षशील बना देती हैं। छोटे ग्राम में एक सामान्य किसान के घर जन्म लेकर बालक को प्रतिक्षण प्राकृतिक शक्तियों के विरुद्ध जिस संघर्ष में आना पड़ता है उस से वह परिश्रमी, साहसी, निर्भीक एवं आत्म विश्वासी बन जाता है। इसी कारण भक्त जी के जीवन में संघर्ष शीलता, चरित्र-प्रेम, एवं सेवा-परायणता आदि गुणों का विशेष विकास हुआ। विद्यार्थीकाल में आप अति गुरुभक्त एवं विनयशील बालक थे। चरित्र के प्रति आपकी निष्ठा अनन्य थी। इसी कारण अष्टम कक्षा में पढ़ते समय आपने अपने मुख्य अध्यापक की चारित्रिक दुर्बलता को देखकर उसे लाठियों

से खूब पीटा था। इस साहसिक कार्य से आपके चरित्र की धाक दूर-दूर तक बैठ गई थी। स्कूल से अष्टम कक्षा उत्तीर्ण कर आपने पटवारी बनकर सरकार की नौकरी कर ली। जहाँ निरन्तर कुसंग के प्रभाव से युवक फूलसिंह पथ-भ्रष्ट होना लगा। आपने मद्य मांस का सेवन करना और रिश्वत लेना प्रारम्भ कर दिया। यह क्रम कुछ समय तक चला किन्तु शीघ्र ही आर्यसमाज के सम्पर्क में आने से जीवन का प्रवाह सुमार्ग में परिवर्तित हो गया। बड़ी दृढ़ता से सब दुर्व्यसनों को छोड़ दिया। रिश्वत न लेने की प्रतिज्ञा कर ली। अब तक जितना रुपया रिश्वत द्वारा लोगों से लिया था वह सब ५ हजार रुपये में अपनी भूमि बेचकर वापिस लौटा दिया। पूर्व कृत अपने एक-एक पाप को स्मरण कर प्रायश्चित्त किया। जीवन के इस परिवर्तन को देखकर लोग आपको भक्त जी के नाम से सम्बोधित करने लगे। पटवारी रहते समय एक हरिजन भाई को भक्त जी ने अभिमानवश ठोकर मार दी थी, विवेक होने पर उस व्यक्ति के घर पहुंचे और उसके पैर पकड़ कर क्षमा याचना करने लगे। उस बेचारे गरीब को बड़ा आश्चर्य हुआ कि पटवारी जी ऐसा क्यों कर रहे हैं। इस प्रकार आपने अपना जीवन तप त्याग और संयम के द्वारा अति उज्ज्वल बना लिया।

ब्राह्म तथा क्षात्र शक्ति के उपासक

भक्त जी का स्वभाव अतिमृदु होते हुये भी कठोर था। वे जहां धर्मात्मा एवं श्रेष्ठ व्यक्तियों के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने को तैयार रहते थे वहां दुष्टों के उग्र प्रतिवादी भी थे। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों और अन्यायों के विरोध में अपने जीवन में दर्जनों बार अनशन किये, और सभी में उन्हें सफलता मिली। एक बार दलितों के लिये २३ दिन तक आपको अनशन करना पड़ा। हिसार जिले के एक छोटे ग्राम मोठ में हरिजन बन्धुओं के लिये कुआं नहीं था। मुसलमान अपने कुएं से पानी नहीं भरने देते थे। हरिजनों ने अपना पृथक् कुआं बनाने का यत्न किया किन्तु मुसलमानों ने खुदे हुये कुएं को मिट्टी से भर दिया। विवश हो कुछ व्यक्ति भक्त जी के पास पहुँचे। भक्त जी ने गाँव में जाकर मुसलमानों से प्रार्थना की तो उन मूर्खों ने भक्त जी को निरादर के साथ घसीट कर गाँव से एक मील दूर जंगल में डाल दिया। निरन्तर समाज सेवा और अनशनों के कारण कृश हुये अपने शरीर का ध्यान न कर नारनौल ग्राम में जाकर भक्त जी ने अनशन प्रारम्भ कर दिया। आपने घोषणा की कि हरिजनों के कुएं से निकले जल से आचमन करके ही भोजन करूंगा। थोड़े दिनों में ही भक्त जी के अनशन का समाचार सारे भारत में पहुंच गया। प्रतिदिन हजारों व्यक्ति अनशन समाप्त कराने के लिए आने लगे। उधर मुसलमान भी अपने दुराग्रह पर अड़े हुये थे। महात्मा गांधी ने भी तार भेजकर भक्त जी से अनशन समाप्त करने की प्रार्थना की किन्तु वे अपने निश्चय पर अडिग थे। अन्त में जनता को विद्रोह के लिये उत्तेजित देखकर पंजाब के मन्त्री चौ० छोटूराम ने डी० सी० को आदेश दिया कि गाँव में तुरन्त कुआं खोदने का प्रबन्ध करें। २३ दिन के अनशन के बाद मुसलमानों के हाथ से उसी कुएं के जल से आचमन कर अनशन समाप्त किया।

महात्मा जी जहां अनशन आदि अहिंसक उपायों का प्रयोग करते थे वहां शस्त्र प्रयोग को भी वैध मानते थे। सम्भालखा गांव में खुल रहे बूचड़खाने को बन्द करवाने के लिये उपाय विफल हो गये तो हजारों व्यक्तियों को सशस्त्र अपने साथ ले बूचड़खाने को घेर लिया। जिससे भयभीत हो सरकार ने बूचड़खाने को तुरन्त बन्द कर दिया। आप रिश्वत लेने वाले सरकारी कर्मचारियों के तीव्र विरोधी थे। थानेदार आदि पुलिस कर्मचारियों को इस अपराध पर कई बार पंचायत तक में आपने पीटा था और पैसे वापिस दिलवाये थे। आपकी तेजस्विता से सभी पापी व्यक्ति घबड़ाते थे।

आदर्श शुद्धि समारोह

मुसलमानों को शुद्ध कर पुनः आर्य धर्म में दीक्षित करने की आपकी विशेष अभिलाषा थी। इसके लिये आपके मार्ग में सबसे बड़ी बाधा हिन्दुओं की ओर से थी। क्योंकि कोई भी व्यक्ति शुद्ध हुये मुसलमानों से विवाह सम्बन्ध नहीं करना चाहता था इसके लिये महात्मा जी ने एक बार सात दिन का अनशन भी किया। आपने इस दिशा में जो आदर्श आर्यों के समक्ष रखा वह भी अपूर्व है। आपने शुद्ध हुए परिवारों के विवाहों को बहुत बड़े

सम्मेलनों का रूप दिया। बड़ी-बड़ी खापों ने मिलकर अपनी ओर से रोटी बेटी का सम्बन्ध करने की घोषणाएं की। हजारों व्यक्तियों ने समारोहों में सम्मिलित होकर संकीर्ण रूढ़ियों को समाप्त करने में सफलता प्राप्त की।

शिक्षा क्षेत्र में

भक्त जी ने शिक्षा के क्षेत्र में भी विशेष रचनात्मक कार्य किये। आपने बालकों के लिये गुरुकुल भैंसवाल तथा कन्याओं के लिये कन्या गुरुकुल खानपुर की स्थापना की, और उनका सफलतापूर्वक संचालन किया। आप अपने विद्यार्थियों को सदैव समाज सेवा के लिये प्रेरित करते रहते थे। गुरुकुलों के छात्र आपको माता-पिता से भी अधिक स्नेह करते थे। आप द्वारा स्थापित दोनों ही गुरुकुल सफलतापूर्वक विद्या के क्षेत्र में सेवा कर रहे हैं।

पूर्णाहुति

भक्त जी का जीवन प्राणी मात्र के लिए था। उनके मन में किसी से भी भेद-भाव न था किन्तु गरीबों की सहायता करने के लिए उन्हें बड़े-बड़े जागीरदारों, अभिमानी धनवानों के संघर्ष में आना पड़ता था। इधर मुसलमानों की अमानुषी प्रवृत्तियों का भी वे निरन्तर विरोध करते थे। गोहत्या तथा गरीब हिन्दू बालिकाओं के अपहरण को लेकर आपका संघर्ष मुसलमानों से सदैव चलता था। हैदराबाद, तथा लुहारू सत्याग्रहों में भक्त जी ने आगे बढ़कर कार्य किया था। इन दोनों ही सत्याग्रहों को मुसलमान अपने विरुद्ध समझते थे, इसीलिये कुछ मुसलमानों ने आपकी हत्या का निश्चय कर लिया था। इन सब घटनाओं का ज्ञान भक्त जी को भी था, किन्तु उनके हृदय में भय नाम की कोई चीज न थी। उनका विश्वास भगवान् पर था, इसीलिये वे अपनी रक्षा की कोई चिन्ता नहीं करते थे। १४ अगस्त १९४२ का वह दिन भी आ पहुँचा जबकि भक्त जी को अपनी अन्तिम परीक्षा देनी थी। रात्रि को ९ बजे कन्या गुरुकुल खानपुर में वट वृक्ष के नीचे ध्यान मग्न बैठे थे। चार-पाँच साथी और भी उनके पास थे। ५ मुसलमान बन्दूकें लेकर वहाँ पहुँचे और भक्त जी पर तीन फायर कर दिये। भक्त जी जिन सिद्धान्तों के लिये जीवित थे उन्हीं के लिये शहीद भी हो गये।

●

एक सम्मति

रामभक्त लंगायन एम० ए०

'राजधर्म' के १० अगस्त १९६१ वाले अंक में प्रकाशित श्री गुरुदत्त जी के 'आखिर सवाल क्या है'; इस लेख से प्रत्येक पाठक प्रेरित व सावधान हुआ होगा। वास्तव में यह लेख आर्य जगत को अपने उद्देश्य से पुनः पुनः अवगत कराता है। जिन परिस्थितियों का सामना करने के लिए आर्यसमाज की रूपरेखा बनी थी; वह अभी पूरी होने में कोसों दूर है। सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य इस दिशा में वेदों का यथार्थ भाष्य करना है, जिसका कार्य देव दयानन्द के मोक्ष उपरान्त शिथिल सा हो गया है। पाश्चात्य-विद्वानों के भाष्य को पढ़कर कोई भी श्रेष्ठ व्यक्ति, वेदों से घृणा किए बिना नहीं रह सकता। पाश्चात्य विद्वानों के कथन पर अग्रसर होने वाले वैदिक धर्म को 'असभ्य व्यक्तियों' का धर्म कह कर उसको स्वीकार नहीं करना चाहते। अतः मैं गुरुदत्त जी के इस कथन की सराहना करते हुए कहूँगा कि आर्यसमाज की सम्पूर्ण शक्ति प्रथम वेदों के अर्थों को सामान्य जनता तक पहुँचाने में लगनी चाहिए; तभी हम 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का नारा सार्थक कर सकते हैं।।

पूर्ण-विराम भी वजनी है

स्याही से अंकित 'फुल स्टाप' के बिन्दु को आप नगण्य न समझें। अमेरिकी वैज्ञानिकों ने हाल ही में इसका वजन किया है। मापक यन्त्र में इस का भार .००००००३५ औंस अंकित हुआ।

आज आर्यसमाज क्या करे ?

❁ कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

आज से बहुत पहले की बात है। करीब २५-३० वर्ष पहले की। आर्यसमाज दीवान हाल में दिल्ली के प्रमुख आर्यसमाजी विचारकों की सभा हुई थी। उस समय भी आर्यसमाज के सामने आज की तरह से यह प्रश्न उपस्थित था कि आर्यसमाज में युवक प्रवेश नहीं करते, ऐसा क्यों है ?

सभा में उपस्थित आर्य सज्जन इस प्रश्न का उत्तर अपनी-अपनी समझ के अनुसार दे रहे थे। एक भाई ने कहा कि हम समाजमन्दिरों में सन्ध्या, हवन और भजन में श्रद्धा नहीं रखते। इस का युवकों पर अच्छा असर नहीं पड़ता। एक-दूसरे भाई बोले, कि हम आर्यसमाजी शिखा, सूत्र का धारण नहीं करते और करते भी हैं तो उस में हमें विश्वास नहीं है।

एक भाई बोले कि हम आर्यों का, युवकों के अभिभावकों का, निजी जीवन ऊँचा नहीं है, हम स्वयं चरित्र-हीन हैं। बच्चे हमारे में कोई विशेषता नहीं देखते।

एक सज्जन बड़े उत्साह के साथ श्रोताओं को प्रभावित करते हुए बोले कि क्या करें, आज शिक्षा बहुत दूषित हो चुकी है। युवक और युवतियाँ सिनेमा और भ्रष्ट साहित्य में रुचि लेते हैं तथा फैशनों के चक्कर में पड़े रहते हैं। आर्यसमाज में न उन्हें फैशन मिलता है, और न सिनेमा के कर्णप्रिय संगीत। वे आर्यसमाज में क्यों आवें ? उनको नये-नये फैशनेबल वस्त्रों और शृंगार से ही फुरसत कहाँ मिलती।

सभा में उपस्थित श्रोता इन सब बातों को ध्यान से सुन रहे थे और किसी-किसी का भाषण सुनते हुए अपना सम्मतिसूचक सिर भी हिला देते थे।

अन्त में एक वक्ता जी खड़े हुए। उन्होंने जो कुछ कहा वह मुझे युक्ति-युक्त लगा। आज भी वह पूर्ण सच है उन्होने कहा कि मेरे से पूर्व वक्ताओं ने जो विचार प्रकट किए हैं उनमें सत्य का एक अंश अवश्य हो किन्तु मेरी नम्र सम्मति में वे समस्या के मूल कारण तक हम नहीं पहुँच पाये। इसलिए यदि मैं उनसे असहमति प्रकट करूँ तो मुझे क्षमा करेंगे। मेरी नम्र सम्मति में आज का युवक उस संस्था के प्रति आकृष्ट होता है, जिसमें वह अपने जीवन की किसी वर्तमान समस्या का समाधान देखता है। फिर वह न पढ़ाई की फिक्र करता है, न खेल-कूद और फैशन की। आर्यसमाज ने ५० वर्ष पूर्व समाज की तत्कालीन अनेक विकट समस्याओं को हल करने का प्रयत्न किया था। छूत-छात जात-पात अनमेल विवाह, स्त्री-शिक्षा, पाखण्ड-खण्डन और देश के प्रति अनुराग की कमी आदि। उस समय के युवक ने यह अनुभव किया कि आर्यसमाज तत्कालीन समस्याओं को सुलझाने का ठीक मार्ग दर्शाता है। उन्होंने अपने माता-पिता, बिरादरी और सुख सब की उपेक्षा करके भी आर्यसमाज की क्रान्ति में भाग लेना शुरू किया। इसके लिए उन्होंने कम कष्ट नहीं झेले। कांग्रेस आन्दोलन में भी राष्ट्र की मुक्ति के कार्यक्रम हजारों लाखों युवकों को अपनी ओर आकृष्ट किया। आज भी हम देख रहे हैं कि सैकड़ों युवक राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ या कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य बन जाते हैं, क्योंकि वे ऐसा अनुभव करते हैं कि कांग्रेस या शासन की मुस्लिम पक्षपातिनी नीति से राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ हिन्दुओं को बचा सकता है अथवा अमीरों के शोषण से कम्युनिस्ट पार्टी गरीब जनता का त्राण कर सकती है। इन का सोचना सही था या गलत, यह दूसरा प्रश्न है। परन्तु उन्होने यह अनुभव करके फैशन खेल-कूद छोड़ कर मातापिता का प्रेम पूर्ण शिक्षाओं का तिरस्कार करते हुए सरदी या वर्षा मे प्रातःकाल संघ की शाखाओं में जाने का व्रत लिया अथवा कुर्ते और पजामें में कम्युनिस्ट पार्टी का प्रचार शुरू किया। इनके

मार्ग में न आज की शिक्षा बाधक हुई और न वे सिनेमा और फैशनपरस्ती में पड़े। इसका एक कारण था, कि इन दोनों संस्थाओं में इन युवकों की सम्मति में जीवन की विकट समस्या का उत्तर मिल सकता था। इसके विपरीत आज के आर्यसमाज के सामने कोई ऐसा कार्यक्रम उपस्थित नहीं है जिसमें वे आज की समस्याओं का हल देख सकें। इसलिए समाज के प्रति न उन में आकर्षण पैदा होता है और न आर्यसमाज के प्रति रुचि ही पैदा होता है। केवल संध्या हवन करना या शिखा सूत्र धारण करना उन्हें अपनी किसी विकट समस्या का समाधान नहीं दीखता। यदि हमें आर्यसमाज के प्रति युवकों में रुचि उत्पन्न करनी है तो हमें ऐसा ठोस और स्पष्ट कार्यक्रम निर्धारित करना होगा जो आर्यसमाज के धर्म और जीवन की वर्तमान समस्याओं में समन्वय उत्पन्न कर सके तभी युवक आर्यसमाज में आयेंगे, अन्यथा यह आर्यसमाज केवल वृद्धों का समाज रह जायगा। जो अपने संस्कारों के कारण समाजों में अपने जीवन पर्यन्त नियम पूर्वक आते रहेंगे। आज तो न आर्यसमाज का नेतृत्व है और न कोई उत्साहपूर्ण आशावर्धक कार्यक्रम उसके सामने है।

महात्मा गांधी ने इतने विशाल देश में खद्दरधारी स्वयं सेवकों की एक बड़ी सेना संगठित की थी। इसका मुख्य ध्येय उनकी विविध रचनात्मक प्रवृत्तियों को है। कांग्रेस के अतिरिक्त, चरखा संघ, खादी ग्रामोद्योग संघ, नई तालीम संस्था, गो रक्षा सदन कार्य हिन्दी भाषा प्रचार सभा हरिजन सेवक संघ आदि संस्थाओं में रचनात्मक करने वाले हजारों कार्यकर्ता गांधी जी के अनुयायी उनकी प्रत्येक प्रवृत्ति में साथ देते थे। आज आर्यसमाज के पास कोई रचनात्मक कार्यक्रम नहीं है। जो रचनात्मक प्रवृत्तियाँ थीं, वे हमारी संस्थाओं के पास चली गई है, स्कूल और गुरुकुल तक आज सरकार के हाथ में चले गये हैं। क्योंकि आर्यसमाज में सर्जनात्मक संगठन शक्ति का अभाव हो गया है।

इन पंक्तियों के लेखक ने दिल्ली में आर्य केन्द्रीय सभा को एक सुझाव दिया था एक वर्ष में २५-३०,००० परिवारों के प्रतिज्ञापत्र भरवाये जावें कि वे अपना सब निजी काम हिन्दी में करेंगे। इसी तरह हजारों परिवारों से केवल गो दुग्ध का व्यवहार करने की शपथ ली जा सकती हैं, तब गो दुग्ध की खपत के कारण हजारों गौओं का पालन गांव वाले करेंगे। किसी समय आर्यसमाज व्यायामशालाओं को प्रोत्साहन देता था। आज आर्य वीर दल को पुनः संगठित किया जा सकता है। स्वाध्याय केन्द्रों की स्थापना भी की जा सकती है आर्य युवा सभाएँ भी कुछ वर्ष चलकर आज निर्जीव हो गई हैं। आज के अनेक आर्य नेता इन्हीं आर्य कुमार सभाओं की देन है।

●

झूठे वायदे

पिछले दिनों जब मास्टर चन्दगीराम ने दूसरी बार 'भारत-केसरी' की उपाधि जीत कर हरयाणा व सम्पूर्ण देश का ही मस्तक ऊँचा किया तब जनता ने स्थान-स्थान पर उनके हार्दिक स्वागत किये। उन्हीं दिनों हरयाणा की जनता में एक चर्चा बड़े जोरों से चली कि जिस तरह महाराष्ट्र सरकार अपने पहलवानों का सम्मान करके उत्साह बढ़ाती है उसी प्रकार हरयाणा सरकार को भी अपने वीर पहलवानों का सम्मान करना चाहिये। फिर क्या था हरयाणा सरकार ने भी सस्ती वाहवाही का अवसर हाथ आया देख लोगों को खुश करने के लिये मास्टर जी का पुरस्कार के द्वारा सम्मान करने की घोषणा कर दी। परन्तु अब पता चला है कि चौधरी बन्सीलाल ने खेलों से सम्बन्धित मन्त्री का इस विषयक चर्चा चलने पर साफ इंकार कर दिया है कि उनकी सरकार इस प्रकार का कोई पुरस्कार देने को तैयार नहीं है।

●

महर्षि के सपनों का भारत

● पं० नरेन्द्र (हैदराबाद)

महर्षि दयानन्द सरस्वती महान् देशभक्त तथा उच्च कोटि के राजनीतिज्ञ भी थे। ब्रिटिश-साम्राज्य सत्ता ने भारत की स्वाधीनता को पददलित करके अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था और विदेशी शासन तथा अधिकार के नीचे भारत का राष्ट्रीय जीवन जिस प्रकार विनष्ट और विशृंखल होता जा रहा था, उसका महर्षि दयानन्द को बहुत दुःख था। उन्होंने १८५७ का रोमांचकारी दृश्य अपनी आँखों से देखा था और स्वाधीनता के वीर सैनिकों को फाँसी पर लटकाये जाने की स्मृति उनके हृदय को सर्वदा भेदती रहती थी।

धर्म के नाम पर राजनैतिक संगठन

भारतीयों के नैतिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन की शृंखला दुर्बल होती जा रही थी। उसको शृंखलाबद्ध करके राजनैतिक सत्ता की पुनः प्राप्ति की अत्यन्त आवश्यकता थी। महर्षि के पास इनके लिए अचूक औषधि थी और वह औषधि थी धार्मिक पुनर्जागृति—देश के सभी धर्मों को सामान्य मंच पर लाना।

इस धार्मिक एकता का यह भी एक उद्देश्य था कि देश में प्रचलित समस्त मतों तथा सम्प्रदायों की कर्तृत्वशक्ति को एक केन्द्र पर लाया जाए, ताकि सब संगठित हो कर अपने प्रिय देश के उत्थान एवं कल्याण के लिए प्रयत्नशील हों। अंग्रेज महर्षि से भयभीत थे, क्योंकि उन्हें विश्वास हो चुका था कि यदि भारतीय महर्षि की योजनानुसार व्यवहार करें तो उनके साम्राज्य की जड़ें हिल जाएँगी। महर्षि के आमन्त्रण पर १८७७ ई० में देहली में सभी शक्तियाँ एकत्र हुई। किन्तु ऐसा ज्ञात होता है कि साम्राज्य-सत्ता की गुप्त भेद-नीति कार्य कर गयी और प्रत्येक सम्प्रदाय ने अपने-अपने स्थान पर अपनी उक्तियों का उपयोग करना प्रारम्भ किया।

विशुद्ध राष्ट्रीय आन्दोलन

महर्षि का यह प्रयत्न विशुद्ध राष्ट्रीय आन्दोलन था, जिसको उन्होंने साम्राज्यशक्ति की आँखों में धूल झोंकने के लिए नैतिक एवं धार्मिक रूप दिया था। भारतीय अभी स्वाधीनता की मंजिल से दूर थे। उनमें अभी स्वतन्त्रता तथा स्वाधीनता की आकांक्षा का अंकुर पूर्णतः फूटा नहीं था। महर्षि इसी स्वाधीनता की अभिलाषा को देश में उत्पन्न करना चाहते थे। यह हमारा दुर्भाग्य था जो हमने अपने अन्दर महर्षि की योजना को समझने की पात्रता उत्पन्न नहीं की थी, अन्यथा यदि उसी समय हमने अपनी सम्पूर्ण शक्ति को साम्राज्य-सत्ता के विरुद्ध एकत्र किया होता तो स्वाधीनता की मंजिल बहुत समीप हो जाती।

हीनता के भावों को दूर करने का आन्दोलन

महर्षि निराश होने वाले न थे। वे देशवासियों को अपनी महानतम विचार-धारा के द्वारा जीवन के विशेष धार्मिक एवं नैतिक स्तर तक पहुँचाना चाहते थे। उन्हें इस बात का पूर्णतः अनुभव था कि भारतीयों में आत्मसम्मान तथा आत्मगौरव की भावना शिथिल हो गयी है। राष्ट्र में हीनता के भावों ने जड़ें पकड़ ली हैं। महर्षि ने देश के सामने उच्चतम नैतिक आदर्श रक्खा और देशवासियों में इस बात का दृढ़ विश्वास बिठा दिया कि उनके पास संसार की उच्चतम सभ्यता, सृष्टि के महान धर्म और विश्व की पवित्रतम संस्कृति की धरोहर है। संसार के सभी देशों शिक्षा एवं सभ्यता का आदिस्रोत भारत ही है। स्वामी जी ने कहा है कि—

विद्याओं का स्रोत

'यह आर्यावर्त देश कैसा सुन्दर और उपजाऊ है? यहाँ की जलवायु कितनी उत्कृष्ट है? इसमें छः ऋतुएं होती हैं और कितने सुन्दर क्रम से उनका आयोजन है। यहाँ के वासियों को "देव" अर्थात् विद्वान् कहा जाता था, इसलिए गंगा को देव-नदी नाम दिया गया। जितनी विद्या भूगोल में फैली है वह सब आर्यावर्त देश से मिस्र वालों, उनसे यूनानी, उनसे रूस और उनसे यूरोप देश

में, उससे अमेरिका आदि देश में फैली है।"

(स० प्र० ११ समु०)

भारत का वैभव

आर्यावर्त के वैभव का वर्णन करते हुए ऋषि ने लिखा है—"यह आर्यावर्त देश ऐसा है कि जिसके सदृश भूगोल में दूसरा कोई देश नहीं है। इसीलिए इस भूमि का नाम स्वर्ण-भूमि है, क्योंकि यही सुवर्णादि रत्नों को उत्पन्न करती है। भूगोल में जितने देश हैं वे सब इसी देश की प्रशंसा करते और आशा रखते हैं कि पारसमणि पत्थर जो सुना जाता है वह तो झूठी है परन्तु आर्यावर्त देश ही सच्चा पारसमणि है कि जिसको लोहरूप दरिद्र विदेशी छूने के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।"

(स० प्र० समु० ११)

प्राचीन भारत के पतन तथा राजनैतिक क्षय के जिन कारणों को महर्षि ने दर्शाया है वह अत्यन्त शोचनीय है। यदि भारतीयों में एकता होती और उन्होंने अपने धार्मिक, नैतिक एवं सामाजिक आदर्श को दृष्टि से ओझल न किया होता तथा वैयक्तिक हित को प्रधानता न दे कर राष्ट्रीय हित की ओर ही ध्यान दिया होता तो भारत न तो इतने आर्थिक संकटों में पड़ता और न ही सुदूर पश्चिम की सत्ता को हमारे देश पर अपना आधिपत्य जमाने का अवसर मिलता। पारस्परिक फूट और स्वार्थपरायणता ने ही विदेशियों को भारत में घुसने का अवसर दिया तथा हमारी दुर्बलताओं के कारण ही हम अन्यों के दास बने।

देश की पराधीनता का महर्षि को अत्यन्त क्षोभ था। वे चाहते थे कि देशवासी किसी प्रकार से संगठित हो कर ब्रिटिश साम्राज्य के जुए को उतार कर फेंक दें। उन्हें विश्वास था कि स्वाधीन भारत ही अपने प्राचीन गौरव तथा ऐश्वर्यपूर्ण जीवन को प्राप्त कर सकता है।

अहिंसा एवं असहयोग आन्दोलन

महर्षि ने सर्वप्रथम अहिंसा और असहयोग आन्दोलन को चलाया। यद्यपि उस समय ये सिद्धान्त राजनैतिक पृष्ठभूमि के साथ प्रकट रूप में जनता के सामने नहीं आये थे, तथापि परोक्ष में इनकी विचारधारा जिस रूप में प्रभाव कर रही थी उससे कोई इनकार नहीं कर सकता। स्वदेशी और विदेशी की विचारधारा भविष्य में स्वाधीनता प्राप्ति का प्रबल शस्त्र सिद्ध हुई।

भाषण तथा लेखन की स्वाधीनता

महर्षि ने राष्ट्र का आत्मगौरव तथा नैतिकता के उच्चतम पाठ दिये। उनका अपना जीवन इन पाठों का मूर्तरूप था। महर्षि न बतलाया कि सत्य को प्रकट करना प्रत्येक का नैसर्गिक अधिकार है। उसको मौखिक अथवा लेखन रूप में प्रकट करते हुए संसार की बड़ी शक्ति से भयभीत नहीं होना चाहिए, महर्षि ने इस प्रकार भाषण एवं लेखन स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए उभारा। उन्होंने ईसाई मत के विरुद्ध लिखने की आवश्यकता अनुभव की तो पूरे बल के साथ उनकी त्रुटियों का खंडन किया। उस समय उन्होंने यह नहीं सोचा कि अंग्रेज शासक हैं, उनके मत का खण्डन करने से वे रुष्ट हो जाएंगे। महर्षि सत्य पर निडर रहे।

राज्य का आदर्श

महर्षि ने राजनीति तथा राज्य की समस्याओं पर भी एक सच्चे देश-भक्त और राजनीतिज्ञ की भाँति प्रकाश डाला है। शासक तथा प्रजा के सम्बन्ध तथा अन्य शासन सम्बन्धी बातों पर उनके विचार अत्यन्त प्रगतिशील, प्रजातन्त्रवादी तथा गम्भीर चिन्तन को प्रकट करते हैं। महर्षि ने जिस राज्य का कल्पना की है, उसमें वैधानिक शासक और प्रजातन्त्र दोनों को सफल संगम है।

राजा कौन ?

महर्षि की दृष्टि में वही राजा होने का पात्र है जिसमें सदाचार, विद्वत्ता, न्यायप्रियता, वीरता तथा धीरता हो। वह महान् ऐश्वर्यशाली, पराक्रमी और शत्रु-भंजक हो। यजुर्वेद के हवाले से राजा के चुनाव की निम्न शर्तें हैं :

"हे विद्वानो ! राजप्रजाजनो, तुम इस प्रकार के पुरुष को बड़े चक्रवर्ती राज्य सबसे बड़े होने बड़े-बड़े विद्वानों से युक्त राज्य पालने और परम ऐश्वर्ययुक्त राज्य और धन के पालन के लिए सम्मति करके सर्वत्र पक्षपात रहित पूर्ण विद्या-विनययुक्त सबके मित्र सभापति राजा सर्वाधीश मान के सब भूगोल को शत्रुरहित करो।"

(यजु० ९।४०)

सत्ता जनता में ही अधिष्ठित हो

महर्षि का कथन है कि राजा को "स्वतन्त्र स्वाधीन" नहीं होना चाहिए। वे सभापति (राजा) की स्वच्छन्दता अथवा एकतन्त्रता को राज्य और प्रजा के लिए अहितकारी समझते हैं क्योंकि ऐसी परिस्थिति में सम्पूर्ण सत्ता केवल उसी में प्रतिष्ठित हो जाती है और वह जो जी में आये करने लगता है। ऋषिवर्य लिखते हैं :

"जो प्रजा से स्वतन्त्र स्वाधीन राजवर्ग रहे, जो राज्य में प्रवेश करके प्रजा का नाश किया करे, जिस लिए अकेला राजा स्वाधीन या उन्मुक्त हो के प्रजा का नाशक होता है, अर्थात् वह राजा-प्रजा को खाये जाता है, इसलिए किसी एक को राज्य में स्वाधीन न करना चाहिए।" (स० प्र० समु० ६)

इससे यह सिद्ध होता है कि महर्षि प्रजा की सत्ता को स्वीकार करते हैं और इस राजनैतिक सिद्धान्त को मानते हैं कि "वास्तविक सत्ता प्रजा से प्रतिष्ठित हो और राजा या सभापति को प्रजा का प्रतिनिधि होना चाहिए।"

राजा और प्रजा के सम्बन्ध

राजा और प्रजा के सम्बन्ध पर ही राज्य की सुख शान्ति, उसकी शक्ति और सामर्थ्य, उसका वैभव और ऐश्वर्य निर्भर होता है। क्योंकि इन दोनों के पारस्परिक सद्व्यवहारों तथा सुखद सम्बन्धों के बिना राज्य का शासन तथा कार्य सुचारु रूप से संचालित नहीं हो सकता। इस सम्बन्ध में भी महर्षि का मत है कि—

"प्रजा के धनाढय, आरोग्य खान-पान आदि से सम्पन्न रहने पर राजा की बड़ी उन्नति होती है। प्रजा को अपने सन्तान के सदृश्य सुख देवे और प्रजा अपने पिता राजा और राजपुरुषों को जाने।.....जो प्रजा न हो तो राजा किसका ? और राजा न हो, तो प्रजा किसकी कहावे। दोनों अपने-अपने कार्यों में स्वतन्त्र और मिले हुए प्रतियुक्त काम में परतन्त्र रहें। प्रजा की साधारण सम्पत्ति के विरुद्ध राजा व राजपुरुष न हो।" (स० प्र० समु० ६)

शासन-कार्य तीन सभाओं के द्वारा सम्पन्न हों

युद्ध तथा शासन व्यवस्था के लिए महर्षि ने तीन सभाओं को आवश्यक बतलाया है अर्थात् (१) विद्या-सभा जो बड़े-बड़े विद्वानों एवं शिक्षकों द्वारा निर्मित हो (२) धर्म-सभा जो दिग्गज धार्मिक विद्वानों तथा आचार्यों द्वारा निर्मित हो और (३) राज-सभा जो राजनीतिज्ञों एवं कुशल शासकों द्वारा निर्मित हो। महर्षि का मत है कि इन "तीनों सभाओं की सम्मति से राजनीति के उत्तम नियम और नियमों के अधीन सब लोग बर्तें सबके हितकारक कामों में सम्मति करें।"

राजसभा के उद्देश्य

राजा और राजसभा को किन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए यत्नशील रहना चाहिए, इसके सम्बन्ध में महर्षि ने लिखा है —

राजा और राजसभा अलब्ध की प्राप्ति की इच्छा, प्राप्त की प्रयत्न से रक्षा करे, रक्षित को बढ़ावे और बढ़े हुए धन को वेद-विद्या, धर्म का प्रचार, विद्यार्थी, वेदमार्गोपदेशक तथा असमर्थ अनाथों के पालन में लगा दें। इस चार प्रकार के पुरुषार्थ प्रयोजन को जानें। आलस्य को छोड़कर इसका भली-भाँति नित्य अनुष्ठान करे। (१) दण्ड से अप्राप्त की प्राप्ति की इच्छा, (२) नित्य देखने से प्राप्त की रक्षा, (३) रक्षित की वृद्धि अर्थात् ब्याजादि से बढ़ावे और (४) बढ़े हुए धन को पूर्वोक्त मार्ग में नित्य व्यय करे। कदापि किसी के साथ छल से न बरते किन्तु निष्कपट होकर सबसे बर्ताव रक्खे और नित्यप्रति अपनी रक्षा करके शत्रु के किए हुए छल को जान के निवृत्त करे। कोई शत्रु अपने छिद्र अर्थात् निर्बलता को न जान सके और स्वयं शत्रु के छिद्रों को जानता रहे जैसे कछुआ अपने अंगों को गुप्त रखता है वैसे शत्रु का प्रवेश करने के छिद्र को गुप्त रक्खे। जैसे बगुला ध्यानावस्थित होकर मच्छी के पकड़ने को ताकता है वैसे अर्थसंग्रह का विचार किया करे, द्रव्यादि पदार्थ और बल की वृद्धि कर शत्रु को जीतने के लिए सिंह के समान पराक्रम करे, चीता के समान छिपकर शत्रुओं को पकड़े और समीप में आये बलवान् शत्रुओं से ससा के समान दूर भाग जाय और पश्चात् उनको छल से पकड़े। इस प्रकार विजय करने वाले सभापति के राज्य में जो परिपन्थी अर्थात् डाकू लुटेरे हों उनको (साम) मिला लेना (दाम) कुछ देकर (भेद) तोड़-फोड़ करके वश में करे और जो इनसे वश में न हो तो अति कठिन दण्ड से वश में करें।" (स० प्र० समु० ६)

युद्धनीति

युद्धनीति के सम्बन्ध में भी महर्षि ने अपने विचार प्रकट किये हैं। गत महायुद्ध में जो विनाश और सेना के साथ प्रजा भी गेहूँ के साथ घुन की भाँति पिस गयी, वह एक रोमांचकारी स्मृति है। विजयी को कुछेक, नैतिक नियमों को पालन करना पड़ता है, जैसे निःशस्त्रों, दुर्बलों, घायलों और शरणागतों के विरुद्ध शस्त्र नहीं उठाया जाता। किन्तु विजय-मद में चूर आज के विजेताओं ने इस प्रकार की युद्ध-नीति को ताक में रख दिया, क्योंकि जब आक्रमण बमों और विमानों द्वारा हो तो फिर निःशस्त्र और दुर्बल तथा नागरिक जनता का क्या प्रश्न ? मशीनगनों, युद्धपोतों और विमानों के सामने सब कुछ नष्ट होकर रह गया। इस प्रकार निर्दोष हताहतों की संख्या लक्षों तक पहुंच गयी। किन्तु युद्ध नीति के सम्बन्ध में अपने मत को प्रकट करते हुए महर्षि ने लिखा है—

युद्ध समय में न इधर-उधर खड़े, नपुंसक, न हाथ जोड़े हुए, न जिसके सिर के बाल खुल गये हों न बैठे हुए, न 'मैं तेरी शरण हूँ' ऐसे को, न सोते हुए; न मूर्छा को प्राप्त हुए, न नग्न हुए, न आयुध के प्रहार से पीड़ा को प्राप्त हुए, न दुःख, न अत्यन्त घायल न डरे हुए और न पलायन करते हुए पुरुष को सत्पुरुषों के धर्म का स्मरण करते हुए योद्धा लोग कभी मारें। किन्तु उनको पकड़ के जो अच्छे हों बन्दीगृह में रख दें और भोजन-आच्छादन यथावत् देवें और जो उनके योग्य काम हो करावें। विशेष इस पर ध्यान रखें कि स्त्री, बालक, वृद्ध और आतुर तथा शोकयुक्त पुरुषों पर शस्त्र कभी न चलावें। उनके लड़के-बालों को अपने सन्तानवत् पालें और स्त्रियों को भी पालें। उनको अपनी बहन और कन्या के समान समझें, कभी विषयासक्त की दृष्टि से भी न देखें।' (स०-प्र० समु० ६)

विजेता और पराजित के सम्बन्ध

इसीलिए स्वामी जी ने विजेता और पराजित के सम्बन्धों को स्पष्ट करते हुए लिखा है—

"जीत कर उनके साथ प्रमाण अर्थात् प्रतिज्ञादि लिखा लेवे और जो उचित समय समझे तो उसी वंशस्थ किसी धार्मिक पुरुष को राजा कर दे और उससे लिखा लेवे कि तुमको हमारी आज्ञा का अनुकूल अर्थात् जैसी धर्मयुक्त राजनीति है उसके अनुसार चलके न्याय से प्रजा का पालन करना होगा। ऐसे उपदेश करें और ऐसे पुरुष उनके पास रखें कि जिससे पुनः उपद्रव न हो और जो हार जाए उसका सत्कार प्रधान पुरुषों के साथ मिलकर रत्नादि उत्तम पदार्थों के दान से करे और ऐसा न करे कि जिससे उसका योगक्षेम भी न हो जो उसको बन्दीगृह करे तो भी उसका सत्कार यथायोग्य रक्खे जिससे वह हारने के शोक से रहित होकर आनन्द में रहे। क्योंकि संसार में दूसरे का पदार्थ ग्रहण करना अप्रीति और देना प्रीति का कारण है और विशेष करके समय पर उचित क्रिया करना और उस पराजित के मनोवांछित पदार्थों का देना बहुत उत्तम है और कभी उसको चिढ़ावे नहीं, न हँसी और न ठट्ठा करें, न उसके सामने हमने तुझको पराजित किया है ऐसा भी कहे किन्तु आप मेरे भाई हैं इत्यादि मान्य प्रतिष्ठा सदा करें।" (स० प्र० समु० ६)

तात्पर्य यह कि स्वामी जी ने राजनीति और शासन सम्बन्धी जिन विचारों को प्रकट किया है वह एक ऐसे राज्य की कल्पना का चित्र खींचता है जहां शासन और प्रजा में स्नेह सम्बन्ध हो जहाँ न्याय, प्रेम और समानता का साम्राज्य हो और जहाँ सुख सम्पन्नता और उत्थान के समस्त साधन हों। स्वामी जी का वर्णित राज्य वही है जिसको आधुनिक भाषा में मंगलकारी राज्य कहा जाता है।

कहानी--

जात न पूछे कोय !

● रमेश बतरा

यदि वस्त्र मात्र शरीर को ढकने तक ही सीमित हैं तो उसके तन पर केवल उतने ही वस्त्र थे जिनसे कि उसे समाज की दृष्टि से नग्न न दिखाई देने वाली सीमा तक छुपाया जा सके। उसकी अस्त-व्यस्त भंगिमा, बिखरे, शुष्क और परस्पर उलझे हुए बालों को देखकर एक स्पष्ट सा आभास हो रहा था कि उस पुरुष ने स्नानादि करके उन्हें सँवारना सीखा ही नहीं। उसके हाथों की उंगलियां और पाँवों की सूजन बरबस ही किसी दुखदायी पीड़ा से भरी घटना का आभास दिला रही थी।

छोटे से पर्वतीय स्टेशन पर खड़ा उस रात में गाड़ी के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। शीत इतनी अधिक थी कि स्वयं रात्रि भी ठिठुर रही थी। समय काटने और कुछ गर्मी पाने के विचार से चाय पीने के लिए अपने सामान को प्लेटफार्मं पर छोड़ कर जब मैं जलपान गृह पर पहुंचा, वह वहाँ के मालिक से उलझ रहा था। 'जा जा, अपना बर्तन और पैसे ले आ तो चाय दे दूँगा' उसे फटकार कर वहाँ का मालिक मेरी ओर उन्मुख होकर बोला, 'कहिए साहब क्या सेवा करूं आपकी ?'

एक ही क्षण में उसके दो रूप देखकर मैं पहले तो मुस्कराया और फिर उस निरीह की ओर देखने लगा जो वस्तुतः यह सोच रहा था कि उसमें और मुझमें इतना अन्तर क्यों और कैसे है ? दुकान मालिक को चाय का कप लाने के लिए कहकर मैंने चाहा कि उस पुरुष से उसके विषय में कुछ जानकारी प्राप्त करूं। परन्तु अभी मैं इस विषय में सोच ही रहा था कि मालिक ने आकर मुझे चाय का कप दिया और उसे घूरते हुए बोला, 'भाग बे यहाँ से ! क्यों व्यर्थ में ग्राहकों को रोक रखा है ?'

'नहीं जाता, तुम्हारे बाबा का स्थान है क्या ?' प्रत्युत्तर भी अत्यन्त करारा था।

उस स्थान से हटने और स्नान करने की बात मुझे समझ नहीं आई। इसलिए मैंने मालिक से पूछा, 'इस निर्धन के यहाँ से हटने और आपके स्नान करने की बात तो कुछ बनी नहीं।'

'तो फिर बेचारे से झगड़ते ही क्यों हो' मैंने उसकी ओर देखते हुए कहा, 'इसे चाय पिला दो, चला जाएगा।'

'राम-राम-राम' उसने कानों को हाथ लगा लिया, 'इसे अपने बर्तन में चाय दे दूँ ? यह नहीं हो सकता। अपना बर्तन और पैसे ले आए तो चाय दे दूंगा।'

'मैं तो अपना बर्तन लेकर नहीं आया'—मैंने पूछा, 'मुझे तुमने चाय क्यों दी है ?'

'जी आपकी बात और है।'

'क्यों भई ! मुझे ऐसी कौन सी दुम लगी हुई है जो इसे नहीं लगी हुई ?'

'अजी यह शूद्र है और आप हिन्दू।'

'यह भी तो हिन्दू ही है' उसकी मूर्खता पर मैंने कुछ आनन्द लेने के विचार से कहा, 'और मैं भी तो शूद्र हूं।'

मेरी बात सुनकर उसे करन्ट सा लगा और वह खिसियाता हुआ सा बोला, 'ही-ही-ही, क्यों मजाक करते हो साहब ? राम झूठ न बुलवाय आप तो कोई खानदानी आदमी लगते हैं।'

'अच्छे वस्त्र पहन लेने से मनुष्य खानदानी हो जाता है क्या' ? मैंने अपने वस्त्रों पर दृष्टिपात करके उसे समझाते हुए कहा, 'अरे ओ राम के पुजारी ! राम ने तो शबरी के जूठे बेर खा लिए थे और तुम इसे अपना बर्तन देकर फिर उसे साफ भी नहीं कर सकते ?'

मेरी सीधी सी बात पर ही उसकी मूर्खता ने क्रोध का रूप धारण कर लिया और वह फुफकारता हुआ सा बोला, 'आप कौन होते हैं जो उपदेश देने वाले ? अपना धर्म-कर्म हम स्वयं जानते है ।

'मैं तो एक साधारण-सा प्राणी हूं मेरे भाई' मैंने स्वर में और भी मिठास लाते हुए कहा, 'परन्तु मानवता के नाते हमें-तुम्हें इस अभागे से सहानुभूति होनी चाहिए ।'

'ओह' उसके शब्द सुनकर मैं उस वीर सैनिक के प्रति मन ही मन श्रद्धावश नत मस्तक हो गया । दुकान मालिक पर मुझ क्रोध तो बहुत आया लेकिन फिर भी मैंने उससे पहले से स्वर में ही पूछा, 'अच्छा यह बताओ कि यह युद्ध में अपने लिये लड़ा था या देश के लिये ?'

'देश के लिये लड़ा था' उसने बात को बिना समझे ही उत्तर दे दिया ।

'देश के लिये लड़ा अर्थात् हमारे लिये लड़ा न' मैंने दाहिने हाथ की पाँचों उँगलियाँ खोलकर संकेत से पूछा, 'उस समय क्या यह केवल शूद्रों के लिए लड़ा था ? क्या केवल उन्हीं के लिए इसने प्राणों को हथेली में लेकर सर पर कफन बाँध लिया था ? क्या इसका शरीर हमारे लिये गोलियों से छलनी नहीं हुआ ?'

'अजी आपसे कौन झगड़े ?' कोई उत्तर न पाकर उसने मूर्खों की सी बात कह दी, 'आप तो धर्म-कर्म भूलकर अंग्रेज हो गए है अंग्रेज ।'

'क्या बकते हो ? मैं ऐसे धर्म-कर्म थूकता हूँ' मुझे फिर क्रोध आ गया । परन्तु यह विचार कर कि क्रोध करना उचित नहीं होता, मैं शीघ्र संतुलित होकर बोला, 'मैं अंग्रेज नहीं, भारतीय हूं और मुझे गर्व है कि मैं भारत में उत्पन्न हुआ । क्योंकि हमारे पूर्वज राम और ऋषि दयानन्द जैसे माननीय महापुरुष हैं जो और किसी भी स्थान या राष्ट्र में नहीं हो पाए ।'

उत्तर में वह मौन ही धारण किये रहा । मैंने भूल से समझा कि सम्भवतः मौन रहकर वह मुझसे अपनी सहमति प्रकट कर रहा है । इसलिए मैंने सोचा अब उससे अधिक तर्क न करना ही उचित है । फलस्वरूप, उसी निरीह सैनिक की ओर देखते हुए मैंने दुकान मालिक से कहा, 'छोड़ छोड़ो, मानवता के महत्व को समझो और इसे चाय दे दो ।'

इस बार उत्तर मिलने में क्षण भर का समय भी नहीं लगा । उसने झट से कहा, 'मैं पहले भी कह चुका हूँ और अब भी कहता हूं कि इसे चाय मेरे वर्तन में नहीं मिलेगी, नहीं मिलेगी और नहीं मिलेगी ।'

'चलो इसे न दो' मैंने मुस्कराते हुए कहा, 'मुझ तो दो ।'

'आपने अभी तो पी है ।'

'मैं और नहीं पी सकता क्या ?'

'पीजिए, मेरे लिये दो नहीं दस बार चाय पीजिए। परन्तु पहले सौगन्ध उठाइए कि आप शूद्र नहीं है ।'

'मैं सौगन्ध उठाता हूँ कि मैं भारतीय हूं और केवल भारतीय ही हूं ।'

'इधर भारतीय-वारतीय कुछ नहीं चलेगा । सौगन्ध उठाइए कि आप शूद्र नहीं है ।'

शीघ्र ही वह सैनिक मुझ पर कृतज्ञतापूर्ण नेत्रों से दृष्टिपात करता हुआ चाय पीने लगा और दुकान मालिक जलता-भुनता गम्भीर अवस्था में खड़ा रहा। मैंने कलाई पर बंधी अपनी पुरानी घड़ी की ओर देखा तो पाया कि गाड़ी आने में अभी दस मिनट शेष है । अकस्मात मेरी आत्मा ने मस्तिष्क को सुझाव दिया कि मुझे उस निरीह सैनिक से अपनी सहानुभूति प्रकट करनी चाहिए । सुझाव सुन्दर था। इसलिए मैं दुकान की ओर पीठ करके उसके साथ बातें करने में व्यस्त हो गया । मेरी सहानुभूति पाकर उसने मुझे अपने विषय में बताना आरम्भ कर दिया । उसकी बातें सुनते-सुनते मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे मैं 'यमराज' हूं और वह सैनिक मृत्यु के पश्चात् मेरे समक्ष खड़ा अपने जीवन भर का ब्यौरा प्रस्तुत कर रहा है। अपने भूतकाल से आरम्भ होकर वह वर्तमान पर आया और फिर किसी दुखिया दार्शनिक की भाँति अपने भविष्य की ओर अग्रसर होने लगा । परन्तु अभी वह भविष्य की प्रथम सीढ़ी पर ही था कि अकस्मात खाली चाय के कप को वहीं छोड़कर वह हड़बड़ाता हुआ दुकान के भीतर की ओर भागा । जब साँप की मृत्यु समीप आती है तो वह नगर की ओर आ जाता है । मैंने सोचा कि इसका भी बुरा समय आया हुआ है इसलिए दुकान में घुसता जा रहा है । परन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ । अगले

ही क्षण मैंने देखा कि उसने अपनी फटी हुई कमीज को फाड़कर एक पट्टी सी बनाई और गीली करके उसे दुकान मालिक की उँगली पर बाँध दिया। वस्तुतः कोई वस्तु काटते-काटते उसकी उँगली कटने के कारण रक्त बहना आरम्भ हो गया था। पट्टी बंधने से रक्तस्राव बन्द हो गया तो वह उसका हाथ दबाने लगा ताकि उसे पीड़ा में भी कुछ सुख का आभास हो। परन्तु कुछ ही समय में उसे स्थिति का आभास हुआ तो वह दबे पाँव वापिस हो लिया। किन्तु अभी वह दो-तीन कदम ही वापिस लौटा था कि दुकान मालिक ने उसे पुकारा, 'रुक जाओ।'

'क्षमा कर दो, भूल हो गई' उसकी पुकार सुनकर उसने गिड़गिड़ाते हुए प्रार्थना की, 'इस बार क्षमा कर दो। अब मैं कभी तुम्हारी दुकान पर ही नहीं आऊंगा।' उस समय मैंने अनुभव किया कि उसकी टाँगें काँप रही है और वह भागना चाहते हुए भी नहीं भाग पा रहा।

'नहीं मैं तुम्हें क्षमा नहीं करूंगा' कहता हुआ दुकान मालिक उसके समीप आगया और उसके कन्धे पर हाथ रखता हुआ बोला, 'चलो खाना खा लो, प्रातः से तुमने कुछ नहीं खाया।'

उसने समझा कि वह सम्भवतः उसकी हँसी उड़ा रहा है। इसलिए उसके चरणों में गिर पड़ा। हाँ, उसने उसके शरीर को इस बार छुआ नहीं। परन्तु उधर तो पासा ही और था। क्योंकि दुकान मालिक ने उसे अपनी दोनों बाहों का सहारा देकर ऊपर उठाते हुए कहा, 'अरे पगले! क्षमा तो मुझे माँगनी चाहिए। आज तुमने मेरी आँखें खोल दी हैं। सचमुच, तुम तो मुझसे भी श्रेष्ठ हो। अब तुम यहीं मेरे पास ही काम किया करना। चलो अब खाना खाएं।'

वह निरीह सैनिक अब भी भयभीत था। परन्तु जब दुकान मालिक ने उसे प्रेमपूर्वक गले से लगा लिया तो उसका समस्त भय जाता रहा और वह भी उसके हृदय से लिपट गया। उधर से उसी समय गाड़ी के आने की सूचना उसकी लम्बी सीटी द्वारा स्वयं ही मिल गई और इधर वे दोनों मुझे भूलकर खाना खाने के लिये दुकान के पीछे वाले कमरे में चले गए। मैंने मन ही मन 'ओ३म्' कहा और दो कप चाय के पचास पैसे वहीं रख कर गाड़ी में बैठने के लिये अपने सामान की ओर जाता हुआ अकस्मात गुनगुना उठा, 'जात-पात पूछे न कोय, हरि को भजे सो हरि का होय।'

★

ग्राहक ध्यान दें ! पत्रिका न मिलने की शिकायत के साथ ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें !

●

एजेन्सी— १० या अधिक पत्रिका की एजेन्सी खोल कर राजधर्म का प्रचार करें। एजेन्सी कमीशन १० प्रतिशत।

●

लेखक महोदय ! केवल मौलिक लेख ही भेजें। केवल राजधर्म के लिये ही लिखे लेखों को प्रकाशित किया जायगा। लेख न छपने की अवस्था में लेख वापिस चाहने वाले लेख के साथ २५ पैसे का डाक टिकट अवश्य भेजें।

●

आचार्य जी का अभिनन्दन

संस्कृत भाषा के प्रचार एवं प्रसार के लिये की गई सेवाओं को दृष्टिगत रखते हुए भारत सरकार ने १५ अगस्त को देश के कतिपय विद्वानों का स्वागत किया जिसमें आर्य नेता आचार्य भगवानदेव जी भी थे। आचार्य जी गुरुकुल झज्जर के मुख्याधिष्ठाता होने के साथ कन्या गुरुकुल नरेला और हरयाणा पुरातत्त्व संग्रहालय झज्जर के संस्थापक भी हैं। आचार्य जी का सम्मान आर्य-समाज एवं गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का सम्मान है।

भारत के इतिहास में नेपाल का स्थान

● प्रो० गोकुलचन्द्र शास्त्री

गत दो महायुद्ध में ग्रेट ब्रिटेन ने अमेरिका का सहयोग पाकर अपनी सुरक्षा और अस्तित्व को बनाये रखा। इन दोनों महान् राष्ट्रों में धर्म, संस्कृति, जाति, भाषा, साहित्य के सुदृढ़ बन्धन पाये जाते हैं, जो राजनैतिक बन्धनों से भी बढ़कर हैं। सांस्कृतिक एकता, राजनैतिक एकता से भी बढ़कर महत्व रखती है। कूटनीतिज्ञ विन्सेन्ट चर्चिल ने अपनी महत्वपूर्ण पुस्तक "अंग्रेजी भाषा-भाषी राष्ट्र" (English Speaking Nations) द्वारा इन सम्बन्धों को सुदृढ़ करने का बड़ा प्रयास किया है।

ग्रेट ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री म्याक्मिलन ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि अमेरिका के असहयोग के कारण ब्रिटेन को अपनी साम्राज्य की घाटी (Neck of the British Empire) स्वेज नहर से हाथ धोना पड़ा। गत दो विश्वयुद्धों की तरह यदि अमेरिका ब्रिटेन का साथ देता तो उसको ऐसा दुर्दिन न देखना पड़ता। इस कारण ब्रिटेन के राजनीतिज्ञ अमेरिका से इस सहयोग की प्राप्ति के लिए उसे हर प्रकार का सहयोग दे रहे हैं। इसी दृष्टिकोण से वे इतिहास का भी निर्माण कर रहे हैं।

राष्ट्र के उत्थान और पतन में इतिहास का बड़ा स्थान है। विदेशी शक्तियां इतिहास को विकृत करके राष्ट्र में भेद-भाव कर, राष्ट्रों पर मानसिक विजय प्राप्त करती हैं, जो अन्य विजयों से भयंकर और स्थायी होती है। नेपाल और भारत का इतिहास इसका साक्षी है।

भाषा, धर्म, संस्कृति, जाति, भूगोल की दृष्टि से नेपाल-भारत का सम्बन्ध अमेरिका ब्रिटेन के सम्बन्धों से कई गुना सुदृढ़ और बढ़कर है। इसलिए इन दोनों राष्ट्रों के इतिहासों में एक-दूसरे की बड़ी देन है। अनादिकाल से लेकर वर्तमान काल तक नेपाल और भारत ने कंधे से कंधा मिलाकर विदेशी आक्रमणकारियों का सामना किया और यथासम्भव अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा की।

ऋषि विश्वामित्र (कौशिक) ने राजकुमार राम-लक्ष्मण को अस्त्र-शस्त्र विद्या देकर नेपालस्थित विदेह के राजा की जनकनन्दिनी सीता और उर्मिला से वैवाहिक सम्बन्ध जोड़कर उत्तर-दक्षिण भारत की अखण्डता की राम रावण के युद्ध द्वारा रक्षा की।

वीर अर्जुन ने हिमालय में तपस्या करके पाशुपत अस्त्र प्राप्त किया और कौरवों को पराजित किया। इस महाभारत के युद्ध में नेपाल के वीर किराती (राई लिम्बू) सैनिकों ने भी पांडवों का साथ दिया।

मौर्य साम्राज्य के निर्माता चन्द्रगुप्त मौर्य ने आक्रमणकारी ग्रीक सेनापति सेल्यूकस को पराजित किया, भारत को विदेशी शक्ति से मुक्त किया, और राष्ट्र का एकीकरण किया। संस्कृत के उच्चकोटि के नाटक मुद्राराक्षस में चन्द्रगुप्त की सेना में मगध और नेपाल की खस वीर सेनायें थीं—'खसमगधवीरसैन्यैः।

भारत के गुप्त सम्राटों ने नेपाल के लिच्छवी राजाओं से वैवाहिक सम्बन्ध जोड़ा। वीर समुद्रगुप्त की माता लिच्छवी कन्या थी। इन गुप्त राजा और लिच्छवियों ने मिलकर आक्रमणकारी म्लेच्छों (शक हूणों) को यहाँ से खदेड़ा। दोनों देशों के राजाओं ने विक्रमादित्य की उपाधि धारण की। नेपाल में शकों के सिक्के भी पाये जाते हैं और गुप्तों की स्वर्ण मुद्राओं में एक ओर लिच्छवयः और दूसरी ओर गुप्त राजाओं के नाम अंकित हैं। इससे प्रतीत होता है कि विशाल गुप्त साम्राज्य के निर्माण में नेपाल के लिच्छवियों की भी बड़ी देन रही है। इस बात की पुष्टि तत्कालीन सिक्के, कला, संस्कृत के शिलालेख, विष्णु की मूर्तियां आदि से भी होती है।

मध्यकालीन भारत में मुसलमानों का आधिपत्य हुआ। उस समय नेपाल के मल्ल राजाओं ने हिंदु धर्म, संस्कृति, साहित्य कला की रक्षा की। एक अमेरिकन विद्वान् ने नेपाल के दरबार को देखकर अपने उद्गार इस

तरह प्रकट किये हैं—It is a vast treasure-house of Nawari Arts. There is no rival of it in whole of Asia-———It is a living fragment of India as it must have been in those glowing, glorious far off days before the Moslem came' अर्थात् नेपाल का भाद गांव का दरबार कला का रत्न भण्डार है। एशिया भर में अद्वितीय है। मुसलमानों के आने के पूर्व यह प्राचीन भारत की कला का जीता जागता उज्ज्वल नमूना है। एक विज्ञान नेपाली इतिहासकार के शब्दों में "नेपाल प्राचीन भारत की कला, धर्म, संस्कृति का संग्रहालय है।" मुसलमान आक्रमणकारियों ने विश्वविख्यात नालन्दा और विक्रमशिला के विद्यापीठों को, जहाँ दक्षिणपूर्व एशिया के विद्यार्थी पढ़ते थे, नाश किया। यहाँ के विद्वानों ने भागकर नेपाल और तिब्बत में आश्रय लिया। अभी भी इन देशों में अमूल्य संस्कृत के ग्रन्थ पाये जाते हैं। इन संस्कृत नाटकों में प्राचीन हिन्दी मैथिली, बंगाली नेवारी आदि भाषायें भी प्रयुक्त हैं। इन प्राचीन ग्रंथों और भाषाओं के अध्ययन के लिए मल्लकालीन नेपाल का एक महत्वपूर्ण स्थान है। तुर्कों के आक्रमणों से ग्रीक विद्वानों ने जिस तरह योरुप देशों में शरण ली और विद्या की पुनर्जागृति हुई, यही बात हम मल्लकालीन नेपाल में देखते हैं। वास्तव में मल्लकालीन नेपाल मुसलमानी आक्रमणों की प्रतिक्रिया स्वरूप है।

वर्तमान शाहकालीन नेपाल

विदेशी इतिहासकारों ने १८ वीं शताब्दी को भारत नेपाल का अन्धकारमय युग लिखा है। वास्तव में यह मुगल राज्य के पतन और हिन्दुराष्ट्रों के पुनरुत्थान का काल है। इस समय समस्त भारत बर्मा, नेपाल में हिन्दू जागृति के फलस्वरूप स्वतन्त्र हिन्दू राष्ट्र खड़े हुए। पंजाब में सिख, दक्षिण में मराठे, ब्रह्मा में अहोम क्षत्री राज्य तथा नेपाल में गोरखा हिन्दू राज्य खड़ा हुआ। अंग्रेजों को भी अपनी राज्य की नींव रखने के लिए इन्हीं हिन्दू राज्य से लड़ना पड़ा। मराठों से ४ युद्ध, सिक्खों से २ युद्ध, ब्रह्मा से ४ युद्ध, नेपाल से १ युद्ध (और ३० वर्ष तक मनोमालिन्य) और अफगानों से ३ युद्ध लड़ने पड़े।

अंग्रेजों की बंगाल विजय का नेपाल के इतिहास पर बड़ा प्रभाव पड़ा। रेजिडेन्ट लरेन्स ने भी अपनी जीवनी में लिखा है कि जब क्लाइव प्लासी और बक्सर के युद्ध द्वारा, बंगाल जीत रहा था, तब पृथ्वीनारायण शाह ने नेपाल को जीता; आधुनिक अस्त्रशस्त्रों, हिन्दुराष्ट्रीय भावना द्वारा विशाल नेपाल का निर्माण किया। शिवाजी, महाराणा प्रताप, रणजीत की तरह उनका नेपाल के इतिहास में स्थान है।

अंग्रेज और अमेरिका के बीच और इसका भारत पर प्रभाव

जिस समय अमेरिका अपनी स्वतन्त्रता के लिए अंग्रेजों से लड़ रहा था, उस समय मराठा राजनीतिज्ञ नाना फडनवीस और मैसूर के हैदरअली के नेतृत्व में भारत ने अंग्रेजी शक्ति को समाप्त करने का प्रथम बार समष्टि रूप से प्रयास किया। इसमें उनको बहुत कुछ सफलता भी मिली (देखिये—Our Earlier Attempt at Independence by Bhai Paramanand)। सबसे पहले हिन्दू मराठा राज्य ने साम्राज्यवाद को निर्मूल करने का समष्टिरूप से प्रयास किया।

अंग्रेज-फ्रांस युद्ध का प्रभाव

जब अंग्रेज नेपोलियन के साथ युद्धों में फंसे हुए थे तब हिन्दू-राज्य नेपाल के नेतृत्व में भारत के राज्य ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद का सामना करने का प्रयास किया और हिन्दू-राज्य स्थापना की एक महान योजना बनायी। इसके लिए नेपाल ने महाराजा रणजीत सिंह के पास सरदार पृथ्वीविलास को भेजा। दक्षिण में राजा दौलत राव सिन्धिया मल्लारराव हुलकर तथा नवाब मीर खां के पास नेपाल के दूत पद्मपाणि भेजे गए। तीन हिन्दू शक्तियों का संगठन साम्राज्यवाद के विरुद्ध खड़ा करने की योजना बनाई गई। जैसा कि लिखा है—"खालसा सरकार र मराठा सवार, गोरखा सरकार का पैदल सिपाही तोप बन्दूक घना (अधिक) भया पीछे त्यस संग का लड़ाई मा परमेश्वर ले पनि फतह हिन्दू को नै गराऊन्। 'हिन्दूनामा जति एक सो हिन्दूस्थानमा खडा भै सामिल हुन्या छन्। यो काज श्री पशुपतिनाथ, गुरु गोरखनाथ व गुरु अमर दासले पुन्याउन्या छन्'।

इस महान योजना में लखनऊ के नवाब और रामपुर के नवाब फ़जुल्ला खां को भी साथ मिलाया गया। जिससे रोहिलों की तीस चालीस हजार तलवारी फौज भी शामिल हो सके। इन तीन हिन्दू शक्तियों—मराठा, गोरखा, सिक्खों के मिल जाने पर भरतपुर के जाट राजा रणधीर सिंह भी अपनी सेना के साथ शामिल हुए। देखे सन्धि पत्र संग्रह—योगी नरहरिनाथ।

अंग्रेजों के लिए बड़ा भारी खतरा पैदा हो गया।

'But for General Octor Loney the Gorkha war might have ended in failure and disaster, which would have shaken the British Empire in India to its foundation (History of the British Army).

अन्त में अंग्रेजों के आधुनिक अस्त्र शस्त्र संगठन तथा कूटनीति ने विजय प्राप्त की।

नेपाल को तीनों ओर से घेर लिया गया, जिससे मराठा, आदि फौजों की सहायता न पहुंच सके। पंजाब और नेपाल की सीमा जुड़ी रहने के कारण महाराजा रणजीत सिंह एक बड़ी फौज के साथ नेपाल की सहायता के लिए पहुँच गए। अंग्रेजों की कूटनीति ने विजय पाई। काबुल के अमीर से, जो रणजीत सिंह के पेशावर लेने के कारण शत्रु था, लाहौर पर आक्रमण करवा दिया। महाराजा रणजीत सिंह को अपने राज्य की रक्षा के लिए लौटना पड़ा। अकेले नेपाल ने ब्रिटिश फौज का मुकाबला किया जो इतिहास के पन्नों में स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है। इस युद्ध का प्रभाव भारत के इतिहास पर बहुत पड़ा है। युद्ध की समाप्ति १८१६ ई० की सुगौली सन्धि से हुई, जिससे नेपाल राज्य का बहुत भाग चला गया परन्तु नेपाल ने अंग्रेजों की सहायक प्रथा को नहीं माना। इस सहायक प्रथा के अनुसार राज्य को अपनी परराष्ट्रनीति और रक्षा का भार अंग्रेजों को सौंपना पड़ता था, जिसके कारण देशी राज्यों का अन्त हुआ।

इस सुगौली सन्धि को उलटाने के लिए नेपाल ने अपने योग्य देश भक्त प्रधान मन्त्रियों जनरल भीमसेन थापर, जनरल मातबर सिंह थापा और श्री राजेन्द्र के नेतृत्व में भारत के स्वतन्त्र राज्य—सिख, और अफगानों के साथ गुप्त सहयोग भी किया।

अंग्रेज-रूस युद्ध का प्रभाव

१९ वीं शताब्दी में नेपोलियन के पतन के बाद अंग्रेजी को रूस का मुकाबिला करना पड़ा। रूस की शक्ति रोकने के लिए अंग्रेजों ने उत्तर-पश्चिम की सीमा स्थित पंजाब अफगानिस्तान के स्वतन्त्र राज्यों पर अपना प्रभुत्व जमाना चाहा, जिसके कारण अंग्रेज-सिख और अंग्रेज अफगान युद्ध हुए। इन स्वतन्त्र राष्ट्रों को अपनी स्वतन्त्रा की रक्षा के लिए नेपाल का भी सहयोग प्राप्त था। इस बात की पुष्टि अंग्रेजी इतिहासकार पसिवल लन्डन की पुस्तक 'नेपाल' भाग १ से भी मिलती है।

श्री राजेन्द्र के प्रधान मन्त्री जनरल मालवर सिंह थापा ने बनारस में सिख राज्य के प्रतिनिधियों से अंग्रेजों को निकालने की बातचीत की थी।

General Malhawar Singh lent a ready ear to the suggestions that continually reached him from India demanding that he should take part with still existing independent kingdoms of India against the encroachments of the English. He chose Jung Bahadur to acompany a mission to Banaras, where an emissary from Lahore was to discuss a situation with a view to a joint hostile action. (Nepal H—I Page 114)

पंजाब के महाराजा नौनिहाल सिंह की हत्या भी इसी तरह करवाई।

अंग्रेजों व जनरल मालवर सिंह की हत्या जङ्ग बहादुर राणा द्वारा करवाई और इस हत्या का दोष देशभक्त राजा राजेन्द्र के सिर पर मढ दिया। पोलिटिकल डिपार्टमेण्ट के प्रमुख जार्ज क्लर्क ने नेपाल के राजदूत हैनरी लरेन्स को इस आशय का पत्र भी लिखा था जिसके बाद मालवर सिंह की हत्या और सैंकड़ों देशभक्त साम्राज्यवाद-विरोधी नेपाली वीरों की हत्याएँ जनरल जङ्गबहादुर राणा द्वारा करवा दी गई। इसके साथ ही प्रथम सिक्ख युद्ध द्वारा देशद्रोहियों को हाथ में लेकर नेपाल...की तरह पंजाब की शक्ति को भी क्षीण कर दिया गया। नेपाल की

हत्याएं कोत पर्व के नाम से प्रसिद्ध हैं। इस कोत पर्व की सूचना महीना अगाडि रेजिडेण्ट की स्त्री श्रीमती लरेन्स ने जार्ज क्लर्क को दी थी और लिखा था : 'Now there would be another slaugther in the Darbar. It would be between Jung Bahadur and. Gaggan Singh. (Jan. 1846) हत्याएं सितम्बर में करवाई गई। इन पत्रों से भी स्पष्ट होता है कि नेपाल में देश-भक्तों और साम्राज्यवाद विरोधियों की हत्याओं में विदेशी शक्ति का कितना हाथ रहा है।

इस बीभत्स कोत हत्याकांड का श्री ५ महाराजा राजेन्द्र ने विरोध किया और अंग्रेजों को लिखा कि वे जनरल जंग बहादुर को सेनापति के पद से हटाना चाहते हैं जिससे उसके दूसरे उच्चाधिकारी और युवराजाधिराज की जानें सुरक्षित रहें। अंग्रेजों ने उत्तर दिया—

It is probable that the deprivation of H. H should be viewed in the light of a boon to the Nepal State and result of it is likely to be favourable towards the establishment of confidence and good feeling between the British and the Nepalese Government to a degree that has not hitherto been attained' (See Cons 31st July 1847)

इसके बाद महाराजा राजेन्द्र पदच्युत कर दिए गए और जंगबहादुर राणा को नेपाल का सर्वेसर्वा बना दिया गया। अफगानिस्तान की तरह नेपाल की भी परराष्ट्र नीति अंग्रेजों से संचालित होने लगी।

१८५७ का भारतीय स्वतन्त्रता-संग्राम और नेपाल के सर्वेसर्वा जंगबहादुर राणा

१८५७ में भारत के नेताओं ने नेपाल की भी सहायता माँगी। अवध के नवाब और गोण्डा के राजा के पत्र भी सहायता के लिए जंगबहादुर को मिले। नेपाल की जनता और सरकार, भारत के विरुद्ध अंग्रेजों को सहायता करने को तैयार न थी। एक कालीप्रसाद प्रमड पल्टन ने जंगबहादुर के ऊपर प्रहार भी किया और उसे अंग्रेजी सहायता करने के समय मारने का प्रयास किया गया परन्तु अंग्रेजों की कूटनीति की फिर सफलता रही। लखनऊ में विद्रोह दबाने के बाद जंगबहादुर ने वाइसराय केनिंग को नेपाल की राजगद्दी दिलाने की याददाश्त करवाई। लार्ड केनिंग ने भी जंगबहादुर को आश्वासन देते हुए सुअवसर की प्रतीक्षा करने को कहा। उन्होंने बोर्ड आफ डाइरेक्टर को इस आशय का पत्र भी लिखा—

J. N. Bahabur is eyeing the throne of Nepal—he can sieze it when a favourable opportunity arises. (See Cons. 1859)

अंग्रेजों ने इस १८५७ के स्वतन्त्रता संग्राम से बहुत शिक्षा ली। नेपाल को भारत से सब प्रकार से अलग किया गया। एक अंग्रेज राजदूत ने लिखा है कि नेपाल का भारत के राजा-रजोरों से वैवाहिक सम्बन्ध हमारी इच्छाओं के विरुद्ध है।

काका कालेलकार ने अपनी नेपाल यात्रा का वर्णन करते हुए लिखा है—१८५७ की भारतीय स्वतन्त्रता के संग्राम के अन्त में पराजित कई भारतीय नेता अंग्रेजों के क्रूर पंजे से बचने के लिए नेपाल आकर बसे थे। इस कारण नेपाल की पवित्र मिट्टी के प्रति हमारा आकर्षण कृतज्ञता ज्ञापना करना भी था। अंग्रेजों से भारत को स्वतन्त्र कराने के लिए नेपाल से कुछ सहायता मिल सकती है कि नहीं इस बात को जानने के लिए स्वर्गीय लोकमान्य तिलक के दाहिना हाथ कृष्णा जी भरकर खाडिलकर किसी समय नेपाल में आकर बसे थे। उन्होंने नेपाल में अस्त्र शस्त्र बनाने का कारखाना खोलने का प्रयास भी किया परन्तु वे अंग्रेजों की आँखों से न बच सके और नेपाल से निकाल दिए गए।

भौगोलिक और सांस्कृतिक दृष्टि से नेपाल के लिए भारत सबसे अधिक निकटवर्ती देश है। नेपाल के प्रति भारत की आत्मीयता भी कम नहीं है। नेपाल का किसी दूसरे समर्थ राष्ट्र के प्रभाव में रहना भारत के लिए अनिष्टकारक होगा।

मंजूषा

●ज्ञानेश्वर शास्त्री

कांग्रेस टूट रही है। महात्मा गांधी की भी यही इच्छा थी कि आजादी के बाद कांग्रेस टूट जाये। लगता है, महात्मा गान्धी की अन्तरिच्छा पूरी हो रही है।

—मधु लिमये

जो इन्दिरा गान्धी के विरुद्ध षड्यन्त्रशील है, उसे आपलोग "सिण्डीकेट" के नाम से जानते हैं—लेकिन जो इन्दिरा गान्धी को बनाये रखने वाला गुट है, उसे मैं कहूँगा—"इन्दिरिकेट"।

—आचार्य कृपलानी

कांग्रेस की इज्जत लूटी जा रही है।

—निजलिंगप्पा

तिनका-तिनका जोड़कर हमने घोंसला तैयार किया था इसलिए नहीं कि जब यह बनकर तैयार हो जाये तो इसमें हम आग लगा दें।

—महावीर त्यागी

आप लोग मुझे कम्युनिस्ट कहना छोड़ दें।

—इन्दिरा गान्धी

क्या कहा आपने ? मैं ७५ साल का बूढ़ा हूँ। आइए, आपको एक घूंसा मारता हूँ—बरदाश्त कीजिए !

—वी० वी० गिरि

जो हाल सुकर्णो और एनक्रूमा का हुआ, वही हाल आपका भी होगा।

—मीनू मसानी (इन्दिरा गान्धी के प्रति)

अखबार वाले क्या-क्या बकते हैं, मैं चिन्ता नहीं करती। मैं वही काम करती हूँ जिसमें जनता का हित निहित होता है।

—इन्दिरा गान्धी

कांग्रेस एक फूल है। दलगत भेदभाव उसकी पंखुड़ियां हैं।

—अमृतबाजार पत्रिका

अब डरने की बात नहीं। बहुत जल्द ही इन्दिरा गान्धी को दरवाजा दिखा दिया जायेगा।

—डी० एफ० करकरा (करेंट)

इन्दिरा गान्धी जनता के हितों की हत्या करती है—कसाई की तरह नहीं—नरमेघ कराने वाले पुरोहित की तरह।

—आर० के० सुन्दरराजन (न्यूस्टेट्समैन)

कोलम्बस ने अमेरिका का पता लगाया था और अमेरिका ने दिनेशसिंह को खोज निकाला।

—वी० बी० (ईस्टर्न इकोनोमिस्ट)

गालिब बहुत मामूली से कवि थे। राजनीतिक कारणों से उनके नाम को उभाड़ा जा रहा है।

—ऑरगेनाइजर

एक बार मुझे संसद् में पहुँच जाने दो फिर देखो कि मैं क्या चमत्कार कर दिखाता हूँ।

—पाटिल

श्रीमती गान्धी अपनी सत्ता बचाने के लिए कांग्रेस से बाहर कदम रखने पर आमादा हैं।

—सुचेता कृपलानी

परमात्मा अवश्य न्याय करेगा।

—संजीव रेड्डी

देश में आज दो वर्ग सक्रिय है। एक का लक्ष्य है साम्यवाद—और दूसरे का सैनिक प्रशासन !

—दुर्गादास

धर्म के बिना अच्छे समाज की रचना नहीं हो सकती।

—मोरारजी देसाई

स्वाधीनता दिवस की एक अविस्मरणीय घटना—

स्वाधीनता के लिये तरसने वाली आँखें भारत माता के टुकड़े नहीं देख सकतीं

● शिवकुमार गोयल

१५ अगस्त १९४७ का दिन, ऐतिहासिक पर्व जिस दिन देश की स्वाधीनता के उल्लास में जगह-जगह जशन मनाने की तैयारियाँ हो रही थीं।

डलहौजी के एक कमरे में भारत की स्वाधीनता के लिये विदेशों में दर-दर की ठोंकरें खाकर पूरे ३७ वर्षों बाद स्वदेश लौटने वाले महान् क्रान्तिवीर सरदार अजीत सिंह लेटे हुये थे। वे कुछ ही दिन पूर्व लन्दन से भारत लौटे थे, स्वाधीनता दिवस को अपनी आँखों से देखने की साध पूरी करने के लिये।

एक दिन पूर्व १४ अगस्त को जैसे ही उन्होंने रेडियो से पाकिस्तान बनने और देश के विभाजन होने का समाचार सुना कि उनका हृदय कराह उठा। देश को सशस्त्र क्रान्ति द्वारा अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त कराने के लिये पूरे ४० वर्षों तक सर्वस्व समर्पित करके जूझने वाला सेनानी, भारत माता सोसायटी का संस्थापक भला अपनी आँखों से अपनी आराध्या माँ भारती के खण्ड-खण्ड कैसे देखे ?

"न जवाहरलाल देख रहा है, न जिन्ना, दोनों तरफ खून की नदियाँ बह जायेंगी। मैं भला भारत माँ के टुकड़े अपनी आँखों से कैसे देख सकता हूं। मैं तो चला जाऊँगा।"

क्रान्तिवीर अजीत सिंह बड़बड़ाये। डाक्टर बुलाये गये, उन्होंने घोषणा की 'सरदार साहब पूर्ण स्वस्थ हैं, जीवन को कोई खतरा नहीं है। केवल वहम के शिकार हैं।"

१५ अगस्त की वेला आई। रात के १२ बजे के बाद रेडियो से उन्होंने देश की स्वाधीनता की घोषणा सुनी और उन्होंने अपनी धर्मपत्नी हरनाम कौर व अन्य परिवार के जनों को जगाकर कहा—"मेरे जीवन का ध्येय पूर्ण हो गया है, मैंने अपनी आँखों से देश से अंग्रेजों को भागते हुये देख लिया है किन्तु देश का विभाजन ये आँखें नहीं देख सकतीं। अतः आज मैं जा रहा हूं।" उन्होंने यह भी कहा कि मेरा अन्तिम सन्देश लिखकर विश्व भर के मेरे मित्रों तक पहुंचा दो।

इसी बीच उन्होंने भाव-विह्वल होकर अपनी धर्म-पत्नी सरदारनी हरनाम कौर से कहा—"सरदारनी ! मैंने तुमसे शादी की थी तथा तुम्हें सुख देना मेरा कर्तव्य था, किन्तु मैं भारत को स्वाधीन कराने में लगा रहा और इस ओर ध्यान न दे सका। इस अपराध को क्षमा देना।" इन शब्दों का मुख से निकलना था, कि क्रान्तिवीर अजीत सिंह ने "जयहिन्द" घोष के साथ जीवन त्याग दिया। स्वाधीनता की साध को पूरा हुआ देखने के बाद उन्होंने भारत विभाजन के पाप को देखना स्वीकार नहीं किया। १५ अगस्त १९४७ का दिन जहाँ स्वाधीनता दिवस के रूप में पुनीत दिवस है वहाँ अखण्ड भारत के प्रबल समर्थक क्रांतिवीर सरदार अजीतसिंह की पुण्यतिथि के रूप में इतिहास में सदा अविस्मरणीय रहेगा।

भारत माता सोसायटी

क्रान्तिवीर सरदार अजीत सिंह शहीदे आजम सरदार भगतसिंह के चाचा थे। छात्र जीवन में ही उन्होंने देश को सशस्त्र क्रांति के बल पर स्वाधीन कराने की प्रतिज्ञा की थी। सिख होते हुये भी वे आर्यसमाज से प्रभावित हुये और श्री लोकमान्य तिलक के कांग्रेस के गरम दल के समर्थक बनने के पश्चात् उन्होंने पंजाब की जनता को गोरों के विदेशी शासन के विरुद्ध खड़ा करने में सफलता प्राप्त की। उन्होंने सूफी अम्बाप्रसाद के सहयोग से 'भारत माता

सोसायटी' की स्थापना की। भारत माता बुक सोसायटी के तत्वावधान में क्रान्ति की ज्वाला को प्रज्वलित करने वाले साहित्य व पत्रों का प्रकाशन किया और कुछ ही समय में लाला लाजपराय, सरदार अजीत सिंह, सूफी अम्बाप्रसाद लालचन्द फलक आदि क्रांतिकारी अंग्रेजों की आँखों में काँटा बनकर चुभने लगे। पंजाब के गवर्नर डेन्जिल इबर्टसन ने लिखा—"जब तक लाला लाजपतराय व सरदार अजीत सिंह को गिरफ्तार नहीं किया जाता तब तक पंजाब के आन्दोलन को नहीं दबाया जा सकता।"

सरकार ने लाला लाजपतराय को गिरफ्तार कर लिया तथा सरदार अजीत सिंह के वारन्ट जारी कर दिये। २ जून १९०७ को उन्होंने आत्मसमर्पण कर दिया। उन्हें बजबज से मांडले जेल भेज दिया गया।

जब तिलकजी ने ताज भेंट किया

जेल से मुक्त होने पर जब स० अजीत सिंह १९०७ में सूरत कांग्रेस में भाग लेने पहुँचे तो उग्रवादी नेता श्री लोकमान्य तिलक ने उन्हें एक ताज भेंट किया। लोकमान्य उनकी तेजस्वी वाणी व देश पर मर मिटने की भावना से बहुत प्रभावित थे।

अंग्रेज अधिकारी पुनः उनके पीछे हाथ धोकर पड़ गये। लाला हरदयाल, सूफी अम्बाप्रसाद, व सरदार अजीतसिंह ने अन्त में विदेशों में जाकर अंग्रेजों के विरूद्ध सशस्त्र क्रान्ति की योजना बनाने का निश्चय किया।

सन् १९०९ में लाला हरदयाल अमेरीका को एवं सूफी अम्बाप्रसाद, अजीत सिंह ईरान चले गये। वहाँ से सरदार जी फ्रांस चले गये जहाँ उन्हें मैडम कामा व श्याम जी कृष्ण वर्मा का सहयोग मिला।

सरदार जी ने भारत माता को स्वाधीन कराने के लिये विदेशों में दर-दर की ठोकरें खाई। राजा महेन्द्र प्रताप की तरह उन्होंने कभी सड़क पर भूखे पेट पड़कर रात काटी तो कभी कैसर व अन्य राजाओं व नेताओं से मिलकर अंग्रेजों पर आक्रमण की योजना बनाई। वीर सावरकर व राजा महेन्द्रप्रताप की तरह से वे भी अपनी नवविवाहिता पत्नी को छोड़कर, सुख सम्पत्ति को लात मार कर दर-दर की ठोकरें खाते थे। अन्त में इटली को कार्य क्षेत्र बनाकर आजाद हिन्द सरकार की घोषणा की।

सरदार अजीत सिंह, राजा महेन्द्रप्रताप, लाला हरदयाल, रासबिहारी बोस, श्यामजी कृष्ण वर्मा आदि क्रान्तिवीर देशभक्त भारत को किसी भी साधन से स्वाधीन देखने के इच्छुक थे, उन्होंने कभी यह कल्पना भी नहीं की थी कि एक दिन माता स्वाधीन तो होगी, किन्तु उसके खण्ड-खण्ड अंग-भंग कर दिये जायेंगे। सरदार अजीत सिंह ने जब भारत आने से पूर्व लन्दन में भारत विभाजन की योजना सुनी तो उन्होंने लन्दन में भारतीयों के सम्मुख भाषण करते हुये स्पष्ट कहा—"स्वाधीनता के लिये समझौता घातक सिद्ध होगा। समझौते का अर्थ ही कुछ न कुछ गंवाना है।" उन्होंने कहा कि "यदि भारत का विभाजन स्वीकार कर लिया गया तो खून की नदियाँ बह जायेंगी। इस घातक योजना को रोका जाना चाहिये।"

भारत का विभाजन हुआ, किन्तु अखण्ड भारत के प्रबल समर्थक महान् देशभक्त क्रांतिवीर सरदार अजीत सिंह उसके आघात को सहन नहीं कर सके। उनकी आशंका व भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई। एक ओर १५ अगस्त को जहाँ स्वाधीनता की घोषणा की गई, दूसरी ओर 'पाकिस्तान' के निर्माण की घोषणा के साथ ही लाहौर, मुलतान, कराची, रावलपिण्डी, नोआखाली आग की लपटों में जलने लगे। लाखों व्यक्तियों को मार डाला गया, दर-दर का भिखारी बना दिया गया। स्वातन्त्र्य वीर सावरकर ने १५ अगस्त को स्वाधीनता दिवस पर कहा था—"स्वाधीनता आन्दोलन के हुतात्माओं में उनका भी नाम है, जिन्होंने भारत विभाजन के परिणामस्वरूप सर्वस्व समर्पित कर दिया। उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।"

समाचार दर्शन

● ज्ञानेश्वर शास्त्री

जीवन का मोह

"मरिते चाहि न आमि सुन्दर भुवने"—कविवर रवीन्द्र की महत्त्वाकांक्षा कि इस सुन्दर संसार से विदा होना मुझे अभीष्ट नहीं—श्रीमती इन्दिरा गांधी के जी को भी सालने लगी जब कि उन्हें जगह-जगह से धमकी भरे पत्र आने लगे। बैंक राष्ट्रीयकरण के उपलक्ष्य में बधाई देने के लिए आए हुए अध्यापकों को सम्बोधित करती हुई श्रीमती प्रधान मंत्री बोली कि जनताकी सेवा करते-करते अब मेरे महाप्रयाण का समय भी समीप नजर आता है। मेरे प्रगतिशील कदम से जिनके स्वार्थों को ठेस पहुंची है वे मुझे प्रधानमन्त्री पद के मात्र हटाकर ही खुश नहीं—वे मेरी जीवन लीला का ही पटाक्षेप चाहते हैं। उन्होंने मुझे धमकी भरे पत्र भेजे हैं और आगामी दुरूह परिस्थितियों से जूझने के लिए मुझे आमंत्रित किया है।

नारी कंठ से प्रसूत दयार्द्र वाणी से आगन्तुओं का चित्त विचलित अवश्य हो उठा। उन्होंने समवेत स्वर में इन्दिरा गान्धी जिन्दाबाद के नारे लगाए जैसे कि बतलाया —उनका जीवन जनसमूह के लिए सापेक्ष है।

"इस तरह की धमकियों से मैं नहीं डरती"—यह तो उन्होंने परम्परानुकूल कहा—क्योंकि वह निर्भीक बाप की निर्भीक बेटी हैं। "मैं प्रधान मन्त्री रहूं या न रहूँ—जनता की सेवा से कोई मुझे वंचित नहीं कर सकता"—इस प्रकार जन सेवा पर अपना जन्मसिद्ध अधिकार जतलाते हुए उन्होंने कहा कि—"मैं गरीबों के साथ हूँ—मैं जो कुछ भी कर रही हूं विशाल जनवर्ग के हित में कर रही हूँ'—इत्यादि।

अगले दिन स्वराष्ट्र मंत्री चौहान ने उनकी सुरक्षा के व्यापक प्रबन्ध किए जाने की घोषणा की।

अपने प्रधान मन्त्री को गोली मारना यह तो पाकिस्तान की आदत है—आर्यावर्त की नहीं। भारतीय—वह चाहे जितना हीन कापुरुष क्यों न हो—नारी के रक्त से अपने करों को कलुषित नहीं करना चाहेगा। प्रश्न है—प्रधान मन्त्री इतनी भीता क्यों प्रतीत हुईं? सत्ता का मोह—जीवन का मोह—दोनों में तादात्म्य सम्बन्ध है।

पार्टी की अन्तरंग सभा में वह लगभग रो पड़ीं—"आप लोग मुझे प्रधान मन्त्री पद से हटाने पर आमादा हैं।" सत्ता-पिपासा ने उन्हें अनुशासन से, कर्तव्य से बार-बार स्खलित किया। जगजीवनराम का समर्थन करने के बाद फिर संजीव रेड्डी का समर्थन किया। निजलिंगप्पा और कामराज—जो कभी इनके भाग्यविधाता रहे हैं—की बात को अनसुनी कर गईं। पार्टी के फरमान की अवमानना कर अन्तरात्मा का आदेश मानने वाला बेतुका सिद्धान्त प्रतिपादित किया। धमकी भरे पत्रों को पढ़कर जो कलेजे में धुकधुकी बन्धी वह भी सहती और अपने सहयोगियों के "कानाफूसीवाद" की भर्त्सना भी करती हुई इन्दिरा गांधी कृतसंकल्प है कि वह सत्ता की अधीश्वरी बनीं रहें।

●

१५ अगस्त का पाखंड

"जनतन्त्र की रक्षा की जानी चाहिए-दलगत स्वार्थों से ऊपर उठना आवश्यक है—अनुशासन हर स्थिति में अनिवार्य है।" इस तरह के रटे-रटाये वाक्य जैसे प्रत्येक राजनीतिक समारोह में बोले जाते हैं वैसे ही कुछ सुललित वाक्य कार्यवाहक राष्ट्रपति श्री हिदायतुल्ला ने स्वतन्त्रता दिवस की पूर्व-सन्ध्या को आकाशवाणी से प्रसारित किया। सुनने वालों ने अपनी आदत के अनुसार इन्हें एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल दिया।

१५ अगस्त के प्रातःकाल श्रीमती इन्दिरा गांधी,

जिनकी नैया भँवर में फँसी है—लाल किले के प्राचीर से बोलीं कि मैं प्रधान मन्त्री पद पर रहूँ या न रहूँ, जनता की सेविका अवश्य रहूँगी। इन्दिरा ने बैंकों के इन्दिराकरण को सामयिक कदम बताया, गरीबों के हित में धनाढ्यों को कुछ न्यौछावर करने को प्रेरित किया और देश की प्रगति को मनोयोगपूर्वक देखने का आह्वान किया। इन मामूली दो-चार बातों को बोल कर जबकि प्रधान मन्त्री ने अपना भाषण समाप्त किया तो श्रोताओं को इससे निराशा हुई क्योंकि वे लोग कुछ महत्त्वपूर्ण घोषणा सुनने एकत्र हुए थे। यह अफवाह थी कि प्रधान मन्त्री शायद राष्ट्रपति-निर्वाचन विषय पर कुछ बोलें। कोई ठोस आर्थिक कार्यक्रम की घोषणा करें जैसे विदेशी व्यापार का राष्ट्रीयकरण इत्यादि। लेकिन प्रधान मन्त्री बड़ी उद्विग्न, अन्यमनस्क और कुछ विशेष बात कहने की मूड में नहीं थी। उन्होंने छोटी-मोटी दो-चार बातें कहकर स्वतन्त्रता दिवस की रस्म अदा की।

जैसे सनातनी लोग हर साल अपने मृत माँ-बाप का तर्पण करते हैं वैसे ही कांग्रेसियों को १५ अगस्त के दिन यह श्राद्ध-तर्पण करना पड़ता है—कुछ रटे-रटाये शब्द बोलने पड़ते हैं। मैसूर के राज्यपाल श्री गौरीशंकर पाठक ने कहा कि हमने बहुत कुछ प्रगति की है—अभी बहुत कुछ और की आशा है। तमिलनाडु और राजस्थान के राज्यपाल श्री उज्ज्वलसिंह तथा हुकुमसिंह ने ध्वजारोहण किया और कुछ रटे-रटाये शब्द बोले। महाराष्ट्र के मुख्य-मन्त्री ने इस अवसर पर कहा कि राष्ट्रीय एकता को कायम रखने के लिए हमें अपने कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक होना चाहिये। पश्चिम बंगाल के कार्यवाहक राज्यपाल श्री डी० एन० सिन्हा और मुख्यमन्त्री अजय मुखर्जी ने जबकि परिश्रम और त्याग भावना को श्रेष्ठ बतलाया—बिहार के राज्यपाल श्री कानूनगो ने गरीबी, बीमारी और भ्रष्टाचार के उन्मूलन में सरकार के प्रयत्नों की सराहना की। उड़ीसा के मुख्यमन्त्री ने परेड की सलामी ली और पुलिस कर्मचारियों को पदक प्रदान किये। आन्ध्रप्रदेश के मुख्य-मन्त्री श्री ब्रह्मानन्द रेड्डी ने पारस्परिक विद्वेष को मिटाकर देश के पुनर्निर्माण में योग देने की बात कही। जम्मू-कश्मीर के मुख्यमन्त्री श्री सादिक और उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री गोपाल रेड्डी ने कुछ इसी तरह के रटे-रटाये वाक्य कहे कि देश की प्रगति में योग देना चाहिये—भ्रष्टाचार मिटाना चाहिए—इत्यादि।

……और तीन लोक से न्यारी हमारी प्यारी दिल्ली नगरी में भी सैंकड़ों सभायें संयोजित हुई जिसमें खद्दर-धारियों ने खड़े होकर कहीं बापू को याद किया……कहीं नेहरू को……कहीं इन्दिरा को……फिर तितर-बितर हो गए। सनातनियों ने वर्ष में २००० त्यौहार निश्चित किए हैं। जब से देश को आजादी मिली कांग्रेसियों ने सनातनिक-इनसाइक्लोपीडिया में १ और त्यौहार बढ़ा दिया—अर्थात् १५ अगस्त का त्यौहार! हम तो इन सब को पाखण्ड मानते आये हैं।

●

दक्षिणपूर्वेशिया :

निक्सन की निगाह में

राष्ट्रपति निक्सन को सिंहासन पर बैठे अभी जुम्मा-जुम्मा आठ दिन मुश्किल से हुए हैं कि उन्होंने कई चमत्कारिक कार्य कर दिखाए—जैसे वियतनाम से अमरीकी सैनिकों की वापसी चन्द्रमा पर मानव का अवतरण इत्यादि!

वैसे श्री निक्सन बड़े घुमक्कड़ मिजाज के व्यक्ति हैं—अपने सिनेटर काल में—फिर उपराष्ट्रपति काल में दुनियां का चप्पा-चप्पा छान चुके हैं। किन्तु राष्ट्रपति की हैसियत से जो अभी उन्होंने दक्षिणपूर्वेशिया की यात्रा की—उस का विशेष राजनीतिक महत्त्व है।

फिलिपिन, इन्डोनेशिया और थाइलैंड के राष्ट्राध्यक्षों को अमरीकी सहायता के प्रति आश्वस्त करते हुए श्री निक्सन ने यह भी सलाह दी कि एशियाई समस्याओं का हल एशियाई विधि से ही होना चाहिए। वैसे कम्युनिस्ट आक्रमण का अवरोध करने के लिए जहाँ-जहाँ अमरीकी अड्डे हैं, वे वहाँ बने रहेंगे। दक्षिण पूर्वेशियाई देशों की प्रभुसत्ता की रक्षा करना अमरीका का उत्तरदायित्व है। अमरीकी इसके लिए वचनबद्ध है।

भारत की भूमि पर दूसरी बार पदार्पण करते हुए श्री निक्सन का भाव-विभोर होना उचित ही था। इन्दिरा

गांधी से बात-चीत के दौरान उन्होंने बार-बार यह स्पष्ट किया कि वे भारत-पाक-वैमनस्य में मध्यस्थता का रोल अदा नहीं करेंगे। दोनों देशों को अपनी बुनियादी समस्याएँ स्वयं बैठकर सुलझानी चाहिए।

यहाँ से जाकर पाक-राष्ट्रपति से बात-चीत के दौरान भी उन्होंने भारत-पाक संघर्ष को भड़काने वाली कोई गलती नहीं थी। भारत या पाक दोनों में से किसी भी देश को शस्त्रास्त्र देने के सम्बन्ध में अपना स्पष्ट मन्तव्य प्रकट नहीं किया।

श्री निक्सन की सबसे नाजुक यात्रा रही—कम्युनिस्ट देश रोमानिया थी। बुखारेस्ट में निक्सन का पदार्पण करना क्या था—कम्युनिस्टों के पेट में मरोड़ पैदा हो गया। पेकिंग और मास्को ने बड़े भयावह समाचार प्रसारित किये। लेकिन बुखारेस्ट की जनता ने निक्सन की जो शानदार अगवानी की वह कम्युनिस्ट-विश्व में एक इतिहास बन गया।

रोमानिया यूरोपीय देश है। समस्त यूरोप में अमरीका का दबदबा है। श्री निक्सन रोमानिया को अछूता नहीं छोड़ना चाहते। यह भी अटकलें लगाई जा रही हैं कि अमरीका ने चीन से अपने सम्बन्ध सुधारने के कारण से रोमानिया को गले लगाया है।

श्री निक्सन ब्रिटेन होते हुए घर वापस जा पहुँचे।

पादरी लीला

हमारे गुप्तचर विभाग ने सरकार को रिपोर्ट दिया है, कि अमरीकी जासूसों का बहुत बड़ा गिरोह ईसाई पादरियों का बाना पहनकर सीमावर्ती पहाड़ी इलाकों में सरगर्मी से घूम रहा है।

अमरीकियों द्वारा संचालित सात ईसाई संस्थायें इन इलाकों में सक्रिय हैं। कहते हैं, यहां के पादरियों के सम्पर्क से अमरीकी जासूस विभाग काफी महत्त्वपूर्ण सामग्री प्राप्त करता है।

इवेंजेलिकल एलायन्स मिशन (शिकागो) की अल्मोड़ा शाखा अध्यक्ष हैं श्री एजरा बेडफोर्ड स्टीनर। इन महाशय ने भारत-तिब्बत-नेपाल के नुक्कड़ पर स्थित धारचूला नामक स्थान को अपनी गतिविधियों का मुख्यालय बनाया हुआ है।

आस-पड़ोस में इस ईसाई संस्था की कुल दस शाखायें हैं। ऊपर से तो ये लोग बाइबिल सुनाते हैं, दूध का चूर्ण व दवाइयां बांटते हैं, लेकिन अन्दर ही अन्दर ये आदिवासी भोटियाओं से सांठगांठ करके कुछ तथ्य इकट्ठा करते हैं।

न्यूयार्क-से संचालित मैथोडिस्ट चर्च की शाखायें समग्र दक्षिण-पूर्वी एशिया में व्याप्त हैं। इस संस्था की भी सात शाखायें हमारे पहाड़ी प्रदेशों में हैं। ऊपर से ये लोग बाइबिल सुनाते हैं, स्कूल व हस्पताल चलाते हैं लेकिन अन्दर ही अन्दर अमरीकी जासूस विभाग के संकेतानुसार काम करते रहते हैं।

कहते हैं, चौपटा मिशन का संस्थापक कोई ब्रिटिश था किन्तु अब यह एक अमरीकी ईसाई पादरी के हाथों में आ गया है। वैसे तो यह विद्या स्थान मालूम होता है लेकिन है जासूसी का गढ़। कर्बला और चंडक स्थित कोढ़ियों की सेवा संस्था भी ब्रिटिश-संचालित रहा है। इसका मुख्यालय अल्मोड़ा में है। कहते हैं, यह ब्रिटिश-अमरीकी गुप्तचरों के लुकने-छिपने के लिए सर्वोत्तम स्थान है।

ब्रिटिश-संचालित विश्व-व्यापी इवेंजेलिकल आन्दोलन वालों ने भारत में सन् १९४७ के बाद कई शाखायें शुरू कीं—जैसे पिथौरागढ़, जौहरपट्टी, मैठाना, नन्दप्रयाग इत्यादि में। इस संस्था में काम करने वाले ज्यादातर पादरी ब्रिटिश, कनाडा व आस्ट्रेलियावासी हैं। इसी संस्था के दो व्यक्तियों—एण्डरसन् और लेहमान—को अनधिकृत रूप से सीमा रेखा पार करने के अपराध में गिरफ्तार किया गया था। तीसरे व्यक्ति मार्लिन समर्स जो अपने आप को अमरीकन बता कर भारत में रह रहा था, लेकिन अमरीकन था नहीं, को सरकार ने देश से बाहर निकाल दिया। कहते हैं, यह सीमावर्ती इलाकों में कुछ गड़बड़ कर रहा था।

इसी संस्था की एक शाखा का नाम है—हिमालयन मिशन। इसमें काम करने वाले कुछेक भारतीय पादरी डाक्टरी वेशभूषा बनाकर नेपाल व तिब्बत सीमा पर सक्रिय देखे गए हैं। पौड़ी के समीप चौपड़ा और गडौली में मैथोडिस्ट वालों की शाखायें हैं। कहते हैं, इन लोगों ने बड़ी संख्या में हरिजनों को ईसाई बना लिया है।

फिनलैंड से संचालित फ्री फौरन मिशन नामक संस्था की शाखायें चम्बा और टिहरी गढ़वाल में हैं। इस संस्था में काम करने वाली दो महिलायें अमरीकी जासूसी विभाग की नियमित कार्यकर्त्रियां हैं।

हमारे गुप्तचर विभाग ने अमरीकी जासूसों का पर्दाफाश करते हुए बताया है कि ये लोग न केवल सीमावर्ती क्षेत्रों से चीनियों की सामरिक गतिविधियों का निरीक्षण करते हैं अपितु वहाँ के आदिवासियों में भारत विरोधी भावना को भी पनपाते हैं। कालान्तर में ये लोग हमारे प्रति द्वेष-भाव से सम्पन्न हो सकते हैं।

कुछ तड़प कुछ झड़प

● प्रो० राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

डा० सत्यप्रकाश जी की विदेश प्रचार यात्रा:— गत दिनों मैंने वेदज्ञ आचार्य कृष्ण जी से प्रश्न किया कि आर्यसमाज में दल-बन्दी समाप्त नहीं हो रही। ऋषि के मिशन का भविष्य क्या होगा? आचार्यजी ने पूरे आत्मविश्वास से, आशावादी स्वरों में कहा कि महर्षि के मिशन का भविष्य बहुत अच्छा है। लड़ाई-झगड़े तो प्रजातन्त्र में थोड़े-बहुत रहेंगे पर वेद-ज्ञान के सूर्य का प्रकाश अपना प्रभाव दिखाता रहेगा।

तभी कुछ दिन बाद यह सूचना मिली कि पूज्यपाद पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय के ज्येष्ठ पुत्र श्री डा० सत्यप्रकाश जी ने अपना शेष जीवन अपने महान् पिता के कार्य की पूर्ति के लिए वेद धर्म के प्रचार के लिए भेंट कर दिया है। समाचार मिला है कि आप यात्रा पर चले गये हैं। समस्त आर्य जगत डा० साहब के पवित्र सङ्कल्प पर उनका अभिनन्दन करता है। उनके सेवा भाव से आर्य युवकों में उत्साह व स्फूर्ति का संचार होगा। डा० साहब पहिले विद्वान् हैं जिन्होंने महर्षि दयानन्द को दार्शनिक के रूप में संसार के सामने रखा था।

आप एक ऊँचे वैज्ञानिक, आदर्श शिक्षक, महान् दार्शनिक, सुयोग्य वक्ता व लेखक हैं। आपने हिन्दी अंग्रेजी में वैदिक धर्म व विज्ञान पर कई ग्रंथ लिखे हैं। फूट और कलह के इस युग में जब मूढमति भी पदों के लिए मर रहे हैं, डा० जी अपने पिताजी के चरणों पर धर्म सेवा से जुट गये हैं। हम उनके मिशन की सफलता की कामना करते हैं। ऊँची योग्यता के व्यक्ति धर्म प्रचार में उत्साह दिखाएंगे तो छोटे अवश्य उनका अनुकरण करेंगे।

ये साहित्य? :—आर्यसमाज के प्रवर्त्तक ने प्रचार व संगठन कार्यों में अत्यन्त सूझबूझ का परिचय दिया। ऋषि ने वाणी व लेखनी दोनों को धर्म प्रचार का साधन बनाया। आर्यसमाज ने जन्मकाल से ही लेखनी के महत्त्व को समझा। आर्यसमाज ने बड़े-बड़े सुयोग्य लेखकों को जन्म दिया। आर्यसमाज वक्ता व लेखक सदैव प्रमाण व युक्ति से बात करते रहे हैं।

परन्तु, कुछ समय से आर्यसमाज में लेखक व प्रकाशक ठीक ढंग से अपना कर्त्तव्य नहीं निभा रहे। इसका परिणाम अच्छा न होगा। एक व्यक्ति ने तीन वर्ष पूर्व अंग्रेजी में एक पुस्तक लिखी। छापने वालों ने छाप दी। उस पुस्तक में यत्र तत्र डा० सत्यप्रकाश जी की पुस्तक A critical study of philosophy Dayanand के पैरे के पैरे दे दिये। लेखक महोदय बड़े व्यक्ति हैं अतः नाम क्या लिखूं?

उनमें एक पुस्तिका Swami Dayanand मेरे सामने है। यह पुस्तिका दीवान चन्द ट्रस्ट, पूसा रोड देहली ने छापी है। इसके पृष्ठ ४५ पर लिखा है कि २५-१२-१९२९ को स्वामी श्रद्धानन्द जी चांदनी चौक देहली में एक जलूस का नेतृत्व करते हुए एक जनूनी मुसलमान की गोलियों से शहीद हुए।

यह पुस्तिका पढ़े-लिखे लोगों तक पहुँची होगी। प्रकाशक महोदय इसके लिए दोषी हैं या लेखक, इस विवाद में मैं नहीं पड़ता। प्रकाशक व लेखक दोनों की धर्म भावना का मैं आदर करता हूँ परन्तु यह छोटी-छोटी भूलें उस संस्था को शोभा नहीं देतीं जिसने सारे भारत में शिक्षण संस्थाओं का जाल बिछाया हुआ है।

प्रत्येक आर्य जनता है कि स्वामी श्रद्धानन्द जी ने २३-१२-२६ को श्रद्धानन्द बलिदान भवन, श्रद्धानन्द बाजार में वीर गति पाई। चांदनी चौक की तो घटना ही और है।

एक सुन्दर सुझाव—विचारों की टक्कर हो रही है। भोगवाद विजय पाएगा या आत्मवाद। हम यह मानते हैं कि भोगवाद की पराजय निश्चित है। भोगवाद विश्व को शान्ति नहीं दे सकता। आत्मवाद के नाम पर चल रहे मिथ्या मत भी विज्ञान के युग में टिक न सकेंगे। तो क्या हम वैदिक-धर्मी हाथ पर हाथ धर कर घरों में बैठे रहें? क्या बिना हाथ-पैर मारे हमारा आत्मवाद विजयी

होगा ? नहीं ! कदापि नहीं ! ऋषि ने लिखा है पुरुषार्थ प्रारब्ध से बड़ा है । कर्मचक्रवाद वैदिक धर्म की अनूठी देन है ।

आर्यसमाज की युवा पीढ़ी को प्रमाद तज कर अपने बल पौरुष का परिचय देना चाहिए । विचारों की टक्कर में विजयी होने के लिए हर छोटे बड़े आर्य को अपना कर्त्तव्य आप सोचना चाहिए । मान्य प्रो० बलजीत जी का यह सुझाव मुझे बहुत जंचा है कि कालेज से निकलने वाले प्रत्येक आर्य युवक को अपना एक वर्ष तो वैदिक धर्म के प्रचार के लिए अवश्य देना चाहिए । नौकरी करे तो वर्ष भर का वेतन व बचा हुआ समय धर्म के लिए दे । ग्रामों में जाने से सब सकुचाते हैं । यह अभद्र भावना छोड़नी होगी अन्यथा हम पिट जाएंगे । वेद ज्ञान की तिमिर नाशक रश्मियाँ अवश्य विजयी होंगी पर उसका श्रेय किसी और को होगा हमें नहीं । अतः युवकों को कुछ त्याग करना होगा ।

दुश्मन ने घाटियां घेरी;
मत करो जवानो देरी ।

दक्षिण की यात्रा करते समय मैंने अनुभव किया कि देश का अस्तित्व मिटा जा रहा है । अराजकता देश को अपनी लपेट में ले चुकी है । केरल में वामपंथी व मुस्लिम लीग मनमानी कर रहे हैं । मद्रास की स्थिति भी ठीक नहीं । आंध्र से तो हम बच निकले अन्यथा गाड़ियों की दुर्घटनाओं की वहां तेलंगाना वालों ने पूरी व्यवस्था कर रखी थी । बंगाल, आसाम आदि सब प्रान्तों में अवस्था शोचनीय है ।

ऐसी विषम विकट स्थिति में जो लोग देश की स्वतन्त्रता अखण्डता व एकता चाहते हैं उनको देश के लिए कुछ करना चाहिए । देश से अज्ञान, अन्याय व अभाव को मिटाने के लिए कुछ ठोस कार्य करना चाहिए । नारों से देश का पेट न भरेगा । दरिद्रता, अनैतिकता देश को खाये जा रही है । प्रान्तवाद, जात-पांत, सम्प्रदायवाद सब अपने-अपने स्थान पर सर्वनाश कर रहे हैं । आर्य विचारधारा के लोग यदि इस समय सब संगठित होकर प्रत्येक प्रान्त में अपने प्रचार कार्य की व्यवस्था ठीक करके, राष्ट्र की एकता को बचाने के लिए केवल निर्माणात्मक कार्यों में जुट जाएं तो यह भी एक महान् सेवा होगी । शत्रु से देश सजग हो जाएगा ।

एक ठोस कार्य :—आचार्य कृष्ण जी के उर्वर मस्तिष्क से एक सुझाव निकला है । आर्यसमाज की विभिन्न सभा संस्थायें इस कार्य को हाथ में लें तो बड़ा क्रान्तिकारी कार्य हो सकता है ।

आर्यसमाज में भजनीकों को कोई प्रशिक्षण नहीं दिया जाता । पुराने सुयोग्य भजनीकों का स्थान लेने वाले न होंगे तो क्या होगा ? यह पाठक सोच लें । भजनीकों का प्रचार में महत्त्व आज भी पहले जैसा है अतः भजनीकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए ।

वानप्रस्थियों के प्रशिक्षण की कोई व्यवस्था नहीं । वर्ष-वर्ष दो-दो वर्ष के वानप्रस्थियों के प्रशिक्षण शिविरों का भी आयोजन होना चाहिए । पूज्य आचार्य कृष्ण जी यदि वर्ण आश्रम का प्रचार करते हुए इन कार्यों को हाथ में लें तो सफलता निश्चित है पर यह कार्य व्यापक रूप में चलना चाहिए । देश की पुकार है, विश्व की पुकार है सहस्रों साधु वानप्रस्थी चाहिए ।

●

पैसा—पेट की खातिर

डरहम के एक ५४ वर्षीय व्यक्ति को सिक्के हज़म करने का बेहद शौक था । पर एक बार उस का हाजमा धोखा दे ही गया । उसके पेट में भयंकर पीड़ा होने लगी । अतएव डरहम के सेजफील्ड अस्पताल में उसका आपरेशन किया गया । आश्चर्यचकित डाक्टरों और नर्सों ने उसके पेट से ३६६ आधी-पैनी के सिक्के, २६ छह पेंस के सिक्के, १७ तीन पैनी के सिक्के, ११ एक पैनी के सिक्के तथा ४ शिलिंग के सिक्के बरामद किए ।

आर्यसमाज में—

पारस्परिक-कलह के निवारणार्थ कुछ उपाय

●प्रो० रामविचार जी, एम. ए.

इस समय आर्यसमाज में दुर्भाग्यवश पारस्परिक कलह चल रहे हैं। जो संगठन विश्व को अपने ध्वज के नीचे लाने के लिए प्रयत्नशील था उसी में आज विघटन का बोलबाला हो रहा है। सार्वदेशिक सभा और प्रान्तीय सभाओं में यह अग्नि-ज्वाला बड़ी तीव्रता के साथ जल रही है। सार्वदेशिक के दो चुनावों ने आर्यसमाज के प्रत्येक हितैषी का ध्यान इस विघठनात्मक प्रवृत्ति की ओर आकर्षित कर दिया है। इस अन्तःकलह के क्या कारण हैं हमें गम्भीरतापूर्वक इन पर विचार करना है। मेरे विचार में इस कलह के दो कारण हैं। पहला कारण है आर्य नेताओं का अवैदिक राजनीतिक संस्थाओं की शरण ग्रहण करना और दूसरा कारण है आर्यसमाजियों में अध्यात्म की न्यूनता अथवा अभाव। इस लज्जास्पद प्रवृत्ति को दूर करने के लिए निम्नलिखित उपाय अपने चिन्तन एवं मनन के आधार पर आर्य जनता की सेवा में उपस्थित कर रहा हूँ।

किसी भी संस्था में दलबन्दी का आरम्भ तभी होता है जबकि उस संस्था के पास कोई सर्वमान्य व्यक्ति नहीं रहता। महात्मा नारायण स्वामी जी तक आर्यसमाज का नेतृत्व सुचारु रूप से चलता रहा। उनके पश्चात् हिन्दी रक्षा आन्दोलन के समय आर्यसमाज का नेतृत्व ले दे कर स्वामी आत्मानन्द जी महाराज को प्राप्त हुआ। उनके देहावसान के पश्चात् आर्यसमाज के पास कोई सर्वमान्य व्यक्ति नहीं रहा। मेरे विचार में कोई सर्वमान्य व्यक्ति संन्यासी ही हो सकता है। वह संन्यासी सार्वदेशिक सभा का प्रधान होना चाहिए। वर्तमान आर्य संन्यासियों में जो भी अधिक गुण-सम्पन्न संन्यासी हो उनको सार्वदेशिक सभा का प्रधान बनाना चाहिए। यह पद रहना ही संन्यासी के लिए चाहिए। किसी श्वेतवस्त्रधारी को यह पद नहीं देना चाहिए। वे संन्यासी सर्वप्रतिष्ठित हों और उनका वही स्थान हो जो ईसाई जगत् में पोप का है। मेरा यह आशय नहीं कि उन्हें ईश्वरावतार अथवा ईश्वर-पुत्र माना जाए। सार्वदेशिक सभाकी अन्तरंग सभा जो प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पारित करे वह उन संन्यासी महानुभाव का आदेश हो और वह आदेश समस्त आर्य जगत् के लिए स्वीकार्य एवं शिरोधार्य हो।

दूसरा उपाय यह है कि सार्वदेशिक सभा के स्तर पर पाँच संन्यासियों की एक न्याय-सभा बने। किसी भी समाज अथवा प्रान्तीय सभा में जब कोई अन्तःकलह उत्पन्न हो तो वे संन्यासी महानुभाव वहाँ जाएँ और दोनों पक्षों की बात सुनें। जो निष्पक्ष और उचित न्याय हो वे उसकी घोषणा करें। यदि कुछ हठी और दुराग्रही व्यक्ति उस निर्णय को स्वीकार न करें तो उन व्यक्तियों को आर्य समाज की सदस्यता से निष्कासित कर दिया जाए। यदि वे निष्कासन को भी स्वीकार न करें तो न्याय-सभा इससे भी अधिक कठोर पग उठाने का निश्चय करे। इन हठी और दुराग्रही व्यक्तियों ने आर्यसमाज के पवित्र सरोवर की शुद्धता को मालिन्यपूर्ण कर रखा है। जब तक वे गन्दी मछलियाँ पकड़-पकड़ कर सरोवर से बाहर नहीं निकाली जाएँगी तब तक आर्यसमाज रूपी सरोवर शुद्ध नहीं होगा।

तीसरा उपाय यह है कि सार्वदेशिक सभा, प्रान्तीय सभाओं और स्थानीय आर्यसमाजों के अधिकारी किसी भी अवैदिक राजनीतिक दल के सदस्य नहीं होने चाहिएँ। इन व्यक्तियो द्वारा दूसरी राजनीतिक संस्थाओं के लिए आर्यसमाज की शक्ति का दुरुपयोग होता है। दूसरों की बला अपने सिर डाल कर आर्यसमाजी पदाधिकारी आपस में लड़ते हैं और आर्यसमाज की शक्ति, गौरव और सम्मान मिट्टी में मिलता है। दोरंगी ऐनकें चढ़ाने वाले पदाधि-

कारी आर्यसमाज के प्रति न्याय नहीं कर सकते । आर्यसमाज में ऐसा वातावरण उत्पन्न किया जाए जिससे ये नेता स्वयं अनुभव करें कि हमें ये पद त्याग देने चाहिएं । हम इनके योग्य नहीं हैं ।

चौथा उपाय यह है कि हमारे जो नेता और प्रवक्ता अन्य राजनीतिक संस्थाओं में जा चुके हैं उनको आर्यसमाज के उत्सवों पर निमन्त्रित न किया जाए । जनसंघी आर्य नेता जनसंघ का मण्डन करता है तो कांग्रेस का खण्डन करता है । कांग्रेसी आर्य नेता कांग्रेस का मण्डन करता है तो जनसंघ का खण्डन करता है । दोनों आपस में लड़ते हैं और यह झगड़ा आर्य जनता तक पहुंचता है । जो पण्डित उपदेशक और प्राध्यापक केवल वेद और ऋषि दयानन्द जी महाराज की विचारधारा दें उन्हीं को उत्सवों पर आमन्त्रित किया जाए ।

पाँचवां उपाय इन कलहों के निवारण का यह है कि जिस प्रान्तीय सभा में झगड़े खड़े हो जाएं तो उस सभा से सम्बद्ध आर्यसमाजें सभा के अधिकारियों को सम्बन्ध-विच्छेद की चेतावनी दें । इस पर भी यदि वे कलह-त्याग न करें तो आर्थिक सहायता (दशांश आदि) भेजनी बन्द कर दी जाए ताकि ये नेता आर्य जनता के धन को वकीलों की भेंट न कर पाएं ।

छठा उपाय आर्यसमाजों के कलह को मिटाने के लिए और आर्यसमाज के संगठन को दृढ़ करने के लिये आवश्यक है वह इस प्रकार है कि जो आर्य महानुभाव दूसरी राजनीतिक संस्थाओं के टिकट से एम० एल० ए० और एम० पी० बन चुके हैं उनकी एक सभा देहली में महात्मा आनन्द स्वामी जी और महात्मा आनन्द भिक्षु जी की देख-रेख में बुलाई जाए और इन महानुभावों को समझाया जाए कि आप लोगों के दूसरी सभाओं में जाने के कारण आर्यसमाज की शक्ति क्षीण हो रही है और आर्यसमाज का कोई राजनीतिक रूप संसार के सम्मुख नहीं आ रहा है।

सातवां उपाय यह है कि आर्य राज्य सभा के काम को दृढ़ता के साथ अग्रसर किया जाए । आर्य युवक परिषद् के कार्यक्रम को पुष्ट किया जाए । दूसरी राजनीतिक संस्थाओं की शरण लेने वालों महानुभाव अपनी राज्य सभा की शरण में आएं । अपनी सभा का काम करें । १९७२ के चुनाव में आर्य राज्य सभा की टिकटों से एम० एल० ए० और एम० पी० बन कर वेद, ऋषि दयानन्द जी महाराज और आर्यसमाज की विचारधारा का प्रतिनिधित्व करें ।

चुनाव-पद्धति ने भी आर्यसमाज के गौरव को बहुत ठेस पहुंचाई है । जो कलह-प्रिय व्यक्ति उठता है वह चार-चार आने के सदस्य भरती करके अपने पक्ष की विजय के लिये प्रयत्नशील रहता है । चुनाव-पद्धति के स्थान पर नियुक्ति-पद्धति को निर्धारित किया जाए । सार्वदेशिक के प्रधान वे संन्यासी महानुभाव भारत के सभी प्रान्तों में ऐसे गुण-सम्पन्न ऋषि भक्त और कर्मठ प्रधानों की नियुक्तियाँ करें । वे प्रान्तीय प्रधान कार्य-कुशल, समाज-सेवक और ऋषि-भक्त व्यक्तियों को पदाधिकारियों, प्रतिष्ठित सदस्यों और अन्तरंग सदस्यों के रूप में नियुक्तियां करें । इस पद्धति में भी सम्भवतः कुछ दोष होंगे परन्तु जो दूषित और कलुषित वातावरण चुनाव-पद्धति ने खड़ा कर रखा है उसका निराकरण इस पद्धति से बहुत सीमा तक हो सकता है ।

अन्तिम उपाय जो अतिशय महत्त्वपूर्ण है और जिस की अवहेलना किसी भी रूप में नहीं की जा सकती वह है आध्यात्मिक शिविरों का आयोजन । आर्यसमाजियों के जीवन में अध्यात्म की बहुत न्यूनता आ चुकी है । अध्यात्म के अभाव के कारण ही ये अन्तःकलह खड़े हो गये हैं । सेवा-भाव का अभाव और अधिकार-प्राप्ति की लिप्सा से ही ये कलह उठे हुए हैं । इन नेताओं में साधनामय जीवन की बहुत कमी आ चुकी है । इनमें से कई सन्ध्या और वेद-पाठ तक नहीं करते । अध्यात्म के अभाव के कारण हम में वक्रता, कपट, शरारत, प्रदर्शन, अभिमान, दलबन्दी, पद-लोलुपता और अधिकार-लिप्सा आदि कुप्रवृत्तियाँ घर कर रही हैं और सज्जनता, सरलता, विनम्रता, निरभिमानता, उदारता, सेवा-भाव, श्रद्धा-भाव की उत्तरोत्तर न्यूनता हो रही है । इसी अध्यात्म के अभाव के कारण ही ये कलह उठे हुए हैं और आर्यसमाज की मान-मर्यादा मिट्टी में मिल रही है । अतः मेरा यह सुझाव है कि आर्य संन्यासी कुछ ऐसे व्यक्तियों को

तैयार करें जो अष्टांग योग में रुचि रखते हों और जिनका क्रियात्मक जीवन हो। इस प्रकार उन व्यक्तियों द्वारा आध्यात्मिक शिविरों की आयोजना की जाए जिनसे आर्य समाजियों को स्वदोष दर्शन और स्वदुर्गुण त्याग की प्रेरणा मिले और अपने जीवन को सद्गुणों से परिपूर्ण करने की भावना जागृत हो जाए। जब तक आर्यसमाजियों में अपनी त्रुटियों को दूर करने और गुणों को जीवन में लाने का संकल्प नहीं आएगा तब तक कल्याण नहीं होगा। यह बात योग-निष्ठा के बिना जीवन में नहीं आ सकती। इस योग-निष्ठा को जीवित करने के लिये वेद प्रचार के साथ-साथ आध्यात्मिक शिविरों की नितान्त आवश्यकता है। अध्यात्म के आने पर ही ये लोग जान पाएँगे कि हम आर्यसमाज की मान-मर्यादा को नष्ट न करें और यदि हम में कोई सेवा-भाव नहीं हो तो तटस्थ हो जाएँ और आर्यसमाज के वातावरण को दूषित न करें। शिविरों का यह आयोजन भले ही इन कलह-प्रिय नेताओं के लिये उपयोगी न हो परन्तु भावी आर्य सन्तान के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध होंगे।

●

पुस्तक परिचय

उपनयन सर्वस्व—लेखक—आचार्य कृष्ण जी—मूल्य १.२५—प्राप्ति स्थान—आचार्य कृष्ण जी, दीवानहाल देहली। उपनयन के विषय में आर्य विद्वानों ने समय-समय पर कई छोटी बड़ी पुस्तकें लिखीं हैं। सब पुस्तको की अपनी विशेषता रही है। फिर भी यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि उपनयन सर्वस्व अपने विषय की बेजोड़ पुस्तक है। लेखक ने विषय के प्रत्येक पहलू पर युक्तियुक्त सप्रमाण प्रकाश डाला है।

विद्वान लेखक का मनन व चिन्तन बहुत गहन है। विचारों में मौलिक ा हैं। यज्ञोपवीत की महत्ता, आवश्यकता, पवित्रता, सार्वभौमिकता आदि के बारे में विद्वान् लेखक ने जो कुछ लिखा है वह सब सामग्री अन्यत्र किसी पुस्तक में नहीं मिलती। इस पुस्तक का सब भाषाओं में अनुवाद होना चाहिए। यज्ञोपवीत क्या, क्यों व कैसे ? के बारे में जानने के इच्छुक प्रत्येक व्यक्ति को इसका बार-बार पाठ करना चाहिए। यह पुस्तक स्थायी महत्व की है।

स्वाध्याय सर्वस्व—इस पुस्तक के लेखक भी श्री आचार्य कृष्ण जी हैं। मूल्य १.३५। स्वाध्याय का अर्थ क्या है। इसके लाभ क्या हैं ? स्वाध्याय क्यों करना चाहिए ? कैसे करना चाहिए ? किस का करना चाहिए ? इन सब बातों पर महान् वेदज्ञ ने बड़े सुन्दर ढंगसे प्रकाश डाला है। पुस्तक का एक-एक पृष्ठ लेखक के गम्भीर चिन्तन का परिचायक है। 'वेद का सुनना-सुनाना पढ़ना-पढ़ाना सब आर्यों का परम धर्म है।' इस ऋषि वचन की अनेक विद्वानों ने व्याख्या की है परन्तु, आचार्य जी ने इस ऋषि वचन की जो व्याख्या की है उसको पढ़कर अनायास मुख से निकलता है कि इस ऋषि वचन के भाष्यकार आचार्य कृष्ण ही हैं। ऋषि ने 'सुनना' शब्द इस नियम में क्यों रखा इस मर्म को आचार्य जा ने ही खोला है।

पुस्तक में वर्ण-आश्रम व्यवस्था पर भी प्रसंगवश बड़ा सुन्दर प्रकाश डाला गया है। मनीषी लेखक को इस ग्रंथ रत्न के लिए हम बधाई देते हैं।

पुस्तक की छपाई में मुद्रण की असावधानी के कारण कई त्रुटियां रही हैं। कागज भी विषय व सामग्री के अनुरूप ही होता तो और अच्छा रहता। नर व जन शब्द पर आचार्य जी ने सुन्दर प्रकाश डाला है परन्तु जन शब्द के अर्थ पर पूज्य आचार्य जी कुछ और प्रकाश डालने की कृपा करें। आचार्य जी ने लिखा है कि वेद में जन शब्द का है अर्थ केवल पैदा हुआ या जिसने जन्म लिया है। नर शब्द गौरवपूर्ण है। मेरी अल्पमति में वेद में जन शब्द कई स्थानों पर गौरवपूर्ण अर्थों में भी आया है।

पुनः यह कहना पड़ता है कि आचार्य जी के इन दोनों ग्रंथों के लिए आर्यजन उनके ऋणी रहेंगे।

समीक्षक : राजेन्द्र जिज्ञासु

दुष्ट हमारा स्वामी न बने

मा नो दुःशंस ईशत् ।। ऋग्वेद १-२३-९

दुष्ट हमारा स्वामी न बने। इस विषय में सदा सावधान रहना चाहिए कि हम कभी दुष्ट के आधीन न हो जावें। व्यक्ति में मन इन्द्रियाँ आदि पदार्थ दुष्ट भावों के आधीन न हो जावें। समाज में दुष्ट दुराचारियों को बड़े बड़े पदों पर न रखा जावे। सभाओं और परिषदों में दुष्टों को अधिकार न दिया जावे तथा किसी भी सार्वजनिक स्थान में दुष्ट का सम्मान न किया जावे। जो दुराचारियों का सम्मान करेंगे वे भी गिर जायेंगे।

प्रेषक—मुल्खराज भल्ला

चुनौती स्वीकार करें !

★

लोगों की मांग है कि अब राजधर्म पाक्षिक से साप्ताहिक बने !
बात ठीक है पर हो कैसे ?

साप्ताहिक करने के लिये कम से कम १०,००० ग्राहक चाहिएं
अभी तो केवल ३५०० ही हैं !

बाकी के ६५०० ग्राहक बनाने के लिये आप चुनौती स्वीकार करें ।
यदि प्रत्येक ग्राहक कम से कम २ ग्राहक बनाये

विज्ञापन दे सकने वाले स्वयं देकर दूसरों से दिलवायें
और राजधर्म को अपनी पत्रिका समझ

इसकी उपयोगिता, सुन्दरता, व्यापकता बढ़ाने के लिये अमूल्य सुझाव दें
तो आपकी इच्छा पूरी हो सकती है !

●

श्रावणी और जन्माष्टमी पर साहित्य प्रचार के लिये

१. स्वामी समर्पणानन्द जी का 'कायाकल्प'
(२८ पौंड आफसेट पेपर २०×३०×१६ पृष्ठ १४०)

२. शहीद राम प्रसाद बिस्मिल का क्रान्तिकारी जीवन चरित्र
(२८ पौंड एन्टिक पेपर २०×३०×१६ पृष्ठ १२०)

प्रत्येक की १०० प्रतियां केवल ६० रु० में आज ही मंगायें

राजधर्म मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-१

श्रावणी पर व्रत लें !

●

१. वैदिक धर्म की स्थापना के लिये देव दयानन्द द्वारा प्रज्ज्वलित आर्य समाज रूपी क्रान्ति-ज्वाला को हम कभी भी, किसी भी हालत में बुझने नहीं देंगे। आवश्यकता पड़ने पर अपने सर्वस्व की आहुति देकर भी इस ज्वाल-शिखा की शान बनाये रखेंगे।

२. संगठन के जीवन में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। इसलिए आर्य समाज में वर्तमान नेताओं के विवादों के कारण हम आर्य समाज से निराश नहीं होंगे और न ही आज से इस संगठन के प्रति कोई निराशाजनक विचार व्यक्त करेंगे।

३. देव दयानन्द द्वारा बताये रास्ते पर चलकर आर्यराष्ट्र की स्थापना करना हमारा पावन लक्ष्य है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये अग्रसर आर्य युवकों को हम तन, मन, धन से सहयोग करेंगे। एक प्रचण्ड आशा-वाद को हृदय में संजोये हम अपना मार्ग स्वयं प्रशस्त करेंगे—यही हमारा संकल्प है, यही हमारा व्रत है !

●

(उपर्युक्त आशय के प्रस्ताव पारित कर एक प्रतिलिपि सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्—मन्दिर मार्ग नई दिल्ली-१ को अविलम्ब प्रेषित करें)

महात्मा आनन्द भिक्षु जी के आमरण अनशन की घोषणा से स्थिति गम्भीर हो गई है। परमात्मा नेताओं को सद्बुद्धि दे और आर्य युवकों को शक्ति दे ताकि वर्तमान निराशा दूर हो। —भूपाल आर्य

श्री कुलपति गुरुकुल कांगड़ी,
सहारनपुर।

विज्ञापन शुल्क

(एक बार के लिये)

कवर पृष्ठ ४	पूरा—	२०० रु०
कवर पृष्ठ ४	आधा —	१५० रु०
कवर पृष्ठ ३	पूरा—	१५० रु०
अन्य पृष्ठ	पूरा—	१०० रु०
अन्य पृष्ठ	आधा—	५० रु०

राजधर्म (पाक्षिक)
वार्षिक शुल्क १० रुपये

ओ३म्
राजधर्म (पाक्षिक)
आर्यसमाज मन्दिरमार्ग नईदिल्ली-१
दूरभाष—४२०४६

संपादक
प्रो० श्यामराव

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के लिये प्रो० श्यामराव द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित।

सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६

ओ३म्

राजधर्म

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का पाक्षिक मुखपत्र

सम्पादक
प्रो० श्यामराव

वर्ष-१ : अंक-२१
वार्षिक शुल्क—१० रु०
एक प्रति ५० पैसे

१० सितम्बर १९६९
दयानन्दाब्द १४५

आर्यसमाज विवादों के निराकरण हेतु समिति

महात्मा आनन्द भिक्षु द्वारा सदस्य होने से इन्कार

नई दिल्ली २९ अगस्त। महात्मा आनन्द भिक्षु ने एक वक्तव्य में कहा है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के नाम से समाचार पत्रों में एक विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है कि उसने प्रान्तीय सभाओं के विवाद समाप्त कराने के लिये तीन व्यक्तियों की एक समिति नियुक्त की है। इस समिति में दो अन्य संन्यासियों के अतिरिक्त मेरा नाम भी दिया हुआ है। मैं स्पष्ट करना चाहता हूं कि मैं ऐसी किसी समिति में नहीं हूं और न ही किसी सार्वदेशिक सभा को मैंने इस प्रकार की कोई स्वीकृति दी है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को अपनी ओर से निर्णायक नियुक्त करने का कोई अधिकार नहीं क्योंकि वह भी स्वयं एक विवादग्रस्त पक्ष है। अतः जब तक सभी विवादग्रस्त पक्ष निर्णायकों को स्वीकार न करें तब तक किसी समिति का कोई मूल्य नहीं।

●

महात्मा आनन्द भिक्षु जी सर्वाधिकारी घोषित

३१ अगस्त नई दिल्ली। आर्यसमाज संगठन समिति द्वारा आयोजित एक विशाल बैठक महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज की अध्यक्षता में आर्य समाज मन्दिर मार्ग में मध्याह्न २ बजे से हुई जिसमें दिल्ली, गुड़गांवां, मेरठ, करनाल आदि स्थानों के २५० आर्य समाजों के प्रधान-मन्त्री तथा कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त पं० शिवकुमार जी शास्त्री, लाला रामगोपाल जी शाल वाले, पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री, पं० रघुवीरसिंह जी शास्त्री, सोमनाथ जी मरवाहा, उमेशचन्द्र जी स्नातक, रामनाथ जी भल्ला, स्वामी अखिलानन्द जी, स्वा० विज्ञानानन्द जी, अमर स्वामी जी, नारायणदास जी कपूर, लाला नवनीतलाल जी, माता विद्योत्तमा जी यति आदि आर्यसमाजों के प्रमुख नेताओं ने भाग लिया। सभी उपस्थित कार्यकर्त्ताओं ने आर्यसमाज में चल रहे पारस्परिक विवादों के प्रति दुःख प्रकट करते हुए अतिशीघ्र सर्वसम्मत समाधान ढूंढ़ने के लिए नेताओं से प्रार्थना की। ४ घण्टे के विचार विमर्श तथा सुझावों के बाद सभी नेताओं तथा कार्यकर्त्ताओं ने सब विवादों को सुलझाने के लिए महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज से सर्वाधिकारी बनने तथा अनशन का निश्चय स्थगित करने की प्रार्थना की, जिसे महात्मा जी ने स्वीकार कर लिया। महात्मा जी ने चारों पक्षों से प्रार्थना की है कि वे अपनी ओर से अधिकार प्राप्त दो-दो व्यक्ति अपने पक्ष के स्पष्टीकरण के लिये १० सितम्बर तक दे दें। जिनके सहयोग से वास्तविक स्थिति को जान कर अन्तिम निर्णय लिया जा सके। सब पक्षों की ओर से महात्मा जी को सर्वाधिकारी स्वीकार करने के बाद आर्यजगत् में पुनः प्रसन्नता की लहर दौड़ गई है। हमारी सभी पक्षों से प्रार्थना है कि वे आर्यसमाज की प्रतिष्ठा का ध्यान रखते हुए महात्मा जी को निर्णय करने में पूर्ण सहयोग करेंगे तथा उसे सर्वात्मना स्वीकार करके आर्योचित आदर्श उपस्थित करें।

मन्त्री आर्यसमाज संगठन समिति

●

विशेष—स्थिति अब काफी गम्भीर हो गई है। आर्य जनता अब निरपेक्ष दर्शक नहीं रही। महात्मा आनन्द भिक्षु जी के प्रति असहयोग करने वालों को आर्य जनता के क्षोभ एवं विद्रोह की भावना को ध्यान में रखना आवश्यक होगा।

—सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्

सम्पादकीय—

काश ! हम भी इतना समझ पाते

यरुशलम मुसलमान और ईसाई दोनों का तीर्थस्थान है। यरुशलम में मुसलमानों का अलअक्सा नामक एक मस्जिद है जो कहा जाता है १४०० वर्ष पुराना है। मुसलमान इसे मक्का मदीने के बाद तीसरे नम्बर पर मानते हैं। मुसलमान जिस इस्लाम मत में विश्वास करते हैं उसके अनुसार मूर्ति पूजा बहुत बुरी चीज है। मुसलमान बुतपरस्ती (मूर्ति पूजा) का विरोध बड़े उग्र रूप में करते हैं और बुतशिकस्त (मूर्तिभंजक) कहलाने में गौरव का अनुभव करते हैं। पर अपने इन दो तीन मस्जिदों की एक-एक ईंट और पत्थर को वे खुदा से भी ज्यादा प्यार करते हैं। हज करने वाले इन्हीं पत्थरों को इस कदर चूमते चाटते हैं कि हमारे देश का कट्टर से कट्टर मूर्तिपूजक पौराणिक भी एक बार शरमा जाय ! अब बात कुछ ऐसी हुई कि अलअक्सा की मस्जिद में आग लग गई और लगभग आधा मस्जिद जल कर नष्ट हो गया। यदि मुसलमान चाहते तो बाकी की आधी पुरानी मस्जिद को भी तोड़कर एक बढ़िया नई मस्जिद बनवा लेते और उसकी अग्नि बीमा "फायर इन्शोरेन्स" करवा लेते। पर ऐसा नहीं हुआ। इस अग्निकांड में गहरी राजनीति आ गई। यह सबको पता ही है कि इसराइल और अरब राष्ट्रों का कई वर्षों से युद्ध चल रहा है। पिछली बार जब इसराइल ने अरबों की पिटाई की थी तब से यरुशलम इसराइल के हाथ में आ गया है। इसराइल वाले यहूदी हैं। अरब मुसलमान फड़फड़ा कर रह गये—उन का 'तीर्थ-स्थान' यहूदियों के हाथ चला गया। अब आग लगने से मुसलमानों को मौका मिल गया—उन्हें पता है कि इसराइल पर आक्रमण करके यरुशलम को वापस लेना तो टेढ़ी खीर है पर 'धर्म के नाम पर' दुनिया भर के मुसलमानों को आसानी से भड़काया और संगठित किया जा सकता है और इसरायली यहूदियों के विरुद्ध "जेहाद" की आवाज बुलन्द की जा सकती है। इसके लिए "धर्म के ठेकेदारों" ने फतवा दिया कि आग इसराइल की यहूदी सरकार ने लगवाई है। बस क्या था—यरुशलम और गाजापट्टी में इसराइल के विरुद्ध प्रदर्शन आरम्भ हुए—प्रदर्शन इतना उग्र हो गया कि इसराइल को गोली चलानी पड़ी जिससे कुछ अरब मर गए। उधर इसराइल ने अग्निकांड पर दुःख प्रकट करते हुए इस आरोप का खंडन किया कि मस्जिद जलाने में उनका हाथ है। घटना की जाँच पर एक आस्ट्रेलियाई युवक "माइकेल रोहन" पकड़ा गया और उसने अपराध स्वीकार भी कर लिया। एक पांच सदस्यीय समिति जाँच के लिए नियुक्त की गई गई जिसमें एक मुसलमान भी है।

पर मुसलमान ये सब क्यों मानने लगे ? उन्होंने तो 'जेहाद' छेड़ दिया। बात तीन-चार दिन में सारी दुनिया के मुसलमानों में आग की तरह फैल गई और मस्जिदों में मीटिंगें होने लगीं। दूर-दूर देशों के मुसलमान प्रदर्शन करने लगे। भारत के मुसलमान, जो अपने आपको एक कदम आगे का मुसलमान मानते हैं, किसी से कैसे पीछे रहते ? अहमदाबाद में हड़ताल करा दी, दिल्ली में प्रदर्शन और कलकत्ते में अनशन आरम्भ हो गये। यहाँ तक कि संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव ऊ थांट से मिलकर इस 'षड्यन्त्र' की जाँच के लिए दवाब डाला जा रहा है। कहने कामतलब यह कि दुनिया की ८२ करोड़ मुसलमान जनता आज एक स्वर से इसराइल के विरुद्ध आवाज लगा रही है। मस्जिद में आग किसने, क्यों, कब और किस तरह लगाई ? हमें तो यह सब कुछ ठीक-ठीक पता नहीं पर जब हम एक-एक मुसललान को इस घटना से क्षुब्ध फुफकारते हुए देखते हैं तो हमें लगता है कि सचमुच मुसलमान एक जिन्दा कौम है। आज यदि ऐसी कोई घटना किसी हिन्दू मन्दिर की हो जाय तो मजाल है एक पतंगा भी फड़फड़ा सके ? सहिष्णुता के पुजारी हिन्दू एक गाल पर थप्पड़ खाकर दूसरा गाल सामने करने में

ईसामसीह को भी लज्जित कर देते हैं। इनके बच्चे रोज घरों में गला फाड़-फाड़ कर पाठ याद करते हैं—"हमारे पूर्वज बन्दर थे—उनकी पूँछ जब घिस गई तो वे आदमी हो गये—वेद गड़रियों के गीत हैं, इसमें जादू-टोना भरा है, आर्य जंगली थे, वैदिक ऋषि मांस खाते थे और शराब पीते थे" और इन बच्चों के 'डैडी-मम्मी' दांत निपोर कर बरखुदार की तारीफ के पुल बाँधते हैं। इनके महापुरुषों को दूसरे यदि गाली दें तो ये निहायत मासूम बन जाते हैं—और जब इनको जोश आता है तो ये किसी मुसलमान की छोकरी को 'सीता' बनाकर बाजार में नचाते हैं—किसी निकम्मे हिजड़े को 'कृष्ण' बना कर उससे रासलीला करवाते हैं। जब ये अपने देश में ही ईसाई या मुसलमानों से पिटने लगते हैं तो छत पर चढ़ कर फेमिली प्लानिंग का विरोध करते हैं और कहते हैं - हमारी संख्या कम हो रही है। क्या करोगे संख्या बढ़ा कर ? भेड़ बकरियों की तरह संख्या बढ़ा कर कसाई को भेंट करना चाहते हो ? जिस कौम में अपनी मान्यताओं पर श्रद्धा नहीं, जिस मत में स्वयं मानने और दूसरों से मनवाने का साहस नहीं, जिस विचारधारा के मानने वालों में ईंट का जवाब पत्थर से देने की ताकत नहीं, जिस संगठन में विरोधियों को कुचल कर बरबाद कर देने की तमन्ना नहीं, वह कौम और वह संगठन संख्या बढ़ाने की अपेक्षा मर जाय तो बेहतर !

सदियों से पिट रहे, अपमानित और लाञ्छित हो रहे इन हिन्दुओं को देव दयानन्द ने आकर झकझोरा—आजसे १०० साल पहले प्रगाढ़ निद्रा में सोये हुओं के कान के पास शंख बजा कर कहा—अरे पागलो ! तुम्हारा नाम हिन्दू नहीं है। हिन्दू का मतलब तो चोर, उचक्का और काफिर होता है—सारे वेद, उपनिषद्, ब्राह्मण, रामायण, महाभारत कहीं भी हिन्दू नाम नहीं आया। यह तो मुसलमानों ने तुम्हें जलील करने के लिए हिन्दू, नाम दिया है। तुम तो श्रेष्ठ हो—तुम तो आर्य हो। छोड़ो इस हिन्दू, हिन्दी और हिन्दुस्तान के आत्म-गौरव-हीने, लज्जास्पद, निन्दनीय पचड़े को और छाती ठोंक कर कहो कि हम आर्य हैं—हमारी भाषा आर्य भाषा है और हमारा देश आर्यावर्त है। जला दो झूठ के पुलिन्दे इन पुराणों को और बहा दो इन पाखण्ड पोषक मूर्तियों को। आओ, आओ एक हाथ में सत्य और दूसरे में शक्ति का संकल्प लेकर ओ३म् के ध्वज के नीचे खड़े होकर—वेद मन्त्रों का पाठ करें। परमात्मा द्वारा प्रदत्त सब सत्य विद्याओं की पुस्तक वेद रूपी सूर्य के रहते भागवत पुराण और हनुमान चालीसा के जुगनुओं की क्या जरूरत ? उठो, कमर सीधी और गर्दन ऊँची करो। उखाड़ कर फेंक दो दासता के इस भारी भरकम जुए को—और वैदिक वर्णाश्रम के सिद्धान्तों के आधार पर आर्य राष्ट्र की स्थापना करो और चक्रवर्ती राज्य स्थापना की महत्त्वाकांक्षा लेकर अग्रसर हो जाओ !

कितना क्रान्तिकारी और जीवनदायिनी नारा था दयानन्द का पर अफसोस ! हिन्दू अजगर टस से मस न हुआ। कुछ आर्यसमाजी अवश्य तेजस्वी रूप धारण कर सामने आये और आर्यावर्त के ऊपर मंडराते काले बादलों में आशा की कुछ किरणें दीख पड़ीं। पर दुर्भाग्य से आर्य समाज ने सत्य की साधना में शक्ति की उपेक्षा कर दी और इसी कारण हिन्दू रूपी अजगर इन्हें निगलता जा रहा है। संसार का इतिहास यह बताता है कि जब सत्य और संगठन साथ साथ रहे तो उसका मुकाबला कोई नहीं कर सका। पर जब कोई केवल सत्य की दुहाई देकर चलना चाहता है तो वह उनके मुकाबले में बुरी तरह पिछड़ जाता है जो बिना सत्य का आधार लिये, केवल संगठन शक्ति के बल पर अपना झंडा गाड़ लेते हैं।

हम मुसलमानों को बधाई देना चाहते हैं—इसलिए नहीं कि उनके पास हमसे अधिक सत्य है पर इसलिए कि उनके पास संगठन तगड़ा है; इसलिये नहीं कि हम कुरान को वेद से ऊँचा मानते हैं पर इसलिए कि वे कुरान की एक एक बात पर मरना और मारना जानते हैं। अन्त में इसी भाव को आर्य भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री रामधारीसिंह दिनकर के शब्दों में हम कहना चाहते हैं—

"दुनिया का इतिहास दुनिया की असली अदालत है। उसका फैसला उन लोगों के खिलाफ कभी नहीं गया है, जो ज्यादा ताकतवर और ज्यादा पूरे मर्द थे; जिनकी धर्म-कर्म भावना अत्यन्त प्रखर थी, जिनका आत्म-विश्वास अदम्य था। इस अदालत ने शक्ति और नस्ल की मजबूती पर सचाई और इन्साफ को कुरबान किया है। और इस अदालत ने उन जातियों को हमेशा सजा दी है जो सत्य को कर्म से तथा न्याय को शक्ति से अधिक महत्त्व देती थी।"

काश ! हम भी इतना समझ पाते !

सामयिकी—

गिरी जी ! बधाई हैं

हमने माना कि आपकी जीत हुई है—हमने यह भी माना कि आप अपने बूते पर राष्ट्रपति बने हो क्योंकि आज से पहले इस देश के जितने राष्ट्रपति हुए वे सब 'बनाये हुए' होते थे दूसरे शब्दों में वे कांग्रेस पार्टी के 'रबर स्टाम्प' हुआ करते थे—पर आपने तो बस कमाल कर दिया—इन्डीकेट को अपनी ओर मिलाकर सिण्डीकेट को चारों खाने चित्त कर दिया जैसे किसी पहलवान ने ताल ठोककर दंगल जीत लिया हो ! इसीलिये न आपको सभी बधाई देरहे हैं ? आपकी जीत की खबर मिलने पर एक बस के कन्डक्टर ने यात्रियों के पैसे लौटा दिये और 'जनता के प्रतिनिधि' के विजय के उल्लास ने अपने पास से पैसे भर दिये। न जाने और कितने लोगों ने और क्या क्या किये होंगे ? 'राजधर्म परिवार' भी आपको बधाई देना चाहता है और आशा करता है इस देश में निहित स्वार्थियों के दूषित चक्र को आप समाप्त करके एक नये आशावाद को जन्म देंगे !

पर एक दो बातें और हैं—जो हमें अच्छी नहीं लगीं और जिन्हें हम कहे बिना रह नहीं पा रहे। पहली तो यह कि आपने राष्ट्रपति भवन में पदार्पण करने से पहले रामाकृष्णपुरम् स्थित 'भगवान वेंकटेश्वर' के मन्दिर में जाकर पूजा की। इतने बड़े राष्ट्र का राष्ट्रपति जड़ पत्थर की मूर्ति के सामने जाकर माथा नवाये—अज्ञानता, अन्धविश्वास और पाखण्ड के गढ़ इन मन्दिरों की प्रतिष्ठा बढ़ाये—और उस पर गुस्ताखी ये कि वहाँ उस समय उस वेद के मन्त्रों का पाठ हो जिस वेद ने चिल्ला चिल्लाकर कहा है—न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः— ये सारी बातें ऐसी हैं जिनसे हमारा दिल दुःखी है। हम संसद सदस्य श्री राजनारायण की इस बकवास को तो कोई महत्व नहीं देते कि 'सेक्यूलर' राष्ट्र का राष्ट्रपति धार्मिक अनुष्ठान क्यों करे ? पर हम आपको एक उच्चकोटि के विद्वान् मानकर आपकी धार्मिक भावनाओं का आदर करते हुए यह कहना चाहते हैं जब तक इस देश से मूर्तिपूजा का अन्धविश्वास नहीं जाता तब तक यह उन्नति नहीं कर सकता। ऋषि दयानन्द ने मूर्तिपूजा को एक अन्धेरी खाई माना है और इसे सर्वथा अधार्मिक एवं अवैदिक सिद्ध किया है—क्या हम आशा करें कि आप वेद और वैदिक ऋषियों के आदेशानुसार आचरण कर इस राष्ट्र का गौरव बढ़ायेंगे ?

दूसरी बात ! राष्ट्रपति पद भार सम्भालते हुए आपने अपना वक्तव्य अंग्रेजी में दिया। क्या ऐसा करने से पहले एक सेकन्ड रुककर आपने सोचा कि आपकी जीत से जिन गरीब किसान मजदूर, रिक्शा चलाने वाले और पत्थर तोड़ने वालों को सबसे अधिक खुशी हुई थी उनमें से कितनों को आपकी अंग्रेजी समझ में आई होगी ? अपने राष्ट्र के जननायक के विचार सुनने के लिये उमंग लिये उतावली जनता को जब एक विदेशी भाषा के माध्यम से पुकारा गया—तो आपको पता है कि उनके दिलों को कितनी ठेस लगी और वे कितने निरुत्साहित हुए ? यदि अपने साहस का परिचय देते हुए आप शपथ ग्रहण संस्कृत में करते और अपना भाषण इस राष्ट्र की राष्ट्रभाषा-आर्य भाषा में करते तो कोटि कोटि जनमानस पटल पर आपके प्रति कितना अधिक सम्मान बढ़ता ? आर्य भाषा (हिन्दी) पर आप पूरा अधिकार नहीं रखते तो टूटी फूटी ही बोलते। आपके प्रान्त के ही केन्द्रीय शिक्षा मंत्री डा० वी० के०आर० वी० राव ने गुरुकुल ज्वालापुर का दीक्षान्त भाषण टूटी फूटी आर्यभाषा में देकर जनता के मन को जीत लिया। यदि राष्ट्रभाषा में नहीं बोलने की जिद थी तो अपनी प्रान्त की भाषा तेलगू में बोल दिया होता—कम से कम अंग्रेजी से तो लाख गुना अच्छा होता ! कोई आप इंग्लेंड के या अमेरिका के राष्ट्रपति तो बने नहीं थे जो अंग्रेजी में ही बोलना जरूरी था ?

पता नहीं परमात्मा कब इस देश पर कृपा करेंगे जब इस देश की सभ्यता और संस्कृति से प्यार करने वाला इस देश का नायक बनेगा ?

क्या कहा—काँग्रेस नहीं टूटी ?

—जी हाँ, फिर एक बार कहता हूं—कांग्रेस नहीं टूटी और न अब आगे कभी टूटेगी। आप एक नहीं दस सम्पादकीय लिख डालो !

—तो इस बार आपने हमारा सम्पादकीय ध्यान से पढ़ा है। क्या हमने उसमें यह नहीं लिखा कि यदि इतने विरोध पर भी कांग्रेस नहीं टूटी तो इस धरती पर काँग्रेसियों से बढ़कर सिद्धान्तहीन और आत्मसम्मान-हीन कोई दूसरा नहीं ? यदि आप समझते हो कि कांग्रेस जुड़ी हुई है तो बताओ हमने गलत लिखा ?

—अजी ! ये सब तो बातें बनाने की हैं : सच कहिये, दिल पर हाथ रखकर कहिये—क्या आप नहीं सोचते थे कि २५ अगस्त को कांग्रेस वर्किंग कमेटी की बैठक में कांग्रेस पार्टी टूट कर दो टुकड़े हो जायगी ?

—सोचते थे। फिर क्या हुआ ?

—फिर क्या होना है ? आपके मन्सूबे पूरे नहीं हुए। कांग्रेस टूटने के बदले पहले से ज्यादा मजबूत होकर निकली। इस अग्नि परीक्षा में कांग्रेस खरी उतरी ! बैंकों का राष्ट्रीयकरण, मोरारजी का निकालना, गिरी का जीतना—अब इस देश में देवी इन्दिरा ने समाज-वाद लाकर दिखा दिया—जनता की सरकार······

—लगता है अब मोरारजी की जगह तुम्हें मिलने वाली है इसलिये बिना साँस लिये गीत गाये जा रहे हो। यदि इन्दिरा ने आज समाजवाद लाया है तो आज से पहले क्या था ?

—आज से पहले था पूंजीवाद, आज से पहले था सिन्डी-केटवाद, आज से पहले·········

—ये बताओ, कौन लाया यहाँ पूंजीवाद और सिन्डीकेट-वाद ?

—क्या कोई लाता है इन्हें ? अपने आप से आ जाते हैं।

—क्यों झूठ बोलते हो ? यदि पूरे ढिंढोरची नहीं बने हो तो साफ क्यों नहीं कहते कि इन्दिरा का बाप लाया था पूंजीवाद और सिन्डिकेटवाद। दुनियाँ की आंखोंमें धूल झोंकता था कि हम "सोशलिस्टिक पैटर्न ऑफ सोसाइटी" बनायेंगे 'डेमाक्रेसी' का ढोल बजाएँगे। इसी तरह के झांसे दे देकर अपनी गद्दी बनाये रखा। भोली-भाली जनता को क्या पता था कि यह सब राजनीतिक स्टण्ट हैं ?

—देखिये जी ! गड़े मुर्दे उखाड़ने से कोई लाभ नहीं। भूत के बदले वर्तमान की बात कीजिये।

—वर्तमान तो भूत की सन्तान है

—क्या मतलब ?

—मतलब ये कि इन्दिरा गाँधी जवाहरलाल नेहरू की सन्तान है। और बाप ने बेटी को वर्षों साथ रखकर स्टण्टबाजी की अच्छी खासी ट्रेनिंग दी हुई है।

—लगता है आप नेहरू परिवार के खानदानी दुश्मन हैं। मान लिया बाप स्टण्टबाज था पर क्या बेटी ईमान-दार नहीं हो सकती। आप तो खामख्वाह इन्दिराजी के पीछे हाथ धोकर पड़े हैं।

—अच्छा ये बताइये क्या इन्दिरा जी ने कांग्रेस में अनु-शासहीनता को जन्म नहीं दिया ?

—कैसी अनुशासन हीनता ? 'आत्मा की आवाज' को मानना क्या अनुशासन हीनता है ?

—भई क्या कहने ! हम तो समझते थे कि इन्दिरा जी अपने पूज्य पिता जी की तरह आत्मा-परमात्मा में विश्वास नहीं करतीं। पर चलो तुम्हारी बात ही सही ! पर यह तो बताओ यह आत्मा की आवाज कभी-कभी सुनाई पड़ती है या हरदम ? क्या अब कांग्रेसी सारे महत्वपूर्ण निर्णय आत्मा की आवाज सुनकर करेंगे ? आज तक जिनकी आत्मा मरी पड़ी थी—देश के करोड़ों निर्धन भूख से तड़पते रहे पर आत्मा के ठेकेदार चुप थे, देश के टुकड़े हो गये और लाखों बेघरबार हो गये, चीन के हाथों भारत को पिटवाया गया, कच्छ की धरती पर पाकिस्तानियों का कब्जा हुआ, पर आत्मा की आवाज मरी रही। आज जब इन्दिरा जी की गद्दी को धक्का लगने लगा तो आत्मा की आवाज बोल पड़ी। हमें तो किसी ने बताया कि यह आवाज आत्मा की नहीं कोसीगिन और कृष्णामेनन की आवाज थी। आपकी क्या राय है ?

—छोड़िये इन बातों को। हमारी बात तो चली थी कि कांग्रेस टूटी या नहीं टूटी। मैं आपकी और सारी बातें मानता हूँ पर आप भी मेरी बात मान लो कि कांग्रेस टूटी नहीं है—कम से कम फिलहाल तो नहीं टूटी ! ★

औरंगजेबी इस्लाम और राष्ट्रीय एकता

● स्व० स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती

राष्ट्र की एकता में जहाँ आर्य और द्रविड़ जातिवाद एक महान् विघ्न है वहाँ साम्प्रदायिक कलह एक दूसरा कारण है जो राष्ट्र की जड़ें खाखली करे डाल रहा है। जब तक अंग्रेजों का राज्य रहा भारत में हिन्दू तथा मुसलमान सदा लड़ते रहे। महात्मा गांधी ने इस कलह को किसी अंश तक दूर करने का यत्न किया, परन्तु जब तक इस रोग का मूल कारण दूर न हो यह रोग कभी जा नहीं सकता। आइए देखें इस रोग का मूल कारण क्या है ?

इस रोग का मूल कारण है औरङ्गजेबी इस्लाम, इस शब्द को सुन कर बहुत से लोग चौंक उठेंगे। आज बच्चे-बच्चे के हृदय में यह बात बैठ चुकी है कि इस्लाम संसार में तलवार के जोर से फैला।

यह बात केवल इसी अंश तक सच्ची है कि इस प्रकार का घृणित उद्योग भी अनेक बार किया गया। किन्तु इसमें तो तनिक भी सन्देह नहीं कि इस प्रकार के घृणित आक्रमण से कम से कम भारत में इस्लाम का सर्वनाश ही हुआ। इस सर्वनाश के लिए उत्तरदाता तो इस्लाम नहीं किन्तु औरङ्गजेबी इस्लाम है। औरंगजेब की ही बात क्यों कहें, जब-जब कोई धार्मिक आन्दोलन राजनीतिज्ञों के दाव-पेंच का साधन बना उसकी यही दुर्दशा हुई। औरंगजेब को अपने बड़े भाई से राज्य छीनना था। उसने इस्लाम का एक नया रूप गढ़ा और उसके बल पर साम्प्रदायिक कलह की भावना को उकसाया और उसी के बल पर उसने राज्य प्राप्त किया। अंग्रेज कूटनीतिज्ञों की मौज बन आई, उन्हें यह इस्लाम गढ़ा-गढ़ाया मिल गया। इसी इस्लाम के बल पर अन्त को भारत के दो टुकड़े हुए और भारत और पाकिस्तान अलग-अलग हुए।

प्रश्न पूछा जा सकता है कि यह इस्लाम औरंगजेब ने गढ़ा इसका क्या परिणाम है तो यह प्रमाण उपस्थित करने के लिये ही आज हमने लेखनी उठाई है।

इसके दो प्रमाण हैं।

(१) कुरानशरीफ के वचन।

(२) मुहम्मद साहिब का आचरण।

औरंगजेब के खरीदे हुए मौलवियों ने इस्लाम के प्रवर्तक का चरित्र प्रजा से बिल्कुल छिपाये रक्खा क्योंकि औरंगजेब के स्थान पर सौदाबाजों के गुरुघण्टाल अंग्रेज ने उन्हें खरीद कर पूरा-पूरा देशद्रोही बना लिया था।

मुहम्मद साहिब के चरित्र में एक दिव्य आभा है और कम से कम उनके प्रादुर्भाव से पूर्ववर्ती अरब के इतिहास को देख कर तो उनके लिए हठात् पतित-पावन का शब्द मुख से निकल पड़ता है।

मुहम्मद साहिब के प्रादुर्भाव से पहिले अरब की क्या अवस्था थीं ?

स्त्री जाति की अत्यन्त दुर्दशा थी। एक-एक व्यक्ति छब्बीस-छब्बीस पत्नियों से विवाह कर लेता था।

पति के मरने पर पति की पत्नियाँ भेड़, बकरी, ऊँट खजूर के पेड़ों की तरह पुत्र की स्वयमेव पत्नियाँ बन कर उसके स्वामित्व में आ जाती थीं।

आवश्यकता पड़ने पर पति इन बीवियों के रेवड़ में से दो चार को गिरवी भी रख सकता था।

मुहम्मद साहिब ने ४ पत्नियों तक की मर्यादा बाँधी और उसमें भी यह शर्त लगा दी कि चार विवाह भी वह करे जो सबके साथ न्याय-युक्त व्यवहार कर सके। यह अंकुश भी बहु-विवाह की प्रथा को रोकने के लिये था।

हिंसा-वृत्ति को भी उन्होंने रोकने का प्रयत्न किया।

कुरान के वचन इस प्रकार हैं :—

"और जिन्होंने अपने पालनकर्त्ता की ओर ध्यान लगाकर कष्ट से संतोष किया और नमाजें पढ़ीं और हमारे दिये में से चुपके और जाहिर (खुदा की राह में) खर्च किया करते हैं और बुराई के मुकाबले में भलाई करते हैं

यही लोग हैं जिनको दुनियाँ का फल अच्छा मिलता है।
(सुरेराद तेरहवाँ पारा आयत २२)

मुहम्मद कार्मडयूक पिक्ट हाल के किये अंग्रेजी अनुवाद में इसका अनुवाद इस प्रकार किया गया है।—

"Such as persevere in seeking their Lord's contenance and are regular in prayer and spend that which we bestow upon them secretly and openly, overcome evil with good, theirs will be the sequel of the (heavenly) Home.

यहाँ स्पष्ट लिखा है "बुराई के मुकाबले में भलाई करते हैं" (Overcome evil with good)

मुहम्मद साहिब के आचरण में भी यही बात देखिये।

एक औरत मक्के में प्रतिदिन उस समय कूड़ा फेंका करती थी जब मुहम्मद साहिब उसकी गली में से गुजरा करते थे। एक दिन उसे बुखार ने आ घेरा, उस दिन कूड़ा नहीं फेंक सकी। जब मुहम्मद साहिब उस गली में से गुजरे और उन्होंने देखा कि आज कूड़ा नहीं आया तो वह पूछने लगे कि उस कूड़ा फेंकने वाली को आज क्या हुआ? गली वालों ने बताया कि वह तो आज बुखार में पड़ी है, इस पर मुहम्मद साहिब उसके घर चले गये और कहने लगे कि मुझे पता लगा है कि आज तुम्हें ज्वर ने घेर लिया है। बताओ मैं तुम्हारी क्या सेवा करूँ? वह औरत उठ कर मुहम्मद साहिब के चरणों पर गिर पड़ी और अपनी धृष्टता के लिये क्षमा माँगने लगी।

इसे कहते हैं बुराई के बदले भलाई। अथवा (Overcoming evil with good) यही नहीं, जिस गो-हत्या के नाम पर अंग्रेजी राज्य में न जाने कितने कटारपुर काण्ड हुए उसके विषय में मुहम्मद साहिब के क्या विचार हैं।

पहले तो कुर्बानी को लीजिये।

"उनमें से खाओ और सब पेशा और फकीरों को खिलाओ।" ३६।

"खुदा तक न तो उनका गोश्त पहुँचता है और न इनके खून बल्कि उस तक तुम्हारी परहेजगारी पहुँचती है।"
(३७। सूरेहज्ज आयत ३६-३७)

इससे स्पष्ट है कि कुर्बानी का उद्देश्य गरीबों और फकीरों को बाँट कर खाना है न कि जानवरों को मारना। क्योंकि लहू और गोश्त तो खुदा तक पहुँचना नहीं यह बाँट कर खाने तथा अकेले न खाने की भावना ही खुदा को प्यारी है। यह वही बात है जिसे वेद में 'केवलाघो केवलादी भवति' (ऋ० १०-११७-६) इन शब्दों में कहा गया है तथा गीता में 'भुंजते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्' इन शब्दों में कहा है।

वेद तथा गीता में क्योंकि पशु हिंसा का प्रकरण नहीं था इसलिये मांस तथा रुधिर के निषेध का भी प्रसंङ्ग नहीं उठा।

यह हमारा केवल वितर्क नहीं है, इसके लिए प्रमाण भी उपस्थित हैं।

मुहम्मद साहिब के जीवन-चरित्र में स्पष्ट वर्णन है कि उन्होंने कहा कि गाय का मांस तुम्हारे लिए विष है तथा दूध अमृत है।

इतना ही नहीं उनके जीवन की एक घटना तो इस गोहत्या के प्रश्न का अन्तिम निर्णय ही कर डालती है। एक समय मुहम्मद साहिब के घर बहुत से मेहमान आ गए। घर में जो भोजन बना था उन्हें खिला दिया गया। मुहम्मद साहिब के लिए कुछ नहीं बचा। वह अपने एक पड़ोसी भक्त के घर पहुँचे। भक्त का तो भाग्योदय हो गया। उसने अत्यन्त श्रद्धापूर्वक पूछा, भगवन्, मैं आपकी क्या सेवा करूँ? मुहम्मद साहिब ने उत्तर दिया कि और सब की बात तो पीछे करना पहले भोजन खिला। भक्त ने पूछा, भगवन् क्या आज घर में भोजन नहीं बना? उत्तर मिला कि बना तो था, जितना बना था सब अतिथियों को खिला दिया। अब भूख के मारे दम निकल रहा है। इस पर भक्त ने कहा कि भगवन्, आप ऐसे समय पधारे हैं जब दो एक सूखी रोटियां पड़ी हैं। वह खिलाते मुझे लज्जा आती है। खजूर भी आप प्रतिदिन खाते ही हैं। जरा ठहरिये। यह कहकर वह एक बछिया पकड़ लाया। मुहम्मद साहब ने पूछा कि यह तू किसलिये पकड़ लाया? उसने उत्तर दिया कि इसे मारकर ताजा मांस आपको खिलाऊँगा। इस पर मुहम्मद साहिब ने कहा कि सोच तो सही जिसका तू दूध पीता है उसे ही मार कर खाएगा और मुझे भी खिलाएगा?

इससे स्पष्ट है कि मुहम्मद साहब पशु-हत्या विशेषकर गोहत्या के विरुद्ध थे तथा अन्य दूध देने वाले पशुओं की हत्या को भी अच्छा नहीं समझते थे। परन्तु यह घटना मौलवी लोग मुसलमानों को कभी नहीं सुनाते। बात सीधी हैं। यह वर्तमान इस्लाम न खुदा का है न रसूल का। यह औरंगजेब के खरीदे हुए मौलवियों का है जिन्हें अंग्रेजों ने विरासत में पाया और अपनी मोहर लगा दी। किसी भी महान् सम्प्रदाय के आदि पुरुष मनुष्य को मनुष्य से नहीं लड़ाते। यह लीला उनके स्वार्थी चेले रचा करते हैं।

एक बात और ध्यान देने योग्य है। हजरत सारी उमर इस्लामी सल्तनत के खलीफा थे। एक समय एक दूसरे देश का राजदूत उनसे मिलने आया। बातचीत होते-होते शाम पड़ गई, दिया जला दिया गया। बातचीत की समाप्ति पर उस राजदूत ने पूछा—हजरत यह सब बात तो हुई पर जरा बाल-बच्चों का क्या हाल है यह भी तो कहो। इस पर खलीफा ने दिया बुझा दिया। अतिथि का हाथ पकड़ कर उसे घर में ले गए। वहां घर का दिया जलाकर कहने लगे अब पूछो बाल-बच्चों का हाल। अतिथि ने कहा कि अब बाल-बच्चों का हाल तो पीछे पूछूंगा, पहले दिया बुझाने का हाल बताइये। बाल-बच्चों का हाल पूछते ही आपने दिया क्यों बुझा दिया?

खलीफा कहने लगे कि जब तक राज-काज की बात चलती थी खिलाफत का दिया जलता था, बाल-बच्चों का हाल मेरा निजी मामला है। निजी मामला छिड़ते ही मैंने सरकारी दिया बुझा दिया। अपने निजी कार्य के लिये सरकारी तेल जलाने का मुझे क्या अधिकार था?

हजरत मुहम्मद साहिब अपनी ईमानदारी के लिये प्रसिद्ध थे। यहूदी लोग अपने झगड़ों में मध्यस्थ उन्हें बनाया करते थे। वह देवी खदीजा के नौकर थे। परन्तु उनकी ईमानदारी तथा वफादारी पर मुग्ध होकर ही खदीजा ने उन्हें आत्म-समर्पण कर दिया। जिस पर उनकी ईमानदारी का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि उनके उमर जैसे चेले थे जो बाल-बच्चों का प्रसंग छिड़ने पर सरकारी तेल जलाने को तैयार न थे। बस भारत में ही क्यों, विश्व भर में साम्प्रदायिक एकता का आधार यह उत्तम शिक्षा ही बन सकती है। जिस दिन मुसलमान लोग खुदा रसूल के इस्लाम को अपना कर औरंगजेबी इस्लाम का परित्याग कर देंगे उस दिन पाकिस्तान और हिन्दुस्तान दो न रहेंगे, इनके स्थान पर अखण्ड भारत और अन्ततोगत्वा अखण्ड विश्व सिंहासनासीन हो जायगा, हिन्दु लोगों को भी खुदा और रसूल के इस्लाम तथा औरंगजेबी इस्लाम में भेद समझना होगा। भारत के वर्तमान इतिहास में कम से कम दो व्यक्ति ऐसे हुए हैं जिन्होंने इस मार्ग को समझा था। उनके नाम थे रामप्रसाद बिस्मिल और अशफाक उल्ला, अखण्ड भारत और अखण्ड विश्व का मार्ग यह दोनों भारत माता के सहोदर पुत्र दिखा गये। संसार का भला धर्म के नाम को मिटाकर उसका स्थान दुराचार, भ्रष्टाचार और उच्छृंखलता को देने में नहीं किन्तु इस समन्वय में है।

क्या भारत की सरकार तथा भारत की जनता इस धर्म को समझेगी।

सरकार तो इस्लाम के कलंक मुस्लिमलीगियों और शेख अब्दुल्लाओं की खुशामद में लगी है। हाय रे इस देश का भाग्य!

भारत के नौजवानो, तुम उठो और रामप्रसाद और अशफाकुल्ला के चरण-चिन्हों पर चलो।

नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।

विलय-वार्ता पूर्ण सफलता की ओर

आर्यसमाज के युवक संगठन परस्पर विलय के लिये अपनी पूर्ण तैयारी कर चुके हैं। विलय-वार्ता से सभी संगठनों के कार्यकर्त्ताओं में विशेष उत्साह एवं हर्ष का वातावरण बन रहा है। विलय को अन्तिम रूप देने के लिये १३,१४ सितम्बर को सभी संगठनों के मुख्य कार्यकर्त्ताओं की बैठक करनाल में हो रही है जिसमें सभी संगठन मिल कर परस्पर संगठित होंगे। बैठक में आगामी वर्ष का कार्यक्रम, संविधान तथा अधिकारियों का निर्धारण होगा। आर्यसमाज के क्षेत्र में युवक शक्ति ने यह पग बहुत दूरदर्शिता पूर्ण रखा है। युवकों के इस निर्णय का सब आर्यजन स्वागत कर रहे हैं।

संयोजक, इन्द्रदेव मेधार्थी

प्रतिशोध लेना सीखो !

राजा क्रोध से पागल हो रहा था, किन्तु अब कोई उपाय नहीं था। वानरराज ने सामान्य नीति का पालन किया था। हिंसा का उत्तर प्रतिहिंसा से और दुष्टता का उत्तर दुष्टता से देना ही व्यावहारिक नीति है।

एक नगर के राजा चन्द्र के पुत्रों को बन्दरों से खेलने का व्यसन था। बन्दरों का सरदार भी बड़ा चतुर था। वह सब बन्दरों को नीति शास्त्र पढ़ाया करता था। सब बन्दर उसकी आज्ञा का पालन करते थे। राजपुत्र भी उन बन्दरों के सरदार वानरराज को बहुत मानते थे। उसी नगर के राजगृह में छोटे राजपुत्र के वाहन के लिए कई मेढ़े भी थे। उनमें से एक मेढ़ा बहुत लोभी था। वह जब भी चाहे तब रसोई में घुसकर सब कुछ खा लेता था। रसोइए उसे लकड़ी से मारकर बाहर निकाल देते थे। वानरराज ने जब यह कलह देखा तो वह चिन्तित हो गया। उसने सोचा, यह कलह किसी दिन सारे बन्दर समाज के नाश का कारण हो जायगा। कारण यह कि जिस दिन कोई नौकर इस मेढ़े को जलती लकड़ी से मारेगा, उसी दिन यह मेढ़ा घुड़साल में घुसकर आग लगा देगा। इससे कई घोड़े जल जायेंगे। जलन के घावों को भरने के लिये बन्दरों की चर्बी की मांग पैदा होगी। तब, हम सब मर जाएंगे इतनी दूर की बात सोचने के बाद उसने बन्दरों को सलाह दी कि वे अभी से राजगृह का त्याग कर दें। किन्तु उस समय बन्दरों ने उसकी बात नहीं सुनी। राजगृह में उन्हें मीठे-मीठे फल मिलते थे। उन्हें छोड़कर वे कैसे जाते ? उन्होंने वानरराज से कहा कि बुढ़ापे के कारण तुम्हारी बुद्धि मन्द पड़ गई है। हम राजपुत्र के प्रेम व्यवहार और अमृत समान मीठे फलों को छोड़कर जंगल में नहीं जायेंगे। वानरराज ने आंखों में आंसू भर कर कहा—मूर्खों ! तुम इस लोभ का परिणाम नहीं जानते ? यह सुख तुम्हें बहुत महंगा पड़ेगा। यह कहकर वानरराज स्वयं राजगृह छोड़ कर वन में चला गया। उसके जाने के बाद एक दिन वही बात हो गई जिससे वानरराज ने वानरों को सावधान किया था। वह लोभी मेढ़ा जब रसोई में गया तो नौकर ने जलती लकड़ी उस पर फेंकी। मेढ़े के बाल जलने लगे। वहां से भागकर वह अश्वशाला में घुस गया। उसकी चिनगारियों से अश्वशाला भी जल गई। कुछ घोड़े आग से जल कर वहीं मर गए। कुछ रस्सी तुड़ाकर शाला से भाग गए। तब राजा ने पशु चिकित्सा कुशल वैद्यों को बुलाया और उन्हें आग से जले घोड़ों की चिकित्सा करने के लिए कहा। वैद्यों ने आयुर्वेदशास्त्र देख कर सलाह दी कि जले घावों पर बन्दरों की चर्बी की मरहम बना कर लगाई जाए। राजा ने मरहम बनाने के लिये सब बन्दरों को मारने की आज्ञा दी। सिपाहियों ने सब बन्दरों को पकड़ लाठियों और पत्थरों से मार दिया। वानरराज को जब अपने वंशक्षय का समाचार मिला तो बहुत दुःखी हुआ। उसके मन में राजा से बदला लेने की आग भड़क उठी। दिन रात वह इसी चिन्ता में घुलने लगा। आखिर उसे वन में ऐसा तालाब मिला जिसके किनारे मनुष्यों के पद-चिह्न थे। उन चिन्हों से मालूम होता था कि इस तालाब में जितने मनुष्य गये सब मर गए कोई वापस नहीं आया। वह समझ गया कि यहां कोई अवश्य नरभक्षी मगरमच्छ है। उसका पता लगाने के लिये उसने एक उपाय किया। कमलनाल लेकर एक सिरा उसने तालाब में डाला और उसके दूसरे सिरे को मुख में लगा कर पानी पीना शुरू कर दिया। थोड़ी देर में उसके सामने ही तालाब में से एक कंठहार धारण किये हुए मगरमच्छ निकला। उसने कहा—इस तालाब में पानी पीने के लिए आकर कोई वापस नहीं गया। तू ने कमलनाल द्वारा

पानी पीने का उपाय करके विलक्षण बुद्धि का परिचय दिया है। मैं तेरी प्रतिभा पर प्रसन्न हूँ। जो वर मांगेगा मैं दूंगा। कोई सा एक वर मांग ले। वानरराज ने पूछा —मगरराज आपकी भक्षण शक्ति कितनी है? मगरराज— जल में मैं सैंकड़ों सहस्रों पशु या मनुष्यों को खा सकता हूं भूमि पर एक गीदड़ भी नहीं। वानरराज—एक राजा से मेरा वैर है। यदि तुम यह कंठहार मुझे दे दो तो मैं उसके सहारे सारे परिवार को तालाब में लाकर तुम्हारा भोजन बना सकता हूँ। मगरराज ने कंठहार दे दिया। वानरराज कंठहार पहन कर राजा के महल में चला गया। उस कंठहार की चमक-दमक से सारा महल जगमगा उठा। राजा ने अब वह कंठहार देखा तो पूछा— वानरराज! यह कंठहार तुम्हें कहां मिला? वानरराज— राजन् यहां से दूर बन में एक तालाब है। वहाँ रविवार के दिन सुबह जो गोता लगाएगा उसे वह कंठहार मिल जाएगा। राजा ने इच्छा प्रकट की कि वह भी समस्त परिवार तथा दरबारियों समेत उस तालाब में जाकर स्नान करेगा जिससे सब को एक-एक कंठहार की प्राप्ति हो जाएगी, निश्चित दिन राजा समेत सभी लोग वानरराज के साथ तालाब पर पहुँच गए। किसी को यह न सूझा कि ऐसा कभी संभव नहीं हो सकता है। तृष्णा सबको अन्धा बना देती है। सैंकड़ों वाला हजारों चाहता है, हजारों वाला लाखों की तृष्णा रखता है। लखपति करोड़पति बनने कि धुन में लगा रहता है। मनुष्य का शरीर जराजीर्ण हो जाता है, लेकिन तृष्णा सदा जवान रहती है राजा की तृष्णा भी उसे उसके काल के मुख तक ले आई। सुबह होने पर सब लोग जलाशय में प्रवेश करने को तैयार हुए। वानरराज ने राजा से कहा— आप थोड़ा ठहर जाएं। पहले और लोगों को कंठहार लेने दीजिए। आप मेरे साथ जलाशय में प्रवेश कीजिएगा। हम ऐसे स्थान पर प्रवेश करेंगे जहाँ सबसे अधिक कंठहार मिलेंगे, जितने लोग जलाशय में गये। डूब गये कोई ऊपर न आया। उन्हें देरी होती देख राजा ने चिन्तित होकर वानराज की ओर देखा। वानरराज तुरन्त वृक्ष को ऊँची शाखा पर चढ़कर बोला—महाराज तुम्हारे सब बन्धु-बान्धवों को तालाब में बैठे राक्षस ने खा लिया है तुमने मेरे कुल का नाश किया था। मैंने तुम्हारा कुल नष्ट कर दिया। मुझे बदला लेना था, ले लिया जाओ राजमहल को वापस चले जाओ। राजा क्रोध से पागल हो रहा था। किन्तु अब कोई उपाय नहीं था। वानरराज ने सामान्य नीति का पालन किया था। हिंसा का उत्तर प्रतिहिंसा से और दुष्टता का उत्तर दुष्टता से देना ही व्यावहारिक नीति है। राजा के जाने के बाद मगरराज तालाब से निकला। उसने वानरराज की बुद्धिमत्ता की बहुत प्रशंसा की। —पंचतंत्र से साभार

भारत सबसे अधिक दरिद्र देश क्यों ?

● अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार

पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं ! विश्व के देशों में भारत सबसे अधिक गरीब देश है। प्रश्न है कि अदीना: स्याम शरद: शतम् का पाठ करने वाला देश दरिद्र क्यों है ?

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने "भारत दुर्दशा" नाटक में एक भारतीय का चित्र इन शब्दों में चित्रित किया है—तन छीन दीन हीन मन मलीन—इन छह शब्दों में भारत की दरिद्रता का स्वरूप समाहित है।

१९१२ में इस सत्य को स्वीकार करते हुए दक्षिण अफ्रिका में सत्याग्रही महात्मा गांधी की गिरफ्तारी पर महात्मा जी के चित्र के नीचे श्री हरिश्चन्द्र ने लिखा था—

दीन हैं किन्तु रखते शान हैं।
भव्य भारत की सन्तान हैं॥
न्याय से चाहते अपना अधिकार हैं।
कब मांगते किसी से दान हैं ?

उपर्युक्त पद में अनेक परस्पर विरोधी बातें कही हैं–(१) पहली बात यह है कि दीन और गरीब का अपना कोई स्वाभिमान नहीं होता। (२) अधिकार मांगा नहीं जाता। जो जाति भीख के नाम पर अधिकार मांगती है—क्या वह कभी समृद्ध हो सकती है ?

भारत किसी समय सोने की चिड़ियां माना जाता था। आज भी भारत के मन्दिरों में संचित सोने में कमी नहीं। मेगस्थनीज ने कहा है कि पटना के लोग घर में ताला नहीं लगाते थे ! फाहियान ने कहा है कि मौर्यों के बनाए हुए महल और प्रासाद क्या आदमियों के बनाए हुए हो स ते हैं—कभी नहीं—ये देवताओं के बनाए हुए हैं।

इससे पटना, मगध और बिहार भी समृद्धि का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। आज वही प्रदेश सबसे धिक दरिद्र है ! क्यों ? मगध ही भारत का एक ऐसा प्रदेश है जिसने सम्पूर्ण भारत में अपना साम्राज्य एक हजार साल तक निरन्तर कायम रक्खा ! विश्व के इतिहास में किसी भी देश या प्रदेश का साम्राज्य इतने दीर्घ काल तक कायम नहीं रहा। राजवंश बदले पर साम्राज्य चलता रहा। इस समय ग्रीक यात्रियों के शब्दों में भारत भर में केवल दो बार चुंगी ली जाती थी। एक बंगाल से भारत आने पर और दूसरे आक्सिस नदी से माल बाहर ले जाने पर। अंकारा सभा में ईरानी सभापति ने बताया कि प्राचीन काल में भारत से व्यापार करने के लिए विदेशी व्यापारियों को संस्कृत जानना अनिवार्य था। यदि भारत गरीब देश होता तो विदेशियों पर यह अनिवार्यता नहीं थोप सकता था।

तमिल संगम का कहना है कि मौर्यों के विशाल रथों ने मल्लिकार्जुन पर्वत और तमिल देश के अन्यान्य छोटे-छोटे पर्वतों को धूल में मिला दिया। इन से इतनी धूल उड़ी कि वर्षों तमिल देश में सूर्य दिखाई नहीं दिया। फलत: नाना प्रकार के रोग फैल गए। त्राहि-त्राहि मचने लगी ! करुण पुकार सुनकर पुन: मगध सेना आई और उसने धूलि को आसमान से उतारा और सूर्य को प्रकट किया।

इस काव्यमय और अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन में ऐतिहासिक सत्य है। कविकुलगुरु कालिदास ने रघुदिग्विजय यात्रा में लिखा है कि दक्षिण दिशा में लोग रघु का तेज न सह सके अर्थात् पाण्ड्यों ने बिना लड़े अधीनता स्वीकार ली।

पुराणों में मागधवीरों की प्रशंसा में लिखा है कि मागध घुड़सवारों के घोड़ों के टापों से भारत का आकाश अहर्निश गूंजता रहता है। यह बात गलत नहीं है कि महाराष्ट्र और गुजरात में टट्टी के लिए प्रचलित शब्द सण्डास मगध के सैनिकों ने वहां पहुंचाया है। गोवा के लोकगीतों की क्रियायें मगही से मिलती जुलती हैं।

बंगला की जननी मागधी भाषा ही तो है। डा० चटर्जी भी यह मानते हैं।

परन्तु जब भारत का आकाश मागध अश्वारोही वीरों के घोड़ों के टापों से शून्य हो गया, गूंजना भी बन्द हो गया, तो मगध भी गरीब हो गया। आज वह भारत के सब प्रान्तों से अधिक गरीब है।

मदुरा का मीनाक्षी मन्दिर किस बात की साक्षी दे रहा है? मदुरा में १७३२ तक हिन्दू राज्य था। विजयनगरम् साम्राज्य के वैभव की कहानी तो इटालियन और इरानी यात्रियों ने लिखी है। आज वह वैभव कहाँ गया? मद्रास के म्युजियम में विजयनगरम् साम्राज्य के नरेशों द्वारा बनाई गई आदमकद की काँस्य प्रतिमाएं (नटराज की मूर्तियाँ) शेष रह गई हैं जो कला के वैभव की साक्षी देती हैं!

तंजौर के मन्दिर और वहाँ के रथ क्या कहते हैं? चोल नरेशों के समुद्र द्वीपों में फैले राज्य वैभव की कहानी कह रहे हैं। दक्षिणपूर्वेशिया में चोलों के आधिपत्य की कथा गा रहे हैं। उसका अर्थ है कि जो देश स्वाधीन नहीं है वह समृद्ध और धनी नहीं हो सकता। इसी पर नीतिकार का कहना है—

शस्त्रे रक्षिते राज्ये
शास्त्रचर्चा प्रवर्तते।

ब्रिटिश शासन ने पूर्वी घुड़सवारों को साईस बना दिया। सामान्य जनता को निःशस्त्र कर दिया। १९१४ की लड़ाई से पहले इनके लिए सेना के द्वार बन्द कर दिए गए थे।

भारत में ब्रिटिश शासन से पहले निरक्षरता इस देश में अज्ञात थी। ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सर्वे बताती है कि उस समय प्रति ४०० व्यक्तियों के पीछे एक स्कूल या पाठशाला थी। २०×२० और ४०×४० तक पहाड़े, जोड़,घटाव, गुणा, भाग और घुड़सवारी करना, तीरन्दाजी व लाठी चलाना प्राइमरी शिक्षा के अनिवार्य विषय थे। आचार्य विनोबा भावे का कहना कि महाराष्ट्र की प्राइमरी शिक्षा में पेड़ पर चढ़ना और पहाड़ पर चढ़ना भी सम्मिलित था। आज क्या हाल है?

१९६१ की तुलना में १० साल से अधिक आयु के लोगों में २६१ लाख लोग अधिक निरक्षर बढ़ गए हैं। यह भारत के शिक्षामंत्री ने लोक सभा में बताया है। निरक्षरता घटने के बदले बढ़ रही है। क्या ज्ञानज्योति के लुप्त हो जाने पर मानव प्रगति कर सकता है? क्या वह विद्याविहीनः पशु नहीं है। ११९३ में भारत पराजित हुआ। शहाबुद्दीन गोरी विजयी हुआ। दिल्ली पर से चौहान राज्य का अन्त हो गया। इस समय से भारत जो पराधीन हुआ वह आज तक पराधीन ही बना हुआ है। उसने आज तक विजय का सुख नहीं देखा है। १९६९ में भी भारत हारा। रेड्डी की हार और श्री गिरि की विजय भारत की पराजय है। यह रूस की विजय है या सब भारत विरोधी अभारतीय तत्त्वों की विजय है। उपद्रवी आततायी मुसलिम लीग के आगे आत्मसमर्पण करके हस्तान्तरण द्वारा पाई गई स्वाधीनता का क्या कोई मूल्य है? विभक्त भारत ने गरीबी बढ़ाई है—विषमता बढ़ाई है—घटाई नहीं है। भारत-विभाजन ने मंहगाई को बढ़ाया। बॉन (१९६९) में श्री देसाई ने कहा था कि किसी देश का विभाजन करना भयंकर पाप है। इस भयंकर पाप से मोक्ष हुए बिना भारत कभी समृद्ध हो सकता है? देश के एक भाग में विदेशी शक्तियों को पैर जमाने षड्यन्त्र करने, भारत पर अधिकार करने का अड्डा प्राप्त होने पर क्या भारत का आर्थिक विकास हो सकता है? कश्मीर का दो-तिहाई भाग पाकिस्तान के कब्जे में है। लद्दाख (१८ लाख वर्ग मील) और नेफा चीन के अधिकार में है, सोवियत रूस का एटलस यही बात कहता है। इसको वह प्रामाणिक नक्शा बताता है। रूसी विमान चालक ने इसी कारण से भारत को मिलने वाले हैलीकाप्टर को लद्दाख और नेफा के ऊपर उड़ाने से इनकार कर दिया! पग-पग पर अपमानित होने वाला देश क्या कभी सीधा खड़ा हो सकता है और दरिद्रता दूर करने में समर्थ हो सकता है?

अंग्रेजी को वर्तमान प्रधान-मन्त्री ने यावच्चन्द्रदिवाकरौ भारत में सुरक्षित स्थान दे दिया है। प्रधान-मंत्री की भारत भक्ति का नमूना यह है कि वह तोक्यो और जकार्ता में अंगरेजी में भाषण देती हैं। राष्ट्र को अब वह, आलोचना होने के बाद से, पहले अंगरेजी में रेडियो संदेश नहीं देती किन्तु क्या अंगरेजी में राष्ट्र को

संदेश देने की आवश्यकता है ? अब देश में अल्पसंख्यकों–अंगरेज़ीपठित वर्ग का राज्य है—क्या इस राज्य की आत्मा और हृदय विदेशी नहीं है ? क्या इसी कारण से २२ साल में भी अनाज की समस्या हल नहीं हुई । बुद्धि की उपासना करता हुआ भारतीय ऋषि मांगता था—यां मेधां देवगणाः पितरश्च उपासते तया ममाद्य मेधाविनं कुरु–जिस बुद्धि को देवानाम् संज्ञानानाम् उपासते । पितर और पूर्वज जिन बुद्धि की उपासना करते रहे हैं वह उस बुद्धि से हमें बुद्धिमान् करे ऋषि यह नहीं कहता कि परीक्षण न करो—अनुभव से गलत सिद्ध होने पर भी हमारी बात ही मानो—नहीं, वह कहता है–यान्यस्माकं सुचरितानि त्वयोपास्यानि नेतराणि–सुचरित का ही अनुसरण करने को कहता है ।

भारत की धरती इतनी उपजाऊ है कि धान छींट दीजिए, यदि वर्षा हो गई तो प्रति बीघा बीस मन मोटा धान हो ही जायेगा । ऐसा उपजाऊ देश अन्न के दाने-दाने के लिए तरसे ? क्यों तरसा ? नदीघाटी योजनाएँ बनाईं । अपने पैसे से नहीं, कर्ज लेकर । हमने इस नीति का पालन किया—ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत् । पानी की कमी से फसल नहीं हो रही थी । कुएं तालाब खोदे जाते–छोटी-छोटी नहरें बनाई जातीं । कितने लोगों को काम मिलता भारवि ने इस देश की खेती को नदी मातृ का कहा है । भारत का पैसा भारत में रहता । आत्मविश्वास उत्पन्न करता । हरट (घटिका यन्त्र) चरस चलते—ठीक है । कूप जल्दी भेंस जाते हैं परन्तु इनके कारण अच्छी फसल होने पर और अनाज की दृष्टि से आत्म-निर्भर होने पर, अनाज का आयात करने पर, किया गया खर्च क्या न बचता ? पी० एल० ४८० में भी मिला अनाज मुफ्त नहीं मिलता । जहाज भाड़े पर बहुत अधिक खर्च करना पड़ता । क्योंकि मालवाही जहाज हमारे अपने नहीं हैं। क्या उनसे नदीघाटी की योजनायें पूरी नहीं की जा सकती थी ।

"टैनेन्सी वैली अथोरिटी" की नकल करना क्या जरूरी था ? क्या देश को फिर किसी के आगे हाथ पसारना पड़ता ? फिर, क्या कोशी नदी घाटी परियोजना —जिसका निर्माण सबसे पहले लार्ड वेवल और उसके सहकारी डा० सर्राफ ने, १९४४ में तैयार की थी—बीच ही में नहीं लटक रही है । फर्टिलाइजर आयात करके हम प्रति एकड़ उपज बढ़ा रहे हैं । यह भी कर्ज लेकर । स्वावलम्बन का मार्ग छोड़कर । १०० मन प्रति एकड़ अनाज उत्पन्न करने वाले शिक्षित किसान का कहना है कि यदि कम्पोस्ट खाद पूरी मात्रा में बराबर मिलता रहे तो फर्टिलाइजर की कोई आवश्यकता नहीं । किन्तु फ्रीमैन कृषि पद्धति मानने को भारत बाध्य है । पी०एल० ४८० का भारी कर्ज भारत के सिर पर है । अन्नदाता की बात मानने से सब इनकार कैसे कर सकते हैं ।

इस फर्टिलाइजर के युग में जापान और चीन, नियोजन कमीशन के उपाध्यक्ष डा० गाडगिल के शब्दों में, प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष कम्पोस्ट से १५रुपया कमाते हैं । इसके विपरीत भारत ५५ × १५ = ८२५ करोड़ हर साल खोता है । यदि प्रत्येक जिला कम्पोस्ट खाद तैयार करे तो वह इसकी बिक्री से ही साल भर में नहीं तो २ साल में अपने जिले के लायक अपने संचित धन से फर्टिलाइजर का प्लांट लगा सकता है । परन्तु हम फर्टिलाइजर का प्लांट विदेशियों की सहायता से देश में पिछले १० साल से लगा रहे हैं और उनके चालू होने तक कम से कम और तीन वर्ष फर्टिलाइजर आयात करते रहेंगे । भारत का विदेशी कर्ज का बोझ बढ़ाते रहेंगे । पूना इन्स्टीट्यूट के एक विशेषज्ञ से पूछने पर कि वह कम्पोस्ट खाद का व्यवहार क्यों नहीं करते, उत्तर मिला—क्या चीन और जापान के समान हम लोगों में राष्ट्रीयता है ? चीनी, जापानी तो सड़क पर जहाँ कहीं कूड़ा देखेगा, उठाकर कण्टर में डाल देगा या कम्पोट खाद तैयार करने के लिए जमा किए जाने वाले ढेरियों पर उसको पहुँचा देगा। क्या यह हमारे देश में संभव है ? प्रश्न यह है कि यह राष्ट्रीयता कौन उत्पन्न करेगा ?

भारत में दुनियाँ भर में सबसे अधिक ढोर और पशु हैं । गोबर की खाद सर्वोत्तम है । यह वैज्ञानिकों का असंदिग्ध मत है । फिर फर्टिलाइजर के लिए पानी की अधिक आवश्यकता है । पानी की समस्या को हल किए बगैर वर्षा के पानी का संचय करने का उपाय किए बिना फर्टिलाइजर का व्यवहार क्या जमीन को जला न देगा ? बंजर न कर देगा ? उधार ली हुई बुद्धि का सहारा लेवे

का यह परिणाम होना संभव है।

कहने को जमींदारी नष्ट हो गई। परन्तु ट्रैक्टरों—(१० हजार रुपया प्रति ट्रैक्टर साधारण मूल्य और १६ से २० हजार प्रति ट्रैक्टर काला बाजार) से खेती करने वाले नए जमींदार उत्पन्न हो गए हैं। इनमें भारत की एक प्रधान मन्त्री भी हैं। ये ट्रैक्टर भी विदेशों से उधार लिए गए हैं। क्या जापान और अमेरिका ने उधार लिए ट्रैक्टरों से खेती करनी शुरू की थी? अमेरिकी क्या यूरोप से अमरीका पहुँचने पर भारतीय किसानों के खेता के उपकरणों से भी घटिया उपकरणों से खेती नहीं करते थे? पर १८-१८ घंटे कठोर श्रम करके उन्होंने खेती की पैदावार बढ़ाई, अनाज का निर्यात किया। डब्बा बन्द खाद्य-उद्योगों का विकास किया और अर्जित धन से खेती के उपकरण सुधारे और उन्नत बनाये। उन्होंने किसी से कर्ज नहीं मांगा।

ट्रैक्टर से खेती करने का एक फल यह होगा कि गोवंश का नाश हो जायेगा। इस देश के लोग नाटकों में और सभा के मंचों से गौ को माता भले ही कहें किन्तु वह अब दूध पीते हैं भैंस का—गौ का नहीं—जबकि यूरोप और अमेरिका में कोई भी भैंस का दूध नहीं पीता। इस देश में यदि गाय पाली जाती है तो खेती के लिए—आवश्यक बैलों के वास्ते। बैलगाड़ियों का स्थान ट्रकों ने ले लिया और बैलों का स्थान ट्रैक्टरों ने ले लिया। तब गौ को पालने की क्या आवश्यकता रहेगी? ट्रैक्टर खेती का प्रचार करने वाली सरकार ने क्या कभी इस पर भी सोचा है कि २५-५० साल बाद इस देश में ढूंढ़ने पर भी क्या गाय मिलेगी? भारतीय संस्कृति का एक आधार गौ है। जब गौ ही नहीं रहेगी तो भारतीय संस्कृति कहाँ रहेगी?

पराधीन देश में आत्मविश्वास नहीं रहता। पराजित देश मान-सम्मान की भावना खो देता है, पुरुषार्थहीन हो जाता है। मकई या भूंजा क्या इस देश के लोग पहले नहीं खाते थे? खाते थे, पर जब अमेरिका ने भूनी मकई पैकटों में बन्द करके 'पॉप कॉर्ण' के नाम से भारत में भेजी फिर नई दिल्ली की शानदार दूकानों पर वह बिकने लगी। यदि हम में भारतीयता का यत्किंचित् भी अभिमान होता तो क्या हम अपने खाद्य पदार्थों—दलिया (पोरिज जो का होता है) चिउड़ा, मठरी, बालुशाही, कलाकन्द, बर्फी, समोसा, ठेकुआ प्रभृति सुस्वादु खाद्य-पदार्थों का हम निर्यात नहीं कर सकते थे? क्या कचौड़ी महीने भर नहीं टिक सकती? क्या यह निर्यात के योग्य नहीं है? खेती के निर्याताभिमुखी होने पर क्या किसान जी तोड़कर परिश्रम न करता—जब उसको मालूम होता कि उसको यूरोप और अमेरिका के लोगों को बना बनाया तैयार नाश्ता देना है। पर पराधीन देश अपनी बुद्धि को कष्ट ही न देना चाहता। वह तो चाहता है कि अन्य लोग उसका काम कर दें। उसमें जिज्ञासा ही पैदा नहीं होती। स्व-उद्यम से कोई काम करने का उत्साह ही पैदा नहीं होता। वह तो यही कहता है कि—कोऊ नृप होऊ हमें का हानी। चेरि छोड़ जनि होब न रानी। इस देश में हिन्दी में लिखी उपयोगी से उपयोगी बात भी तिरस्कृत रहती है। किन्नर प्रदेश की यात्रा के लेखक महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने आज से ३०-३५ साल पहले लिखा था कि अकेले किन्नर प्रदेश में वह सब फल जो अफगानिस्तान ईरान और मलशेशिया में पैदा होते हैं—यहां पैदा हो सकते हैं और इतनी मात्रा में पैदा हो सकते हैं कि सारे देश को खिलाकर हम उनका निर्यात भी कर सकते हैं। किन्तु इस देश के किसी सरकारी अधिकारी का ध्यान इस ओर नहीं गया क्योंकि यह हिन्दी में लिखा था। आज हिमालय प्रदेश की सरकार मांग कर रही है कि उसको अन्य राज्यों के समान राजनीतिक स्थिति प्रदान की जाय किन्तु वह आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी होने का कोई प्रयत्न नहीं करती और अपने प्रदेश के २०-२० प्रकार के अंगूर की कलमें लगाने वालों की उपेक्षा किए हुए है। समृद्धि की इस प्रकार उपेक्षा करने वाला देश क्या कभी समृद्ध हो सकता है?

भारत में श्रम और श्रमी तिरस्कृत है, लांछित है, अपमानित है। यहां भीख मांगने वाला और डण्डो मारने वाला सम्मानित है और वह समाज और जाति का नेता है। दो करोड़ से अधिक सबल हृष्ट-पुष्ट सक्षम व्यक्ति बेकार रहकर मालपुआ और खीर खाते हैं। "भिक्षा" यहां का सर्वोच्च सम्मानित पेशा है। श्रम करना अपमानजनक है पर ऋषि कह गए हैं—नाश्रन्ताय श्रीरस्ति—पर आज

हमारा मन्त्र है कि दुनियां लूटो मक्कर से, रोटी खाओ घी-शक्कर से। भारत में जैसी काहली है क्या किसी देश में है? इस्राइल राज्य में मरुभूमि को बाग बना दिया। २५ लाख इस्राइलियों ने १० करोड़ मुस्लिम अरबों को छः दिन में पराजित कर दिया। इधर भारतीय जनता सुपुरा मूषिकाञ्जलि बनी हुई है। उसकी सबसे बड़ी आकांक्षा क्या है? दोनों समय पेटभर रोटी मिल जाये। इससे अधिक उसकी कोई महत्त्वाकांक्षा नहीं है। वह कोरा भाग्यवादी है। पुरुषार्थवादी नहीं है। सिन्धु सागर का नाम अरब सागर कैसे हो गया? क्या अरबों ने कभी इसको जीता? नहीं, गुजरात और काठियावाड़ के व्यापारियों के विदेशी व्यापार की समुद्री लुटेरों से अरब सामुद्रिक रक्षा करते थे। उनकी नौकरी में थे। और तो और—मुगल सम्राटों की बेगमें जब हज को जाती थीं—उनकी रक्षा के लिए भी इनकी सहायता ली जाती थी। क्या मुगलों के लिए समुद्र यात्रा बन्द थी? वास्कोडिगामा को यह अरब सामुद्रिक ही कालिकट लाए। अन्यथा वह उत्तरी अफ्रीका जा रहा था। वास्कोडिगामा उनके बनाये नक्शों को देखकर चकित हो गया। वह बिल्कुल ठीक-ठीक बनाये गए हैं और समुद्र मार्गों का ठीक-ठीक ज्ञान देते थे।

मगध के शिशुनाग वंश के अजातशत्रु ने नौसेना का निर्माण किया। क्यों? लिच्छवियों को विजय करने के लिए। इसके बाद मराठों ने नौसेना की ओर ध्यान दिया परन्तु वह पुर्तगीजों के मुकाबिले की भी नहीं थी। हम पढ़ते जरूर थे। पाठ भी करते थे। समुद्रम् गच्छ अन्तरिक्षम् गच्छ—परन्तु हमने समुद्र को १४वीं सदी के बाद से पार करने का कोई प्रयत्न नहीं किया। यद्यपि हम यह जानते थे कि विदेशी व्यापार में श्री बसती है परन्तु स्वतः भार न उठाकर हमने अरब सामुद्रिकों पर डाल दिया और उनके अत्याचारों को मौन भाव से सहा। इस देश की पुरुषार्थ-शून्यता की कहां तक कहानी कही जाये। गोआ के हिन्दू, बीजापुर मुसलिम शासन से पीड़ित दलित और त्रसित थे। स्वाधीन होने का प्रयत्न न करके गोआ के ब्राह्मणों ने पुर्तगीजों को अपनी रक्षा के लिए बुलाया। पुर्तगीज सेना ब्राह्मणों की सहायता पाकर विजयी हुई और उसने गोआ पर दिसम्बर १९६१ तक राज्य किया। यह है हमारी अकमर्ण्यता का प्रमाण।

क्या ऐसा अकमर्ण्य देश भी कभी समृद्ध हो सकता है?

कोई मेरी भी सुनेगा ?

जब कोई अपराध होता है तो हम इतनी जल्दी रिपोर्ट दर्ज नहीं करते। थोड़ा इन्तजार करते हैं कि किसी मन्त्री, उपमन्त्री या संसद् सदस्य का फोन आ जाये कि अपराधी को छोड़ दो।

—एक थानेदार

भारत धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र है ! फिर, राष्ट्रपति श्री गिरि वेंकटेश्वर मन्दिर में पूजा करने क्यों गए ?

—राजनारायण

इस वर्ष इन्दिरा गांधी का ही दबदबा रहा। इस वर्ष को महात्मा गान्धी शताब्दी वर्ष न कहकर इन्दिरा गान्धी वर्ष कहना चाहिए।

—दिनमान

इन्दिरा गांधी से मेरे मतभेद हैं परन्तु जितनी साहसिकता से वह काम करती हैं कि मैं उनकी तारीफ किए बिना रह नहीं सकता।

—अटलबिहारी वाजपेयी

यह सिण्डिकेट क्या बला है—मुझे स्वयं नहीं मालूम।

—निजलिंगप्पा

जो लोग कांग्रेस के छिन्न-भिन्न होने की आशा में ताक लगाए बैठे हैं—उन्हें अभी बहुत देर तक बैठना पड़ेगा।

—टाइम्स आफ इण्डिया

कांग्रेस के कुछ पुराने सठियाए हुए लोग प्रधान मंत्री के साथ जो नोकझोंक करते रहते हैं—इसे देख कर तो किसी लोकनृत्य की मुद्रा का स्मरण हो आता है।

—नन्दन कागल (इण्डियन एक्सप्रेस)

दिनेश सिंह सोवियत संघ जा रहे हैं। शायद सोवियत "सिण्डिकेट" से विचार-विमर्श करने के लिए।

—फ्रैंक मोरेश (इण्डियन एक्सप्रेस)

भारत को भगवान् ही बचाये। —मसानी

जब मैं एक बड़े तोंद वाले कांग्रेसी से मिला तो मैंने अनुमान लगाया कि इस महाशय की अन्तरात्मा तोंद में छिपी पड़ी है।

—कृपलानी

पूंजीपरस्तों का जमघट उखड़ने लगा है। हम प्रगतिवादियों को एकजुट होकर इन्हें सही तरीके से उखाड़ फेंकना चाहिए।

—भूपेश गुप्त

अनुशासन रूपी तलवार को हमेशा म्यान के भीतर ही रखना चाहिये। एक बार बाहर निकाल लिया तो इसकी चमक समाप्त हो जाती है।

- डा० वी० के० आर० वी० राव

नम्बूदिरिपाद कम्युनिस्ट हैं इसलिए परमात्मा से कोई वास्ता नहीं रखते। लेकिन मार्क्स की प्रेतात्मा से तो सम्पर्क रखते ही होंगे। —एरियल (सण्डे स्टैंडर्ड)

चुम्बन और नग्नता के बारे में हम इतनी जल्दी कोई निर्णय नहीं दे सकते। —इन्द्रकुमार गुजराल

मैं तो जनता का प्रथम सेवक हूं।

—वी० वी० गिरि

चट्टानों से जो टकराये,
उसे तूफान कहते हैं।
जो तूफानों पर छा जाये,
उसे इन्दिरा गांधी कहते हैं।

—के० के० शाह

राक्षसों ने भारतभूमि को दीर्घकाल तक पीड़ित किया। भारत मां के आंसुओं ने सात सागरों को क्षारमय बनाया। हे किसानो, अब मजबूती से हल पकड़ो क्योंकि हमारी उर्वरा भूमि ने राक्षसों का संहार करने वाले श्री राम को जन्म दिया है।

(श्री गिरि के विजयोल्लास में बंगाल विधान सभा में गाया गया नजरूल इसलाम का गीत)

मैंने जनसंघ से इसलिए त्यागपत्र दिया क्योंकि यह धन्नासेठों की पार्टी है।

—स्वामी ब्रह्मानन्द

मैं कम्युनिस्टों से निर्देश नहीं प्राप्त करती हूं। वे ही मुझ से निर्देश लेते हैं। —इन्दिरा गान्धी

सेक्युलर कौन है ?

● गुरुदत्त

जब लक्ष्मण मेघनाद की बर्छी से घायल हो गया और उसके जीवन की आशा छूटने लगी तो विभीषण ने लंका के वैद्य से चिकित्सा कराने की सम्मति दे दी। राम की सेना लंका पर आक्रमण किये हुए थी और कई दिन से युद्ध चल रहा था। लक्ष्मण के मरणासन्न हो जाने से लंका में खुशियां मनाई जा रही थीं। ऐसे समय में लंका के ही एक वैद्य से लंका के प्रमुख शत्रु के भाई की जीवन-रक्षा के लिये कहना विचित्र प्रतीत होता था। वैद्य के चिकित्सा करने में भी सन्देह था।

परन्तु वैद्य को बुलाया गया और वह चिकित्सा करने के लिए तैयार हो गया। चिकित्सा हुई और लक्ष्मण पुनः रावण की सेना से लड़ने के लिए तैयार हो गया।

आज के काल में वैद्य के ऐसे व्यवहार पर आलोचना की जा सकती है। क्या शत्रु-पक्ष के किसी प्रमुख व्यक्ति को जीवित और स्वस्थ करना क्षम्य है ? हमारा विचार में है कि लंका के वैद्य ने एक उचित कार्य ही किया था। एक वैज्ञानिक के लिए अपने विज्ञान के प्रयोग में शत्रु और मित्र भेद-भाव करना सर्वथा अनुचित है। यही बात हम एक साहित्यकार की मानते हैं। साहित्यकार अपनी साहित्य-रचना में पक्ष-विपक्ष का विचार छोड़कर सत्य का निरूपण करने के लिए तैयार रहता है। यह उसका कर्त्तव्य है। ऐसा करता हुआ वह अपनी कला और विज्ञान का सदुपयोग करता है।

सैक्युलर का अर्थ, सम्प्रदाय के विचार को छोड़कर, कार्य करना है। एक लेखक जब सम्प्रदाय के भेद-भाव का विचार छोड़कर अपने ज्ञान-विज्ञान का प्रयोग करता है, तब वह एक सैक्युलर साहित्यकार माना जा सकता है।

यही बात सैक्युलर राज्य की है। जब राज्य पक्षपात रहित होकर, पक्ष और विपक्ष को भूलकर, शासन कार्य चलाता है, तब राज्य सैक्युलर अर्थात् निरपेक्ष कहा जा सकता है।

एक वैद्य, एक लेखक अथवा एक शासक निरपेक्ष रहने चाहियें। वैद्य की चिकित्सा पक्षपात रहित होकर ही होनी चाहिए। इसी प्रकार लेखक का लेख अथवा शासक का शासन पक्षपात रहित होना चाहिये। दूसरे शब्दों में ज्ञान, विज्ञान एवं शासन ईश्वरीय देन मानी जाती है और इनका प्रयोग अपने और पराये के साथ समान रूप में होना अत्यावश्यक है।

परन्तु क्या किसी शासन के नियम भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों अथवा समुदायों के लिये भिन्न-भिन्न हो सकते हैं ? निःसन्देह नहीं। यदि होंगे तो शासन सैक्युलर अर्थात् निरपेक्ष नहीं माना जा सकता। इसका अर्थ यह है कि शासन के नियम शासन के अन्तर्गत सब सम्प्रदाओं एवं समुदाओं के लिए समान होंगे। इसी प्रकार लेखक अथवा चिकित्सा का ज्ञान-विज्ञान सबके लिए समान होगा। यह नहीं हो सकता कि लेखक हिन्दुओं के लिये एक बात लिखें, मुसलमानों के लिये दूसरी बात लिखे और ईसाइयों के लिये तीसरी बात लिखें। यह नहीं हो सकता की एक चिकित्सक एक ही रोग की औषध हिन्दू मुसलमान और ईसाई को भिन्न-भिन्न दे।

हमारा कहने का अभिप्राय यह है कि एक साहित्यकार जब साहित्य की रचना करता है तो उसका साहित्य पूर्ण मानव समाज के कल्याण के लिये होना चाहिए। ऐसा करने से ही वह वास्तविक रूप में साहित्यिक माना जा सकता है।

संसार में सच्चाई एक है और उसका प्रकटीकरण पूर्ण समाज के लिए समान होना चाहिए। इसी भाव को वेद में भगवान ने इस प्रकार लिखा है :—

यथेमां वाचं कल्याणी मावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च॥
यजु० २६।२

इसका अर्थ यह है कि कल्याणमयी वाणी, वेदे में

तुमको दे रहा हूँ, वैसे ही तुम भी इसे पूर्ण मानव-समाज–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अन्त्यज और चाण्डालों को दो।

अर्थात् वेद वाणी सैक्यूलरिज्म का प्रतिपादन करती है। परन्तु वेद में यह भी लिखा है :—

प्रत्युष्ट रक्षः प्रत्युष्टा अरातयो निष्टप्त रक्षो।
निष्टप्ता अरातयः। उर्वन्तरिक्षमन्वेमि ॥

यजु—१।७

अर्थात्—दुष्ट पुरुष की भली प्रकार जाँच करके, उसको खूब संतप्त किया जाए। परद्रव्यापहारी पुरुष तथा निर्दय शत्रु भी सन्तप्त हों। इनका ठीक विवेचन अर्थात् अपराध के अनुसार दण्ड का विधान हो और इनको खूब दण्ड मिले। इसके साथ ही महान् अन्तरिक्ष भी हमारे वश में हों।

ये दोनों बातें परस्पर विरोधी नहीं हैं। इसमें कारण यह है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र इत्यादि का न तो कल्याण करने में भेद-भाव किया गया है और न ही उनमें दुष्टों को सन्तप्त करने में। यही निरपेक्षता है। यही सैक्युलरिज्म है।

विडम्बना यह उत्पन्न हो गई है कि वेद के मानने वाले निरपेक्ष नहीं रहे। पहले तो ब्राह्मण, क्षत्रिय इत्यादि वर्णों को जन्म से मान लिया और फिर वेद का पाठन-पठन केवल ब्राह्मणों के लिये सीमित कर दिया। यह इसी प्रकार है कि जैसे हिन्दू की सन्तान हिन्दू और मुसलमान की सन्तान मुसलमान मान ली जाए और फिर शासन का लाभ हिन्दुओं अथवा मुसलमानों तक सीमित कर दिया जाये। न तो वे ब्राह्मण निरपेक्ष कहे जा सकते हैं जिन्होंने ब्राह्मण, क्षत्रिय इत्यादि को जन्म से मान कर वेदवाणी को ब्राह्मणों तक सीमित किया। न ही वह शासन निरपेक्ष कहा जा सकता है जिसमें हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई इत्यादि को जन्म से ऐसा मान, शासन को भिन्न भिन्न समुदायों में भिन्न-भिन्न प्रकार से सीमित किया हो।

कहने का अभिप्राय यह है कि सत्य-झूठ, न्याय-अन्याय उचित-अनुचित, कर्तव्य-अकर्तव्य पूर्ण प्रजा के लिए एक समान होना चाहिये। जो एक मनुष्य के लिए सत्य है, वही दूसरे के लिए भी सत्य है। जो एक के लिये न्याय है, वह दूसरे के लिये भी न्याय हो, सब उचित कार्यों को धर्म की संज्ञा दी गई है और सब अनुचित कार्यों को अधर्म की संज्ञा दी गई है। अतः सत्य, न्याय, उचित एवं कर्तव्य धर्म है। इसी प्रकार असत्य, अन्याय, अनुचित, अकर्तव्य अधर्म हैं। जो एक के लिए धर्म है, वही दूसरे के लिए भी धर्म हो और जो एक के लिए अधर्म है वही दूसरे के लिए भी हो—ऐसा व्यवहार निरपेक्ष अर्थात् सैक्युलर माना जायगा।

सैक्युलर का अर्थ धर्म-अधर्म में निरपेक्ष नहीं। यह धर्म और अधर्म में सीमा-रेखा बाँधे हुए है। हाँ, यह हिन्दू मुसलमान, ईसाई, पारसी, सिख, बंगाली, मद्रासी, गुजराती, आन्ध्रवासी, हिन्दी भाषी, तेलुगू भाषी इत्यादि वर्गों में निरपेक्ष होगा। सैक्युलर का अर्थ किसी मूर्ख ने धर्म-निरपेक्ष किया है। सैक्युलर तो सदा धर्मयुक्त होगा और अधर्म से दूर होगा। हां, इसकी धर्म स्थापना और इसका अधर्म उन्मूलन सब में समान होगा।

अतएव सैक्युलर अर्थात् निरपेक्ष का अर्थ धर्म का पक्ष लेने वाला और अधर्म का विरोध करने वाला ही है। एक सैक्युलर साहित्यकार वही हो सकता है जो निर्भीकता से धर्म का प्रतिपादन करे और अधर्म का खण्डन करे। धर्म और अधर्म के पहचानने में वह भूल कर सकता है, परन्तु जो कुछ भी वह धर्म समझता है अथवा जिसे भी वह अधर्म मानता है, उसका घोष वह निर्भयता से करे। यही उसका सैक्युलरवाद है।

सैक्युलर के इन लक्षणों के अनुसार श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती एक महान् सैक्युलर लेखक, प्रचारक और वक्ता थे। इन्हीं लक्षणों के अनुसार सैक्युलरिज्म के सबसे घोर विरोधी अर्थात् पक्षपाती इस युग में श्री जवाहरलाल नेहरू हुए हैं।

श्री जवाहरलाल नेहरू कश्मीर में मुसलमानों को इस्लाम के नाते अभिमान देने वाले सैक्युलर नहीं कहे जा सकते। इसी प्रकार भारत की संसद् जो मुसलमानों के लिए एकपत्नीक कानून बनाने से डरती है और हिन्दुओं के लिए यही बात कर सकती है, वह सैक्युलर नहीं हो सकती। सन् १९२१ से लेकर सन् १९४७ तक श्री गांधी

जी के नेतृत्व में कांग्रेस मुसलमानों को हिन्दुओं पर अधिमान देने वाली संस्था सैक्युलर नहीं थी। सन् १९४७ के बाद आज तक भारत का शासन मुसलमान और ईसाइयों पर वे प्रतिबन्ध लगाने से डरता हुआ, जो उसने हिन्दुओं पर लगाए हुए हैं, सैक्युलर नहीं हो सकता।

इसी प्रकार जो लेखक अथवा साहित्यकार किसी भी समुदाय अथवा सम्प्रदाय के दोषों को छिपा कर रखना चाहता है, वह निरपेक्ष अथवा सैक्युलर नहीं हो सकता। यह ऐसा ही है कि जैसे कोई डाक्टर किसी मुसलमान श्वास के रोगी को एक दवाई दे और हिन्दू श्वास के रोगी को दूसरी दवाई दे।

अतएव एक सैक्युलर साहित्यकार धर्म का प्रतिपादन करने वाला होगा। वह धर्म-निरपेक्ष नहीं हो सकता। उसके लिए मनुष्य समाज के, यह भी कहा जा सकता है कि प्राणी मात्र के, सब घटक समान हैं। उन सबमें धर्म पर आरूढ़ उसके मित्र हैं और अधर्माचरण में रत उसके शत्रु हैं। यह है सैक्युलरवाद। यदि निरपेक्ष भाव से कहा जाए तो इस भू-तल पर केवल मात्र आर्यसमाज ही निरपेक्षता (सैक्युलरिज्म) के कुछ-कुछ समीप पहुंचता है।

जब कृष्ण ने यह कहा—

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगेयुगे॥

भ० गी०—४।७

तब कृष्ण ने अपनी धर्मनिरपेक्षता अर्थात् सर्वोत्कृष्ट सैक्युलरिज्म का प्रदर्शन ही किया था।

साहित्य समीक्षा

'आर्य जीवन' वेदांक, मूल्य ०.७५

मुख्य सम्पादक :—श्री पं० मदनमोहन जी विद्यासागर

'आर्य जीवन' आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण हैदराबाद का मासिक मुख पत्र है। यद्यपि इसका प्रकाशन नियमित रूप से नहीं होता तथापि समय समय पर इसकी ओर से बड़े सुन्दर विशेषाङ्क निकाले जाते हैं। प्रस्तुत वेदांक भी उसी परम्परा मे से एक है।

इस ग्रङ्क की उपयोगिता निर्विवाद है। इसमें वेद के अतिरिक्त भारतीय स्वतंत्रता संग्राम पर भी कुछ लेख हैं। वेद सम्बंधी कई मूलभूत सिद्धांतों एवं वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द की वेद सम्बन्धी मान्यताओं पर इसमें कई महत्त्वपूर्ण लेख हैं। पूज्य पं० धर्मदेव जी विद्यामार्त्तण्ड, डा० भवानीलाल जी भारतीय, पं० मदनमोहन जी विद्यासागर, प्रो० हरिश्चन्द्र जी, मान्य प्रो० सुरेशचन्द्र जी के लेख अत्यन्त खोजपूर्ण एवं पठनीय हैं। डा० सूर्यदेव जी का 'प्राण-प्यारा वेद' बहुत सरस व सजीव गान है। अङ्क लिखाई, छपाई व सामग्री आदि सब दृष्टियों से भेंट करने योग्य है। सभा प्रधान पं० नरेन्द्र जी बधाई के पात्र जिन्होंने ऐसा सुन्दर अङ्क प्रकाशित करवाया है।

समीक्षक : राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

आर्य मर्यादा का **"वेदाविर्भाव पद्धति विशेषाङ्क"** श्रावणी पर्व पर निकाला। सभी लेख महर्षि दयानन्द जी महाराज के वेदाविर्भाव के दृष्टिकोण को पुष्ट करने वाले हैं। इस नवीन तथा अपने ढंग के निराले विशेषाङ्क के लिये इसके सुयोग्य सम्पादक श्री सिद्धान्ती जी विशेष रूप से बधाई के पात्र हैं। यदि प्रतिपाद्य विषय की गुरुता की दृष्टि से कागज और आवरण कुछ और अच्छा होता और प्रचारार्थ मूल्य कुछ और कम होता तो निस्संदेह इस पुस्तक की उपयोगिता बहुत बढ़ जाती।

—विवेकानन्द

हरयाणा के शिक्षकों का पुनर्गठन

● कृष्णदत्त दीक्षित

राष्ट्र निर्माता जो अपनी अनेकता के कारण गत वर्ष सरकार द्वारा स्थानान्तरित करके एक गेंद की भांति फेंक दिये गए थे, व्यक्तिगत विवादों को हृदय में रखकर हरयाणा सरकार ने गुरु कहलाने वाले समाज को निर्दयता के साथ रगड़ा था, जिसके फलस्वरूप शिक्षा का रहा-सहा ढांचा भी अस्त-व्यस्त हो गया। बात भी सच्ची है परेशान व्यक्ति दूसरों का ध्यान रख भी कैसे सकता है! अध्यापक वृन्द सोच रहे थे कब वंशीलाल सरकार टूटे और हम अपने पुराने स्थानों पर जावें। आशाओं पर पानी फिरने पर अब इन्हें यही मार्ग सूझा यदि कांटे से कांटे नहीं निकलते तो अपने ही संगठन के बल पर अपनी समस्याओं के समाधान किये जावें। इस दृष्टि से हरयाणा के ३५ हजार अध्यापकों के लगभग ७ हजार प्रतिनिधि जीन्द में इक्कीस अगस्त को एकत्र हुए। श्री उजागर सिंह प्रधान हरयाणा सबार्डीनेट सर्विसज फैडरेशन की अध्यक्षता में हरयाणा राजकीय शिक्षक संघ का पुनर्गठन हुआ। अध्यापकों में विशेष उत्साह था विभिन्न शिक्षक संगठनों के अधिकारियों ने उदारता पूर्वक अपना समर्पण कर दिया। सर्वसम्मति से निर्वाचन हुआ। जिसमें प्रधान श्री सोहनसिंह जी जहाजगढ़ (रोहतक), उप-प्रधान बीबी दर्शन कौर अम्बाला, महामन्त्री श्री बृजमोहन शर्मा करनाल कोषाध्यक्ष, श्री ताराचन्द गुप्त बहादुरगढ़ लेखा-परीक्षक, श्री चरणसिंह भालौठ (रोहतक) चुने गए।

अध्यक्ष महोदय ने सभी अध्यापकों को ईमानदारी से अपने कर्त्तव्य पालन करने की शपथ दिलाई यह एक सराहनीय कार्य था। सभी नव निर्वाचित अधिकारियों ने संगठन के लिए पूर्ण निष्ठा से कार्य करने का विश्वास दिलाया और आशा प्रकट की कि कर्तव्य और अधिकारों पर आरूढ़ रहने के लिए सभी अध्यापकगण ही नहीं अपितु सभी सरकारी कर्मचारी एक मत होकर संगठन का सहयोग देंगे।

अन्त में संगठन की ओर से नव निर्वाचित राष्ट्रपति श्री वी० वी० गिरि को बधाई देते हुए निम्नलिखित प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हुए।

१. अध्यापकों के मंहगाई भत्ते की अनुचित कटौती समाप्त की जावे।

२. अध्यापकों के विशाल स्थानान्तरण से शिक्षकों एवं शिक्षा को आघात लगा है अतः अध्यापकों को पुनः उन्हीं स्थानों पर भेजा जावे।

३. अध्यापकों पर लगे व्यावसायिक-कर को शीघ्र समाप्त किया जावे।

शिक्षा मनुष्य का जीवन आधार है। हमारी संस्कृति में शिक्षक को सर्वोच्चपद प्राप्त है। शिक्षकों का सर्वाधिक सम्मान होना चाहिये। इन्हें विशेष सुविधा प्रदान की जानी चाहिये। हरयाणा सरकार का पूर्ण रूप से स्थानान्तरण एक निन्दनीय कार्य था। दोषी को ही दण्ड मिलना चाहिये। सब को एक ही लाठी से हांकना बुद्धि का परिचायक नहीं। इस वर्ग का सम्मान रखा जाना चाहिये। अध्यापक वर्ग को भी चाहिये वे उदारता पूर्वक अपने शिक्षा जैसे पवित्र दान को देने में कोई कसर न रखें। प्रथम कर्त्तव्य परायणता और फिर अधिकारों के लिए संघर्ष करना चाहिये। संगठन की ही सदैव जीत होती है। सरकार से मेरा निवेदन है कि अध्यापक वर्ग के साथ सहानुभूति रखे तभी शिक्षा की परिपाटी स्थिर रह सकती है।

★

हरयाणा के हृदय से

ओम्प्रकाश पत्रकार

आज से तीन वर्ष पूर्व केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त एक निष्पक्ष आयोग ने चण्डीगढ़ के भाग्य का फैसला हरयाणा के हक में दे दिया। जबकि खुद केन्द्रीय सरकार ने अपने द्वारा नियुक्त आयोग के फैसले को ठुकरा कर उस पर अपना निर्णय थोंप कर चण्डीगढ़ अपने अधीन ले लिया। क्योंकि केन्द्र नहीं चाहता था कि कमीशन चण्डीगढ़ का फैसला हरयाणा के हक में करे। वह तो उसे पंजाब को देना चाहता था और उसे उसकी पूर्ण आशा भी थी। कमीशन का ढ़ोंग तो केन्द्र ने केवल अपने न्याय का प्रदर्शन करने के लिए रचा था जो पूर्ण न हुआ। प्रश्न उत्पन्न होता है केन्द्र ऐसा क्यों चाहता था? इसका कारण स्पष्ट है कि केन्द्र सिक्खों से डरता है जब सिक्ख लाल-लाल आँखें निकाल नंगी तलवार लहरा कर ऊँची गर्ज से दहाड़ते हैं तो श्रीमती इन्दिरा गांधी की आँखों के सामने वो दृश्य घूम जाता है जब सिक्खों ने यह नारा "जब खाण्डा खड़कूगा तद् नेहरू भज्जूगा" देकर उसके बाप को अपमानित किया था और नेहरूजी अपना भाषण अधूरा छोड़ दिल्ली में आकर दम लिया था।

केन्द्र की दृष्टि में पंजाबी सिक्ख बहादुर हैं और हरयाणा वाले कायर डरपोक! वह सिक्खों को आदमी समझता है और हरयाणा वालों को भेड़-बकरियाँ!! अन्यथा क्या मजाल एक निष्पक्ष आयोग जिसे स्वयं केन्द्र नियुक्त करता है और फिर उसके फैसले को स्वयं रद्द कर देता है! यदि शाह आयोग ने फैसला पंजाब के हक में कर दिया होता तो केन्द्रीय सरकार की क्या मजाल थी कि उसे बदल देती। इससे स्पष्ट है कि केन्द्र नहीं चाहता चण्डीगढ़ हरयाणा को जाये। वह तो उसे पंजाब को देना चाहता है और यही कारण है उसने तीन वर्ष से इस मामले को लटका रखा है क्योंकि यदि वह हरयाणा को देना चाहता तो शाह कमीशन के फैसले को क्यों रद्द किया जाता।

इतना होने पर भी यदि हरयाणा वाले केन्द्रीय सरकार से किसी न्याय की आशा करते हैं तो वह आंखें रखते हुए अन्धे हैं और दिमाग रखते हुए बेवकूफ। आज हरयाणा के सामने केवल दो ही रास्ते हैं या तो वह सबर की घूंट पीकर अन्याय के सामने घुटने टेक दें और चण्डीगढ़ पंजाब को सौंप दें या फिर ताल ठोंक कर वीरों की भाँति मैदान में उतरें और अन्याय का मुकाबला करें और केन्द्रीय सरकार को यह अनुभव करा दें कि उसकी हरयाणा वालों के प्रति जो धारणा बैठ गई है वह गलत है। हम ऐसा अनुभव करते हैं कि केन्द्रीय नेताओं ने महाभारत को अर्जुन के हथियार डालने और युद्ध न करने की घोषणा तक ही पढ़ा है। क्योंकि यदि वह अर्जुन के पुनः हथियार उठाने और दुष्ट अन्यायियों का संहार करने वाला अगला अध्याय भी पढ़ते तो कुरुक्षेत्र में बसने वाली उस मार्शल कौम से इस प्रकार का अन्याय न करते। मैं हरयाणा वालों से कहूंगा कि खाली विधान सभा में प्रस्ताव पास करने से और इस प्रकार के एक-दो जलसे जलूसों से बात न बनेगी। केन्द्रीय सरकार से उसी भाषा में बात करनी चाहिये जिस भाषा में अकाली उन से करते हैं।

———

चण्डीगढ़ को हरयाणा में लाने के लिये आर्यसमाज के नेतृत्व में तथा सभी पक्षों के सहयोग से जो आन्दोलन आरम्भ हुआ है—उसके प्रति सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् अपनी पूर्ण सहानुभूति प्रकट करती है एवं पूर्ण सहयोग का आश्वासन देती है।

छात्रों की अन्याय पर विजय

● नारायणसिंह एडवोकेट (रोहतक)

बी. एड. के प्रवेश के लिए इस वर्ष लगभग सभी संस्थाओं में धांधली मची। इस बात से सभी लोग परिचित हैं। कितनी ही शिक्षण संस्थाओं में भ्रष्टाचार अपने निकृष्टतम रूप में प्रकाश में आया। सिफारिशों की धड़ाधड़, रिश्वत की गर्मा-गर्मी तथा नातावाद के कारण शिक्षा के क्षेत्र में अन्धकार सा छा गया। ऐसा अनुभव होने लगा कि शिक्षा का भविष्य अत्यन्त अन्धकारमय है। प्रशिक्षण केन्द्रों में इतनी भीड़ का एक कारण तो यह है भी भारतीय शिक्षा प्रणाली लंगड़ी तथा लूली है। वह विद्यार्थियों को मान्यता प्रदान करने के पश्चात् सड़कों पर धक्के खाने एवं रोजगार दफ्तरों के चक्कर काटने के लिए छोड़ देती है दूसरा कारण है शिक्षकों के वेतन में वृद्धि तथा कार्य का अभाव। चोखे दाम पा कर भी खरी मजूरी नहीं करनी पड़ती।

रोहतक का छोटूराम कालेज भी इसका अपवाद न रह सका। यहाँ भी सत्ता का दुरुपयोग एवं अपने विरोधियों का विरोध खुलकर किया गया तथा बी.एड. में प्रवेश को अपनी विरोध ज्वाला को शांत करने का उपयुक्त और सामयिक साधन मान कर खूब हथकण्डे चले तथा भोले भाले निरपराध विद्यार्थी पद लोलुप अधिकारियों की कुदृष्टि का शिकार बने। 'गधा खेत खाए, जुलाहा मारा जाए' विरोध हो दो धड़ों का और उसका दण्ड भुगतें छात्र। रोहतक की जाट संस्थाएँ शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़े वर्गों एवं समस्या को आगे लाने के लिए स्थापित की गई थी। जाटों का इसमें विशेष सहयोग रहा है। इसमें भी कोई सन्देह नहीं हो सकता। फिर भी यदि इन देहात में बसे गरीब और किसानों को इसका लाभ न मिले तो इससे अधिक अन्याय और क्या हो सकता है। इस बार कुछ नए मनचले से एवं स्वयं को महान् बुद्धिमान समझने वाले नवयुवक एक असहाय बूढ़े का हाथ पकड़ कर उसी के सहारे मैदान में उतरे। यही सोच कर कि अवसर पाते ही बुड्ढे छोड़ मनमानी करेंगे। और उन्होंने किया भी ऐसा ही। चौ० अजीत सिंह दहिया तथा जौ० चन्द्र सिंह दलाल प्रधान के चुनाव के समय जो अत्याधिक शक्ति चौ० मांडूसिंह एम० एल० ए० के पक्ष में लगा रहे थे वह शायद इस दिन को लक्ष्य कर के ही किया गया था। उनका विचार था कि चौधरी साहब एक सज्जन एवं सरल प्रकृति के व्यक्ति हैं अतः इनको हो-हल्ला कर के प्रधान बना दिया जाए तथा दूसरे महत्त्वपूर्ण पदों को स्वयं कार्य कारिणी में घुस कर सम्भाला जाये। और इस प्रकार मनमानी करने की छूट रहेगी। प्रवेश के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की शर्तें लगाई गई। जिन्हें आवश्यकतानुसार तोड़ा मरोड़ा भी जा सके। सिफारशियों के दल के दल आने लगे और इन लोगों की एक बहुत बड़े महन्त की भाँति पूजा होने लगी। इस प्रकार राजनैतिक अखाड़े में इन्हें चारों ओर अपनी ही विजयी के ढोल बजते दिखाई दिये जिन्हें कभी कोई पूछता तक न था उनकी पूजा होने लगी परन्तु ऐसी स्थिति अधिक देर न चल सकी। सार्वजनिक संस्थाओं में ऐसा हो भी नहीं सकता। जाट कालिज से निकले हुए स्नातकों को बिना शर्त प्रवेश दिया जाता रहा था उस बात को मजाक समझ कर टाल दिया गया और दूसरी बेहूदगियां सामने आने लगी। लड़कियों को जरूरत से कहीं अधिक सीटें दी गई। कोठियों में बैठ कर प्रवेश किये गए। संचालन समिति के प्रधान चौ० मांडूसिह जिस समय चण्डीगढ़ मुख्य मन्त्री की कोठी में बैठे आराम फरमा रहे थे उस समय उनके सहयोगी एवं मातहत बी. एड्. के प्रवेश को लेकर छात्रों के गले पर छुरी चला रहे थे। सभी हैरान थे कि ऐसे कमजोर व्यक्ति को इतनी बड़ी संस्थाओं का क्या शौक था। यह मामूली बात नहीं

(शेष पृष्ठ २८ पर)

आर्यसमाज और रचनात्मक शिक्षा-प्रणाली

● जगदीशचन्द्र वर्मा

शोध-स्नातक, एम. ए. (अर्थशास्त्र) एम. काम., एल. एल. बी., सी. ए. आई. आई. बी.

शिक्षा का सम्बन्ध मानव समाज से आदि काल से रहा है। समय-समय पर शिक्षा-प्रणाली में सुविधा और परिस्थितियों के आधार पर परिवर्तन होते रहे हैं। शिक्षा का प्रसार और प्रचार आदि काल से परिवर्तनशील होते हुए भी तीव्र गति से होता चला आ रहा है। शिक्षा किसी भी प्रकार की हो, समाज को सदैव लाभदायक सिद्ध होती है। लेकिन समाज को किस प्रकार की शिक्षा प्रणाली की एक वास्तविक स्थिति में आवश्यकता होती है यह स्थिति विशेष से विश्लेषणात्मक निरीक्षण पर ही आँका जा सकता है।

देश की वर्तमान स्थिति के आधार पर जब कि देश में शिक्षित वर्ग में बेरोजगारी दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, नवयुवकों के सामने कोई विशेष उद्देश्य अथवा रचनात्मक कार्य की लक्ष्य-शून्यता है, प्रचलित शिक्षा-प्रणाली को दोषी ठहराने की बात साधारण आलाप बन गई है। यदि प्रचलित शिक्षा-प्रणाली को दोषी मान भी लिया जाये तो उसके सुधार के लिए सुझाव देना अथवा योजना बनाना देश के नागरिकों का ही कार्य है। विशेषकर ऐसी संस्थाओं का कार्य जैसे आर्यसमाज।

आर्यसमाज सदैव से ही एक सुधारवादी रचनात्मक कार्य में अग्रसर नव-निर्माण और जाग्रति पैदा करने वाली संस्था रही है। लेकिन इस संस्था के वर्तमान कार्य क्रम को देखकर ऐसा आभास होना भी कठिन ही है। आर्यसमाज के अपने स्कूल, कालेज हैं जहाँ शिक्षाक्रम व पाठ्य-सामग्रियों में अन्य कालेजों की बनिस्बत कोई विशेष अन्तर नहीं है। यदि आर्यसमाज वास्तविक रूप में समस्त देश में जाग्रति और नव-निर्माण पैदा करने की बात करता है तो अपने स्कूल और कालिजों का अपने समाज सदस्यों का चलन और प्रचलन एक सुधारवादी बुनियाद पर स्थित करने के लिए तैयार रहे।

देश की वर्तमान बेरोजगारी की स्थिति में शिक्षा में सर्वप्रथम सुधार नवयुवकों को रोजगार के लिए तैयार करने का है। इसके लिए यह आवश्यक है कि प्राथमिक, माध्यमिक, उच्चमाध्यमिक तथा कालिज स्तर पर शिक्षा में इस प्रकार से परिवर्तन किये जाएँ कि प्रत्येक श्रेणी से शिक्षा प्राप्त बालक या युवक स्वतंत्र रूप से स्वावलम्बी और आत्म-निर्भर बन सकें और अपनी रोजी अर्जन का कार्य कर सकें।

इस प्रकार की शिक्षा का अभाव आज उस समय अधिक महसूस होता है जब कि एक सुशिक्षित युवक जो कई वर्षों से बेरोजगार रहा और अन्त में किसी रोजगार पाने की आशा से अपना धर्म छोड़कर दूसरा मत स्वीकार कर लेता है, विदेश चला जाता है। जहां उसे अपने नये धर्म के नाम पर ही रोजगार भी प्राप्त होता है। इस प्रकार की घटनायें कुछ कम लिखे पढ़े लोगों में तो आमतौर पर होती रहती हैं। धर्म-परिवर्तन के लिए इन्सान की आर्थिक स्थिति एक विशेष महत्त्व रखती है। इन्सान का वैसे धर्म तो मानवता ही है—एक व्यक्ति दूसरे के प्रति नम्रता व आदर का व्यवहार करे और अहिंसा का आचार अपनाए। लेकिन आर्थिक अभावों में दुष्कर जीवन को सुगम बनाने के प्रलोभन जो दूसरे धर्मावलम्बी दे देकर हिन्दुओं को धर्मपरिवर्तन करके इसाइयत की ओर खींच रहे हैं इसको रोकने के लिए सुगम व सुविधाजनक शिक्षा-प्रणाली का नियोजन करना आवश्यक है। शिक्षा प्रणाली को स्वावलम्बी बनाने के लिए कुछ सुझाव नीचे दिये गये हैं जिनको आर्यसमाज जैसी संस्थाएं राष्ट्र-निर्माण के हेतु कार्यरूप में परिणत कर सकती हैं।

प्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थी को पठन-पाठन, लेखन के समर्थ बनाने के अतिरिक्त चरित्र-निर्माण और अच्छी आदतें सिखाने तक ही सीमित रखा जा सकता

है लेकिन माध्यमिक और उच्च माध्यमिक शिक्षा प्राप्त युवक इस योग्य बन सके कि वह अपना अर्थोपार्जन कार्य स्वयं स्वावलम्बी रूप से चला सके, शिक्षा प्रणाली को सुधारना आवश्यक है। इसके लिये माध्यमिक तथा उच्च-माध्यमिक स्कूलों के छात्रों को घरेलू तथा लघु उद्योगों में शिक्षा दी जानी चाहिए जिसके लिये इन स्कूलों में नियमित रूप से लघु उद्योग-धंधे खोले जायें और छात्रों को शिक्षित करने के बाद इन्हीं उद्योग-धन्धों में रोजगार दिया जाये या इन स्कूलों में कुछ विभाग ऐसे खोले जायें जिनका कार्य छात्रों की सहकारी समिति बनाकर सरकारी संस्थाओं से ऋण लेकर लघु उद्योग खोलकर छात्रों को रोजगार दिया जाए।

इस प्रकार के स्कूल स्थापित करने से समाज को कई लाभ होंगे। छात्रों को रोजगार देने के अतिरिक्त उद्योग-धन्धों का विकेन्द्रीकरण होगा और स्थानीय विकास में सहायता भी मिलेगी। स्थानीय साधनों का सुगम तथा मितव्ययिता के साथ उपयोग भी हो सकेगा। समाज में खुशहाली और आर्थिक दशा में उन्नति तथा सुधार भी सम्भव हो सकेगा। एक ही प्रकार का उद्योग खोलने से छात्रों को कई प्रकार की प्रशिक्षा (ट्रेनिंग) मिल सकेगी। उदाहरणतः यदि लेथ पर काम करने का प्रशिक्षण दिया जाता है तो लेथ मशीन द्वारा निर्मित वस्तुओं का विक्रय, लेखा-पालन, बैंकों तथा अन्य संस्थाओं से सम्बन्ध स्थापित करने की बातों में भी प्रशिक्षण मिलेगा। इस प्रकार सामुदायिक प्रशिक्षण का कार्य सिद्धहस्त हो सकेगा।

प्रशिक्षण के पश्चात् जो विद्यार्थी रोजगार पाने के साथ-साथ कालिज शिक्षा प्राप्त करने के इच्छुक हैं वह सायंकालीन कालेजों में अपने चुने हुए विषयों में शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

कालिजों में भी इसी प्रकार से शिक्षा-प्रणाली में सुधार लाया जा सकता है। कालिजों का सम्बन्ध बड़े कारखानों से जोड़ा जा सकता है जिन में कालिज के छात्र प्रतिदिन नियमित रूप से अपने चुने हुए विषयों में, उदाहरणतः टेकनीकल, तकनीकी कार्य, इंजीनीयरिंग, सेल्समैन, एकाउन्टेन्ट, परसोनल विभाग, प्रशासन विभाग आदि में शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। इस प्रकार शिक्षा तथा प्रशिक्षण ग्रहण करने के पश्चात् ये सब छात्र टोलियों में सहकारी समिति अथवा संयुक्त सम्पत्ति प्रमंडल अथवा साझेदारी व्यापार मंडल बनाकर अपने उद्देश्यों के समर्थ उद्योग स्थापित करके स्वयं को रोजगारी से लगा सकते हैं।

संसार के बहुत से देशों ने समाजवादी तथा पूंजीवादी—इस प्रकार की शिक्षा-प्रणाली अपनाई हुई है जिससे वहाँ की आर्थिक दशा में विशेष सुधार हुआ है और शिक्षित लोगों को रोजगार मिलने में सुविधा हुई है तथा देश की आर्थिक स्थिति का दर्जा भी ऊंचा उठा है।

आर्यसमाज के स्कूलों और कालिजों में यदि इस प्रकार की कार्य-प्रणाली अपना कर शिक्षा में सुधार लाकर आर्य नवयुवकों की स्थिति को सुधारा जा सकता है तो आर्य नवयुवक आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न होकर अपना विशेष समय, शक्ति तथा अर्थ समाज सेवोपयोगी कार्यों में लगाकर देश के उत्थान में पूर्ण सहयोग दे सकेंगे और देश के बढ़ते हुए धर्म-परिवर्तन को पतन से बचा सकेंगे।

वर्तमान शिक्षा-प्रणाली नवयुवकों को ऐसा आश्वासन नहीं देती। नवयुवकों की शिक्षा पूर्ण होती है माता-पिता की सहायता एवं आर्थिक-योगदान से और शिक्षा पूर्ण होने के पश्चात् नवयुवक नौकरी के लिये विवश हो जाता है क्योंकि शिक्षा के माध्यम से जो ज्ञान प्राप्त हुआ है वह लेखन, पठन-पाठन और अन्य पाठ्यक्रम के विषयों तक सीमित है जिससे मस्तिष्क का तो विकास हो जाता है किन्तु जीवन के अन्य पहलुओं में वह व्यवहार-शून्य ही रहता है। मस्तिष्क का विकसित होना ही शिक्षा का एक-मात्र उद्देश्य नहीं माना जा सकता। इसके साथ-साथ जीवन-यापन के साधनों को जुटा कर स्वावलम्बन और आर्थिक क्रियाओं को स्वतन्त्र रूप से अपना कर धनोपार्जन करना और उपार्जित धन का समाज सेवा-भाव से उपयोग करना कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण शिक्षोद्देश्य है। इस प्रकार के वातावरण में नवयुवक अर्थोपार्जन से निश्चिन्त होकर मानव-हित सम्बन्धी अनेक कार्यों में तन, मन तथा धन से निःस्वार्थ सेवा करने में सफलीभूत हो सकेगा। समाज

में ऐसा वातावरण जन-कल्याण को सुगम तथा सरल रूप में प्रेरित कर सकेगा। यदि व्यक्ति-विशेष के मस्तिष्क के विकास से समाज को कोई लाभ नहीं पहुँचता तो ऐसी शिक्षा जो मस्तिष्क के विकास पर ही जोर देती रहे और अन्य पहलुओं को अदृश्य कर दे सामाजिक दृष्टिकोण से महत्त्वहीन ही है। इसीलिए शिक्षा-प्रणाली जहाँ व्यक्ति के मस्तिष्क के विकास और चरित्र-निर्माण का आश्वासन देती है वहाँ उसके भविष्य की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साधनों को जुटाने और आर्थिक क्रियाओं व धनोपार्जन के कार्यों में प्रशिक्षण देने का भी श्रेय प्राप्त करे तभी शिक्षा समाज को तथा समाज का व्यक्ति विशेष को योगदान प्राप्त हो सकता है।

इस विषय में यदि हम प्राचीन आर्यावर्त में प्रचलित शिक्षा-प्रणाली का अध्ययन करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षा का अर्थ एक विशेष रूप में व्यक्ति विशेष की समाज सेवा के लिए तत्पर करने से माना जाता था। साधारण व्यक्ति भी लेखन-पठन का अभ्यास करते हैं इस उद्देश्य से कि आर्थिक क्रियाओं को सुविधा और सुगमता से अपनाने में सफल हो सकें। उच्च-शिक्षा विशेष कर सीमित थी और उच्च-शिक्षा प्राप्त व्यक्ति को अतुल्य श्रद्धा और सम्मान समाज में मिलता था। इस प्रकार की शिक्षा-प्रणाली की रूप-रेखा की आज भी देश में आवश्यकता है। यदि उच्च-शिक्षा प्राप्त नवयुवक को समाज में ऐसा स्थान नहीं दिया गया तो उच्च शिक्षा महत्त्वहीन हो जायेगी जैसे कि आज के वातावरण में प्रचलित परिस्थितियों एवं व्यवहार द्वारा स्पष्ट है।

वर्तमान काल में देश की शिक्षा सम्बन्धी परिस्थितियाँ असन्तोषजनक हैं। उच्च-शिक्षा प्राप्त व्यक्ति को नौकरी के लिए जगह-जगह जाना पड़ता है और अपमानजनक वातावरण में भी जीविकोपार्जन के लिये अपने व्यक्तित्व को दबा कर काम करना पड़ता है। ऐसी स्थिति में मानसिक असन्तुलन तो व्यक्ति विशेष को सहना पड़ता है और समाज को विश्व की दृष्टि में घोर निन्दा। भारत से उच्च शिक्षा प्राप्त नवयुवक जीविकोपार्जन के साधनों की सुगमता तथा सरलता से अनुपलब्धिता के कारण स्वदेश छोड़ कर विदेश जाते हैं, अपनी राष्ट्र-संस्कृति और सभ्यता को त्याग कर विदेशी सभ्यता एवं संस्कृति का आलिंगन करते हैं और देश के वर्तमान वातावरण से इतने निराश हो जाते हैं कि पुनः भारत वापिस आने का नाम तक नहीं लेते, विदेशों में ही बस जाते हैं। ऐसे नवयुवकों से साक्षात्कार करने से ऐसा अनुभव हुआ कि मातृ-देशभक्ति की भावना उनमें प्रबल होते हुए भी वह स्वदेश वापिस नहीं आना चाहते क्योंकि इस देश का समाज अभाव और अपमान से दलित है। मानव अभाव सहन कर सकता है लेकिन अपमान नहीं। यह शिक्षा-प्रणाली का दोष है, व्यक्ति विशेष का अथवा समाज की घोर अवहेलना या विडम्बना का ?

जिस प्रकार की परिस्थिति आज भारत में वर्तमान है ऐसी परिस्थिति इंग्लैंड में ७०-८० वर्ष पूर्व विद्यमान थी जबकि वहाँ के शिक्षित लोग एवं वैज्ञानिक स्वदेश छोड़ कर विदेशों में जा जाकर बस रहे थे विशेषकर आस्ट्रेलिया और अमरीका में जहाँ शिक्षा का महत्व था, शिक्षा द्वारा आदर मिलता था तथा धनोपार्जन व जीवनयापन की सरलता तथा सुगमता थी। आज अमरीका की, सर्वमुखी उन्नति का कारण यह उच्च शिक्षित वर्ग ही है जिन्होंने स्वदेश छोड़ कर विदेशों की नागरिकता अपना कर अपने गुणों तथा कार्यों के द्वारा चमत्कार पैदा किया। इंग्लैंड की सरकार ने इस तरफ शीघ्र ही ध्यान दिया और विभिन्न प्रकार की सुविधाएँ शिक्षित वर्ग को अर्पित की इस उद्देश्य से कि वह अपनी प्रतिभा स्वदेश में ही रह कर चमकाएँ।

भारत की स्थिति आज ऐसी ही है। लेकिन भारत सरकार ने इस विषय में कोई ठोस कदम नहीं उठाया है। शिक्षा का एक महत्वपूर्ण विषय होते हुए भी राष्ट्र आय का केवल ४% अंश ही इस पर व्यय किया जाता है वह भी नियोजित रूप में नहीं जिससे कि समाज में स्वावलम्ब और आत्म-निर्भरता आ सके। ऐसी स्थिति में भारत का शिक्षित-वर्ग विदेशों में जाकर बस जायेगा और भारत शिक्षा का प्रचार तथा प्रसार करते हुए भी कंगाल ही रह जायेगा।

इस विषय में जापान का उदाहरण विशेषकर उपयुक्त होगा। एक-डेढ़ शताब्दी पूर्व जब जापान में उद्योग-क्रांति हुई तो उसका श्रेय भी उच्च शिक्षा प्राप्त नवयुवकों को था जो कि विदेशों में जाकर प्रशिक्षण प्राप्त करके स्वदेश

लौटे और उद्योग-स्थापन, राष्ट्र निर्माण तथा आर्थिक उन्नति में सहायक बने। उस समय में जापान की सरकार देश के शिक्षा प्राप्त नागरिकों को विभिन्न आदर का आकर्षण देकर तो देश में बुलाती ही थी और नागरिकों का भी नैतिक स्तर इतना ऊँचा था कि वह स्वदेश में ही आकर रहना पसन्द करते थे। ऐसी स्थिति जब तक भारतवर्ष में कायम नहीं होगी, यहाँ पर समाज कल्याण, राष्ट्र-निर्माण तथा आर्थिक उत्थान असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।

इसलिये वर्तमान काल की सबसे बड़ी आवश्यकता है कि राष्ट्र की शिक्षा सम्बन्धी सरकारी नीति में परिवर्तन समाज की वर्तमान परिस्थितियों के अनुरूप किया जाये। यदि समाज सरकार की इस नीति को बदलवाने में असमर्थ है तो समाज स्वयं अपने कार्यों द्वारा इस नीति को बदल सकने में सफल हो सकता है। इसके लिए प्रत्येक नागरिक को अपने स्वार्थ-हित का बलिदान करना होगा, समाज सेवा के लिए अपने आराम की आहुति देनी होगी, अपनी यथाशक्ति और शिक्षानुसार अर्थ एवं कर्म के रूप में सहयोग देना होगा और देश को एक नव-निर्माण की ओर अग्रसर करने का व्रत धारण करना होगा।

देश की वर्तमान स्थिति में जब कि स्कूल और कालिजों का संचालन सरकार की नीति पर आधारित है और राज्य ही शिक्षा का आर्थिक भार भी सम्भाले हुए हैं, किसी संस्था के लिए इस प्रकार की रचनात्मक शिक्षा-प्रणाली का आह्वान करना कठिन प्रतीत होता है। लेकिन यह लघु कठिनाई हमें हमारे उद्देश्य से विमुख नहीं कर सकती यदि हम दृढ़ निश्चय करें इस प्रणाली को परिवर्तित करने का और समाजोपयोगी बनाने का। इस दृढ़ निश्चय व सम्बन्ध के द्वारा शिक्षा सम्बन्धी सुधार देश में लाने के विषय पर दो दृष्टिकोणों से विचार किया जाना आवश्यक है, प्रथम दृष्टिकोण है मनुष्य का व्यक्तिगत प्रयास और दूसरा दृष्टिकोण है राजकीय प्रयत्न।

सर्वप्रथम मनुष्य के व्यक्तिगत प्रयास द्वारा शिक्षा-सुधार कैसे पूर्ण हो सकता है इस विषय पर विवेचन करते हैं तत्पश्चात् राजकीय प्रयत्न पर।

शिक्षा सुधार में व्यक्तिगत प्रयास का तात्पर्य व्यक्ति विशेष और व्यक्तिगत संस्थाओं के सहयोग तथा कर्मयोग दान से है जिसके द्वारा शिक्षा नवयुवकों को साक्षरता के साथ-साथ स्वावलम्बी, आत्म-निर्भर और धनार्जन के कार्यों में निपुण, योग्य तथा व्यवहार कुशल बना सके। शिक्षा का सही मानों में अर्थ तो यही है कि शिक्षित युवक वर्ग ऐसी स्थिति में आ जाये कि वह धनोपार्जन के साधन जुटा कर सुगमता से जीवन-यापन की दृष्टि से निश्चित हो सके और शेष समय को शोध तथा अनुसंधान के कार्यों में लगा कर देश को चहुंमुखी उन्नति की ओर अग्रसर कर सके। भारत का नागरिक विदेश जाकर नई खोजें कर सकता है, परन्तु देश में रह कर उसे रोजगार के लिए भी दर-दर भटकना पड़ता है। ऐसी स्थिति में देश का भविष्य उज्ज्वल तथा सुन्दर आशातीत प्रतीत नहीं होता है। इसीलिये प्रत्येक समाज के नागरिक का यह कर्त्तव्य है कि वह शिक्षित वर्ग को उनकी योग्यता के अनुसार कार्य में व्यस्त कर सके, रोजगार दे सके, आर्थिक रूप से सामाजिक सुरक्षा प्रदान कर सके ताकि शिक्षित वर्ग रोटी, कपड़े, शयन की चिन्ता से विमुक्त होकर स्वतन्त्र रूप से समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति और स्वयं अपनी आत्मा के प्रति स्वतन्त्र मस्तिष्क से नई खोज, अनुसंधान तथा आविष्कार करके कर्त्तव्य निभा सके। इस प्रकार का वातावरण, स्थिति तथा प्रेरणा पैदा करने का कार्य मनुष्य मात्र के व्यक्तिगत प्रयास व्यक्तित्व तथा प्रतिभा पर निर्भर करता है जिसे कार्यान्वित में निम्न प्रकार से परिणत किया जा सकता है—

१—राष्ट्र की समाज की, व्यक्ति विशेष की तथा परिवार की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा प्राप्ति होनी चाहिये। ऐसा तभी सम्भव है जबकि प्रत्येक नागरिक ऐसा विचार करे कि शिक्षा के पश्चात् उसके परिवार के सदस्य स्वतन्त्र-रूप से जीविकोपार्जन कर सकेंगे और नौकरी की तलाश में व्यर्थ अपनी शक्ति तथा प्रयास निष्फल नहीं करेंगे। ऐसा कहने का अभिप्राय यह है कि शिक्षा का उद्देश्य नौकरी प्राप्त करना न होकर अपना कार्य स्थापित करने का होना चाहिये। अपना ऐसा कौन सा कार्य किया जाये जो सुगमता, सरलता से हो सके। इस बात का निश्चय समाज की आवश्यकता के दृष्टिकोण से करना होगा। ऐसा निश्चय करने में परेशानी नहीं हो

सकती यदि समाज सेवा का भाव मन में है और समाज की परिस्थितियों से पूर्ण भिज्ञता है।

२—व्यक्तिगत संस्थाओं को ऐसे उद्योग खोलने चाहियें जहाँ उनके मतों से सम्बन्धित लोग रोजगार पा सकें और आर्थिक परेशानी से दूर हो सकें। उदाहरणतः शिक्षित वर्गों को संगठित करके सहकारी समितियों का निर्माण किया जा सकता है और रोजगार तथा धनार्जन के साधनों की उपलब्धता प्रदान की जा सकती है। इस प्रकार का योग-दान व्यक्ति विशेष भी दे सकते हैं। नवयुवकों को एक बार रास्ता दिखाने और अग्रसर करने की देर है, नव-निर्माण की मंज़िल फिर आसान हो जाना सहज है। इसके लिए संस्थाओं को प्रारम्भिक रूप में धन-योग, बुद्धि-योग, श्रम-योग से सहायता देनी होगी।

३ देश में उपलब्ध शिक्षा के साधनों का दुरुपयोग न किया जाये। यदि उपरोक्त दो सुझावों को कार्य रूप में परिणत कर दिया जाये तो देश के उपलब्ध शिक्षा साधनों का सदुपयोग भी अवश्यम्भावी है। आज तो समाचार पढ़ कर मन को दुःख होता है कि कश्मीर में इंजीनियर चाय की दुकान खोल कर बैठे हैं, वकालत पास नवयुवक क्लर्की करते हैं, इंजीनियरिंग डिप्लोमा लेकर स्टेनोग्राफर बनने को मजबूर होना पड़ता है, बी० ए० पास करके जूता-पालिश का काम करना पड़ता है आदि उदाहरण शिक्षा के साधनों के दुरुपयोग के रूप हैं। ये सब देश की निन्दा और निरादर के कारण हैं। इनको व्यक्तिगत प्रयास के द्वारा ही दूर किया जा सकता है।

४—यदि व्यक्ति विशेष के पास उपयुक्त साधन उपलब्ध हैं जिनको अपना कर उनकी सन्तान जीविकोपार्जन सुगमता से करके देश के हित में सर्व प्रकार से योग-दान दे सकती है तो उन साधनों का सदुपयोग करने मात्र से ही सम्बन्धित शिक्षा युवक-युवतियों को दी जानी चाहिये।

५—यदि सम्भव हो सके तो अपना समाज के प्रति कर्त्तव्य समझ कर प्रत्येक संस्था को तथा व्यक्तियों को अपने कार्य में प्रशिक्षण देने के गृह खोलने चाहियें जहाँ इस प्रकार का प्रशिक्षण प्राप्त करके नवयुवक रोजगार या नौकरी के लिए न दौड़ लगा कर अपना कार्य स्वयं कर सके।

६—समाज के ख्याति तथा धन प्राप्त व्यक्तिगण तथा संस्थाएँ नये स्कूल और कालिजों का खोलना बन्द करके पैसे का सदुपयोग नए कारखाने तथा उद्योग खोल कर नवयुवकों को रोजगार प्रशिक्षण दें और राष्ट्र को जागृति तथा नव-निर्माण की ओर अग्रसर करें।

६—इस प्रकार से जो नव-निर्माण एक काल में स्थापित किया जाये उसको सर्वथा क्रमशील रखने के लिए आने वाली पीढ़ियाँ अनुकरण करें और समाज को गतिशील बनाये रखने का प्रयास संलग्न रहे।

इस प्रकार के व्यक्तिगत प्रयास देश के प्रत्येक शहर तथा ग्राम में किये जाने आवश्यक हैं। लेकिन इस प्रकार के प्रयास करने के लिए जनता को जागरूक करने का कार्य भार भी किसी एक संस्था को सम्भालना होगा और वह संस्था मेरी दृष्टि में आर्यसमाज से बेहतर कोई और नहीं है।

यह जानकर हर्ष होता है कि आर्यसमाज में कुछ संस्थाएँ निःस्वार्थ और सेवा-भाव प्रेरित नवयुवकों के नेतृत्व में उद्घाटित हुई हैं जिनका उद्देश्य राष्ट्र-निर्माण ही है। ऐसी संस्थाओंको यदि प्रोत्साहन मिलता रहा (और मिलना चाहिये) तो शिक्षा का सुधार सुगम हो जायेगा और राष्ट्र-निर्माण में भी सहायता मिल सकेगी। लेकिन इस कार्य में भी पूर्ण समाज का योग-दान विभिन्न प्रकार से आवश्यक होगा और प्रत्येक आर्य को इन नवीन संस्थाओं को सहयोग तथा सहायता भी देनी होगी।

———

वैदिक धर्म की बलिवेदी पर

प्रो० ओमकुमार, एम० ए०

आर्यसमाज क्रांतिकारी संस्था रही है ! इस संस्था को अपने प्रगतिवादी कार्यक्रम के क्रियान्वयन में भीषण संकटों से गुजरना पड़ा है। लेकिन आर्यसमाज की गोद में पले हुये युवक-युवतियाँ सदैव बाधाएँ पार करते हुये आगे बढ़ते रहे। हजारों वैदिक-धर्मी अपनी जान पर खेले, काल-कोठेरियों में रहे, पर सत्य-पथ से टस से मस नहीं हुये। ऐसे ही शहीदों की गिनती में स्वर्गीय श्री किशनराव जी टेके तथा उनकी धर्मपत्नी भी सम्मिलित हैं। उनके बलिदान की प्रेरणा प्रदायिनी तथा रोमांचकारी कहानी है।

वीर भूमि महाराष्ट्र का वह भाग जो पहले हैदराबाद रियासत के नीचे था, मराठवाड़ा कहलाता है। जिला उस्मानाबाद (धाराशिव) उसी इलाके के पांच जिलों में से एक है। धाराशिव के अन्तर्गत 'ईट' नामक गांव में ६ मई १९४८ के दिन उक्त दम्पती वैदिक धर्म के लिए अपना जीवन निछावर कर गये।

किशनराव जी के पिता शोलापुर जिलान्तर्गत अकलूज के निवासी थे। वहां से वे पाटोदा (बीड) और फिर ईट (धाराशिव) चले गये थे। किशनराव जी शैशव काल से ही वीर प्रकृति के थे। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती गोदावरी बाई भी एक निडर आर्य महिला थीं। जब ये पाटोदा में रहते थे तब एक एक ऐसी घटना हुई जो इनकी वीरता का पूरा परिचय देती है।

बैरमखां एक कुख्यात पठान था। लूटमार इसका धंधा था। यह किशनराव जीसे बहुत जलता था क्योंकि किशनराव जी आर्यसमाज मेंप्रविष्ट हो गये थे। यह घटना सन् १९३५ की है जब कि निजाम हैदराबाद के अत्याचार अपनी चरमसीमा पर थे। किशनराव जी और उनकी धर्मपत्नी ने बैरमखां को वह सबक सिखाया कि जीवन भर न भूल सका। कहते हैं कि उसे घर से बाहर निकलने में भी लज्जा आती थी क्योंकि लोग उसे चिढ़ाते थे "एक स्त्री (श्रीमती गोदावरी बाई) ने तुम्हारी मरम्मत की है।" इस घटना को लेकर बहुत से मुसलमान इस आर्य दम्पती के शत्रु बन गये।

किशनराव जी पर समय-असमय आक्रमण होते रहे। एक बार जमीन के सम्बन्ध में कुछ कहासुनी हो गई; इसका पर्यवसान भी एक घातक हमले के रूप में हुआ ! किशनराव जी घायल हो गये थे। मुकदमा चला, धमकियाँ दी गईं, सब प्रकार के ओछे हथकण्डे अपनाये गये, पर अन्ततः विरोधी हारे और किशनराव जी की जीत हुई। मुकदमे में मिली इस जीत के कारण विधर्मी इनके और भी पक्के दुश्मन बन गये। येन केन प्रकारेण बदला लेना ही दुराग्रही विधर्मियों ने अपना लक्ष्य बना लिया था। उस काल के मुसलमान अधिकारी भी किशनराव जी पर घात लगाये बैठे रहते थे। पर यह आर्य वीर निर्भीक विचरता था जैसे वन में शेर। हैदराबाद सत्याग्रह के वक्त इनका लड़का रघुनाथराव (जो अब भी है) सक्रिय कार्यकर्ता रहा। उसने सत्याग्रह में बढ़ चढ़ कर भाग लिया। मुसलमान अधिकारियों की बदले की भावना देखिए कि उन्होंने किशनराव जी को तीन महीने कारावास में इसलिए रखा कि उनके लड़के ने सत्याग्रह में भाग लिया था।

निजाम के अत्याचार बढते गये। रजाकारों की दरिन्दगी के नंगे नाच को इतिहास शायद ही कभी भूल सके। धाराशिव जिले का तत्कालीन कलेक्टर हैदरी रजाकारों के साथ मिल कर धर्मपरायण हिन्दुओं को मौत के घाट उतार रहा था। इन सबकी नजर किशनराव पर लगी थी। वे किशनराव जी से पुराना वैर चुकाना चाहते थे। रजाकारों को बहाना चाहिए था और वह मिल गया। श्री किशनराव जी के घर पर ओ३म् ध्वज फहरा रहा था। इस गौरवशालिनी ओ३म्-पताका को देखकर विधर्मियों के कलेजे पर सांप लोटता था।

और यों होते होते आ गया ६ मई १९४८ का दिन। किशनराव जी ६५ वर्ष को भी शायद पार कर चुके थे। उस दिन दोपहर का खाना खाकर आराम करने को वे लेटे ही थे कि बाहर कोलाहल सुनाई दिया। कलैक्टर हैदरी अनेक रजाकारों को लेकर आ गया था। किशनराव जी को आवाज लगाई गई; वे बाहर आये, निहत्थे, केवल धोती बदन से लपेटे हुये। नंगी छाती पर यज्ञोपवीत शोभायमान था। उनके आते ही रजाकारों ने कहा, "ओ३म् का झंडा मकान पर से उतारो।"

'झंडा नहीं उतारा जायगा" इस उत्तर का मिलना था कि कई बन्दूकें एक साथ चल पड़ी। बूढ़े किशनराव जी स्वर्ग सिधारे। बन्दूक उनके हाथ में भी होती तो वे अपने अरमान पूरे कर लेते। किशनराव जी की लाश जमीन पर लुढक गई, गोलियों की गूँज सुनकर श्रीमती गोदावरी बाई बाहर निकली, बन्दूक उठाया और तीन चार पठान यहीं लुढका दिये। माता गोदावरी बाई दुबारा गोली चलाने वाली ही थी कि भीड़ की ओर से कई गोलियाँ आकार उन्हें लगीं ओर वह बलिपथ की पथिका बनीं। पती, पत्नी दोनों ही आगे पीछे वैदिक-धर्म की बलि वेदी पर अपने को मिटा गये। उनके जीते जी उनकी प्यारी ओ३म् पताका को कोई छू तक नहीं सका। हवा में लहराती हुई पताका उनका यशोगान गा रही थी।

कितना रोमांचकारी था यह बलिदान! इन्हीं बलिदानों के सुदृढ़ आधार पर आर्यधर्म की भित्ति खड़ी हुई है। निजाम गया। उसके रजाकार भी चलते बने। पर ओ३म् की पावन पताका आज भी मराठवाड़े में सर्वत्र शान से लहरा रही है, शहीद किशनराव जी टेके और उनकी धर्मपत्नी माता गोदावरी बाई का निर्मल यश अक्षुण्ण रहेगा।

(पृष्ठ २२ का शेष)

थी। यदि परिस्थितियां थोड़ी सी भी और कड़ी हो जाती तो इस के परिणाम अत्यन्त गम्भीर निकलते। पर सौभाग्य से स्थिति बिगड़ने से पहले ही सम्भल गई। चुने हुए छात्रों के नामों की सूची कालेज में न लगा कर उनके घर पर कार्ड भेजने का हथकण्डा इसलिए अपनाया गया था ताकि न विद्यार्थी परस्पर मिल सकेंगे और न उनकी ओर से कोई संगठित विरोध हो सकेगा। पर वे इस बात को भूल गए कि मरता क्या न करता। जाट कालेज से निकले लगभग तीस पैंतीस स्नातकों को प्रवेश नहीं दिया गया था और इसमें किसी औचित्य और सिद्धान्त को आधार नहीं बनाया गया था। धृष्टता का एक सबूत इस बात से मिलता है कि जाट कालेज के दो स्नातकों को जिन के अंक क्रमशः ४६ तथा ४८ प्रतिशत थे तथा जो प्रीयूनीवर्सिटी से ही जाट कालेज में पढ़ रहे थे केवल इस कारण प्रवेश नहीं किया गया क्योंकि वे हिसार जिला के रहने वाले थे। किन्तु इससे भी अन्याय पूर्ण बात यह थी कि अपनी ओर से जाट कालेज के स्नातकों पर तो ४३% अंकों की शर्त लगा दी जब कि बाहर से ४०% से भी कम को प्रवेश दिया गया। शर्मनाक बात थी।

अन्त में विद्यार्थी संगठित हुए और इस अन्याय का डट कर विरोध किया। भूख हड़ताल की गई जलूस निकाले गए नारे गुंजाएं गए चारों ओर एक खलबली सी मच गई परन्तु हड़ताल इतनी शान्ति पूर्ण एवं सुसंगठित थी कि कहीं कोई भी अप्रिय घटना नहीं घटी। भूख हड़तालियों को समिति के तानाशाहों ने पिस्तौल भी दिखाए। शराबियों से भी डरवाया पर सब बेकार। अन्त में डिक्टेटरों को झुकना पड़ा उन्होंने अपनी गलती अनुभव की और शिर झुका कर रहे हुए छात्रों को भी दाखला दिया। छात्रों ने सर्वसम्मति से निर्णय किया कि भविष्य में ऐसे अन्याय पूर्ण ढंग को कभी सहन नहीं किया जायेगा। ईश्वर ने ठीक समय पर सम्भाला नहीं तो एक कमजोर व निष्क्रिय शासक के कारण सब नष्ट हो जाता। इस प्रकार छात्रों ने अन्याय पर शानदार विजय प्राप्त की क्या ही अच्छा होता यदि अधिकारी वर्ग पहले ही सचेत रहकर न्याय पूर्ण ढंग से कार्य करता।

वैदिक अर्थव्यवस्था

● कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

अर्थशास्त्र का रूप समय और देश के अनुसार बदलता रहा है। कौटिलीय अर्थशास्त्र का क्षेत्र वर्तमान अर्थशास्त्र से बहुत भिन्न है। यूरोपियन अर्थशास्त्र में भी समय-समय पर परिवर्तन होता आ रहा है। इसका कारण प्रत्येक देश और काल की अलग-अलग परिस्थितियां हैं। प्रत्येक देश और युग की आवश्यकताएँ भिन्न होती है। सामाजिक और राजनैतिक अवस्थाओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन होते रहते हैं और इन परिवर्तनों का प्रभाव आर्थिक विचार धाराओं पर पड़ता है। एडम स्मिथ का अर्थशास्त्र आज का अर्थशास्त्र नहीं है। किसी समय इंगलैड, मुक्त व्यापार पर अधिक बल देता था। लेकिन समय के साथ उसे भी व्यापार पर प्रतिबन्ध लगाने पड़े। स्वतंत्र उद्योग, श्रमिकों के उद्योग में भाग और राज्य के अधिकार-क्षेत्र आदि सब में समय-समय पर परिवर्तन होता रहा है। इसलिए अर्थशास्त्र के लिए किसी एक स्थिर जड़-पद्धति का सदा समर्थन नहीं किया जा सका। न प्राचीन ग्रन्थों में वर्तमान अर्थशास्त्र की परिभाषाओं के लक्षण, स्वरूप आज से भिन्न ही मिलेंगे।

वैदिक मानव जीवन

वेदों को हम अनादि ईश्वरकृत मानते हैं। इसलिए आधुनिक अर्थशास्त्र के नियमों का उनमें एक साथ पृथक् प्रतिपादन देखने का प्रयत्न करना भी उचित नहीं होगा। वेदों में मानव जीवन के लिए ऊँचे और अपरिवर्तनशील सिद्धान्तों एवं आदर्शों का निश्चित उल्लेख मिलता है। मानव जीवन वेद के अनुसार एकाङ्गी नहीं है। वह तो बहुविध और बहुत व्यापक है।

चार वर्णों में शक्ति संतुलन

वैदिक मानव जीवन की कल्पना को समझने के लिए उसकी मूलभूत वर्णाश्रम-व्यवस्था को समझना चाहिए। वेद मानव समाज को चार भागों में विभक्त करता है जिनके काम पृथक्-पृथक् होते हैं। परन्तु कोई एक भाग दूसरे भाग से भिन्न नहीं है। मानव-शरीर के लिए जैसे सिर, पेट, हाथ और पैर सभी आवश्यक है उसी तरह समाज के शरीर के लिए चारों वर्ण आवश्यक हैं। इनमें से कोई किसी से कम महत्वपूर्ण नहीं है। सब का समाज में समान महत्त्व एंवं स्थान है। ब्राह्मण यदि ज्ञान के कारण श्रेष्ठ है, तो भी उसे, धनपति होने का अधिकार नहीं है। व्यापारी, उद्योगपति अथवा प्रशासक सम्पत्ति और सत्ता पर अधिकार रखते हैं, किन्तु उन्हें आज की भांति शिक्षण संस्थाओं और धर्म संस्थाओं का अधिकारी पद लेने का विधान वदिक वर्ण व्यवस्था में नहीं किया गया है। आज तो सब विश्वविद्यालयों, सामाजिक व साहित्यिक संस्थाओं के अधिकारी, मंत्री, गर्वनर, राजनैतिक नेता अथवा लखपति होते हैं। वैदिक वर्णव्यवस्था समाज में शक्ति संतुलन रखने के पक्ष में है। इसी तरह श्रमिक वर्ग का काम सेवा करने का है। यह वर्णव्यवस्था समाज में असंतोष और विग्रह का जन्म नहीं देती, यदि इस वर्ण-व्यवस्था को गुण कर्म के अनुसार मान लिया जाता और धन, शक्ति तथा सम्मान का संतुलन बिगड़ने न दिया जाता।

वर्ण-व्यवस्था की तरह आश्रम व्यवस्था भी समाज के जीवन को सुव्यवस्थित रखने के लिए अत्यन्त उपयोगी है। आधुनिक अर्थशास्त्र भौतिकवादी अर्थशास्त्र है, जिसमें धन को ही सर्वाधिक महत्व दिया जाता है और धन प्राप्ति को ही जीवन का प्रमुख लक्ष्य माना जाता है। आश्रम व्यवस्था अर्थ संग्रह को हेय न समझते हुये भी उसे सीमा में मर्यादित रखने का विधान रखती है। गृहस्थाश्रम भोग-अर्थ और काम के लिए है परन्तु अन्तिम लक्ष्य मोक्ष ही है,जीवन भर अर्थ-संग्रह में लिप्त रहना नहीं है।

त्यागमय उपभोग

वेदों में जहाँ धन-संग्रह की कामना व्यक्त की गई है वहाँ त्याग का भी उपदेश दिया गया है।

यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय का प्रसिद्ध मंत्र है।
ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंचिज्जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।

सब कुछ ईश्वर का है, त्यागभाव से इसका सेवन करना है। इस त्याग भावना का अर्थ, निष्क्रियता या नैष्कर्म्यवाद नहीं है। इसके दूसरे मंत्र में ही "कुर्वन्नेहवेह कर्माणि निजिविषेऽच्छतं समाः एवं त्वयि नान्यथेऽतोस्ति न कर्म लिप्यते नरे।"

इस मंत्र में १०० वर्ष तक कर्म करते हुये जीवन की आकांक्षा की गयी है। साथ ही कर्म में न लिप्त होने का उपदेश दिया गया है। वास्तव में सम्पूर्ण श्रीमद्-भगवद्गीता इन दोनों मंत्रोंकी विस्तृत व्याख्या मात्र ही है।

जब वर्णाश्रम व्यवस्था का पालन होगा, बूढ़े लोग युवकों के लिए स्थान रिक्त कर देंगे। बेकारी की समस्या जो आज अर्थशास्त्र की प्रमुख समस्या बन गयी है, उपस्थित नहीं होगी और न सम्पत्ति का कुछ हाथों में केन्द्रीकरण ही होगा।

वेदों में स्पष्ट कहा है "शतहस्त समाहर सहस्रहस्त संकिर" अर्थात् सौ हाथ से धन कमाओ और हजारों हाथों से वितरण करो।

वैदिक जीवन का आदर्श इस संसार को त्यागभूमि के साथ-साथ कर्मभूमि बनाना है। मध्यकालीन सन्तों की तरह केवल वैराग्य का उपदेश नहीं दिया। वेदों में स्थान-स्थान पर धन प्राप्ति की इच्छा व्यक्त की गयी है। जैसे— "स्याम वयं पतयो रयीणाम्" गायत्री माता या वेद माता से जहाँ ब्रह्मवर्चस् की कामना की गयी है वहाँ, आयु, प्रजा, पशु और द्रविण के लिए भी प्रार्थना की गयी है।

वेदों में ऐसे बीसियों मंत्र मिल जायेंगे, जिनमें सम्पत्ति की प्रार्थना की गयी है, जिनमें ऊँचे भवनों, विस्तृत गृह, यज्ञशालाओं और स्थल, वायु तथा जलयानों का उल्लेख किया गया है। वैदिक समाज के राष्ट्र गीत में दोग्ध्री धेनुः, वोढा अनड्वान् आशुःसप्तिः की प्रार्थना के साथ कृषि द्वारा समृद्धि की मंगलकामना की गयी है। निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्ताम्।

वस्तुतः वैदिक अर्थशास्त्र कोई पृथक् अर्थशास्त्र नहीं है। वह मानव जीवन का केवल एक भाग मात्र है। आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने जब केवल भौतिक समृद्धि तक उसे सीमित कर दिया, तब उसमें नीति, चरित्र और धर्म का कोई स्थान नहीं रहा। इसीलिए महात्मा गांधी के शब्दों में आज का अर्थशास्त्र अनर्थशास्त्र है। वैदिक जीवन समन्वय का जीवन है। उसमें एक ओर हम आर्थिक समृद्धि की कामना करते हैं। भौतिक सम्पदा मांगते हैं, तो दूसरी ओर दैवी सम्पदा की भी उपेक्षा नहीं करते।

समाजवाद के तत्व

आज के अर्थशास्त्र के ग्रन्थों में समाजवाद और वितरण का प्रश्न बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। सम्पत्ति का केन्द्रीकरण न हो, विश्व में कोई भूखा, दरिद्र या नंगा न रहे आदि की चर्चा बहुत अधिक हो रही है। वेद इस सिद्धान्त को बल और दृढ़ता से स्वीकार करता है। यथा—समानी प्रपा सहवोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि। सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः।

पवित्र-दान प्रथा

जब जीवन में त्याग का उद्देश्य हो और गृहस्थ में धनोपार्जन के बाद वानप्रस्थ या संन्यासाश्रम में जाने का उपदेश हो तब सम्पत्ति का केन्द्रीकरण सम्भव नहीं है। वेदों में स्थान-स्थान पर दान की महिमा पर बल दिया गया है और दान न देना अरातिः (अर्थात् शत्रुः) कहा गया है। अग्नि की भाँति अराति से रहित होने की प्रार्थना वेद में की गई है। आज सरकार बलात् भारी-भारी टैक्स लादती है, लेकिन पहले स्वेच्छा से दान देना पवित्र कर्तव्य माना जाता था। जन्म से लेकर मरण तक गरीबों, अनाथों और धार्मिक संस्थाओं को दान देने की परम्परा आज तक—भले ही विकृत रूप में— चल रही है। दान की परम्परा भारतीय संस्कृति का महत्त्वपूर्ण अंग है। वापी, कूप, तडाग, मंदिर, धर्मशालाएं और

अन्नसत्र बनाने या स्थापित करने की पुरातन परम्परा आज भी तीर्थों में विद्यमान है। समाज से अर्जित धन समाज की सेवा में लगे, यही उसके मूल में है। वानप्रस्थ या संन्यासी निःशुल्क चिकित्सा, सेवा उपदेश करके समाज के प्रति अपना ऋषि ऋण उतारते हैं। माता-पिता के साथ ही ऋषि ऋण से मुक्त होना परम कर्त्तव्य है। अग्नि होत्र मंत्रों में आहुति के बाद 'इदं न मम' की प्रतिज्ञा द्वारा समाज के लिए काम का जो पवित्र संकल्प किया जाता है, वह वैदिक अर्थ व्यवस्था का आधार है।

श्रेणी भेद को स्थान नहीं

आज हमारे भारत में छात्र अपने माता-पिता की सम्पत्ति के अनुसार सादा या खर्चीला जीवन व्यतीत करते हैं। किन्तु पहले गुरुकुलों में अमीर या गरीब सब घरों के बच्चे एक साथ खाना खाते थे और रहते थे। कृष्ण और सुदामा एक ही गुरु के पास भीख माँग कर गुजारा करते थे। ब्रह्मचारी के लिए घर-घर जाकर भिक्षा याचना उसे यह बताती थी कि वह समाज का पुत्र है और समाज के अन्न पर पलता है। इससे श्रेणी भेद की भावना जन्म से ही पनपने नहीं पाती थी। जैसे कि आजकल वर्णभेद कालेजों और स्कूलों में पैदा हो जाता है। संन्यासी का सम्मान सनातन परम्परा है, पर वह भी घर-घर भीख मांगता था और जन सेवा करता था।

जीवन की आवश्यकता

भूख से कोई न मरे, यह आदर्श वेद का है। यथा-न वाउ देवा क्षुधं इत वधं ददुः। भोजन, वस्त्र, चिकित्सा और शिक्षा आजकल अनिवार्य आवश्यकताएँ गिनी जाती हैं, जिनका हमारे समाजवादी भाई हमेशा नारा लगाते हैं। गुरुकुलों के विद्यार्थी भीख माँगकर उदर पूर्ति करते थे। सामान्य गृहस्थ के लिए भी अतिथि यज्ञ एक धार्मिक कर्तव्य था, जिसका लाभ दोनों ओर विद्वानों को प्राप्त होता था। भोजन से पहले गौ, अतिथि, तथा कुत्ते आदि तक के लिए रोटी रखने की व्यवस्था सनातन काल से चली आयी है, जो आज लुप्तप्राय हो गयी है। सभी गुरुकुलों में त्यागी आचार्य निःशुल्क शिक्षा दिया करते थे और साथ ही विद्यार्थी की भोजन व्यवस्था भी किया करते थे। वैद्य या चिकित्सक भी ब्राह्मण होता था, जिसे आजीविका के लिए विपुल धन संग्रह करने का अधिकार नहीं था। इस तरह प्राचीन समाज व्यवस्था में जीवन की प्रायः सब आवश्यकताएँ निःशुल्क पूर्ण होती रहे अतः तरह-तरह की परम्पराएँ कायम की गयी थीं।

अर्थोपार्जन

अर्थोपार्जन के लिए वैदिक व्यवस्था कृषि पर अधिक बल देती है। यथा—"अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित् कृषस्व।" वेद में अनेक अन्नों का नाम आता है, जिनसे उनकी फसलें बोने और समाज की आवश्यकताएँ पूर्ण करने का स्पष्ट निर्देश है।

कृषि के अतिरिक्त जीवन-यात्रा के लिए यजुर्वेद में सैकड़ों छोटे-छोटे उद्योगों का उल्लेख मिलता है। आज-कल सरकार जिस तरह लॉटरी निकाल कर धन संग्रह का नया असामाजिक आदर्श पेश कर रही है, उसका कोई उल्लेख वेद में नहीं मिलता। वेद तो जुए का विरोध करता है। यथा—अक्षैर्मा दीव्यः।

श्रम का महत्त्व

वेद में श्रम को बहुत अधिक महत्त्व दिया गया है। अयम्मे हस्तो भगवान्, अयम्मे भगवत्तरः अयम्मे विश्व-भेषजः अयं शिवाभिमर्शनः। इस मंत्र में श्रम की महत्ता स्पष्ट शब्दों में स्वीकार की गयी है। छोटे-छोटे हस्त-शिल्पियों का वेदों में उल्लेख श्रम की महत्ता को ही स्वीकार करता है। वेद तो मानव-मात्र ही नहीं प्राणी मात्र का हित देखता है— शन्नो द्विपदे शं चतुष्पदे—ऐसी प्रार्थना अनेक स्थानों पर मिलती है।—"केवलाघो भवति केवलादी" की घोषणा आज का कम्युनिस्ट भी शायद नहीं करता है। अकेला खाने वाला पाप खाता है। डा० पट्टभि सीतारमैया ने कहा था कि—समाजवाद केवल पैसे की प्रधानता के खिलाफ बगावत है, किन्तु जिस व्यवस्था में पैसे की प्रधानता नहीं है, वहाँ इस बगावत की जरूरत ही क्या रह जाती है। वैदिक अर्थ-व्यवस्था या वैदिक अर्थशास्त्र में धन को महत्त्व विशेषतया नहीं दिया गया है। हमें तो वेद त्याग भाव का ही उपदेश देता है। तब वैदिक अर्थशास्त्र या समाजवाद का विशेष रूप से अलग उल्लेख करने की आवश्यकता ही नहीं है। आधुनिक अर्थशास्त्र के चार विशेष अंग हैं। भूमि, श्रम, पूँजी और संगठन। इन चारों के सम्बन्ध में वेद का संदेश स्पष्ट है। वह विभिन्न अंगों का महत्त्व बताता है किन्तु उसमें परस्पर सामञ्जस्य और शक्ति संतुलन रखते हुये।

वेद की इस अर्थव्यवस्था में वे विभिन्न समस्याएँ उत्पन्न नहीं होतीं, जो आज के समाज में सिर उठाये खड़ी हैं।

कुछ तड़प कुछ झड़प

प्रो० राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

आर्य पत्रों में वेद-घात—वदिक धर्म ईश्वर को नित्य मानता है। ईश्वर में विश्वास रखने वाले अवैदिक पंथ भी ईश्वर को नित्य ही मानते हैं। अवैदिक मतों से वेद का एक मौलिक भेद यह है कि वेद ईश्वर के गुण, कर्म व स्वभाव को भी नित्य मानता है। अवैदिक मत ऐसा नहीं मानते। महान् वैदिक मनीषी आचार्य चमूपति ने इस्लाम से एक प्रश्न पूछा था कि ईश्वर का ज्ञान पहले या कर्म ? आज तक इस्लाम व ईसाई मत को इस का उत्तर नहीं सूझा। आचार्य दयानन्द ने विश्व के सन्मुख यह आर्ष मान्यता रखी कि ईश्वर नित्य है। उसका ज्ञान भी नित्य है। एक बार वेद के सम्बन्ध में पूछे गये एक प्रश्न के उत्तर में ऋषि ने कहा "वेद नित्य ईश्वर का नित्य ज्ञान है।"

ईश्वर कर्म फल को देने वाला है। विश्व का नियम है कि नियम बनने के पश्चात् ही नियम तोड़ने का दण्ड दिया जाता है। इसी प्रकार सृष्टि के आदि में ही मनुष्यों को ईश्वर ने अपना वेद-ज्ञान दिया। बाद में देने से उसका न्यायकारी होना या कर्मफल दाता होना सिद्ध नहीं होता। उसके दया व न्याय आदि गुण नित्य सिद्ध नहीं हो सकते।

वेद प्रत्येक सृष्टि के आदि में प्रकाशित होता है। वेद में अनित्य इतिहास होने का प्रश्न ही नहीं उठता। प्रत्येक आर्य को इस आर्ष मान्यता का पता है। हमने जान-बूझ कर इस सर्वविदित वैदिक सिद्धान्त पर कुछ विस्तार से यहाँ लिखा है। क्या आवश्यकता पड़ी ?

बड़ौदा से श्री पं० आनन्दप्रिय जी Vedic Digest नाम की एक सुन्दर उपयोगी मासिक पत्रिका निकालते हैं। उसमें मार्च अप्रैल के अङ्क में पृष्ठ ५२ पर ऋग्वेद के मन्त्र इन्द्रो दधीची अस्थभिर्वृत्राण्य प्रतिष्कुतः जघान नवतीर्नव। ऋ० १-८४-१३ का अर्थ अंग्रेजी में देते हुए इन्द्र व दधीची की सारी पौराणिक गाथा दे दी है। इस अनर्थ पर किसी टिप्पणी की कोई आवश्यकता नहीं। खेद इस बात का है कि आर्यसमाज ने अनेक शिक्षा संस्थायें खोलीं पर वेद भाष्य वेद के श्रद्धालुओं तक हम पहुँचा न सके। परिणाम स्वरूप आज भी वेद में इन्द्र शब्द देखकर लोग वेद में पुराणों के इन्द्र व उसकी अप्सराओं को खोजने लगते हैं। आर्य पत्रों में इस प्रकार के अनार्ष, वेदघाती विचारों की समीक्षा तो न छपनी चाहिए। इनके प्रचार से जो हानि हो सकती है पाठक उसकी सहज ही कल्पना कर सकते हैं। आशा है श्री पं० आनन्दप्रिय जी सौजन्य का परिचय देते हुए भविष्य में Vedic Digest में ऐसी सामग्री नहीं आने देंगे।

एक प्रशंसनीय कार्य—वर्षों से सुन रहे थे कि दक्षिण भारत के प्रसिद्ध हिन्दू, देवस्थान तिरुपति की ओर से वेदोद्धारक देव दयानन्द जी का अमर ग्रन्थ ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका तेलुगु भाषा में छप रहा है। हमें सर्वप्रथम यह शुभ समाचार यशस्वी वैदिक विद्वान् श्री पं० मदन मोहन जी विद्यासागर ने दिया था। हैदराबाद सभा के मासिक पत्र 'आर्य जीवन' के वेद विशेषांक में प्रशंसित पंडित जी की एक टिप्पणी पढ़कर अत्यन्त हर्ष हुआ कि उक्त देवस्थान ने ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका का तेलुगु भाष्य प्रकाशित कर दिया है। हम यह समाचार पढ़कर झूम उठे। तिरुपति मन्दिर के जागरूक ट्रस्टियों ने वेद धर्म की सेवा व मानव मात्र के कल्याण के लिए यह जो पुनीत कार्य किया है, उसके लिए हम उनका हार्दिक अभिनन्दन करते हैं।

इसके साथ ही इस ग्रंथ के अनुवादकर्ता आंध्र के महान् दार्शनिक, तेलुगु के सिद्धहस्त लेखक, पूज्य पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय के सुशिष्य श्री पं० गोपदेव जी को भी ऋषि ऋण चुकाने के लिए बधाई देते हैं।

आंध्र प्रदेश में वेद के प्रति, यज्ञ के प्रति बड़ी आस्था है। आंध्र के भाई इस क्रान्तिकारी ग्रंथ को घर घर पहुंचा कर अंधकार निवारण करके पुण्य के भागी बनेंगे। हम राजधर्म द्वारा श्री पं० नरेन्द्र जी, श्री पं० गोपदेव जी, श्री पं० मदनमोहन जी, श्री पं० वेंकटेश्वर जी, श्री

पं० अनकेशव आर्य जी से प्रार्थना करते हैं कि सब मिल कर १९७५ तक प्यारे आचार्य के सब ग्रंथों का तेलुगु भाषा में अनुवाद प्रकाशित करके मानव समाज की सेवा का धर्म लाभ प्राप्त करें।

एक पुनीत कार्य—जून मास में दक्षिण की प्रचार यात्रा में केरल के एक नगर में हमने मलयालम में कुरान का भाष्य देखा। तमिल में भी कुरान का भाष्य छप चुका है। वेद भाष्य केवल तेलुगु में ही उपलब्ध है। मलयालम में आर्य विद्वानों के भाष्यों के आधार पर श्री पं० नरेन्द्र जी केरलीय ने सामवेद का भाष्य आरम्भ कर रखा है। वह तमिल भी जानते हैं परन्तु तमिल के सिद्धहस्त लेखक नहीं।

आर्यसमाज के सर्वेसर्वा सभाओं के महाप्रभु इधर कुछ ध्यान देते तो अच्छा था। हमें Vedic Digest में यह पढ़कर बड़ा हर्ष हुआ कि अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी के अनन्य भक्त श्री जम्बूनाथन जी ने तमिल में चारों वेदों का भाष्य कर दिया है। यद्यपि यह भाष्य ऋषि शैली के अनुसार तो नहीं, तो भी न होने से कुछ अच्छा है। श्रीयुत जम्बूनाथन जी द्वारा अंग्रेजी में कुछ वेद मन्त्रों का अर्थ पढ़ने पर हमें प्रतीत हुआ कि वह पूर्ण-रूपेण आर्ष शैली को नहीं अपना सके। फिर भी हम उनके प्रयास का अभिनन्दन करते हैं। यह भाष्य छपा या नहीं कुछ पता नहीं चला। यदि अभी अप्रकाशित है तो बम्बई के आर्यों को श्री जम्बूनाथन जी से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह अपने भाष्य को पौराणिक गाथाओं से अलिप्त रखें। धर्म की कसौटी वेद है। वेद की कसौटी अवैदिक पोथे नहीं हो सकते।

यह सिरघुटे आर्यसमाजी—

पिछले दिनों रोहतक के एक आर्यसमाज में श्री विद्यानन्द जी विदेह की कथा थी। वह अपनी लेखनी व वाणी से अपनी महिमा गाते रहते हैं। यह भी प्रायः कहते हैं लोगों ने विदेह के बारे बहुत कुछ कहा, विदेह पर इसका कुछ प्रभाव न हुआ। 'अपनों से अपनी बात' फिर भी वितरित करते रहते हैं।

जहाँ उनकी जेब पर प्रभाव पड़ने का भय न हो वहां वह आर्यसमाज पर बड़े ढङ्ग से वार करते हैं। अवसर का पूरा लाभ उठाते हैं। रोहतक के समाज में किसी आर्य पुरुष का मुंडा हुआ, सिर देखकर वह बोले, "यह क्या आर्यसमाजियों की भाँति सिर मुंडवा आया।" कहते हैं इस पर श्री मामचन्द आर्य, दयानन्द मठ ने आपत्ति की। विदेह जी ने क्या उत्तर देना था ? 'भक्त जन' जहाँ हों वहाँ युक्ति, तर्क व शङ्का का क्या काम ? मेरी उपस्थिति में एक बार धुरी में आपने कहा था कि कोई ऋषि रुण्ड मुण्ड नहीं हुआ। हमने तब सोचा सम्भवतः विदेह जी सिखों से प्रशंसापत्र चाहते हैं परन्तु रोहतक में बालों की वकालत का इसके सिवा .कोई अर्थ नहीं कि आर्यों से द्वेष आपका स्वभाव बन गया है। भले ही वह अपने को वसिष्ठ कहलवायें (जैसा कि बरनाला में अपना परिचय ऐसा देने के लिए कहा) परन्तु आर्यों पर ओछे वार करना उनके लिए अशोभनीय हैं, हमें विवश होकर उनके बारे में यह पंक्तियां लिखनी पड़ी हैं। यदि वह सद्भावना पूर्वक, लोकैषणा, वित्तैषणा आदि से ऊपर उठकर वेद सेवा करें तो इससे बड़ा जन-कल्याण होगा।

राष्ट्रपति मन्दिर में—

नये राष्ट्रपति मन्दिर में पूजा के लिए गये। राजनारायण, जी, संसद-सदस्य को इस पर आपत्ति है। यह धर्म निरपेक्षता का उन्माद है। खान अब्दुल गफ्फार खां को कुरान भेंट किया जाएगा। इस पर राजनारयण जी को आपत्ति नहीं। डा० जाकिर हुसैन ने रूस में मुसलमानों को अरबी का साहित्य दिया। इस पर उनको आपत्ति नहीं। अरबी का भारत से क्या सम्बन्ध ? कुरान किसी भारतीय ने तो नहीं लिखा, न हमारी भाषा में है। फिर यह भेंट क्यों ? पर किसी ने आपत्ति न की। परन्तु सस्ती लोकप्रियता के भूखे नेता श्री गिरि जी के मन्दिर जाने पर न जाने क्यों सटपटा रहे हैं। क्या जाकिर साहेब मस्जिद नहीं जाते थे ? हम मूर्तिपूजक नहीं पर अकारण मन्दिर जाने पर आपत्ति करना यह सर्वथा अनुचित है। राजनीति में स्वस्थ परम्परायें बनायी जाएं। पक्षपातपूर्ण राजनीति देश का विनाश कर रही है।

समाचार दर्शन

● ज्ञानेश्वर शास्त्री

इन्दिरा—निजलिंग सौमनस्य

सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु,
प्रमाणं अन्तःकरणप्रवृत्तयः ।

विद्वानों को जब अपने कर्तव्य के विषय में सन्देह होता है तो उनकी अन्तरात्मा की आवाज ही सही पथ-निर्देश देती है। यह महाकवि कालिदास की सूक्ति है जिस का अनुपालन किया श्री गिरि ने और क्रियान्वयन किया इन्दिरा गांधी ने। संजीव रेड्डी को राष्ट्रपति बनाने का उद्देश्य था—मोरारजी देसाई को प्रधान मन्त्री बनाना, चौहान को उपप्रधान मंत्री, सुचेता को लोकसभाध्यक्ष इत्यादि। चालाक बाप की चालाक बेटी ने सब कुछ समझ लिया। इन्दिरा ने संजीव रेड्डी के समर्थन में ह्विप जारी करने की बजाय अन्तरात्मा की आवाज के अनुसार मतदान करने की छूट दी।

निजलिंगप्पा बुरी तरह झल्लाए कि प्रधान मन्त्री अपने दल की मरजी के विपरीत जा रही हैं। कांग्रेसाध्यक्ष ने उनसे जवाब तलबी मांगी कि दल के नियमों की अवहेलना करने के अपराध में उनके खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई क्यों न की जाय ?

इन्दिरा गांधी ने निजलिप्पा की चिट्ठी को कूड़ेदान में फेंकते हुए कहा कि मैं सरकार की प्रधान हूँ—अपनी मरजी के अनुसार सरकार चलाऊंगी। यह कम्युनिस्ट शासन नहीं है कि पार्टी के निर्णयों को सरकार पर लादा जाये। प्रधानमन्त्री की दायीं बायीं भुजा फखरुद्दीन अली अहमद और जगजीवनराम ने भी अपनी मालकिन के "हां में हां" मिलाया और निजलिप्पा के गप्पों की उपेक्षा की। "अंगरेजी जिन्दाबाद" का नारा लगाने वाले सुब्रमण्यम् भी कहीं से कूद पड़े और तथाकथित निर्दलीय श्रीकृष्ण मेन ने भी अपनी आदत के अनुसार निजलिप्पा-विरोधी "लम्बा भाषण" दिया। सब मिला जुलाकर बात यह बनी कि जिसको जहां मरजी वोट दे। अपनी अन्तरात्मा की आवाज के अनुसार पार्टी या पार्टी के अध्यक्ष के बकवास की परवाह न करे।

कांग्रेस में दरार पड़ रही है इस आशय का नारा जगह-जगह से यों बुलन्द होने लगा जैसे मुसलमान अक्सर चिल्लाते हैं कि इस्लाम खतरे में है। कांग्रेस को खतरे में डालकर कई प्रदेश कांग्रेसाध्यक्ष ने दिल्ली की सैर करके अपना भत्ता बनाया। संसद् सदस्यों ने भी अपनी-अपनी ढफली पर चोट की। ७० सदस्यों ने इन्दिरा गांधी का पत्ता काटने की सिफारिश की तो २४८ सदस्यों ने इन्दिरा गांधी की गद्दी बचाने के लिए अपना तन-मन-धन न्यौछावर करने की शपथ खाई। निजलिंगप्पा ने डंके की चोट पर कहा कि मुमकिन नहीं कि इन्दिरा गान्धी १९७२ तक देश की प्रधानमंत्री रहे। इन्दिरा गांधी ने जब-तब अपना बयान दिया कि वह जनता की प्रधान मंत्री हैं और जनता जब तक चाहेगी, वह सिंहासन पर विराजमान रहेगी।

इसी ले-दे में राष्ट्रपति का निर्वाचन हुआ। संजीव रेड्डी चारोंखाने चित्त हो गए। श्री गिरि राष्ट्रपति निर्वाचित हुए और इन्दिरा का सिंहासन डोलते-डोलते बचा। निजलिंगप्पा ने जल्दी-जल्दी कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक बुलाई और सर्वसम्मति से घोषित किया कि प्रधान मंत्री के खिलाफ कोई कार्रवाही नहीं होगी।

निजलिंगप्पा को चिन्ता है कि अध्यक्ष पद से मुक्त होने के बाद दाल-रोटी के लाले पड़ेंगे। इन्दिरा गांधी फिलहाल प्रधान मंत्री पद से हटती नहीं—अच्छा है। इनसे सम्बन्ध सुधार लिए जायें ताकि अगले वर्ष जब अध्यक्षपद से मुक्त होंगे तो मंत्रिमण्डल में कोई छोटा-मोटा पद मिल जायेगा।

निजलिंगप्पा और इन्दिरा दोनों फिर बड़ी सद्भावना से मिले और बोले कि "बीती ताहि बिसारि दै, आगे की सुधि लेय"—निजलिंगप्पा ने इन्दिरा से कहा कि मैं आपको सिंहासन से उतारने का कोई षड्यन्त्र नहीं करूंगा। इन्दिरा ने निजलिंगप्पा से कहा कि जब आप अध्यक्ष पद से मुक्त होंगे तो मैं आपको बेरोजगारी का शिकार नहीं होने दूंगी।

प्रश्न प्रदेश

उत्तर प्रदेश को "प्रश्न प्रदेश" कहना इसलिए अच्छा है कि यहां प्रश्न बढ़ते जा रहे हैं—उत्तर एक का भी नहीं मिलता। चन्द्रभान गुप्त और कमलापति त्रिपाठी का द्वन्द्व कितना पुराना है? काशी हिन्दू विश्वविद्यालय को राजनीतिक रंगमंच के रूप में कब से प्रयोग में लाया जा रहा है। शायद तभी से जब कि मालवीय जी दिवंगत हुए। लखनऊ के अखबारों में नित नई सुर्खियां रहती हैं। पहले सुचेता कृपलानी का रणचण्डी रूप अखबार वालों का विषय था। फिर राष्ट्रपति शासनकाल में अलग-अलग पार्टियों का रिहर्सल चलता रहा। चन्द्रभान गुप्त और चरणसिंह बारी-बारी से मुख्यमंत्री बने और बारी-बारी से अपदस्थ हो गए जैसे मंत्रिमण्डल क्या हुआ—नौटंकी का नाच हुआ। आजकल फिर चन्द्रभान गुप्त सिंहासन पर बैठे हैं। आए दिन कोई न कोई नाटक–तमाशा देखने को मिलता ही रहता है।

अभी २६ अगस्त की बात है। विधान सभा के स्क्रीन पर एक स्टंट पिक्चर दिखाया गया। विरोधी दल के सदस्य एम. पी. त्रिपाठी और गोविन्दसिंह नेगी ने अध्यक्ष श्री खेर के प्रति कुछ अपशब्द कहे। जैसे खरबूजा को देखकर खरबूजा रंग बदलता है—वैसे ही इन दो विधायकों को "हीरो" बनते देख अन्य विधायकों ने भी अपने-अपने को हीरो घोषित कर दिया—और डटकर नारा लगाया—खेर मुरदाबाद, खेर बेईमान है, खेर कुर्सीपरस्त है········।

हाथी की तरह चिंघाड़ते हुए कुछ विधायकों ने अपने जूतों, चप्पलों व छत्तों से खेर को निशाना बनाया तो खेर साहब कनपटियों पर हाथ रखकर मेज के नीचे दुबक गए। शोरगुल सुनकर लगभग २०० पुलिस वालों ने सदन में प्रवेश किया और इन पागल हाथियों को बाहर खदेड़ दिया।·········२४ सदस्यों को निलम्बित किया गया। चन्द्रभान गुप्त ने इसे महान् खेदजनक घटना बताया।

इस तरह का हंगामा बंगाल में भी हुआ था जबकि जूते-चप्पलों के अतिरिक्त माइक्रोफोन और पेपरवेट का भी खुलकर प्रयोग किया गया था। इस काण्ड की पुनरावृत्ति के विषय पर लिखते हुए राजनीति मनीषियों ने मत प्रकट किया है कि गलती दोनों की होती है। विधान सभाध्यक्ष अपनी चोधराहट से बाज नहीं आते। वे अपने को सर्व-सर्वा सम्राट मान बैठते हैं और क्वचित् अनिवार्य व उचित विषय पर भी बहस की अनुमति नहीं देते। इधर विधायकों का वर्ग है जो अपने रोष को काबू नहीं कर पाता!

●

चैकोस्लोवाकिया :
"स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।"

अभी २१ अगस्त को चैकोस्लोवाक जनता ने सोवियत हस्तक्षेप की बरसी मनाई! आज से एक वर्ष पूर्व सोवियत संघ के साथ वरसाई देशों ने चैकोस्लोवाकिया की छाती पर अपने टैंक उतारे थे। इस पावन देश को अपना पिछलग्गू प्रदेश बनाने की अनाधिकार चेष्टा की थी।

इस दु:खद अध्याय को दुहराने के लिए राजधानी प्राग में लाखों नर-नारी काले बिल्ले लगाए—सोवियत हस्तक्षेप विरोधी नारा बुलन्द करते हुए—उस चौक पर एकत्र हुए जहां आज से एक वर्ष पूर्व जां पलाख ने अपनी मातृ-भूमि में बाह्य हस्तक्षेप को न सहते हुए आत्माहुति दी थी!

भीड़ पर काबू पाने के लिए पुलिस ने अपनी संगीनें तान ली। कहते हैं २ प्रदर्शनकारी मृत हुए, अनेक घायल हुए और सैकड़ों को कारावास के हवाले किया गया। प्रदर्शनकारियों की दुर्धर्ष ध्वनि आकाश को चीर रही

थी—दुबचेक जिन्दाबाद—हुसाक गद्दार है—सोवियत सैनिक वापस जाओ—विदेशी हस्तक्षेप असह्य है—स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है इत्यादि !

२०, २१ और २२ अगस्त के दिन प्रलय के दृश्य लिए रहे। पुलिस और मिलिशिया शहर में रात-दिन गश्त करते रहे। टैंकों का दस्ता आग उगलने के लिए आकुल रहा। बन्दूकों, तोपों की ध्वनि मानो तृतीय विश्वयुद्ध के लिए रिहर्सल का प्रतीक हो। इतने सब के बावजूद भी—चैकोस्लोवाक जनता ने सफलता पूर्वक—मातम दिवस—काला दिवस मनाया। अपने राष्ट्र पर विदेशी प्रभुत्व की प्रबलतम भर्त्सना की। सोवियत परस्त नए नेताओं की खुलकर खिल्ली उड़ाई गई। अपने आत्मसम्मान की रक्षा के लिए सबने प्रण लिए, व्रत लिए।

चैक राष्ट्रपति स्वोबोदा और पार्टी अध्यक्ष गुस्ताव हुसाक अपने समय के घोर राष्ट्रवादी रहे हैं किन्तु सत्ता के मोह में उन्हें सोवियतपरस्त होना पड़ा है। उन्होंने येन-केन-प्रकारेण सोवियत हस्तक्षेप का औचित्य ठहराया और कहा है कि विदेशी हस्तक्षेप हमारे हित में था। परन्तु इन नेताओं के छद्म वचन जनता को कर्णकटु लग रहे हैं। परिणाम क्या होगा, भविष्य ही बतायेगा।

●

मसजिद में आग

एक अस्ट्रेलियावासी युवक माइकेल विलियम रोहन...ने येरूशलम स्थित अलक्सा नामक मसजिद में आग लगा दी। कहते हैं, रोहन पिछले चार महीने से येरूशलम में ही रह रहा था। वह कट्टर ईसाई है और मुसलमानों—का मनोबल तोड़ने के लिए यह अपकृत्य किया।

इस काण्ड को लेकर तमाम मुस्लिम संसार ने सिर पर पहाड़ उठा लिया है कर्नल नासिर ने एलान किया कि ताकत का जबाब ताकत से दिया जायेगा। हम येरूशलम को वापस लेंगे। उनके स्थल सेनापति मोहम्मद फौजी ने येरूशलम में कूच करने के लिए अपने जवानों का हौसला बढ़ाना शुरू किया। अरब लीग ने दनादन मीटिंगें बुलानी शुरू कर दी और येरूशलम की वापसी का जेहाद छेड़ दिया। सउदी अरब के शाह फैजल ने मुसलिम संसार को इस्राइलयों से बदला लेने के लिए सन्नद्ध रहने की अपील की। अफ्रेशियाई २४ देशों ने संयुक्त राष्ट्र महासचिव से मांग की कि अलक्सा काण्ड की निष्पक्ष जांच की जाये। भारत सरकार के उपविधि-मंत्री मोहम्मद यूनुस सलीम और १२ मुसलिम संसद् सदस्यों ने भी क्षोभ प्रकट किया। मुसलमानों के एक जत्था ने दिल्ली स्थित संयुक्त राष्ट्र संघ के कार्यालय पर भी प्रदर्शन किया और अग्नि काण्ड की भर्त्सना की।

मसजिद में आग लगाना कोई अच्छी बात नहीं। माइकेल रोहन को—जो फिलहाल कानून के सुपुर्द है—सजा मिलनी चाहिए। परन्तु मुसलमानों में इतनी बौखलाहट क्यों? इसलिए कि उनकी धार्मिक भावना को ठेस पहुँची है। मुसलमान यह क्यों भूल जाते हैं कि उन्होंने सदियों से संसार के सब धर्मावलम्बियों की भावना को ठेस पहुँचाई है। आज इतने अधिक मुसलिम देश दिखाई पड़ते हैं। क्या कुछ शताब्दी पूर्व ये मुसलिम देश-देश थे? ईरान से पारसी धर्म का नाश करके, दक्षिण पूर्वेशिया से हिन्दू धर्म का नाश करके, उत्तरी एशिया से बौद्ध धर्म का नाश करके इन्हें मुसलिम देश का रूप दिया गया। भारत तो मुसलमानों के बूचड़खाने का सबसे प्रमुख बकरा रहा है। हमारे देश के सहस्रों मन्दिर नष्ट-भ्रष्ट करके उन पर बनाई गई मसजिद आज भी मुसलिम आततायिता का प्रमाण पेश कर रही हैं।

तलवार को अपना मजहब मानने वाले मुसलमान आज क्षुब्ध हैं कि कोई तलवार का जबाब बन्दूक से देने वाला यहां पैदा हो चुका है। कुछ लाख की आबादी वाले इस्राइल के तहस नहस करने का दिवा स्वप्न देखने वाले अरब राष्ट्र आज इस छोटे से राष्ट्र का दबदबा मानने को विवश हो गए हैं। इस्राइलियों ने इन्हें कुत्ते की मौत मारा, इनकी जमीन भी छीन ली—वे इन्हें वक्त-बेवक्त डांटते-फटकारते भी रहते हैं। मसजिद में आग लगाने का अपकृत्य इस्राइलियों ने नहीं किया है—किसी गैर-इस्राइली ने किया है फिर भी यह शंका निर्मूल नहीं कि इस्राइलियों ने शह जरूर दी होगी। जो हो चुका, वह हो चुका, मुसलिम राष्ट्र को चुप रहना चाहिये। इस्राइल उनके लिए हौवा है—और हौवा रहेगा।

दूसरे धर्मावलम्बियों के पूजा स्थानों को नष्ट-भ्रष्ट करके उन पर मसजिद बनाने वाले मुसलमान आज शिकायत करते हैं कि उनकी मसजिद को जलाया क्यों गया? यह प्रश्न अपने आप में बड़ा बेहूदा है। उनका क्षोभ अनावश्यक और अशोभन है।

क्रान्तिकारी साहित्य

१. कायाकल्प — स्वामी समर्पणानन्द

पृष्ठ १४० आफसेट पेपर मूल्य १ रु०

२. अमर शहीद रामप्रसाद "बिस्मिल" की आत्मकथा

पृष्ठ १३० एन्टिक पेपर मूल्य १ रु०
१०० प्रतियाँ केवल ६० रु० में
राजधर्म प्रकाशन मन्दिर मार्ग नई दिल्ली–१

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के लिये प्रो० श्यामराव द्वारा प्रकाशित एवं सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित ।

श्रीयुत ....

राजधर्म
मन्दिर मार्ग नई दिल्ली-१
दूरभाष—४२०४१

पत्र व्यवहार करते हुए ग्राहक संख्या ... भूलें ।

ओ३म्

राजधर्म

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का पाक्षिक मुखपत्र

सम्पादक
प्रो० श्यामराव

वर्ष-१ : अंक-२२
वार्षिक शुल्क— १० रु०
एक प्रति ५० पैसे

२५ सितम्बर १९६९
दयानन्दाब्द १४५

हरयाणा के हृदय से

ओम प्रकाश पत्रकार

पंजाब में एक लम्बे समय से हिन्दी और पंजाबी भाषियों में चले हुए झगड़े के आधार पर मार्च १९६६ में भारत सरकार ने पंजाब का बंटवारा स्वीकार कर लिया और तुरन्त ही एक सीमा आयोग भी नियुक्त कर दिया। २-३ महीने पश्चात् आयोग ने अपनी रिपोर्ट पेश कर दी। आयोग की रिपोर्ट के आधार पर पंजाब ३ भागों (पंजाब-हरयाणा-हिमाचल प्रदेश) में बांट दिया गया। सीमा आयोग के रिपोर्ट पेश करते ही हरयाणा के राजनैतिक क्षेत्रों में असंतुष्टि की एक गरम लहर चल पड़ी, क्योंकि बहुत से हिन्दी भाषी क्षेत्र आयोग ने अपने फैसले में पंजाब को दे दिये थे। अभी हरयाणा में इस बात पर पूरी तरह विचार भी न हो पाया था कि आयोग के फैसले के विरुद्ध क्या पग उठाया जाए, तुरन्त सैन्ट्रल पार्लियामेन्ट्री कमेटी ने आयोग के इस फैसले को भी ठुकरा कर चण्डीगढ़ को जो हरयाणा के जिला अम्बाला की तहसील खरड़ मे स्थित है, अपनी विशेष बैठक बुलाकर केन्द्रीय सरकार के आधीन लेने का प्रस्ताव पास कर दिया।

केवल भारत ही नहीं दुनिया के इतिहास में भी ऐसा उदाहरण नहीं मिलेगा कि किसी सरकार न अपने ही द्वारा नियुक्त किये हुये जांच आयोग के निर्णय को अस्वीकार करके सब वैधानिक मान्यताओं को ठुकरा कर उस पर इतना जल्दी अपना फैसला थोंप दिया हो!! यदि सरकार आयोग के निर्णय से सहमत नहीं थी तो दूसरा आयोग नियुक्त किया जा सकता था। हरयाणा और पंजाब वासियों से आयोग के निर्णय के बारे में पूछा जा सकता था कि क्या उन्हें यह फैसला स्वीकार है? या फिर संसद की राय जानने के लिए आयोग की रिपोर्ट को संसद् में पेश किया जाता; परन्तु ऐसा स्वीकार नहीं हुआ। प्रश्न उत्पन्न होता है, तो फिर ऐसा क्यों हुआ? उत्तर सीधा और स्पष्ट है कि भैंस प्राय: लाठी वाले की हुआ करती है; जब कि केन्द्रीय सरकार को अकालियों के हाथों में लाठी की बजाय तलवार और हरयाणा वाले निहत्थे दिखाई देते हों तो न्याय की आशा बेकार है। न्याय के तराजू को कमजोर हाथों से नहीं तोला जा सकता।

केन्द्रीय सरकार कायर और बुजदिल लोगों के हाथों में होने के कारण पंजाब और हरयाणा के लिये सीमा निर्धारण का मामला एक भारी समस्या बन कर रह गया है। इस मामले को बीच में लटकते हुए तीन वर्ष से भी अधिक समय हो चुका है, परन्तु चण्डीगढ़ और हिन्दी भाषी क्षेत्रों की किस्मत का फैसला केन्द्रीय सरकार अपने पंजे में दबाये बैठी है। हरयाणा की जनता का रोष दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। प्रदेश भर में भूख हड़ताल, प्रदर्शन, जलसे तथा (प्रदेश बन्द) आदि की स्थिति उत्पन्न हो चुकी है। किसी भी दिन एक भारी तूफान खड़ा हो जाने की आशंका है। ऐसी स्थिति में केन्द्रीय सरकार को चाहिये कि वह नया सीमा आयोग नियुक्त करे या शाह आयोग की रिपोर्ट संसद् में पेश करे अथवा तुरन्त कोई इस प्रकार का निर्णय दे जिससे हरयाणा की जनता सतुष्ट की जा सके। परन्तु आज केन्द्र सरकार एक विशेष उलझन में है, एक ओर वह अन्याय का पक्ष लेकर बदनामी से डरती है तो दूसरी ओर न्याय को लागू करने पर सिक्खों से घबराती है। धिक्कार उस सरकार को जो न्याय करने से डरती हो और धिक्कार है ऐसी जनता को जिसने ऐसी बुजदिल सरकार को अपने ऊपर शासन करने की स्वीकृति दे रखी हो!!

उपरोक्त लेख में मैंने केवल हरयाणा की जनता पर हुए ३ वर्ष के अन्याय की ओर संकेत किया है, जबकि हरयाणा की जनता पिछले सौ-सवासौ वर्ष से किसी न किसी सरकार के अन्याय का शिकार होती रही है। सन् १८५७ के स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने के अपराध में अंग्रेज सरकार ने हरयाणा के टुकड़े करके वर्तमान हरयाणा को पंजाब के आधीन बना दिया। उस समय से १९६६ तक पंजाब सरकार हरयाणा की जनता के साथ सौतेली मां सा व्यवहार करती रही। हरयाणा वासियों पर इतने लम्बे समय तक अन्याय क्यों होता रहा, इस विषय को मैं बढ़ाना नहीं चाहता क्योंकि वह एक दर्दनाक और लम्बी कहानी है यहां केवल ऋषि दयानन्द के कथनानुसार इतना ही कहना चाहूँगा कि हरयाणा की जनता अन्याय को सहकर पाप की भागी बनती रही है।

आज भी हरयाणा की जनता चाहे तो अपने पुराने पापों को धो सकती है। वह सत्य और न्याय को अपने हाथ में लेकर अन्याय के जुए को फेंक दें और पापियों के विरुद्ध संघर्ष के लिए तैयार हो जाए तो दुनिया की कोई शक्ति उसे न्याय प्राप्त करने से नहीं रोक सकती। परन्तु उचित संघर्ष वही है जो सत्य और अहिंसा के आभूषणों से विभूषित हो। भूख हड़ताल, तोड़-फोड़, और प्रदेश बन्द संघर्ष की उचित रूप-रेखा नहीं। इस प्रकार का संघर्ष सत्य और न्याय पूर्वक रास्ता न होकर केवल देश और जाति की हानि का मार्ग है।

भारत एक प्रजातन्त्र है। प्रजातन्त्रात्मक संघर्ष ही प्रजातन्त्र देश के लिये उचित आन्दोलन है। आज हरयाणा की लड़ाई पजाब सरकार से नहीं केन्द्रीय सरकार

(शेष पृष्ठ २२ पर)

सम्पादकीय—

ऑल इन्दिरा रेडियो

भारत के सूचना-प्रसारण राज्य मन्त्री हैं श्रीमान् इन्द्रकुमार जी गुजराल और प्रधान मन्त्रिणी हैं श्रीमती इन्दिरा गांधी। इन्द्र को इन्दिरा जी के गीत गाने के लिये एक जबरदस्त साधन मिल गया है—ऑल इण्डिया रेडियो ! खास कर पिछले दिनों जबसे मोरारजी भाई और इन्दिरा जी टक्कर हुई है तब से जिस वफादारी का परिचय इन्द्र जी ने दिया है वह सचमुच बेमिसाल है। इधर बैंकों के राष्ट्रियकरण को लेकर कतिपय समाचार पत्रों में जो सरकार का विरोध हुआ उससे इन्दिरा जी और इन्द्र जी दोनों बहुत तिलमिला रहे हैं और तब से यह चर्चा का विषय बना हुआ है कि सरकार शीघ्र ही समाचारपत्रों का भी राष्ट्रियकरण करेगी। समाचारपत्रों की स्वतन्त्र आवाज को इन्दिरा जी की सरकार सहन नहीं कर पा रही है और सरकार द्वारा गोलमटोल शब्दों में, समाचारपत्रों के एकाधिकार सम्बन्धी आक्षेप किये जा रहे हैं। यहाँ तक कि स्टेट्समैन पत्रिका के व्यंगचित्र (कार्टून) पर भी इन्दिरा जी ने आक्षेप किया है। अब तो शिक्षा के राष्ट्रियकरण की भी चर्चा चल पड़ी है—समझ में नहीं आता कि वर्तमान कांग्रेस का यह सत्ताधारी गुट किस हद तक अपने एकाधिकार का विस्तार करना चाहता है ? वैदिक धर्म अनुसार विचार-प्रसारण पर इस तरह का एकाधिकार सर्वथा अनुचित एवं घातक है। हमारा आरम्भ से यह सिद्धान्त रहा है कि किसी व्यक्ति को अधिकार नहीं कि वह अपने विचारों से सहमत होने के लिये किसी पर बल प्रयोग कर सके। विचार-परिवर्तन का एकमात्र साधन प्रेम युक्त तर्क है तथा स्वयं आचरण द्वारा आदर्श उपस्थित करना है। पर सरकार अपने अधिकारों का प्रयोग करके समाचारपत्रों को अपनी बात मनवाने का उल्टा सीधा प्रयास कर रही है—कभी टेलीप्रिन्टर की लाइन न देकर, कभी कागज का कोटा कम करके और कभी सरकारी विज्ञापन बन्द करके। अब इतने पर भी सन्तुष्ट न होकर पूरा-पूरा हथियाने की योजना बन रही है। अधिक संख्या में जनसाधारण तक अपने विचार पहुँचाने के आज दो-तीन ही प्रमुख साधन है—जैसे समाचारपत्र, रेडियो, टेलीविजिन सिनेमा आदि। यदि इन सभी साधनों पर सरकार का एकाधिकार हो जाय तो भारत और लाल चीन में विशेष अन्तर नहीं रह जायगा। एक अधिकृत सूचना से यह ज्ञात हुआ है कि कम्यूनिस्ट चीन के लगभग ८० करोड़ चीनियों को आज तक इस बात की कोई सूचना नहीं कि मानव चन्द्रमा पर उतर चुका है। चीन की संकुचित राष्ट्रियता के आधार पर एक अमेरिकन का चन्द्रमा पर उतरना एक ऐसी बात है कि जिसे चीनी न ही जानें तो अच्छा ! जब अध्यक्ष माओ के हाथ में सारे सूचना-प्रसारण के साधन केन्द्रित हैं तो बेचारे चीनी अज्ञानता में ही आनन्द मना रहे हैं।

वैदिकधर्म के अनुसार राष्ट्र के निष्पक्ष विद्वानों को लेकर विद्यार्य सभा एवं धर्मार्य सभा गठित होनी चाहिए। इस सभा पर सरकार का हस्तक्षेप नहीं के बराबर हो और जिस प्रकार आज उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश न्याय करने में स्वतन्त्र होते हैं उसी प्रकार समाचारपत्रों आदि का संचालन ऐसी स्वतन्त्र सभाओं के हाथ होना चाहिए। इंग्लैंड में रेडियो सरकार के हाथ में न होकर एक स्वतन्त्र संस्था "ब्रिटिश ब्राडकास्टिंग कारपोरेशन" के अन्तर्गत है जिसके तत्वावधान में सरकारी नीतियों की स्वस्थ आलोचना भी खुलकर की जाती है। इसी प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका में है। पर हमारे देश में यह स्थिति नहीं है। मैं अपने व्यक्तिगत

अनुभव और अपने सहयोगियों के साथ घटित घटनाओं के आधार पर यह स्पष्ट कह सकता हूं कि बड़े से बड़े विद्वान् को भी रेडियो पर सरकार की आलोचना का कोई अधिकार नहीं होता। आल इण्डिया रेडियो पर अपना पूर्ण एकाधिकार स्थापित कर लेने के बाद श्री इन्द्र कुमार जी का समाचार पत्रों की ओर आगे बढ़ना क्या माने रखता है—इसे इण्डियन एक्सप्रेस के सम्पादक प्रसिद्ध पत्रकार फ्रैंक मोरेस के शब्दों में पढ़िए—

समाचारपत्रों (अंग्रेजी और भारतीय भाषाओं) की पाठक-संख्या कुल मिलाकर ७० लाख है, जब कि आकाशवाणी मीडियम वेव पर तो कुल जनसंख्या के ७० प्रतिशत तक पहुँचती है और शार्ट वेव सर्विस को लिया जाये तो देश की पूरी जनसंख्या तक ही अपनी आवाज पहुँचा देती है, भारत में साक्षरता केवल ३० प्रतिशत है, जाहिर है इतनी कम साक्षरता वाले देश में समाचारपत्रों जैसे साधनों की अपेक्षा रेडियो और टेलीविजन जैसे दृश्य और श्रव्य साधन अधिक प्रभावशाली हैं, देश के वे ७० प्रतिशत लोग जो न लिख और पढ़ सकते हैं सुन तो अवश्य ही सकते हैं।

"देश में लाईसेंसशुदा कोई एक करोड़ रेडियो सेट होंगे, इनमें पाँच लाख ऐसे रेडियो सेट भी जोड़ लेने चाहिएँ जो बिना लाइसेंस के ही चलते हैं, फिर गाँवों में सामूहिक रूप से लोगों को रेडियो सुनवाने की योजनाएँ भी हैं, जिनके लिए १ लाख ४० हजार रेडियो सेट होंगे, हर समूह में औसतन पन्द्रह-बीस लोग रेडियो सुनते हैं और समूचे देश में इस तरह के कोई १६ हजार ७ सौ फोरम बने हुए हैं। इन आँकड़ों में ऐसे रेडियो श्रोता शामिल नहीं हैं जो देहातों में इधर-उधर और शहरों में होटलों और जलपानगृहों में रेडियो सुनते रहते हैं, समाचारपत्र उद्योग में एकाधिकार के मुकाबले हमारे छोटे गोयबलों का यह कितना बड़ा एकाधिपत्य है, श्री गुजराल अपने कमरे में बैठकर अपने ही मंत्रालय द्वारा प्रस्तुत इन आँकड़ों का ठंडे दिल से अध्ययन करें तो वह कम से कम तथ्यों की जानकारी के बूते पर तो बोल सकेंगे। जो लोग केवल पढ़ और लिख सकते हैं उन्हें देखते हुए भारत में साक्षर लोगों की संख्या १६ करोड़ होगी, जबकि देश में कुल समाचारपत्रों की बिक्री ७० लाख के अन्दर-अन्दर है। इस प्रकार लगभग ९ करोड़ ऐसे लोग हैं जो समाचारपत्रों के प्रभाव से अछूते रह जाते हैं। बहुत मोटे अनुमान के अनुसार एक समाचारपत्र को दस आदमी पढ़ते हैं। समाचारपत्र न पढ़ सकने वाले नौ करोड़ लोगों को मिलाकर निरक्षर लोगों की संख्या ३६ करोड़ हो जाती है। इससे कुल जोड़ ४५ करोड़ का बैठता है, जिन पर समाचारपत्रों की पहुँच तो होती नहीं, पर वे श्री गुजराल की गिरफ्त में आ जाते हैं।

एकाधिकार किसे कहते हैं?

"एकाधिकार का अर्थ है किसी व्यापार, चीज अथवा सेवा पर उसी क्षेत्र में किसी का इस तरह का नियंत्रण अथवा एकाधिपत्य जिसमें वह उस चीज, व्यापार अथवा सेवा में मनमाना दाम बढ़ा सके और वह दाम खुले बाजार में निर्धारित दाम से भी बहुत अधिक हो, दूसरे शब्दों में एकाधिकार खुली होड़ अथवा बाजार का उलट है। भारत में एकाधिकार-प्रणाली की तुलना बहुत से लोग अमेरिका से करते हैं, जब कि अमेरिका उन देशों में से है जहाँ एकाधिकार पर कानूनी प्रतिबंध हैं और खुली होड़ को अधिकाधिक बढ़ावा दिया जाता है।

"आज भारत के सब से बड़े प्रचार-साधन पर श्री गुजराल का अधिकार है, जिसका इस्तेमाल वह एक पार्टी के लिए भी नहीं बल्कि पार्टी के एक ग्रुप के लिए कर रहे हैं। एकाधिकार का इससे बढ़ कर और क्या उदाहरण हो सकता है? यह एकाधिकार अब उस रास्ते पर है जहाँ समाज को तानाशाही की तरफ ले जाया जाता है, सौभाग्य से भारत के समाचारपत्र अभी उस निम्न स्तर तक नहीं पहुँचे हैं कि उन्हें अनुचर कहा जा सके, पर यदि राष्ट्रीयकरण की तरफ इन्हें ले जाया गया तो निश्चय ही ये अनुचर के अलावा कुछ और नहीं रह जायेंगे। सरकार के प्रेस रजिस्ट्रार की रिपोर्ट के अनुसार ही कई संस्करणों वाले दैनिक पत्रों की ग्राहक संख्या उनकी कुल ग्राहक-संख्या का ४० प्रतिशत से भी कम होती है, इन आँकड़ों से ही प्रश्न होता है कि एकाधिकार कहाँ है? एक ही प्रबंध के अंतर्गत निकलने वाले अनेक पत्र-पत्रिकाओं के लिए एकाधिकार की बात भी तर्कसंगत नहीं जान पड़ती। २ करोड़ ३० लाख की कुल ग्राहक-संख्या में ऐसे पत्रों का हिस्सा ५ लाख से भी कम ही

आता है। भारत से बाहर एक ही प्रबंध के अंतर्गत निकलने वाले पत्रों में लार्ड टामसन का नाम बहुत लिया जाता है, पर उनके सभी पत्रों की नीति तो एक-सी नहीं होती। अनेक ऐसे उदाहरण हैं जब एक ही प्रबंध के इन पत्रों की नीतियाँ एक दूसरे से बिलकुल भिन्न रही हैं। इनका एक पत्र तो बहुत अधिक अफ्रीकी पक्षधर होने के कारण सालसबरी में रोडेसिया सरकार द्वारा बन्द भी कर दिया गया था। लेखक के साथ बातचीत करते हुए एक बार लार्ड टामसन ने कहा था, 'मैं अपने सम्पादकों से कभी बात नहीं करता, केवल अपने मूख्य एकाउन्टेंट से ही मिलता हूं।' अगर श्री गुजराल ध्यान से अखबार पढ़ते होंगे तो उन्हें मालूम हो जायेगा कि एक ही प्रबंध के अंतर्गत निकलने वाले पत्रों के बाज़ दफा एक-दूसरे के कितने विपरीत होते हैं। बड़े समाचारपत्रों में सपादकों के कार्य में प्रबन्धकों का कोई हस्तक्षेप नहीं होता, क्योंकि कोई भी स्वाभिमानी पत्रकार ऐसे पत्र में काम करने को तयार नहीं होगा जिस के मालिक अथवा प्रबंधकों से उसके विचारों का मेल न होता हो। श्री गुजराल को समाचारपत्र-उद्योग में एकाधिकार खोजने के बजाय अपने में ही झांक कर देखना चाहिए तब शायद उन्हें सत्य का स्पष्ट आभास होगा।"

राष्ट्रिय स्तर पर विचार प्रसारण विशुद्ध निष्पक्ष एवं विद्वान् ब्राह्मणों का कार्य होना चाहिए। उस पर न तो किसी पूंजीपति वैश्य का हस्तक्षेप हो और न ही किसी शासक दल के क्षत्रिय का। यदि वर्तमान शासक वर्ग 'आकाशवाणी' पर से अपना एकाधिपत्य समाप्त नहीं करता और समाचारपत्रों को भी अपनी चपेट में घसीटना चाहता है तो चार्वाक जैसे घोर नास्तिक को भी विचार स्वातन्त्र्य प्रदान करने वाले वैदिक धर्मियों के इस राष्ट्र में असहिष्णुता अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच जायगा और परिणामजन्य अराजकता का उत्तरदायित्व वर्तमान सरकार पर और सरकार की 'आल इन्दिरा रेडियो' पर होगा।

●

सामयिकी—

कम्यूनिज़्म या दासप्रथा ?

अभी पिछले दिनों एक प्रसिद्ध रूसी उपन्यासकार अनातोली कुज्नेत्सोव ने जालिम रूस की ज्यादती के विरुद्ध बगावत की आवाज बुलन्द करने के लिये रूस से भागकर इंगलैण्ड की शरण ली। इस प्रकार की घटनायें रूसी बुद्धिजीवियों के सम्बन्ध में आये दिन सुनने को मिलती हैं। आज से कुछ समय पहले एक पिआनों वादक ब्लादीमिर अश्केना जी के ऊपर जो जुल्म ढाया गया उसका एक चित्र 'दिनमान' के शब्दों में पढ़िये—

३२ वर्षीय श्री अश्केनाजी इन दिनों यूनान के पुराना एपिदाव्रिया नामक स्थान पर सपरिवार प्रवास कर रहे हैं। जुलाई १९६३ में उन्होंने रूस से लंदन के लिए प्रस्थान किया था और तब से वह पश्चिमी देशों में ही हैं, किन्तु उन्होंने कुछ दिन पूर्व तक अपने इस लंबे प्रवास के बारे में किसी को कुछ नहीं बताया। पिछले दिनों जब उन का नाम श्री कुज्नेत्सोव के प्रसंग में घसीटा गया तो उस की उन पर तीव्र प्रतिक्रिया हुई और उन्होंने अपने प्रवास का रहस्योद्घाटन किया।

श्री अश्केनाजी लेखकों और कलाकारों के प्रति रूस सरकार के रवैये से संतुष्ट नहीं थे और १९६३ में जब वह लंदन में थे तभी उन्होंने ब्रिटेन में बसने का निश्चय कर लिया था। किन्तु लगभग उसी अप्रैल, १९६३ में रूस सरकार ने उन्हें वीसा देने का निश्चय किया, जिस में उन के आने-जाने पर कोई प्रतिबंध नहीं था वीसा मिलने पर वह अपनी पत्नी दोदी को लेकर अपने माता-पिता से मिलने १० दिन के लिए मॉस्को गये, अपने दो वर्षीय पुत्र को वह लंदन में संबंधियों के पास छोड़ गये, मॉस्को पहुँचने पर उन्हें शीघ्र ही यह आभास मिल गया कि वह किसी षड्यंत्र में फँस गये हैं और अब मॉस्को से बाहर नहीं जा सकेंगे, 'मेरे मॉस्को प्रवास के १० दिन अभी पूरे भी नहीं हो पाये कि मुझे स्पष्ट रूप से यह बता दिया

गया कि निर्धारित अवधि के बाद भी मुझे मॉस्को में ठहरना होगा, सोवियत सांस्कृतिक मंत्रालय में मुझ से कुछ दिन और ठहरने तथा श्रमिकों के समक्ष कुछ कार्यक्रम प्रस्तुत करने के लिए कहा गया। मैं रुकने के लिए राजी हो गया, किंतु मेरे मन में रूस सरकार के रवैये के प्रति संदेह बना रहा, श्री अश्केनाजी का यह संदेह उस समय और भी दृढ़ हो गया जब कि उन्होंने २० जून को लंदन के लिए प्रस्थान करने का निश्चय किया, किंतु सांस्कृतिक मंत्रालय ने अड़ंगा लगाते हुए कहा कि 'आप रूसी नागरिक हैं आप कुछ समय और प्रतीक्षा कीजिए।'

मुझे झूठ बोलना पड़ा

सांस्कृतिक मंत्रालय के अधिकारियों के इस व्यवहार से श्री अश्केनाजी बहुत ही परेशान हुए और उन्होंने अपने पुत्र के पास लंदन पहुँचने की उम्मीद छोड़ दी। अपनी उच्च शिक्षा और उत्कृष्ट कला के बावजूद उन्होंने रूसी व्यवस्था के समक्ष स्वयं को असहाय पाया। किन्तु उनकी पत्नी, जो आइसलैंड की हैं, मॉस्को में रहने को तैयार नहीं थी। उसने धैर्य से काम लेने का परामर्श दिया। श्री अश्केनाजी अपने लिए उतना चिंतित नहीं थे जितना कि अपनी पत्नी के लिए, जिसने उन के भविष्य को उज्ज्वल बनाने के उद्देश्य से रूसी नागरिकता स्वीकार कर के अपनी स्वाधीनता का बलिदान कर दिया। परन्तु वह उस के लिए कुछ भी नहीं कर पा रहे थे। पत्नी के परामर्श को मानने के अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं था, अपनी पत्नी के धैर्य और दबाव के अंतर्गत साहसपूर्ण व्यवहार से उन्हें बहुत बल मिला और लंदन जाने की स्वीकृति पाने के लिए प्रयास करते रहे, किन्तु वह सांस्कृतिक मंत्रालय को यह विश्वास नहीं दिला सके कि वे लोग सदैव के लिए मॉस्को नहीं छोड़ रहे हैं। सांस्कृतिक मंत्रालय के अधिकारियों को विश्वास था कि उन की पत्नी दोदी फिर मॉस्को नहीं आयेगी, एक हद तक उनका यह विश्वास ठीक भी था। जब उन्हें २० जून, १९६३ को लंदन जाने की आज्ञा नहीं मिली तो श्रीमती अश्केनाजी ने स्पष्ट शब्दों में अपने पति से कहा, 'यदि हम जा सके तो मैं फिर कभी नहीं लौटूंगी। पत्नी के इस निर्णय से श्री अश्केनाजी को और भी परेशानी हुई। उन्होंने फिर सांस्कृतिक मंत्रालय का द्वार खटखटाया और सिद्धांत की दुहाई दी, परन्तु उन की एक न चली, अंततोगत्वा तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री ख्रुश्चोव के हस्तक्षेप करने पर उन्हें लंदन जाने की आज्ञा मिली।

'जब हम लंदन पहुँचे तो मैं यह जानता था कि हम फिर कभी मॉस्को नहीं जायेंगे। हम फिर मॉस्को में फँसने का जोखिम उठाने को तैयार नहीं थे। मैं यह जानता था कि देश और परिवार में मुझे परिवार को वरीयता देनी चाहिए। इस स्थिति से मुझे बहुत सदमा पहुंचा। मैं यह नहीं जानता था कि मैंने मॉस्को से चलते समय श्रीमती फुर्त्स्यवा (सांस्कृतिक मंत्री) से पुनः लौटने की जो हामी भरी थी वह झूठ थी—वह एक विशिष्ट बात थी मुझे अपनी जान बचाने के लिये झूठ बोलना पड़ा—रूस से मुझे बेहद प्यार है, रूसी चरित्र की कुछ बातें—उदारता और विशालहृदयता—मुझे प्रिय है किंतु ये विशेषताएँ अब लुप्त होती जा रही हैं—मेरी इच्छा है कि मैं रूस जा कर अपने माता-पिता और बहिन को देखूं और अपनी कला का प्रदर्शन करूँ। किंतु अब यह असंभव है, मुझे अब किसी भी प्रकार की गारंटी पर विश्वास नहीं रहा—यहाँ तक कि सोवियत संघ के उच्चतम संस्थानों के अध्यक्षों की गारंटी पर भी मैं विश्वास नहीं कर सकता,' इन शब्दों में श्री अश्केनाजी ने अपनी व्यथा उड़ेल दी।

जासूस ने पीछा किया

श्री अश्केनाजी की व्यथा-कथा १९४७ की उन की अमेरिका-यात्रा से आरंभ होती है, उस वर्ष वह कुछ संगीत-समारोहों में भाग लेने के लिए अमेरिका गये थे, रूस सरकार ने 'फरिश्ता' के रूप में उनके साथ अपने एक गुप्तचर को भेजा। श्री अश्केनाजी वस्तु-स्थिति से अवगत नहीं थे। वह युवा सुलभ स्वभाव से अपने इस संरक्षक से साम्यवाद और मार्क्सवाद के बारे में बहुत कुछ कह गये, यानी कि उन्हें आधुनिक संगीत तथा कला पसंद है; अमेरिका में साम्यवाद क्रांति द्वारा नहीं लाया जा सकता, बल्कि उसे धीरे-धीरे परिवर्तन द्वारा ही प्रतिष्ठित किया जा सकता है। अमेरिका से लौटने पर इस गुप्तचर ने श्री अश्केनाजी के विरुद्ध एक प्रतिवेदन सांस्कृतिक मंत्रालय को दिया, जिस में उन पर अन्य आरोपों के साथ एक प्रमुख आरोप यह लगाया गया कि उनकी विचारधारा मार्क्सवाद-लेनिनवाद के विरुद्ध है। फिर क्या था, सांस्कृतिक मंत्रालय ने उन की विदेश-यात्राओं पर प्रतिबंध लगा दिया। यह प्रतिबंध १९६१

(शेष पृष्ठ १८ पर)

इन्दिरा जी की जय हो !

●

—जय हो देवी इन्दिरा जी की जय हो !

—आज ये पश्छिम में सूरज कैसे निकल आया ? कल तक तो इन्दिरा जी के नाम पर पानी नहीं पीते थे—आज क्या हो गया ?

—बस ऐसा ही कुछ हो गया कि देश के गरीब तो गरीब, अमीर भी दिल से इन्दिरा जी की दुहाई दे रहे हैं।

—क्या कहा—अमीर भी ? झूठ ! अमीर तो इन्दिरा जी से नाराज हैं।

—हैं नहीं, थे। अब तो देश के लखपति और करोड़पति अपने-अपने नये मसीहा पर ईमान ला रहे हैं।

—आखिर बात क्या हुई ?

—तो सुनो ! महाभारत की कहानी याद है ?

—अच्छी तरह। एक था भीम ! उसका भाई था अर्जुन नकुल·········

—अरे वो नहीं। किस जमाने की बात करते हो ? मैं बीसवीं सदी के महाभारत का जिक्र कर रहा हूं।

—फिर तुम्हीं बताओ।

—देखो ! अंग्रेजी में कहावत है—हिस्ट्री रिपीट्स इट् सेल्फ अर्थात् इतिहास अपनी पुनरावृत्ति करता है। ५ हजार साल पहले का महाभारत और आज से कुछ दिन पहले का महाभारत ! कितनी समानता है दोनों में ! तुम्हें याद है जब कौरवों के सेनापति भीष्म पाण्डवों को गाजर मूली की तरह काटते आगे बढ़ रहे थे तो अर्जुन ने उन्हें कैसे मारा था ?

—पता है—शिखण्डी को सामने करके।

—शाबास ! इसी तरह आधुनिक महाभारत में सिण्डीकेट के सेनापति निजलिंगप्पा को परास्त करने में देवी इन्दिरा जी ने दो व्यक्तियों को सामने किया। एक थे फखरुद्दीन अली अहमद और दूसरे थे हरिजन हृदय सम्राट बाबू·········

—जगजीवनराम जी !

—बहुत ठीक ! आज इन्हीं की कहानी कहनी है। बाद में माफी मांग ली तो क्या हुआ पर एक बार तो निजलिंगप्पा साहब को बदनाम करके रख दिया। आज के युग में जब कम्युनिष्टों के भौतिकवाद और पूंजीपतियों के भोगवाद में दुनियां लोट पोट हो गई है। आत्मा परमात्मा को भूल कर स्वार्थ के वशीभूत हो गई है—हमारे देश का सौभाग्य कि कुछ लोगों ने अन्तरात्मा की आवाज सुनी। बाबू जगजीवन राम जी की अन्तरात्मा ने भी आवाज दी और दीन दुखियों के आंसू पोछने के लिये एक महान् स्टण्ट का सृजन हुआ।

—सत्य वचन महाराज। फिर क्या हुआ ?

—देश में एक नये समाजवाद का उदय हुआ। गरीब खुश हुए पर मोटे-मोटे सरमायेदार बेचारे बड़े परेशान हुए। इस समाजवाद की आंधी में वे रास्ता भटक से गये। फिर सबने मिल कर सोचा—समदर्शी है नाम तिहारो। चलो इस जग में जीवन देने वाले राम के पास।

—आपका मतलब······

—बीच में मत बोलो। सुनते जाओ !

—राम के दरबार में फरियाद हुई—लखाधिपति और करोड़ाधिपतियों ने कहा—महाराज आपकी अन्तरात्मा की ज्योति से करोड़ों सताये हुओं को सहारा मिला। हम भी दुख के मारे और टैक्स सताये हुए आपकी शरण में आये हैं हमें भी कोई मार्ग दर्शन कीजिए। जगजीवन राम जी मुस्कराये और कहा—मेरे पीछे-पीछे चलो। देखो। इस जीवन में सुखी होने का रास्ता है आप्त और महापुरुषों के चरण चिन्हों पर चलो। जिस प्रकार मैंने पिछले दस वर्षों से कोई इन्कमटैक्स नहीं पटाया और बार-बार कहने पर भी अपने हजारों के मासिक आय का कोई

(शेष पृष्ठ ३१ पर)

आर्थिक विषमता के लिए सरकारी नीति जिम्मेदार है

अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार

ऋषिकल्प दादाभाई नौरोजी ने १८७८ में १८६८ के वास्ते गणना करते हुए बताया था कि प्रति भारतीय की आमदनी २० रुपया है। यह बात १८६८ की है। अब इस समय प्रति व्यक्ति आमदनी इस प्रकार है—

	रु०
१९४८-४९	२४९.६
४९-५०	२५०.६
५०-५१	२४७.५
५१-५२	२५०.३
५२-५३	२५५.७
५३-५४	२६६.२
५५-५६	२६७.८
५६-५७	२६७.८
५७-५८	२७५.६
५८-५९	२६७.३
५९-६०	२८०.१
६०-६१	२७९.२
६१-६२	२९३.२
६२-६३	२९४.३
६३-६४	३०१.१
६४-६५	३१६.० (अपूर्ण)
६५-६६	३०१.८ (अपूर्ण)
६६-६७	३००.८ (अपूर्ण)

प्रति व्यक्ति वार्षिक आमदनी की वृद्धि का प्रमाण इस प्रकार है—

प्रथम नियोजन	१.९
द्वितीय नियोजन	१.८
तृतीय नियोजन	०.९

इसको देखकर क्या भीष्म पितामह की यह बात स्मरण नहीं आती कि काल राजा का कारण नहीं है। राजकाल का कारण है—

राजा कालस्य कारणम् ?
कालो वा राज्ञः कारणम् ?
इत्यत्र संशयो मा भूत्
राजा कालस्य कारणम् ॥

एटम बम से ध्वस्त जापान आज आशा कर रहा है कि १९७० तक दुनिया को तीन बड़े राष्ट्रों में एक हो जाएगा और २१ वीं शताब्दी में वह सबसे अधिक समृद्ध देश होगा, अमेरिका नहीं। क्या यह इस बात को प्रमाणित नहीं करता कि इस देश की सरकार ने गरीबी बढ़ाकर, आर्थिक विषमता को बढ़ाया है।

ब्रिटिश शासन ने इस देश में शासन की भाषा अंग्रेजी रक्खी क्योंकि वे विदेशी थे। इस देश पर अपनी प्रभुता जमाने के लिए और इस देश में वर्ग भेद उत्पन्न करने और बढ़ाने के लिए उसने अंग्रेजी को कायम रक्खा। शासन सुधार हुए परन्तु अंग्रेजी बढ़ती गई। फल क्या हुआ ? भारतीयों के अन्दर आत्महीनता की भावना उत्पन्न हुई। एक समय इस देश में मैट्रिक पास वकील हो सकता था। फिर एफ० ए० पास वकील होने लगा। मोतीलाल नेहरू, लाला लाजपतराय प्रभृति इसी श्रेणी में थे। अब सिर्फ बी० ए० पास किया हुआ भी दो साल में वकील नहीं हो सकता। वकालत पास करने में तीन साल लगते हैं क्योंकि कहा जाता है कि उनका [illegible]जी का ज्ञान उतना नहीं होता। इसका अर्थ है कि भारत का एक युवक २३ साल से कम उम्र में वकालत प्रारम्भ नहीं कर सकता। इसके मुकाबले इंग्लैंड में १८ साल का युवक

बैरिस्ट्री कर सकता है क्योंकि वह इन्ट्रेन्स पास करके २ साल में बैरिस्ट्री कर लेता है। फलतः वह एक भारतीय युवक से ५ साल पहले आजीविका अर्जन करने लगता है और अपने मां-बाप पर भार नहीं रहता है।

स्वर्गीय श्री मोतीलाल नेहरू ने बजट पर बोलते हुए केन्द्रीय एसेम्बली में कहा था कि इस देश का प्रशासन रोल राइस एडमिनिस्ट्रेशन है। यदि श्री नेहरू की बात को आज कहा जाय तो कहना होगा कि आज का प्रशासन सुपरसोनिक जेट (अतिस्वन विमान प्रशासन) प्रशासन है। १९४९-५० में भारत सरकार की राजस्व आय ३ अरब ४९ करोड़ रुपया थी। आज १९६८-६९ में लगभग १० अरब से ऊपर है। भारत सरकार की आमदनी कहाँ से आई? उत्पादन शुल्क से। युद्धकाल में केवल तम्बाकू पर उत्पादन शुल्क लगता था। कांग्रेस शासन में चीनी, तम्बाकू और दियासलाई पर उत्पादन शुल्क लगना शुरू हुआ। इसके बाद इनकी संख्या १४ हुई और आज इस देश में हर एक वस्तु पर उत्पादन शुल्क लिया जाता है। फलतः सामान्य जन गरीब होता जा रहा है और अमीर आदमी अमीर होता जा रहा है सरकार की आमदनी का मुख्य स्रोत निगम कर और आय कर नहीं हैं बल्कि उत्पादन शुल्क है। राज्यों की आय का मुख्य स्रोत बिक्री कर है। भूमि कर, स्टाम्प ड्यूटी और आबकारी—ये गौण हो गए हैं। दिल्ली के होटलों में दाल और सब्जी पर भी बिक्री कर लगता है। जब अप्रत्यक्ष कर इस मात्रा में लिया जाता हो तो स्वभावतः उसका फल होता है मुद्रा स्फीति। मुद्रा स्फीति के बढ़ने से गरीब की गरीबी बढ़ती और अमीर की अमीरी बढ़ती है। युद्ध काल में जिस मुद्रा स्फीति का आश्रय बजट के घाटे को पूरा करने के लिया गया था वह आज भी जारी है। १९६८-६९ के बजट के घाटे को पूरा करने के लिए २९० करोड़ रुपये की घाटे की वित्तीय व्यवस्था का आश्रय लिया गया। इसका अर्थ है नासिक प्रिंटिंग प्रेस में इतने नोट छापे गए। कागजी नोटों की संख्या बढ़ने से मंहगाई बढ़ी और आज थोक भावों की निदेशक संख्या २२७ पर पहुँच रही है। रिजर्व बैंक के रिपोर्ट के अनुसार १९६९ के पहले ६ महीनों में १० प्रतिशत कीमतें बढ़ी हैं। कीमतों का बढ़ना आर्थिक विषमता को बढ़ाता है—घटाता नहीं। इसी प्रकार भारत सरकार की नीति भारत को विभक्त रखने की जहाँ है वहाँ उसकी नीति भारत को खंड-खंड करने की भी है।

वर्तमान सरकार डा० राधाकृष्णन् की निर्दिष्ट इस सीमा पर विश्वास नहीं करती कि—

हिमालयं समारम्य यावद्विन्दु सरोवरम्,
हिन्दुस्तानमिति स्यातं आद्यन्तक्षरयोगतः।

फलतः कन्ट्रोल जारी है। युद्ध काल समाप्त हुए पच्चीस साल हो गए लेकिन इस देश में कण्ट्रोल जारी हैं। यद्यपि स्वर्गीय रफी अहमद किदवई जैसे कुशल प्रशासन ने १९५३ में यह दिखा दिया था कि राशन की कोई जरूरत नहीं है। देश में अनाज की कमी नहीं है और गेहूँ का भाव गिरते-गिरते ८ रुपये मन आ गया था। और उस वक्त श्री किदवई ने किसानों को आश्वासन दिया था कि वे १० रुपये मन के हिसाब से जितना अनाज बेचना चाहें, हम खरीदने को तैयार हैं। यह है कण्ट्रोल हटाने और राशन हटाने का परिणाम। यदि हम अनाज के आयात के आँकड़ों (१९५१–६८) को देखें तो एक आश्चर्यजनक दृश्य नजर आता है। आप भी उसको देखिये—

अनाज का आयात लाख टनों में

वर्ष	आयात
१९५१	४८.०
५२	३९.३
५३	२०.४
५४	०८.४
५५	०७.१
५६	१४.४
५७	३६.५
५८	३२.२
५९	३८.७
६०	५१.४
६१	३५.०
६२	३६.४
६३	४५.६
६४	६२.७
६५	७४.६
६६	१०३.६
६७	८६.७
६८	५६.५
६९	५५.० (संभावित)

१९५४-५५ में जो आयात हुआ है वह बर्मा और भारत के बीच हुए करार का फल है। १९३७ में बर्मा भारत से अलग हुआ। बर्मा के प्रति भारत का जो देय था वह उसने चावल के रूप में दिया है अन्यथा अनाज का एक दाना भी आयात नहीं हुआ।

इतना अनाज आयात करने पर भी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन १९५१ में यदि १३.८९ औंस दाल, चावल या रोटी दाल उपलब्ध था तो १९५४ में १६.१० और १९५५ में १५.६६ औंस उपलब्ध था। इनके मुकाबले १९६८ में प्रति व्यक्ति १६.१० औंस अनाज ही उपलब्ध था। यह प्रति व्यक्ति अनाज की उपलब्धि जिस सरकारी नीति का परिणाम है वही नीति इस देश में आर्थिक विषमता को बढ़ाने वाली है।

सरकारी कर्मचारियों की संख्या आज इतनी अधिक बढ़ गई है कि जो काम पहले अण्डर सेक्रेटरी करता था वह काम आज ज्वायंट सेक्रेटरी करता है। हर एक विभाग में ज्वायंट सेक्रेटरी, डिप्टी सेक्रेटरी आदि की संख्या निरन्तर बढ़ती जाती है। अंग्रेजी पठित वर्ग इस प्रकार बेकारी से मुक्त किया जाता है और उसका भाग साधारण जनता पर पड़ता है। दूसरी ओर फाइलें ले जाने के लिए चपरासी नियुक्त किये जाते हैं। जो काम एक प्राइमरी पास व्यक्ति कर सकता है उसके लिए मैट्रिक पास रक्खे जाते हैं। फलतः वह ऊँचा वेतन मांगता है और शासन व्यय बढ़ाता है। डाक तार घर में युद्ध काल से पहले अधिकतर लोग मिडिल पास होते थे। अतः वे पूरी मेहनत व ईमानदारी से काम करते थे। क्योंकि उनको मालूम था कि उनका जो बाजार मूल्य है, उससे वे अधिक पा रहे हैं। आज वही काम बी० ए० पास ग्रेजुएट करता है—और वह असंतुष्ट है। क्योंकि वह जानता है कि बाहर इससे अधिक पैसे मिल सकते हैं। उसके असंतोष का परिणाम यह है कि डाक-तार की सर्विस जो पहले इस देश में बहुत अच्छी मानी जाती थी—वह अब बिल्कुल निकम्मी हो गई है। अब एक पैसे का कार्ड का कोई स्वप्न भी नहीं देख सकता।

भारत स्वाधीन हुआ परन्तु भारतीय बुद्धि का सम्मान नहीं हुआ। लाल किला या जयपुर या जोधपुर के संग्रहालयों में ५००-६०० साल पुरानी तलवारें, किरचें व भाले रक्खे हुए हैं। काल इनकी चमक समाप्त नहीं कर सका। इनकी धार भी कुंठित नहीं हुई है। इनके इस्पात को तैयार करने वाली बुद्धि भारतीय थी—कोई विदेशी नहीं। परन्तु आज हम बोकारो के इस्पात के कारखाने के वास्ते १२ साल से मदद के लिए इन्तजार कर रहे हैं। १९५० में भारत ११ लाख टन इस्पात तैयार करता था और चीन ७ लाख टन इस्पात तैयार करता था। आज क्या दृश्य है? चीन डेढ़ करोड़ टन इस्पात तैयार करता है और वह दावा करता है कि १९७० में रूस से भी अधिक इस्पात तैयार करने लगेगा। भारत अभी ६० लाख टन इस्पात तैयार करता है और इस्पात हर साल आयात करता है। चीन ने यह सिद्धि कैसे प्राप्त की? चीन ने अपने गाँव-गाँव के देशी लुहारों की भट्टियों को भारत की तरह बुझाया नहीं। उसने उनको घरेलू काम के लिए आवश्यक और अन्य छोटे मोटे कामों के लिए जैसे कस्सी, फावड़ा, खुरपी, बेलचा आदि का उत्पादन गाँव के लोहारों को दिया। विमान, टैंक और जहाजों के लिए आवश्यक इस्पात शंघाई और मंचूरिया में तैयार कर रहा है फल सामने है। हम चीन से बहुत पीछे रह गए हैं क्योंकि हमने भारतीय बुद्धि और भारतीय उद्योग की महत्ता को स्वीकार नहीं किया और गाँव वालों की गरीबी को बढ़ाया श्री पद्म जी गिनवाला ने युद्ध काल में हिसाब लगाकर बताया था कि भारत सबसे सस्ता इस्पात तयार कर सकता है क्योंकि भारत में कोयला, लोहा, मैंगनीज, चूना आदि इस्पात बनाने के सब साधन नजदीक-नजदीक हैं। परन्तु भारत का इस्पात मंहगा है—जापान का सस्ता है। यद्यपि जापान खनिज लोहा आयात करता है और हम उससे प्रार्थना कर रहे हैं कि वह सलेभ में एक इस्पात का कारखाना बनाने में मदद दे। जापान ने यह प्रगति कैसे की? भारत क्यों नहीं कर सका?

१९४९ में जापान में पश्चिम जर्मनी से एक इस्पात तैयार कराने का पूरा प्लान्ट आयात किया। वह प्लान्ट एक शीशे के बड़े कमरे में रख दिया गया। जापान के इंजीनियरों को उसके पुर्जे-पुर्जे खोलने और फिर उन्हें जोड़ने के लिए कहा गया। तब उनसे पूछा गया कि मशीन देख ली? उनका हाँ में जवाब मिलने पर सरकार ने इंजी-

(शेष पृष्ठ १२ पर)

भारतीय समाजवाद

● गुरुदत्त

कुछ दिन हुए कांग्रेस के प्रधान श्री निजलिंगप्पा जी ने बैंकों के राष्ट्रीयकरण के विषय में अपने विचार व्यक्त करते हुए समाचारपत्रों के प्रतिनिधियों से कहा था कि वे भारतीय समाजवाद के पक्ष में हैं।

प्रश्न यह उपस्थित होता है कि भारतीय समाजवाद है क्या? इसमें और श्रीमती इन्दिरा गांधी अथवा मार्क्स और एंजल्स के समाजवाद में कुछ अन्तर है अथवा नहीं? एस० एस० पी० और पी० एम० पी० का समाजवाद भी भारतीय समाजवाद है क्या? यदि हम कुछ दूर की बात पूछें तो प्रश्न होगा कि यह भारतीय जनसंघ का समाजवाद है क्या?

इन प्रश्नों का उत्तर तो श्री निजलिंगप्पा दें। उनको ही देना चाहिये, परन्तु "भारतीय समाजवाद" पर हम अपने कुछ विचार व्यक्त करना चाहते हैं।

समाजवाद है क्या बला?

भारतीय समाजवाद किसी प्रकार से भी भारतीय शास्त्रों का वाक्य नहीं है। हमारा जो कुछ थोड़ा सा शास्त्रों का ज्ञान है, इसमें समाजवाद का शब्द कहीं दिखायी दिया नहीं। समाज का शब्द तो है। वाद शब्द भी नास्तिक्य और आस्तिक्य के सन्दर्भ में आया हो तो आया हो अन्यथा वाद शब्द भी शास्त्रीय शब्द नहीं। वाद, वाद-विवाद के स्वरूप में तो दिखायी दिया है, परन्तु किसी सिद्धान्त के साथ इसको जोड़ा हुआ बहुत कम दृष्टिगोचर होता है।

यह शास्त्रीय शब्द है अथवा नहीं? यह इतना गम्भीर प्रश्न नहीं, जितना कि इस शब्द के अर्थों के विषय में है। भारतीय समाजवाद एक नवीन शब्द भी हो सकता है। किसी भी जीवित भाषा में नवीन शब्द का गढ़ा जाना विस्मय की बात नहीं। इस कारण इस नवीन शब्द के निर्माण के साथ इसके अर्थ भी तो निश्चय होने चाहियें। साथ ही इस शब्द के अर्थों में और युरोपियन समाजवाद, (यदि हम उसे इस नाम से पुकारने की धृष्टता करें) के अर्थों में क्या अन्तर है?

वर्तमान युग का समाजवाद भिन्न-भिन्न लेखकों, नेताओं, दार्शनिकों और देशों के कर्णधारों के मस्तिष्क में भिन्न-भिन्न अर्थ रखता प्रतीत होता है। वास्तव में यह है नहीं। कार्ल मार्क्स से लेकर भारतीय जनसंघ की कार्यकारिणी के सितम्बर सन् १९६९ के प्रस्ताव तक सब समाजवादों में एक समान विचार प्रवाह है। यह विचार अपने बाहरी कलेवर में भिन्न-भिन्न होता हुआ भी सत्त्व रूप में एक ही है। देखिये, समाजवाद के लक्षण जैसे—Encyclopaedia of the Labour Movement के Vol III पृष्ठ १५४ पर दिया है। इस प्रकार है—

Socialism is a working class doctrine and movement aiming through the class struggle, at the collective control of society, by the capture of the State Machine by workers and the establishment of self-government in industry.

समाजवाद के इस लक्षण में निम्न बातें आयी हैं।

(१) यह सिद्धान्त है कर्मचारी वर्ग का।

(२) समाज में वर्ग संघर्ष से इसका चलन लाना है।

(३) समाज का सांझा नियन्त्रण कर्मचारियों से राज्य सत्ता को हथिया कर स्थापित करना।

(४) उद्योगों में स्वराज्य।

ये चार धारायें हैं जो प्रत्येक आधुनिक समाजवाद में समान रूप से चलती हैं। अन्तर इन बातों में दिखायी देता है कि कोई कर्मचारी किस को मानता है और किस को नहीं मानता? उदाहरण के रूप में आर्यसमाज का उपदेशक अथवा पुरोहित कर्मचारी कहलायेगा अथवा नहीं? इस बात में मतभेद है। परन्तु कोई भी कर्मचारी हो उसका समाज के प्रत्येक कार्य पर नियन्त्रण में

अधिकार होगा।

इसी प्रकार मतभेद है सांझे नियन्त्रण से समाज का कोई कार्य बचा भी है अथवा नहीं। चीन में कई "कम्यून" में पुरुष और स्त्री के समागम पर भी नियन्त्रण है। भारत में बच्चे उत्पन्न करने पर नियन्त्रण की बात चल रही है। यद्यपि अभी जनता को विवश नहीं किया जा रहा, परन्तु भय और मनोद्गारों का आश्रय ले नियन्त्रण चलाया जा रहा है।

इसी प्रकार मतभेद है उद्योग क्षेत्र के स्वराज्य में कौन-कौन भागीदार हों? दुर्भाग्य से आज अनेक देशों में शिक्षा संस्थान भी उद्योग हो गये हैं। अधिक से अधिक आप इनको "Subsidized Industry" (वह उद्योग जो सरकारी सहायता से चलते हैं) ही कह सकते हैं। इस उद्योग में सम्मिलित विद्यार्थी और चपरासी भी प्रबन्ध में अपने प्रातिनिध्य चाहते हैं। कदाचित् भारतीय जन संघ का समाजवाद इतना कुछ नहीं चाहता।

पहले सत्ता हथियाओ!

हमारा यह कहना है कि भूमण्डल के सब समाजवादों में समान विचारधारा यह है कि समाज की प्रत्येक गतिविधि पर सब कर्मचारियों का नियन्त्रण हो और वह नियन्त्रण राज्य सत्ता के द्वारा चलाया जाये।

अब प्रश्न यह है कि निजलिंगप्पा साहब का भारतीय समाजवाद क्या सरकारी सत्ता के बिना चलेगा अथवा सरकारी सत्ता से? इसी प्रकार भारतीय जनसंघ ने अपने समाजवाद में क्या कहीं इस बात का संकेत भी किया है कि समाज पर नियन्त्रण राज्य सत्ता के अतिरिक्त चलेगा।

वास्तविक बात यह है कि आज के युग में समाजवाद के अर्थ एक ही हैं और जो भी समाजवाद का नाम लेता है, उसका आशय यही है कि राज्य सत्ता हथिया कर (by the capture of State Machine) समाज पर राज्य कार्यों के अतिरिक्त भी समाज की गतिविधियों पर, नियन्त्रण प्राप्त किया जाये।

राज्य कार्य तो केवल तीन हैं।

(१) शान्ति व्यवस्था (Law and order) इसमें देश की सुरक्षा भी सम्मिलित है।

(२) धर्म व्यवस्था (Legislative work) तीसरा न्यायाधिकरण (Judiciary) अन्य कार्य सामाजिक हैं, परन्तु समाजवादी उक्त तीन कार्य करने वाले के हाथ में अर्थात् राज्य कर्मचारियों को समाज के कार्यों में नियन्त्रण देना चाहते हैं।

यदि तो भारतीय समाजवादी भी यही चाहते हैं तो हमारा विनम्र निवेदन है कि वे उसके साथ वर्तमान शब्द भी लगा दें जिस से यह भ्रम न रहे कि वे कहीं किसी प्राचीन भारतीय प्रथा का उल्लेख कर रहे हैं।

वर्तमान भारत में तो माता-पिता, बच्चों का पालन पोषण न कर सकने पर गर्भपात की स्वीकृति मांग रहे हैं। वर्तमान भारत के कम से कम कुछ विद्वान् सार्वजनिक दृष्टि में पुरुष-स्त्री को चुम्बन करने का अधिकार देना चाहते हैं। वे पुरुष-स्त्री के गुह्य अंगों का प्रदर्शन भी चाहते हैं। अत: वर्तमान भारतीय समाजवाद भी समझ आ सकता है, परन्तु भारतीय समाजवाद से यह गंध आती है कि वे कहीं किसी शास्त्रीय सिद्धान्त की चर्चा कर रहे हैं।

शास्त्र में समाजवाद शब्द कहीं देखा नहीं। कम से कम वर्तमान अर्थों में यह नहीं है, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि भारत देश में समाज और व्यक्ति में कभी विश्लेषण हुआ ही नहीं और शास्त्रकार जानते ही नहीं थे कि समाज कैसे और क्यों निर्माण किया गया था?

समाजवाद या वर्णव्यवस्था?

समाज व्यवस्था भारतीय शास्त्रानुसार समाजवाद नहीं कही जाती थी, वरंच इसका नाम वर्णव्यवस्था था। वर्ण गुण, कर्म और स्वभाव से निश्चय किये जाते थे। कब और किन से? निस्सन्देह राज्य सत्ता द्वारा नहीं। इसके निश्चय करने वाले आचार्य लोग होते थे।

सब से पहले यज्ञोपवीत संस्कार कहीं राजा अथवा राज्य सत्ताधीश नहीं कराता था।

वेद पढ़ने के अधिकारी को यज्ञोपवीत देकर गुरुकुल में प्रवेश मिलता था। आज तो राज्य का यह आदेश है कि शिक्षा में प्रवेश सब को मिले। यह हम मानते हैं कि सब को उन्नति का अवसर मिलना चाहिये, परन्तु जो बालक-बालिकायें वर्णमाला भी नहीं पढ़ सकतीं, उनके

लिये भी अवसर के कुछ अर्थ हो सकता है क्या ?

हम यहां प्राइमरी की प्रथम श्रेणी की बात नहीं कर रहे। हम तो यह कह रहे हैं कि कालेजों में भी सब स्कूलों से निकले विद्यार्थियों को प्रवेश की मांग है।

इसी प्रकार गुरुकुलों में आचार्य ही यह निश्चय करते थे कि किस को युद्ध करने की, अस्त्र-शस्त्र चलाने की और राज्य करने की शिक्षा मिले और किस को व्यापार, कृषि तथा अध्यापक बनने की उपाधि मिले।

स्मृति शास्त्र में इस बात का उल्लेख तो है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा वैश्य कुमार का यज्ञोपवीत अमुक वयस् में हो जाये, परन्तु यह तो कहीं लिखा देखा नहीं गया कि यदि ब्राह्मण कुमार अक्षर भी पढ़ अथवा स्मरण नहीं कर सकता तो बलपूर्वक उसके गले में यज्ञोपवीत डाल दिया जाये। यदि निर्धारित वयस् में ब्राह्मण कुमार को यज्ञोपवीत न दिया जाये तो क्या हो ? वह व्रात्य हो जाये। व्रात्य का अभिप्राय है जतिच्युत।

अतः सब से प्रथम बात यह है कि वर्णव्यवस्था की स्थापना आचार्यों के हाथ में होती थी। किसी राज्याधिकारी के नहीं।

इसी प्रकार प्रत्येक सामाजिक व्यवस्था राज्य सत्ता से पृथक् रहकर ही करने का विधान है।

यह ठीक है कि प्राणी मात्र को विकास के लिये अवसर मिलना चाहिये, परन्तु यदि इस अवसर के प्रदान में राज्य सत्ता का हस्तक्षेप होगा तो अवसर की उपलब्धि में रियायत होगी ही और वह रियायत अनधिकारियों के लिये होगी।

अतः समाजवाद और वर्ण व्यवस्था में प्रथम और आवश्यक भेद हैं राज्य के हस्तक्षेप। समाजवाद चलता है देश की सरकार द्वारा और वर्णव्यवस्था चलती है आचार्यों और विद्वानों द्वारा।

दूसरी बात, जिसमें वर्णव्यवस्था और समाजवाद में भेद है गुण, कर्म और स्वभाव से अधिकारों की है। मनुष्य का वर्ण (Status in society) गुण, कर्म और स्वभाव से निश्चत होता है। सबको सब प्रकार के अधिकार हों, यह वर्णव्यवस्था में स्वीकार नहीं किया जाता। समाजवाद में सबको समान अधिकारो की व्यवस्था है। एक बात यह भी कही जाती है कि सबको जीने का अधिकार है। वर्णव्यवस्था इसको नहीं मानती।

यदि गुण, कर्म और स्वभाव से कोई ऐसा है कि उसे जीवन का अधिकार नहीं दिया जाये तो नहीं भी दिया जाता। उदाहरण के रूप में कोई व्यक्ति परद्रव्यापहारी है और मना करने पर भी मना नहीं होता तो वह जीने का भी अधिकारी नहीं है। एक अन्य उदाहरण लो। कोई आलसी और प्रमादी किसी प्रकार का कार्य नहीं करता और इससे वह भूखा मरने लगता है तो उसे भूखा मरना ही चाहिये। अतः जीने का भी सबका अधिकार वर्णव्यवस्था में नहीं। गुण, कर्म और स्वभाव से जीने योग्य को ही जीने दिया जा सकता है।

राजा या आचार्य ?

वर्तमान युग के समाजवाद में और वर्णव्यवस्था में प्रथम अन्तर तो यह है कि वर्णव्यवस्था करना राज्य-कार्य नहीं। यह आचार्यों का काम है। दूसरा अन्तर वर्णव्यवस्था और वर्तमान युग के समाजवाद में है। मानवों के अधिकार, उनके गुण, कर्म स्वभावानुसार होते हैं। केवल किसी स्त्री के पेट से उत्पन्न होने से नहीं बनते।

बस यही समाज है और यही वर्णव्यवस्था अथवा समाजवाद है। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि समाज के घटकों के लिए उपयुक्त कार्य निर्धारित करना और उस कार्य के अनुसार उनको अधिकार देना। इसके अतिरिक्त समाज में और कुछ काम नहीं है। इन्हीं दो कामों की व्याख्या में बहुत-सी बात की और कही जाती हैं। मूल रूप में ये दो बातें ही हैं।

हमने बताया है कि समाजवाद में समाज के घटकों के लिए कर्म का निश्चय करना राज्य के हाथ में है। राज्य हम उस संस्था को कहते हैं जो कि देश में शान्ति व्यवस्था स्थिर रखने का काम करती है। जो देश की सुरक्षा का प्रबन्ध करती है और जो समाज में धर्म-व्यवस्था स्थापित करती है। इन कार्यों को करने वाले को राज्य कहते हैं। ऐसी संस्था के हाथ में लोगों के लिए कार्य निश्चय करना होना समाजवाद है और वर्णव्यवस्था में यह कार्य देश के आचार्यों का काम माना है।

कर्म करने वालों के अधिकारों के निश्चय करना प्राचीन काल में तो आचार्य ही करते थे, परन्तु ये आचार्य

धर्म-व्यवस्था के रूप में ही कह सकते थे। उनकी व्यवस्था का पालन यदि कोई न करे तब सरकार से दण्डनीय होता था।

उदाहरण के रूप में समाजवादी सरकार यह निश्चय करती है कि एक क्लर्क का वेतन ११०) रुपया मासिक हो। वर्णव्यवस्था में यह कार्य अर्थशास्त्र के आचार्यों का है। उन आचार्यों का जो राज्य से सीधा अथवा दूर का भी सम्बन्ध नहीं रखते।

परन्तु यदि कोई व्यक्ति आचार्यों द्वारा दी गई व्यवस्था का उल्लंघन करता है तब सरकार उस वेतनधारी की रक्षा के लिए हस्तक्षेप करती है।

हमने बताया है कि भारतीय पद्धति में समाजवाद का अस्तित्व नहीं। वर्णव्यवस्था है। आधारभूत अन्तर समाजवाद और वर्णव्यवस्था में यह है कि समाजवाद में समाज के दोनों प्रमुख कार्य राज्य करता है और वर्ण-व्यवस्था में वे दोनों कार्य आचार्यों द्वारा किये जाते हैं। राज्य केवल उस समय हस्तक्षेप करता है जब कोई आचार्यों द्वारा संचालित व्यवस्था का विरोध अथवा उल्लंघन करता है।

हमने यह आपको बताया है कि वर्तमान युग के समाजवाद, समाज की गतिविधियों पर अधिकार राज्य-सत्ता का है और वर्णव्यवस्था में व्यवस्था तो आचार्य करते हैं, परन्तु उस व्यवस्था का उल्लंघन अथवा विरोध राज्य रोकता है।

भारतीय समाजवाद झूठ है !

दोनों पद्धतियों में गुण-दोष और इनसे समाज का कल्याण-अकल्याण किसी दूसरे लेख में लिखेंगे। यहां तो इतने से ही अभिप्राय है कि भारतीय समाजवाद का नाम लेने वाले श्री निजलिंगप्पा वास्तव में वे समाज पर नियन्त्रण राज्यसत्ता का ही चाहते हैं। अत: वे समाज-वाद की मुख्य और परम दूषित बात को मानते हैं।

हमारा यह कहना है कि भारतीय समाजवाद का नाम लेने वाले अपने आपको ठगते हैं और जनता को भी पथभ्रष्ट करते हैं। समाजवाद शब्द के अर्थ तो हैं राज्य-सत्ता का समाज की प्रत्येक गतिविधि पर अधिकार। यह एक अत्यन्त दूषित व्यवस्था है।

इसके विपरीत वर्णव्यवस्था जो यदि शुद्ध गुण, कर्म और स्वभाव से चलायी जाये, वह ही समाज के कल्याण के लिए हो सकती है।

समाज की व्यवस्था निश्चय करने का अधिकार केवलमात्र स्वतंत्र विद्वानों को ही देना चाहिए। राज्य तो यह देखने के लिए है कि वर्णव्यवस्था का पालन हो रहा है अथवा नहीं।

भारतीय समाजवाद जैसा कि इसको विख्यात करने वाले राज्य सत्ता के अतिरिक्त किस प्रकार से अपने को चलाना चाहते हैं, यह उनको स्पष्ट करना पड़ेगा।

हम जो वर्णव्यवस्था के पक्षपाती हैं, वह तो वर्णों की व्यवस्था और वर्णों के अधिकार के विषय में राज्य का हस्तक्षेप नहीं चाहते। यह समाज के विद्वान् व्यक्तियों का कार्य है, राज्याधिकारियों का नहीं।

(पृष्ठ ८ का शेष)

नियरों से कहा कि इसको देखकर अब तुम अपनी मशीन बनाओ। मशीन तैयार की गई पर वह जर्मन मशीन से कुछ भारी और भद्दी थी। सरकार ने कहा कि काम तुम्हारी बनाई मशीन पर होगा और इसको अपने अनुभव से सुधारो।

फल यह है कि जापान इस्पात का नया कारखाना खोलने के लिए किसी पर निर्भर नहीं है जबकि इसके विपरीत विकासशील देश उसकी बुद्धि पर निर्भर है।

हमारे देश की कथा ही निराली है। बोकारो प्लान्ट १९५७ में उत्पादन करने लग जाना चाहिये था। परन्तु वह अभी तक रूस की दया पर निर्भर है और उत्पादन नहीं हो रहा है। यह पर-निर्भरता जहाँ भारत की गरीबी को बढ़ाती है वहाँ आर्थिक वैषम्य को भी बढ़ाती है।

क्या इसके बाद भी इस बात में सन्देह किया जा सकता है कि आर्थिक विषमता का मूल कारण सरकारी नीति है और सरकार इसके लिए जिम्मेदार है।

पूँजीपतियों के कन्धों पर टिका हुआ इन्दिराजी का समाजवाद !

विकास

समाजवाद के नाम पर नेहरू खानदान के नेतृत्व में सत्ताधारी दल कांग्रेस ने पूँजीपतियों से मिलकर किस बेदर्दी से गरीबों का खून चूसा है, दुर्भाग्य से मोहक शब्दजाल के भ्रामक नारों के आवरण में इसकी सही तस्वीर सामने कम आ पाई है। समाजवाद का नारा हिटलर भी लगाता था। समाजवाद का नारा इन्दिराजी भी लगाती हैं और बिड़ला जी भी अपने को ऊँचे दर्जे का समाजवादी मानते हैं। अगर यही समाजवाद है कि जिसके आवरण में खूनी भेड़िये अपना असली रूप छिपाये हैं तो जितनी जल्दी इसका पर्दाफाश हो, उतना बेहतर है। आइये तथ्यों और आंकड़ों के प्रकाश में इस पापमय भीषण कुचक्र को भेदा जाय।

विगत दो सत्रों में देश के २० वृहत्तर तथा ७३ वृहत् एकाधिकारी परिवारों ने कांग्रेस को करोड़ों रुपये दिये हैं। (देखिये सारिणी एक) यही धन कांग्रेस के जीवित रहने का रहस्य है। यही धन मध्यावधि चुनावों में नाक बचाने लायक स्थिति का कारण है। यह धन मुख्यमंत्रियों तथा अन्य सत्ताधीशों के दल के अन्दर चलने वाली गुटीय संघर्षों में सन्तुलन को बनाने या बिगाड़ने का निर्णायक तत्व है।

९३ धनपतियों द्वारा कांग्रेस को करोड़ों का चन्दा

सारिणी एक में २० वृहत्तर एकाधिकारी परिवारों की कुछ कम्पनियों के द्वारा दी गई चन्दे की राशि लिखित है। इनमें ५० हजार से छोटी राशि स्थानाभाव के कारण सम्मिलित नहीं की गई है। ७३ वृहत् एकाधिकारी परिवारों में से कुछ के द्वारा कांग्रेस को विगत दो सत्रों में दिये गये ५० हजार या अधिक कानूनी धन की तालिका भी साथ में है। इसलिये ये तालिका दो प्रकार से अपूर्ण है। एक तो सब ९३ धनप्रभुओं का इसमें उल्लेख नहीं है, दूसरे जिनका है उनकी भी कुछ ही कम्पनियों का है। उदाहरणार्थ बिड़ला,बन्धुओं के २७६ संस्थानों में से केवल ११ का ही जिक्र है। बहुत से संस्थानों का इसलिए जिक्र नहीं है क्योंकि उनके द्वारा दिया गया चन्दा ५० हजार से कम था।

बदले में कांग्रेस ने देश को एकाधिकारियों के पास गिरवी रख दिया

सारिणी एक में देश के इन ९३ धनप्रभुओं के द्वारा कांग्रेस को दिये गये विपुल धन को देखकर कोई भी दांतों उंगली दबायेगा। प्रश्न यह है कि ये धनप्रभु कांग्रेस को इतना धन किस मतलब से देते हैं ? क्या परोपकार से वशीभूत होकर अथवा सिद्धांतों के अपनाने के कारण ? इसका उत्तर मिलेगा हमें लाइसेंसिंग कमेटी की रिपोर्ट में। उसमें कहा गया है कि सरकारी वित्तीय संस्थानों के द्वारा उद्योगों के लिये जो कुछ भी धन मुहैया किया गया उसका ५६ प्रतिशत इन ९३ धनपतियों की सेवा में लगाया गया। इसका आधा अर्थात् २३ प्रतिशत २० वृहत्तर एकाधिका-

रियों ने प्राप्त किया। इसमें से भी एक चौथाई का अर्थात् २५ प्रतिशत पूंजी का लाभ अकेले बिड़ला परिवार ने लिया। उसके बाद मफतलाल—१४.४ प्रतिशत; टाटा—१० प्रतिशत; ए०सी०सी० ६ प्रतिशत बागड़ ६.५० प्रतिशत।

जीवन बीमा निगम के औद्योगिक ऋण में से २० वृहत्तर एकाधिकारियों को ७० प्रतिशत तथा स्टेट बैंक आफ इन्डिया के कुल ऋण में से इन्हें ८२ प्रतिशत दिया गया। इतना ही नहीं श्री दत्त की अध्यक्षता में बनी लाइसेंसिग इनक्वायरी समिति ने यह भी कहा है कि यूनिट ट्रस्ट आफ इण्डिया तथा जीवन बीमा निगम ने पक्षपातपूर्वक अधिक अनुपात में इन 'वृहत धनपतियों' के संस्थानों के अंशों तथा डिबेन्चरों को खुले बाजार में खरीदा है। जीवन बीमा निगम की पूंजी निवेश में निर्गमित पावती पत्र (Scrips) में भी बिड़ला, मफतलाल, बांगड़, वालचंद, श्रीराम आदि धनपतियों के साथ किये गये पक्षपात की ओर समिति ने अंगुली निक्षेप किया है।

द्वारा नियुक्त इस दत्त समिति ने कहा है कि इस तरह की गड़बड़ी करने वाले संस्थानों के प्रति न केवल कार्यवाही नहीं की गई वरन कई मामलों में तो बाद में बढ़ी हुई उत्पादन मात्रा की अनुमति भी दे दी गई।

कांग्रेस और पूंजीपतियों की मिलीभगत

यह है असली षड़यंत्र जो देश की गरीब जनता के खिलाफ इन बड़े धनपतियों और सत्ताधारी कांग्रेस दल ने कर रखा है। ये पूंजीपति कांग्रेस को करोड़ों रुपये देते हैं ताकि कांग्रेस गरीब जनता की ईमानदारी खरीदकर कुर्सी पर पहुंच जाये और कांग्रेस सरकार इन्हें गरीबों का शोषण करने का लाइसेंस देती है। कांग्रेस न केवल उद्योगों को खोलने का लाइसेंस देती है, न केवल उसके लिये वांछित विदेशी मुद्रा की अनुमति देती है वरन अधिकांश पूंजी भी किसी न किसी प्रकार मुहैया कराती है। इसका अर्थ यह हुआ कि इन ९३ आर्थिक एकाधिकारी का आर्थिक साम्राज्य स्वयं के बल पर नहीं, वरन सरकारी पूंजी और आर्थिक सहायता पर बढ़ रहा है।

पूंजीपति कांग्रेस को ही करोड़ों रुपए क्यों देते हैं ? लाइसेंसिग कमेटी की रिपोर्ट ने कलई खोल दी।

कुछ वृहत धनपतियों की सम्पूर्ण परियोजना मूल्य का बहुत बड़ा भाग सरकारी वित्तीय संस्थानों से प्राप्त कराया गया। गत कुछ वर्षों में इस तरह के मूल्य में सब संस्थानों के कुल परियोजना लागत का ४० प्रतिशत सरकारी वित्तीय संस्थानों ने मुहैया किया। कुछ धनपतियों को ६० से ७५ प्रतिशत भी दिया गया। इन परियोजनाओं के पुरस्कर्ताओं को औसत रूप से केवल १३.७ प्रतिशत पूंजी अपनी लगानी पड़ी। इनकी सीमा ६ से २४ प्रतिशत तक रही। इस तरह के सब मामले वृहत् एकाधिकारियों के नहीं बल्कि केवल २० वृहत्तर एकाधिकारियों के पक्ष में गई। इतना ही नहीं इस समिति ने तथ्यों और आंकड़ों से यह सिद्ध किया है कि मोटे तौर पर इन ९३ बड़े धनपतियों को अनुपातहीन मात्रा में अधिक औद्योगिक लाइसेंस दिये गये हैं। इनमें से भी कुछ के साथ बहुत अधिक पक्षपात किया गया है। यही नहीं ये संस्थान लाइसेंस की सीमा से अधिक उत्पादन करते हैं। सरकार

अर्थात् जनता के करों तथा अन्य बचतों के पैसे का उपयोग सरकारी एजेंसियों के माध्यम से ये वृहद् और बृहत्तर एकाधिकारी करते हैं। पर बदले में कांग्रेस को धन देकर गद्दी पर बनाये रखते हैं। इन लज्जाजनक तथ्यों के बावजूद भी सरकार अपने को समाजवाद का असली पुरोधा कहती है और बिड़ला जी भी कहते हैं कि वे समाजवादी हैं।

इन दिनों इन्दिरा जी बैंक सरकारीकरण करके गरीबों का झण्डा उठाये घूम रही हैं। आइये देख लिया जाय कि इस नारे के पीछे कोई फरेबाना ढोंग है कि ईमानदाराना कोशिश है। जिस दिन बैंकों का सरकारीकरण हुआ बैंकपतियों को इसकी कतई चिन्ता नहीं हुई। बल्कि कुछ बैंकपतियों ने तो इसका स्वागत किया। क्यों? क्योंकि वे जानते हैं कि अगर सरकार के मंत्रिमंडल स्तर के निर्णय में से वे बड़े-बड़े लाइसेंस ला सकते हैं, स्टेट बैंक से ८२ प्रतिशत और जीवन बीमा निगम से ७०

प्रतिशत औद्योगिक निवेश प्राप्त कर सकते हैं तो उस सरकार के सरकारीकृत बैंक से भी वे अपना उल्लू आसानी से सीधा कर सकेंगे। लेकिन बावजूद इस तथ्य के सरकारी प्रचारतंत्र, पूंजीपतियों के प्रचार तथा साम्यवादी प्रचार-तंत्र के माध्यम से इन्दिरा जी इस घृणित तथ्य को समाज-वाद के झण्डे में छिपाये हुए गरीबों के नारे का कोहराम मचाये चल रही है।

सारिणी—२

वृहत्तर एकाधिकारी परिवारों की सम्पत्ति

वृहत्तर औद्योगिक परिवार	संस्थानों की संख्या	कुल सम्पत्ति
1. ए० सी० सी० खटाऊ किलिक, शपूरजी पालमेंजी एवं टाटा	6	95,73,30,000
2. एन्ड्यू यूल	43	46,74,57,000
3. बांगड़	93	104,30,74,000
4. बर्ड (हैलगर्स)	76	68,61,94,000
5. बिड़ला	276	457,84,25,000
6. गोयनका	69	65,34,04,000
7. आई० सी० आइ०	6	50,06,23,000
8. जे० के० सिंहानिया	51	66,84,13,000
9. किलाचन्द तुलसीदास	24	37,21,96,000
10. किलिक	17	51,07,46,000
11. मफतलाल	34	92,69,82,000
12. मार्टिन बर्न	24	153,05,72,000
13. साहू जैन	29	58,74,53,000
14. सारा भाई	29	55,71,48,000
15. सिन्धिया स्टीम नेविगेशन	8	55,98,47,000
16. श्रीराम	54	74,13,33,000
17. सूरजमल नागरमल	110	95,61,41,000
18. टाटा	84	505,35,78,000
19. थापर	63	98,79,76,000
20. वालचन्द	29	81,10,72,000

इन्दिरा-बिड़ला समझौता

पिछले महीनों में जो सत्ता संघर्ष हुआ इसमें इन्दिरा कम्युनिस्ट व पूंजीपतियों का 'त्रय' साथ साथ नजर आये। राष्ट्रपतीय चुनाव के समय बिड़ला बन्धुओं तथा साहू जैन तथा तमाम धनपतियों के प्रेस ने एकाध को छोड़कर इन्दिरा जी का समर्थन बड़े जोर शोर से किया। इसके पहले मध्यावधि चुनावों में इन्दिरा जी ने अपने गुट को आर्थिक सहायता देने के लिए बिड़ला बन्धुओं तथा धन-पतियों से सीधे सहायता ली बताते हैं सारिणी एक के आंकड़े इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं। उसी का परिणाम था कि उ० प्र० और बिहार में इंदिरा जी ने अपना सशक्त गुट खड़ा कर लिया। वही राष्ट्रपतीय चुनाव में आत्मा की पुकार पर अनुशासन तोड़ सका।

बिड़ला बन्धुओं की आर्थिक सहायता के बदले उन्हें न केवल लाइसेंस एवं सरकारी पूंजी ही मिलती है बल्कि ढाल भी मिलती है। बिड़ला बन्धुओं तथा अनेक वृहत्तर और वृहत् एकाधिकारी धनपतियों के खिलाफ बड़े-बड़े आरोप हैं। हमेशा सरकार केवल एकाध जाँच का नाटक करके सबको बचा देती है। विगत हजार से अधिक दिनों से 'गरीबों की मसीहा' इन्दिरा गांधी प्रधानमन्त्री हैं पर एक की भी पूरी जाँच नहीं हुई।

बिड़ला परिवार पर जाँच की तलवार लटका कर उनसे भयजन्य मित्रता खरीद ली गई। समय समय पर कांग्रेस के लिये और अपने गुट के लिये विपुल धन ब्लैक-मेल से अर्जित किया गया। फिर भी बिड़ला बन्धुओं की जाँच का नाटक तो होना ही था। बड़ी लम्बी खींचतान के बाद अष्टमांश मामलों को जाँच की नौबत आई। लेकिन इनकी जाँच के लिये भी कुछ इस तरह की खामियाँ रह गई (या छोड़ दी गई) कि कलकत्ता उच्च न्यायालय ने बिड़ला जूट मिल (देखिये सारिणी एक) तथा इण्डिया लिनोलियम की जाँच पर स्थगन आदेश दे दिया। इसी तरह मध्य-प्रदेश उच्च न्यायालय के जबलपुर बेंच ने 'जियाजीराव काटन मिल' (देखिये सारिणी एक) की जाँच के आदेश को ही रद्द कर दिया।

ये पूँजीपति इन्दिरा के साथ क्यों हैं ?

अर्थात् तलवार लटका कर दोस्ती, प्रचारतंत्र का फायदा तथा आर्थिक लाभ इन्दिरा गुट उठा रहा है और उधर चन्दा देकर एकाधिकार की वृद्धि बिड़ला बन्धु कर रहे हैं। एक सूचना के अनुसार बिड़ला बन्धु की कुल सम्पत्ति विगत दो सत्रों में ३८७ करोड़ से बढ़कर ४३८ करोड़ हो गई जबकि टाटा की सम्पत्ति ४१८ करोड़ से ४१७ करोड़ रही। अर्थात् यह नहीं कहा जा सकता कि इस 'मिली भगत' का लाभ दोनों में से किसी को भी कम होता है।

गरीबों का झण्डा लेकर चलने की जो राजनीति का असली रूप वास्तव में बड़ा ही घिनौना है। इन्दिरा जी के चित्र के साथ हजारों जनता को 'रैली राउन्ड दी लीडर' नाम का आधा पृष्ठ का बड़ा जबरदस्त विज्ञापन देश के अनेक बड़े महंगे दैनिक पत्रों में दिये गये। इसके नीचे विज्ञापनदाता का नाम नहीं लिखा था। इसके स्थान पर 'इशूड बाई यंग बिजनस एक्जक्युटीव्स' था। लोकसभा में बार-बार पूछने पर भी नहीं बताया गया कि क्यों सरकारी पत्र सूचना विभाग द्वारा किसी नेता के चित्र के साथ विज्ञापन छापने की मुमानियत होने के बावजूद इंदिरा जी के चित्र को छापने की अनुमति दे दी गई ? ये 'यंग बिजनेस एक्सीक्युटीव' कौन थे ? इसके ऊपर आने वाला लाखों का खर्च किसने किया ? कौन इंदिरा जी के व्यक्ति पूजा में इतनी दिलचस्पी रखते थे ? एक सदस्य ने रहस्योद्घाटन करते हुए कहा कि ये "महेन्द्र एण्ड महेन्द्र" हैं (७३ बृहत् धनपतियों में से एक—देखिये सारिणी एक) पूंजीपतियों के साथ सांठ-गांठ की बात अब साफ हो गई है। पूंजीपतियों और कांग्रेस की इस मिली-भगत ने न केवल देश की प्रगति को रोक रखा है वरन् गरीब जनता की कीमत पर ही इन धन प्रभुओं का प्रादुर्भाव हुआ है (देखिये सारिणी दो) और नेहरू खानदान के नेतृत्व में कांग्रेस सत्ताधीश रही है।

दोनों मिलकर गरीबी का शोषण कर रहे

इन कुछ थोड़े से तथ्यों और आंकड़ों से भी स्पष्ट है कि यह पापमय दुष्चक्र देश के गरीबी की कमर तोड़ रहा है और नेता गरीबी और समाजवाद का नाम लेकर व्यक्तिगत राजनीति लड़ रहे हैं। वे इसके लिए पूंजीपतियों के अर्थ और प्रचारतंत्र का सहारा ले रहे हैं। पूंजीपति प्रेस और धन से नेताओं को ब्लैकमेल कर रहे हैं। अपनी स्थिति लगातार सुधारते चले जा रहे हैं। वास्तव में दोनों एक दूसरे को ब्लैकमेल नहीं कर रहे दोनों मिलकर देश की गरीबी का शोषण कर रहे हैं। कितनी विडम्बना है कि यह सब कुछ हो रहा है समाजवाद के झण्डे तले। मेहनतकश जनता का मोहक नारा लगाने वाले कम्युनिस्ट भी इन्दिरा जी से अपनी मित्रता निभाने के लिये आँख बन्द करके उनका साथ देते हैं। जब संसद में जनसंघ के सदस्य तमाम एकाधिकारियों तथा बिड़ला की जाँच की मांग कर रहे थे तब कम्युनिस्ट मुलायम रुख अपना रहे थे।

आज भी औद्योगिक लाइसेंस इन्हीं के लिए मिल रहे हैं। संसद सदस्यों का देश की जनता के हित में यह उपकारक कदम होगा यदि वे यह आँकड़े सरकार के बन्द जबड़ों में से निकाल के ला सकें कि इस संघ में भी अब तक कितने लाइसेंस तथा सरकारी वित्तीय सहयोग इन्हीं बड़े धन प्रभुओं को दिये गये ? तब वे 'मुँह में राम बगल में छुरी' की स्थिति का भण्डाफोड़ अधिक अच्छे ढंग से कर सकेंगे।

सारिणी—१

बृहत्तर एकाधिकारी परिवारों की ओर से कांग्रेस को दिये गये गत दो सत्रों में चन्दे की रकम

	रु०
1. ए० सी० सी०	
1. एसोसियेटिड सीमेंट कं०	5,00,000
2. बांगड़	
1. बंगाल पेपर मिल	70,000
2. श्री दिग्विजय सीमेंट कं०	88,000
3. बिड़ला	
1. बिड़ला जूट मैन्यू० कं० लिमिटेड	50,000

2. सेंचुरी स्पिनिंग एण्ड मैन्यु० कं० 11,57,000
3. गोदावरी शूगर मिल 60,000
4. ग्वालियर रेयन 3,70,000
5. हिन्दुस्तान एल्युमुनियम 7,70,000
6. हिन्दुस्तान मोटर्स लिमि० 5,75,000
7. जियाजीराव काटन मिल 1,68,000
8. अवध शूगर मिल 2,05,821
9. सिरपुर पेपर मिल 1,00,000
10. टैक्सटाइल मशीनरी कारपोरेशन लि० 50,000
11. तुंगभद्रा इंडस्ट्रीज 50,000

4. मार्टिन बर्न
1. बर्न एण्ड कं० 75,000
2. इंडियन आयरन एण्ड स्टील कं० 4,50,000
3. इंडियन स्टैण्डर्ड वैगन 50,000

5. साहू जैन
1. अशोक सीमेंट कं० 50,000
2. जयपुर उद्योग 3,01,500
3. पंजाब नेशनल बैंक 5,00,000
4. रोहतास इंडस्ट्रीज 2,80,000

6. साराभाई
1. अहमदाबाद मैन्यू० एण्ड कैलिको कं० 1,75,000

7. श्रीराम
1. दिल्ली क्लाथ मिल 6,82,000

8. टाटा
1. इण्डिया सीमेंट 1,00,000
2. इण्डियन ट्यूब कम्पनी 50,000
3. न्यू इण्डिया इन्शोरेंस कम्पनी 1,05,000
4. टाटा केमिकल 1,10,000
5. टाटा इंजीनियरिंग लोकोमोटिव 2,50,000
6. टाटा आयरन 5,00,000
7. टाटा आयल मिल 50,000
8. टाटा पावर व अन्य उद्योग 1,40,000
9. वोल्टाज 1,10,000

9. वालचन्द
1. वालचन्द नगर इण्डस्ट्रीज 5,33,000
2. हिन्दुस्तान कंस्ट्रक्शन कं० 2,45,000

10. थापर
1. श्री गोपाल पेपर मिल 1,60,351

11. किलाचन्द तुलसीदास
1. सिन्थेटिक एण्ड केमिकल लिमि० 5,50,000

अन्य 72 बृहत् एकाधिकारियों के चन्दे की रकम

1. मदुरा मिल्स (ए० हार्वे) 1,00,000
2. महिन्द्रा एण्ड महिन्द्रा 1,90,000
3. मोदी स्पिनिंग 71,250
4. एलम्बिक केमिकल (अमीन) 60,000
5. एलम्बिक ग्लास (अमीन) 50,000
6. अशोक ले-लैंड लिमि० (विदेशी) 50,000
7. बजाज आटो लिमिटेड (बजाज) 95,000
8. बजाज इलेक्ट्रिकल (बजाज) 55,000
9. हिन्दुस्तान शूगर मिल (बजाज) 1,54,000
10. मुकुन्द आयरन एण्ड स्टील (बजाज) 2,88,000
11. बड़ौदा रेयन (चिनाय) 1,00,000
12. नेशनल रेयन (चिनाय) 2,02,000
13. वेलापुर कं० लिमि० (सोपोरजी) 1,50,000
14. डालमिया सीमेंट कं० (डालमिया) 2,25,000
15. उड़ीसा सीमेंट कं० (डालमिया) 2,25,000
16. कमानी इंजीनियरिंग कं० (कमानी) 57,000
17. कमानी मेटल (कमानी) 64,000
18. किर्लोस्कर 2,42,000

—पाञ्चजन्य से साभार

(पृष्ठ ४ का शेश)

तक रहा परन्तु एक विदेशी लकड़ी से विवाह कर लेने के कारण यह प्रतिबंध फिर लगा दिया गया, पश्चिम के प्रति घृणा का पोषण करने वाली रूस सरकार एक पश्चिमी लड़की से उन के विवाह करने की घटना को भला चुप-चाप कैसे सहन कर लेती ? यही नहीं, श्री अरकेनाजी पर यह दबाव भी डाला गया कि यदि उन की पत्नी ने रूसी नागरिकता स्वीकर नहीं की तो यह बात उन के भविष्य के लिए अच्छीं नहीं होगी। अंततः श्रीमती अरके-नाजी ने रूसी नागरिकता स्वीकार करली, इस के साथ ही उन्हें विदेश-यात्रा के लिए पासपोर्ट भी मिल गया, किन्तु बुल्गारिया, चेकोस्लोवाकिया और पेरिस की उनकी यात्रा रद्द कर दी गयी, १९६२ में पत्नी सहित युगोस्लाविया और अमेरिका गये, किन्तु रूस लौटने पर उन्होंने स्वयं को फिर प्रतिबंधों से घिरा पाया, उन का मन वहाँ बिल्कुल नहीं लगा और जब १९६३ में उन्हें फिर ब्रिटेन जाने की आज्ञा मिली तो उन्होंने चैन की सांस ली, *

बिस्मिल की मां

● शिव वर्मा

[शहीदों के परिवारों की उपेक्षा महान् राष्ट्रघात है और उनका सम्मान सच्ची वीर पूजा। वर्तमान सरकार को प्रत्येक शहीद के परिवार को पूर्ण सुविधाएँ देनी चाहिये, 'बिस्मिल की माँ' लेख में क्रान्तिकारी शिव वर्मा जी ने अपनी आँखों देखा मर्मस्पर्शी वर्णन किया है]

—सम्पादक

माँ फिर रो पड़ीं।

अशफाक और बिस्मिल का यह शहर कालेज के दिनों में मेरी कल्पना का केन्द्र था। फिर क्रान्तिकारी पार्टी का सदस्य बनने के बाद काकोरी के मुखबिर की तलाश में काफी दिनों तक इसकी धूल छानता रहा था। अस्तु, यहां जाने पर पहली इच्छा हुई बिस्मिल की माँ के पैर छूने की। काफी पूछताछ के बाद उसके मकान का पता चला। छोटे से मकान की एक कोठरी में दुनियाँ की आंखों से अलग वीर-प्रसविनी अपने जीवन के अन्तिम दिन काट रही है—पास जाकर मैंने पैर छुए। आँखों की रोशनी प्राय: माप्त-सी हो चुकने के कारण पहचाने बिना ही उन्होंने मेरे सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया और पूछा, "तुम कौन हो?" क्या उत्तर दूँ; कुछ समझ में नहीं आया। थोड़ी देर बाद उन्होंने फिर पूछा "कहाँ से आए हो बेटा?" इस बार साहस करके मैंने परिचय दिया—"गोरखपुर जेल में अपने साथ किसी को ले गईं थी, अपना बेटा बनाकर?" अपनी ओर खींचकर सिर पर हाथ फेरते हुए माँ ने पूछा, "तुम वही हो बेटा? कहाँ थे अब तक? मैं तो तुम्हें बहुत याद करती रही, पर जब तुम्हारा आना एकदम ही बन्द हो गया तो समझी कि तुम भी कहीं उसी रास्ते पर चले गए।" मां का दिल भर आया। कितने ही पुराने घावों पर एक साथ ठेस लगी। अपने अच्छे दिनों की याद, बिस्मिल की याद, फांसी, तख्ता, रस्सी और जल्लाद की याद, जवान बेटे की जलती हुई चिता की याद और न जाने कितनी यादों से उनके ज्योतिहीन नेत्रों में पानी भर आया—वह रो पड़ीं। बात छेड़ने के लिए मैंने पूछा, "रमेश (बिस्मिल का छोटा भाई) कहाँ है?" मुझे क्या पता था कि मेरा प्रश्न उनकी आँखों में बरसात भर लाएगा। वे जोर से रो पड़ीं। बरसों का रुका बांध टूट पड़ा सैलाब बनकर। कुछ देर बाद अपने को सम्हाल कर उन्होंने कहानी सुनानी शुरू की।

आरम्भ में लोगों ने पुलिस के डर से उनके घर आना छोड़ दिया। वृद्ध पिता की कोई बँधी हुई आमदनी न थी। कुछ साल बाद रमेश बीमार पड़ा। दवा-इलाज के अभाव में बीमारी जड़ पकड़ती गई। घर का सब कुछ बिक जाने पर भी रमेश का इलाज न हो पाया। पथ्य और उपचार के अभाव में तपेदिक का शिकार बन कर एक दिन वह माँ को निपूती छोड़कर चला गया। पिता को कोरी हमदर्दी दिखाने वालों से चिढ़ हो गई। वे बेहद चिड़चिड़े हो गए। घर का सब कुछ तो बिक ही चुका था। अस्तु, फाकों से तंग आकर एक दिन वे भी चले गए, माँ को संसार में अनाथ और अकेली छोड़कर! पेट में दो दाना अनाज तो डालना ही था। अस्तु, मकान का एक भाग किराये पर उठाने का निश्चय किया। पुलिस के डर से कोई किरायेदार भी नहीं आया और जब आया तब, पुलिस का ही एक आदमी। लोगों ने बदनाम किया कि माँ का सम्पर्क तो पुलिस से हो गया है। उनकी दुनियाँ से बचा हुआ प्रकाश भी चला गया। पुत्र खोया,

लाल खोया, अन्त में बचा था नाम सो वह भी चला गया।

उनकी आँखों से पानी की धार बहते देखकर मेरे सामने गोरखपुर फाँसी की कोठरी घूम गई। काकोरी के चारों अभियुक्तों के जीवन का फैसला हो चुका था—प्राण निकल जाते तक गले में फन्दा डालकर लटका दिया जाए। फाँसी के पहले अन्तिम मुलाकात का दिन था। समाचार पाकर पिता गोरखपुर आ गए। माँ का कोमल हृदय शायद इस आघात को सँभाल न सके, यही समझकर उन्हें वे साथ न लाये थे। प्रातः हम लोग जेल के फाटक पर पहुंचे तो देखा कि माँ वहाँ पहले से ही मौजूद है। अन्दर जाने के समय सवाल आया मेरा, मुझे कैसे अन्दर ले जाया जाए। उस समय मां का साहस और पटुता देखकर सभी दंग रह गए। मुझे खामोश रहने का आदेश देकर उन्होंने मुझे अपने साथ ले लिया। पूछने पर यह कह दिया, "मेरी बहन का लड़का है।" हम लोग अन्दर पहुंचे। माँ को देखकर रामप्रसाद रो पड़े, किन्तु मां की आँखों में आँसुओं का लेश भी न था। उन्होंने ऊँचे स्वर में कहा—"मैं तो समझती थी कि मेरा बेटा बहादुर है, जिसके नाम से अंग्रेजी सरकार भी कांपती है। मुझे नहीं पता था कि वह मौत से डरता है। तुम्हें यदि रोकर ही मरना था तो व्यर्थ इस काम में आये।" बिस्मिल ने आश्वासन दिया। आँसू मौत से डर कर नहीं वरन् माँ के प्रति मोह के थे "मौत से मैं नहीं डरता माँ, तुम विश्वास करो।" माँ ने मेरा हाथ पकड़कर आगे कर दिया। यह तुम्हारे आदमी हैं। पार्टी के बारे में जो चाहो इनसे कह सकते हो। उस समय माँ का स्वरूप देखकर जेल के अधिकारी तक कहने को बाध्य हुए कि बहादुर माँ का बेटा ही बहादुर हो सकता है।

उस दिन समय पर विजय हुई थी माँ की और आज माँ पर विजय पाई है समय ने। आघात पर आघात देकर उसने उनके बहादुर हृदय को भी कायर बना दिया है। जिस माँ की आंखों के दोनों ही तारे विलीन हो चुके हों उसकी आंखों की ज्योति यदि चली जाए तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? यहां तो रोज ही अँधेरे बादलों से बरसात उमड़ती रहेगी।

कैसी है यह दुनिया, मैंने सोचा। एक ओर 'बिस्मिल जिन्दाबाद' के नारे और चुनाव में वोट लेने के लिए बिस्मिल द्वार का निर्माण और दूसरी ओर उनके घर वालों की परछाईं तक से भागना और उनकी निपूती बेवा मां पर बदनामी की मार! एक ओर शहीद परिवार सहायक फण्ड के नाम पर हजारों का चन्दा और दूसरी ओर पथ्य और दवादारू के लिये पैसों के अभाव में बिस्मिल के भाई का टी० बी० से घुटकर मरना! क्या यही है शहीदों का आदर और उनकी पूजा?

फिर आऊँगा मां, कहकर मैं चला आया, मन पर न जाने कितना बड़ा भार लिए। ●

आर्य महासम्मेलन सहारनपुर (उ०प्र०)

सर्व सज्जनों को यह जानकर हर्ष होगा कि आर्य उप-प्रतिनिधि सभा जिला सहारनपुर का "जिला आर्य महासम्मेलन" दि० १२, १३ एवं १४ अक्टूबर, १९६९ दिन रविवार, सोमवार एवं मंगलवार को मनाया जायेगा। इस अवसर पर शिक्षा सम्मेलन, राष्ट्र रक्षा एवं युवा उत्थान सम्मेलन, वेद सम्मेलन, छुआछूत उन्मूलन सम्मेलन, महिला सम्मेलन एवं गौ-संवर्धन सम्मेलन का भी आयोजन किया गया है।

इस शुभ अवसर पर भारतवर्ष के प्रमुख विद्वान सर्व श्री आनन्द स्वामी जी महाराज, श्री महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज, श्री पं० शिवकुमार शास्त्री संसद सदस्य प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र०, श्री प्रो० श्यामराव जी, श्री चौ० चरणसिंह जी (भूतपूर्व मुख्य मन्त्री उत्तर प्रदेश सरकार), श्री प्रो० वी. के. आर. वी. राव केन्द्रीय शिक्षा मन्त्री भारत सरकार, श्री डा० कर्णसिंह जी केन्द्रीय पर्यटन एवं नागरिक उड्डयन मन्त्री भारत सरकार, श्री प्रो० शेरसिंह जी राज्य सूचना एवं प्रसारण मन्त्री केन्द्रीय सरकार, श्री प्रेमचन्द शर्मा (सदस्य विधान सभा उ. प्र.) मन्त्री आ.प्र. सभा उ.प्र., श्री ओमप्रकाश शास्त्री शास्त्रार्थ महारथी, श्री ठा० यशपालसिंह संसद सदस्य, श्रीमती लेखवती जी डिप्टी स्पीकर विधान सभा हरियाणा, श्रीमती अक्षय कुमारी जी कन्या गुरुकुल हाथरस एवं श्री पन्नालाल पीयूष अजमेर, श्री पं० देशराज जी भजनोपदेशक आदि महानुभावों के भाग लेने की पूर्ण आशा है।

निवेदक :—

हंसराज खानीजो एम.ए., एल-एल.बी.
प्रधान, आर्य उप-प्रतिनिधि सभा जि० सहारनपुर

राजेन्द्रप्रसाद आर्य मन्त्री
आर्य उप-प्रतिनिधि सभा, रेलवे रोड सहारनपुर

चन्द्रलोक-विजय

● कुलदीप चड्ढा

नींव के पत्थर प्राय: ही कराह उठते हैं। लोग कंगूरों को देखकर उनकी प्रशंसा करते थकते नहीं, पर आखिर ये कंगूरे टिके किन पर हुए हैं? यदि ये नींव के पत्थर अपने स्थान से टल जावें तो कंगूरों की स्थिति क्या होगी? पर भाग्य की विडम्बना देखिए, एक बार नींव में स्थान पाकर, नींव के पत्थर हिल नहीं सकते। वे इतिहास का, अतीत का, अंग बन जाते हैं। इसके अतिरिक्त ऊपर के भवन का भार भी उन्हें टस से मस होने की स्वतंत्रता नहीं देता।

हम उन्हें भूल गए!

चांद पर मनुष्य के कदम पड़ने का संसार में उन्मुक्त स्वागत हुआ। आर्मस्ट्रांग, कालिन्स और एलड्रिन के चित्रों के छोटे-बड़े संस्करण सभी समाचारपत्रों में बड़े उत्साह से प्रकाशित हुए। पर उनका अभिनन्दन करते समय, कितने व्यक्ति थे जिन्होंने उन मनीषियों को याद करने का कष्ट किया होगा, जिनके बलिदानों पर, इस आधुनिक विज्ञान की नींव पड़ी? कितने व्यक्ति होंगे जो १६वीं व १७वीं शती के विज्ञानियों की करुणगाथाओं से परिचित होंगे?

उस काल में आधुनिक प्रायोगिक विज्ञान पल्लवित हो रहा था। वैदिक सूत्रों से अनभिज्ञ मनीषी, प्रयोग और चिन्तन के कष्टसाध्य मार्ग पर चल निकले थे। छोटे-बड़े अनेक वैज्ञानिक उपकरण प्रकृति के तत्वों की नाप-तोल करके मनुष्य को सृष्टि के सच्चे रूप से अवगत करवाने की चेष्टा कर रहे थे। पर, अंधकार को मिटाने के इन मनीषियों के प्रयासों को ईसाई मत के पुरोहित लोग कुचल रहे थे। बाइबल में वर्णित सृष्टि की रूपरेखा के विरुद्ध विचारों का प्रचार करने के अपराध में, अनेक विद्वानों को जीते जी मार डाला गया। आजकल खगोल शास्त्र के पितामह माने जाने वाले गैलीलियों जैसे मेधावी का जीवन, भौतिक व मानसिक यातनाओं द्वारा दूभर कर दिया गया था।

आज जब विज्ञान का जादू सिर पर चढ़कर बोल रहा है, इसाईयत ने अपने चारों ओर सुरक्षा के निमित्त एक कवच-सा ओढ़ लिया है। शेष धर्मों-मतों की भी स्थिति भिन्न नहीं। केवल वेदों का अनुयायी दयानन्द ही डंके की चोट से कह सकता था कि मेरा धर्म सृष्टि-विज्ञान और अध्यात्म के सच्चे रूपों के संधि-स्थल पर टिका हुआ है।

वेदों के अभिमत में

वेद तथा उनकी पुन: प्रतिष्ठा के प्रणेता दयानन्द के दर्शन का आधार है त्रैतवाद। यह समूची सृष्टि सत्, चित् और आनन्द के संयोग से बनी है। सच्चिदानन्द परमेश्वर अनेकानेक दिव्य गुणों से अलंकृत है। पर कुछ अन्य भी पदार्थ अथवा व्यक्ति, किसी विशिष्ट गुण अथवा 'देवत्व' पर अधिकार रखते हैं, अत: वे 'देव' कहलाते हैं। सूर्य-चांद आदि व्योम-पिंड भी इन्हीं अर्थों में देव हैं क्योंकि वे पृथ्वी के निवासियों को जीवन के निमित्त, अनेक सुविधाएं प्रदान करते हैं। सूर्य के बारे में तो यहां तक कहा गया है कि—

आदित्यो ह वै प्राण:

अर्थात् सूर्य ही प्राण का पर्याय है। तथा च

एत द्वै प्राणानाम।यतनम्

अर्थात् वही सब प्रकार की प्राण-शक्तियों का केन्द्र है! बहुत भटकाव के बाद, आधुनिक विज्ञान, उपनिषद् की इस भावना को अब पूरी तरह मानने लगा है। इस स्थल पर तथ्यों के विस्तार में जाना संभव नहीं, यह एक स्वतंत्र लेख की अपेक्षा रखता है। अस्तु!

जहां सूर्य चांद में देवत्व के लक्षण हैं। पृथ्वी सब अर्थात् पंचभूत जड़ तत्वों का भंडार है। जड़ पदार्थों का

एक गुण जो वैदिक ऋषियों को आदि काल से ज्ञात था, पर जिसे यूरोप के विज्ञानी केवल २-३ सौ साल पूर्व ही जान पाए, वह है गुरुत्वाकर्षण। मनीषी न्यूटन ने, पेड़ से सेब गिरने की अनुभूत घटना पर चिन्तन करके, पश्चिम में सर्वप्रथम इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। बाद में उस विषय पर बारीकी से अध्ययन किया गया और निष्कर्ष निकाला गया कि जड़ पदार्थों का अणु अणु परस्पर आकर्षण से बँधा हुआ है। इस आकर्षण की मात्रा पदार्थों के भार अथवा संहति के अनुपात से बढ़ती है और अन्तर बढ़ने पर घटती है। आकर्षण की दिशा प्रकटतः भारी पदार्थ की ओर होती है। पृथ्वी पर स्थित जड़ जंगम सभी पदार्थ, इसी आकर्षण का अनुभव करते हैं और इस आकर्षण की दिशा है पृथ्वी के केन्द्र की ओर!

"मोक्ष गति"

परन्तु कई कारणों से, पृथ्वी पर टिके पदार्थ गति प्राप्त कर सकते हैं और यदि इस गति की दिशा पृथ्वी के केन्द्र के विपरीत हो तो वे पृथ्वी के आकर्षण को कम अनुभव करेंगे। आधुनिक विज्ञानियों ने हमारे वायुमंडल में विचरने वाले सूक्ष्म गैस-कणों के बारे में काफी अध्ययन किया है। दिव्य किरणों से शक्ति पाकर, भौतिक अग्नियों से तप्त होकर अथवा अन्य गतिशील कणों से टकरा कर कई बार ये सूक्ष्म कण इतने वेगशील हो जाते हैं कि पृथ्वी के आकर्षण से छूटकर अन्तरिक्ष में लीन हो सकते हैं। प्रत्येक प्रकार के अणु परमाणु के लिए यह गति अलग होती है। इस गति का पारिभाषिक नाम है "विलासिटी आफ एस्केप" अर्थात् "मोक्ष गति"!

पृथ्वी के पुत्रों को अंक में लेकर चन्द्रमा तक पहुंचाने वाले अन्तरिक्षयान को भी इसी प्रकार की "मोक्ष गति" अपेक्षित थी। विशेष प्रकार के यन्त्रों, ईंधनों, नियंत्रकों आदि का आविष्कार करके तथा गति-विज्ञान के अनेक पक्षों पर मनन-चिन्तन करके विद्वान् लोग अन्तरिक्ष यानों को पृथ्वी की आकर्षण गति से मुक्त करवाने का प्रयास करते रहे और इसमें उन्हें सफलता भी क्रम से मिलती रही। मानवों को चंद्रमा तक ले जाने वाले यान का आयोजन इसी क्रम का नवीनतम और अब तक का सबसे अधिक महत्वपूर्ण पर्व है।

चन्द्रलोक तक मानव को सशरीर ले जाने की संभावना को मूर्तरूप देने वाले सभी प्रत्यक्ष, परोक्ष मनीषियों का हम उन्मुक्त अभिनन्दन करते हैं। पर साथ ही हम अपने देशवासियों को यह भी याद दिल दें कि इस भौतिक चन्द्र-विजय की आध्यात्मिक-समतुल्य सफलता इस देश के अनेक मनीषी प्राप्त कर चुके हैं। न केवल चन्द्रलोक, अपितु वे सूर्यलोक का भी आध्यात्मिक विचरण सफलतापूर्वक कर चुके हैं। इस उपलब्धि की संभावना हमारे शास्त्रों में प्राचीन काल से वर्णित है। पर मजे की बात यह है कि भौतिक अथवा आध्यात्मिक दोनों दशाओं में तर्क एक-सा ही लागू होता है।

जीव जड़ शरीर और चेतन आत्मा का सम्मिलन है। उसकी जड़ता उसे पृथ्वी से आकृष्ट किए रखती है, चिपटाए रखती है। सूक्ष्म कणों की भाँति उसकी भी एक "मोक्ष गति" है। पर इस "मोक्ष गति" के लिए भौतिक साधनों से भिन्न, आध्यात्मिक साधन भी संभव है। पृथ्वी माया का भंडार है। ज्यों ज्यों जीवात्मा इससे मुक्त होने के लिए आध्यात्मिक गतिशीलता अथवा चेतनता प्राप्त करती जावेगी उसका पृथ्वी के बन्धन से छूटना सरल होता जावेगा।

आध्यात्मिक पृष्ठभूमि

इस छुटकारे के परिणाम के दो चरण प्रश्नोपनिषद् में स्पष्ट किए गए हैं। प्रथम है चन्द्रलोक की प्राप्ति और दूसरा है सूर्यलोक की। इनके निमित्त कारणों को उपनिषद्कार ने इस प्रकार गिनाया है।

तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया विद्यया

अर्थात् तप से, ब्रह्मचर्य से, श्रद्धा से, विद्या से। यह गणना लाक्षणिक अथवा सांकेतिक है। वास्तव में प्रत्येक सात्त्विक आवेग इस दिशा में सहायक होगा, प्रत्येक ऐसा कर्म, मनन व चिन्तन आदि, जो जीवात्मा को ऊर्ध्व दिशा में प्रेषित करे; पार्थिव आकर्षण के विपरीत।

इस जीवन-प्रणाली का पालन जो व्यक्ति "इष्टापूर्ते कृतमित्युपासते" (इच्छापूर्ति को लक्ष्य मान कर करते हैं) तथा जो "प्रजाकामा" (सन्तान की कामना वाले) हैं, वे चन्द्रलोक को प्राप्त होते हैं। पृथ्वी से उनकी मुक्ति

सीमित काल के लिए होती है, जिसके बाद वे "पुनरावर्तन्ते" (वापिस लौट आते हैं)।

परन्तु जो जीव उक्त साधनों को पूरी तरह निभाते हैं और इच्छापूर्ति तथा सन्तान की कामना से भी ऊपर उठ जाते हैं, वे "आदित्यमभिजयन्ते" (सूर्यलोक को विजय करते हैं)। ऐसे जीव लौट कर पृथ्वी पर वापिस नहीं आते ! यही मोक्ष है, यही अमृत है, "एतदमृतम्" !

मनुष्य भौतिक रूप से चन्द्रलोक में जा चुका है तथा वहाँ से वापिस भी लौट चुका है। परन्तु वेद और उपनिषद् का विज्ञान उसे चेतावनी देता है कि जब कभी वह सूर्यलोक तक जाने में संभव हो सका, उसका पृथ्वी पर वापिस लौटना असम्भव होगा। सूर्य के बारे में विज्ञान आज तक जितनी खोज कर चुका है, उससे भी उक्त परामर्श का समर्थन होता है।

चन्द्रलोक और सूर्यलोक की विजय में उक्त भेद का कारण अध्यात्म और विज्ञान की एक सांझी पृष्ठभूमि है। वेद का अनुसरण करता हुआ उपनिषद् कहता है कि चन्द्रमा "रयिः" है अर्थात् पंचभूत तत्त्वों का प्रतीक। अतः वह भी पृथ्वी की ओर आकृष्ट है। इसी कारण वह पृथ्वी के चारों ओर घूमता है। इसी कारण चन्द्रमा पर भौतिक अथवा आध्यात्मिक रूप में जाने वाले जीव पृथ्वी पर वापिस आ जाते हैं। परन्तु सूर्यलोक से वे लौट नहीं सकते क्योंकि सूर्य तो अपने आकर्षण के बल पर पृथ्वी को अपनी परिक्रमा में बाँधे हुए है।

पुनरावर्तन

चन्द्रलोक और सूर्यलोक की आध्यात्मिक उपलब्धि उन अरबों खरबों डालरों के व्यय की अपेक्षा नहीं रखती जो अमेरिका को खर्च करने पड़े। किसी भी भौतिक उपकरण, प्रयोगशाला आदि की सहायता के बिना, अकेला व्यक्ति भी उक्त सफलता की आशा कर सकता है। पर संभावना और निश्चितता के बीच साधना का लम्बा और दुर्गम सेतु है। इसके लिए एक नहीं अनेक जन्मों का व्यय अपेक्षित है। तथाच, सूर्यलोक की विजय आदर्श की पराकाष्ठा है। चंद्रलोक की उपलब्धि का महत्त्व भले ही कुछ कम है, तो भी मायावी मानवों में से अधिकांश के लिए यह भी वरणीय है। अध्यात्म के क्षेत्र में भी, अन्य किसी क्षेत्र की भांति, अपनी क्षमता को, अपने आपको, अपनी "आत्मा" को जानने का परामर्श वेद बार-बार देते हैं।

देव दयानन्द हमें भौतिक और आध्यात्मिक उपलब्धियों की सांझी पृष्ठभूमि पर क्रियाशील होने का आदेश दे गए हैं। हमारा कर्तव्य है कि उनके आदेशानुसार तथा परस्पर सहयोग से, हम अपने प्रगति-पथों पर निरन्तर बढ़ते चलें।

(टाइटल २ का शेष)

के अन्याय के विरुद्ध है। केन्द्र शासक है, हरयाणा शासित है। केन्द्र मालिक है हरयाणा नौकर है। नौकर और मालिक की लड़ाई में यदि नौकर त्यागपत्र दे देवे तो लड़ाई समाप्त हो जाती है। इसी प्रकार यदि हरयाणा की सरकार के सभी सरकारी पदाधिकारी त्यागपत्र दे देवें तो स्वतः लड़ाई बन्द हो जाए। मेरा संकेत हरयाणा सरकार के चपरासी से लेकर विधान सभा के विधायक, संसद् सदस्य, मन्त्री तथा मुख्यमन्त्री तक है। इस प्रकार के असहयोग आन्दोलन का नाम है उचित और अहिंसात्मक संघर्ष, जिससे शासक और शासित का झगड़ा ही समाप्त हो जाता है। इसलिये यदि हरयाणा की जनता न्याय प्राप्त करना चाहती है तो उसे हरयाणा सरकार को त्यागपत्र देने पर बाधित करना होगा। केन्द्रीय सरकार से न्याय प्राप्त करने में हरयाणा सरकार का बना रहना सबसे बड़ी रुकावट है। केन्द्रीय सरकार से लड़ाई लड़ना हरयाणा की जनता का नहीं, हरयाणा सरकार का काम है। यदि हरयाणा वासियों पर अन्याय और अत्याचार हुए हैं, हो रहे हैं और होंगे तो उसका केवल मात्र दायित्व हरयाणा की सरकार पर है और होगा। हरयाणा के विधायक, संसद् सदस्य तथा मन्त्री जनता के सामने केन्द्रीय सरकार के अन्याय की शिकायत करते हैं तो वे न केवल अपने दायित्व ही से विमुख हो रहे हैं अपितु जनता के साथ विश्वासघात और कर्त्तव्य का हनन कर रहे हैं। मैं हरयाणा सरकार के कर्णधारों से पूछना चाहता हूँ कि युद्ध क्षेत्र में लड़ाई लड़ना जनता से मनोनीत सशस्त्र कमाण्डरों का काम है या निहत्थी जनता का ? जनता अपने प्रतिनिधियों को संसद् और विधान सभाओं में इसलिये नहीं भेजती कि वे गद्देदार कुर्सियों पर बैठकर आराम करें और जनता पर आपत्ति आने पर लच्छेदार भाषण झाड़कर अपने कर्त्तव्य की इति भी समझ लें। आज हरयाणा की जनता के सामने एक बहुत बड़ी समस्या है, जनता समस्या का समाधान चाहती है, जबकि समस्या के हल का प्रारूप नेताओं का त्यागपत्र है। यदि वे जनता के सच्चे प्रतिनिधि हैं और अपने कर्तव्य को समझते हैं तो उन्हें चाहिये कि वे शीघ्र त्यागपत्र देकर जनता का मार्ग परास्त करें।

हरयाणा सरकार के शिकार अध्यापक

~ कृष्णदत्त दीक्षित

मुख्य मन्त्री बन्सीलाल द्वारा शिक्षकों के प्रति किये गए उपेक्षित व्यवहार से सारा ही अध्यापक वर्ग निराश है। इसके भिन्न २ कारण सुनने को मिलते रहे। स्वयं मुख्य मन्त्री ने यह आरोप लगाया कि अध्यापक घर के पास होने से रोज घर जाकर अपना खेती का कार्य करते हैं। इसका अभिप्राय यह हुआ कि अध्यापक हाथ पर हाथ धर कर बैठे रहें। इन्हें तो बिल्कुल निकम्मे अध्यापक चाहिये जो अपने हाथ से तिनका तक न उठाएं। कभी यह कहकर बदनाम किया कि राजनीति में भाग लेते हैं अपने क्षेत्र से दूर अपरिचित स्थान पर जाने पर ये राजनीति से परे रहेंगे किन्तु उन्हें यह पता नहीं कि भाग लेने वालों को तुम्हारी तो क्या मजाल खुदा भी नहीं रोक सकता। यूं नहीं कहते चुनाव में श्रीमान जी के विरोध में एक प्रिंसिपल खड़े थे, अपने वर्ग से किसे प्यार नहीं होता! यदि वहाँ पर अध्यापक वर्ग श्री देवा सिंह का विरोध करता और इनका प्रचार करते तो फिर भले ही नौ हाथ की रजाई में सोते। कोई कहीं भय नहीं था।

इतने बड़े स्तर पर तबादले के क्या दुष्परिणाम हुए इनकी भनक सत्ताधारियों के कान तक में न पड़ी। कितना ही राष्ट्रीय प्रचार हो फिर भी अपने क्षेत्र में रहने से अथवा अपने ग्राम में रहने से मनुष्य हर प्रकार की भली बुरी सोचता है। वह पास पड़ोस के नौजवान भाई बहनों की हानि अपनी हानि मानता है। उसे ग्राम, गोत्र, जाति एवं तहसील जिला आदि से प्यार होना मनोविज्ञान की दृष्टि से स्वाभाविक है।

हरयाणा में कोठारी कमीशन ग्रेड लागू हुआ। सभी प्रसन्न हो गए। वेतन के बिल बन गए किन्तु आश्चर्य तब हुआ जब कटौती के आर्डर आए। आज तक कोई प्रमाण नहीं मिलता जब कि वेतन निर्धारण करने पर कटौती की गई हो। अन्य विभागों में तो मकान का किराया तक दिया जाता है। किन्तु इस महंगाई के समय में विचारा राष्ट्र-निर्माता बेघर हो रहा है। दूर २ अपरिचितों को कौन मकान दे? जनसाधारण समझता है यह सारा ही वर्ग दोषी है तभी तो इन्हें यह सजा मिली है। जैसे जेल में रोटी कैदियों को बनानी पड़ती है इसी प्रकार अध्यापकों को भी आटे दाल की चिन्ता होती है। यदि सरकारी भवन में रहें तो इन्हें वेतन का दस प्रतिशत देना पड़ता यही अन्याय है! महा अत्याचार है!! राष्ट्र का घोर अपमान है!!!

इतना होने पर भी मैं कुछ अध्यापक वृन्द की सेवा में लिखना उचित समझूंगा। अध्यापकों ने जरा सूझ-बूझ से काम नहीं लिया। यदि ऐसा होता तो उसे आज ऐसे दिन नहीं देखने पड़ते। क्या उन्हें महीनों पूर्व इस योजना का पता नहीं चल गया था? वह समय शिक्षा अधिकारियों के दफ्तरों में भागकर जाने का और क्लर्कों हैडक्लर्कों आदि की जेबें भरने और सिफारिशें जुटाने का नहीं था। उस समय इस विपत्ति को अपनी नहीं सारे शिक्षक समाज की विपत्ति समझना चाहिये था। किन्तु आपको तो दौड़ में होड़ लगाने की लगी थी कि मुझे अच्छा सा स्टेशन मिल जाए और कोई कहीं जाये भाड़ में! एक-एक अध्यापक के सात-सात बार ट्रांसफर हुए। यह सब आपकी अपनी भूल थी।

इतिहास इस बात का साक्षी है शिक्षक वर्ग ने अपनी इज्जत अपने हाथों नीलाम की है। महाभारत में जब गुरु द्रोणाचार्य ने कौरवों को घर जाकर पढ़ाना प्रारम्भ किया तभी से इस वर्ग की हानि होनी प्रारम्भ हुई। आज भी देखने में आता है अध्यापक ट्यूशनें करते हैं। कोई बुरा काम नहीं परिश्रम से पढ़ाकर पैसा लेकर अपनी आजीविका चलाना अच्छी बात है किन्तु हमें तो शिकायत इस बात की होती है अध्यापक घर बालक को पढ़ाने जाता है तब

(शेष पृष्ठ २६ पर)

कोई मेरी भी सुनेगा ?

जब आदमी अपनी ही कहता चला जाता है दूसरों की नहीं सुनता तो वह पैगम्बर हो जाता है।

—काका कालेलकर

श्रीमती इन्दिरा गान्धी भवानी और चण्डी है।

—त्रिलोचन सिंह

कांग्रेस का शुद्धीकरण आवश्यक है।

—चन्द्रशेखर

हमारे देश की शिक्षा-प्रणाली नारी की कमर की तरह पतली है।

— आन्ध्र के शिक्षा-मंत्री

जो हिटलर ने किया, वही इन्दिरा गान्धी कर रही है

—पाञ्चजन्य

दुनियाँ जानती है कि मैं प्रगतिशील विचारों वाला व्यक्ति हूं। मुझे किसी तरह के प्रमाणपत्र की आवश्यकता नहीं।

—कामराज

हमने कोई नया कदम नहीं उठाया है। बल्कि, जनता जो हमसे आगे निकल गई थी, हमने लपककर उसे पकड़ लिया है।

—इन्दिरा गांधी

प्रधान मंत्री को अपनी गलती कबूल कर लेनी चाहिए।

—मोरारजी देसाई

प्रधान मंत्री ने कोई गलती नहीं की है।

—जगजीवन राम

कांग्रेसाध्यक्ष प्रधान मंत्री को आदेश नहीं दे सकते।

—विभूति मिश्र

कांग्रेस को अपदस्थ करना हमारा काम है।

— श्रीकृष्ण मेनन

मुझे निकालने के लिये ही कामराज योजना बनाई गई थी।

—मोरारजी देसाई

भारत से उलझने का हमारा कोई इरादा नहीं है।

— याह्या खां

जो देश आकार में बड़ा हो उसे शक्तिशाली और आकार में छोटा हो तो उसे कमजोर नहीं समझना चाहिये।

—फिलीपीन के परराष्ट्रमंत्री रोमिलो

प्रधान मंत्री की शक्ति बढ़ी है और लगातार बढ़ रही है।

—हरिविष्णु कामत

मैंने कांग्रेस में जन्म लिया है और कांग्रेस में रहते हुए ही मरना चाहता हूं।

—निजलिंगप्पा

श्रीमती गान्धी जो कुछ कर रही हैं, वह मात्र मृगमरीचिका है।

—चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

भारत संसार का गुरु रहा है। आज भी उसे गुरु जैसा आचरण करना चाहिए।

—फिलीपीन के परराष्ट्रमंत्री रोमिलो

सरकार के पागलपन की भी कोई हद होनी चाहिए।

—चिन्तामणि पाणिग्रही

संसार में जितने भी तीर्थ-स्थान हैं, वहां शायद ही कभी शान्तिमय वातावरण देखा गया हो।

—एन्थौनी हावार्ड

भारतीय समाजवाद वास्तव में मध्यमवर्गीय साम्राज्यवाद है।

—नीरद सी० चौधरी

अतुल्य घोष सिण्डिकेट को नहीं छोड़ने वाले हैं। कदाचित् दूसरे लोग छोड़ जायें तो वे अपने आप एकाकी सिण्डिकेट बना लेंगे।

—लिंक

मेरा भी अपना दिमाग है तभी मैं प्रधान मंत्री चुनी गई हूँ।

—इन्दिरा गांधी

जल्दबाजी में काम करके प्रधान मंत्री जी अब पछता रही हैं।

—इंडियन मानीटर

अन्तरात्मा की आवाज के अनुसार वोट देना एक "विद्रोह" था। जबकि यह सफल सिद्ध हुआ, हम इसे "क्रान्ति" कहने लगे।

—जगजीवन राम

भ्रष्टाचार सरकारी क्षेत्र में

● जगदीशचन्द्रवर्मा

साधारणतः जनता यह स्वीकार करती है कि भारत में भ्रष्टाचार बढ़ता जा रहा है। भ्रष्टाचार का अभिप्राय आचरण के भ्रष्ट होने से है। आचरण कई प्रकार से भ्रष्ट होता है—अनुशासनहीनता, रिश्वतखोरी पद का अनुचित लाभ उठाना, मुनाफाखोरी आदि। निजी तथा सरकारी कारबारों में भ्रष्टाचार की तुलना करने से पता चलता है कि सरकारी कारबारों में अनुशासनहीनता, रिश्वतखोरी और पद का अनुचित लाभ उठाने व शोषण करने की आम प्रथा है जो कि निजी कारबारों में न्यून है। निजी व्यापार अथवा कारबारों में भ्रष्टाचार मुनाफाखोरी के विभिन्न प्रकारों में प्रचलित है। कारण, सरकारी कारबारों में कर्मचारीगण व अफसर समयानुकूल तथा पद के महत्व के अनुसार अच्छा आचरण नहीं बरत पाते। निजी कारोबारों में मालिकों के कड़े नियंत्रण रोजगार से निकाले जाने का भय आदि कारणों की वजह से कर्मचारीगण अच्छा आचरण बरतते हैं किन्तु इन व्यापारों व कारखानों के मालिकगण भ्रष्टाचार को बढ़ावा देते हैं। यह लोग सरकारी महकमों से अपना काम निकलवाने के हेतु सरकारी कर्मचारियों व अफसरों को विभिन्न प्रकार से घूस देकर प्रसन्न करके अपना कार्य सिद्ध करने में सफल होते हैं। इस प्रकार से राष्ट्र में जैसे-जैसे सरकारी कारबार का क्षेत्र बढ़ता जाता है, कड़ा नियंत्रण न होने के कारण भ्रष्टाचार बढ़ता जाता है।

भ्रष्टाचार और राष्ट्रीयकरण

उपरोक्त वक्तव्य से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भ्रष्टाचार का राष्ट्रीयकरण से तथा सरकारी नियंत्रणों से विशेष सम्बन्ध है, जैसे-जैसे राष्ट्रीयकरण अथवा सरकारी कारबार व नियंत्रण का क्षेत्र बढ़ता जाता है भ्रष्टाचार भी उसी दिशा में कई गुने अनुपात में बढ़ता जाता है।

राष्ट्रीयकरण वाले सरकारी कारबार स्थित नहीं भी हैं तब भी भ्रष्टाचार समाज में, महकमों में, देश में वर्तमान रहता है क्योंकि सरकारी प्रशासन से सम्बन्धित विभागों में भ्रष्टाचार किसी न किसी रूप में पनपता रहता है। इसीलिये यदि राष्ट्रीयकरण कारबार बिल्कुल भी नहीं है तब भी भ्रष्टाचार किसी न किसी अनुपात में उपस्थित रहता है और जैसे-जैसे सरकारी कारबार का क्षेत्र बढ़ता जाता है भ्रष्टाचार की डिगरियाँ कई गुनी बढ़ती जाती हैं। इस प्रकार राष्ट्रीयकरण और भ्रष्टाचार एक ही पथ पर ऊंचाई की तरफ लम्ब-रूप में बढ़ते हैं।

मान्यताएं

१—सरकारी कारबार के सर्वोच्च प्रधानाधिकारी चाहे मिनिस्टर हो अथवा सचिव अथवा (चैयरमैन अथवा जनरल मैनेजर) कारबार की तरफ से जीवन-यापन के प्रत्येक विलासितापूर्ण साधनों को प्राप्त करता है, भोगता है तथा अपनी इच्छा के अनुसार उच्च पदों का स्थान बनाकर अपनी मन मर्जी के व्यक्ति नियुक्त करने की क्षमता का पूर्णतः उपयोग करता है। यह सुविधाएं उस से नीचे काम करने वाले अफसरों को प्राप्त नहीं होती।

२—यह अफसरगण प्रधान को खुश रखने के लिये प्रत्येक प्रकार की सुविधा दफ्तर के खर्चे पर उपलब्ध करके खूब चापलूसी दिखाते हैं और ऐसे अफसरों की तलाश में रहते हैं जबकि वह बिना खटके अपने पद का पूरा-पूरा व्यक्तिगत लाभ उठा सकें।

३—यह अफसरगण भी अपने साथ दफ्तर के कुछ अपने नीचे काम करने वाले कर्मचारियों को भी प्रसन्न रखते हैं। जो कर्मचारी इनके विषय में सन्देहात्मक बातें कर देता है उसे दफ्तर के अनुशासन भंग करने के षड्यन्त्र में फंसा कर तंग कर दिया जाता है और कभी-कभी इस अमानवीय व्यवहार की पराकाष्ठा इतनी बढ़ जाती है कि उस बेचारे कर्मचारी को नौकरी से बेधड़क निकाल दिया

जाता है। ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है।

५—वर्तमान परिस्थितियों में कोई ऐसी संस्था नहीं खोली जाती जो इस प्रकार के भ्रष्टाचरी कर्मचारियों की खैर-खबर ले सके। यदि ऐसी संस्थाएं व्यक्तिगत रूप से हैं भी तो वहाँ सिफारिशें न्याय का रास्ता रोकती हैं। गरज यह है कि वहाँ भी इन भ्रष्टाचारियों के भाई-बन्धु इनका लिहाज रखने के लिये उपस्थित रहते हैं।

६—सरकार ने कोई ऐसी संस्था आज तक नहीं खोली जहाँ कि एक ईमानदार कर्मचारी जो एक पूरे सरकारी कारबार और महकमे के भ्रष्टाचार से भिज्ञ है पतित अफसरों और कर्मचारियों की शिकायत गुप्त रूप से कर सके और अपराध को पकड़वाने में सहायता दे सके।

७—सरकारी क्षेत्रों में कठोर नियन्त्रण का अभाव जब तक बना रहेगा भ्रष्टाचार की गति अवरोध नहीं हो सकेगी।

८—बढ़ते हुए सरकारी कारबार, राष्ट्रीयकरण और नियन्त्रण (कन्ट्रोल) का अर्थ शान्तिपूर्ण ढंगों से समाजवाद लाना है। लेकिन प्रजातंत्र राज्य में पूर्ण स्वतन्त्रता और कार्य की स्वच्छन्दता की वजह से देश के नागरिकों का जो अविकसित नैतिक स्तर है वह ऊपर नहीं उठता और भ्रष्टाचार जैसी अनैतिकता शीघ्र ही अपना प्रभाव दृढ़ कर कर लेती है। देश में चरित्र-निर्माण को बढ़ावा देने वाले साधन और प्रयास के अभाव में भ्रष्टाचार को पनपने से रोकना कठिन होता है।

एडमिनिस्ट्रेटिव रिफार्म्स कमीशन

वर्तमान भारत में उपरोक्त मान्यताएं वर्तमान हैं। सरकार को भी भ्रष्टाचार की पूरी-पूरी जानकारी हासिल है। फलस्वरूप सरकार ने प्रशासनीय सुधार मंडल (Administrative Reforms Commission) की स्थापना की इस उद्देश्य से कि भ्रष्टाचार को निर्मूल किया जा सके। लेकिन इतना बड़ा एक महकमा बना कर सरकार को सुधार के रूप में कागजी रिपोर्ट ही हाथ लगी है। उन पर जो अमल होता है वह सब देश के नागरिकों के सम्मुख है, स्पष्ट है। इन रिपोर्टों में लिखित सुझावों को कार्यान्वित करने का साहस और उत्तरदायित्व कौन दिखाये। अंधों में अंधे ही रास्ता दिखाने वाले ठहरे।

इसी प्रकार की एक रिपोर्ट कमीशन द्वारा जून १९६७ में पेश की गई थी जिसकी सरकार ने परीक्षा की और बहुत से सुझावों को काँट-छाट कर स्वीकार करने का वायदा किया। यह सुधार के सुझाव भ्रष्टाचार जैसी आम समस्या पर पूर्णत: शान्त और चन्द्रमा के शून्य वातावरण के समान पाये गये। इस रिपोर्ट के ३४२ सफे पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि वास्तव में सरकार ने भ्रष्टाचार का भी राष्ट्रीयकरण कर लिया है।

केन्द्रीय विजिलेन्स कमीशन की रिपोर्ट

केन्द्रीय विजीलेन्स कमीशन की पांचवी वार्षिक रिपोर्ट (अप्रैल १९६८ से मार्च १९६९ तक) जो अभी सितम्बर के महीने में प्रकाशित हुई उसके आधार पर सरकारी मंत्रालयों में उच्चाधिकारी सुरक्षा, वित्त, रेलवे डाक व तार विदेशी व्यापार और सप्लाई आदि मंत्रालयों के अधिकारी तथा कार्यालय वर्ग की भ्रष्टाचार की शिकायतें मिलीं जिन पर खोज-बीन करने पर भ्रष्टाचार साबित हो सका निम्न प्रकार से हैं।

केन्द्रीय सरकार	गजेटिड अधिकारी	बिना गजेटिड अधिकारी
सुरक्षा मंत्रालय		
कर्मचारीगण जिन्हें नौकरी से	४६	२१४
निकालने की शिफारिश की गई जिनकी सिकायतें मार्च १९६९ तक नहीं खोली गई	८९	१५९
आय कर महकमा		
जिनके खिलाफ कार्यवाही हुई	२०	२०
कस्टम और केन्द्रीय एक्साईज	२०	२२३
रेलवे		
सजा की सिफारिशें की गई	४१	१,१३४
डाक-तार ,, ,, ,,	११	१,०५१
विदेशी व्यापार और सप्लाई	१६	२३
काम, मकान डिपार्टमैन्ट	२३	१२०
केन्द्रीय इलाके		
देहली	२	३३५
हिमाचल प्रदेश	१४	८१७
मनीपुर	१०	१३०

उपरोक्त के अतिरिक्त ४८२ अधिकारी गण जिनमें

३१४ गजेटिड थे विभिन्न प्रकार से दंडित किये गये। १९६८-६९ में कुल शिकायतों पर कमीशन द्वारा कार्यवाही की गई। इस प्रकार पता चलता है कि भ्रष्टाचार का दिन-प्रतिदिन बोल-बाला बढ़ता चला जा रहा है और देश में चरित्र निर्माण की विशेष आवश्यकता है जिस पर सरकार जोर नहीं दे रही है।

प्राचीन भारत

भारत खंड आर्यावर्त का पुराना इतिहास पलटने से पता चलता है कि राज्य के कार्य और सेवा विभागों में सत्य और ईमानदारी का बोल-बाला रहता था। सरकारी शासन की बागडोर ईमानदार व्यक्तियों के हाथों में रहती थी और भ्रष्टाचरण कर्मचारियों की सख्त से सख्त सजा मिलती थी। राज्य तथा समाज का वातावरण अधिकतर नैतिक रूप से सुदृढ़ रहता था। आज नैतिकता की सारे ही भारतवर्ष में घोर शून्यता है जिसके लिए सरकार के प्रयत्न तभी सफल हो सकते हैं जबकि सरकार के साथ-साथ राष्ट्र का प्रत्येक नागरिक नैतिक उत्थान की ओर अग्रसर हो, अगुआ बने और एक मिशाल, उदाहरण दूसरे के सम्मुख रखे तथा समाज के वर्तमान वातावरण को पूर्णतः परिवर्तित कर सके।

जाग्रति और आर्थिक उत्थान

देश में यदि सरकार वास्तविक रूप में जाग्रति पैदा करने और आर्थिक उत्थान स्थापित करने की इच्छुक है तो भ्रष्टाचार को जड़मूल से नष्ट करना होगा तथा राष्ट्र में नैतिक उत्थान का मनसा, वाचा, कर्मणा सर्व प्रकार से प्रयत्न होगा तभी राष्ट्रीयकरण और राजकीय नियंत्रण के बढ़ते पगों को देश के आर्थिक उत्थान में सफलता मिल सकती है और साधारण जनता को अधिकतम सामाजिक सुख पहुँच सकता है।

★

देश की एकता में हिन्दी का योग

● क्षेमचन्द्र सुमन

किसी भी देश की एकता में उसकी भाषा का अभूत-पूर्व योगदान होता है। इस दृष्टि से यदि हम विचार करें तो देखेंगे कि हमारे देश की एकता को बनाये रखने और उसकी अखण्डता को सुरक्षित करने में हिन्दी का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति से पूर्व हिन्दी के ही माध्यम से भारत के अनेक सुधारकों, नेताओं और मनीषियों ने अपने विचारों का प्रसार किया था। अपनी दूरदर्शिता के कारण उन्होंने ऐसी ही भाषा को अपनी भाव-धारा के प्रचार का साधन बनाया था जो देश के सभी भू-भागों के अधिकांश जन-समुदाय को एकता के सूत्र में पिरो सकती थी और वह भाषा हिन्दी थी।

यही कारण था कि जहाँ राजा राममोहन राय, केशवचन्द्र सेन जैसे बंगला-भाषा-भाषी समाज-सुधारकों ने अपने विचारों का प्रचार हिन्दी के माध्यम से किया, वहाँ स्वामी दयानन्द और महात्मा गाँधी ने गुजराती होते हुए भी राष्ट्रीयता और समाज-सुधार की अपनी भाव-धारा को हिन्दी के द्वारा ही सारे देश में फैलाया।

राजा राममोहन राय ने जहाँ अपने 'बंगदूत' नामक पत्र को हिन्दी में सफलतापूर्वक प्रकाशित किया, वहां 'वंदेमातरम्' के राष्ट्रगान के अमर गायक बंकिमचन्द्र चटर्जी ने अपने 'बंगदर्शन' नामक ग्रन्थ के पाँचवें खण्ड में स्पष्ट रूप से यह लिखा—"हिन्दी भाषा की सहायता से भारतवर्ष के विभिन्न प्रदेशों में बिखरे हुए लोग जो ऐक्य-बन्धन स्थापित कर सकेंगे वास्तव में वही सच्चे भारतीय कहलाने योग्य हैं।'

यही नहीं, 'वसुमति' के सम्पादक श्री सुरेशचन्द्र समाजपति और 'सन्ध्या' के सम्पादक पं० ब्रह्मबान्धव उपाध्याय आदि ने भी अपने पत्रों में हिन्दी की राष्ट्रभाषा सम्बन्धी क्षमता को मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया था। उन दिनों बंगाल में गठित क्रान्तिकारी नवयुवकों के संघों में पारस्परिक व्यवहार की भाषा हिन्दी थी। प्रसिद्ध बंगाली विद्वान् श्री भूदेव मुखर्जी ने तो अपना सारा जीवन ही हिन्दी के प्रचार और प्रसार में लगा दिया था।

सामाजिक क्षेत्र में अनेक सुधारकों द्वारा जहां हिन्दी को भारत की एकता का प्रमुख साधन समझा जा रहा था वहाँ महात्मा गाँधी के द्वारा उसके प्रचार और प्रसार को इतना व्यापक बल मिला कि कांग्रेस के अधिवेशनों में भी प्रस्तावों और भाषणों की भाषा हिन्दी हो गई। महात्मा गांधी जी ने हिन्दी का महत्व इन शब्दों में स्वीकार किया था—"जैसे अंग्रेज अपनी मातृभाषा अंग्रेजी में ही बोलते हैं वैसे ही मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप हिन्दी को भारत माता की एक भाषा बनाने का गौरव प्रदान करें। हिन्दी को सब समझते हैं। इसे राष्ट्र-भाषा बनाकर हमें अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए।"

हिन्दी की सार्वजनीन उपयोगिता और महत्ता का इसी से पता चलता है कि इसे दूसरे प्रदेशों के निवासी नेताओं ने अपने विचारों के प्रकट करने का साधन बनाया। श्रीमती सरोजिनी नायडू ने इसकी महत्ता को स्वीकार करते हुए एक बार कहा था—"देश के सबसे ज्यादा हिस्से में हिन्दी ही बोली जाती है। अगर हम साधारण बुद्धि से काम लें तब भी हमें पता चलेगा कि हमारी कौमी जबान हिन्दी ही हो सकती है।"

"स्वराज्य हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है" के अमर मन्त्रदाता लोकमान्य तिलक के यह विचार वास्तव में हिन्दी की व्यापकता का सुपुष्ट प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने कहा था—"मेरी समझ में हिन्दी भारत की सामान्य भाषा होनी चाहिए। जब एक प्रांत दूसरे प्रांत से मिले तो आपस में विचार-विनिमय का माध्यम हिन्दी ही होनी चाहिए।"

इन नेताओं और महापुरुषों के ये विचार ही पग-पग पर यह घोषित कर रहे हैं कि यदि देश की एकता का सूत्र किसी भाषा के हाथ में है तो वह हिन्दी ही है।

हिन्दी के द्वारा ही सारे देश की एकता सुरक्षित रह सकती है।

प्रसिद्ध मनीषी आचार्य क्षितिमोहन सेन ने भाषा को किसी भी देश की एकता का प्रधान साधन मानते हुए हिन्दी की महत्ता की जो प्रतिष्ठापना की थी वह भी हमारे लिए उपेक्षणीय नहीं है। उन्होंने कहा था—"अंग्रेजी भाषा की महिमा इसलिए नहीं है कि वह हमारे शासकों की भाषा थी, बल्कि इसलिए है कि उसने संसार की समस्त विद्याओं को आत्मसात् किया है। हिन्दी को यही पद पाना है। उसे भी नाना विद्याओं, कलाओं और संस्कृतियों की त्रिवेणी बनना होगा। हिन्दी में वह क्षमता है। बिना ऐसा बने भाषा की साधना अधूरी रह जायगी। भाषा हमारे लिए साधन है, साध्य नहीं; मार्ग है, गन्तव्य नहीं; आधार है, आधेय नहीं।"

हिन्दी को यह महत्त्व इसलिए नहीं दिया गया कि वह सारी भारतीय भाषाओं में ऊँची है, बल्कि उसे राष्ट्र-भाषा इसलिए कहा और समझा जाता है कि हिन्दी को जानने, समझने और बोलने वाले देश के कोने-कोने में फैले हुए हैं। ये लोग हिन्दी चाहे जानते न हों, व्याकरण की भूलें करते हों, अशुद्ध हिन्दी बोलते हों, परन्तु बोलते हिन्दी ही हैं और उसी में अपने भाव व्यक्त करते हैं और दूसरों की बात समझते हैं। वास्तव में हिन्दी की यह प्रकृति ही देश की एकता की परिचायक है। इसी प्रकृति ने हिन्दी को व्यापक बनाया है। वह हिन्दुओं या कुछ मुट्ठी-भर लोगों की भाषा नहीं है वह तो देश के कोटि-कोटि कण्ठों की पुकार है।

हिन्दी के सूत्र के सहारे देश के एक कोने से चलकर कोई भी व्यक्ति दूसरे कोने तक जा सकता है और अपना काम चला सकता है। देश में फैली हुई अनेक भाषाओं और संस्कृतियों के बीच यदि भारतीय जीवन की उदात्तता किसी भाषा में दिखाई देती है तो वह हिन्दी में है। चाहे सब लोग हिन्दी न जानते हों, लेकिन फिर भी हिन्दी के द्वारा वे अपना काम चला लेते हैं, उन्हें उसमें कोई कठिनाई नहीं होती।

हमारे सभी पुराने सन्तों ने अपनी अमरवाणियों का प्रचार हिन्दी के माध्यम से क्यों किया था? इसलिए किया था कि वे जानते थे कि यही एक ऐसी भाषा है, जिस के द्वारा उनकी बात देश के कोने-कोने तक पहुंच सकती है। उन्होंने देश की जनता की नब्ज की गति को ठीक पहचाना था। वे जानते थे कि भारत की जनता राजनीति की वाणी को न समझ कर संस्कृति के अमर सन्देश को परखती है, इसलिए उन्होंने भक्ति के पदों द्वारा अपना सन्देश भारत के घर-घर में फैलाया था।

संक्षेपतः यही समझना चाहिए कि भाषा का झगड़ा राजनीति का झगड़ा है। वह जनता का झगड़ा नहीं है। जनता को तो दिग्भ्रमित किया जा रहा है। हमारा यह कर्तव्य है कि हम जनता को शिक्षित करें और उससे कहें कि वह अपना सारा कारबार, पत्र-व्यवहार आदि हिन्दी में करें। दैनिक जीवन में हिन्दी के व्यवहार को हम इस कार्य की पहली सीढ़ी मानते हैं। यदि हमने शुद्ध मन से और दृढ़ निश्चय से हिन्दी-प्रचार की पावन वेदी पर पैर रखा तो वह दिन दूर नहीं जब देश के कोने-कोने में हिन्दी का स्वतः ही प्रचार हो जायगा। ●

(पृष्ठ २३ का शेष)

बच्चे की माँ बालक को आवाज देकर कहती है काका जी मास्टर आगया। अध्यापक का अपने बच्चे के समान भी आदर नहीं। उसके नाम के साथ जी और अध्यापक को केवल मास्टर नाम की संज्ञा। पता है यह नाम कौन २ धरने लगे हैं और यह कब का बदनाम हो चुका?

इतिहास का एक दूसरा प्रमाण यहाँ स्मरणीय है। महापद्म नंद की कथा इतिहास प्रसिद्ध है। एक बहुत बड़े आचार्य का राजदरबार में अनादर किया गया। अपमान का बदला एक साधु ब्राह्मण कैसे ले सकता है यह कौन जानता था? किन्तु 'बुद्धिर्यस्य बलं तस्य' केवल एक ही बालक को दीक्षित किया था और उसने क्या शौर्य दिखाया! क्या आप में इतनी क्षमता नहीं है? वह तो एक आप अनेक! क्या ऐसे बहादुरों को जन्म नहीं दे सकते जो इस राष्ट्र को नया मोड़ दें। इस पवित्र धराधाम से अन्याय, अज्ञान और अभाव के नाम निशान को मिटा दें। आपके ऊपर बहुत कुछ निर्भर करता है। अपनी सेना को सम्भालो उन्हें रोको बसों के शीशे तोड़ने और आग लगाने से रोको उन्हें रहड़ियों के केले लूटने से। नित्य प्रति हड़ताल के कार्यक्रमों के स्थान पर उन्हें आदर्श जीवन की ओर प्रेरित करो। मुझे तो विश्वास है जो बनाएगा वह मन्त्री नहीं महामन्त्री का पद पाएगा! ●

दुष्ट हमारा स्वामी न बने

●

मा नो दुःशंस ईशत् ।। ऋग्वेद १-२३-६

दुष्ट हमारा स्वामी न बने। इस विषय में सदा सावधान रहना चाहिए कि हम कभी दुष्ट के अधीन न हो जावें। व्यक्ति में मन इन्द्रियाँ आदि पदार्थ दुष्ट भावों के अधीन न हो जावें। समाज में दुष्ट दुराचारियों को बड़े बड़े पदों पर न रखा जावे। सभाओं और परिषदों में दुष्टों को अधिकार न दिया जावे तथा किसी भी सार्वजनिक स्थान में दुष्ट का सम्मान न किया जावे। जो दुराचारियों का सम्मान करेंगे वे भी गिर जायेंगे।

प्रेषक——मुल्खराज भल्ला

सम्पादक के नाम पत्र

श्रीमान् सम्पादक जी नमस्ते !

सविनय निवेदन है कि मैं 'राजधर्म पत्रिका' का आरम्भ से ही ग्राहक हूँ । मैं तथा मेरे मित्र इसको बड़े ध्यान से पढ़ते हैं। हमें एक बड़ा भ्रम था कि 'आर्य-समाज' को राजनीति में भाग नहीं लेना चाहिये । परन्तु 'काया-कल्प' और 'राष्ट्रवादी दयानन्द' को पढ़ने से यहाँ तक भ्रम दूर हो जाते हैं कि जिन महानुभावों ने यह मन्त्र दिया कि आर्य समाज को राजनीति में भाग नहीं लेना चाहिये, उन्होंने तो महर्षि और आर्य समाज को तो धोका दिया ही परन्तु संसार के साथ भी बड़ा अन्याय किया । क्यों कि आज आर्यों का राज्य होता तो संसार का कितना उपकार होता कि संसार वेदों से अनभिज्ञ न होता । जब इन युवकों में इतना करने का सामर्थ्य है तो क्या हम

१ राजधर्म के दस हजार ग्राहक नहीं बना सकते ?

२ क्या हम युवा पीढ़ी को संगठित नहीं कर सकते ?

३ क्या हम सच्चे आर्य नहीं बन सकते ?

यदि हम इन तीनों बातों का हाँ में उत्तर दें तो आज से ही हर ग्राहक को, दो नये ग्राहक तो अवश्य बनाने चाहियें।

—बलवीर सिंह आर्य
अग्नि शमन सेवा विभाग
दिल्ली

श्रीयुत प्रो० श्यामराव जी,
सादर नमस्ते ।

पिछले लगभग आठ मास से लगातार "राजधर्म" पत्रिका पढ़ रहा हूँ । इससे पहले भी कई एक आर्य समाज की पत्रिकाएं पढ़ चुका हूँ । परन्तु 'राजधर्म' पत्रिका के स्तर के बराबर आजतक कोई पत्रिका नहीं पढ़ने को मिली । विशेषकर इसके सम्पादकीय और सामयिकी जो कि इतने स्पष्ट और जोशीले होते हैं कि जिसके पढ़ने से खून खोलने लगता है और मन करता है कि भागकर सम्पादक महोदय की लेखनी के आगे मस्तक झुका दूं । निःसन्देह आप ने जो ऋषि दयानन्द जी के प्रोग्राम को तन, मन और धन के साथ क्रियात्मक रूप देने का दृढ़ निश्चय किया है उसके लिये सारा भारत (आर्या वर्त) आपका आभारी है जो कि आप इतनी निष्ठा और लगन के साथ इसमें दिन और रात एक करके जुटे हुए हैं ।

१० सितम्बर १९६९ के राजधर्म में छपे 'गिरी जी बधाई है' में आपने भारत के उच्चतम पद प्राप्त राष्ट्रपति जी को प्रेरित किया है कि राष्ट्रपति भवन में पदार्पण करने से पहले उन्हें इतने बड़े राष्ट्र के राष्ट्रपति होने के नाते जड़ पत्थर की मूर्ति के सामने जाकर माथा नहीं नवाना चाहिए । दूसरे आपने राष्ट्रपति महोदय को उनके प्रथम वक्तव्य पर जो कि उन्होंने अंग्रेजी (विदेशी भाषा) में दिया था कहा है कि यह हमारे देश के सम्मान को एक ठेस है । क्योंकि हमारे देश की भाषा हिन्दी है राष्ट्रपति महोदय को अपना भाषण इसी भाषा में देना चहिये था जिसको सारे देशवासी समझ पाते ।

एक आर्य युवक होने के नाते मैं परम पिता परमात्मा से कामना करता हूं कि जिस उद्देश्य कोलेकर आप मैदान में उतरे हैं और महर्षि दयानन्द जी के बताये हुए मार्ग पर चलने का दृढ़ निश्चय किया है उसमें आप सफल हों और यह राजधर्म पत्रिका दिन प्रति दिन उत्तरोत्तर प्रगति करे और गतिमान हो ।

सुदर्शन कुमार
जे-५२ ए, हरिनगर, बेरीवालाबाग, नई दिल्ली-१८

(शेष पृष्ठ ५ का)

विवरण नहीं दिया और आज भी पतित-पावन जीवन नराम बनकर दनदना रहा हूं ऐसा ही तुम भी करो !

—पर महाराज ! ऐसी बात नहीं कि हमने आपका अनुसरण न किया हो । पर दो चार कदम चलने के बाद ही इन्कमटैक्स वाले बुरी तरह चाबुक लगाते हैं और हम घिस्सी पिट्टी भूलकर हाय-हाय करते हैं । आज तक तो किसी तरह रो-धोकर, कुछ दे-दुआ कर पीछा छुड़ा भी लेते थे पर अब तो जब से यह नया समाजवाद आया है हमारे प्राण संकट में पड़ गये हैं – अब तो आप ही हमारे माई बाप हैं—

—देखो । बातें बनाने से काम नहीं बनेगा । ईमान लाना होगा ईमान ! जब तुम भी मेरी तरह इस युग के नये मसीहा प्रभु इन्दिरा जी पर ईमान ले आओगे तो तुम्हारे भी सब टक्स माफ हो जायेंगे ।

—क्या कहा माफ हो जायेंगे ? सचमुच ?

—हाँ हाँ सचमुच । तुमने देखा नहीं जब मेरे ऊपर मोर रजी का नया मगरमच्छ कानून झपटा और मुझे मेरे दस साल के पापों के लिये घसीटा जाने लगा, मैंने पूरी भक्ति से इन्दिरा जी को याद किया और उस संकट की घड़ी में भक्तवत्सला देवी जी ने पूरी सहृदयता से और करुणा से द्रवित होकर यह कहा—"छोड़ दो मेरे भक्त को । दस साल से टैक्स नहीं दिया तो क्या हुआ ? समाजवाद लाने में इतने व्यस्त थे कि इन छोटे-मोटे कामों को भूल गये । इस प्रकार व्यस्त लोगों को तंग नहीं किया करते " बोलो मेरे साथ मिलकर-भक्त भयहारिणी, टैक्स नदी तारिणी देवी इन्दिरा जी की जय !

—जय हो ! जय हो ! देवी इन्दिरा जी की जय हो !

ईश्वरविरोधी चक्रवर्ती राज्य के अयोग्य

या ते धामान्युश्मसि गमध्यै यत्र गावो भूरिश्रृङ्गा अयासः ।
अत्राह तदुरुगायस्य विष्णोः परमं पदमवभारि भूरि ॥

यजु० अ० ६ मं० ३

अर्थ—सभाध्यक्ष के रक्षा किये हुए स्थानों की कामना के बिना कोई भी पुरुष सुख नहीं पा सकता न कोई जन परमेश्वर का अनादर करके चक्रवर्ती राज्य भोगने के योग्य होता है न ही कोई भी जन विज्ञान सेना, जीवन अर्थात् प्राण और प्रजा की रक्षा के बिना अच्छी उन्नति कर सकता है ।

प्रेषक—**घनश्यामदास गोयल**

आर्यसमाज संगठन समिति की प्रगति

३१ अगस्त को दिल्ली की सभी समाजों के गणमान्य अधिकारियों के निर्णयानुसार महात्मा आनन्द भिक्षु जी ने चारों पक्षों को रजिस्टर्ड पत्र द्वारा प्रार्थना की कि वे अपने अपने दो दो प्रतिनिधि १४ सित० की बैठक में भाग लेने के लिये भेजें। इसके अनुसार सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा (नई) की ओर से श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री एवं श्री धर्मेन्द्र सिंह जी, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (नई) की ओर से डा० हरिप्रकाश जी एवं श्री सत्य देवजी विद्यालंकार तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब पुरानी की ओर से श्री जगन्नाथ एवं श्री राज सिंह जी १४ सित० को ठीक दो बजे महात्मा आनन्द भिक्षु जी की सेवा में उपस्थित हुए। चौथे पक्ष-सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा (पुरानी) के अधिकारियों ने फोन पर सहयोग करने से इन्कार कर दिया और १४सित० को अपने कोई प्रतिनिधि न भेज कर अपने असहयोग को स्पष्ट कर दिया। उपस्थित प्रतिनिधियों में और महात्मा जी में बड़ी सद्भावना के साथ वार्तालाप हुआ और स्थिति पहले से अधिक स्पष्ट हो गई। चौथे पक्ष से पुनः सम्पर्क कर उनसे प्रतिनिधि भेजने की प्रार्थना की गई है और आशा है कि वे इन विवादों को सुलझाने में आय जनता की आशा के अनुरूप सहयोग कर संगठन समिति का मार्ग प्रशस्त करेंगे।

मन्त्री

आर्यसमाज संगठन समिति

मन्दिर मार्ग नई दिल्ली-१

गुरु विरजानन्द शताब्दी समारोह

देव दयानन्द के प्रज्ञाचक्षु गुरु विरजानन्द की पावन स्मृति में इस वर्ष अक्टूबर ११-१२ को जालन्धर के पास करतारपुर में एक विशाल शताब्दी समारोह का आयोजन किया गया है। इसमें आर्यों को अधिक से अधिक संख्या में भाग लेकर संगठन का परिचय देना चाहिये। इस अवसर पर दिल्ली, रोहतक, गुड़गांवा आदि स्थानों से विशेष बसों की व्यवस्था की गई है। आने-जाने का मार्गव्यय कुल २२ रु० है। विशेष जानकारी के लिये सम्पर्क करें—श्री रामचन्द्र आर्य,

प्रबन्धक—गुरु विरजानन्द शताब्दी यात्रा, भीमनगर, गुड़गांवा।

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के लिये प्रो० श्यामराव द्वारा प्रकाशित एवं सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित ।

श्रीयुत

राजधर्म
मन्दिर मार्ग नई दिल्ली-१
दूरभाष—४२०४६

पत्र व्यवहार करते हुए ग्राहक संख्या लिखना न भूलें ।

आर्य राष्ट्र

आर्यराष्ट्र बन जाए जल्दी यह उद्देश्य हमारा है।
आज आन्तरिक सभी शक्तियों ने हमको ललकारा है ॥

देश, धर्म की रक्षा हेतु सेना हमें सजानी है।
आज देश के नवयुवकों से करवानी कुर्बानी है।
जात पांत के चक्कर से अब दिलवाना छुटकारा है।
आर्य राष्ट्र बन जाय जल्दी यह उद्देश्य हमारा है।

जियो देश के लिए, देश के लिए मरो मरदानो।
कायरता को ठोकर मारो, उठकर सीना तानो।
रहेंगे बनके निर्भय जग में यही हमारा नारा है।
आर्यराष्ट्र बन जाए जल्दी यह उद्देश्य हमारा है।

सूर्य, चन्द्र, तारों को किरणें सहमी हुई खड़ी हैं।
भारत भू की सीमा सारी दुश्मन से घिरी पड़ी है।
ऐसे समय सजग रहना बस यह कर्त्तव्य हमारा है।
आर्य राष्ट्र बन जाय जल्दी यह उद्देश्य हमारा है।

बांधों सर पर कफनी, पहनो अब केसरिया बाना।
आगे चलो जवानो पीछे चलने लगे जमाना।
अगुआ बनके काम करे जो नेता वही हमारा है।
आर्य राष्ट्र बन जाए जल्दी यह उद्देश्य हमारा है।

आने वाली पीढ़ी की रक्षा का जिम्मा ले लो।
सच्चाई का साथ न छोड़ो, जान से अपनी खेलो।
देश में भ्रष्टाचारी पनपे यह कब हमें गंवारा है।
आर्यराष्ट्र बन जाय जल्दी यह उद्देश्य हमारा है।

ग्राम ग्राम और नगर नगर में वैदिक नाद बजा दो।
भूमण्डल के हर कोने में 'ऋषि सन्देश' गुंजा दो।
नष्ट करो जो भेदभाव का फैला हुआ पसारा है।
आर्यराष्ट्र बन जाय जल्दी यह उद्देश्य हमारा है।

हिन्दी, हिन्दु, हिन्दोस्तान का भारत से भूत भगा दो।
आर्यावर्त में आर्यभाषा का फिर से स्थान बना दो।
आर्य ही रहना, आर्य ही कहना, नारा यही हमारा है।
आर्य राष्ट्र बन जाए जल्दी यह उद्देश्य हमारा है।

कृष्णकुमार चौधरी (महाराष्ट्र)

अद्य जीवानि मा श्वः (अथर्व वेद)
अन्यायी राजा आज जीवित है कल नहीं रहेगा।

सम्पादकीय

आर्य राष्ट्र की स्थापना कैसे होगी ?

आज से साल भर पहले राजधर्म के सबसे पहले अंक में हमने "भविष्य हमारा है" शीर्षक से घोषणा की थी—

"युवक शक्ति का अभ्युदय हो रहा है !

क्रान्ति—सूर्य की स्वर्णिम लालिमा चतुर्दिक व्याप्त हो रही है।

वैदिक धर्म की गरिमा को हृदय में संजोये क्रान्तदर्शी दयानन्द के चरणों में आत्मसमर्पण किये दाहिने हाथों में ओ३म् की पावन पताका लेकर बांये हाथ से विजय श्री बटोरते हुए युवकों के क्रान्ति अभियान का सूत्रपात हो गया है।

"राजधर्म" इस युवक-क्रान्ति-अभियान का शंख है। राजधर्म का शंखनाद निराशा के बादलों को छिन्न-भिन्न करेगा, वैदिक सूर्य की ज्योतिर्मय किरणों से जगती भर को आप्लावित करेगा, विदेशी, विधर्मियों और स्वदेशी पाखण्डियों का मान-मर्दन करते हुए विशुद्ध आर्य राष्ट्रवाद की स्थापना करेगा।

राजधर्म का शंखनाद वैदिक धर्म और राष्ट्र-भक्ति की तड़प लिये हुए युवकों को बलिदानी के पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा देगा।"

लालकिले की प्राचीर के सामने जलती मशालों को हाथ में लेकर आर्यराष्ट्र की स्थापना की प्रतिज्ञा करते हुए सैंकड़ों युवकों के चित्र की पृष्ठभूमि में लिखे गये ये वाक्य आज पूरे एक वर्ष के बाद हमारी सफलता के मापदन्ड बन गये हैं। इस एक वर्ष में 'राजधर्म' कितना लोकप्रिय हो गया, कितने सुप्त हृदयों के तार क्रान्ति-स्वर से झंकृत हो उठे और कितने बुझे हुये दिल राख की परत को चीरकर अंगार बन गये—यह सर्वविदित है।

वर्षों से आत्मगौरव को विस्मृत किये हुए सबसे बड़ी सफलता हमारी यह रही कि और सामान्य कार्यक्रमों में शक्ति का अपव्यय कर रही आर्य जनता ने "आर्य राष्ट्रवाद" के नारे को हृदयङ्गम कर लिया है। देश के कोने-कोने में आज यह जागृति फैल रही है कि आर्यसमाज का, वैदिक धर्मियों का, दयानन्द के सैनिकों का पहला और सबसे पहला काम है आर्यराष्ट्र की स्थापना करना। अब प्रत्येक आर्य यह अनुभव करने लग गया है कि आर्यसमाज को राष्ट्र संचालन के उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य से अलग रखकर हमने ऐतिहासिक भूल की है जिसके पश्चाताप में आज भी हम अपने जलसों पर राष्ट्र की दुर्दशा पर दूसरों को कोसते और स्वयं की बेबसी पर आंसू बहाते हैं।

आर्य समाज के वे नेता जो दूसरे राजनैतिक पार्टियों का लेबल लगाकर खड़े हैं वे भी अब इस बात का अनुभव कर रहे हैं कि वे गये तो इसलिए थे कि दूसरी पार्टियों में घुसकर उसे अपनी विचारधारा से अनुप्राणित कर देंगे और बनाई पार्टी का लाभ उठा लेंगे। पर पिछले २०-२२ साल की चेष्टा के बाद किसी एक भी राजनैतिक पार्टी को ये नेता प्रभावित नहीं कर पाये। उल्टे आर्यसमाज को गिरवी रखकर अपने आचरण द्वारा वैदिक सिद्धान्तों का मखौल उड़ाया। सस्ती लोकप्रियता

पाने के लिए हमारे इन आर्य नेताओं को गांधीजी की समाधि पर फूल चढ़ाने पड़े, डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी की मूर्ति पर मालायें डालनी पड़ी, काशी विश्वनाथ के मन्दिर में शिवलिंग की पूजा करनी पड़ी और जगद्गुरु शंकराचार्य के चरणों में माथा नवाकर आर्यसमाज की पवित्र वेदी को पाखण्ड कीर्तन से भ्रष्ट करवाना पड़ा। अभी तक यह धांधली चलती रही पर अब आर्य जनता जाग चुकी है और इन नेताओं से खुलकर कहने लगी है कि या तो इन दूसरी पार्टियों का दामन छोड़कर आर्यसमाज रूपी मां की गोद में शरण लो या फिर आर्यसमाज के सभाओं के अधिकार से त्यागपत्र दो। तुम्हारी यह दुहरी चाल, यह [illegible] नीति हम बर्दाश्त नहीं करेंगे। जब तुम्हें बोलने की तमीज न थी आर्यसमाज ने तुम्हें बोलना सिखाया। तुम्हें खड़े होने की तमीज न थी आर्यसमाज रूपी मां ने तुम्हें खड़े होना और चलना सिखाया पर आज जब तुम्हें बोलना और खड़ा होना आ गया तो तुम्हें अपनी मां बदसूरत लग रही है और पराई औरतों का—कांग्रेस हिन्दूमहासभा, जनसंघ, बी. के. डी. आदि का झिलमिलाता आंचल पकड़कर तुम मां की बेबसी पर अट्टहास करना चाहते हो? आर्यसमाज रूपी भट्ठी में ईंटें पककर तैयार होती हैं और भवन बनाये जाते हैं जनसंघ और कांग्रेस, हिन्दू-महासभा और बी. के. डी. के? यह विभक्त निष्ठा का गन्दा नाटक अब आर्य जनता नहीं देखना चाहती। इस दिशा में एक जबरदस्त कदम उठाया गया १२ अक्तूबर के ऐतिहासिक गुरु विरजानन्द जन्म शताब्दी समारोह द्वारा। करतारपुर में एकत्रित हजारों आर्य नरनारियों ने युवक सम्मेलन के इस प्रस्ताव को सर्वसम्मति से पारित किया कि किसी भी राजनतिक दल से सम्बन्धित अथवा निर्दलयी रूप से भी एम. एल. ए. या एम. पी. बने हुए व्यक्ति को आर्यसमाज के स्थानीय, प्रान्तीय अथवा सार्वदेशिक संगठन के अन्तरंग एवं पदाधिकार से अलग रखा जावे और सार्वदेशिक सभा अपने नियम-उपनियमों में आवश्यक संशोधन कर इस क्रियान्वयन में सहयोग करें। ठीक इसी आशय के प्रस्ताव अब स्थान-स्थान पर पारित होने लगे हैं। इस कदम को हम आर्य राष्ट्र की स्थापना की दिशा में उठाया गया एक महत्वपूर्ण और क्रान्तिकारी कदम समझते हैं। वास्तव में यदि ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाय तो आर्य राष्ट्र की स्थापना में सबसे बड़ी रुकावट और आर्य समाज के भविष्य को कुचलने के लिये सबसे बड़ा कुठारा घात उस दिन किया गया जिस दिन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने यह प्रस्ताव पारित किया कि आर्यसमाज तो एक विशुद्ध धार्मिक संस्था है और इसके सदस्यों को किसी भी अन्य राजनीतिक संस्था के सदस्य बनने और उनके टिकटों से चुनाव लड़ने की पूरी छूट है। इस प्रस्ताव का परिणाम इतना घातक हुआ कि स्वतन्त्रता संग्राम में सबसे अधिक और आगे बढ़कर अपनी आहुति देने वाला आर्यसमाज स्वतन्त्रता के बाद पीछे—सबसे पीछे कबीर पंथी और दादू पंथियों के साथ बन्डल बनाकर धकेल दिया गया और आर्यसमाज की बदोलत जो व्यक्ति 'लीडर' बन गये थे वे निर्दलीय रूप से या अनार्य राजनीतिक संस्थाओं से चुनाव लड़ें और पार्लियामेंट में जा बैठे और कोई विधान सभा में। महर्षि के स्वप्नों को मूर्त रूप देने की, वैदिक सिद्धान्तों पर आधारित आर्यराष्ट्र के स्थापना की चिन्ता इन्हें कभी महसूस नहीं हुई क्योंकि इधर तो कई वर्षों की साधना करनी पड़ती थी और उधर महर्षि को भुलाकर गांधी बाबा की जय या गुरु गोलवलकर की जय बोल देने से आसानी से काम बन जाता था। इन नेताओं ने सामूहिक रूप से बैठ कर कम से कम इतना भी निश्चय नहीं किया कि अगर दूसरे दल में जाना ही है तो हम सब किसी एक दल में घुसें जो अपेक्षाकृत अनुकूल हो। वहाँ मिल कर काम करें और उसे अपने सिद्धान्तों पर ढालने का प्रयत्न करें। पर संगठन और सिद्धान्त की इतनी चिन्ता होती तब न? यहां तो कुर्सियों की भूख सता रही थी। जिसको जहां से कुछ सहारा मिला चिपट गया हर हालत में चुनाव जीतना उद्देश्य बन गया—कांग्रेस से हो या हिन्दू महासभा से, जनसंघ से हो या बी० के० डी० से। आवश्यकता पड़ी तो मुस्लिम लीग भी सही।

कुछ एक को आर्यसमाज ने बड़ी कुर्बानी करके चमार और चूड़े के परिवार उठाकर गुरुकुल में पढ़ाया, स्नातक बनाया और विद्वान् ब्राह्मण का दर्जा देकर उनकी पूजा की पर जब चुनाव की खुजली उठी तो आर्यसमाज की सारी साधना पर पानी फेर कर उन्होंने रिजर्व सीट के

लोभ में अपने को 'हरिजन' घोषित कर दिया। इसी तरह कुछ एक 'सज्जन' पहले भी कह रहे थे—अब भी कह रहे हैं कि हम तो किसी पार्टी-वार्टी में नहीं—हम तो निर्दलीय हैं। पर अनुभव बताता है कि ये निर्दलयी ही ज्यादा खतरनाक सिद्ध होते हैं। अव्वल तो आज की राजनीति में "निर्दलीय" की इज्जत 'शिखण्डी' के बराबर भी नहीं और दूसरे यह निर्दलीयता तभी तक कायम रहती है जब तक कुछ प्रतिष्ठा लाभ न हो जाय। फिर तो जिस सीढ़ी से मंजिल पर चढ़े थे उस सीढ़ी को ठोकर मारकर गिरा दिया जाता है।

इस चुनाव की "घुड़दौड़" के साथ-साथ एक और नाटक खेला जाता है। चाहे कांग्रेसी हो या जनसंघी या और कोई—सभी यह अच्छी तरह जानते हैं कि चुनाव जीतने के लिए आर्यसमाज की स्टेज और आर्यसमाज का संगठन बड़ा फायदेमन्द होता है। इसलिये ये 'लीडर' आर्यसमाज की सभाओं और संगठनों पर कब्जा बनाए रखने और यदि पहले से न हो तो नये सिरे से कब्जा जमाने की उधेड़बुन में लगे रहते हैं। इसके लिये जो अन्त में संघर्ष होता है उसमें यदि आर्यसमाज सड़कों पर बदनाम होता है तो इन्हें जरा भी चिन्ता या ग्लानि नहीं होती—यदि इसके लिए आर्यसमाज के पवित्र नाम को सरकारी अदालतों में घसीटकर कलंकित किया जाता है और आर्यजनता के खून पसीने की गाढ़ी कमाई को जो वेदप्रचार के नाम इकट्ठा किया जाता है, मुकद्दमेबाजी पर खर्च किया जाता है तो भी इनके लिये मंहगा सौदा नहीं।

इस दयनीय पृष्ठभूमि में आर्ययुवकों के तीस जून के फैसले और प्रस्ताव का आर्यजनता ने हृदय से स्वागत किया और कर रही है। सबसे पहले भिवानी की प्रबुद्ध केन्द्रीय आर्यसभा और फिर अन्य स्थानों पर युवकों के इस प्रस्ताव को धूमधाम से पारित किया। पिछले एक महीने में ही करतारपुर, मथुरा, जोधपुर, चन्दौसी, करनाल, फिरोजपुर झिरका दीनानगर, लेखराम नगर (कादियां) आदि स्थानों पर विशाल सम्मेलनों में इस प्रस्ताव का शानदार स्वागत हुआ और आप यह क्रान्ति का नया नारा दूर-दूर तक आग की तरह फैल रहा है।

अब बड़ी तेजी से इसके दूसरे कदम पर भी पालिामेंन्ट के मेम्बरों को बुलाना एक फैशन बन गया है। एक गलत धारणा बन गई है कि बिना इनके जलसा जम नहीं सकता। यही कारण है कि आर्यसमाज के उत्सवों पर जो सैद्धान्तिक प्रवचन हुआ करते थे वे अब बहुत कम हो गये हैं और अखबारी व्याख्यान अधिक हो गये हैं। कई समाजों के अधिकारी वेदों के विद्वानों को उतना सम्मान नहीं करते जितना इन एम्पियों का करते हैं। इस गलत परम्परा के विरुद्ध भी हमें विद्रोह की आवाज बुलन्द करनी होगी। हमारी वेदी, हमारा स्टेज दूसरे पोलिटिकल पार्टियों के एम्पियों का प्रचार करेगा तो सौ साल में भी हमारे सिद्धान्त जनता नहीं जान पायेगी और हमारा रहा सहा [illegible] भी जाता रहेगा। इसलिये आर्य समाजें अब यह [illegible] निर्णय लें कि किसी भी राजनैतिक दल से सम्बन्धित अथवा निर्दलीय एम्पी या एमेले को अपने पवित्र मंच से उल्लू सीधा करने का अवसर नहीं देंगी। हमारे उत्सवों का उद्देश्य भीड़ इकट्ठी करना अथवा तालियाँ पिटवाना मात्र नहीं हो चाहिये और यदि यही उद्देश्य हो तो यह काम इन राजनैतिक नेताओं की अपेक्षा सिनेमा की अभिनेत्रियां या नाचने गाने वाले अधिक अच्छा कर सकेंगे।

इस तरह आर्यराष्ट्र की स्थापना के लिये जिस क्रान्ति का सूत्रपात हुआ है उसी दिशा में प्रत्येक आर्य यह संकल्प ले और प्रत्येक आर्यसमाज यह प्रस्ताव पारित करे कि—

(१) किसी भी राजनैतिक दल से सम्बन्धित व्यक्ति को अथवा निर्दलीय एम० एल० ए० या एम० पी० को आर्य समाज के स्थानीय, प्रान्तीय एवं सार्वदेशिक सभाओं का अधिकारी या अन्तरंग सदस्य नहीं बनने दिया जायगा।

(२) अपने उत्सवों पर्वों आदि पर इन नेताओं को आमन्त्रित नहीं किया जायगा।

यदि ये दो कदम साहस के साथ उठाये गये तो इसका निश्चय ही दूरगामी प्रभाव पड़ेगा और आर्य जगत में एक नया जीवन आयेगा। परमात्मा हमें शक्ति और सद्बुद्धि दे ताकि देव दयानन्द के मिशन को हम दृढ़ता प्रदान कर सकें और आर्यराष्ट्र की स्थापना का दिव्य संकल्प पूरा करके महर्षि को सच्ची श्रद्धाञ्जलि अर्पित कर सकें। (क्रमशः)

सामयिकी—

कांग्रेस की लाश

—भाई साहब ! सुना आपने ?

—क्या ?

—कांग्रेस की हालत बहुत नाजुक है—अब तब में मरने ही वाली है।

—क्या बकवास करते हो ? कांग्रेस तो चार महीने पहले बंगलोर में मर चुकी थी। अब तो उसकी लाश पड़ी है।

—क्या कहा ? मर चुकी ? लाश पड़ी है ? कब ? कैसे ?

—किस दुनियाँ में रहते हो ? लगता है न रेडियो सुनते हो न समाचार पत्र पढ़ते हो। पिछले दस सालों से यह बूढ़ा कांग्रेस एकदम शिथिल और निकम्मा हो गया था। किसी तरह लाठी टेककर दिन काट रहा था। अस्थि पंजर ढीले हो चुके थे और आँखों की रोशनी बुझ चुकी थी। दिमाग जवाब दे चुका था पर लोगों ने सोचा चलो बूढ़ा है—दो चार साल का मेहमान है।

—सुनते हैं इसने तो विदेशी घी का बहिष्कार कर देशी घी खाया था। इतनी जल्दी कैसे सठिया गया ?

—घी तो खाया देशी पर दर्जनों रोग पाल रक्खे थे अपने शरीर में। कुर्सी की खुजली, बेइमानी का बवासीर, भाई भतीजावाद की टी० बी०, ऐय्यशी का मधुमेह, अनुशासनहीनता का कोढ़–ये सारे रोग इसके रोम-रोम में घुस चुके थे। इसपर भी बुढ़ापे में भगवान का कोप ऐसा कि फरीदाबाद में इसके बुरी तरह आग लग गई—झुलस गया। हाय हाय करता अन्त में १८८५ में पैदा हुए बूढ़े ने ८५ साल के पहले ही बंगलोर में दम तोड़ दिया।

—जब बंगलोर में ही मर चुका था तो पिछले चार महीने से किस कांग्रेस का शोर हो रहा था ?

—शोर कांग्रेस का नहीं कांग्रेस की लाश को लेकर हो रहा था ! जब बंगलोर के डाक्टरों ने जवाब दे दिया तो प्रधानमन्त्री ने इसकी लाश को हवाई जहाज में अपने साथ लाया और यह सोचकर कि शायद जान बाकी हो उस लाश को बैंक राष्ट्रियकरण का मर्फिया इन्जेक्शन लगाया। पर ठंडी लाश पर क्या असर होता। उल्टे उससे भंयकर दुर्गन्ध निकलने लगी। इसी समय उपराष्ट्रपति श्री वराह व्यंकट गिरी को राष्ट्रपति भवन में चढ़ने के लिये एक सीढ़ी की जरूरत पड़ी। कोई सीढ़ी नज़र न आने पर उन्होंने नाक पर रुमाल रखकर कांग्रेस की इस भारी भरकम लाश पर पैर रखकर ऊपर चढ़ गये।

—कैंसी गन्दी बातें करते हैं आप ? सहानुभूति दिखाना तो दूर उल्टा मजाक कर रहे हैं।

—देखो ! थोड़ी देर के लिये दुश्मन के मरने पर भी सहानुभूति हो जाती है पर किसी की लाश से प्यार नहीं किया जाता। अपनों की भी लाश चन्द घन्टों के बाद लोग धधकती चिता पर रख देते हैं पर यहाँ तो इस सड़ान्ध से भरी लाश का पूरे चार महीने प्रदर्शन किया गया। अन्त में चलकर २ अक्टू० को इसकी अन्त्येष्टी निश्चित की गई और इसके पिताजी की समाधी के बगल में २ करोड़ रुपये खर्च कर एक सुन्दर स्थान तैयार किया गया। कपाल क्रिया और आग लगाने के लिये हवाई जहाज भेजकर अफगानिस्तान से बादशाह खान को बुलाया गया। बेचारे बादशाह खान आये तो जरूर पर भीषण बदबू से घबरा गये। मरघट तक जाने से इन्कार कर दिया—तीन दिन तक खाना नहीं खा सके और अन्त में तोबा तोबा करके गुजरात चले गये।

—और लाश को यूं ही छोड़ दिया ?

—और नहीं तो क्या ? इधर बिना कफन के पड़ा लाश पर गिद्ध, गीदड़ और भेड़िये इकट्ठे हुए और लाश को नोचने लगे। कोई टांग खींचने लगा कोई हाथ खींचने लगा। खींच खांच में आपस में झगड़ा हो गया। फिर सुलह के लिये बैठे और फैसला हुआ कि एक दूसरे के हिस्से को न खींचा जाय पर आदत कैसे बदल सकती है। दो घड़ों की लड़ाई में कितने ही घायल हो दूर जा गिरे।

—लाश को लेकर इतना झगड़ा ? कोई आग लगाकर फूंक क्यों नहीं देता ?

—लावारिस की लाश को कौन फूंके ?

—पर ऐसे तो बड़ा नुकसान होगा—बदबू फैलेगी और बीमारी भी फैलेगी। आप ही कुछ उपाय कीजिए।

—ना बाबा ! हमें कुछ नहीं करना। ज्यादा से ज्यादा यही करेंगे कि जब सारा मांस और अंतड़ियाँ गिद्ध खा चुकेंगे तो हड्डियों के कंकाल को किसी संग्रहालय में सुरक्षित रखवा देंगे। लोग आयेंगे और बूढ़े की दुर्दशा यादकर दो आंसू बहाकर आगे बढ़ जायेंगे।

महर्षि दयानन्दकाशी शास्त्रार्थ शताब्दी व पाखण्ड खंडिनी पताका शताब्दी

समारोह की तिथियों में परिवर्तन

पूर्व प्रकाशित सूचनाओं के आधार पर काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समारोह की तिथियाँ १८-२१ नवम्बर निर्धारित की गई थीं। अब तिथियों में परिवर्तन कर दिया गया है। शताब्दी समारोह अब २३ दिसम्बर से २८ दिसम्बर ६९ तक हो गया है।

(१) वाराणसी में स्वागत समिति का निर्माण हो रहा है उसके कई सौ सदस्य बन चुके हैं एक हजार सदस्य बनाने का लक्ष्य है। वहाँ के आर्य भाई तथा समाजें उत्साह से कार्य कर रही हैं।

(२) शताब्दी के अवसर पर कई प्रदर्शनियाँ लगाई जावेगी एक प्रदर्शनी में महर्षि दयानन्द के हस्त लिखित ग्रन्थ, उनके खड़ाऊं, वस्त्र आदि रखे जावेंगे। दूसरी में आर्यसमाज से सम्बन्धित साहित्य का प्रदर्शन होगा।

अन्य आकर्षक तथा शिक्षा-प्रद आयोजन करने पर विचार किया जा रहा है, जिसकी सूचना यथा समय दी जावेगी।

धन संग्रह के लिए नोट

शताब्दी समारोह के लिए धन संग्रह के विभिन्न १००)२५)१०)५) व १) के नोट प्रकाशित किए जा रहे हैं। समस्त आर्य समाजों को चाहिए कि वे अपनी आवश्यकताओं से तुरन्त सूचित करें ताकि उन्हें नोट भिजवाएजा सकें।

कृपया स्मरण रखें कि काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समस्त आर्य जगत् की अपनी शताब्दी है इसमें तन मन धन से पूर्ण सहयोग देना प्रत्यक आर्य नर-नारी का नैतिक कर्त्तव्य है।

मन्त्री, काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति
५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ

आधुनिक समाजवाद— न समाज न वाद

● प्रो० उमाकान्त उपाध्याय, एम० ए०

वर्तमान युग दु:खित मानवता के त्राण का युग है। आज चूसते हुए भी, शोषण करते समय भी, शोषित व्यक्ति और वर्गों के प्रति सहानुभूति की उसांसें भरते हैं, उनके लिए हाय ! हाय ! करते रहते हैं। बहुत सारे पूंजीपति और उद्योगपति भी मजदूरों के स्वर में स्वर मिला कर समानता और आर्थिक न्याय की धुन बजाते हैं और उसी पर नाचते हैं। भले ही यह नारेबाजी, यह लेक्चरबाजी, यह सहानुभूतिबाजी वास्तविकता से परे, आत्माकांक्षा विरोधी और केवल प्रदर्शन के लिए या अवसरवादिता के लिए हो। किन्तु यह प्रदर्शन इतनी अधिकता से हो रहा है कि थोड़े ही लोग वास्तविक स्थिति से परिचित रह गये हैं। यहां यह कहने की अधिक आवश्यकता तो नहीं है कि कुछ लोग आज भी, ईमानदारी से, सच्चाई से, जन सेवा, पीड़ित मानवता के कल्याण के उद्देश्य से, कार्य कर रहे हैं। जो भी हो, हम किसी की भावनाओं पर सन्देह क्यों करें ? फिर भी आज के राजनीतिक चक्र को समझना तो पड़ेगा।

समानता का धोखा

प्रजातन्त्र का नाम लेकर एक ऐसी व्यवस्था की सृष्टि हो गई है जो प्रजातन्त्र या गणतन्त्र की भावना से बहुत दूर जा चुकी है। कहने के लिए तो राजनीतिक समानता है—प्रत्येक व्यक्ति का एक ही मत (Vote) है, चाहे धनी हो या निर्धन, स्वामी हो या सेवक, विद्वान् हो या मूर्ख, ईमानदार हो या बेईमान, सब ही मतदान केन्द्र पर एक और केवल एक ही मत देने के अधिकारी हैं। इस राजनीतिक समानता के जन्मदाता लोग, इसके प्रचारक लोग और बहुत दूर तक जनसाधारण भी, इस व्यवस्था को एक आदर्श व्यवस्था मान कर ग्रहण कर लेते हैं।

इस मत समानता में दोष है, ऐसा बहुत लोग स्वीकार करते हैं। इसीलिए कई बार यह भी कहा जाता है कि "आर्थिक समानता के अभाव में राजनीतिक समानता व्यर्थ है।" ठीक भी है, यह राजनीतिक समानता का पाखण्ड ही है कि एक व्यक्ति दूसरों के मत खरीदने के लिए हजारों रुपये लुटा रहा है और दूसरे लोग, अठन्नी-चवन्नी, रुपये-दो रुपये पर अपने मत, अपनी राजनीतिक समानता बेच रहे हैं; कहीं-कहीं तो इक्का मोटर जीप की सवारी कर देना भी मतों को खींच लेने के लिए पर्याप्त है।

जो लोग ऐसा सोचते हैं कि इस अव्यवस्था और दुरवस्था के पीछे एकमात्र आर्थिक विषमता ही कारण है, वे भूल करते हैं। आर्थिक विषमता के साथ चारित्रिक नीचता भी है। आज की निर्वाचन पद्धति में सिद्धान्तों पर उतना जोर नहीं दिया जा रहा है जितना, जातीयता, प्रान्तीयता, भाषावाद, स्वार्थ की जोड़ तोड़ आदि पर जोर दिया जा रहा है।

धनिकों की दासता

आज की राजनीति यदि धनिकों की राजनीति नहीं है, तो कम से कम, धनिकों की गुलाम तो अवश्य है। अतः जो कुछ किया जाता है, उसका सर्वतोमुखी प्रभाव आकलित कर लिया जाता है। चुनाव चक्र चलाने वाले प्रत्येक दल के लिए लाखों रुपयों का कोष चाहिए। ये रुपये तो धनिक वर्ग से ही आते हैं। इसलिए धनिकों के स्वार्थ की रक्षा करने वाले वे सब लोग हैं, जो धनिकों के रुपयों से चुनाव लड़ते हैं। जो अपने घर का धन लगाकर चुनाव लड़ते हैं वे घर का धन व्याज समेत लौटा लेने के चक्कर में रहें तो आश्चर्य ही क्या है। अतः 'गणतन्त्र' के

नाम पर 'धन-तन्त्र' का ही बोलबोला है।

आज जिसके पास 'फूंकने' के लिए हजारों लाखों रुपये न हों, वह भारतवर्ष के चुनाव में न खड़ा होने को साहस कर सकता है, और न चुनाव लड़ ही सकता है। यदि कहीं मध्यावधि चुनाव हो जाय, फिर तो कहना ही क्या?

अतः आज का भारतीय गणतन्त्र एकमात्र गणतन्त्र का नखरा है। गणतन्त्र या जनतन्त्र अच्छा है या बुरा, यह प्रश्न नहीं है। बात यह है कि आज कहा कुछ जा रहा है और किया और कुछ जा रहा है। सारे राजनीतिक दलों की एक सी ही स्थिति है। आज का पूंजिपति वर्ग इतना साधन सम्पन्न है कि उसके स्वार्थों का विरोध जल्दी कोई करता नहीं है। उसके विरुद्ध नारे लगाये जाते हैं, उसे स्वार्थी, शोषक, जनता का शत्रु आदि बहुत कुछ कहा जाता है। किन्तु उसके स्वार्थ का विरोध बहुत बचा कर, बहुत सँभाल कर किया जाता है। मध्यवित्त, निर्धन, ईमानदार, सिद्धान्तों के सच्चे व्यक्ति राजनीतिक दाँवपेच के लिए अनुपयुक्त सिद्ध हो रहे हैं।

समाजवाद तथा वर्णाश्रम

भारतीय समाजवाद भी एक नखरे से अधिक प्रमाणित नहीं हो रहा है! समाजवाद निर्धनों का, साधनहीन जनता का उपकार करना चाहता है। साधनहीनों को साधन मिले, बेकारों को काम मिले, यह बहुत अच्छी बात है। पर इससे भी अधिक आवश्यकता है कि प्रत्येक व्यक्ति को उन्नति का पूर्ण सुयोग मिले। जब तक उन्नति के सुयोग और सुविधाएँ अमीर गरीब, धनी निर्धन सबको समान रूप से न मिलें तब तक समानता व्यर्थ है। इसका आरम्भ होना चाहिए बालक बालिकाओं की शिक्षा से।

इस समानवाद, सहवाद या समाजवाद में 'जाति-कुलधन-निर्विशेष' प्रत्येक बालक को समान मिलनी चाहिए। वर्णाश्रमवाद के इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में महर्षि स्वामी दयानन्द जी सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं—

"इसमें राजनियम और जातिनियम होना चाहिए कि पांचवें वर्ष के आगे कोई अपने लड़कों और लड़कियों को घर में न रख सके। पाठशाला में अवश्य भेज देवें, जो न भेजें वह दण्डनीय हो।" साथ ही—

"सब को तुल्य वस्त्र, खानपान, आसन दिये जायें, चाहे वह राजकुमार या राजकुमारी हो चाहे दरिद्र के सन्तान हों। सबको तपस्वी होना चाहिए।"

—सत्यार्थ प्रकाश, तृतीय समुल्लास

वर्णाश्रम की यह व्यवस्था निम्न सङ्केत करती है—

(क) प्रत्येक बालक बालिका के लिए शिक्षा अनिवार्य है।

(ख) प्रत्येक बालक बालिका को समान सुविधा मिले, भोजन वस्त्र, आवास समेत।

(ग) शिक्षा निश्शुल्क हो—यहाँ तक कि भोजन, आवास, पुस्तक इत्यादि अध्ययन सामग्री, सब कुछ, राष्ट्र की ओर से दिया जाय।

यह समाजवाद का पूर्ण आदर्श बनेगा। इस व्यवस्था में समानता के नाम पर नहीं, समानता [illegible] वास्तविकता है।

सुविधा की समानता हो!

भारत में आज जिस समाजवाद के गीत गाये जा रहे हैं उसमें साधनहीन मनुष्य के लिए क्या किया गया है? आज तक सम्पूर्ण देश में प्रारम्भिक शिक्षा भी अनिवार्य और निश्शुल्क नहीं हो पाई। सरकार समझती है कि इनमें बहुत सारे बच्चों को उचित खाद्य नहीं मिल रहा है, इनकी खुराक में पोषक तत्वों का अभाव है। फिर भी कुछ हो नहीं रहा है। सम्भवतः यह समाजवाद और कल्याण राज्य का नारा लगाने वाली सरकार अपने को असमर्थ पाती है। यह भी संभव है कि इस तरह के वर्णाश्रमवाद पर आधारित समानता के विचारों को 'ख्याली पुलाव', 'मनमोदक' कह कर टाल देने की चेष्टा की जाय अथवा यह भी संभव है कि इसे एक भारतीय परम्परा में पनपी हुई विचारधारा समझ कर असंभव, अपरिपक्व, क्रियात्मकताहीन नीति कह कर इसका तिरस्कार कर दिया जाय। पर हमें तो सुविधा की समानता का नारा अवश्य लगाना चाहिए।

सुविधा या अवसर की समानता न तो मनमोदक के समान है और न ही क्रियात्मकताहीन या अव्यवहार्य। सच तो यह है कि आज के समाजवाद या साम्यवाद की भित्ति वर्ग-संघर्ष और द्वेष के ऊपर खड़ी है। जब कि वर्णाश्रम की समानताश्रयी नीति स्नेह

और वर्गसहयोग तथा वर्गनिर्विशेष रूप से विद्यार्थी मात्र के लिए ग्राह्य है।

आज समाजवादी या साम्यवादी पूँजीपतियों को शत्रु समझता है। कौन इस झगड़े में पड़े? होंगे या हैं भी ये लोग देशद्रोही, समाजद्रोही। किन्तु इसका अर्थ यह तो नहीं है कि हम, हमारा राष्ट्र, इनके बच्चों से द्रोह करें। रूस की कम्यूनिस्ट पार्टी ने जार-परिवार के बच्चों पर भी दया न की। वे उन्हें अत्याचारियों का अवशेष समझते थे अतः उन्हें भी मृत्यु के घाट उतार दिया। यह घृणा और द्वेष की नीति है। हम इसका समर्थन नहीं कर सकते। बच्चे सब के समान हैं और सब को समान सुविधा और समान अवसर मिलना चाहिए।

नखरेबाजी राजनीति

वर्णाश्रम की यह योजना अत्यन्त व्ययसाध्य लगती है। इसमें कोई सन्देह नहीं, यह है व्ययसाध्य और आज की व्यवस्था में पले हुए व्यक्ति को असम्भाव्य कल्पना का भ्रम होने लगे तो अधिक आश्चर्य नहीं। आज का राजनीतिज्ञ पुरुष या राजनीति का खिलाड़ी शिक्षा को एक अनुत्पादक विभाग समझता है। इसलिए इस पर होने वाला व्ययभार बहुत प्रतीत होता है। और हम तो इसीलिए कहते हैं कि यह नखरेबाजी की राजनीति है, यह नखरे का ही समाजवाद है। मानव समाज का वास्तविक हित तो वर्णाश्रम के पूर्ण प्रचार और क्रियात्मक व्यवहार से होगा।

आज समाजवादी अर्थव्यवस्था में उत्पादन के साधनों का राष्ट्रीयकरण किया जा रहा है। विशेष रूप से ऐसा समझा जाता है कि उत्पादन के साधन, विशेषतः पूँजी सबको सुलभ हो जाय। इसी दृष्टिकोण से बैंकों का राष्ट्रियकरण किया गया। इस प्रकार की नीतियों में कुछ अधिक मतभेद की आवश्यकता नहीं है। ये नीतियाँ अल्पकालिक उद्देश्य को ध्यान में रख कर अपनायी जाती हैं। इस प्रकार की नीतियाँ दीर्घकालिक किंवा स्थायी हित करने में समर्थ नहीं होतीं।

वस्तुतः जब तक किसी को विद्या के अर्जन करने की पूर्ण सुविधा नहीं मिलती, तब तक चाहे उसे बैंकों से उधार रुपये दिये जांय या कलकारखाने के लाभ में भागीदार बनाया जाय, उसे पूर्ण न्याय नहीं मिलता। जन्म-जाति और पारिवारिक सुविधाओं के कारण दूसरे अन्यायपूर्वक आगे बढ़ जाने की सुविधा पाते हैं।

अतः अल्पकालिक समानता लाने के दृष्टिकोण से, या निर्धनता से राहत देने के दृष्टिकोण से अपनाई गई नीतियाँ वास्तविक रूप में साधनहीन मानव के हित में समर्थ नहीं हैं। ये नारेबाजी की नीतियाँ हैं, इनसे वास्तविक लाभ नहीं है।

वास्तविक बात तो यह है कि मनुष्य मात्र का आलम्बन उपभोग समान होना चाहिए। अथर्ववेद का एक मन्त्र द्रष्टव्य है।

समानी प्रपा सहवोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि।
सम्यञ्चोऽग्निंसपर्यतारा: नाभिमिवाभितः ॥३-३०-६॥

प्रभु का आदेश है—

(१) वः समाने योक्त्रे सह युनज्मि, तुम सबको एक ही जुए में साथ-साथ नियुक्त करता हूँ, अर्थात् तुम्हारे सब काम साझी के हैं।

(२) अभितः नाभि आराः इव सम्यञ्चः अग्निं सपर्यंत—जैसे चक्के की नाभि में आरे समान रूप से चारों ओर से लगे रहते हैं उसी प्रकार समान रूप से अग्नि की (भौतिक भी, आध्यात्मिक भी) उपासना, सिद्धि करो।

(३) वः प्रपा समानी—तुम्हारा प्राप्तव्य समान हो। प्रपा का योगरूढ़ि अर्थ है—जल पीने का स्थान, बावड़ी इत्यादि, किन्तु यौगिक अर्थ प्राप्तव्य होगा।

(४) वः अन्न भागः सह—तुम्हारा अन्न भाग समान हो।

इस से सुस्पष्ट है कि प्रभु का आदेश है कि सामाजिक विषमता, आलम्बन पदार्थों की विषमता, सामाजिक अन्याय धर्मविरुद्ध है। अतः इसे दूर करने से ही वास्तविक कल्याणराज्य की स्थापना होगी। जब तक अवसर और सुविधाओं की समानता की ओर हम अग्रसर नहीं होंगे, जब तक उन्नति का द्वार निर्बाधरूप से सबके लिए खुल नहीं जाता तब तक समाजवाद की नारेबाजी केवल नखरेबाजी होगी।

—६ विधान सरणी, कलकत्ता-६

ईसाइयत का पर्दाफाश

● ब्रह्मदत्त भारती

राजनैतिक दासता तो सब ही की जल्दी या देर से समाप्त हो जाती है और हुई भी है परन्तु मानसिक और सांस्कृतिक दासता स्थायी बन जाने का डर सबको बना रहता है। ईसाइयत के विशेषज्ञ और मनोवैज्ञानिक इसी खोज में वर्षों से लगे हुए हैं कि किस प्रकार वे दूसरे धर्म वालों को अपना मानसिक दास बना सकें। दूसरे महा-युद्ध के पश्चात् तो विशेषकर ईसाइयत का ध्यान इस ओर लगा हुआ है। कारण ? ईसाइयत को ईसाइयत के हाथों ही इतना पिटना पड़ा है कि ईसाइयत की शिक्षा की दूसरे लोग खिल्ली उड़ाने लगे हैं। दूसरा कारण यह भी है कि अब संसार के दूसरे लोग भी यह भली-भांति जान-पहचान गये हैं कि ईसाइयत प्यार की आड़ में शिकार खेलती है। जैसे-जैसे लोग इसकी चालों को पहचानते जाते हैं वैसे-वैसे ही उन्हें इसके असली रूप से जानकारी प्राप्त हो रही है और फलस्वरूप वे इससे दूर हटते जा रहे हैं।

अपनी डोलती हुई कश्ती को ईसाइयत किस तरहसंभालने के प्रयत्न में है इसी का कुछ दर्शन Christians in India अर्थात् "भारत में ईसाई" पुस्तिका के सातवें और आठवें खण्ड में मिलता है। इसी पुस्तिका के सातवें खण्ड के आरम्भ में यह लिखा था :

Subject of public order, morality and health and to the other provisions of this part, all persons are equally entitled to freedom of conscience and the right freely to profess, practise and propagate their religion.
(The Constitution of India)

यह भारत के संविधान का वह अंग है जिसे ईसाइयों ने सेकूलरिज्म का नाम दे रखा है। हिन्दू जाति ने इसके लिये न जाने क्यों, कैसे और कब धर्म-निरपेक्षता का नाम चुन लिया है। धर्म-निरपेक्षता का अर्थ है किसी धर्म की भी तरफदारी न करना अथवा तटस्थ रहना। संविधान में जो शब्द हैं उनका तो धर्म-तटस्थता का अर्थ नहीं निकलता। फिर यह सेकूलरिज्म की बीमारी कहाँ से आई ? इसके पीछे ईसाइयत की वर्षों की योजना-बद्ध कार्यवाहियां छिपी हैं। संविधान के केवल एक शब्द "सैकूलरिज्म" को कैसे, किसने और कब बदल दिया यह शायद कम लोगों ने ही कभी सोचा होगा। लीजिए यह कहानी मैं आपसे कहता हूँ।

सैकूलरिज्म शब्द लैटिन [illegible] के सैकूलरिस से निकला है। लैटिन रोमन लोगों की भाषा थी और वह लोग इस (सैकूलरिस) शब्द का प्रयोग विशेषकर उन खेलों के लिए करते थे जो रोम में ईसा से २४९ साल पहिले से २० वर्ष पहिले तक जनता के मनोरंजन के लिए खेले जाते थे। रोमन इतिहास से हमें यह सीखने को मिलता है कि—

These games were held to "entertain and amuse the populace with the calculated purpose of getting their minds away from matters politic." Later this word (Saecularis) was adapted into French meaning opposed to religious education.

इसका भावार्थ इस प्रकार किया जा सकता है कि इन खेलों का एकमात्र ध्येय यह होता था कि इनमें जनता को लगा कर उनका ध्यान उनकी अपनी स्वतन्त्रता की आशा, अभिलाषा और आयोजन की ओर न जाने दिया जाये। कुछ देर बाद इस शब्द (सैकूलरिस) को फ्रांसीसी भाषा ने ग्रहण कर लिया और उस भाषा में इसका अर्थ किया जाने लगा "वह जो धार्मिक शिक्षा के विरुद्ध हो।" जब ऐसा हुआ तो कुछ होशियार लोगों को और दूर की सूझी। उन्होंने अपने दिल ही दिल में यह पूछना शुरू किया कि क्या इस नई धारणा का दूसरे लोगों का धर्म नष्ट करने के लिए प्रयोग नहीं हो सकता ? काफी सोच-विचार के बाद वे इस नतीजे पर पहुँचे कि यदि इस हथियार को बुद्धिमत्ता से प्रयोग किया जाये तो यह एक बड़े काम की वस्तु हो सकती है। बस फिर क्या था एक

ईसाई जी. जे. होलीओक ने सैकूलरिज्म का प्रचार आरम्भ कर दिया और उसके एक चेले, चार्ल्स ब्रेडला, जो एक अंग्रेज ईसाई था, उसने १६ वीं शताब्दी के अन्त में लंदन में National Secular Society अर्थात् राष्ट्रीय सैकूलर समिति की स्थापना कर डाली। तभी संसार की सबसे बड़ी साम्राज्यवादी अंग्रेजी सरकार ने और भिन्न-भिन्न शस्त्रों के साथ सैकूलरिज्म का प्रयोग भी उपनिवेशों में रहने वाले गैर ईसाइयों की उनके अपने धर्मों और मतों में आस्था को नष्ट-भ्रष्ट करने के लिये प्रयोग करना आरम्भ कर दिया। साम्राज्यवादी अंग्रेज यह खूब जानते थे, और अब भी ऐसा ही विश्वास रखते हैं कि जब तक उपनिवेशों में रहने वालों को ईसाई नहीं बनाया जाता वह पूरी तरह और सदा के लिये अंग्रेजों की दासता नहीं कबूलेंगे। अतः अंग्रेजी सरकार और अंग्रेजी ईसाइयत में समझौता हो गया और दोनों गैर ईसाई धर्मों और विशेषकर हिन्दू धर्म की जड़ें काटने पर उतर आये। यही कारण है कि ईस्ट इंडिया कम्पनी और उसके बाद मलिका विक्टोरिया और उसके खान्दान की सरकार ने न केवल ईसाइयत को दिल खोलकर आर्थिक सहायता दी अपितु उसके ईसाई पादरियों के अत्याचारों की ओर से अपनी आँखें बन्द कर अपने कानों में कड़वा तेल डाल लिया। अंग्रेजी सरकार यह खूब जानती थी कि जितना अधिक ईसाइयत भारत में फैलेगी उतनी ही अंग्रेजी सरकार की जड़ें मजबूत होंगी। ईसाइयत और ईसाई पादरियों पर जो धन व्यय हुआ वह उसे अखरता न था। साथ ही साथ ईसाइयत ने अपने ही एजेन्टों और गुर्गों से सैकूलरिज्म की तारीफ़ के पुल बांधने शुरू करवा दिये। ईसाइयत चाहती क्या थी? हिन्दुओं को सैकूलरिज्म के चक्कर में फंसा कर उन्हें पहिले अपने धर्म से दूर हट जाने पर ईसाइयत के विचार मस्तिष्क में डालना अधिक सहज था। यह ऐसा ही है जैसे यदि किसी बर्तन में पहिले दूध डाला हो और उसमें पानी डालना चाहें तो पहिले उसे खाली करना पड़ेगा। एक बार खाली होने पर ही उसमें पानी या तेल डल सकता है। इसी लक्ष्य को लेकर ईसाइयत के पादरी एक ही समय में सैकूलरिज़्म की और ईसाइयत प्रशंसा करने लगे थे।

हिन्दुओं ने, बौद्धों ने, जैनमत वालों ने, इस्लाम भाइयों ने कब किसी को अपना कोई धर्म पालन करने से रोका है? यहां कब किसने यह कहा है कि किसी धर्म या मत झूठा है? फिर भारत के संविधान में यह सैकूलरिज्म कैसे आ घुसा? लीजिए सुनिये।

"The Constitution of the country (India) includes a generous provision for religious liberty inserted at the instance of Christian minority. There has been no open discrimination against Christians—but the situation of Christians is Less than completely comfortable." (A History of Christian Missions by Stephen Neil, p. 485)

अर्थात् भारत के संविधान में अल्पसंख्यक ईसाइयों के सुझाव से ही धर्म-निरपेक्षता (?) को स्थान दिया गया था। ईसाइयों के विरुद्ध कुछ खुले तौर पर पक्ष नहीं हुआ है तो भी उनकी स्थिति देश में बहुत अधिक सन्तोषजनक नहीं है। (ईसाई मिशन्ज का इतिहास—लेखक स्टीफन नाइल, पृष्ठ ४८५)

भारत के संविधान में यह सैकूलरिज्म (?) अथवा धर्म-निरपेक्षता (?) ईसाइयत के सुझाव पर घुसेड़ा गया और ईसाइयत के सब सुझाव पोप की आज्ञा के बिना कभी नहीं दिये जाते। रोमन कैथोलिक पोप वैटिकन में राज करते हैं। वह और प्रोटेस्टैन्ट बड़े लाट पादरी जो लंदन में रहते हैं आपस में खूब तालमेल रखते हैं। आपस में वह भले ही झगड़ते हों परन्तु जब गैर ईसाइयों के धर्मों को नष्ट-भ्रष्ट करने का प्रश्न उठता है तो कैथोलिक और गैर कैथोलिक एक हो जाते हैं। धर्म-निरपेक्षता अथवा वह जो कुछ बला भी है उसी अन्तरराष्ट्रीय ईसाइयत के सुझाव पर भारत संविधान में आई जिसके मतानुसार संसार में केवल एक ईसाइयत ही सच्चा मत (रिलिजन) है।

ईसाइयत के इस सुझाव से आप यह भली-भांति समझ गये होंगे कि ईसाइयत को सैकूलरिज्म से प्यार है अथवा वह सैकूलरिज्म को बुरा नहीं समझती। यदि ऐसा नहीं तो ईसाइयत ने सैकूलरिज्म के विचार को भारत

संविधान में डालने का सुझाव क्यों दिया ? मैं आपकी पहिली शंका का समाधान ईसाइयत के अपने मुँह से कराये देता हूँ। सर चार्ल्स वेन्टवर्थ डिल्क ने अपनी पुस्तक The Problems of Greater Britain अर्थात् महाविशाल इंगलैंड की समस्यायें के पृष्ठ ५७५ पर १८६० में लिखा था :

"The Roman Catholic and a portion of high church clergy undoubtedly feel being rated for secular or virtually secular Schools a thing offensive to their conscience, and will use any political power which they may possess to upset the system."

अर्थात् रोमन कैथोलिक और दूसरे बड़े ईसाई पादरी सैकूलरिज्म की शिक्षा और पाठशालाओं से इतना अधिक असन्तुष्ट और नाराज हैं कि वे कोई भी राजनैतिक उपाय और शस्त्र इस प्रणाली को नष्ट करने के लिए प्रयोग करने से नहीं हिचकिचायेंगे।

शायद इतने से आपकी तसल्ली न हो। आप यह कह सकते हैं, यह पुरानी कथा है। अब ईसाइयत बदल चुकी है या होगी या होनी चाहिये। इसका केवल इतना उत्तर ही पर्याप्त होना चाहिये कि भेड़िये के दाँत भले ही गिर जायें वह अपनी आदत नहीं छोड़ देता। योरुशलम में ईसाइयों की एक अंतरराष्ट्रीय बैठक १९२८ में हुई थी। उसमें डा० रूफस एफ० जोनस ने यह कहा कि—

"The greatest rival of Christianity in the world today is not Mohammedanism or Buddhism or Hinduism or Confucianism but a world wide secular way of life."

अर्थात् संसार में आज ईसाइयत का सब से बड़ा शत्रु इस्लाम, बौद्ध धर्म, हिन्दू धर्म अथवा कनफ्यूशनिज्म नहीं है अपितु विश्व व्यापी धर्म-निरपेक्षता (?) है। १९६३ में फिर क्लिफोर्ड मैन्सहार्ड ने अपनी पुस्तक (Christianity in a Changing India) नया भारत में ईसाइयत के पृष्ठ ७० पर लिखा कि—

"In India as in other parts of the world religion is being challenged by secularism."

अर्थात् संसार में और सब स्थानों की भाँति भारत में भी मजहब को धर्म-निरपेक्षता (?) से ही डर लगा हुआ है। क्या इससे यह साफ विदित नहीं कि ईसाइयत को धर्म-निरपेक्षता से वैसा ही वैर है जितना कुत्ते को हड्डी से होता है। फिर क्या कारण है कि ईसाइयत ने जान-बूझ कर भारत के संविधान में धर्म-निरपेक्षता को स्थान दिलवाया ? इसी प्रश्न के उत्तर के पीछे ईसाइयत के खाने के दाँत छिपे हुए हैं। धर्म निरपेक्षता की आड़ में और इसका सहारा लेकर ईसाइयत पहिले दूसरे लोगों की आस्था उनके अपने धर्मों में कमजोर करना चाहती है और उसके पश्चात् उन पर ईसाइयत लाद देना चाहती है। धर्म-निरपेक्षता की आड़ में ईसाइयत जो एक और दुरुपयोग भारत के संविधान का कर रही है वह है वह आज़ादी जो उसे अब इस देश में अपना उल्टा-सीधा प्रचार करने के लिए मिली हुई है। इसी छूट की आड़ लेकर आज विदेशी ईसाई पादरी भारत के ऐसे क्षेत्रों में घूमते-फिरते हैं जहाँ किसी विदेशी को जाने की स्वतन्त्रता नहीं। इसी छूट का अनुचित लाभ उठाकर ईसाई पादरी सीधे-साधे लोगों को यह कह कर भटकाते हैं कि वह ईसा के प्रताप से केवल फूंक मार कर हर बीमारी को ठीक कर देते हैं। ऐसे ही एक पादरी ने नई दिल्ली में जून १९६५ के आरम्भ में मजमे लगाने शुरू किये और जब कुछ दूसरे भारतवासियों ने इस आसामी बाजी के विरुद्ध आवाज उठाई तो उन पर धर्म-निरपेक्षता की आड़ में पुलिस ने लाठी चलाई। (हिन्दुस्तान दिनांक ५ जून १९६५) और चार व्यक्तियों को हिरासत में ले लिया।

घी खाइये शक्कर से और दुनियां लूटिये मक्कर से। इसी पुस्तक "भारत में ईसाई" के पृष्ठ ४४-४५ पर भारत सरकार के मुँह पर इस पुस्तक के लेखक ने एक और जोर का थप्पड़ मारा है। भारत सरकार की धर्म-निरपेक्षता की प्रशंसा (?) करते हुए वह लिखता है :

"The attitude of the authorities is most clearly seen in individual instances. In a certain district in Bihar, religious extremists entered a Christian church during the celebration of a service, dispersed the congregation, beat the minister at the altar and dese-

crated the holy edifice. within hours the local police were on the spot."

अर्थात् भारत सरकार का बर्ताव व्यक्तिगत रूप में कभी-कभी देखने में आता है। बिहार प्रदेश में एक स्थान पर कुछ कट्टर पंथी एक ईसाई कलीसा में घुस गए, जो लोग वहां भाग ले रहे थे उनको वहाँ से इन्होंने भगा दिया, पादरी को पीटा और ईसाई वेदी को भ्रष्ट कर दिया। घन्टों में ही स्थानीय पुलिस वहाँ पहुँच गयी।

इस ईसाई लेखक ने जो लिखा है उसमें चार शब्द ध्यान देने योग्य हैं—within hours और local police घन्टों में ही स्थानीय पुलिस आ गई। कितना बड़ा और सुन्दर प्रमाणपत्र भारत की धर्म-निरपेक्ष सरकार को ईसायत ने दिया है। उसकी सराहना भी ईसाइयत ने खूब की है। कितना बड़ा चमत्कार है कि झगड़ा होंवे पर घंटों के ही भीतर स्थानीय पुलिस वहाँ पहुँच गई। इससे भी बड़ा चमत्कार यह है कि इस पुस्तिका को जिसमें भारत की धर्म-निरपेक्ष सरकार के मुँह पर ईसाई कालिख पोती गई है उसे भारत सरकार ने जनता का धन का खर्च कर स्वयं प्रकाशित और मुद्रित किया है।

इसी पुस्तिका के पृष्ठ ४५ पर यह भी लिखा है कि "the greatest single guarantee of the rights of Christians is the existence of free Christian Press."

अर्थात् ईसाइयों के हक की सुरक्षा का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि यहाँ (भारत में) स्वतन्त्र ईसाई पत्र चल रहे हैं। आज १९६५ में यह एक साधारण-सी बात मालूम पड़ रही है परन्तु इसका प्रयोग ईसाइयत समय आने पर किस प्रकार करेगी यह ईसाइयत खूब जानती है।

आठवें खंड में पृष्ठ ४७ पर हम पढ़ते हैं—

"The shrines of the mother of Jesus at Bandel near Calcutta and Bandra in Greater Bombay are among the most popular—even Muslims have been known to overcome their aversion to graven images and to pray at the shrine of Mary."

अर्थात् ईसा की माँ की जो कबरें कलकत्ता के निकट बन्देल और बम्बई में बांदरा में हैं वे विशेषकर लोकप्रिय हैं—मुसलमान जिन्हें बुतपरस्ती से घृणा है, भी मेरी (ईसा की माँ) की कब्र पर माथा टेकने जाते हैं। यह बांदरा में मेरी की कब्र उसी गिरजाघर में है जिस स्थान पर किसी समय हिन्दुओं की दुर्गा का मन्दिर था। क्या इसका वर्णन करके हिन्दुओं के जख्मों पर नमक छिड़कना भी धर्म-निरपेक्षता का अंग है? इसका क्या प्रमाण है कि मुसलमान वहाँ ईसा की माँ के बुत के आगे माथा टेकने जाते हैं? यह साफ जाहिर है कि किसी सरकारी कर्मचारी ने भी इस पुस्तिका को प्रकाशित करने से पहले इसकी सत्यता अथवा असत्यता की जाँच करने की कोशिश नहीं की। यह भी साबित हो जाता है कि इस पुस्तिका के इस रूप में प्रकाशित होने के पीछे ईसाइयत के उन गुप्तचरों का हाथ चुपके चुपके काम करता रहा है जो सरकारी कार्यालयों में घुसे हुए हैं। स्थिति गम्भीर है, शायद सरकार की आँखें समय रहते खुल सकें।

ईसाइयत और किस-किस तरह अपना प्रचार करती है इसकी बहुत लम्बी कहानी है। इसमें कुछ सन्देह नहीं कि ईसाइयत किसी समय सबसे बड़ा साम्राज्यवादी मजहब रहा है, अब चाहे इसका दीवाला ही क्यों न निकल रहा हो। ऐसे बड़े साम्राज्यवाद को जब-जब इस बात का ध्यान आता है कि खाल के नीचे तो वह कुछ शताब्दी पहले तक बिल्कुल जंगली ही रही है तो उसके कलेजे पर सांप लोट जाते हैं। जब ईसाइयत अपना मुकाबला हिन्दुओं के आदि वैदिक धर्म से करती है तो उसे मानो गश ही पड़ने लगता है। उसे अपने खोखलेपन का एहसास भली-भांति है और वह किसी तरह भी अपने मुंह से इस कालिख को धोना चाहती है। इसी हितार्थ वह निरन्तर इस प्रयत्न में लगी हुई है कि किसी तरह यह साबित कर दिया जाये कि ईसा ने बौद्ध-धर्म से कुछ नहीं लिया जैसा कि संसार आज मानता है अपितु महात्मा बुद्ध ने ईसाइयत से बहुत कुछ सीखा है। इसीलिए ईसाइयत सिर तोड़ इस कोशिश में लगी हुई है कि किसी तरह यह साबित कर दिया जाये कि ईसा महात्मा बुद्ध से पहले

हुए हैं। ईसाइयत ने यह तो कहना शुरू कर ही दिया है कि जिस ईसा का जन्म आज से १९६५ वर्ष पहले अभी मनाया जाता है वह असली ईसा उससे पहले हुआ था और इसी हितार्थ प्रमाण भी जुटाये जा रहे हैं।

ईसाइयत ने एक पुस्तिका हिन्दी में प्रकाशित की है जिसका शीर्षक है गीता और बाईबिल। इस पुस्तिका का ध्येय यह मालूम पड़ता है कि पढ़ने वालों के दिल पर ऐसा भ्रम बैठा दिया जाये कि 'आर्य जाति' का इतिहास महाभारत के युद्ध से ही शुरू होता है। गीता में जो लिखा है वैसा ही बहुत कुछ बाईबिल में पहले से ही है। गीता के बारे में पृष्ठ ७ पर लिखा है—"इसी प्रकार मैंने १९४६ ई० में भगवद्गीता को पढ़ना शुरू किया। पहली बार पढ़ने से तो समझ में आना ही क्या था, दूसरी-तीसरी बार पढ़ा परन्तु सिर पीड़ा के अतिरिक्त और कुछ प्राप्त न हुआ।" यह है वैज्ञानिक तरीका जिसका प्रयोग करके जनता की हिन्दू-धर्म और धर्म-ग्रंथों में आस्था को धक्का पहुंचाया जाता है।

ए/२ अपनाघर हाउसिंग सोसायटी
शंकर सेंट रोड़ पूना-२.

★

कुछ विशेष प्रचारित साहित्य

प्रचार यात्रा

पिछले एक महीने प्रचार की धूम रही। ऐसे भी यह मासम आर्यसमाजों के उत्सव आदि के बहुत अनुकूल है। दिल्ली की टैगौर गार्डन और दयानन्द वाटिका समाजों का शानदार उत्सव हुआ और राजधर्म के दोनों जगह मिलाकर ३२ ग्राहक बने। करनाल में प्रेमनगर समाज के उत्सव पर इस वर्ष विशेष आकर्षण रहा "आर्थिक सम्मेलन"। आर्यसमाजों में गोरक्षा और हिन्दी रक्षा सम्मेलन तो होते हैं पर हमारी अर्थ व्यवस्था कैसी हो इस पर चिन्तन कम होता है। आर्थिक सम्मेलन के पोस्टरों पर मोटे अक्षरों में जब लोग यह पढ़ते "धनी और गरीब —इतना भेद क्यों ?" और नीचे आर्यसमाज का नाम पढ़ते तो एक बार आँखें मलते। उन्हें विश्वास न आता कि आर्यसमाज भी इस प्रकार के प्रश्नों पर सम्मेलन कर सकता है। सम्मेलन की सफलता और एकत्रित जनता से यह अन्दाजा लगाया जा सकता था कि आर्यसमाज के दृष्टिकोण से न केवल इस देश के निर्धन वर्ग सहमत है वरन् वे इस व्यवस्था की स्थापना के लिये आर्यसमाज का नेतृत्व चाहते हैं। इसी प्रकार आर्यसमाज होली मुहल्ला और आर्यसमाज दयालपुरा का भी उत्सव इस वर्ष विशेष आकर्षण का केन्द्र रहा। भाई ईश्वर चन्द जी ने अकेले ३० से भी अधिक ग्राहक बना कर दिये।

करतारपुर में इस वर्ष बड़े धूमधाम से गुरु विरजानन्द जन्म शताब्दी समारोह मनाया गया। मैंने और आदरणीय इन्द्रदेव जी ने प्रथम बार पंजाब के आर्यों के उमड़ते हुए उत्साह को देखा और हार्दिक प्रसन्नता हुई यह देखकर कि नेताओं के न चाहते हुए भी आर्यसमाज की जनता में अदम्य जीवन और त्याग की भावना है। वेद सम्मेलन स्वामी व्रतानन्द जी की अध्यक्षता में, हिन्दी रक्षा सम्मेलन श्री वीरेन्द्र जी की और गो रक्षा सम्मेलन लाला रामगोपाल जी की अध्यक्षता में सोत्साह सम्पन्न हुआ। दादा गुरु के प्रति श्रद्धाञ्जलि सम्मेलन डा० डी० राम (पटना) की अध्यक्षता में हुआ। महात्मा आनन्द भिक्षु जी द्वारा यज्ञ कार्य सम्पन्न हुआ। पर विशेष आकर्षण का केन्द्र रहा आर्य युवक सम्मेलन जिसकी अध्यक्षता की आर्य जगत के ओजस्वी युवा वक्ता प्रो० रामप्रकाश एम० एस० सी०, पी० एच० डी०। औपचारिकता—निर्वाह की सीमा को तोड़कर आर्य युवकों ने शिथिलताग्रस्त आर्यसमाज के नेतृत्व के विरुद्ध विद्रोह की आवाज बुलन्द की और स्पष्ट शब्दों में यह मांग की कि किसी भी राजनैतिक दल के सदस्य या निर्दलीय एम० पी० एम० एल० ए० को आर्यसमाज के किसी भी संगठन में अन्तरंग सदस्य या अधिकारी न बनाया जाय। प्रो० ऋषिराम जी द्वारा प्रस्तुत और प्रो० चन्द्र सत्यार्थी द्वारा समर्थित प्रस्ताव पर मेरे और इन्द्रदेव जी के अतिरिक्त प्रो० कुन्दनलाल जी ने अपने ओजस्वी विचार रखे। जनता ने जिस उत्साह और करतलध्वनियों की बौछार से युवकों के उद्‌गार को सुना उससे लगता था कि युवकों ने वहाँ पर उपस्थित आर्य जनता के दिल की बात कह दी हो। हमारे लिये तो यह ऐतिहासिक अवसर पंजाब से पहला परिचय था इस पहले परिचय में ही हमें सचमुच पंजाब से प्यार हो गया।

स्वामी व्रतानन्द जी, श्री धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड स्वामी विज्ञानानन्द जी तथा अनेकों आर्य सन्यासी विद्वानों से हमारी विशेष बातें हुई और उनका हार्दिक स्नेह प्राप्त कर हम अत्यन्त प्रसन्न हुए।

इसी प्रकार जोधपुर नगर आर्यसमाज (गुलाब सागर) का उत्सव भी हमारे लिये राजस्थान की वीर धरती से प्रथम परिचय था। गिरदीकोट घण्टाघर में आदरणीय वीरेन्द्र जी वीर के जोशीले भजनों के बाद रात १२ बजे तक जनता अपार उत्साह से आर्य राष्ट्र के मूल तत्वों पर गम्भीर विचार सुनती। सैकड़ों रुपयों का साहित्य लेकर और सैकड़ों ग्राहक बनाकर जोधपुर के आर्यसमाज के

अधिकारियों ने हमारा काम अपना लिया। आदरणीय ठाकुर साहब, श्रीयुत, रतनसिंह जी, डा० खेत लखानी और आर्य मरुधर व्यायामशाला, एवं आर्य वीर दल के युवकों ने बड़ी आत्मीयता दिखाई और हमारे मिशन के लिये एक मोटर-साइकल दान का वचन दिया।

जोधपुर के बाद चण्डीगढ़ के २२ सेक्टर के उत्सव पर भी हमें बड़ी सफलता मिली। ब्र० सत्यप्रिय जी और आदरणीय इन्द्रदेव जी के बाद मेरा व्याख्यान हुआ। आर्य राष्ट्र की स्थापना की बातें चण्डीगढ़ की विद्वान् जनता ने उत्साह से स्वीकार किया। तुरन्त ४५ ग्राहक बने और सैकड़ों पुस्तकें खरीदी गई निस्संदेह चण्डीगढ़ के आर्ययुवक बड़ी तड़प रखते हैं।

सहारनपुर जिला आर्य महासम्मेलन ने उत्तरप्रदेश में प्रवेश का हमें पहला अवसर प्रदान किया। आर्य राजनीति की बातों को और विशेषकर वर्णाश्रम की आर्थिक नीतियों को यहां की जनता ने बड़ी रुचि से सुना और स्वीकार किया। आर्य समाज खालापार के उत्साही प्रधान और मंत्री जी के अतिरिक्त आदरणीय भोलानाथ जी, श्रीयुत वर्मा जी और नवयुवकों ने मिलकर स्थानीय कालेजों में भी व्याख्यान का कार्यक्रम बनाया जो बहुत सफल रहा। ५२ ग्राहक बने और सैकड़ों विशेषांक बिके।

फिरोजपुर झिरका में वेद प्रचार मण्डल मेवात का जिला स्तर पर सम्मेलन भी नवयुवकों की सहायता से सफल रहा। श्री भजनलाल जी इस क्षेत्र में प्रेरणास्रोत हैं—साथ में श्री पदमचन्द जी ने और बाल दिवाकर जी हंस ने बहुत काम किया। परिषद् के गुड़गांवा मण्डल प्रधान आचार्य रामानन्द जी एम० ए० और श्री धर्मपाल जी विश्वामित्र जी की भजन मण्डली के साथ इसकी सफलता में जुट गये। उपस्थित ग्रामीण जनता तथा अध्यापक वर्ग ने आर्थिक विषमता के प्रति विद्रोह की बातें बहुत पसन्द की। यहां से चलकर मथुरा की चौक समाज की रजत जयन्ती समारोह में सम्मिलित हुआ। महात्मा आनन्दभिक्षु जी और आचार्य कृष्ण जी के द्वारा यज्ञ पर बड़े प्रभावशाली प्रवचन हुए। श्री ईश्वरी प्रसाद जी 'प्रेम' के त्याग और तपस्या की सब सराहना कर रहे थे। राष्ट्र रक्षा सम्मेलन में लोगों ने स्वीकार किया जब तक हम वैदिक सिद्धान्तों पर आधारित आर्य राष्ट्र नहीं बना लेते तब तक राष्ट्र रक्षा सम्भव नहीं। कालेज के विद्यार्थियों के आग्रह पर स्नातकोत्तर श्रेणी के विद्यार्थियों में भी शिक्षा प्रणाली पर व्याख्यान हुआ और एक एम. ए. के सुयोग्य तगड़े विद्यार्थी ने परिषद् को जीवनदान का वचन दिया। राजधर्म ने यहां भी काफी सफलता पाई। युवक सम्मेलन में फिर धमाका हुआ और आर्यसमाज के राजनैतिक नेताओं को कठोर शब्दों में संगठन के अधिकार से अलग होने की चेतावनी दी गई। आचार्य कृष्ण जी की अध्यक्षता में आयोजित यह सम्मेलन बेहद सफल रहा।

देहरादून आर्य इन्टर कालेज के वार्षिकोत्सव पर जाकर और श्री सेठ जी, और प्रिन्सिपल साहब, के परिश्रम से सैनिकों के बच्चों को शिक्षण देने वाले इस कालेज को आर्य विचार धारा के प्रचार में संलग्न देखकर बड़ी खुशी हुई सेठ जी को अपने युवक अध्यापक श्री अनूपसिंह जी से बड़ा सहयोग मिल रहा है। आर्यसमाज (नगर) भी बड़ा जागृत और प्रबुद्ध समाज है जिसके उत्साही मंत्री श्री धर्मेन्द्रसिंह जी और उपमंत्री श्री विद्याभास्कर जी का प्रयत्न सराहनीय है। देहरादून से सीधे चन्दौसी पहुँचा। केवल एक ही व्याख्यान पर यहां के कर्मठ अधिकारियों और जिज्ञासु आर्य जनता ने आर्यसमाज द्वारा अपने स्वतन्त्र राजनैतिक मंच की निर्माण की बात को बहुत पसन्द किया। प्रधान जी के आग्रह पर बारह सैनी कालेज में भी व्याख्यान हुआ। एक मोटर साइकिल दान का वचन मिला और २० ग्राहक बने। शीघ्र ही पुनः जाने का आग्रह स्वीकार कर मैं दिल्ली आ गया।

प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु जी के प्रबल आग्रह पर मैं ऋषि निर्वाण उत्सव पर दीनानगर पहुँचा। श्रद्धेय स्वामी सर्वानन्द जी का भरपूर आशीर्वाद मिला और दयानन्द मठ के अन्तेवासियों से घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया। दीनानगर से चलकर गुरदासपुर, धारीवाल बटाला और लेखराम नगर (कादियां) की समाजों और युवकों से विशेष परिचय बढ़ा और यह जानकर बड़ी खुशी हुई सभी जगह लोग इस बात के प्रबल विरोध में है कि आर्यसमाज की शक्ति का प्रयोग अन्य राजनैतिक दल करें। अपने स्वतन्त्र राजनैतिक संगठन की बात आर्य युवकों को बेहद अच्छी लगी बहन सन्तोष जी (गुरदासपुर) वेद प्रकाश जी, सुभाष जी, विवेक जी ओमप्रकाश जी (धारीवाल) दर्शन जी, प्रि० भारद्वाज और डी० ए० वी० गर्ल्स कालेज की प्रिन्सिपल (बटाला) और सत्यपाल जी, रोशन जी, अरुण जी, अशोक जी, डी० ए० वी० स्कूल के प्रिन्सिपल साहब (लेखराम नागरकोदियां) ने तो ऐसा सहयोग किया कि कभी भूला नहीं जा सकता।

सब जगह घूमने से एक ही बात दिखाई पड़ती है कि नेतृत्व की वित्त निष्ठा के कारण आर्यसमाज की जनता मन मसोस कर पड़ी है। पर "आर्य राष्ट्र की स्थापना" के नारे से उसमें जान आ जाती है और अवगुण्ठन तथा कुण्ठा के आवरण को तोड़ कर विद्रोह करने के लिये उसका जी मचल उठता है।

—श्यामराव

हम कहां खड़े हैं ?

● जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी

जब ८ मई, १९४५ को सोवियत संघ तथा अमेरिकी सेना ने जर्मनी का पूर्ण आत्म-समर्पण स्वीकार किया था तब यह अन्दाज लगाया गया था कि द्वितीय महायुद्ध में यूरोप तथा अफ्रीका की भूमि पर ही ३ करोड़ २० लाख व्यक्ति मारे गए थे, जिनमें ६० लाख तो जर्मन ही थे, और ८ करोड़ व्यक्ति घायल एवं अपंग हो गए थे। यह अन्दाज भी लगा था कि इस युद्ध में भाग लेने वाले देशों ने ११७ अरब डालर खर्च किये थे।

पहला अणुबम विस्फोट

इसी जन-धन की हानि को रोकने के लिये, दो महा-युद्धों के जनक जर्मनी को सदैव के लिये अशस्त्रीकरण तथा असैन्यीकरण करने के लिये पश्चिम बर्लिन के पश्चिम में स्थापित पोट्सडाम के सेसिलनेहोफ महल में तीन मित्र-राष्ट्रों का प्रोट्सडाम सम्मेलन हुआ था। यद्यपि सोवियत संघ, अमेरिका तथा ब्रिटेन के सर्वोच्च शासक पहले तेहरान में और फिर याल्टा में मिल चुके थे, तथापि कौन छोटा और कौन बड़ा की भावना इतनी विद्यमान थी कि सेसिल-नेहोफ के १७६ कमरों वाले और ८० लाख स्वर्ण मार्कों से निर्मित विशाल महल के ऐसे हाल में बैठक की गई जिसकी विशेषता यह थी कि तीन भिन्न दिशाओं में उसके दरवाजे थे, जिनमें से एक ही समय पर स्टालिन, चर्चिल एवं ट्रूमेन ने प्रवेश किया और एक गोलमेज पर क्रमशः दाहिनी ओर बीच में तथा बाईं ओर बैठे। यह सम्मेलन ३ से ११ फरवरी तक होने वाले याल्टा-सम्मेलन के निर्णय के अनुसार बुलाया गया था। इस सम्मेलन के सम्बन्ध में अमेरिकी सिनेट को एक सन्देश देते हुए राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने कहा था कि क्रीमिया का सम्मेलन तीन प्रमुख राष्ट्रों द्वारा शान्ति का एक सामान्य आधार पाने का सफल प्रयास था। इस का वास्तविक अर्थ था कि एक पक्षीय कार्यवाहियों, अलग-अलग सन्धियों की प्रणालियों, विशेष प्रभाव-क्षेत्रों तथा सत्ता के सन्तुलन एवं अन्य उपायों का जो शताब्दियों के प्रयोग के बाद भी बेकार सिद्ध हुए थे, अन्त हो गया।

पोट्सडाम-सम्मेलन १७ जुलाई से प्रारम्भ हुआ और २ अगस्त को समाप्त हुआ। परन्तु सम्मेलन के प्रारम्भ होने से एक दिन पूर्व ही राष्ट्रपति ट्रूमेन को एक समाचार मिला जिसने राष्ट्रपति रूजवेल्ट की आशा को जैसे झुठला दिया और पोट्सडाम-सम्मेलन का उद्देश्य उसके प्रारम्भ होने से पहले ही समाप्त हो गया। राष्ट्रपति ट्रूमेन को समाचार मिला कि न्यू मैक्सिको के विशाल रेगिस्तान में स्थापित लास आलमोस की आणविक प्रयोगशाला में प्रथम अणुबम का विस्फोट सफल हो गया। ट्रूमेन के विदेश-मन्त्री बाईर्नेस ने उन्हें सलाह दी कि यह नया अस्त्र युद्ध की समाप्ति पर अमेरिका को यह सुविधा देगा कि वह जो चाहे शर्तें मनवा सके।

इसलिए पोट्सडाम-सम्मेलन में तो जर्मनी के बटवारे के अनेक नक्शे बने जो आज भी उस महल की दीवारों पर लगे पर्यटकों का मनोरंजन करते हैं और घोषणा-पत्र में भी कहा गया कि "इस समझौते का उद्देश्य जर्मनी के सम्बन्ध में क्रीमिया-घोषणा-पत्र का कार्यान्विय है। जर्मन सैन्यवाद तथा नात्सीवाद मिटा दिया जाएगा और मित्र-राष्ट्र मिल कर अब और आगे ऐसे उपाय करेंगे जिससे यह विश्वास हो जाएगा कि जर्मनी फिर न तो अपने पड़ोसियों को और न विश्व शान्ति को खतरे की धमकी दे सकेगा।"

दोस्ती टूट गई !

लेकिन हिरोशिमा तथा नागासाकी पर अणुबम गिराने और जापान की विजय के पश्चात् ही पोट्सडाम, याल्टा और तेहरान की मित्रता समाप्त होने लगी। चार राष्ट्रों द्वारा जमनी पर शासन करने तथा जर्मनी की केन्द्रीय सरकार न बनाने का निर्णय ताक पर रख दिया गया। पहले पश्चिमी राष्ट्रों के क्षेत्र में पृथक मुद्रा बनी, फिर उन का एक संघीय राज्य स्वीकार कर लिया गया। मार्च १९४८ में पश्चिम जर्मनी के औद्योगीकरण में सहायता के लिए मार्शल योजना बनी। जनवरी, १९४७ के मास्को-सम्मेलन में तथा दिसम्बर, १९४७ के लन्दन-सम्मेलन में चार राष्ट्रों के विदेशी-मन्त्री एक जर्मन सरकार बनाने के प्रश्न पर सहमत नहीं हुए। अमेरिका, ब्रिटेन तथा फ्रांस ने अपने-अपने प्रभावित क्षेत्रों को एक में सम्मिलित कर

दिया और २० जून, १९४७ को एक पृथक मुद्रा चालू कर दी गई। इस प्रकार सोवियत संघ और पश्चिमी राष्ट्रों में शीत युद्ध का वातावरण तैयार हुआ। इसके पश्चात एक ओर ब्रिटेन, अमेरिका तथा फ्रांस ने पश्चिम जर्मनी के संघीय राज्य को मान्यता दी तो दूसरी ओर सोवियत संघ ने जनवादी जर्मन गणतन्त्र को। साथ ही अमेरिका तथा सोवियत संघ द्वारा अणुबमों एवं उदजन बमों के निर्माण की होड़ प्रारम्भ हुई। बात यहीं नहीं खत्म हुई, यह प्रक्रिया नाटो, सीएटो, सेण्टो तथा वारसा-सन्धि देशों के अलग-अलग सैनिक गुटों के रूप में पल्लवित हुई।

इस प्रतिद्वन्द्विता के दो परिणाम हुए हैं। एक ओर दोनों गुटों का यह प्रयास रहा है कि अधिक से अधिक देशों को अपने साथ ले कर अपना सैन्य-बल ही नहीं औद्योगिक उत्पादन-बल, प्रचार-बल बढ़ाएं। दूसरी ओर नए से नए और अधिक शक्तिशाली हथियारों की खोज जारी है। आज अमेरिका तथा रूस हथियारों की होड़ में एक-दूसरे को नष्ट करने के शक्ति-संचयन में लगे हैं और भय यह है कि कहीं इतनी सामर्थ्य होने के बाद ये शक्तियां आपस में टकरा कर एक-दूसरे का विनाश न कर दें। यदि यह महायुद्ध छिड़ा तो अन्य राष्ट्रों की तटस्थता कायम रह सकेगी या नहीं, यह विचारणीय है।

रूस तथा अमेरिका के पास घातक हथियारों की बहुतायत ही इतने दिनों तक व्यापक विश्व-युद्ध की रोक समझी जाती रही है, यद्यपि पिछले वर्षों में संसार के किसी न किसी कोने में युद्ध होता रहा है तथापि कहा यह जाता है कि चाहे वियतनाम का युद्ध हो, या मिस्र और इसरायल का, इन सब का उद्देश्य तो अमेरिका और सोवियत संघ के हथियारों की परीक्षा करना ही हो गया है। यदि यह सत्य है तो चाहे तीसरा विश्वयुद्ध हो न हो संसार का कोई भी ऐसा देश नहीं है जिसे स्थानीय युद्ध का खतरा न पैदा हो सके।

आज एक नई स्थिति पैदा हो गई है चीन के उदय से। चीन के पास संसार में सबसे अधिक जनसंख्या है। उसकी सेना में २७ लाख ६१ हजार सैनिक बताने जाते हैं और लगभग ८० करोड़ की जनसंख्या के इस देश में चार से लेकर छः वर्ष की सैनिक-सेवा अनिवार्य है। इस का अर्थ यह है कि लगभग साढ़े चौदह करोड़ युवकों का अधिकांश भाग सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त करता रहा है या बहुत थोड़े समय में सेना के लिए काम में आ सकता है। चीन ने अपनी सैनिक उम्र के नागरिकों का केवल १.९ प्रतिशत भाग सेना में दे रखा है, जबकि अमेरिका ने ९ प्रतिशत, रूस ने ७ प्रतिशत, ब्रिटेन ने ४ प्रतिशत, फ्रांस ने ४.९ प्रतिशत, पश्चिमी जर्मनी ने ३.९ प्रतिशत, पूर्वी जर्मनी ने ४.४ प्रतिशत, संयुक्त अरब गणराज्य ने ५ प्रतिशत, इसरायल ने ७.७ प्रतिशत, तुर्की ने ७.७ प्रतिशत पुर्तगाल ने १० प्रतिशत तथा स्वीडन ने ३.७ प्रतिशत भाग सेना के लिए सुरक्षित रख छोड़ा है।

एशिया में पाकिस्तान की सैनिक उम्र की जनसंख्या का १.७ प्रतिशत सेना में बताया है जबकि वास्तविक संख्या अधिक ही होगी। एशिया की दो बड़ी शक्तियों में केवल भारत एवं जापान ऐसे हैं, जिनका अपनी युवक जनसंख्या की तुलना में अनुपात संसार के सभी देशों से कम है। जापान का अनुपात १ प्रतिशत है और भारत का १.१ प्रतिशत। परन्तु जापान की तो इस समय अपनी कोई सेना नहीं है और उसे स्थल-सेना की, जिसमें अधिक लोग रहते हैं आवश्यकता भी नहीं है। इसके विपरीत भारत को ९४२५ मील लम्बी स्थल-सीमा तथा ३५३५ मील लम्बे समुद्र-तट की रक्षा करनी पड़ती है।

इस समय चीन १० आणविक परीक्षण कर चुका है। वह उदजन बम का निर्माण ही नहीं कर चुका है, बल्कि उसके पास २० उदजन बम तैयार भी बताये जाते हैं। हाल ही में उसने मध्यम मार वाली मिसाइलों के परीक्षण भी किये हैं और कोई आश्चर्य नहीं कि एक-दो वर्षों में वह ऐसी दूरी तक मार करने वाली मिसाइलें बना लें। उसे अपने दो शत्रुओं भारत तथा सोवियत संघ से लड़ने के लिए अन्तरमहाद्वीपीय मिसाइल बनाने की आवश्यकता भी नहीं है। चीन के उदय ने सोवियत संघ और अमेरिका दोनों को चौकन्ना कर दिया है। दोनों उसके भय से मुक्त भी होना चाहते हैं और उससे मित्रता भी चाहते हैं। इसी लिए एक ओर अमेरिका उससे बात करना चाहता है तो दूसरी ओर सोवियत प्रधान मन्त्री कोसीगन बिना बुलाए ही पीकिंग हो आए हैं, जिससे चाऊ

इन लाई से आमने-सामने बात कर उसकी गहराई समझ सकें।

सोवियत संघ के पास जो शक्ति विद्यमान है उससे चीन का अभी कोई मुकाबला नहीं, परन्तु अमेरिका, सोवियत संघ और चीन के इस त्रिकोण में जिधर भी दो हो जाएँगे उधर का पलड़ा भारी हो जाएगा।

सोवियत संघ तथा अमेरिका की संहारक शक्ति के बारे में मिलिटरी बैलेंस (१९६८-६९) के अनुसार स्थिति इस प्रकार है। अमेरिका के पास धरती से मार करने वाली अन्तरमहाद्वीपीय मिसाइलें १०५४ हैं (अमेरिकी आँकड़ों के अनुसार जुलाई में उसके पास १७१० मिसाइलें बताई गई हैं।) सोवियत संघ के पास अनुमानत: १,००० हैं। समुद्र से मार करने वाली मिसाइलें अमेरिका के पास ६३६ और रूस के पास मध्यम मार करने वाली ७५० मिसाइलें हैं, जो डेढ़-दो हजार मील तक मार करती हैं। अमेरिका के पास ५०० दूरगामी बमवर्षक हैं जबकि सोवियत संघ के पास उनकी संख्या १५०, है लेकिन जब अमेरिका के पास ४० और ब्रिटेन, फ्रांस दोनों के पास १६५ मध्यम मार के बमवर्षक हैं (ये अणुबम ले जा सकते हैं) तो सोवियत संघ के पास उनकी संख्या १०५० कूती गई।

प्रश्न संख्या का ही नहीं, शक्ति का है। यद्यपि इन आँकड़ों के अनुसार अमेरिका के पास मिसाइलों की संख्या अधिक है तथा बम भण्डार भी बड़ा है तथापि जहां तक मिसाइलों के सिरों में जाने वाले बमों का सम्बन्ध है उन में सोवियत संघ अधिक शक्तिशाली है। अमेरिकी मिसाइल टिटान में ५ मेंगाटन तथा मिनटसैन २ में दो मेंगाटन का सिरा होता है और पोलारिस में लगभग एक मेगाटन का। परन्तु कहा गया है कि उसके पास एक अन्तरिक्ष में घूमने वाला मिसाइल है, जिस में ३० मेगाटन की शक्ति से अधिक का उदजन बम फिट है। इसी प्रकार उस की अन्य मिसाइलों में २० एवं १०-१० मेगाटनों के सिरे हैं। यानी हिरोसिमा पर पड़ने वाले बमों से सौ गुने शक्तिशाली हैं।

इस समय अमेरिका में एक विवाद चल रहा है कि इन शक्तिशाली मिसाइलों की रक्षा के लिए क्या व्यवस्था की जाए। एतदर्थ मिसाइल-भण्डारों की रक्षा करने के लिए कुछ ऐसी मिसाइलों का निर्माण होगा, जो दूर तो नहीं जाएंगी, लेकिन किसी भी आने वाली मिसाइल को पकड़ने की क्षमता रखेगी। वैसे १९५५ से ले कर १९६६ तक नावक जियस नामक ऐसी मिसाइल के विकास पर अमेरिका में ४ अरब डालर तथा उनके सहायक राडारों पर १ अरब २० लाख डालर खर्च हो चुका है। परन्तु उसको अपर्याप्त माना गया और अब स्प्रिंट एवं स्पार्टन नामक दो मिसाइलों तथा टकमार और एम. एस. आर. राडारों का विकास करने का निश्चय किया गया है। यह इस लिए किया गया है कि सोवियत संघ ने अपने बड़े नगरों को ऐसी मिसाइलों से सुरक्षित कर लिया है। इस प्रणाली पर ८ अरब ९० करोड़ रुपया व्यय होगा एवं प्रति वर्ष रख-रखाव पर डेढ़ करोड़ डालर।

यह इस लिए किया जा रहा है कि सोवियत संघ ने यह दावा किया है कि अब तक दुनियां की सारी लड़ाइयों में जितना गोला-बरूद इस्तेमाल हुआ उतनी शक्ति का आणविक गोला बारूद आज उसके पास है, जिसे वह संसार के किसी भाग पर पहुंचा सकता है। साथ ही उसके पास ५० मेगाटन शक्ति के उदजन बम हैं, जिन के राकेटों की शक्ति २ करोड़ घोड़ों की है जिन से १० लाख ट्रैक्टर या ४ लाख बसें चल सकती हैं। १२०० किलोमीटर की दूरी से फेंकी ये मिसाइलें ३ मिनट में लक्ष्य भेद कर जहां गिरेंगी २० किलोमीटर तक की धरती को बिल्कुल नष्ट कर देगी।

कहा जाता है कि सोवियत संघ ने चीन को धमकी दी है कि उस के लोपनर स्थित अणु परीक्षण केन्द्र तथा चाऊ स्थित गैस डिफ्यूजन प्लाण्ट को समाप्त कर उसकी आणविक शक्ति समाप्त कर दी जाएगी। इसीलिए चीन रूस से लड़ाई के लिये तैयार हो रहा है और अपने कारखाने तिब्बत तथा चिघाई प्रान्तों में हिमालय की तलहटी में ले जा रहा है, जहाँ वह रूस की वक्र दृष्टि से बच सकें। सोवियत संघ ने लेनिनग्राड मास्को तथा उत्तरी क्षेत्र में १००० गालोश नामक मिसाइलें लगा रखी हैं, जिनके बारे में उसका दावा है कि वे ६०० मील पहले ही हवा में आक्रामक मिसाइल को मक्खी की तरह भून देंगी।

स्पष्टतः यह अमेरिका तथा चीन दोनों से अपने को रक्षित रखने का ताना-बना हैं।

मिसइलों के साथ-साथ पनडुब्बियों के निर्माण में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है, क्योंकि ये पनडुब्बियाँ ४८ दिन तक पानी के अन्दर रह सकती हैं और एक दिन में ८००-९०० मील जा सकती है। इसीलिए अमेरिका ने पौलारिस मिसाइलों को पनडुब्बियों में लगाया है। अमेरिका के पास ऐसी ४१ और रूस के पास ३८ पनडुब्बियां हैं जो अणुशक्ति की मिसाइलें लिए हुए हैं। वैसे सोवियत संघ के पास कुल मिलाकर ३५० से अधिक पनडुब्बियां हैं, जिन में ५० अणुशक्ति से चालित हैं। अमेरिका के पास अणुचालित पनडुब्बियाँ ८३ हैं और ब्रिटेन के पास ३ हैं। फ्रांस की पहली पनडुब्बी बन रही है। सोवियत संघ ने यह दावा किया है कि की अन्य ५० पनडुब्बियाँ भी मिसाइलों से लैस हैं।

स्पष्ट है कि संसार की इस दौड़ में भारत तथा पाकिस्तान बहुत पीछे हैं। दोनों देशों के पास अणुशक्ति की कमी है। भारत के पास अपने बमवर्षक नहीं है। मिसाइल-निर्माण का कार्य एक फ्रेंसीसी कम्पनी के सहयोग से प्रारम्भ होगा, परन्तु वे छोटी मार की मिसाइलें होगी। परिणाम यह होगा कि इन दोनों देशों को अन्य देशों के सहारे रहना पड़ेगा। चूंकि सोवियत संघ तथा अमेरिका में बहुत-से हथियार पुराने पड़ गए हैं, इसलिए यह खतरा पड़ौसी के हाथ पड़ गए तो हमारा क्या होगा ?

जापान को संधि के अनुसार सेना रखने से मना कर दिया गया था। फिर भी इतना उल्लेख काफी है कि जापान के पास आज ८ पनडुब्बियां हैं, २३ विध्वंसक हैं, जिन में एक में मिसाइलें लगी हैं, १७ फ्रिगेट हैं, २० तेज गश्ती जहाज तथा ३८ तटीय सुरंग साफ करने वाले जहाज हैं। उसकी तटवर्ती रक्षक सेना में लगभग ३०० जहाज और नोसेना में ३६,००० सैनिक हैं, जिनमें ६५७६ अधिकारी हैं। यानी भारतीय नौसेना से ११ हजार व्यक्ति अधिक। जापान की पंचवर्षीय योजना में १९७२ तक ५६ नये जंगी जहाज बनेंगे जिन का भार ४८ हजार टन का होगा। स्वयं जापानी राजनीतिज्ञों की यह धारणा है कि अगले दशक में जापान घर पर बैठने के लिए यह सेना नहीं बना रहा है।

आज के युग की कुंजी अणुशक्ति में है। जापान इस दिशा में पीछे नहीं है। अन्तरिक्ष तथा राकेट की दिशा में भी वह बढ़ रहा है। चीन तथा सोवियत संघ की शक्ति का वह बहुत जल्दी दावेदार बनना चाहता है।

जहाँ तक स्थल-सेना का सम्बन्ध है, भारत की स्थल-सेना पाकिस्तान से बड़ी है और चीन का मुकाबला भी यह समझ कर ही सकती है कि चीन अपनी सारी सेना भारत में एक साथ नहीं झोंक सकता। हिमालय है सो है ही उसके लिए ऊसरी आमूर तथा सिक्यांग की सीमाएं भी हैं। परन्तु कहाँ ३,००० विमान वाला चीन और कहां ५०० विमान वाला भारत। युद्ध होने पर हमें अपने साधन बहुत बढ़ाने पड़ेंगे। इस दृष्टि से मिसाइलें, पनडुब्बियों तथा अणुशक्ति की ओर हमें जाना होगा।

●

महर्षि दयानन्द काशी शास्त्रार्थ शताब्दी

के अवसर पर "आर्य समाज के शास्त्रार्थ महारथी" नाम से पुस्तक तैयार करनी है। आर्य समाज के अनुभवी लेखक श्री पं० शिवदयालु जी ने उसका सम्पादक बनना स्वीकार कर लिया है। इस सम्बन्ध में जो भी सुझाव और मसाला वे दे सकें अतिशीघ्र पण्डित जी के पास "आर्य वानप्रस्थाश्रम् पो० ज्वालापुर, जिला सहारनपुर" के पते पर भेजने की कृपा करें। इस सम्बन्ध में कोई पुस्तकें छपी हुई हो, या शास्त्रार्थ विभिन्न आर्य प्रतिनिधी सभाओं आर्य समाज तथा सर्वसाधारण से प्रार्थना कि पुस्तक के सम्बन्ध में महारथियों के जीवन, कार्य आदी के बारे में ज्ञात हो, सब भेज दें।

— महेन्द्र प्रताप शास्त्री संयोजक
काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति

१७ नवम्बर जिनकी पुण्य तिथि—

पंजाब केसरी लाला लाजपतराय

लाला जी का जन्म २८ जनवरी सन् १८६५ को पंजाब के एक ढोंडी ग्राम में हुआ था। उनके पिता जी विद्यालय के निरीक्षक थे। लाला जी की शिक्षा का प्रबंध बहुत उत्तम ढंग से हुआ था। वकालत पास करने के बाद वे लाहौर में प्रेक्टिस करने लगे। वहाँ पर उनका परिचय "आर्यसमाज" से हुआ जिसका उनके ऊपर गहरा प्रभाव पड़ा। वे आगे चल कर आर्यसमाज के प्रभावशाली नेता बने आर्यसमाज के विषय में वे कहा करते थे—"ऋषि दयानन्द मेरे पिता हैं और आर्यसमाज मेरी माता है। मुझे उसकी गोद में पलने का गौरव है।"

२३ वर्ष की आयु में लाला जी कांग्रेस में सम्मिलित हुए। कांग्रेस मंच से पहला प्रभावोत्पादक भाषण उन्हीं का हुआ था। लाला जी महान् वक्ता थे। श्री सी० वाई० चिन्तामणि के अनुसार सार्वजनिक भाषण करने में वे Lloyd George से कम नहीं थे। लखनऊ में उनका इतना ओजस्वी भाषण था कि यदि दक्षिणी अफ्रीका का कोई गोरा वहाँ आस पास पहुँच में होता तो उसका जीवन संकट में पड़ जाता। यह उस समय की बात है जबकि अनेक प्रमुख राष्ट्रीय नेता अंग्रेजी राज्य के न्याय के पुल बाँधने में नहीं थकते थे।

लाला जी को १९०५ में कांग्रेस शिष्ट मंडल का सदस्य बनाकर भारतीयों के विचारों को इंग्लैंड की जनता के समक्ष रखने के लिये भेजा गया। वहाँ से लौटने पर उग्र राष्ट्रवादी नीति का प्रचार करने के कारण सरकार उनसे चिढ़ उठी। उधर 'बंग भंग' का सूत्रपात हुआ। इधर लाला जी ने "पगड़ी संभाल ओ जट्टा" नामक किसान आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया। लाला जी द्वारा संचालित राष्ट्रीय इतिहास में सबसे पहला किसान आन्दोलन यही था।

सन् १९०७ में लाला जी एवं उनके देश भक्त साथी अजीतसिंह (हुतात्मा भगतसिंह के चाचा) को राजद्रोह एवं सशस्त्र क्रान्ति का षड्यन्त्र रचने के आरोप में देश से निर्वासित किया। देश से निकाले जाने वाले वे प्रथम देशभक्त थे।

१९१४ से १९१९ तक भारत से देश निकाले की स्थिति में वे संयुक्त राज्य अमेरिका में रहे। इस अवधि में उन्होंने "Young India" नामक पुस्तक लिखी। सरकार ने इस पुस्तक को जब्त कर लिया था। इस पुस्तक का पढ़ना भी उस समय अपराध समझा जाता था।

लाला जी नरम दल की नीति को भिक्षावृत्ति की नीति समझते थे। वे इस नीति का प्रबल विरोध करते थे। उन्होंने कहा था—

"An English man hates or dislikes nothing like beggary. I think a beggar deserves to be hated. Therefore, it is our duty to show the English man that we are no longer beggars. Our motto is self reliance and not mendicancy."

अर्थात् एक अंग्रेज सबसे अधिक घृणा एक भिखारी से करता है। मेरे विचार में भिखारी घृणा का पात्र भी है। अतः हमारा कर्तव्य है कि हम अंग्रेज को दिखायें कि हमारा उद्देश्य आत्म निर्भरता है भिक्षा मांगना नहीं। लाला जी को वीरता और निडरता के कारण ही "पंजाब केसरी" कहकर पुकारा जाता था।

सन् १९२१ में "असहयोग आन्दोलन" में भाग लेने के कारण लाला जी को १॥ वर्ष की सजा हुई। १९२३ में केन्द्रीय धारा सभा में उनका निर्वाचन हुआ तथा "स्वराज्य पार्टी" के उप-नेता बने।

१९२८ में जब "साइमन कमीशन" के विरोध में वे एक जलूस निकाल रहे थे तो उन पर पुलिस द्वारा लाठी प्रहार किया गया, जिसके परिणाम स्वरूप वे १५ दिन के बाद इस संसार से चल बसे। लाठी प्रहार की घातक चोट खाने के बाद लाला जी ने जलूस में भाग लेने वालों को सम्बोधित करते हुए कहा था—"मेरे शरीर पर पड़ने वाली लाठी का एक-एक प्रहार भारत में अंग्रेजी राज्य के कफन में एक-एक कील का काम करेगा।"

महात्मा गांधी जी ने उनको श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा था—'Men like the Lala can not die so long as sun shines in the Indian sky." अर्थात् जब तक भारतीय आकाश में सूर्य चमकेगा तब तक लाला जी जैसे मनुष्य नहीं मर सकते।

अन्त में Long bellow के शब्दों में कहा जा सकता है—"Dead he is not, but departed."

अनूपसिंह
आर्य इण्टर कालेज सुभाषनगर देहरादून

पेट, नाक या आत्मा ?

स्व० स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती

[लेख छोटा सा है पर मस्तिष्क के ज्ञान तन्तुओं को झकझोर देता है। आर्य राष्ट्र की मौलिक मान्यता का प्रतिपादन करने वाले इस लेख को तो प्रत्येक युवक याद करले तो अच्छा। —सम्पादक]

आज सारा संसार गरीबी को मिटाने के लिये कमर कसे खड़ा है। हमारे देश में जितनी योजनाएँ चल रही हैं सब गरीबी को निर्मूल करने के लिये विशेषकर पेट भरने के लिये। चारों ओर यही शोर है, कोई भूखा न रहे। परन्तु गरीबी को मिटाने की यह सब योजनाएं लङ्गड़ी हैं।

गरीब दो प्रकार के हैं :—

एक वे जिनका पेट नहीं भरता।

दूसरे वे जिनकी तृष्णा का पेट नहीं भरता।

पेट तो पेट भर अन्न मिलने से भर जाता है परन्तु तृष्णा का पेट तो सारे संसार की सम्पत्ति एक आदमी को दे दो तब भी नहीं भरता। यह जो लखपति और करोड़पति सैंकड़ों प्रकार की बेईमानियां और जालसाजी कर रहे हैं यह पेट भरने के लिये तो नहीं कर रहे। यह सारा पाप तो नाक के लिये किया जा रहा है। संसार में हर आदमी बड़ा कहलाना चाहता है अपनी नाक ऊंची करना चाहता है और आज बड़ा आदमी वह कहलाता है जिसके पास पैसा बहुत है इसलिये आज हर आदमी ईमान बेचकर पैसा कमाना चाहता है इसलिये पैसे की तृष्णा बढ़ती जा रही है। और इसलिये करोड़पति भी अपने को कंगाल कहता है क्योंकि वह अरबपति नहीं है। यदि वह केवल पेट की पूर्ति पर सन्तोष कर सकता तो पेटपूर्ति से बचा हुआ धन वह प्रजा के कल्याण में लगाता। क्योंकि प्रजा के कल्याण में धन लगाने से जो आध्यात्मिक शान्ति अनुभव होती है वह ऊंची नाक के सुख से भी कहीं ऊँची है और जिस देश की प्रजा में इस प्रजा के सुख में सुख अनुभव करने वाले त्याग-धन पुरुषों को सबसे ऊंचा माना जाय वहां ऊंचा हृदय तथा ऊंची नाक दोनों एक दिशा में बढ़ते हैं तब प्रजा की कंगाली बहुत आसानी से दूर हो जाती है क्योंकि—

(१) पेट के पालने के लिये श्रम हर एक करता है।

(२) पेट पालने से बची हुई शक्ति सब एक दूसरे की सहायता में लगाते हैं।

इसी लिये शतपथ ब्राह्मण में लिखा है :—

असुराः स्वेष्वेवास्येषु जुह्वतश्चेरुः अन्योन्यस्मिन् हर्षं देवाः। शतपथ ११-१-८-१

अर्थात् असुर लोग अपने-अपने मुख में हवन करते हैं, देव लोग एक दूसरे में, इस पर किसी विद्वान् ने एक आख्यायिका बनाई है जो बड़ी सुन्दर है। कहते हैं एक समय किसी ने देवों तथा असुरों की दावत की। एक पंक्ति में देवों को बैठा दिया और एक में असुरों को। दोनों के सामने उनके मन चाहे भोजन परोस दिये गये किन्तु एक खेल यह खेला गया कि दोनों की कोहनियों पर एक एक फट्टी रखकर ऊपर से रस्सियों से कस दी गई जिससे उनकी बांह न मुड़ सके, दोनों से कहा गया कि खाइये।

असुर बड़ी उलझन में पड़ गए, गुलाब जामुन, बालूशाही या पेड़ा जो उठाया तो वह मुख में पहुँचने के स्थान में सिर से भी ऊपर निकल गया क्योंकि बांह मुड़ तो सकती नहीं थी।

परन्तु देवों को कुछ कठिनाई न हुई उन्होंने बांह बिना मोड़े अपने हाथ से भोजन उठाकर अपने पड़ोसी के मुख में देना आरम्भ कर दिया और खूब भोजन का रसास्वादन किया।

बस यह पड़ौसी के मुख में भोजन देने से प्राप्त होने वाला आध्यात्मिक सुख ही कंगाली का दूसरा इलाज है। आलस्य श्रम की टांग तोड़ देता और तृष्णा त्याग की। आज आलस्य को दूर करने के किये श्रम की महिमा तो खूब गाई जा रही है परन्तु तृष्णा को शान्त करने के स्थान में उसकी और पुष्टि की जा रही है। इस तृष्णा के तर्पण को ऊंचे स्तर का नाम दिया जा रहा है। जो अपने आराम

पर जितना अधिक व्यय करे वह उतना ही "Higher standard of living" वाला आदमी कहलाता है। इसीलिये तृष्णा की वृद्धि के कारण धन की वृद्धि के कारण धन वृद्धि के साथ 'हाय कंगाली, हाय कंगाली' का क्रन्दन भी बढ़ रहा है और इसी लिये बेईमानी भी पूरे वेग से बढ़ रही है। अत: जब तक तृष्णा के स्थान में त्याग की पूजा प्रचलित नहीं होगी यह बेईमानी बराबर बढ़ती ही जायगी। इस विषय में सबसे बड़े अपराधी समाजवादी तथा साम्यवादी हैं।

परन्तु इसमें अपराध भारतीय समाजवाद तथा साम्यवाद के प्रचारकों का है न कि मार्क्स सरीखे विचारकों का।

मेरे सामने इस समय कार्ल मार्क्स का संक्षिप्त जीवन चरित है, यह मॉस्को के Foreign Language Publishing House से प्रकाशित हुआ है इस पर प्रकाशक की टिप्पणी इस प्रकार है :—

This pamphlet is translated from the text of the article published in volume 26 of the great Soviet Encyclopedia (1954)

इससे स्पष्ट है कि यह ग्रन्थ अत्यन्त प्रामाणिक है जो रूसी विश्व-कोश में से लेकर अनुवाद किया गया है।

इसके निम्नलिखित वाक्य आध्यात्मिकता से सम्बन्ध रखते हैं इस पुस्तक के ९ पृष्ठ पर Rheinische Zciting नामक समाचार पत्र को लक्ष्य करके लिखा हैं कि :—

He launched a bold struggle in its columns against the regime of social, politacal and spiritual oppression which prevailed is prnssia and throughout Germany.

अर्थात् उसने (कार्लमार्क्स ने) इस समाचार पत्र के स्तम्भों में उस अत्याचारमय शासन के विरुद्ध जो कि प्रशिया और सारे जर्मनी में छाया हुआ था एक अतिसाहसपूर्ण संघर्ष छेड़ दिया। यह अत्याचार तीन प्रकार के थे—सामाजिक, राजनैतिक तथा आध्यात्मिक।

यह आध्यात्मिक अत्याचार किसका नाम है ? यही कि प्रजा की सेवा में जो मनुष्य को एक दिव्य आनन्द प्राप्त होता है उससे किसी को वंचित रखना और उसकी आत्मा को कुचल देना।

आगे चलकर पृष्ठ १९ पर हम पढ़ते हैं :—

And just as philosophy finds its material weapon in the proletariat, so the proletariat finds its spiritual weapon in philosophy.

अर्थात् ठीक जिस प्रकार दर्शनशास्त्र को अपना भौतिक शस्त्र सर्वहारा के रूप में प्राप्त होता है इसी प्रकार सर्वहारा को अपना आध्यात्मिक शस्त्र दर्शन के रूप में प्राप्त होता है।

फिर और आगे चल कर पृष्ठ ९१ पर लिखा है :—

Marx's great work—Capital, is a powerful spiritual weapon of the proletariat in its struggle against capitalist slavery.

अर्थात् कार्लमार्क्स का महान् ग्रन्थ कैपिटल, सर्वहारा प्रजा के पूँजीवादी दासता के विरुद्ध संघर्ष में एक शक्तिशाली आध्यात्मिक शस्त्र है।

अब यह आध्यात्मिक शक्ति कहां से प्राप्त होती है सो भी सुनिये। जब मार्क्स १७ वर्ष का था उस समय उसने एक निबन्ध लिखा जो—

Shows that the seventeen year old boy saw the purpose of his life in selfless devotion to markind.

दिखाता है कि इस १७ वर्ष के बालक को अपने जीवन का ध्येय मानव जाति की निष्काम भक्ति में नज़र आया।

मार्क्स ने अपने जीवन में सैंकड़ों सङ्कट झेले और सारे जीवन आर्थिक सङ्कट में रहा, इस सारी संघर्षमय जीवनयात्रा में यह निष्काम लोकसेवा से उत्पन्न होने वाला आध्यात्मिक आनन्द ही तो उसकी सर्वश्रेष्ठ पाथेय था। बस भौतिक सुख सामग्री को इस पाथेय के सामने तुच्छ समझना यही तृष्णा के जीतने का सर्वश्रेष्ठ साधन है और इस तृष्णा-विजय पर ही संसार का भविष्य निर्भर है। केवल भौतिक सामग्री उत्पन्न करने मात्र से संसार की कंगाली नहीं मिट सकती। तृष्णा-विजय भी इतना ही आवश्यक अंग है बस (१) सामग्री उत्पन्न करना।

(२) तृष्णा-विजय की आध्यात्मिक साधना।

यह दो पैर हैं जिनके सहारे मानव-समाज सुख और शान्ति की ओर अग्रसर हो सकता है परन्तु अत्यन्त दु:ख का विषय है कि सारा राष्ट्र अन्न उपजाओ, कपड़ा

उपजाओ, घास उपजाओ, चारा उपजाओ, अण्डे उपजाओ, मुर्गी उपजाओ, मछली उपजाओ तो चिल्ला रहा है किन्तु मनुष्य उपजाओ कोई नहीं पुकारता। यहाँ तक कि विनोबा सरीखे सन्त भी भूमिदान यज्ञ की ओर बढ रहे हैं चरित्र दान यज्ञ की ओर नहीं। यदि हमें अपने देश से रिश्वत-खोरी चोर-बाजारी दूर करनी है तो यह समझना होगा कि

(१) रोग पेट में नहीं, रोग नाक में है।
(२) नाक का अर्थ है तृष्णा।
(३) पेट भरो।
(४) नाक छोटी करो।
(५) पेट भरने के पश्चात् जो बचे उसे नाक लम्बी करने में मत लगाओ उसे मानव समाज की निष्काम सेवा से उत्पन्न होने वाले आध्यात्मिक आनन्द की प्राप्ति में लगाओ।

मेरी सम्पूर्ण साम्यवादी अथवा समाजवादी लोगों से प्रार्थना है कि इस नाक तथा पेट के झगड़े से आगे जो अध्यात्म है उसकी भी चिन्ता करें नहीं तो उनके सारे आन्दोलन लंगड़े रहेंगे। हमें एक वस्तु निर्माण करनी है—चरित्रवान् मानव।

मानव निर्माण का एक मुख्य साधन है—आध्यात्मिक आनन्द द्वारा तृष्णा विजय।

पेट भरो।
नाक सिकोड़ो।
तृष्णा को जीतो।
आत्मा का राज्य स्थापित करो।
लंगड़ापन दूर हो।

यच्च काम सुखं लोके, यच्च दिव्यम् महत् सुखम्।
तृष्णाक्षय सुखस्यैते, नार्हतः षोडशीम् कलाम्॥
योगदर्शन व्यास भाष्य

यत् पृथिव्यां व्रीहि यवं हिरण्यम् पशवः स्त्रियः।
नाल मेकस्य तत् सर्वम् इति पश्यन्न मुह्यति॥

विदुरनीति ७ अध्याय ८४ श्लोक
[वर्णाश्रमसंघ से साभार]

श्री पं० माधवा चार्य जी को खुला चेलेंज

श्री माधवाचार्य जी ने एक पुस्तक "क्यों,, नामकी लिखी है।

उसमें अपने स्वभावानुसार आर्य समाजियों को "दकियानूस दयानन्दी,, आदि गालियाँ बार २ लिखी है उन गालियों का उत्तर तो हम नहीं देंगें पर शास्त्रार्थ सम्बन्धी बातें तो लिखनी आवश्यक ही हैं।

क्यों ? के पूर्वार्द्धि पृष्ट ५० पर श्री माधवाचार्य जी ने लिखा है कि—

"आर्य समाज भी यदि किसी एक भी दर्शन को मानले तो उसकी रेत की दीवार धम्म से गिर जाय। सभी दर्शनों में—मूर्ति पूजा, ईश्वर का अवतार, मृतश्राद्ध जन्मना वर्ण व्यवस्था, तीर्थ और छुवाछूत आदि वैदिक विषय ओत प्रोत हैं।

श्री माधवाचार्य जी उन विषयों को न कभी वैदिक सिद्ध कर सके न कभी कर सकेंगें। अब इन विषयों को सभी दर्शनों में ओत प्रोत बताते हैं।

मैं अमर स्वामी परिव्राजक और पं० विहारी लाल शास्त्री काव्यतीर्थ हम दोनों इन विषयों पर शास्त्रार्थ करने को उद्यत हैं। पहिला शास्त्रार्थ मूर्ति पूजा पर होगा, दूसरा ईश्वर के अवतार पर तीसरा मृतक श्राद्ध पर होगा, इसी प्रकार अन्य विषयों पर भी शास्त्रार्थ होंगे।

श्री माधवाचार्य जी को रजिस्ट्री पत्र भेज दिया गया है। यदि वह अपने स्वभावानुसार किसी शास्त्रार्थ स बचने का यत्न करेंगे तो पराजय समझी जायगी।

अमर स्वामी परिव्राजक
संन्यास आश्रम गाजियाबाद

विहारी लाल शास्त्री काव्यतीर्थ
रामपुर गार्डन बरेली

दुष्ट हमारा स्वामी न बने

मा नो दुःशंस ईशत् ।। ऋग्वेद १-२३-६

दुष्ट हमारा स्वामी न बने । इस विषय में सदा सावधान रहना चाहिए कि हम कभी दुष्ट के अधीन न हो जावें । व्यक्ति में मन इन्द्रियां आदि पदार्थ दुष्ट भावों के अधीन न हो जावें । समाज में दुष्ट दुराचारियों को बड़े बड़े पदों पर न रखा जावे । सभाओं और परिषदों में दुष्टों को अधिकार न दिया जावे तथा किसी भी सार्वजनिक स्थान में दुष्ट का सम्मान न किया जावे । जो दुराचारियों का सम्मान करेंगे वे भी गिर जायेंगे ।

प्रेषक—मुलखराज भल्ला

संपादक के नाम पत्र

अमेरिका से आर्य सन्यासी महात्मा आनन्द स्वामी का आशीर्वाद

ARYA DEWAKAR WANICA
STRAAT 210
PARIMARIBO Susrinan
S. America 15,10-69

आर्य समाज की आशाओं के केन्द्र प्रो० श्यामराव जी सप्रेम नमस्ते

पत्र आप का मिला, हार्दिक प्रसन्नता हुई कि आर्य समाज का युवक हृदय जाग उठा है और वह अपना दृढ़ संगठन बना रहा है, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, महाराष्ट्र के आये युवकों का एक सूत्र में बांधा जाना बड़ा आशाप्रद चिन्ह है—बूढ़े लड़ते झगड़ते हैं तो उन्हें अपना मनोरञ्जन कर लेने दीजिये-प्यार से, नम्रता से उनका मान रखते हुए उन्हें बतलाइये कि यह वैदिक मार्ग नहीं है, वह अवश्य समझेंगे, आज नहीं तो कल—यदि कल भी नहीं तो फिर मृत्यु तो समझा ही देगी—

आप अपने युवक संगठन को हर प्रकार की पार्टीबाजी से बचाते हुए महर्षि के मिशन को अग्रसर करते चलिये—मेरा हार्दिक आशीर्वाद आपके साथ है अपने युवक संगठन को आध्यात्मवाद के रंग में रंगते रहिये ताकि यह फिसलने न पाये।

योरोप तथा अमेरिका इस समय ऐसे स्थान पर खड़ा है कि यदि उसका ठीक पथ प्रदर्शन न हुआ तो यह आप नष्ट होगा ही, साथ दुनिया का भी नाश कर देगा—स्वामी विवेकानन्द जैसी लग्न रखने वाले ५-७ युवक ऐसे तैयार कीजिये जो अंग्रेजी में धारा परवाह भाषण दे सकें, निश्चिय ही वैदिक सिद्धान्त इन लोगों को अपनी ओर खैंच लेंगे, आर्य समाज अब कूप मण्डूक बने नहीं रहना चाहिये, इसे अब संसार के सामने भिन्न भिन्न देशों की भिन्न भिन्न भाषाओं के द्वारा आना चाहिये—मैं १५ अगस्त को आकाश यात्रा करता लगभग २० हजार मील यहाँ पाताल देश में आ गया हूं—मार्ग के देशों से नगरों में जहाँ कहीं योरोपियन-अमरीकन लोगों को मैंने वेद की बातें सुनाईं, उन्होंने बड़ी श्रद्धा भक्ति से सुना—अभी मुझे अमरीका, योरोप तथा अफरीका में जनवरी के अन्त तक वेद सन्देश सुनाना होगा—तब शायद भारत आना हो सके।

सेवक :—आनन्द स्वामी सरस्वती

●

राजधर्म नए वर्ष में प्रवेश आप सब की शुभकामनाएँ

यादनगर

सेवा में

पूज्य प्रो० चरण स्पर्श

बाद कुशलता के समाचार इस प्रकार से है कि राजधर्म को मैंने पूरे वर्ष आनन्द के साथ पढ़ने का क्रम जारी रक्खा है। इसमें पढ़ने के लिये बहुत ही उच्च कोटि की सामग्री आती है और मुझे खुशी है कि इस क्रांतिकारी पत्रिका को नव युवक बहुत ध्यान के साथ पढ़ते हैं। और इसीलिए आपके सब राजधर्म अंक ध्यान मग्न हो कर पढ़े जाते हैं कि उनमें क्रांति के शोले नजर आते हैं। ये सोये हुए शेरों को अवश्य जगाकर रहेगी ये भारत की साधारण और असाधारण पत्रिका है। साधारण लोग पत्रिका में कोई गलती नहीं निकालते बल्कि इस की हद से ज्यादा प्रशंसा करते हैं। मुझे आशा है कि आगामी वर्ष में इसका चौगुना और आठ गुना प्रचार होगा इससे भी अधिक होने के आसार नजर आते हैं आपने ऐश्वर्य को लात मारकर जो अपने जीवन की आहूति दी है अब वह अवश्य ही रंग लायेगी। आपने धन-दौलत को लात मारकर अपने जीवन को चमका डाला धन्य हैं। आप जैसे महा मानव जो नव-युवक जागरण में लगन लगा कर आनन्द के साथ योग्य मंडली के साथ धर्म पथ पर अग्रसर हो रहे हैं।

प्रो० साहब पत्रिका में नव युवकों को ब्रह्मचर्य के बारे में तो जहाँ तक संभव हुआ करे अवश्य ही कुछ पाठनीय सामग्री प्रस्तुत करने की कृपा किया करें। वीर रस की कविता तो बहुत ही अच्छी लगती हैं। आप जहाँ तक भी हो सके और जैसे भी हो सके कालिज के लड़कों को भी इस क्रांति में मिलाने के लिए कोई ठोस कदम उठाने का भरसक प्रयत्न करें। भगवान करे सफलता आपको वरण करे। मेरा विचार है कि कालिजों में प्रचार कर के आप पूरे भारत में आर्य राज्य की स्थापना करने में सफल होंगे।

गलतियों के लिए क्षमा चाहता हूं। नव युवकों के नेताजी आपको सौ-सौ बार नमस्कार।

आपका नया सेवक—
प्रतिपाल सिंह c/0 राम स्वरूप
गाँव यादनगर : डा० बाबूगढ़ : जिला—मेरठ

●

सेवा में,   नीमड़ी वाली
सम्पादक जी, सादर प्रणाम !   २२-१०-६९

राजधर्म का १० अक्तुबर का अंक प्राप्त हुआ। आपके समस्त लेख बड़े जोशपूर्ण होते हैं। सम्पादकीय तो विशेषकर जोशीला होता है। हमने गांधी जी के विरोध में भी लेख पढ़े हैं मगर यह अंक पढ़ कर तो विशेष आश्चर्य हुआ कि "गांधी जी ने इस पृथ्वी पर जन्म लेकर सिवाय राष्ट्र-द्रोह के और कुछ किया ही नहीं। ब्रह्मदत्त भारती का लेख तो उनके पक्ष में हैं कि ईसाई पादरियों के अनेक प्रयत्नों के बावजूद भी वे ईसाई नहीं बनाये जा सके। मगर इससे क्या जो राष्ट्रद्रोही हो उसका विधर्मी न बनने से क्या लाभ ? मैं आपके लेखों से बहुत सहमत हूँ—पर देशहित के लिये गांधी जी ने लेशमात्र भी नहीं किया ?

मेरा दृढ़ विश्वास है कि जो युवक राजधर्म के किसी भी अंक को पढ़ लेगा तो उसमें एक नई चेतना प्रस्फुटित होगी।

प्रत्येक अङ्क में यदि कम से कम एक स्वास्थ्य संबन्धि लेख प्रकाशित हो जाए तो सोने पर सुहागा होगा।

भवदीय,
इन्द्रसिंह बोहरा

पूज्य प्रोफेसर साहब

सादर नमस्ते

आपका लोक प्रिय पाक्षिक पत्र "राजधर्म" जो कि गांधी शताब्दी पर निकला पढ़ा तथा प्रत्येक लेख पर अत्यन्त उत्साह वर्धन हुआ। आर्य समाज में जो पत्र पत्रिकाएं छपती हैं उनमें केवल धार्मिकता का ही अंश होता है राष्ट्रीयता की ओर युवा पीढ़ी का ध्यान आकर्षित करने वाले लेख नहीं होते। आपके पत्र में विशेषता यही है कि आप सब अङ्कों को लेकर विशेष रूप से क्रांतिकारी विचारों का समावेश कर तथा शिथिलता को निकालकर ही अपना पत्र छापते हैं अतः अत्यन्त उपयोगी है।

कृपया आप १ प्रति गांधी शताब्दी के उपलक्ष में जो छपा था "राजधर्म" निम्न पते पर भेज दें अत्यन्त आभारी रहूँगा।

आपका युवक
अनिल कुमार शास्त्री

●

आदरणीय प्रो० श्याम राव जी,

सादर नमस्ते।

आप के 'राजधर्म' की बड़ी प्रतीक्षा करता रहता हूं। और १५ दिन के लम्बे समय में उसे कई बार पढ़ता हूं। एक बार 'अंक' को हाथ में लेने के बाद जब तक सारा का सारा पढ़ न लिया जाये तब तक उसे छोड़ने को मन नहीं करता। मैं आशा करता हूँ कि आप इसे जल्दी ही साप्ताहिक करेंगे। और सम्पादकीय लेख पढ़ कर ऐसा महसूस होता है मानों नव युवकों के अंदर फिर से एक क्रान्ति पैदा होगी, हर नव युवक का हृदय मचल उठता है।

आप इस पत्रिका के द्वारा जो आर्य समाज का प्रचार व प्रसार कर रहें है इसके लिए आप को बधाई है 'स्वीकार कीजिए'।

आपका—
नरेन्द्र कुमार प्रभाकर
भिवानी

●

श्रीमन् महोदय, नमस्ते !

मुझे राजधर्म की १ प्रति आर्य समाज हकीकत नगर से मिली। आपकी विचार धारा को सुनने का शुभावसर जिला आर्य महा सम्मेलन सहारनपुर में प्राप्त हुआ। राजधर्म पत्रिका जादू का असर डालती है। आज एक सप्ताह से एक अंक पढ़ रहा हूं। जब भी पढ़ने बैठता हूं। एक नई बात पढ़ने को मिलती है। मैं आज तक किसी पत्रिका को इस तरह से इतने लम्बे समय तक नहीं पढ़ता था। परन्तु आज भी राजधर्म का वह अंक मुझसे पृथक नहीं होना चाहता।

मैंने परसों १० रु० वार्षिक शुल्क सभा की ओर से भिजवा दिया है। २ ग्राहकों का शुल्क १ नवम्बर के पश्चात् भिजवा रहा हूं।

मुझे आशा है कि सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् अपने मार्ग पर निरन्तर प्रगति की ओर बढ़ती रहेगी। कुत्ते भोंकते ही रहते हैं परन्तु कारवाँ अपने मार्ग पर चलता रहा है। ठीक इसी प्रकार कुछ नेता गण आप पर कीचड़ उछालना चाहते हैं और प्रयत्न कर रहे हैं लेकिन उन दुष्टों को पता नहीं कि यह दृढ़ निश्चयी है सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्।

भवदीय
चन्द्रपाल आर्य
प्रधान—आर्य कुमार सभा जनकनगर
बाजोरिया मार्ग, सहारनपुर (उ० प्र०)
नरेला

●

पूज्य प्रोफेसर साहब, ७-११-६९

सादर नमस्ते,

गत एक वर्ष से 'राजधर्म' युवकों का हृदय झकझोर देने वाली पत्रिका पढ़ने को मिल रही है। इसकी सामग्री पढ़कर चित्त बड़ा प्रसन्न होता है कुछ सामाजिक कार्य की प्रेरणा मिलती है, अपना स्वत्व कुछ जाग रहा है ऐसा आभास होता है पत्र को आदि से अन्त तक पढ़ने की होती है। देश के हर नवयुवक के पास यह पत्र हो ऐसी मैं कामना करता हूं।

भवदीय,
डा० धर्मवीर
नरेला (दिल्ली)

●

(हैडपोस्ट आफिस पटियाला से श्रीमहेन्द्रसिंह मस्ताना पंजाबी में लिखते हैं।)

श्रीमान जी,

प्रार्थना है कि आप द्वारा भेजा गया आसन प्राणायाम विशेषांक मिला। भाषा कम जानते हुए भी मैंने इसे पढ़ा जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। मुझे आसन प्राणायाम से विशेष लाभ हुआ है।

आप से निवेदन है कि इसे पंजाबी भाषा में छापकर मुझ जैसे पंजाबी भाषी युवकों पर उपकार करें। कृपा होगी छपते ही शीघ्र भेज दें मैं इसका दिल खोलकर प्रचार करूंगा।

आपका
महेन्द्रसिंह मस्ताना

●

सम्पादक श्री प्रो० श्यामराव जी······सादर नमस्ते।

राजधर्म अपना प्रथम वर्ष सफलता पूर्ण समाप्त कर रहा है। राजधर्म में जो सामग्री वर्ष के अन्तर्गत मिली है ऐसी सामिग्री अन्यत्र किसी भी पत्र पत्रिकाओं द्वारा नहीं मिली। प्रत्येक अंक मिलने पर जब तक आद्योपान्त नहीं वांच लिया तब तक पत्र को छोड़ने को मन नहीं हुआ। कभी यथा तथा यदि शेष रह भी गया तो किसी विशेष कार्य के कारण रहा होगा। आपके सम्पादकत्व को हार्दिक धन्यवाद।

निवेदक:— हरीकिशन-प्रेमराज आर्य
भूत पूर्व मन्त्री आर्य समाज बापू नगर
अहमदाबाद २१

●

पौली
१६-१०-६९

श्री आदरणीय सम्पादक जी सादर नमस्ते !

आगे निवेदन है कि आपका राजधर्म पत्र आज तक

ठीक समय पर आता रहा है।

राजधर्म मुझे बड़ा प्रिय है इसको मैं कई बार पढ़ता रहता हूँ मैं समझता हूँ कि नव मार्ग बताने वाली कोई नई पुस्तक मिल गई है। इसमें न्याय और सत्य के आधार पर ही लेख देखने को मिलते हैं एक बात से मुझे बड़ी खुशी होती है कि निर्भीकता से सत्य को प्रगट कर देते हो सत्य लिखने में किसी से समझौता नहीं करते इससे आपकी शोर्यता त्याग भावना सत्य वक्तृता प्रगट हो रही है। आर्यराष्ट्र निर्माण में तो राजधर्म का मुख्य उद्देश्य है ही इसमें कोई शक नहीं और भी धर्म सम्बन्धी शिक्षाएं राजधर्म से मिलती रहती हैं मनुष्य जीवन की काफी सामग्री है।

मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि राजधर्म दिन पर दिन तरक्की करता जाए देश विदेश में व्यापक रूप धारण कर जाय मेरी सम्मति में कुछ लेख राजधर्म में ऐतिहासिक घटना के आते रहें तो अच्छा हो। अपने पूर्वजों के कारनामों का पता चलता रहे वे भी हमारे आदर्श हैं। योग्य सेवा लिखें।

भवदीय

६३९ अध्यापक आर्य पाठशाला

पौली जीन्द

कुछ आलोचना

श्रीयुत श्यामराव जी,

सादर नमस्ते।

मैं कुछ महीनों से आपका पाक्षिक पत्र 'राजधर्म' पढ़ता रहा हूं। प्रारम्भ के कुछ अंक अच्छे लगे और आपका उद्देश्य भी ठीक प्रतीत हुआ पर पिछले कुछ अंकों से बड़ी ही निराशा हुई और ऐसा लगता है कि आप अपने उद्देश्य से भटक रहे हैं।

अगर आप प्रशंसा से ही गद्गद् होना चाहते हैं तो वह आपको भरपूर मिलेगी क्योंकि आप में प्रतिभा व योग्यता है। पर यदि आप निश्चित अवधि के अन्दर निश्चित लक्ष्य की पूर्ति की सुनियोजित योजना बनाएं और योजनाका प्रस्तोता याकार्यवाहकनेता उसकी सफलता या असफलता की सब जिम्मेदारी अपने ऊपर लेकर चले और उसे सफली भूत करें तब आपकी कार्य प्रणाली दूसरी प्रकार की होगी। नहीं तो सफलता मिलने पर साथियों का साधन देने या विश्वासघात करने इत्यादि की या विरोधियों की चालों की निन्दा। यही सब होता आया है और होता रहेगा। हां महर्षि दयानन्द के जीवन में यह दोष रत्तीभर भी नहीं है उनका समस्त जीवन प्रयत्न, पुरुषार्थ और सफलता का ही जीवन है।

पहिले मैं एक बात आर्यसमाज के विषय में लिखुंगा फिर कुछ बातें 'राजधर्म' मासिक पत्रिका के विषय में।

आर्य समाज के विषय में मेरा मत यह है कि आर्यसमाज में राजार्य सभा, विद्यार्यसभा और धर्मार्यसभा अलग-अलग चलें उनमें परस्पर सहयोग अवश्य हो। वर्तमान आर्यसमाज संगठन को 'धर्मार्य सभा' का रूप समझा जाय और आप 'राजार्य सभा' अलग से बनावें।

कारण—सरकारी कर्मचारा और सेना के लोग राजनीति में भाग नहीं ले सकते वे राजार्य सभा के सदस्य न हो सकेंगे धर्मार्य सभा के सदस्य हो सकेंगे। इसी प्रकार अधिकांश विद्यार्थी वर्ग का धर्मार्य सभा में भाग लेना ज्यादा उचित होगा। 'राजनीति भी धर्म का एक अंग है' इस युक्ति से यदि आपने दोनों को एक करने का प्रयत्न किया तो हित विशेष तो कुछ भी न होगा हां अहित अवश्य होगा। फिर राजनीति के शास्त्रीय सिद्धान्त (या Theoretical Politics) और व्यावहारिक राजनीतिक कार्य (active politics) में भी भेद करना होगा। केवल मात्र पहिला धर्म का अविभाज्य अंग है दूसरी की व्यवस्थायें और प्रक्रियायें तथा कार्य प्रणालियां बदलती हुई परिस्थितियों में बदलती रहेंगी। यदि आप यह कहें कि मानव जीवन का समस्त क्रियाकलाप ही धर्म का रूप है तब तो इस युक्ति से अधर्म में भी धर्म निहित है।

राजधर्म के प्रथम वर्ष का २३ वां अंक जो १०

अक्टूबर १९६९ को प्रकाशित हुआ मेरे सामने है। मैं इसमें निम्न बातें खोजता हूँ।

१ इनमें से वे लेख कौन से हैं जिन्हें मैं बार-बार पढ़ना चाहूँगा। जो धर्म के शाश्वत स्वरूप का व्याख्यान करते हैं। जिन्हें पढ़कर मेरा जीवन और अधिक शुद्ध पवित्र तथा क्रियाशील बनेगा।

२. इनमें से वे लेख कौन-कौन से हैं जिन्हें पढ़कर मुझे हर्ष होता है और मेरे आनन्द में वृद्धि होती है और जिन्हें मैं किसी अन्य को सुनाऊँ तो उसे भी आनन्द हो वह लेख की सराहना करे और उसे दुबारा सुनाने का और आग्रह करे।

३. इसमें वे लेख कौन से हैं जिन्हें विश्व का निष्पक्ष विद्वत् समाज सराहना और प्रशंसा की दृष्टि से आदृत करेगा। जो विश्व साहित्य की विभूति बनेंगे।

४. इसमें वे लेख कौन से हैं जो हमें एक विशेष प्रकार की चेतना से भरकर दिशा विशेष में क्रियाशील करते हैं।

मेरी इन चार कसौटियों पर इस अंक का एक भी लेख नहीं उतरना तब मैं राजधर्म में केवलमात्र आपकी प्रशंसा पढ़ने के लिये क्यों लालायित होऊंगा।

आप ग्राहक संख्या चाहे पचास हजार या अधिक भले ही कर लें और इसे अपनी कृतकार्यता मान ले पर उद्देश्य बड़ा है यह साध्य है या साधन ? एक पार्टी खड़ी करिए, चुनाव लड़िए, कुछ सीटें जीतिये और हो गई 'वैदिक धर्म की जय'।

इस अंक में महात्मा जी की कमियों पर तो खूब कीचड़ उछाला गया है पर उनकी अच्छाइयों पर दृष्टि-पात भी नहीं किया गया है। हमारा उद्देश्य क्या है अच्छाइयों का प्रचार करना या बुराइयों का प्रचार करना। या केवल अपनी प्रशंसा करना और दूसरों पर कीचड़ उछालना ? अगर सत्य बात कहने का ही दावा है तो मिसमेयो ने 'मदर इंडिया' पुस्तक में भी तो सत्य घटनाओं के ही उद्धरण दिए हैं। आपने अपने सम्पाद-कीय लेख के अन्तिम भाग में लिखा है कि आज नहीं कल महात्मा को महर्षि की शरण में आना पड़ेगा'। महात्मा जी तो जीवित नहीं है अतएव यह वाक्य शक्ति-हीन और अनर्गल है।

हिंसा और अहिंसा पर एक पक्षीय दृष्टिकोण प्रस्तुत कर यदि सम्यक् विचार किया गया होता तो वह उपयोगी होता। आपका पत्र पढ़ने से ऐसा लगता है मानों 'अहिंसा' कोई गर्हित सिद्धान्त है।

'कुछ तड़प कुछ झड़प' के अन्तर्गत प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु की बातें ठीक हैं पर उनका सम्पादन और सुन्दर ढंग से होना चाहिए था तथा शीर्षक भी समुचित नहीं है क्योंकि उन बातों में न तो तड़प है न झड़प। सारे अंक में यही एक काम का लेख है।

रमेश बयरा की 'कहानी' 'गांधी बाबा की कसम' परिस्थिति का उद्घाटन मात्र करके रह जाती है। कहानी पढ़ने से पहिले भी। तथ्य तो पाठक को भी विदित रहते हैं पर दिशा बोध और निष्कर्ष यही कहानी या लेख या कविता के प्रभाव को अंकित करते हैं। organiser की कहानियां बहुत सुन्दर होती हैं।

पिछले अंक में भी 'आल इंदिरा रोडियो' जैसे पिछले और निरर्थक लेख छपे थे। अगर केवलमात्र पृष्ठों को काला करना ही उद्देश्य है तो फिर सब ठीक (१) ही है। पिछले लेख लिख छाप व पढ़कर आप या कोई कुछ देर के लिये खुश भले ही हो ले, पर इनसे न तो धर्म का प्रचार होता है न विरोधी पर वार, और न इनसे निष्पक्ष उदासीन की सहानुभूति ही प्राप्त होती है।

विरोधी पर प्रहार करना ही है तो इस तरह करिए कि उसका कलेजा तक छलनी हो जाय। तड़फड़ाए पर जवाब न दे सके। उसकी किसी से चर्चा न कर सके। अपने कुकृत्य या विचार पर शर्माये, भय खाए। सात पुश्त तक उत्तर न दे सके और लड़खड़ाकर उत्तर देने की चेष्टा करे तो अपनी ही युक्तियों के जल में फंस जाए। महर्षि दयानन्द के सत्यार्थ प्रकाश में ऐसे ही भीषण उत्तर हैं जिनका विरोधी आज तक समुचित उत्तर नहीं खोज सके हैं।

राजनीति के सम्बन्ध में एक बात मुझे बहुत खटकती है कि आजकल के राजनेता पिछली घटनाओं का 'शव परीक्षण' करने में ही अपनी शक्ति का अपव्यय और अपनी बुद्धि कौशल का प्रदर्शन करते रहते हैं। नेता (Leader) वह है जो आगे ले जाता है न कि विगत इतिहास का ही विभिन्न रंगों में उद्घाटन ? करता रहता है। जो भविष्य को नहीं देख सकते जो आने वाली विपत्ति से सावधान नहीं करते उसके लिए तैयारी नहीं करते या कराते और जो सफलता के द्वार तक नहीं पहुँचाते वे बुद्धिमान लीडर कैसे ?

हमें भूतकाल की बातें कम बतलाइए भविष्य में होने वाली बातों के प्रति सावधान करिये, तैयारी करिए और कराइए। 'निष्काम कर्मयोग' की रीति से नहीं बल्कि 'सीमित समय(अवधि)में सीमित व निश्चित लक्ष्य की पूर्ति के मार्ग पर क्रमशः प्रगति निरन्तर होनी ही चाहिए।

हमारा जीवन दर्शन और राजनीति ऐसी होनी चाहिए जिसमें मुसलमानों, ईसाइयों और अन्य धर्मावलम्बियों को भी सम्मान पूर्वक जीवन यापन करने और प्रगति करने की सुविधा हो वे (Class II citizan) दूसरी श्रेणी के नागरिक न समझें। हम उन्हें सत्य से और प्रेम से जीतें न तो उन्हें तलवार के घाट उतारें न उन्हें देश निकाला दें और न उनका बलात् धर्म परिवर्तन हों। हां अवांछनीय विदेशियों वे चाहे जिस धर्म के हों निकाला जाय।

पता नहीं आप सम्पूर्ण पत्र पढ़ेंगे भी या नहीं क्यों कि यह अप्रिय और अरुचिकर भी हो सकता है फिर भी मैंने सद्उद्देश्य से सत्पात्र तक अपनी बात पहुँचाने का प्रयत्न किया है। शुभं भूयात्।

आपका हितैषी
गंगा प्रसाद विद्यार्थी
D 2 p& t क्वार्टर्स
जैसोर रोड, कलकत्ता—८

नौजवानो ! अभी से तैयारी करो

आपको यह जानकर बेहद खुशी होगी कि सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् की ओर से युवकों में क्रान्ति की आग प्रज्जवलित करने और आर्यराष्ट्र की स्थापना के लिये तड़प पैदा करने के लिये आगामी वर्ष मई की छुट्टियों में एक अत्यन्त विशाल तथा ऐतिहासिक प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया जायगा। १० दिन के इस शिविर में कम से कम ५०० तथा अधिक से अधिक १००० युवक भाग लेंगे। शिक्षार्थी की कम से कम आयु १८ वर्ष होगी और शैक्षणिक योग्यता कम से कम मैट्रिक पास होगी। शिविर का स्थान महा पराक्रमी कर्ण की ऐतिहासिक नगरी करनाल (हरयाणा) में होगा। शारीरिक शिक्षण और बौद्धिक का प्रबन्ध बड़े अनुभवी, देश के माने हुए विद्वानों के द्वारा होगा। भोजन, शयन, मनोरंजन आदि का भी ऐसा शानदार प्रबन्ध होगा कि मन प्रसन्न हो जायगा। सारे देश के कोने-कोने से युवक चुनकर भेजे जायेंगे। शुल्क बहुत कम—नहीं के बराबर होगा। जो युवक तथा युवक संगठन इसमें भाग लेने के इच्छुक हैं वे अभी से अपना परिचय आदि लिखकर भेजें तथा शिविर की उत्सुकता से प्रतीक्षा करें।

मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्
मन्दिर मार्ग—नई दिल्ली-१

शहीदों की चिताओं पर……

निजाम हैदराबाद की निरंकुश बर्बरता और धर्मान्धता की ईंट से ईंट बजा देने के लिये जब आर्य वीरों ने संघर्ष का बिगुल बजा दिया तो उसमें बीदर जिला(मैसूर)के हलीखेड़ निवासी भाई बंशीलाल जी ने जिस पराक्रम और बलिदान का परिचय दिया वह हमारे लिये इतिहास का स्वर्णिम पृष्ठ है। मां भारती के इस वीर पुत्र की पावन स्मृति में हलीखेड़ में १, २, ३, जनवरी १९७० को विशाल सम्मेलन का आयोजन किया गया है। इसकी सफलता के लिये अभी से उच्चस्तर की तयारी आरम्भ हो चुकी है। आप भी इन तिथियों को अपनी डायरी में नोटकर वहाँ पहुँचने का निश्चय करें।

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् का क्रान्तिकारी पाक्षिक पत्र इस अवसर पर एक विशेषांक निकालेगा। जिस किसी सज्जन के पास कोई मौलिक खोजपूर्ण लेख अथवा चित्र इस सम्बन्ध में हो तो भेजकर अनुगृहीत करें।

—सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्

जन मानस के नेता सरदार पटेल

● कृष्णदत्त

जीवन एक संग्राम है जिस से निर्बल की हार और सबल की जीत होती है। यह मूल सिद्धान्त है। कड़ाके की सर्दी पड़े तो कमजोर पेड़-पौधे मुरझा जाते हैं। दुर्भिक्ष के समय में निर्धन भूख की मार से प्राण त्याग देते हैं। यदि कभी सामाजिक विप्लव होता है, तो बलवान अपनी सुरक्षा संघर्ष से कर लेते हैं, गरीब पिस जाते हैं। इस सिद्धान्त के आधार पर संग्राम से कोई बच नहीं सकता उसे अवश्य एक पक्ष बनना पड़ता है यदि कोई रोयेगा गिड़गिड़ायेगा बचने के लिये मुँह में घास दबायेगा तो उस पर कुछ देर के लिये दया तो हो सकती है। किन्तु क्षमा नहीं किया जा सकता। शक्ति का मुकाबला तो शक्ति ही करेगी। समझौता भी तो दो शक्तियों का बल के आधार पर ही हो सकता है। निर्बलता के आधार पर नहीं। जैसे लोहे में गर्म लोहा ही मिल सकता है।

संग्राम के लिये सेना की आवश्यकता पड़ती है। और उसके लिये भी एक दक्ष सेनापति की। वही उन्हें आगे बढ़ाता है। सेनापति में आवश्यक है कि प्रतिशोध की अग्नि सदा प्रज्जवलित रहे। उसके खून में उबाल रहे और बाहें सदा फड़कती रहें। वह नीति निपुण अवसर को न चूकने वाला हो वह बाहर के हमलों के लिए सदा मैदान में डटा रहे। साथ ही कुशल व्यवस्थापक भी हो जो सहायक अधिकारियों का विश्वास पात्र बना रहे जिससे अनुशासन बना रहे। अन्यथा विद्रोह होना सदैव सम्भव है। यह विजय का मार्ग है जीवन इसी का नाम है। महापुरुष वही होता है। जो संघर्ष से सदा टकराते हुये आगे बढ़ता है तथा अपना आन्दोलन सदा जारी रखता है।

आज हम एक ऐसे ही महापुरुष के जीवन पर लिखने चले हैं। जो इस सिद्धान्त की साक्षात् प्रति मूर्ति थे। वे हैं, स्वर्गीय सरदार वल्लभ भाई पटेल। आप जन्म से ही विद्रोही थे। कदम आगे बढ़ाकर कभी पीछे हटाने की तो बात दूर रही विचारते भी नहीं थे। आप अत्यन्त गम्भीर थे। बोलते कम थे। काम अधिक करते थे। जो कहते थे। इसी लिए आपके शब्दों का वजन सदा सुनने वालों पर पड़े बिना न रह सका। साधारण किसान के घर में जन्म लेने के कारण आप गरीब किसानों तथा मजदूरों के दुखों से अच्छी प्रकार परिचित थे। करुणा के आप गम्भीर समुद्र थे चाहे कभी दुर्भिक्ष पड़ा है अथवा बाढ़ आई आप सेवाओं के लिये आगे रहते थे यदि राज्य की ओर से अनुचित कर जनता पर थोपें जाते तो आप पहले उसकी जाँच करते और फिर सरकार के विरुद्ध आन्दोलन छेड़ देते। और तभी दम लेते जब आप का बात पूरी हो जाती। एक बार आपने लोक मान्य तिलक की बरसी मनाने के लिए हजारों स्त्री पुरुषों की संख्या में जलूस निकाला तो पुलिस ने आगे बढ़ने से रोक दिया। आपने सभी को वहीं बैठने का आदेश दे दिया पुलिस के डंडे बरसते रहे किन्तु कोई भी टस से मस न हुआ अगले दिन आठ बज तक वहीं बैठे रहे। इसी दिन से जनता ने आपको सरदार की पदवी से विभूषित किया। अब हमारे चरित्र नायक राष्ट्रख्याति के नेता बन चुके थे। आप स्वतन्त्रता आन्दोलनों में सदा अग्रणी रहते थे। गांधी का तो केवल नाम ही होना था। आप ही सदा सफल संयोजन करते थे। आपकी संगठन शक्ति अद्‌भुत थी। शौकत अली तो आप को बर्फ से ढ़का ज्वालामुखी कहते थे किन्तु हम तो सरदार को ज्वालामुखी ही मानते हैं।

विद्रोह को दबाने में कौन कसर रख छोड़ता है। लम्बे लम्बे कारावास तथा अन्य यातनाएं भी दी जाती हैं। यह अग्नि कुछ दिन दब तो सकती है किन्तु बुझ नहीं सकती। इसी प्रकार अंग्रेज सरकार ने हमें दबाने में कोई कसर न उठा रखी परन्तु अन्त में सरकार को झुकना पड़ा कांग्रेस ने भी चुनाव में भाग लिया आठ प्रदेशों में कांग्रेस की सरकार गठित हुई जिस का नेतृत्व सरदार पटेल के

सफल हाथों से हुआ। समिति के विरुद्ध किसी की हिम्मत नहीं होती थी। क्या मजाल कि कोई सिर उठा सके एक बार मध्यप्रान्त के मुख्यमन्त्री डा० खरे साहस किया परन्तु उसे त्याग पत्र देने के लिये विवश होना पड़ा। सरकार ने भारत स्वतन्त्र होने की घोषणा की किन्तु मुस्लिम लीग रास्ते में रोड़े अटका रही थी तथा जिन्ना ने कहा था कि अगर मुसलमानों की उपेक्षा की गई तो देश में तलवारें चल जायेगीं। आपने स्पष्ट शब्दों में कहा।

"हम अंग्रेजों से भी आजादी के लिए लड़ेगे और यदि मुसलमान रास्ते में रोड़ा बनेंगे तो उनसे भी लड़ेंगे।" तलवार का जवाब तलवार से दिया जायेगा, खून की नदियाँ बहानें वालों को पूरी सजा दी जायगी।

भारत स्वतन्त्र हुआ दुर्भाग्य से गांधी जी की गलत नीति सरदार पटेल के अधिकार का हनन करके नेहरु जी को प्रधान मन्त्री बनाया। जब कि कांग्रेस का भारी बहुमत आपके साथ था। आपसे लोगों ने इसका कारण पूछा तो आपने स्पष्ट कहा नेहरु जी किसी के नीचे दब कर कार्य नहीं कर सकते जब कि मैं छोटे और बड़े दोनों पदों पर कार्य कर सकता हूँ। देश के हित में यही ठीक है। स्वाधीनता मिलने के बाद डर था कि समस्त देश में विप्लव हो जायेगा रितासतें अलग से अपनी स्वतन्त्र होने की घोषणा करेगी तथा मुस्लिम जनता विद्रोह कर देगी। देश में अराजकता फैल जायेगी ये डर निराधार नहीं थे। स्वाधीनता देते हुये अंग्रेज इन विप्लवों का बीज बो गये येहिन्दुस्तान की ६०० से अधिक रियासतों को भी मनमानी आजादी के लिये उकसा गये थे। हिन्दुस्तान मुस्लिम जनता को खून बहाने के लिये तैयार कर गये थे किन्तु सरदार की कूटनींतिज्ञता ने सब चालों को परास्त कर दिया इन्हें भारतीय संघ में मिलाना कोई बच्चो का खेल नहीं था सच पूछो तो सरदार के दृढ़ हाथों से ही भारत का नवनिर्माण हुआ। नहीं तो भारत और खंडित होता जूनागढ़, हैद्राबाद, और काश्मीर की समस्या सामने आयी पहले दो को तो सरदार ने अपनी सूझ-बूझ से जल्दी ही हल कर दिया तथा उनका भारत संघ में विलय हो गया किन्तु काश्मीर के मामले में जवाहर टांग अड़ बठे और उसका बोझा अपने ऊपर ले लिया जो आज भी ज्यों की त्यों उलझी हुई है।

आज जिस मुस्लमान शब्द के सम्बोधन पर ही साम्प्रदायिकता भड़काने का केस चल जाता है। देखें लखनऊ में भाषण देते हुये पटेल जी क्या कह हैं। "मैं मुसलमानों का सच्चा मित्र हूं। यद्यपि मुझे उनका दुश्मन कहा जाता है। मैं लाग लपेट की बात नहीं करता। बगुला भगत यनना मुझे आता नहीं मुसलमानों को मैं कह देना चाहता हूँ कि केवल शाब्दिक समर्थन से अपने पुराने पापों को नहीं धो सकते उन्हें चाहिये कि वे पाकिस्तात के हमलों का विरोध करें और देश भक्ति का परिचय दें। वे दो वों पर एक साथ सवार नहीं हो सकते आपको एक नाव चुन लेनी होगी। जो हिन्द के प्रति दिल से वफादार नहीं है उन्हें चाहिये कि वे पाकिस्तान चले जायें।

आपके इस भाषण की प्रति क्रिया में मुसलमान नेताओ ने गांधी जी को शिकायत की। बम्बई कारपोरेसन के मान पत्र के उत्तर में लाखों की भीड़ में भाषण देते हुये। आपने गाँधी की हिमायत का इन शब्दों से सत्कार किया। "मैं बहुत स्पष्टबादी हूं और बहुत कड़वी बात कह देता हूं—हिन्दुओं को भी तथा मुसलमानों को भी। मैं दोनों का मित्र हूँ जो मुसलमान मुझे मित्र नहीं मानते वे दीवाने हैं। उन्हें सच झूठ को तमीज नहीं है। लेकिन उन्हें खुश करने के लिये ही मैं सचाई नहीं छोड़ सकता। कुछ मुसलमान मेरे लखनऊ वाले भाषण को लेकर गांधी जी से शिकायत करने गये थे। मैंने भाषण में कहा था कि काश्मीर व हैदरावाद के प्रति पाकिस्तान ने जो नीति अपना रखी है उतका उन्हें प्रतिवाद करना चाहिए। यदि वे ऐसा नहीं करते तो अपना कर्तव्य पूरा नहीं करते गांधी जी ने उनकी शिकायत सुन कर सार्बजनिक रूप से मेरे कथन का स्पष्टीकरण किया है और मेरी हिमायत की है, मुझे इसका बड़ा दुःख हुआ है, क्योंकि मैं इतना कमजोर नहीं हूं कि दूसरों को मेरी हिमायत करनी पड़े।"

इतनी स्पष्ट वादिता, उनके उज्ज्वल चरित्र और इमानदारी का प्रबल प्रमाण है। वे लौहपुरुष थे जो सत्य का सदा पक्ष लेते थे। यहां तक कि पार्टी को संगलत, नितियों एवं काँग्रेसी नेताओं की कमियों को कहने में कभी नहीं चूकते थे। आप राष्ट्र भक्तों का मान करते थे, चाहे वे किसी पार्टी अथवा संघठन के हों। वे किसी गठन को

डंडे के बल पर कुचलने के विरोध करते थे, यहां तक कि वे पूंजीपतियों की मजदूरों के प्रति किये गये शोषण के लिए चेतावनी देते थे। उन्होंने कांग्रेसी बगुले भक्तों से कहा, "आप लोग शासन का अधिकार पाकर इतने मदान्ध न हो जाएँ कि किसी को डण्डे के जार से कुचलने की ठान लें। डण्डे के प्रहार से किसी भी संगठन को मिटाया नहीं जा सकता। डण्डा तो चोर और डाकुओं के लिए स्तेमाल किया जाता है। संघ के लोग चोर डाकू तो नहीं हैं। वे भी देशभक्त हैं. वे भी अपने देश से प्रेम करते हैं। कांग्रेस को चाहिए कि वह उन पर प्रेम से विजय पाने की कोशिश करें, डण्डे के जोर से नहीं।

सरदार पटेल पाकिस्तान को ५५ करोड़ रुपया देना पैसे को पानी की तरह वहाना कहते थे। वे इसके दिए जाने के कट्टर विरोधी थे। किन्तु गांधी के उपवासने उन्हें मजबूर कर दिया। पाकिस्तान के शासक यदि किसी के व्यक्तित्व को मानते थे तो पटेल को ही मानते थे। वे हैद्राबाद की रियासत से मिलकर भारत के विरुद्ध षड़-यंत्र रच रहे थे। पटेल ने उन्हें कलकत्ता में गंभीर चेतावनी दी। "हम पाकिस्तान को इतना ही कहना चाहते हैं कि वह हमारे मामलों में दखल न दें। उन्हें पाकिस्तान मिल गया। जैसा मन में आवे उसका इस्तेमाल करें। उसे बहिश्त बनाएं या दोज़ख़ यह उनका अधिकार है, उसे जैसे चाहे बनालें। पाकिस्तान वाले कहते हैं कि उनके दुश्मन उन्हें तबाह करना चाहते हैं। मैं कहता हूं यह तबाही आयेगी तो बाहर से नहीं, भीतर से ही आयेगी। हमने पाकिस्तान को बड़ी उदारता से मुंहमांगी चीज देदी। लेकिन हम यह बरदाश्त नहीं करेंगे कि वे उनसे गोला बारूद बनाकर हम पर हमला करें।"

सरदार पटेल महान् दूरदर्शी थे। जीवन की अंतिम घड़ियां गिनते हुए चौ-एन्-लाय के पत्र के संबंध में सुनकर उन्होंने कहा कि यह पत्र शरारत से भरा हुआ है। भारत के लिए इसके परिणाम अच्छे नहीं होंगे। सन् ६२ में उनके ये विचार सत्य निकले। पटेल की प्रबंध शक्ति के संबंध में दुनियां के महान् राजनीतिज्ञ चर्चिल ने कहा, 'मुझे आश्चर्य है भारत में इतने वर्षों तक गुलाम रहने के पश्चात् इतना अच्छा प्रबंन्धक है।' दुर्भाग्य से वे स्वतंत्र भारत की अधिक देर तक सेवा न कर सके, काश! कि वे अभी तक जिन्दा रह पाते तो भारत को यह दुर्दिन देखने नहीं पड़ते और भारत संसार का शिरोमणि कह-लाता। प्रत्येक भारतीय को चाहिए कि उस महान् विभूति से कठिनाइयों से टकराकर बलिदान की भावना सीखें। इसी में उस इनकी उस महान् नेता को सच्ची श्रद्धांजलि है। उनके द्वारा जलाई गई क्रांति की अग्नि बुझने न पाये यही हमारी प्रभु से प्रार्थना है।

●

कृपया ध्यान दें !

आर्यराष्ट्र की स्थापना को लक्ष्य में रखकर एक जनसाधारण के लिये उपयोगी पुस्तक प्रकाशित की जा रही है जिसमें निम्नविषयों पर प्रकाश डाला जायगा।

१. वैदिक अर्थ नीति (पूंजीवाद और समाजवाद के साथ तुलनात्मक)
२. वैदिक प्रजातन्त्र (चुनावप्रणाली तथा शासनप्रणाली)
३. वैदिक शिक्षाप्रणाली (वर्तमान समस्या का व्यावहारिक समाधान)
४. आर्यराष्ट्र की स्थापना के लिये व्यावहारिक कदम।
५. आर्यसमाज की प्रचार शैली में अपेक्षित परिवर्तन।

आप अपनी रूचि के अनुसार किसी एक या दो विषयों पर सारगर्भित लेख ३० नवम्बर से पहले भेजने की कृपा करें। प्रत्येक विषय की सर्वश्रेष्ठ रचना को ५१ रु० की दक्षिणा दी जायगी। लेख २५०० शब्दों से अधिक न हो।

—सम्पादक

शिक्षोत्थान एवं सरकारी प्रयत्न

● जगदीशचन्द्र वर्मा

देश की शिक्षा प्रणाली राष्ट्रीय सरकार की नीति से प्रभावित होती है। प्राचीन काल में शिक्षा-प्रणाली धर्म-संस्थानों की क्रिया का एक रूप मात्र थी। इस तथ्य की पुष्टि प्राचीन भारत तथा विश्व के अन्य देशों के शिक्षा-इतिहास से स्पष्ट है। ईसाइमतावलम्बित पाश्चात्य देशों में गिरजाघर, मुसलमानी देशों में मस्जिदों से सम्बन्धित मकतब और मदरसे तथा प्राचीन भारत में धार्मिक संस्थायें शिक्षा-नीति का निर्धारण करतीं थीं। ऐसी स्थिति समान रूप से देश तथा विदेशों में विद्यमान थी। भारत की वर्तमान शिक्षा स्थिति विश्व के इस इतिहास को आज भी दोहरा रही हैं। भारत में, धर्म निरपेक्ष राज्य होते हुए भी, शिक्षा का नियंत्रण बहुत सी धार्मिक संस्थाओं द्वारा होता है जिनमें गिरजाघर, मकतब और मदरसे, आदि भी सम्मिलित हैं। बहुत सी सरकारी अनुदान प्राप्त शिक्षा संस्थाएँ अभी भी धर्म के नाम-करण से विद्यमान हैं उदाहरणतः सनातन धर्म विद्यालय, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय आदि। प्राचीन भारत में शिक्षा संस्थाओं को राज्य द्वारा विशेष अनुदान तथा संरक्षण प्राप्त होते थे—तक्षशिला और नालन्दा विश्वविद्यालयों का इतिहास आज भी इस बात का उदाहरण है। शिक्षा 'आश्रम' और 'विहार' के स्थापन के लिए राज्य द्वारा भूमि, भवन तथा धन के रूप में सहायता प्राप्त होती थी। ऐसा हिन्दू काल के इतिहास से आभास होता है। मध्यकालीन भारत का इतिहास भी मुगल साम्राज्य की शिक्षा, विशेषकर मुसलमान धर्म शिक्षा, के प्रति जागरुकता पर प्रकाश डालता है। अंग्रेजी राज्य में जो शिक्षा प्रणाली की नींव डाली वह भारत में आज भी विद्यमान है। अंग्रेजी राज्य की इस विषय में एक विशेषता रही है कि सरकार ने शिक्षा प्रचार और प्रसार को एक सरकारी उत्तरदायित्व समझ कर निभाया है।

शिक्षा पर सरकारी विनियोग

वर्तमान भारत में शिक्षा का संचालन और नियोजन सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा सम्पादित नीति के अनुसार होता है। राष्ट्रीय आय का ४% भाग शिक्षा पर खर्च होता है। प्रति वर्ष शिक्षा सम्बन्धी खर्च भी शिक्षा के अधिक प्रचार और प्रसार के कारण बढ़ता जा रहा है। १९५०-५१ में राष्ट्रीय आय का शिक्षा पर केवल १.२% से १.५% तक और १९६१-६२ में ३.३% तथा १९६५-६६ में ३.७% प्रति वर्ष खर्चा किया गया था। अन्य शब्दों में यह खर्च १९५०-५१ में ११४५ मिलियन रुपये से १९६०-६१ में ३४४४ मिलियन और १९६५-६६ में ६००० मिलयन रुपये तक बढ़ गया था। वर्तमान खर्च का अनुमान १२,००० मि० रुपये आंका जाता है। शिक्षा पर किये जाने वाले खर्च के स्रोतों में केन्द्रीय सरकार और राजकीय सरकार फंड से ७१.२% म्यनुसपल फंड से, ३.१% जिला बोर्ड और जिला परिषद् से, ३.२% फीस से, १५.३% तथा अन्य साधनों से १५.३% मात्र धन राशि उपलब्ध होती है। शिक्षा पर वर्तमान राष्ट्र आय का ४% भाग का विनियोग बहुत कम माना जा रहा है और दिन-प्रतिदिन इस सीमा को १०% तक बढ़ाने की मांग तीव्र गति से जोर पकड़ती जा रही है। खेर समिति का भी ऐसा ही सुझाव था।

शिक्षा की लाभदायकता

शिक्षा पर बढ़ते हुए खर्चे को देखने से सहज ही अनुमान हो जाता है कि शिक्षा की समाज में, राष्ट्र में व्यक्ति विशेष को तथा राज्य को लाभदायकता बढ़ती जा रही है। शिक्षित वर्ग की संख्या पहले से प्रतिशत रूप में कई डिग्री बढ़ी है और दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। लेकिन शिक्षा पर बढ़ते हुए खर्च से बढ़ते हुए शिक्षित

समुदाय की एक साथ तुलना करने मात्र से ही शिक्षा की समाज को, राष्ट्र को तथा व्यक्ति विशेष की लाभदायकता सिद्ध नहीं होती है।

शिक्षा की लाभदायकता तथा उपादेयता का सही अनुमान देश की सार्वभौमिक नैतिकता तथा आर्थिक उन्नति से ही लगाया जा सकता है।

नैतिक उन्नति

जहाँ तक नैतिक उन्नति के स्तर के माप का सम्बन्ध है, नैतिकता का माप दंड मनुष्य मात्र का व्यवहार और चरित्र ही है। शिक्षा का मनुष्य के चरित्र-उत्थान से विशेष सम्बन्ध है। जब शिक्षा संस्थाएँ धार्मिक संस्थानों के संरक्षण में चलती थी तब धार्मिक शिक्षा विशेषकर इस दृष्टिकोण से दी जाती थी कि मनुष्य के मस्तिष्क का बौद्धिक तथा नैतिक विकास हो। धार्मिक शिक्षा का महत्व चरित्र-उत्थान में आज भी विशिष्ट रूप से आंका जाता है। गांधी जी ने धार्मिक शिक्षा को स्कूलों में चालू करने पर विशेष महत्व दिया था यद्यपि वह धर्म-निरपेक्षता में विश्वास रखते थे। वास्तव में धर्म किसी भी आवरण में क्यों न हो, मनुष्य को सत्यता, प्रेम और अहिंसा का पाठ पढ़ाता है जो सच्चरित्र के सम्बल हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित्र इस बात का सचेत उदाहरण है। धर्म-निरपेक्षता का अर्थ अपने धर्म को अथवा मत को छोड़ने से नहीं है परन्तु मत और धर्म के आधार पर भेद-भाव पैदा न करने से है। इस विषय का वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में कोई स्थान नहीं है।

इसीलिए नैतिकता के माप-दंड पर शिक्षा को आंकने से पता चलता है कि धार्मिक शिक्षा के अभाव में शिक्षा मनुष्य के नैतिक उत्थान का साधन नहीं रह पाई है। शिक्षा का माध्यम नैतिकता के विकास पर कोई जोर नहीं देता है। शिक्षा का योग मनुष्य के चरित्र निर्माण में विशेष महत्वपूर्ण समझा जाता था वह आज की वर्तमान स्थिति में शून्य समान है। शिक्षा-प्रणाली की इस असफलता को सारे राष्ट्र में महसूस किया जाता है लेकिन इस ओर सुधार लाने के लिये कोई सचेष्ट एवं ठोस कदम नहीं उठाया जाता है। यह शिक्षा के नियोजन का सरकारी खोखलापन नहीं तो और क्या है?

आर्थिक उन्नति

शिक्षा का राष्ट्र की आर्थिक उन्नति में सहयोग आंकने के लिए शिक्षा-संस्थान को एक उद्योग के रूप में मान कर चलने का विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण साधारणतः सभी अर्थशास्त्री अपनाते हैं। शिक्षा के ऊपर होने वाले खर्च से देश की उन्नति में प्रति अंश बढ़ाव Incremental Contribution) का अन्दाज लगाने के लिये बहुत से सांख्यिकी तथा हिसाबी (Statistical & Mathematical) ऐक्सप्रेशन्स का उपयोग किया जाता है। कीन्स (Keynes) हेरोड-डोमर (Harrod Domer), काब डग्लस (Cobb Douglas) पाश्चात्य अर्थशास्त्रियों के माडल्स को शिक्षा के उत्पादन क्रम (Production Function) में अपनाने के अभ्यास टी. डब्लू. शुल्ज (T. W. Schultz), जी. एस. बेकर (G. S. Becker), जान वैजी (John Vaizy) तथा बी. ए. वाइसब्राड (B. A. Weisbrod) आदि शिक्षाशास्त्रियों ने किये हैं। इस प्रकार के अभ्यासों में मनुष्य की आन्तरिक शक्ति (Talent), शारीरिक प्रयास आदि को उपकरण मानकर प्रयोग किया गया है लेकिन इन सब प्रयोगों से निकाले गये निष्कर्ष केवल प्रति व्यक्ति अथवा सामूहिक राष्ट्र आय में अंश प्रति अंश हुई प्रगति के सूचक मात्र हैं। चरित्र निर्माण, बौद्धिक उत्थान तथा नैतिक उन्नति जैसी गूढ़ और अति आवश्यकीय स्थितियों का इन माडल्स से पता लगाना यदि सम्भव भी हो तो विश्वसनीन नहीं है विशेषकर भारत वर्ष की परिस्थितियों में जहाँ शिक्षित वर्ग साधारणतः नौकरी के लिए पढ़कर भी बेकार बेरोजगार है।

भारतवर्ष की परिस्थितियों में शिक्षा को आर्थिक उन्नति के माप दंड पर आंकने के लिए एक विशिष्ठ विश्लेषणात्मक अध्ययन की आवश्यकता है जो प्रत्येक शिक्षित नागरिक को व्यक्तिगत रूप से तथा सामाजिक रूप से निष्कर्षात्मक अध्ययन कर सके। शिक्षित व्यक्ति को रोजगार मिलना अथवा उसका बेरोजगार रहना शिक्षा के अतिरिक्त अन्य कारणों पर भी निर्भर रहता है। शिक्षा एक व्यक्ति विशेष को अपने पैरों पर खड़ा होने के लिये पूणतः सुयोग्य बनाती है अथवा नहीं इसका निष्कर्ष भारत देश जैसी अभावग्रस्त परिस्थितियों में भी ठीक प्रकार से होना कठिन हैं। यदि पाश्चात्य अर्थशास्त्रियों

के मतानुसार शिक्षा को एक विनियोगिक उद्योग मानकर भी चला जाये तो प्रत्येक व्यक्ति पर होने वाले शून्य प्रायः शिक्षा-व्यय से क्या निष्कर्ष निकाला जा सकता है जबकि प्रति व्यक्ति शिक्षा व्यय १९५०-५१ में ३.२ रु०, १९६०-६१ में ६.२ रु०, १९६५-६६ में १२.१ रु० था।

शिक्षोत्थान की आर्थिक उन्नति के माप-दंड पर तभी आंका जा सकता है जबकि शिक्षा-प्रणाली प्रत्येक नागरिक को अपना स्वयं का कारोबार करने के योग्य बनाएँ और इस प्रकार के शिक्षित व्यक्ति राष्ट्र की आर्थिक उन्नति में सहायक सिद्ध हों। अथवा सामाजिक आर्थिक स्थिति ऐसी हो कि प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति को रोजगार दे सके। दोनों ही परिस्थितियां वर्तमान भारतवर्ष में लोप प्रायः हैं। ऐसी स्थिति में ऐसा अनुमान नहीं लगाया जा सकता कि शिक्षा से देश की स्थिति में क्या उन्नति हुई है। अधिक मात्रा में कालिज व स्कूल खोल देना व अधिक मात्रा में विद्यार्थियों को कक्षाओं में भर देना शिक्षोन्नति का द्योतक नहीं माना जा सकता है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली का खोखलापन

उपरोक्त दो आधारों के अतिरिक्त शिक्षोत्थान की प्रयासों को शिक्षा की स्वयं की उपादेयता तथा उत्पादक-क्षमता पर आंकने का प्रयास भी किया जा सकता हैं। श्री डी. पी. नैयर(D. P. Nayar)की एक पुस्तक (Education as Investment) के आधार पर शिक्षा-प्रणाली के परीक्षा परिणाम विभिन्न कक्षाओं के लिए १९६०-६१ में निम्न प्रकार आंके गये थे—

परीक्षा में असफलताएँ १९६०-६१

मैट्रिक आदि	५६%
हायर सैकिन्ड्री	५३.६
बी. ए.	४२.८
बी. एस. सी.	५४.७
एम. ए.	१७.८
एम. एस. सी.	२२.७

तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण

बी. ए.	७९.८
बी. एस. सी.	४९.१
एम. ए.	५२.५
एम. एस. सी.	१५.५

इसके अतिरिक्त यदि कक्षाओं में विद्यार्थियों की अनुपस्थिति का भी अनुमान लगाया जाय तो पता चलता है कि शिक्षा संस्थाएँ केवल नवयुवकों को समय विताने के स्थान मात्र हैं।

सामाजिक तथा राजनैतिक चेतना

शिक्षा द्वारा देश में सामाजिक तथा राजनैतिक चेतना एवं जागृति का उद्भाव होता है जो भारतवर्ष में वर्तमान परिस्थितियों से अवगत नहीं होता। प्रायः ऐसा देखने में आया है कि शिक्षित वर्ग में सामाजिक जीवन यापन की भावनाएँ व्यक्तिवाद तथा ऐकत्ववाद में बदलती जा रही है जिससे आपसी मेल-जोल, मुलाकात, प्रेम और आदर की भावनाएँ समाप्त होती जा रही हैं। इसका कारण केवल यही है कि शिक्षा प्राप्त वर्ग एक घोर निराशावाद से पीड़ित है जिसकी वजह से उसमें न तो सामाजिक चेतना ओत-प्रोत होती है और नहीं राजनैतिक जागृति। इसका मूल कारण भारतीय शिक्षा प्रणाली का पाश्चात्य सम्यता द्वारा पूर्णतः प्रभावित होना ही है जो भारतीय संस्कृति और सभ्यता का प्रतिनिधित्व नहीं करती।

ऐसी स्थिति में यह पता लगाना कठिन है कि शिक्षोत्थान से देश को क्या लाभ पहुँच रहा है। शिक्षा पर किया जा रहा व्यय राष्ट्रीय आय का अपव्यय नहीं तो और क्या है। क्या भारत देश की जनता शिक्षा प्रणाली में सुधार लाने के लिए सरकार को मजबूर नहीं कर सकती ? क्या लोक सभा में चुनकर भेजे गये जनता के प्रतिनिधि जनता की इस आवाज की सदैव अवहेलना करते रहेंगे ? क्या जनता चुनकर इन्हीं प्रतिनिधियों को फिर से लोक सभा में अपना प्रतिनिधित्व करने के लिये ? भेजेगी, आखिर कब तक ?

—सी १२।एफ २० लोधी कालोनी नई दिल्ली

धर्मनिरपेक्षता का अर्थ ?

● प्रेमचन्द शास्त्री

धर्मनिरपेक्षता का अर्थ क्या है ? इस लेख में हम इस पर संक्षेप में विचार करेंगे। धर्मनिरपेक्ष अथवा धर्मनिरपेक्षता शब्द तभी से व्यवहार में आने लगा है जब से हमारा देश आजाद हुआ है, उस से पूर्व यह शब्द कभी सुनाई नहीं दिया अथवा व्यवहार में आता दिखाई नहीं दिया।

धर्मनिरपेक्षता का सामान्य अर्थ है—धर्म की अपेक्षा से रहित। यह सामान्य संस्कृत जानने वाला विद्यार्थी भी जानता है। अर्थात् जब धर्म का आश्रय न लिया जाये, धर्म की आवश्यकता अनुभव न की जाये अथवा यों भी कह सकते हैं कि जब धर्म की उपेक्षा की जाये तब धर्म-निरपेक्षता शब्द का व्यवहार किया जा सकता है।

हमारी सरकार धर्मनिरपेक्ष सरकार है। इस का अर्थ यह होगा कि हमारी सरकार धर्म को स्वीकार नहीं करती और धर्म की उपेक्षा करती है। यह बात सर्वथा मिथ्या है, जनता को नास्तिकता और अधर्म में प्रवृत्त करने के लिये प्रचार मात्र है। अथवा धर्मनिरपेक्ष शब्द बुद्धिशून्यता का प्रतीक है। जब हम यह कहते हैं कि हमारी सरकार धर्मनिरपेक्ष है तब हम अपनी आत्मा को धोखा देते हैं, और अपनी ज्ञानशून्यता का भी परिचय देते हैं।

क्या राजनीति वेश्या है !

जिस भवन में बैठकर हमारी सरकार विचार करती है, देश के भविष्य का निर्माण करती है और देश की सुरक्षा, उन्नति और प्रगति तथा जन-कल्याण के लिये उचित-अनुचित अथवा सही या गलत नियमों और विधानों का निर्माण करती है, आप उस भवन में जाइये तो आप देखेंगे कि सभा के अध्यक्ष के बैठने के स्थान के ऊपर सब के सामने मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा हुआ है —"धर्मचक्र-प्रवर्त्तनाय"। अर्थात् इस सभा-भवन में जो कुछ भी कार्य होगा अथवा जो कुछ भी विचार किया जायेगा वह सब धर्म चक्का घुमाने के लिये ही होगा। इसका अभिप्राय यह है कि इस सभा-भवन में धर्म की वृद्धि और धर्म के प्रचार तथा प्रसार के लिये ही विचार प्रयास किया जायेगा। जब सरकार का सभा-भवन घोषणा करता है कि भारत-सरकार का प्रत्येक कार्य, प्रत्येक विचार और प्रत्येक कदम धर्म के प्रचार के लिये है तब सरकार की धर्मनिरपेक्षता कैसी ? यह दोनों परस्पर विरोधि बातें क्यों ? एक ओर सरकार का प्रति चरण धर्म का चक्का निरन्तर घूमता रखने के लिये प्रयास, और दूसरी ओर सरकार की धर्म के प्रति उपेक्षा। यह क्या है—इसे हम राजनीति की गुत्थी कहें, राजनीति की पहेली कहें, अथवा जनता को भ्रम और अन्धकार में रखने के लिये दो परस्पर विरोधी बातें कहें ! अथवा महाराजा भर्तृहरि के शब्दों में यह कह दें कि —'वारांगनेव नृपनीतिरनेकरूपा'' अर्थात् राजनीति एक वेश्या के समान अपने अनेक रूप बदलती रहती है !

संसार में सर्व प्रथम विधि-विधान के निर्माता आचार्य मनु हुए हैं। प्रत्येक देश का विधान मनु महाराज के विधान पर ही मूलरूप में आधारित है। धर्म के संबन्ध में उनका आदेश है कि—

> धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
> धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

किसी उलझन या मानसिक अथवा शरीरिक समस्या उत्पन्न होने पर या कोई मुसीबत आ जाने पर उस से घबराना नहीं और अपने मन पर काबू रखकर उसे अपने निश्चय पर दृढ़ रखना; यदि अपने से निर्बल कोई व्यक्ति हमारे प्रति अन्याय अथवा दुराचरण करता है तो उसे निर्बल समझकर सहन कर लेना और उससे किसी प्रकार का प्रतिकार न करता अपने मन पर काबू रखना; स्वामी की आज्ञा या अनुमति के बिना उस के किसी पदार्थ

को न ग्रहण करना और मन से भी उसके लेने का विचार न करना; पवित्रता रखना—अपने शरीर को अन्दर और बाहर से शुद्ध-स्वच्छ रखना; यदि कोई इन्द्रिय कुमार्ग पर जा रही हो तो उसका दमन करना—इन्द्रियाँ बहुत चंचल होती हैं उन्हें इधर-उधर कुमार्ग पर जाने से रोकना; बुद्धि-वर्धक उपाय करते रहना; विद्या पढ़ना और उसके प्रचार-प्रसार का प्रयत्न करना; क्रोध का सर्वथा त्याग कर देना, कहते हैं कि क्रोध सब पापों का मूल होता है और क्रोध पाप का बाप है इसलिये कितना भी उत्तेजक अवसर हो, शान्त रहना चाहिये।

क्या हमारी सरकार इन नियमों को मानने से इनकार करती है.? अथवा हमारी सरकार को इन धर्मों की आवश्यकता नहीं ? यदि नहीं, तो कोई यह भी कह सकता है कि हमारी सरकार को इन से विपरीत अर्थात् मुसीबत आने पर डगमगा जाना, अपने से निर्बल या विवश पर अत्याचार करना, मन को संयम में न रखना चारीं, अस्वच्छ वातावरण उत्पन्न कर देना, इन्द्रियों को बेलगाम छोड़ना और जनता में व्यभिचार और भ्रष्टाचार का प्रसार करना, बुद्धि से विरुद्ध कार्य करना, विद्या के प्रसार के लिये यत्न न करना, सत्य का व्यवहार न करना और क्रोध का व्यवहार करना—ये कार्य रुचिकर हैं।

देश के ऋषि मुनियों और आचार्यों ने कहा था कि यदि धर्म के उपर्युक्त १० लक्षण तुम स्मरण नहीं रख सकते तो निम्नलिखित ४ लक्षण ही स्मरण करलो :—

वेदस्मृति सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् ॥

उनका अभिप्राय यह था कि वेदों में उपदिष्ट मार्ग पर चलना, स्मृतियों के उपदेशों पर आचरण करना, सज्जनों का जैसा आचरण है अपना आचार-व्यवहार भी वैसा ही बनाना और दूसरों द्वारा अपने प्रति किया गया जैसा व्यवहार आपको प्रिय है वैसा ही व्यवहार दूसरों के प्रति करना चहिये।

धर्म के चार प्रकार के लक्षण हमारी सरकार को अपेक्षित नहीं हैं ? सरकार इन पर आचरण नहीं करना चाहती क्योंकि वह तो धर्मनिरपेक्ष है—उसे धर्म की आवश्यकता ही नहीं। दूसरे सज्जन कहते हैं कि ठीक तो है—हमारी सरकार वेदों को कहाँ मानती है, उसके लिये वेद तो साम्प्रदायिक हैं। वेदों के बदले वह बायबिल अथवा कुरान को प्रमाण मान सकती है। स्मृतियाँ भी सरकार के लिये प्राचीन युग की बात और अव्यवहार्य हैं। इनके स्थान पर वह पैगम्बरों और मौलवियों की बातों को अधिक सम्मान से देखती है। श्रेष्ठ पुरुषों के आचरण की बात तो जाने ही दीजिये, सरकार के लिये कोई श्रेष्ठ पुरुष नहीं है। वह न महात्मा गान्धि की बात मानती है और न ही जवाहर लाल की। दूसरों द्वारा अपने प्रति किया गया क्या व्यवहार अच्छा लगता है—इसके उदाहरण तो वर्तमान में नित्यप्रति विधान सभाओं एवं लोकसभा के वातावरण तथा कार्यों और उपद्रवों से देखने को मिलते हैं।

क्या हमारी सरकार को इसी प्रकार के धर्मकी अपेक्षा नहीं है और वह अपने को इसी कारण धर्मनिरपेक्ष सरकार कहती है ? नहीं, यह बात भी बुद्धिगम्य नहीं है।

धर्मनिरपेक्षता का अर्थ ढूंढ़ते हुए हम प्राचीन ऋषि-मुनियों और सर्वप्रथम विधान के निर्माता मनु महाराज का आश्रय छोड़ कर आधुनिक और लोक में प्रचलित कोषों की शरण में गये। धर्म की पट्टी निकाली और धर्म शब्द का अर्थ देखा। कोषों में धर्म का अर्थ पढ़ा—कर्त्तव्य। अर्थात् अपने कर्त्तव्य का पालन करना ही धर्म है।

यदि धर्म का अर्थ कर्त्तव्य है तो क्या हमारी सरकार अपने कर्त्तव्यों का पालन करना भी आवश्यक नहीं समझती मित्र बोले—ठीक तो है सरकार अपने कर्त्तव्यों का पालन कहाँ करती है ! यदि सरकार अपने कर्त्तव्यों का पालन करती तो देश दिनों-दिन अभावग्रस्त और क्षति-ग्रस्त क्यों होता ! मैंने कहा कि यह बात भी समझ में नहीं आई कि सरकार अपने कर्त्तव्य-पालन को आवश्यक न समझती हो। चाहे अपने कर्त्तव्य का पालन न करे किन्तु यह कहा नहीं जा सकता कि हमें अपने कर्त्तव्य का पालन अपेक्षित नहीं है !

जब धर्म के किसी लक्षण का और किसी अर्थ का भी प्रयोग धर्मनिरपेक्षता के अर्थ के साथ समन्वित नहीं हुआ तो हमने किसी सरकारी अधिकारी के साथ विचार-विमर्श किया और उनसे पूछा कि धर्मनिरपेक्षता का अर्थ क्या है ? हमने धर्म के उपर्युक्त अर्थ बताते हुए उनसे पूछा कि क्या

सरकार को इन धर्मों की अपेक्षा नहीं है ? वे सज्जन संकोच से कहने लगे कि यह धर्म तो है किन्तु इसका पालन करना बहुत कठिन है और फिर यह तो बहुत पुरानी बातें हैं।

मैंने पूछा कि फिर नई बातें कौन सी हैं और धर्म का नया अर्थ क्या है जिसके आधार पर सरकार को धर्मनिरपेक्ष कहा जाता है ? वे कहने लगे कि आपने धर्म का जो अर्थ बताया है वह तो हम नहीं जानते। हम तो यही जानते हैं कि हिन्दू धर्म, मुसलिम धर्म, ईसाई धर्म, जैन धर्म और सिख धर्म आदि अनेक प्रकार के धर्म देश में फैले हुए हैं, हम तो इन्हीं को धर्म मानते हैं और इसी के आधार पर सरकार को धर्मनिरपेक्ष कहा जाता है। अर्थात् सरकार न तो हिन्दुओं के धर्म को प्रमुखता देगी, न मुसलमानों के धर्म को और न ही किसी दूसरे के धर्म को। सरकार सब धर्म वालों को एक-सा समझेगी और सबके साथ एक-सा व्यवहार करेगी। यही धर्मनिरपेक्षता का अर्थ है।

उस अधिकारी महोदय की बात सुनकर मैं कहने लगा—श्रीमान् जी: एक बात तो यह है कि हिन्दू-धर्म, मुसलिम धर्म आदि धर्म नहीं। ये तो मत हैं। धर्म सबका एक-सा है। सारे संसार का धर्म एक है। धर्म शब्द का अर्थ क्योंकि कर्त्तव्य है और कर्त्तव्य सबका एक-सा होता है इसलिये धर्म भी सबका एक जैसा है। यह बात नहीं कि हिन्दू का धर्म अन्य हो और मुसलमान का धर्म अन्य हो। धृति, क्षमा, दम, आदि धर्म किस के लिये हानिकारक हैं ? इन्हें सभी उपयोगी, लाभदायक और श्रेष्ठ तथा उपादेय मानते हैं। इसलिये ये धर्म मनुष्यमात्र के धर्म हैं। दूसरी बात जो आपने कही कि सरकार हिन्दू और मुसलमान आदि सब के साथ समान बर्ताव करेगी तो यह बात देखने में विपरीत प्रतीत होती है। क्योंकि देखा यह जाता है कि सरकार की नीति और काम प्रायः ऐसे होते हैं जो हिन्दुओं के लिये विनाशकर हों और मुसलमान तथा ईसाइयों के साथ सरकार नम्रता और पक्षपात का व्यवहार करती है। इसलिये श्रीमान् जी, आपने जो धर्म का अर्थ बताया वह सर्वथा असंगत है। इसलिये हमारी सम्मति में सरकार का 'धर्मनिरपेक्षता' का शब्द निरर्थक है और इस का अर्थ सरकार के साथ समन्वित नहीं होता।

आर्यसमाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग

का वार्षिकोत्सव १३–१४ दिसम्बर को समाज मन्दिर में बड़े धूमधाम से मनाया जायगा। इस अवसर पर अनेक विद्वान् वक्ताओं के प्रवचन के अतिरिक्त सार्वदेशिक आर्ययुवक परिषद् के तत्त्वावधान में १३ दिस० को एक विशाल "आर्यराष्ट्र स्थापना" सम्मेलन मनाया जायगा।

महर्षि दयानन्द का भाष्य पढ़ाया जाय !

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के सक्रिय कार्यकर्ताओं की आगामी बैठक में इस महत्त्वपूर्ण विषय पर विचार किया जायगा कि देश के बड़े बड़े विश्वविद्यालयों और कालेजों में वेद और आर्य संस्कृति विरोधी पाठ्यक्रमों के विरुद्ध किस प्रकार आन्दोलन आरम्भ किया जाये और वेद के सम्बन्ध में मैक्समूलर विण्टरनीज, मैकडालल्ड, ग्रिफिथ आदि अनार्य लेखकों के भाष्यों को बहिष्कृत कर देव दयानन्द के वेद भाष्य को पाठ्यक्रम में प्रतिष्ठित कराया जाये। इस सम्बन्ध में यदि आप भी कोई महत्त्वपूर्ण सुझाव दे सकें (नवम्बर अन्त तक) तो बड़ा लाभ होगा।

मन्त्री—सार्वदेशिक आर्ययुवक परिषद्

राजधर्म की सफलता का श्रेय !

केवल एक वर्ष में राजधर्म आर्य जगत की सबसे लोक प्रिय और क्रान्तिकारी पत्रिका बन जायगी इसका औरों की तो बात दूर, हमें भी विश्वास न था। पर परमपिता परमात्मा की असीम कृपा और प्रेरणा पर हमें सबसे आशातीत सहयोग प्राप्त हुआ। राजधर्म की विशेष सफलता का रहस्य इसके ओजस्वी विचारोतेजक लेख, हृदय को आन्दोलित करने वाले आर्यराष्ट्रवाद से ओत प्रोत विचार हैं। इसके लिये श्रेय राजधर्म के प्रबुद्ध लेखक वर्ग को जाता है जिसमें श्री इन्द्रदेव जी मेधार्थी श्री गुरूदत जी, श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार, प्रो० उमाकान्त जी, श्री जगदीश वर्मा, आचार्य रामानन्द जी, प्रो० जयदेव आर्य, श्री कुलदीप चड्ढा, श्रीअनूपसिहं श्री ब्रह्मदत्त जी भारती, प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु प्रभृति लेखक प्रमुख रूप से स्मरणीय है। सामग्री के अतिरिक्त पत्रिका के समय पर प्रकाशित करने का श्रेय सम्राट प्रेस के अधिकारी एवं कर्मचारियों को है। पं० चन्द्रमोहन शास्त्री श्री जगजीवनराम जी और श्री उदयसिहं जी बड़ी आत्मीयता से इसके प्रकाशन में सहयोग देते रहे। युवक सहयोगी श्री सत्यपाल जी (बाइन्डर) भी हमारे राजधर्म परिवार के सदस्य हैं। कागज के लिये श्री प्रेंम ओबेराय जी और डाक के लिये भाई चमनलाल जी के हम आभारी हैं। पत्रिका पोस्ट करने में हमारे विशेष सहयोगी हैं श्री सुदर्शन जी आर्य, राजसिंह जी, श्री विजय कुमार जी और श्री विद्यासागर जी अन्त में हम कहना चाहते हैं कि राजधर्म की वास्तविक सफलता तो इसके विचारशील पाठक वर्ग पर निर्भर करती है जिसके महत्वपूर्ण सुझावों से हमें बड़ा सहयोग मिलता रहा। इस सब सहयोग के होते हुए भी पत्रिका में जो त्रुटियाँ रहीं और प्रबन्ध में जो अव्यवस्था रही उसकी जिम्मेदारी मेरे अनुभवहीन सम्पादन और प्रवन्ध कुशलता की कमी के कारण रही जिन्हें दूर करने का मैं भरसक प्रयत्न कर रहा हूं मुझे पूरा विश्वास है कि आप लोगों के प्यार और सहयोग से राजधर्म इस देश के अग्रणी पत्रों में अपना स्थान ग्रहण करेगा। एवं आर्यराष्ट्र की स्थापना का शंखनाद बनकर राष्ट्र के कोने कोने में क्रान्ति की ज्वाला प्रज्जवलित करेगा। अन्त में सभी साथियों को हार्दिक धन्यवाद के साथ—

श्यामराव
संपादक

हम कृतज्ञ हैं !

राजधानी की सबसे प्रबुद्ध आर्यसमाज (अनारकली) मन्दिरमार्ग के अधिकारियों के प्रति हम बड़े आभारी हैं। साल भर पहले जब राजधर्म और परिषद् के कार्यालय के लिये हमें स्थान की आवश्यकता थी उस समय डी. ए. वी. कालेज मैनेजिंग कमेटी के प्रधान डा० जी. एल. दत्ता जी की कृपादृष्टि हम पर पड़ी और अत्यन्त स्नेह के साथ उन्होंने युवकों को अपना आशीर्वाद दिया उनके कहने पर आर्य समाज मन्दिर मार्ग के उदारमना प्रधान श्री मुल्खराज भल्ला, विद्वान् कर्मनिष्ठ मन्त्री पण्डित दयाराम शास्त्री तथा उत्साही अधिकारियों ने हमें अपने सुन्दर समाज मन्दिर में प्रश्रय दिया और सभी प्रकार की विशेष सुविधायें प्रदान कर एक आदर्श का परिचय दिया राजधर्म और युवा-क्रान्ति के बढ़ते कदमों को इस सहायता से बड़ा बल मिला। इस सहयोग के लिये आर्य समाज मन्दिर मार्ग के अधिकारियों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन में देशभर के आर्य नवयुवक हमारे साथ हैं।

सार्वदेशिक आर्य युवक-परिषद्

हमें १ लाख रुपये चाहियें !

हम आपसे भीख नहीं मांग रहे वरन् अपना अधिकार मांग रहे हैं। पिछले एक वर्ष से अधिक समय तक हमने आपको कार्य करके दिखाया है। हमारा उद्देश्य हमारा काम और हमारा जीवन सब स्पष्ट रूप से आपके सामने आया है। आपने हमारे जिस किसी काम को अच्छा समझा उसे सराहा और जिसे अनुचित समझा उसके बारे में हमें सुझाया है। यह आपकी सहानुभूति ही थी जिसके सहारे हम इतना कुछ कर पाये पर अब आपकी सहानुभूति के साथ साथ हमें आपके पैसों की जरूरत है। जिस संगठन में २१ सुयोग्य नवयुवक जीवनदान देकर देव दयानन्द के मिशन को पूरा करने के लिये रात दिन परिश्रम कर रहे हों। जिस संगठन में ५ भजन मण्डलियां अपने ओजस्वी प्रचार से हरियाणा के गांव-गाव में क्रान्ति की लहर और आर्यराष्ट्र के लिये तड़प पैदा कर रहे हों, जिस संगठन में तीन विद्वान्, प्रशिक्षित व्यायामाचार्य अपने ब्रह्मचर्य साधना शिवरों के माध्यम से राष्ट्र की तरुणाई में दयानन्द का आदर्श उड़ेल रहे हों, जिस संगठन के अन्तर्गत १ प्रशिक्षण केन्द्र, पांच कार्यालय तथा सैकड़ों कार्यकर्त्ता काम कर रहे हों और जिस संगठन का मुख पत्र हर पन्द्रह दिन में एक नई आशा को जन्म देता हुआ क्रान्ति के नवजागरण का शंखनाद करता हो उस संगठन की क्या आवश्यकतायें होंगी आप जान सकते हैं पर फिर भी स्पष्ट जानकारी के लिये आपको हम बताना चाहते हैं कि—

६ मोटर साइकलों के लिये—	२५ हजार
१ जीप	२४ हजार
१ साइक्लोस्टाइलिंग मशीन—	३ हजार
१ राष्ट्रिय स्तर पर प्रशिक्षण केन्द्र—	२० हजार
५ कार्यालयों पर साल में—	१२ हजार
सस्ता साहित्य प्रचार के लिये—	१६ हजार

इस तरह हमें शीघ्र १ लाख रुपयों की आवश्यकता है। कृपया अपना मनिआर्डर या क्रास चेक "सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्" के नाम से मन्दिर मार्ग नई दिल्ली-१. भेजने का कष्ट करें।

आप विद्यार्थी हों या व्यापारी, किसान हों या कर्मचारी, शिक्षक हो या सैनिक इस यज्ञ में आपको अपनी ओर से कुछ न कुछ आहुति देनी ही होगी अपने महीने भर की आय से कम से कम एक दिन की आय दीजिये। यदि आप इतने निर्धन हैं कि अपने पास से कुछ नहीं दे सकते तो दूसरों से इकट्ठा करके भेजें। आपके द्वारा दिए गए धन के एक एक पैसे का सदुपयोग कर उसका पूरा हिसाब आडिट कराके आपकी सेवा में उपस्थित किया जायेगा।

आपके सहयोग की पूर्ण आशा के साथ—

श्यामराव
मन्त्री—सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्
मन्दिर मार्ग नई दिल्ली—१
दूरभाष—४२०४६

डी०—११८

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के लिये प्रो० श्यामराव द्वारा प्रकाशित एवं सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित।

श्री कुलपति गुरुकुल कांगड़ी,
सहारनपुर।

राजधर्म
मन्दिर मार्ग नई दिल्ली-१
दूरभाष—४८०४१

पत्र व्यवहार करते हुए ग्राहक संख्या लिखना न भूलें।

राष्ट्र की स्थापना के लिये नीति एवं अर्थनीति क्रान्तिकारी विचारों से ओतप्रोत
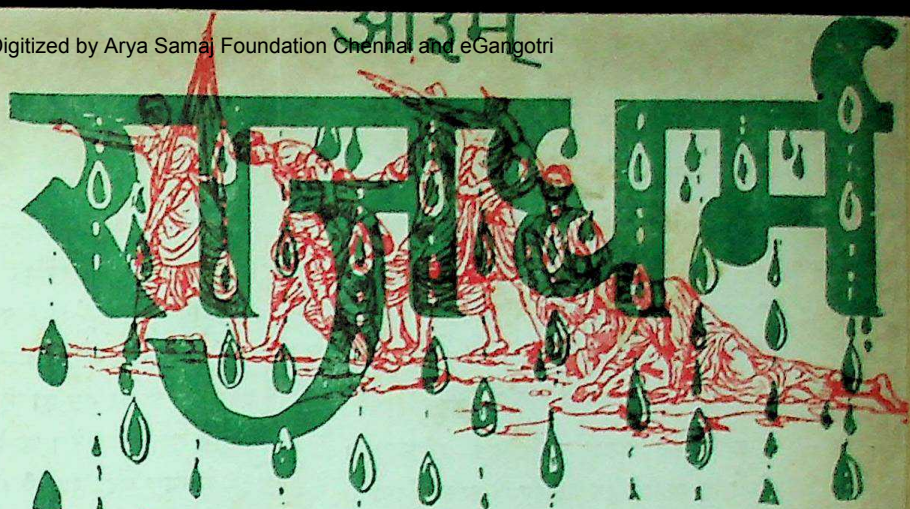
देशिक आर्ययुवक परिषद् का पाक्षिक मुखपत्र

पत्र व्यवहार करते हुए ग्राहक संख्या लिखना न भूलें ।

सम्पादक
प्रो० श्यामराव

वर्ष २ अङ्क ३
१६ दिसम्बर १९६९

वार्षिक शुल्क
१० रुपया

एक प्रति ५० पैसे
दयानन्दाब्द १४६

आर्यराष्ट्र का राजा कैसा हो ?

वैदिक राजनीति का मूलभूत सिद्धान्त सदा से ही यह है कि "राजा वही हो सकता है जो रक्षक हो"—"राजा कस्मात् प्रजारंजनात्"। इस सम्बन्ध में वेद में अनेक मंत्र आते हैं। अथर्ववेद, द्वितीय कांड, सूक्त ५, मंत्र १, उदाहरण के रूप में प्रस्तुत है—

इन्द्र जुषस्व प्रवहा याहि शूर हरिभ्याम्।
पिबा सुतस्य मतेरित मधोश्चका नश्चसर्मदाय ।।

भावार्थ—हे राजन्! इस उत्कृष्ट राज्य के भार को तू अपने सामर्थ्यवान् कंधों पर उठा। हे वीर! उत्तम रथों के द्वारा युद्ध भूमि में शत्रु पर आक्रमण कर। प्रजा रूपी अपने पुत्र के कल्याण के लिए तू हर्षदायक ज्ञान को ग्रहण कर।

इसी प्रसंग में अथर्ववेद कांड ६, सूक्त ९८, मंत्र २ भी उल्लेखनीय है—

त्वमिन्द्राधिराजः श्रवस्युरुत्वं भूरभिभूति जनानाम्।
त्वं दैवी विश इमा वि राजा युष्मत्क्षमलयरंत अस्तु ।।

भावार्थ—हे राजन्! सदा रहने वाले, राजाओं के राजा उस परमात्मा की कृपा से तू जनता का राजा बना है। तू दिव्य गुण युक्त होता हुआ इन प्रजाओं का कल्याण करने वाला हो और उस प्रभु की कृपा से तू राजधर्म का पालन करने वाला हो। हमारा यह राष्ट्र नाशरहित हो। वेद के इस आदेश के आधार पर ही राजा के कर्त्तव्यों के सम्बन्ध में महाभारत शान्ति पर्व में भीष्म पितामह युधिष्ठिर का राजधर्म का उपदेश देते हुए कहते हैं—

सदानुरक्त प्रकृतिः प्रजा पालन तत्परः।
विनीतात्मा हि नृपतिर्भूयसीं श्रियमश्नुते ।।

मधु स्वभाव वाला, प्रजा पालन में तत्पर, स्वभाव में विनय—ऐसा राजा कल्याण को प्राप्त करता है।

प्रजा की सहमति और सम्मति

वेदोक्त राजनीति का दूसरा सिद्धान्त यह है कि प्रजा की सहमति और सम्मति से राज्य करे। "राजा" शब्द से प्रायः यह समझा जाता है कि वह एक स्वेच्छाचारी निरंकुश और क्रूर व्यक्ति का नाम है। पर, वेद का "राजा" इससे सर्वथा विपरीत है। उसे आदेश दिया गया है कि वह जनता के मत से राज्य का संचालन करे और जनता का मत जानने के लिए प्रतिनिधियों की तीन सभाएँ स्थापित करे। ऋग्वेद मंडल ३, सूक्त ३८, मंत्र १६ में स्पष्ट कहा गया है।

त्रीणी राजाना विदथे पुरूणी परिविश्वानि भूषथः सदांसि।
अपश्यना मनसा जगन्वान् व्रते गन्धर्वा अपि वायु केशान् ।।

भावार्थ—प्रजा के लिए विविध प्रकार के सुखों की व्याख्या करने के लिए सूर्य के सदृश प्रकाशयुक्त तीन सभाओं की स्थापना करे। प्रभु कहते हैं कि ऐसी तीनों सभाओं से प्रजाओं का हित साधन होगा। इन सभाओं के सदस्य वही हो सकते हैं जो सत्याचरण के व्रत पालक, विज्ञानवान् और राजकीय व्यवहार में कुशल तथा सूर्य रश्मियों के तुल्य अपने गुणों से प्रकाशित हो। इन तीन सभाओं के नाम और कार्यक्षेत्र का स्वरूप इस प्रकार है—(१) आर्य राजसभा—जिस में राजकार्यों पर विशेष रूप से विचार किया जाए। भारत के आधुनिक संविधान के अनुसार इसका स्वरूप "लोक सभा" सदृश है। (२) "आर्य विद्यासभा"—जिसके द्वारा विविध प्रकार की विद्याओं का प्रचार हो। संयुक्तराष्ट्र संघ में इस समय "संयुक्तराष्ट्र शैक्षणिक-सामाजिक-सांस्कृतिक संगठन" (यूनेस्को) जो कार्य करता है लगभग वहीं स्वरूप इस "आर्य विद्यासभा" का है।

(३) "आर्य धर्मसभा"—जिसके द्वारा धर्म, नीति और सदाचार का प्रचार हो। जब तक देश में विधिवत व्यक्तिगत, सामाजिक, राष्ट्रीय और विश्वहित सम्बन्धी कर्त्तव्यों और नीतियों का प्रचार नहीं होगा और प्रत्येक राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति को सदाचारी बनाने का प्रयत्न न किया जाएगा, तब तक विश्व में कभी शान्ति स्थापित नहीं हो सकती।

अद्य जीवानि मा श्वः

अन्यायी राजा आज जीवित है, कल नहीं रहेगा (अथर्व वेद)

सम्पादकीय—

आर्यराष्ट्र की स्थापना कैसे होगी ?

[पिछले अंक में 'धर्म' को राज्य का अभिन्न अंग बताकर धर्म की सही व्याख्या और उपादेयता पर प्रकाश डाला गया था। इस बार आर्यराष्ट्र की शिक्षा नीति कैसी हो ? इसकी भूमिका में वर्तमान शिक्षा प्रणाली की कमजोरियों का वर्णन किया गया है।]

वैदिक धर्म से युक्त आर्यराज्य में सबसे महत्वपूर्ण विभाग शिक्षा का होना चाहिये। राष्ट्र के लिये मकान जरूरी है, कल कारखाने भी जरूरी हैं, गन्ना और कपास भी जरूरी है पर सबसे जरूरी तो राष्ट्र भक्त नागरिक है। इस नागरिक को तैयार करने की जिम्मेदारी है शिक्षा विभाग पर। यदि हमारे देश की सरकार इस महत्व को समझती होती तो शिक्षामन्त्रालय को आज तक इतनी उपेक्षा से नहीं देखा जाता, शिक्षा पर हमारी योजनाओं में इतना नगण्य खर्च न किया जाता और इस देश में शिक्षा का मान दण्ड इतना गिर न जाता।

आज शिक्षा विभाग की कमियों में सबसे प्रमुख इसकी उद्देश्यहीनता है। देश के बच्चों को शिक्षित करने का कोई स्पष्ट उदेश्य सामने नहीं है। डाक्टर, वकील या व्यापारी बनना और वह भी किसी तरह पैसे कमाकर जीविका चलाना—यही आज हमारे युवकों का उद्देश्य बना हुआ है। शिक्षित होकर राष्ट्र और समाज के प्रति त्याग, बलिदान की भावना से अनुप्रणित होकर, नागरिक एक ओजस्वी विचार धारा और जबरदस्त क्रियाशीलता द्वारा किसी क्रान्ति को जन्म दे—यह हमारी शिक्षा का उद्देश्य नहीं। ऊँची से ऊँची शिक्षा प्राप्त युवक केवल अपने भोग विलास और स्वार्थपूर्ति की दिशा में सोचता और करता है। इस स्वार्थ पूर्ति के मार्ग में उसे यदि अपनी विद्या का दुरुपयोग करना पड़े और ऐसा करने में समाज का बहुत अधिक नुकसान होता हो तो भी वह बिना किसी हिचकिचाहट के उसे कर जाता है क्योंकि राष्ट्र की ओर से जिस शिक्षा की व्यवस्था की जाती है, उसमें उसे ऐसा कोई पाठ नहीं पढ़ाया जाता जिससे वह इस तरह के घृणित असामाजिक कामों से पीछे हटे। सब से उच्च कोटि के कानून और वकालत की शिक्षा प्राप्त कर निकला नवयुवक अपनी विद्या द्वारा अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध ही अपनी विद्या का प्रयोग करेगा—यह कोई जरूरी बात नहीं। इसके विपरीत यदि पैसे मिलते हों तो बड़े से बड़े हत्यारे को, बड़े से बड़े बेईमान बदमाश को भी कानून के पंजे से छुड़वा देना वह अपनी योग्यता का मापदण्ड समझता है। इसी प्रकार एकाउन्टेन्सी और व्यापार शास्त्र की ऊँची डिग्री लेने वाला युवक बड़े बड़े चोर बाजारों की चोरी छिपाने में अपनी शिक्षा का उदेश्य प्राप्त करता है। इसी प्रकार इन्जीनियर सीमेन्ट में बालू मिलाकर हिमालय की बर्फानी सीमाओं पर लड़ने जा रहे जवानों के प्राण जोखिम में डाल देता है और साहित्य की शिक्षा पाने वाला युवक चांदी के टुकड़ों पर अपना ईमान बेचकर सिनेमा के अश्लील गीत और कथानक लिख सकता है। इन सबको रोकने की क्षमता वर्तमान शिक्षा प्रणाली में नहीं। आज की शिक्षा मस्तिष्क को तो प्रखर बना देती है पर हृदय की भावनाओं को अछूता छोड़ देती है।

इस शिक्षा को प्राप्त करने की सुविधा भी सबको सुलभ नहीं होती। २२ साल की आजादी के बाद भी शिक्षा के क्षेत्र में बड़ी विषमताएँ है। पैसे वालों

के बच्चे मोटर में बैठकर साठ-साठ और सौ-सौ रुपये मासिक फीस लेने वाले कान्वेन्ट और पब्लिक स्कूलों में पढ़ते हैं—घर में पढ़ाने के लिये ट्यूटर लगे होते हैं और उनके खेल-कूद मनोरंजन और खान-पान पर हजारों का व्यय होता है। दूसरी तरफ इस देश के करोड़ों बच्चे कड़ाके की ठंड में ठिठुरते हुए फटी बनियान पहने छाती से टूटी स्लेट लगाये भूख और बेबसी के आंसू बहाते हुए नंगे पांव कई मील चलकर गांव की पाठशाला में इकट्ठे होते हैं जहाँ पढाई के नाम पर भेड़ों की तरह बच्चों को कुछ घंटों के लिये बाड़े में बन्द कर दिया जाता है। ये बच्चे अपनी जरुरी किताबें नहीं खरीद सकते— कितने ही होनहार और मेधावी हों पर उच्चशिक्षा प्राप्त करने के लिए साधनों के अभाव में मन मसोस कर रह जाते हैं। यदि परिवार वाले अपना पेट काट कर बच्चे को पढ़ा-लिखा कर योग्य बना भी दें तो उसे नौकरी मिल जायेगी और वह सभ्य नागरिक का जीवन बिता सकेगा—इसकी कोई गारंटी नहीं होती।

जीवन के १५—२० साल और खून पसीने की गाढी कमाई के हजारों रु० खर्चकरने पर भी जब दो रोटी खासकने लायक नौकरी नही मिल सकती और भविष्य अंधकार मय हो जाता है—दुसरी ओर जब धनाढय परिवारों के युवक निखट्टू और प्रमादी होकर भी गुलछर्रे उड़ाते हैं तो इस देश का पढ़ा-लिखा युवक अपनी शिक्षा पर पूरी धृणा के साथ थूकता है और कुचले हुए आत्मसम्मान को लेकर फुफकारता हुआ समाज की इस झूठी मर्यादा और पाशविक भोगविलास की बाँहो में झूल रहे आडम्बर पूर्ण जीवन को नष्ट करने के लिये बगावत का नारा बुलन्द करता है। उस समय उसके विकराल स्वरूप को और धू धू करके जलती हुई आग की लपटों को देखकर शिक्षा के ठेकेदार एयर कण्डीशण्ड कमरों में बैठकर व्यवस्था देते हैं कि आज का युवक बिगड़ गया है—जमाने की हवा खराब हो गई है विद्यार्थी वर्ग अनुशासनहीन और उद्दण्ड हो गया है। और भी न जाने कितनी भद्दी बातें लोग बक जाते हैं। कोई रुककर यह क्यों नहीं सोचता कि यह सब परिणाम है आज की सारहीन निरुद्देश्य और अपाहिज शिक्षा प्रणाली का—कोई भला आदमी बैठ कर इस पर क्यों नहीं लिखता कि इस सबका कारण आज स्कूल कालेजों में पढ़ाई जाने वाली आदर्श हीन और जीवन की कठोर समस्याओं से उदासीन एक अत्यन्त सड़ीगली निस्तेज और निन्दनीय शिक्षा व्यवस्था है। यदि दो चार दस बीस समझदार व्यक्ति ईमानदारी से इस पर विचार करें तो कुछ कल्याण हो सकता है और इस देश की शिक्षा प्रणाली को बदल कर—आमूल चूल परिवर्तन कर एक क्रान्तिकारी और ओजस्विनी शिक्षा का विकास किया जा सकता है।

हमारी दृष्टि में राष्ट्र की उन्नति और अवनति दोनों का सबसे मुख्य कारण वहाँ की शिक्षा व्यवस्था है—यदि शिक्षा सुधर गई तो क्रमश सामाजिक जीवन का हर पहलू सुधर सकता है और राष्ट्रिय जोवन एक नये स्पन्दन और अनुभूति से अनुप्राणित होकर विजयिनी वैजयन्ती फहराता हुआ अग्रसर हो सकता है।

[आर्य राष्ट्र की शिक्षा प्रणाली कैसी हो इस पर अगले अंक में प्रकाश डाला जायगा।] क्रमशः

मोटर साइकिल का वचन !

राजधर्म परिवार को जानकर प्रसन्नता होगी हमारे अपील पर जोधपुर (राजस्थान) के उत्साही आर्य नेताओं ने हमें शीघ्र ही एक नई मोटरसाइकल दान का वचन दिया है। इसके लिये हम श्री भोमसिंह जी प्रधान नगर आर्यसमाज, श्री केशवसिंह जी सांखल और डा० खेत लखाणी के हम विशेष आभारी हैं। श्री भोमसिंह जी की लगन और युवकों के लिये सहयोग की भावना बड़ी गहरी है। आर्यसमाज के अनथक कार्यकर्त्ता और देव दयानन्द के मिशन के लिये बड़े से बड़ा त्याग करने की इच्छा रखने वाले श्री भोमसिंह जी के प्रयत्न से इस वर्ष नगर आर्यसमाज का उत्सव गिरदी कोट घंटाघर (जोधपुर) में बड़े जोर-शोर से मनाया गया।

सबसे महत्वपूर्ण विभाग कौन सा है ?

समर्पणानन्द सरस्वती

यह इतनी सीधी सी बात सब के ध्यान में क्यों नहीं आती ? कहना होगा कि हमें सोचने की फुरसत नहीं है। देश में भ्रष्टाचार है।

सब जानते हैं कि यह हमारा सब से बड़ा रोग है, परन्तु सब के सब खाद्य-उत्पादन और उद्योग धन्धों के पीछे पड़े हैं। याद रखिये, यदि इससे लाख गुणा अन्न भी उत्पन्न हो तब भी इस देश से भूख और दरिद्रता नहीं जा सकती। लोग उस अन्न को जला देंगे, गाड़ देंगे, समुद्र में फेंक देंगे, परन्तु जनता को खाने के लिए नहीं देंगे।

आवश्यकता है ठीक विचार और ठीक आचार की। ठीक आचार और ठीक विचार का निर्माण होता है—पाठशाला में।

शिक्षा विभाग

भारत के भविष्य का निर्माण वही राजनैतिक दल ठीक कर सकेगा जो शिक्षा विभाग के महत्व को समझेगा।

वर्तमान सरकार इस विभाग का कोई महत्व नहीं समझती है।

यदि समझती तो शिक्षकों को निश्चिन्त करने वाला वेतन मिलता।

और

समाज में सर्वोच्च स्थान मिलता। क्या हमारे राष्ट्र में शिक्षक निश्चिन्त हैं ?

क्या उनको राष्ट्र की सामाजिक व्यवस्था में सर्वोच्च आसन मिल रहा है ? इसके विपरीत उनका स्थान समाज में सब से नीचे है।

इसलिए यदि राष्ट्र में सच्ची राजनीति को ठीक स्थान देना है तो सब से पहले प्राचीन गुरु शिष्य परम्परा को फिर से स्थापित करो।

उत्तर दिया जाता है कि वर्तमान युग के शिक्षक भी तो 'गुरु' पदवी के योग्य नहीं।

तब

लानत है इस समाज को तथा इस सरकार की नीति को।

शिक्षा विभाग सब विभागों से बढ़कर स्थान रखता है।

खाद्य उत्पन्न करने वाले विभाग से बढ़कर। मनु ने कहा है :—

'सर्वेषामेव दानानाम् ब्रह्मदानं विशिष्यते'

आज ब्रह्मदान के स्थान में लोभदान, ईर्ष्यादान, क्रोधदान, उच्छृङ्खलतादान हो रहा है। राजनीति को ठीक मार्ग पर लाने की यह सबसे पहली सीढ़ी है कि सच्चे शिक्षक का आदर हो। इसके बिना 'सत्यमेव जयते' बिल्कुल निरर्थक है।

शिक्षा विभाग को ठीक करो।
शिक्षा विभाग को ठीक करो।
शिक्षा विभाग को ठीक करो।

सामयिकी

भगवान ही मालिक है !

एक कहानी है !

एक गुरु जी के दो चेले थे। गुरु जी की सेवा के लिये चेलों ने आपस में समझौता कर रखा था कि एक दाहिने टांग की सेवा करेगा और दूसरा बांये की। एक दिन एक चेला कहीं बाहर से आया तो क्या देखता है कि गुरु जी टांग पर टांग रखे सो रहे हैं और उसकी वाली टांग नीचे है। अपनी टांग का अपमान देखकर उसे गुस्सा आ गया और उसने एक लाठी उठाकर गुरु जी के ऊपर वाली टाँग पर खींचकर दे मारा। बेचारे बूढ़े गुरु जी जोर-जोर से चीखने लगे। सुनकर दूसरा चेला आया और अपनी वाली टांग टूटी हुई देखकर उसने भी लाठी उठायी और दूसरी टांग पर दे मारा। चेलों के मिथ्या अभिमान के झगड़ों में उलझ कर बूढ़े गुरु जी चल बसे।

यही हालत कांग्रेस की हुई। दो 'निष्ठावान' कांग्रेसी दलों ने एक-दूसरे पर इस बुरी तरह कीचड़ उछाला कि कांग्रेस बेचारी तो मर गई। अब उसकी लाश पर भी झगड़ा चल रहा है। दिसम्बर में तेरही के लिये योजना बन रही है। एक दल अहमदाबाद और दूसरा बम्बई में इकट्ठा होगा।

दोनों दलों में अब जोश ठंडा पड़ रहा है क्योंकि इन्हें अब अपना भविष्य अन्धकारमय नज़र आ रहा है। श्रीमती इन्दिरा गांधी ने 'प्रगतिशील' गुट बनाकर सोचा था कि लाश पर कब्जा कर लूंगी पर अब उसका गुट भी टूटने लगा है। आन्ध्र के डी० संजीवैय्या को कांग्रेस प्रेसीडेन्ट बनाना चाहती थी पर मुख्यमन्त्री ब्रह्मानन्द रेड्डी की असहमति के कारण उसे 'ड्राप' कर दिया। सी० सुब्रह्मण्यम् को प्रसीडेन्ट बनाकर भी इन्दिरा जी ने अदूरदर्शिता का परिचय दिया क्योंकि सुब्रह्मण्यम् के अपने प्रान्त तमिलनाडू में कांग्रेस की जड़ उखाड़ने बैठी है डी० एम० के० और उसी डी० एम० के० के साथ गठबन्धन करके इन्दिरा जी किसी तरह अपने दिन काट रही हैं। इधर जब सुब्रह्मण्यम् ने अपनी 'वर्किंग कमेटी' घोषित की तो उड़ीसा का 'प्रगतिशील' गुट नाराज होकर चला गया। प्रच्छन्न कम्यूनिस्टों और रूस चीन के एजेन्टों को वर्किंग कमेटी में देखकर इन्दिरा जी के कई समर्थक अपने निश्चय पर पुनर्विचार करने लगे। इस स्थिति को भांप कर इन्दिरा जी ने बम्बई अधिवेशन पर विचार करने तथा नया अध्यक्ष चुनने के लिये गत पहली दिसम्बर को एक बैठक बुलाई जिसमें श्री चह्वाण, श्री जगजीवन राम के अतिरिक्त कुछ वरिष्ठ मन्त्री सम्मिलित थे। इन्दिरा जी ने प्रस्ताव रखा कि हममें से किसी को स्थाई अध्यक्ष बनना चाहिये। बात होते-होते श्री चह्वाण और जगजीवन राम पर टिकी। चह्वाण साहब तो चुप्पी साधे रहे यह सोचकर कि मुकाबले का उम्मीदवार इन्दिरा जी के अधिक करीब है। इसलिये जगजीवन राम खुशी-खुशी आगामी वर्ष के लिये अध्यक्ष नियुक्त हो गये। पर इससे बिहार के 'प्रगतिशील' एम० पी० नाराज हो गये कि अब अध्यक्ष बनने पर जगजीवन राम जी को केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल से हटना पड़ेगा और इससे बिहार को घाटा हो जायगा। उधर अर्थ-उपसमिति में टी० टी० कृष्णमाचारी के साथ चन्द्रशेखर को शामिल कर देने से प्रीवीपर्स की चिन्ता करने वाले 'प्रगतिशील' राजा महाराजा कांप उठे और उनका जो प्रतिनिधि—महाराजा फतहसिंह गायकवाड वर्किंग कमेटी में था वह टूटकर श्री निजलिंगप्पा के गुट में जा मिला। यह बात अब जोर पकड़ रही है कि श्री जगजीवन राम के अध्यक्ष बनने से इन्दिरा गुट की "प्रगतिशीलता" का रंग उड़ जायगा। जगजीवन राम जी व्यक्तिगत रूप से अतुल्य घोष और

कामराज के मित्र हैं और एक बार अधिकार में आने के बाद इन्दिरा जी की कठपुतली बनने से इन्कार कर देंगे। बम्बई अधिवेशन में 'प्रगतिशील' गुट का आपस में झगड़ा होना बहुत अधिक सम्भव हो गया है। इन सब बातों से इन्दिरा जी के गुट में निराशा छा रही है और वे अब अनुभव कर रहे हैं कि पिछले राष्ट्रपति के चुनाव में उन्होंने 'आत्मा की आवाज' का जो बबूल बोया था वह अब कांटे उगायेगा और रास्ता कंटकाकीर्ण बना रहेगा!

इधर विरोधी कैम्प में बूढ़े 'घाघ' बैठकर इन्डिकेट की धज्जी उड़ाने का मसविदा तैयार कर रहे हैं। मोरार जी देसाई और अशोक मेहता एक घाट पर पानी पी रहे हैं। पर इनकी प्रतिक्रियात्मक नीति इन्हें आगे नहीं बढ़ने दे रही है। राज्य सभा में 'रबात मामले' में इनकी करारी हार तो हुई ही साथ ही इनका जनसंघ के सिवाय कोई साथी न रहा। अब राज्यों में भी नीति और सिद्धान्तों को तिलाञ्जलि देकर सिन्डीकेट अपनी स्थिति मजबूत करने की कोशिश कर रहा है। बंगाल में इन्दिरा गुट और कम्यूनिस्ट पार्टी के जोड़ को तोड़ने के लिये सिन्डीकेट गुट मार्क्सवादी कम्यूनिस्टों से हाथ मिलाएगा, उत्तर प्रदेश में गुप्ता जी जनसंघ के हाथों खेलेंगे, केरल में मुस्लिम लीग के साथ गठबन्धन होगा और उड़ीसा में जनता पार्टी से 'विवाह' रचा जायगा।

इन सारे हालात को देखकर देश में मध्यावधि चुनाव के आसार अधिक स्पष्ट हो रहे हैं। यहाँ तक कि गृह-मन्त्रालय ने आगामी अप्रिल में चुनाव की सम्भावना पर विचार करना शुरु कर दिया है और इस सन्दर्भ में अनुसूचित जाति तथा हरिजनों के सुरक्षित सीट तथा अन्य सुविधाओं को १० वर्ष के लिये बढ़ाने की कोशिश पूरी सरगर्मी से चल रही है। देश का सामान्य नागरिक राजनीति की इस कबड्डी से ऊबता जा रहा है और कभी-कभी सैनिक शासन की आकांक्षा कर बैठता है। गरीब किसान और मजदूर का नाम लेकर राजनीति की स्टण्टबाजी तो खूब चलती है पर उनकी हालातों में कोई परिवर्तन नहीं हो रहा।

ऐसी स्थिति में देश सर्वथा नेतृत्वहीन पड़ा हुआ है। सरकारी कर्मचारी (ब्यूरोक्रेट्स) राज्य कर रहे हैं। आश्चर्य है देश टिका कैसे है?

अन्त में एक और कहानी है।

एक रूसी सांस्कृतिक दल भारत-दर्शन के बाद जब लौट रहा था तो उसके नेता से किसी पत्रकार ने पूछा कि इस यात्रा से आप क्या विचार लेकर जा रहे हैं। रूसी नेता ने उत्तर दिया - "मुझे यह विश्वास हो गया कि इस दुनियाँ में परमात्मा नाम की चीज है।" पत्रकार ने खुश होकर सोचा—शायद भारत के मन्दिरों से प्रभावित हो गया होगा। पूछा—पर कम्यूनिज्म तो आत्मा-परमात्मा में विश्वास नहीं करता। फिर आप एक कम्यूनिस्ट होकर ......रूसी ने बात काटते हुए कहा—"बात आपकी ठीक है पर अब इस नेतृत्वहीन और राजनैतिक अराजकता पूर्ण देश में भी कुछ व्यवस्था देखकर मुझे लग रहा है कि जरूर इस देश का भगवान ही मालिक है।" ●

राजधर्म

घर के लिए बच्चा, बच्चों के लिए शिक्षा,
शिक्षा के लिए परीक्षा होनी ही चाहिए।
पढ़ाने को वेद शिक्षा, शिक्षा के लिये पंडित,
पंडित के लिए दीक्षा होनी ही चाहिए।
देश के लिए रक्षा, रक्षार्थ नवयुवक हों,
युवकों को ब्रह्मचारी होना ही चाहिए।
जवानों के लिए भोजन, भोजन को पाकशाला,
पाकशाला में आचारी होना ही चाहिए।
राष्ट्र के लिए मरना, मरने के लिए जीना,
जीने के लिए हिम्मत होनी ही चाहिए।
युवकों के लिए शांति, शांति के लिए क्रांति,
क्रांति के लिए ज्वाला होनी ही चाहिए॥
जनता के लिए शासन, शासन के लिए आसन,
आसन के लिए दिल्ली होनी ही चाहिए।
घर के लिए राशन, राशन के लिए चूहे,
चूहों के लिए बिल्ली होनी ही चाहिए।
आर्य राष्ट्र के लिए सेना, सेना में युवक होंवे,
युवकों के लिए 'नित्य कर्म' होना ही चाहिए।
व्यक्ति के लिए समाज, समाज के लिए विधान,
विधान में 'राजधर्म' होना ही चाहिए।

—कृष्ण कुमार चौधरी

राजनैतिक इतिहास का आध्यात्मिक विवेचन

● स्व० इन्द्र विद्यावाचस्पति

संसार के राज्यों के उत्थान और पतन के इतिहास को विवेचना की दृष्टि से पढ़ें, तो हम इस परिणाम पर पहुँचे बिना नहीं रह सकते कि इन दोनों घटनाओं के कारणों में राज्य के निर्माताओं के चरित्र का बहुत ऊँचा स्थान है। राज्यों के निर्माताओं को हम तीन कोटियों में बांट सकते हैं। पहले वह लोग जो महत्त्वाकांक्षी, असाधारण रूप से वीर और संगठन कला में निपुण होते हैं, परन्तु चरित्रवान् नहीं होते। चरित्र से हमारा अभिप्राय बहुत विस्तृत है। चरित्रवान् व्यक्ति कामवासना का, विलासिता का और लोभ का शिकार नहीं होता। वह अपने स्वार्थ में अन्धा होकर प्रजा के हितों को पद-दलित नहीं करता। यह सम्भव है कि एक व्यक्ति इन अर्थों में चरित्रवान् न होता हुआ भी वीरता आदि अन्य गुणों में इतना बढ़ा हुआ हो कि शत्रु पर विजय प्राप्त करके राज्य या साम्राज्य तक की स्थापना कर ले। सिकन्दर, चंगेज खां आदि व्यक्ति इस कोटि में आते हैं। संसार ने उनके लोहे को माना। वह जिधर झुक गए, विजयश्री ने उसी ओर से आकर उनके गले में माला पहना दी। परन्तु उनमें उस चरित्र की कमी थी, जो स्थिर राज्य बनाने के लिए आवश्यक है। उनका अपना अन्त जैसा हुआ, उनके बनाए हुए साम्राज्यों का अन्त भी वैसा ही हुआ। अक्षौहिणी सेनाओं को परास्त करने वाले वीर हत्यारों के छुरों के शिकार हुए, और उनके बनाए हुए राज्य उनके साथ ही नष्ट-भ्रष्ट हो गए।

दूसरी कोटि के राज्य-निर्माता वह होते हैं, जो स्वयं असाधारण वीर न होते हुए भी परिस्थितिवश साम्राज्य बनाने में सफल हो जाते हैं। हमारे देश में गुप्त साम्राज्य की स्थापना ऐसे ही राजा द्वारा हुई। चन्द्रगुप्त स्वयं चन्द्रगुप्त मौर्य की तरह न कोई बड़ा विजेता था, और न अपने पोते चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की भांति शास्त्र और शस्त्र की सब कलाओं में प्रवीण था फिर भी वह गुप्त साम्राज्य बनाने में सफल हो गया, क्योंकि परिस्थितियों ने उसकी सहायता की। लिच्छवी वंश से उसके विवाह सम्बन्ध से उसका छोटा सा राज्य साम्राज्य के रूप में परिणत हो गया, जिसे समुद्रगुप्त ने विजयों द्वारा और विक्रमादित्य ने परिष्कार द्वारा चार चांद लगा दिये। ऐसे राज्य निर्माताओं में चाहे असाधारण वीरता न हो परन्तु यह आवश्यक है कि वे चरित्रहीन न हों। चन्द्रगुप्त प्रथम के सम्बन्ध में हमें इतिहास जो थोड़ी बहुत जानकारी देता है, उसके आधार पर हम कह सकते हैं कि वह एक शिष्ट और सज्जन राजा था जो यथाशक्ति अपनी प्रजा के पालन और अपने राज्य के संरक्षण में लगा रहा। यदि वह चरित्रवान् न होता तो उसके सुलभता से प्राप्त छोटे से साम्राज्य की वही गति हो जाती जो अयोग्य व्यक्ति को अकस्मात् विरसे में प्राप्त जायदाद की हो जाती है। चन्द्रगुप्त के उत्तराधिकारी यदि गुप्त साम्राज्य का नाम उज्ज्वल कर सके, तो उसका मुख्य कारण यह था कि उनके वंश का संस्थापक चरित्रवान् व्यक्ति था।

तीसरी कोटि में हम राज्य के उन निर्माताओं का परिगणन करते हैं, जो अपनी शक्ति से साम्राज्य की स्थापना करते हैं, और अपनी योग्यता से ही उसे समृद्धशाली बना कर उत्तराधिकारियों के हाथ में सौंप जाते हैं। उन के बनाये हुए राज्य पहले दोनों प्रकार के राज्यों से अधिक स्थायी होते हैं, परन्तु उनकी भावी प्रगति और उनकी आयु की लम्बाई बहुत कुछ उनके उत्तराधिकारियों की योग्यता पर अवलंबित होती है। ऐसे राज्य तब तक चलते हैं जब तक स पर शासन करने वाले व्यक्तियों में चरित्र संबंधी वह योग्यताएं बनी रहे, जिनके बिना राज्य का चलना असम्भव है। पुराने समय के कई साम्राज्य देर तक चले तो कई शीघ्र नष्ट हो गये। अनेक राजवंश आठ-दस पीढ़ियों तक शासन करते रहे, परन्तु कुछ राजवंश ऐसे भी हो गए हैं जो केवल दो-तीन पीढ़ियों में

ही नष्ट हो गए। यदि इन ऐतिहासिक विषमताओं के कारण की विवेचना की जाय तो हमें प्रतीत होगा कि उनमें शासक वर्ग की चरित्र सम्बन्धी योग्यता का ही सब से बड़ा महत्व है।

भारत के प्राचीन साम्राज्यों में से सब से प्रसिद्ध दृष्टान्त रघु के साम्राज्य का है। रघुवंश के पतन और उत्थान का इतिहास, इतिहास के विद्यार्थियों के लिए बहुत ही शिक्षादायक और मनोरंजक है। रघुवंश के संस्थापक दो थे, राजा दिलीप और उनका पुत्र रघु। दिलीप ने सुरक्षित और समृद्ध दशा में रघु को जो राज्य सौंपा, उसे रघु ने अपने बल और योग्यता से विशाल साम्राज्य के रूप में परिणत कर दिया। यदि रघु की विजययात्राओं के मानचित्र पर दृष्टि डालें तो हम इस परिणाम पर पहुँचेंगे कि रघु का साम्राज्य जितना विस्तृत था, उतना विस्तृत न मुगल साम्राज्य हो सका और न भारत का कोई और साम्राज्य। दिलीप और रघु बलवान् भी थे और चरित्रवान् भी।

रघु के सम्बन्ध में पुराणों तथा अन्य इतिहास ग्रंथों में जो कुछ लिखा है, उससे प्रतीत होता है कि वह क्षत्रिय के योग्य गुणों में अपने पिता से भी दो कदम आगे था। जिस चक्रवर्ती राज्य की इन दो वीर पुरुषों ने स्थापना की, राजा अज और दशरथ ने उसकी भली प्रकार रक्षा की और महाराज रामचन्द्र ने उसके प्रभाव को समुद्र के पार लंका तक फैला दिया। इस प्रकार अपनी चरम सीमा तक पहुंचे हुए रघु के राज्य का क्षय तब आरम्भ हुआ, जब रघु और राम के उत्तराधिकारियों में प्रमाद विषयासक्ति और लम्पटता ने घर कर लिया।

राम के पश्चात् राघवों के राज्य में जो पहला परिवर्तन हुआ, वह यह था कि उसके एक के स्थान पर अनेक केन्द्र बन गए। कुश कुशावती में प्रतिष्ठित हुए और लव की राजधानी शरावती में बनी। भरत ने अपने पुत्र पुष्कल को पुष्कलावती में और तक्ष को तक्षशिला में अभिषिक्त कर दिया। लक्ष्मण ने अपने अंगद और चन्दकेतु नाम के दो पुत्रों को कारापद प्रदेश का शासक बना दिया। इस प्रकार महाराज राम के देहत्याग के साथ ही रघु का विशाल साम्राज्य टुकड़े टकड़े हो गया। वह अयोध्यापुरी जिसके वर्णन में वाल्मीकि ऋषि ने अपना सम्पूर्ण वाक्-चातुर्य समाप्त कर दिया था, राम के देहावसान के कुछ ही दिनों पश्चात् खंडहर के रूप में परिणत हो गई।

यह तो हुई क्षय के प्रारम्भ की कथा। अब समाप्ति की घटनाओं पर दृष्टि डालिये। राम के पश्चात् तीसरी पीढ़ी से लेकर रघुवंश की समाप्ति तक २४ राजा हुए। मन को उद्विग्न करनेवाली उनकी कहानी सुनाने के लिए न यहाँ स्थान है और न आवश्यकता है। कुछ थोड़े से दृष्टान्त पर्याप्त हैं। राजा पारियात अत्यन्त भोगी होने के कारण असमय में ही मर गया। ध्रुवसन्धि को शिकार का बहुत शौक था, वह शेर के हाथों मारा गया। अन्तिम राजा अग्निवर्ण सुन्दर भी था और वीर भी, परन्तु उसमें चरित्र-बल नहीं था। वह कामुकता में ऐसा फंसा कि राज्य का सब बोझ मन्त्रियों पर डाल कर स्वयं पूर्ण रूप से विषय-भोग में पड़ गया, जिसका यह परिणाम हुआ कि उसे क्षय रोग ने ग्रस लिया। वह सन्तानहीन ही मर गया और उसके साथ ही रघु का राजवंश भी समाप्त हो गया।

दूसरा दृष्टान्त हम रोमन साम्राज्य के इतिहास में पाते हैं। यह सर्वसम्मत बात है कि रोमन साम्राज्य का यूरोप के प्राचीन इतिहास में अनूठा स्थान है। एक शहर के प्रजातन्त्र राज्य से प्रारम्भ होकर वह कुछ शताब्दियों में भूमि के बहुत बड़े भाग पर छा गया और एक समय ऐसा आया जब यह प्रतीत होता था कि सीज़र के शस्त्र के सामने संसार की कोई शक्ति खड़ी न रह सकेगी। साम्राज्य शक्ति की यह विशेषता है कि प्रारम्भ से ही उसमें क्षयरोग के कीटाणु बीज रूप में विद्यमान रहते हैं। शक्ति से ऐश्वर्य प्राप्त होता है, ऐश्वर्य प्राप्त होने से उपभोग की ओर प्रवृत्ति बढ़ती है जो प्रायः सीमा का उल्लंघन कर जाती है। बढ़ी हुई उपभोगकामना का परिणाम यह होता है कि पहले शासक वर्ग में और फिर देखादेखी प्रजाजनों में प्रमाद, परस्पर फूट और अनाचार के कीटाणु रोग के रूप में परिणत होकर सारे समाज-शरीर में व्याप्त हो जाते हैं। यही प्रक्रिया रोम में भी हुई। जिन वीर पुरुषों ने रोम का निर्माण किया था, वे मानसिक और शारीरिक दृष्टि से बहुत उन्नत थे, और रोम

की स्वाधीनता को अपना धर्म मानते थे। धीरे-धीरे रोम का शरीर बढ़ता गया, परन्तु अंदर की शक्ति क्षीण होती गई। जब रोम के धराव्यापी शरीर पर चंगेज खां और एटिला जैसे महान् योद्धाओं के आक्रमण होने लगे, तब संसार को यह देख कर आश्चर्य हुआ कि चिरकाल की समृद्धि और सुलभ विषयभोग ने न केवल उनमें फूट पैदा कर दी है,उनकी युद्ध शक्ति को भी बहुत निर्बल कर दिया है। रोमन साम्राज्य के क्षय के प्रसिद्ध इतिहास-लेखक गिबन ने अपने ग्रन्थ के अन्तिम परिच्छेद में रोम के पतन के कारणों का जो विवेचन किया है, उसमें दो कारणों पर विशेष रूप से बल दिया है। एक कारण तो यह था कि पदों और अधिकारों के लिए आपस में लड़-लड़ कर रोम के नेताओं ने साम्राज्य की जड़ें हिला दी थीं और दूसरा कारण यह था कि बढ़ी हुई तृष्णा को तृप्त करने के लिए उन्होंने अपने पुराने राष्ट्रीय स्मारकों और सुरक्षा के साधनों तक को उजाड़ डाला था। रोम के पतन के दिनों में देखने वालों को यह देख कर दुःख व आश्चर्य होता था कि जिस कवच को पहन कर रोम का योद्धा युद्धक्षेत्र में विजयी होता था, उसके तीसरी या चौथी पीढ़ी के वंशज के शरीर पर वह कवच इतनी ढीली आने लगी थी कि उसे पहन कर लड़ाई में जाना भी असम्भव हो गया था। उस अन्तिम युग में रोम के राज्य में अनाचार, भ्रष्टाचार और विषयलोलुपता सीमा से अधिक बढ़ गई थी। इतिहास लेखकों ने रोमन साम्राज्य के पतन को एक विशाल पर्वत के पतन से उपमा दी है। इतिहास बतलाता है कि पर्वत के उस पतन का मुख्य कारण यही था कि उसे बनाने वाली शिलाओं को अनाचार की दीमक ने चाटकर बिल्कुल खोखला कर दिया था।

भारत के इतिहास से एक और दृष्टांत लेना हो तो मुगलों के इतिहास पर दृष्टि डालिये। मुगल साम्राज्य के बनाने वाले महापुरुष ने मध्य एशिया से भारत तक की विजय यात्रा करके सल्तनत की स्थापना की। परन्तु उसके उत्तराधिकारी दिल्ली के लाल किले में सब प्रकार से साधन सम्पन्न होकर भी अपनी रक्षा न कर सके। इसका एकमात्र कारण मुगल बादशाहों का चरित्र-सम्बन्धी पतन था। बाबर का लड़का हुमायूँ एक राजपूतनी की राखी पाकर अपना फर्ज समझता है कि मुसलमान आततायी से लड़ने के लिये सन्नद्ध हो जाय और उसका वंशज जहांदर शाह शासन का नया ही उपाय निकालता है। वह शासन करना ही छोड़ देता है और सल्तनत का सारा बोझ वजीरों पर डाल देता है। राजकाज से निश्चिन्त होकर वह मदिरा और मोहिनी की सेवा में इतना संलग्न होता है कि उसे न अपनी सुध रहती है और न प्रजा की। वह लालकुँवर नाम की एक नर्तकी के चरणों में आत्मसमर्पण कर देता है,एक दिन जहांदर शाह और लालकुँवर महल की छत पर से यमुना की ओर देख रहे थे। सवारियों से भरी हुई एक नौका पार जा रही थी। लालकुँवर बोली कि मैंने सवारियों से भरी हुई किश्ती को कभी डूबते नहीं देखा। बस इतना इशारा काफी था। उसी समय बादशाह की आज्ञा से मल्लाहों ने सवारियों से भरी हुई किश्ती बीच धार में ले जाकर डुबो दी। बीसियों व्यक्ति डूब कर मर गए। इस पर लालकुँवर मुस्करा दी जिससे जहांदर शाह का जीना सफल हो गया। कुछ समय पश्चात् यदि ऐसे राज्य की किश्ती यमुना की मंझदार में डूब गई तो कोई आश्चर्य की बात नहीं।

भारत की राष्ट्रीय जागृति के ऐतिहासिक उतार पर समालोचनात्मक दृष्टि डालें तो हम देखेंगे कि केवल वही राष्ट्रीय उत्थान सफल हुए जो मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक उत्थान के साथ बंधे हुए थे। शिवाजी के नेतृत्व में महाराष्ट्र में जो विशाल राज्य-क्रांति हुई, वह जन्म काल से ही भक्तों और संतों द्वारा फैलाई सुधारणाओं से सम्बद्ध थी। पहले सुधार का वसंत छाया, पीछे क्रांति के फूल खिले। मराठाशाही कायम रही जब तक महाराष्ट्र के नेता संत तुकाराम और समर्थ गुरु रामदास के बतलाये हुए मार्ग पर चलते रहे। ज्यों ही उन्होंने उस मार्ग को छोड़कर पतन काल के मुगल शासकों का अनुकरण किया त्यों ही उनका भी पतन प्रारम्भ हो गया ? मानो ? विनाश की घंटी बज गई।

राजनैतिक और आर्थिक सफलता मनुष्य को प्रायः अन्धा बना देती है। वह सेना और थैली के बल पर इतना विश्वास करने लगता है कि इन दोनों से अधिक बलवती और इनकी प्रारम्भिक सफलताओं का कारण चरित्र शक्ति को भूल जाता है। व्यक्तियों और राष्ट्रों के उठकर गिरने का यही मुख्य कारण होता आया है। ●

वीर संन्यासी स्वामी श्रद्धानन्द जी को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करने की इच्छा रखने वाले नौजवानो ! एक बार स्व० स्वामी जी द्वारा लिखित आत्मचरित—"कल्याण मार्ग का पथिक" अवश्य पढ़ जायें। इससे आपके जीवन में क्रान्ति की भावना का उदय होगा और आपकी धमनियों में अदम्य शक्ति का संचार होगा।

—सम्पादक
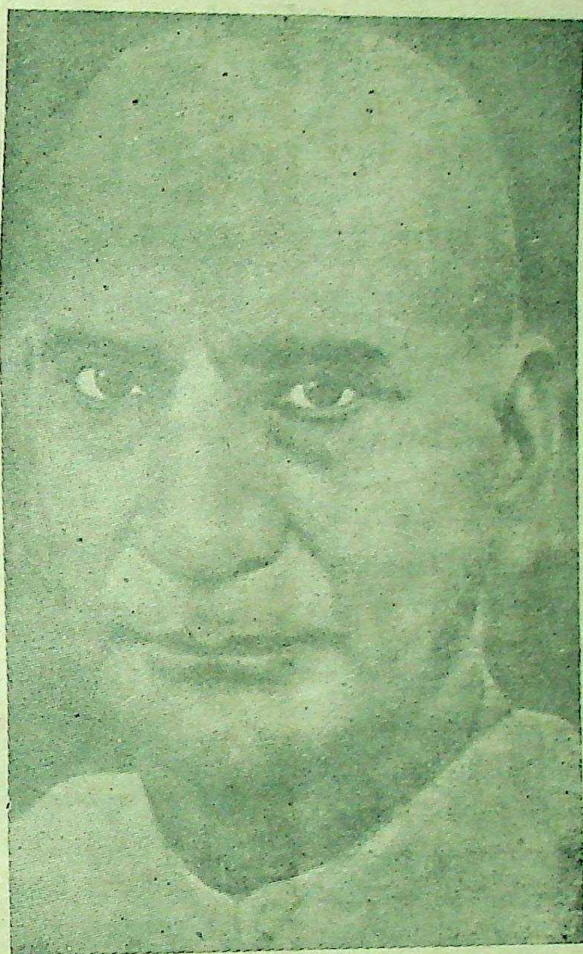
स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान जयन्ती २५ दिसम्बर को

दिल्ली राज्य की सभी आर्य समाजों तथा आर्य संस्थाओं की ओर से आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली राज्य, के तत्वावधान में अमर हुतात्मा पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी की ४३ वीं बलिदान जयन्ती बृहस्पतिवार, २५ दिसम्बर को बड़े समारोह से मनाई जायेगी।

उस दिन १०॥ बजे से श्रद्धानन्द बलिदान भवन, श्रद्धानन्द बाजार, में हवनयज्ञ आरम्भ होगा और ठीक १२ बजे दोपहर एक विशाल जलूस यहाँ से चलेगा। जलूस खारी बावली, नयाबांस, लाल-कुँआ, हौजकाजी, चावड़ी बाजार, नई सड़क, चाँदनी चौक, दरीबा, एस्प्लेनेड रोड होता हुआ सायं ४ बजे गांधी ग्राउंड समाप्त होगा। जहां एक विराट सार्वजनिक सभा होगी जिसमें अनेक आर्य एवं राष्ट्रीय नेता शहीद संन्यासी के चरणों में श्रद्धा-सुमन भेंट करेंगे।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अपना खून देकर आर्य जाति में नए रक्त का संचार किया था। अतः मन्त्री आर्य केन्द्रीय सभा आर्य मात्र से इसमें सम्मिलित होने का अनुरोध करते हैं।

ओम्प्रकाश

मन्त्री—आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली राज्य

१५ हनुमान रोड, नई दिल्ली।

घृणा की नींव पर बने पाकिस्तान के साथ मेरी मित्रता असंभव है !

● खान अब्दुल गफ्फार खाँ

कांग्रेस कार्यकारिणी समिति का अधिवेशन था। मैं भी उसमें भाग लेने के लिए दिल्ली गया। उस अधिवेशन में भारत के विभाजन के प्रश्न पर विचार हो रहा था। मैं और गांधी जी भारत के विभाजन के विरोधी थे। दूसरे सदस्यों के विषय में मैं कुछ नहीं कह सकता क्योंकि मैंने उस समय तक उनसे कुछ सुना नहीं था। किन्तु सरदार पटेल और राजगोपालाचार्य विभाजन के पक्ष में थे और इस सम्बन्ध में उन्होंने बहुत जोर लगाया था। दूसरी समस्या 'सीमा प्रांत में जनमत संग्रह' विचाराधीन थी। मैं और महात्मा गांधी दोनों जनमत संग्रह के भी विरोधी थे। मैं कहता था—'जनमत संग्रह की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि भारत और पाकिस्तान के प्रश्न पर ही हमारे प्रांत में निर्वाचन हुआ है और वह चुनाव हमने मुस्लिम लीग के विरुद्ध बड़े भारी बहुमत से जीता है और इस निर्वाचन को अभी एक वर्ष भी नहीं हुआ है। सरदार पटेल और राजगोपालाचार्य मेरे इस विचार के विरोधी थे और जनमत संग्रह के पक्ष में थे। अस्तु इसके लिए उन्होंने कार्यकारिणी समिति में बहुत जोर लगाया था और तर्क प्रस्तुत किए थे। अन्त में कार्यकारिणी समिति ने उनकी बात स्वीकार ली और देश का विभाजन तथा सीमा प्रान्त में जनमत संग्रह दोनों बातें स्वीकार कर ली। इस अवसर पर मैंने कार्यकारिणी समिति और गांधीजी से कहा कि हम पठान लोग आप लोगों के साथी हैं और हमने भारत की स्वाधीनता के लिए बहुत बलिदान किए है लेकिन आप लोगों ने हमें छोड़ दिया है और भेड़ियों के हवाले कर दिया है। हमने हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के प्रश्न पर चुनाव लड़ा था और हमने वह बड़े भारी बहुमत से जीता था। सारे संसार पर पख्तूनों का अभिमत प्रकाशित हो गया था। इसलिए हम जनमत संग्रह नहीं चाहते और दूसरा कारण यह है कि हमें तो भारत ने छोड़ दिया है, फिर हम हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के प्रश्न पर क्यों जनमत करें।

कांग्रेस की इस दुर्बलता से हमारे लोग हिन्दुस्तान से बहुत ही निराश हो गए इसलिये हमने कहा कि यदि मुस्लिम लीग हमारे साथ जनमत संग्रह करना चाहती है तो 'पख्तूनिस्तान और पाकिस्तान' के प्रश्न पर करे। खेद मुझे इस बात पर था कि हमने तो कांग्रेस को न छोड़ा, लेकिन कांग्रेसियों ने हमें छोड़ दिया। यदि हम कांग्रेस को छोड़ देते तो अंग्रेज हमें सब कुछ देता था। मेरा इस विषय में पक्का विश्वास है कि यदि कांग्रेस ने इस बात पर बल दिया होता और दृढ़ता से डटी रहती जिस प्रकार वह गुरुदासपुर के प्रश्न पर अड़ गई थी और जिस तरह कि जिन्ना ने वह बात मान ली थी तो हमारी यह मांग भी मान ली जाती। हमारा बड़ा दुर्भाग्य यह था कि गांधीजी इस संसार से चले गए। यदि वे होते, तो अवश्य हमारी सहायता करते। जवाहरलाल से भी हमें बड़ी आशाएं थीं और वे बहुत कुछ कर सकते थे; लेकिन हम नहीं समझते कि उन्होंने क्यों हमारे लिए कुछ नहीं किया ? जिस समय कांग्रेस कार्यकारिणी समिति ने भारत के विभाजन और सीमा प्रान्त में जनमत संग्रह का फैसला कर लिया तो यह मेरे लिए मृत्यु का फैसला था, मैं हैरान व परेशान बैठा हुआ था। मौलाना आजाद मेरे पार्श्व में विराजमान थे। मौलाना आजाद ने मुझ से कहा, 'तुम्हें चाहिए कि अब

मुस्लिम लीग में सम्मिलित हो जाओ,' मुझे दुःख होता है और हैरान भी होता हूं कि मौलाना साहब किस ख्याल से मुझे यह परामर्श दे रहे थे। क्योंकि मुस्लिम लीग से मेरा और मौलाना का विरोध सैद्धान्तिक और विचारात्मक था। उस समय तक मुस्लिम लीग की नीति में कोई ऐसा परिवर्तन भी नहीं हुआ था कि मेरे या मौलाना के लिए उसमें सम्मिलित हो जाने का औचित्य पैदा हो गया होता। मुस्लिम लीग तोड़-फोड़ और विनाश के लिए काम कर रही थी और मैंने अपना सारा जीवन निर्माण के लिए अर्पित कर रखा है। मौलाना साहब का यह परामर्श यदि कहीं ठीक भी होता तो उचित होता यदि वे कुछ वर्ष पहले ऐसा परामर्श देने में कंजूसी से काम न लेते, खैर, मुझ पर उस परामर्श का कोई अच्छा प्रभाव न हुआ, क्योंकि मैं आस्थाओं अथवा सिद्धान्तों के प्रश्नों में समय की मांगों के साथ बदलना नहीं जानता और न ही मेरा देश और जाति इस प्रकार गिरगिट की भाँति रंग बदलना अच्छा समझती है, जिस समय अहरार संस्था (मजलिसए-अहरारि-ए-इस्लाम) पाकिस्तान बनने के पश्चात् मुस्लिम लीग में सम्मिलित हो गई। लियाकत अली ने उन्हें बुरी तरह तिरस्कृत करके मुस्मिल लीग से बाहर निकाल लिया था।

एक बात मौलाना साहब ने अपनी पुस्तक में लिखी है—कलकत्ता में मुझ से मिलने के लिए कुछ पठान आये थे। जब मैंने चाय के साथ पठानों को बिस्कुट पेश किए, तो पठानों ने कहा कि यह चीज तो हमने कभी नहीं खाई है, डाक्टर खान साहब और बाचाखान खाते थे, लेकिन वे हमें नहीं देते थे।

मौलाना साहब बहुत बार सीमा प्रान्त में आए थे और उन्होंने मेरा स्वभाव और पठानों का अतिथि-सेवा भाव भी देखा था और उन्होंने यह भी देखा होगा कि हमारे मध्य कितना साम्यभाव है। पठानों में इतनी गरीबी भी नहीं कि उन्होंने बिस्कुट देखा न हो या खाया न हो। अतिथियों की बात छोड़िए, अपने नौकरों के साथ रोटी व चाय एक जगह खाते-पीते हैं और जो कुछ स्वयं खाते हैं उन्हें भी देते हैं। हमारे प्रदेश में यह बात बहुत अनुचित समझी जाती है कि चाय पीतो जाओ और यदि कोई साथ बैठा हो तो उसे न दो। इसलिए मैं नहीं जानता कि मौलाना साहब के पास किस प्रकार के लोग गए थे। मौलाना साहब ने यह भी लिखा है, 'डाक्टर साहब और बाचाखान कांग्रेस फण्ड अपने प्रान्त में खर्च करने के स्थान पर केन्द्र को वापस कर दिया करते थे और मौलाना साहब के कथनानुसार यह मितव्ययिता हमारे प्रभाव और सम्पर्क के कम हो जाने का कारण बताई जाती है। खुदाई खिदमतगार आन्दोलन दूसरे आन्दोलनों की भांति केवल राजनीतिक आन्दोलन नहीं है —यह राजनीतिक भी है—सामाजिक भी है—आर्थिक भी है—नैतिक भी है और आध्यात्मिक भी है। खुदाई खिदमतगार अपनी जाति और देश की सेवा खुदा के वास्ते (परमार्थ के रूप में) करता है। यहाँ तक कि वह अपनी वर्दी भी अपने पैसों से बनाता है। हमने कभी कांग्रेस से पैसे दिये होंगे। यदि कांग्रेस से पैसे लिए हों, तो संसदीय मंडल को दिये होंगे और हम लोग राष्ट्रीय कोष (कौमी फण्ड) का अनुचित प्रयोग करना खुदा के निकट अपराध समझते हैं। यदि हमारे आंदोलन का प्रभाव और सम्पर्क कम हो गया हो तो, पाकिस्तान के इतने अत्याचार, अन्याय, उत्पीड़न, क्रूरता, अपमानजनक व्यवहार, यहाँ तक कि आए दिन भाषण, गोलीवर्षण का शिकार होने के बावजूद हजारों लोग किस प्रकार जेलखानों में जाते और जेलों में दुःख व कष्ट भोगते ? वे लज्जास्पद जीवन शान्त व धैर्य भाव से क्यों व्यतीत करते ? काश ! मौलाना साहब इस प्रकार का एक भी उदाहरण किसी अन्य संस्था के सम्बन्ध में हमें बताते खैर, मैं प्रसन्न हूं कि मौलाना साहब एक सत्य को संसार के सामने स्वीकार करते हैं कि हमने कांग्रेस से पैसे कभी नहीं लिए और हमारा सम्बन्ध उसके साथ एक उभयनिष्ठ साझे-उद्देश्य के लिए काम करना था और कुछ नहीं।

मौलाना साहब का यह विचार कि हम कांग्रेस के ये पैसे कांग्रेस को वापस कर दिया करते थे—मेरी ओर से एक स्पष्टीकरण की मांग पैदा करता है और वह यह है कि खुदाई खिदमतगार आन्दोलन कभी उन पैसों की आवश्यकता से ग्रस्त नहीं हुआ—ये पैसे यदि कांग्रेस ने दिए भी

होंगे, तो पार्लामेण्टरी बोर्ड को दिए होंगे। यह प्रश्न कि पैसों का न खर्च करना तो मौलाना के कथनानुसार हमारे प्रभाव व सम्पर्क में यही कमी का कारण बना। इस सम्बन्ध में मैं निवेदन करता हूं कि मौलाना साहब ने विभाजन से पहले हमारी शक्ति का अनुमान किया था कि केदा खिदमतगार आंदोलन जब अवैध घोषित नहीं होता था, तो वह सदा चुनाव में विजय प्राप्त करना था और सरकार अपने हाथों में लेता रहा था। विभाजन के पश्चात् और पाकिस्तान बनने के बाद पाकिस्तान में कोई चुनाव नहीं हुआ जिससे मौलाना साहब हमारे जोर या कमजोरी का अनुमान करते और किसी परिणाम पर पहुँचते। मैं बहुत कृतज्ञ हूंगा, यदि पाकिस्तान में फिर स्वतन्त्र जनमत संग्रह हो जाए ताकि संसार देख ले कि मेरी जाति और देश किस रास्ते पर और किसके पीछे चल रहा है।

मेरा सारा संघर्ष भी इसी के लिए जारी है। हां, यदि मौलाना साहब या अन्य किसी को चुनाव के अतिरिक्त किसी अन्य तर्क व युक्ति की आवश्यकता हो, तो मैं निवेदन करूंगा कि यह हजारों लोगों का गलना-सड़ना, सैनिकों का मारा जाना, देश छोड़कर चले जाना और उनकी सम्पत्तियों की जब्ती आदि किस चीज की दलील पेश करते हैं ? यह मुझे जेलखाने में रखा जाना किस लिए है ? यदि मेरा या मेरे राजनीतिक दल का प्रभाव व पहुँच—असर व रसूख नहीं है, तो पाकिस्तान की सरकार हमसे डरती क्यों है ? और मुझे क्यों जेलखानों में बन्द करती है ?

विभाजन हो चुका, तो मैंने कहा, अब जबकि पाकिस्तान बन चुका है और कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग ने विभाजन स्वीकार कर लिया है, तो मैं और मेरा दल बिना किसी प्रकार का हिस्सा मांगे देश और जाति की सेवा करना चाहते हैं। मेरी जाति पाकिस्तान की नागरिक और वफादार है और हम इस देश के निर्माण तथा उन्नति के प्रयत्नों में पूरा भाग लेंगे। लेकिन पाकिस्तान की सरकार पर मेरे इन विचारों का कुछ भी प्रभाव न हुआ और उलटा मुझ पर यह अभियोग लगाया गया कि मैं निर्माण की आड़ में ध्वंस चाहता हूँ। फलस्वरूप मुझे गिरफ्तार कर लिया गया। मुझ पर कबाइलियों से मिल कर षड्यंत्र करने का झूठा अभियोग लगाया गया। इसी अभियोग में मेरे बेटे वली खां को भी पकड़ लिया गया और कुछ समय के पश्चात् डाक्टर खान साहब तथा अब्दुल गनी भी गिरफ्तार कर लिए गए। बिना किसी तर्क और दलील के मुझे तीन वर्ष कैद का दण्ड दे दिया गया।

मेरी कैद की अवधि तीन वर्ष व्यतीत होने के पश्चात् मुझे कोहाट के डिप्टी कमिश्नर के सामने पेश किया गया। डिप्टी कमिश्नर ने मुझसे नेकचलनी की जमानत मांग ली, मैंने इस जमानत के मांगे जाने का कारण पूछा, तो उत्तर मिला कि मैं पाकिस्तान के विरुद्ध हूँ। जब मैंने इस बात का प्रमाण मांगा, तो कहने लगे बहस की कोई आवश्यकता नहीं। तब मैंने जमानत देने से इन्कार कर दिया, जिस पर उन्होंने अपना फैसला सुना दिया और मुझे तीन वर्ष श्रमयुक्त कारावास का दण्ड दिया गया। मुझे मिण्टगुमरी जेल में भिजवा दिया गया, जहां मैंने अपनी सजा के दिन काटे। मुझे सजा में से वह छूट भी न दी गई, जो जेल के नियमानुसार होती है और जब मैं पूरी सजा भुगत चुका तो १९१८ रेगुलेशन के अधीन मुझे नजरबन्द कर दिया गया। इस प्रकार जनवरी १९५४ से पहले मुझे रिहाई प्राप्त न हुई। जब मुझे रिहाई मिली तो भी नाममात्र को थी। मेरी गिरफ्तारी का सिलसिला निरंतर जारी रहा और इस प्रकार १५ वर्ष तक मुझे पाकिस्तानी जेलों में रहना पड़ा।

ज्योंही पाकिस्तान सरकार स्थापित हुई, बिना किसी अपराध के हम पर ऐसे-ऐसे अत्याचार ढाने आरम्भ कर दिए गए, जो काफिर फिरंगियों के शासन-काल में भी हम पर नहीं ढाए गए थे। फिरंगियों ने हमारे घरों को नहीं लूटा था, लेकिन पाकिस्तान की इस्लामी सरकार ने हमारे घर लूट लिए। फिरंगियों के जमाने में हमारे समाचारपत्र और जलसे बन्द नहीं किए गए थे। लेकिन पाकिस्तान की इस्लामी सरकार ने बन्द कर दिए। फिरंगी सरकार पख्तूनों की महिलाओं का अपमान नहीं करती थी। पाकिस्तान की सरकार ने यह भी किया। इन बातों की चर्चा छोड़िए, इस सरकार ने अत्याचार की कोई सीमा न छोड़ी। जिस समय चारसद्दा में पठान नर-नारियां

जुम्मा की नमाज अदा करने और अपने बन्दी भाइयों के लिए दुआएँ मांगने जा रहे थे और अपने सिरों पर कुरान रखकर मसजिद में प्रविष्ट हो रहे थे, तो उस समय पाकिस्तान की इस्लामी सरकार के मशीनगन चलाने वाले सिपाहियों ने निहत्थे पठान स्त्री-पुरुषों की छातियों पर तथा खुदा के कुरान पर गोलियाँ चलाकर उन्हें छलनी कर दिया।

ठीक इसी प्रकार जेल में जो बर्ताव अंग्रेज सरकार हमारे प्रति अपनाती थी, उसके मुकाबले में इस इस्लामी सरकार ने हमारे साथ दस गुना अधिक बुरा व्यवहार जारी रखा। पाकिस्तानी सरकार ने मुझे सदा जेल की ऐसी कोठरी या ऐसी बैरक में रखा, जिसमें बत्ती रात के समय गुल कर दी जाती थी। हैदराबाद जेल में तो मुझे एकांत में रखा गया और किसी से मिलने की भी इजाजत नहीं थी। इस जेल का जलवायु भी मेरे अनुकूल न था, अपितु हानिकारक था। वहाँ मैं बीमार हो गया। मुझे गुर्दे की खराबी का रोग पैदा हो गया, जिससे मेरे पांव खराब हो गए, लेकिन जेलर ने, जो एक पंजाबी मुसलमान था, मेरी ओर कोई ध्यान न दिया और नाम-मात्र को गलत-सलत दवाएँ देता रहा। अन्त में मुझे लाहौर जेल में स्थानान्तरित कर दिया गया। वहाँ भी बीमारी बढ़ती गई। यहाँ से मिंटगुमरी जेल में भिजवा दिया गया और कोठरी में बन्द कर दिया गया। यहाँ भी बीमारी ने मेरा साथ न छोड़ा और मेरा स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन गिरता ही गया।

मैंने अंग्रेजों की जेल में १५ वर्ष काटे और पाकिस्तान की इस्लामी सरकार के शासन में भी १५ वर्ष कैद में व्यतीत किए। पाकिस्तान की सरकार की ओर से मुझे कैद का दण्ड जुर्माने के साथ होता था। मेरी सम्पत्ति का एक भाग केवल पन्द्रह रुपये जुर्माने के बदले में पाकिस्तानी सरकार ने अपने अधिकार में ले लिया। जबकि उसका यथार्थ पचास हजार रुपया से भी अधिक था। अंग्रेज सरकार यदि अत्याचार करती थी, तो इसलिए की वह हमारी शत्रु थी, हमारा उसके साथ झगड़ा था लेकिन पाकिस्तान की इस्लामी सरकार को मैं समझ नहीं सका किस अपराध के कारण उसने मुझे और हजारों अन्य खुदाई खिदमतगारों को बन्दीगृह में डाला।

मेरे निकट पाकिस्तान से मित्रता संभव ही नहीं, क्योंकि पाकिस्तान का आधार घृणा पर रखा गया है। पाकिस्तान की घुट्टी में घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, शत्रुता, वैमनस्य आदि दुर्भाव सने हैं। पाकिस्तान की उत्पत्ति अंग्रेजों की कृपा से हुई है। पाकिस्तान अंग्रेजों ने इसलिये बनाया कि जीवन-भर के लिए हिन्दु व मुसलमानों में दंगे होते रहें।

पाकिस्तान तो शांति और मैत्री की बात सोच ही नहीं सकता। वह श्रेय-साधना सुलाह-सफाई का घोर विरोधी है। पाकिस्तान हुड़दंग मचाकर या हंगामा-पसंदी और जिहाद के फर्जी नारों से पाकिस्तानी जनता को काबू में रखता है।

छात्रों का आक्रोश

छात्रों का आक्रोश केवल भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। यहाँ तक कि कई देशों में छात्रों का आक्रोश देश के शासक बदलवाने में भी सहायक हुआ है। डॉ० सुकर्ण का तख्ता पलटने का श्रेय अगर किसी को दिया जा सकता है तो वह वहां के छात्र ही हैं। पाकिस्तान में अय्यूब का शासन डगमगाने में भी छात्रों का ही हाथ था। पिछले दिनों कोरिया के यनसी विश्वविद्यालय के एक हजार छात्रों की पुलिस के साथ जम कर खासी मुडभेड़ हुई। यह मुठभेड़ कोरिया की राजधानी सिओल की सड़कों पर अच्छा खासा तनाव का वातावरण स्थापित कर रही थी। छात्रों की मांग थी कि राष्ट्रपति पार्क को १९७१ में पुनः राष्ट्रपतिपद के चुनाव के लिए खड़ा होने की इजाजत न दी जाये। कुछ दिय पहले राष्ट्रपति पार्क ने संविधान में एक संशोधन करवाया था जिस के अंतर्गत उन्हें तीसरी अवधि के लिए भी चुनाव लड़ने की छूट मिल गयी थी। इस से पहले सिओल के राष्ट्रपति का कार्यकाल दो अवधियों तक ही था। छात्रों और पुलिस की इस तनातनी के कारण कोरिया के अधिकतर शहरों में विश्वविद्यालय बंद रहे।

ओ३म्

राजधर्म के नियम

१. राजधर्म पाक्षिक पत्र है। इसका उद्देश्य महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों के आधार पर आर्यराष्ट्र की स्थापना करना, युवापीढ़ी में सदाचार की भावना उत्पन्न कर उन्हें संगठित करना है।

२. राजधर्म में वैदिक सिद्धान्तों के विरुद्ध विज्ञापनों तथा लेखादि सामग्री को स्थान नहीं दिया जाएगा।

३. वार्षिक शुल्क १० रु० है तथा ५ रु० देकर छ: मास के लिए भी ग्राहक बना जा सकता है। आजीवन सदस्यता शुल्क २५० रु० है जो सदस्य अपनी इच्छा पर कभी वापिस ले सकता है। जब तक राशि जमा रहेगी राजधर्म बिना मूल्य पहुँचता रहेगा।

४. अंक न मिलने पर अथवा अन्य शिकायत होने पर 'प्रबन्धक' राजधर्म के नाम पत्र भेजें। शिकायत की तुरन्त जांच कर के समाधान कर दिया जावेगा। उत्तर के लिए जवाबी पत्र लिखें। पत्रव्यवहार करते समय ग्राहक संख्या लिखना न भूलें।

५. विशेषांक साधारण डाक से भेजा जाता है। इसकी न मिलने की जिम्मेदारी कार्यालय की नहीं होगी। विशेषांक निकलने से पूर्व सूचना पहले अंक में दी जावेगी। सुरक्षित पहुँचने के लिए पचहत्तर पै० की डाक टिकट एक सप्ताह पूर्व भेज दें।

६. राजधर्म के लेखकों की इच्छा पर निर्धारित विषयों पर २१ रु० तक दक्षिणा दी जा सकती है। विशेष रूप से राजनीति अर्थनीति एवं शिक्षानीति विषयक लेखों को प्राथमिकता दी जाएगी।

७. विज्ञापन तथा राजधर्म बिक्री के लिए निर्धारित रेट पर २५% कमीशन दिया जाएगा। आज ही एजेंसी लेकर लाभ उठाएं।

विज्ञापन-दर

कवर पृष्ठ ४ पूरा —२०० रु०

कवर पृष्ठ ४ आधा —१५० रु०

कवर पृष्ठ ३ पूरा —१५० रु०

कवर पृष्ठ ३ आधा —१०० रु०

अन्य पृष्ठ पूरा —१०० रु०

अन्य पृष्ठ आधा —६० रु०

स्थायी विज्ञापन के लिए २५ प्रतिशत कमीशन दिया जावेगा।

प्रबन्धक—
राजधर्म
आर्य समाज, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-१

आर्यराष्ट्रीयता का उदय हो !

स्व० लाला लाजपतराय

आर्यराष्ट्रीयता की भावना इतनी प्राचीन है जितना कि आर्य जाति का अभ्युत्थान, जितना कि विश्व की विभिन्न संस्कृतियों का समुद्गम किंवा जितना कि प्राचीनतम संसार का इतिहास। यह भावना उत्तरोत्तर समृद्ध होती गई, सुन्दर होती गई। हिन्दू राष्ट्रीयता अथवा आर्यराष्ट्रीयता के सभी विवादास्पद विचारों से मैं सहमत हूँ। मैं इस विवाद को अनावश्यकतया उग्र नहीं बनाना चाहता। मैं तो कहता हूँ कि मैं सबके साथ सहमत हूँ।

आर्यराष्ट्रीयता के विचारमात्र से अतीत की दुःखद झाँकियां मेरे आँखों से गुजर जाती हैं—पूरा इतिहास कौंध जाता है। हम यह सोचने पर विवश हो जाते हैं कि राष्ट्रीयता की भावना यदि हमारे पूर्वजों में थी तो फिर हमारी इतनी दुर्गति क्यों हुई ? यदि हमारे पूर्वजों में राष्ट्रीयता की भावना सबल थी तो वे सदियों तक विदेशियों की पाँव की जूती क्यों बने रहे ? वीर राजपूतों और मराठों ने यवन-शासन का जुआ क्यों नहीं उतार फेंका। वे शत-शत वर्षों तक संघर्ष करके भी क्यों असफल रहे ? कहा जाता है कि ये संघर्ष राष्ट्रीय भावना से युक्त होकर नहीं किये गए थे ? ये जनसहयोग और आशीर्वाद से सहकृत नहीं थे। जब मराठे यवन-शासन के प्रति संघर्षशील थे तो सिसौदिया व राठौर राजपूतों ने साथ नहीं दिया। यह भी संकोचपूर्वक कहे बिना रहा नहीं जाता कि जब एक वर्ग संघर्ष करता था तो दूसरा शत्रुपक्ष से साँठगाँठ करता था। इस प्रक्रिया में अपवाद भी देखा गया कि समग्र हिन्दू जातियों ने मिलकर सामूहिक रूप से महमूद गजनवी का सामना किया। पाण्ड्य, अशोक, शिलादित्य और भोज की संगठन शक्ति को भूलना भी अनुचित होगा। पृथ्वीराज ने हिन्दू साम्राज्य को यवनों के सुपुर्द किया लेकिन कितने संघर्ष में अनन्तर ! उन्होंने समग्र हिन्दू सम्राटों की सेनाओं का नेतृत्व किया। अभिप्राय कि आर्यराष्ट्र संगठन के अभाव में क्षत-विक्षत हुआ—यह कहना अनुचित और असमीचीन होगा।

देश के उत्थान और पतन के लिए कोई एक नृपति या व्यक्ति जिम्मेदार नहीं होता। इसमें कितने ही निमित्त होते हैं। कितने ऐसे होते हैं जिनका नियमन हमारे वश का नहीं है। यदि पृथ्वीराज के हाथ से आर्यसाम्राज्य जाता रहा तो न हम पृथ्वीराज को बदनाम करने के अधिकारी हैं—न यह कहते हुए शोभा पाते हैं कि तत्कालीन भारत में राष्ट्रीय भावना की कमी थी। भारतेतर देशों में जो भारत का समुज्ज्वल यश प्रतिबिम्बित था—वह भारत की उग्र राष्ट्रीयता के ही कारण।

प्राचीन आर्यसाहित्य में आर्यों द्वारा दस्युवर्ग के दमन की अनेक रोचक कथाएं हैं। देवताओं से स्तुति की जाती है कि हमें दस्युओं, चाण्डालों, म्लेच्छों से रक्षा करें, उन्हें परास्त करने हेतु सामर्थ्य दें—इत्यादि। रामायण और महाभारत में भी इस विषयक अनेक प्रसंग हैं। युधिष्ठिर का राजसूय यज्ञ और जरासिन्धु की योजना भी इसी महत्वाकांक्षा से अभिप्रेत थी।

वैसे तो आर्यसाम्राज्य की यशोगाथाएं प्रायः लुप्त हो चुकी हैं। गौतमबुद्ध का पूर्वकालीन इतिहास प्रायः अज्ञात है। जो कुछ इतिहास उपलब्ध है वह भी इतना अस्पष्ट, उलझनपूर्ण व अलौकिक भाषा में है कि उनके माध्यम से किसी निष्कर्ष पर पहुँचना शक्य नहीं। पाश्चात्य इतिहासकारों ने हमारे बारे में जो कुछ लिखा है तदनुसार तो हम निरे असभ्य जंगली थे। अब समय आ गया है कि आर्यावर्त के इतिहास का पुनर्लेखन हो। हमारी गौरवगरिमा का पुनरंकन हो। पाश्चात्यों द्वारा सुझाये मार्ग पर चलने वाले भारतीय तथाकथित तरुण-वर्ग भी अपने पूर्वजों को

असभ्य और जंगली कहते हैं। उनकी राष्ट्रीय भावना पाश्चात्य प्रेरित है। अब समय आ गया है कि हमें अपने युवकों को अपने पूर्वजों के यथार्थ चरित्र का ज्ञान कराया जाय। उनकी पाश्चात्य प्रेरित राष्ट्रीयता को भारतीय परिधान पहनाया जाय।

आर्यमर्यादा को दूषित करने वाले अनेक कर्मकाण्ड पाखण्ड है जिस के आवरण में आर्यधर्म आवृत हो गया। वह पोलापन, तथाकथित सनातन धर्म ही चहुंओर छा गया। आर्यधर्म की वास्तविकता किसी नेपथ्य में छिपी रही है।

धर्म का आवरण में चला जाना, पाखण्ड का उदय होना, धर्म के नाम पर नाना प्रकार के विवाद और द्वन्द्व का होना, यह आम बात है। रोम, यूनान और यवन की सभ्यता भी इससे वंचित नहीं है। आंग्ल, जर्मन, फ्रेंच या अमरीकी इतिहास भी इस तथ्य से मुंह नहीं मोड़ सकते कि धर्म के वास्तविक रूप के साथ सामाजिक रीति-रिवाजों का सामंजस्य नहीं रहा है।

परन्तु अनेक मत-मतान्तरों वादविवादों के बावजूद भी वहाँ की राष्ट्रीय भावना में कोई मालिन्य नहीं आया।

आर्यराष्ट्रीयता की भावना को सुस्थापित रखने के लिए हमें वातावरण में व्याप्त मतमतान्तरों और विवादों से घबड़ाना नहीं चाहिये। संघर्ष का सफलतापूर्वक सामना करना ही राष्ट्रनिष्ठा है। असत्य पर सत्य की, पाप पर पुण्य की, शैथिल्य पर उमंग की, प्रमाद पर प्रभुता की विजय होती आई है—अराष्ट्रीय वातावरण में राष्ट्रनिष्ठा का पालन-पोषण करना पड़ता है।

राष्ट्रीय भावना के क्षणिक अस्तप्राय पर हमें उद्विग्न नहीं होना चाहिये प्रत्युत लौह-संकल्प लेकर अपने कार्य में जुटे रहना चाहिये कि हम आर्यराष्ट्रीयता का साक्षात्कार करेंगे—आर्यराष्ट्र की पुनः स्थापना करेंगे।

(लाला लाजपतराय द्वारा लिखित 'ए स्टडी आफ हिन्दू नेशनलिज्म' पर आधारित)

पाकिस्तान में 'पंजाबी सूबा'

पाकिस्तान में छात्रों ने एक बार फिर याह्या खां प्रशासन के सामने अपनी माँगों का चिट्ठा पेश किया है, वे चाहते हैं कि शैक्षिक स्तर में कुछ परिवर्त्तन कर उन्हें अधिक स्वाधीनता दी जाये, उन के इस आवाज बुलन्द करने के पीछे उन पाँच सौ लेखकों, बुद्धिजीवियों और अध्यापकों की भी माँग है जो पश्चिमी पाकिस्तान और पंजाब के लिए पंजाबी भाषा के विकास और उसे विश्वविद्यालय स्तरीय दर्जा देने की आवाज उठा रहे हैं। इन लेखकों और बुद्धजीवियों ने राष्ट्रपति याह्या खां को पंजाबी भाषा को पंजाब और पश्चिमी पाकिस्तान के अन्य पंजाबी क्षेत्रों में शिक्षा का माध्यम बनाने के बारे में एक ज्ञापन दिया है। अपने ज्ञापन में उन्होंने जनरल याह्या खां से दर्खास्त की थी कि जिस तरह सिंधी और पश्तो को अपने-अपने प्रदेशों में हक दिया गया है वैसे ही पश्चिम पाकिस्तान में रहने वाले साढ़े तीन करोड़ पंजाबियों को भी उनके हकों से महरूम नहीं किया जाना चाहिए। शिक्षा माध्यम प्राइमरी स्कूल से शुरू होना चाहिए और वयस्क शिक्षा के कार्यक्रम में भी इस भाषा के इस्तेमाल की छूट होनी चाहिए। इन लोगों की माँग है कि पंजाबी साहित्य को समृद्ध बनाने में बाबा फरीद, शाह हुसैन, बुल्ले शाह और अन्य सूफी कवियों की जो देन है उसे नजरंदाज नहीं किया जाना चाहिए। इन के अलावा कुछ और भी शृंगार और वीर रस के कवि हैं जिन के साहित्यिक भंडार को सुरक्षित रखना पाकिस्तान के लिये गौरव की बात हो सकती है, इस भंडार को सुरक्षित रखने का दायित्व पंजाब विश्वविद्यालय के पंजाबी विभाग को सौंपना चाहिए। पंजाबी पंजाब के हर स्कूल और कालेज में मुख्य भाषा के रूप में पढ़ायी जानी चाहिए तथा शिक्षकों के प्रशिक्षण संस्थानों में भी मुख्य भाषा के रूप में उस का प्रयोग किया जाना चाहिये, ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने वालों में फैज अहमद फैज, लेफ्टिनेंट, जनरल मुनीर नियाजी, जोशुआ फजलुद्दीन, ऐरिक कैप्रियन, डॉ॰ लईक बाबरी करयूम नजार, मौलाना मुहम्मद उमर लुधियानवी, मौलाना हफीजुर्रहमान शाह और डॉ॰ फकीर मुहम्मद फकीर आदि हैं। यह भी संभव है कि इस के बाद वहाँ अलग पंजाबी सूबा की माँग की जाने लगे।

एक दृष्टिकोण—

हिटलर ने आर्य-संस्कृति की विश्व-विजय का स्वप्न देखा था !

●रामचन्द्र वीर

जर्मनी और इंगलैंड के प्रथम विश्व-युद्ध में जर्मनी के सम्राट कैसर की पराजय हो गई थी और वार्सेलीज की सन्धि में जर्मनी के साथ अंग्रेजों ने बड़ा अपमानजनक समझौता किया था । सम्राट कैसर के शासनकाल के पश्चात् जर्मनी में कितनी उथल-पुथल हुई, यह लिखना इस लेख का उद्देश्य नहीं है । मैं इतना ही लिखना चाहता हूँ कि जर्मनी के प्रेसीडेन्ट ८५ वर्ष के वयोवृद्ध हिण्डेनवर्ग ने अपना उत्तराधिकारी हिटलर को घोषित करके अवकाश ग्रहण कर लिया । हिटलर ने जर्मनी से यहूदियों को निकालकर आस्ट्रिया पर अधिकार किया । हिटलर का जन्म जर्मन और आस्ट्रिया की सीमा के बीच हुआ था, इसलिए हिटलर ने दोनों देशों को एक करने के लिये बड़ी कुशल राजनीति का परिचय दिया । जब सन् १९३४ में आस्ट्रिया के नेता डाक्टर डालफस मारे गये और उनके उत्तराधिकारी डाक्टर सुश्निक भी सन् १९३५ में मार डाले गये तो हिटलर ने देखा कि जर्मनी के समुद्र तट स्थित व्यापारिक केन्द्र डेन्जिन्ग पर पौलेण्ड का अधिकार है । जर्मनी के राईनलैण्ड एवं सारे प्रान्तों पर भी दूसरे देशों का अधिकार है और जर्मनी खण्डित हो रहा है तब हिटलर ने बिना रक्तपात के बड़ी बुद्धिमत्ता के साथ राईनलैंड और सार पर अधिकार करके जर्मनी को अखण्ड बनाने के उद्देश से जर्मनी के खोये हुए महत्वपूर्ण स्थान डेन्जिन्ग को पोलैंड से मुक्त कराने के लिए एक दिन अकस्मात् आक्रमण कर दिया और सन् १९३९ के जुलाई मास में डैन्जिन्ग जर्मनी के साथ फिर से संयुक्त हो गया । इंगलैन्ड और फ्रांस ने पोलैंड का पक्ष लिया और पोलैण्ड जर्मनी के विरुद्ध दूसरे राष्ट्रों से विचार-विमर्श करने लगा तब हिटलर ने एक दिन अपनी सेनाओं को भेजकर पोलैण्ड को भी अपने अधिकार में करने के लिये आक्रमण कर दिया । पोलैन्ड जर्मनी से १८ दिनों तक लड़ा और अन्त में उसने आत्म-समर्पण कर दिया । इंग्लैण्ड और फ्रांस दोनों मित्र राष्ट्र जर्मनी के विरुद्ध षड्यंत्र कर रहे थे और जर्मनी से बचने के लिये फ्रांस ने मैगनैट लाइन नाम की बहुत बड़ी सुदृढ़ किलाबन्दी की थी । जर्मनी ने भी अपनी सीमा में फ्रांस के आक्रमण से बचने के लिये ५० मील लम्बी सीकफ्रीड लाइन नाम की सुदृढ़ किलाबन्दी कर रखी थी । फ्रांस की मगनेट लाइन और जर्मनी की सीकफ्रीड लाइन में पचास सहस्र से अधिक तोपें खड़ी की गई थीं । तोपों के साथ मशीनगनें और राइफलें लिये हुये कितने लाख सैनिक थे यह अब मुझे स्मरण नहीं है । दोनों लाइनों में विस्फोटक सामग्री कितनी थी यह भी मैं भूल गया हूं । जर्मन की सीकफ्रीड लाइन को फ्रांस तोड़ नहीं सकता था किन्तु हिटलर के आदेश से जर्मन सेनाओं ने मैगनेट लाइन को एक ही दिन में ध्वंस कर दिया और जर्मन सेनाएं फ्रांस को रौंदती हुयी पेरिस पहुंच गई । देखते-देखते फ्रांस जर्मनी का दास बन गया । मार्शल पेतां को फ्रांस का राष्ट्रपति घोषित करके हिटलर ने फ्रांस में अपनी सेनाएँ छोड़ दीं । फ्रांस यद्यपि जर्मनी के अधीन था, तथापि मार्शल पेतां को ही राष्ट्रपति बनाया । मार्शल पेतां फ्रांस के एक सुप्रसिद्ध वयोवृद्ध सेनापति थे । जिस प्रकार इंगलैंड के मित्र राष्ट्र फ्रांस अमेरिका आदि थे उसी प्रकार जर्मनी के मित्र इटली और जापान । तीनों ने अंग्रेजों के विरुद्ध विश्व-युद्ध में भाग लिया था । जापान ने अपूर्व वीरता का परिचय देकर अंग्रेजों को अनेक देशों से भगा दिया और इंगलैण्ड के सब से बड़े जलपोत 'प्रिन्स आफ वेल्स' को एक ही

जापानी ने १५ मिनट में समुद्र में विलीन कर दिया। 'प्रिन्स आफ वेल्स' जलपोत उस समय का सबसे बड़ा जलयान था।

इटली के सैनिक विलासी थे। इस कारण सिसली और साडेनिया पर अधिकार करके भी वे टिके नहीं रह सके और इटली के सेनापति जनरल ग्रेजियानी पराजित होकर मारा गया। इटली अंग्रेजों के अधीन हो गया और इटली के भाग्यविधाता सिन्योर मुसोलिनी को जर्मनी ने बड़ी बुद्धिमत्तापूर्वक हैलीकोप्टर द्वारा अंग्रेजों के बन्धन से मुक्त किया। इटली को रक्षा करने के लिये जर्मनी की बहुत सी शक्ति क्षय हो गई और युरोप के २८ देशों पर जर्मनी ने जो अधिकार किया था उन पर भी अपने अधिकार को स्थाई रखने के लिये जर्मनी की सेना का बहुत बडा भाग वहाँ रखा गया। इस प्रकार जर्मनी की शक्ति विभाजित हो गई। जर्मनी और रूस ने अंग्रेजों के विरुद्ध समझौता किया था। किन्तु रूस के राजनेता स्टालिन पर हिटलर को सन्देह हो गया और हिटलर ने अपने जीवन की सर्वप्रथम भूल यही की थी कि एक दिन जर्मन सेनाओं को रूस की सीमा पर आक्रमण करने का आदेश दे दिया। अमेरिका चाहता था कि जब जर्मनी इंगलैण्ड पर आक्रमण करे तब ही रूस को जर्मनी पर आक्रमण कर देना चाहिये। अमेरिका की इस इच्छा का हिटलर को ज्ञान हो गया था। उत्तम यह होता की जर्मन सेनाएँ इंगलैण्ड पर आक्रमण न करके जर्मनी की रक्षा रूस से करती। किन्तु हिटलर अपने जीवन की प्रथम और अन्तिम भूल यही कर गये कि उन्होंने रूस पर आक्रमण किया। रूस के बहुत बड़े भाग को जर्मनी अपने अधिकार में कर चुका था और रूस निरन्तर जर्मनी से युद्ध करता जा रहा था। जर्मनी की जनसंख्या ८ करोड़ और रूस की संख्या १८करोड़ थी जर्मनी की सैन्य शक्ति २८ देशों पर अधिकार करने में विभाजित हो गई थी। ऐसी अवस्था में उसने युद्ध करने में अपनी समस्त शक्ति लगा दी। रूस पीछे हटता जा रहा था, जर्मनी आगे बढ़ता जा रहा था। युक्रेन का गेहूं भण्डार जर्मनी के हाथ में आ गया था और रूस के कई प्रांत जर्मनी के अधिकार में थे। २८ देशों से सैन्य सामग्री भी जर्मनी प्राप्त कर रहा था। परन्तु उसके सैनिक प्रतिदिन युद्ध करके मरते जा रहे थे। और रूस पीछे हटता हुआ अपनी शक्ति को समेटता जा रहा था। जर्मन सेनाएँ जर्मनी से बहुत दूर रूस में जाकर उलझ गयी और छः वर्षों के संसारव्यापी युद्ध में रूस के भीतर जर्मन सेनाएँ १५०० मील लम्बा व्यूह बनाकर रूस से लड़ती रही।

स्टेलिनग्राड के युद्ध में जर्मनी की बहुत बड़ी शक्ति क्षय हो गयी और अंग्रेज अपने सबसे बड़े धनकुबेर मित्र अमेरिका की सहायता से इटली को ध्वंस करके जर्मनी पर चढ़ गया। उस समय अन्तिम क्षणों में हिटलर ने घोषणा की कि ईश्वर हमें क्षमा करे। हमारे पास एक ऐसा अस्त्र है कि यदि उसका हम युद्ध के अन्तिम सप्ताह में प्रयोग करें तो एक ही दिन में हमारे सब शत्रु भस्मीभूत हो जायेंगे, पूरा यूरोप महाद्वीप स्वाहा हो जायेगा। वह भयानक शस्त्र जर्मन वैज्ञानिकों का बनाया हुआ परमाणु-बम था। यदि हिटलर चाहते तो एटम बमों के द्वारा एक ही दिन लन्दन को, मास्को को, न्यूयार्क को तथा वाशिंगटन को भस्मीभूत कर देते किन्तु उन्होंने अपनी घोषणा में प्रथम ही कहा था कि ईश्वर हमें क्षमा करे और वे ईश्वर से डर गये। महात्मा हिटलर ने अपने जर्मनी को खण्डहर बनवा लिया। इंग्लैण्ड, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा और अफ्रीका की सेनायें जर्मनी को रौंदती हुई बर्लिन की ओर बढ़ती जा रही थी किन्तु हिटलर के पास परमाणु बमों का भण्डार होने पर भी उन्होंने अपने शत्रुओं का सर्वनाश करना पाप समझा। जर्मनी का ध्वंस हो गया किन्तु हिटलर ने परमाणु बमों का प्रयोग नहीं किया। इससे बढ़कर दयालुता का उदाहरण कहाँ मिलेगा। महात्मा हिटलर ने अपने आपको समाप्त कर लिया किन्तु विश्व की मानवता का नष्ट होने से बचा लिया।

जर्मनी में जाकर अमेरिका ने परमाणु बम प्राप्त कर लिये और जर्मनी के बनाये हुए परमाणु बमों का प्रहार जर्मनी के प्रबल और परम मित्र जापान पर करके नागासाकी और हिरोशिमा नगरों को तथा वहाँ की दो लाख जापानी सेनाओं को भस्मीभूत कर दिया। यदि हिटलर परमाणु बमों का प्रहार स्वयं करते तो जर्मनी और जापान पराजित नहीं होते। महात्मा हिटलर

ने पराजय स्वीकार करके भी महानाशकारी परमाणु बमों का प्रयोग नहीं किया। यह उनकी महानता का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

मैं हिन्दू होने का अभिमानी हूँ। हिन्दू का अति पुरातन नाम आर्य है और हिन्दुस्तान के ब्राह्मण प्रतिदिन सन्ध्या प्रार्थना के संकल्प में 'आर्यावर्तैक देशान्तगते' बोला करते हैं। भारतवर्ष में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य शब्द का बहुत अधिक प्रचार किया था। स्वामी दयानन्द के समान ही आर्य शब्द का प्रचार महात्मा हिटलर ने जर्मनी में किया। उन्होंने आर्यों के पुरातन परम पवित्र धर्म-चिन्ह स्वस्तिक 卐 को जर्मनी का राष्ट्रीय प्रतीक बनाया। प्रत्येक जर्मन सैनिक की भुजा पर स्वस्तिक चिन्ह सुशोभित होता था। हिटलर ने कहा था कि हिन्दुस्तान के आर्य विशुद्ध आर्य नहीं हैं। उनके रक्त में अनार्य रक्त का मिश्रण हो गया है किन्तु हम जर्मन विशुद्ध आर्य हैं। जर्मन शब्द संस्कृत के शर्मन् का अपभ्रंश है। महात्मा हिटलर ने आर्यत्व के अभिमानी होने के कारण संस्कृत भाषा का भी जीर्मनी में प्रचार करने की योजना बनाई थी। वे समस्त जर्मन जाति को शर्मन् अर्थात् ब्राह्मण मानते थे। यदि महात्मा हिटलर रूस पर आक्रमण करने की भयानक भूल नहीं करते और परमाणु बम का प्रयोग कर डालते तो जर्मनी को विश्व-विजय करने का अवसर प्राप्त होना और हिटलर के आर्यत्व के अभिमान एवं संस्कृत भाषा के प्रचार के फलस्वरूप ईसाई सम्प्रदाय तो अपने आप ही प्रभावहीन हो जाते। इस्लाम की भी जड़ें जर्जरित हो जातीं और सारा संसार आर्यधर्म को स्वीकार कर लेता। तब तक जर्मनी की शक्ति इतनी बढ़ जाती कि रूस के साम्यवाद को भी वे समाप्त कर देते। साम्यवाद के समाप्त हो जाने पर चीन का जो दानवी रूप आज संसार को भयभीत कर रहा है उसे जापान द्वारा चकनाचूर कर दिया जाता। किन्तु महात्मा हिटलर ने दया से द्रवीभूत होकर परमाणु बमों का प्रहार न करके अपने सर्वनाश को ही श्रेयस्कर समझा। हिटलर को जो रावण और दानव बताते हैं उन साम्यवादी एवं गांधीवादियों को मैं क्या कहूं। मैं तो हिटलर को महात्मा एवं गांधी जी को अत्यल्प क्षमता का दुर्बलात्मा मानता हूं। आर्यराष्ट्र के अधःपतन का मूल कारण यही है कि उसने गांधी जैसे दुर्बल पुरुष को अपना आराध्य बनाया, जो नितांत अदूरदर्शी एवं निर्बल अन्तःकरण का समझौतावादी समर्पणधर्मा पुरुष था। गाँधी जी अपने घोषित सिद्धान्तों और आदर्शों में भी अपूर्ण थे। उनकी निष्ठा अत्यन्त अस्थिर थी। दृढ़ता का उनमें नितांत अभाव था। न वे अहिंसा के व्रत में पूर्ण थे, न सत्य के प्रति एकांतनिष्ठ। न उनका ब्रह्मचर्य परिपक्व था, न उनके विचार ही निर्भ्रांत थे। ऐसे अन्यमनस्क अस्थिरचित्त व्यक्ति के नेतृत्व ने राष्ट्र को अविवेकी, असहिष्णु, अनात्म-निर्भर और अकर्मण्य बना दिया योद्धा राष्ट्र कायर हो गया। दिशाहीन यात्रा ने संघर्ष और श्रम के प्रति निष्ठा को ही नष्ट कर दिया। आज तक राष्ट्र किंकर्तव्यविमूढ़ता के उसी अन्धकार में भटक रहा है। यदि आर्यराष्ट्र को हिटलर जैसा नेता प्राप्त होता तो वह निस्संदेह संसार के अग्रगण्य राष्ट्रों की ईर्ष्या का पात्र होता। हिटलर हमारे नेता नहीं थे किन्तु हमारे सबसे बड़े हितैषी थे। पिछली पूरी शताब्दी में और इसके पूर्व भी किसी राष्ट्र ने भारत के प्रति अपनी मैत्री का ऐसा प्रमाण नहीं दिया जैसा महात्मा हिटलर ने दिया था। उन्होंने हमारे निर्वासित भाग्य-विधाता नेताजी सुभाषचन्द्र वसु को भारती का सर्वोच्च सेनापति बनाया। उन्हें स्वतन्त्र भारत का प्रथम राष्ट्रपति बनाकर आजाद हिन्द सरकार की स्थापना करने में सम्पूर्ण सहयोग दिया और भारतीय भूमि से अंग्रेजी सत्ता के उन्मूलन और महान् स्वतन्त्र भारतीय राष्ट्र की प्रतिष्ठापना के स्वप्न को साकार करने के लिए अपनी ओर से संभव प्रत्येक सहायता देने का वचन दिया। यह कार्य नेहरू या गांधी के किसी मित्र ने आज तक नहीं किया। हिटलर आर्यत्व के अभिमानी, आर्य-संस्कृति के परम उपासक, अखण्ड ब्रह्मचारी, निरामिषभोजी, संयमी और सदाचारी देशभक्त थे। उन्होंने अपने राष्ट्र के अभ्युत्थान के लिए संसार के साम्राज्यवादियों का दमन किया। संसार में आर्य-संस्कृति की विजय-वैजयन्ती फहराने का स्वप्न देखा। देश के शत्रुओं के प्रति वे निस्सन्देह क्रूर थे, निर्मम थे, किन्तु निर्दोष मानवता के प्रति उनकी दया अद्वितीय थी। वे भारत के हितैषी थे और हमारे सच्चे मित्र थे। यदि भारत को नेताजी का नेतृत्व प्राप्त होता और जर्मनी को महात्मा हिटलर का

तो आज के संसार का मानचित्र कुछ और ही होता। तब विश्व राजनीति का नेतृत्व रूस, चीन और अमेरिका के साम्राज्यवादी साम्यवादी ईसाइयों का धर्म-शत्रुओं के हाथ में नहीं होता प्रत्युत भारत-जर्मनी और जापान जैसे आर्यत्व के उपासकों के हाथों में होता। निर्मम रक्तपात और दयारहित दमन युद्ध-धर्म की अनिवार्य शर्त है। हिटलर ने उसका पालन किया किन्तु इसी से उन्हें रावण की संज्ञा नहीं दी जा सकती। हिटलर के शत्रु उन्हें कितना ही कुख्यात करें, हिटलर निर्मल चरित्र के महापुरुष थे। संसार के समस्त राष्ट्रवादियों के लिए उनका चरित्र पठनीय और अनुकरणीय है और रहेगा। आर्यराष्ट्र अभ्युदय के स्वप्नदर्शी युवको! हिटलर के जीवन को अपना आदर्श बनाओ तभी तुम्हारा राष्ट्र पंचशील के पाखण्ड से, अहिंसा के अतिसार से और कायरता के कीच से मुक्त होकर भव्य और दिव्य योद्धा एवं विजयी राष्ट्र बनेगा। जो चरित्रहीन स्त्री, मद्यप, लंपट, मांसाहारी, प्रपंची, प्रवंचक, स्वार्थी राजनैतिक कृमि कीट, हिटलर के दिव्यदाहक तेज को कलंकित करते हैं वे तुम्हारी निष्ठा को पथभ्रष्ट करना चाहते हैं। उनके षड्यंत्र जाल में मत फंसो। जब आर्यराष्ट्र का सत्य इतिहास लिखा जायगा तब महात्मा हिटलर निस्संदेह आर्यराष्ट्र के हितैषी महापुरुष के रूप में कृतज्ञतापूर्वक स्मरण किये जायेंगे।

●

बूट वाले पांव और नंगे पांव

सन् १९११ की बात है। भारत का स्वाधीनता संग्राम अपने पूरे जोरों पर था। कलकत्ता में आई० एफ० ए० कप का मुकाबला हो रहा था। एक ओर सूट-बूट से लैस लम्बे और तगड़े अंग्रेज सैनिकों की टीम थी और दूसरी ओर नंगे पांव मैदान में आने वाले तन के छोटे, लेकिन मन के मजबूत मोहन बागान के खिलाड़ी या कहिए कि खिलाड़ियों के रूप में देशभक्त। उस समय की परिस्थितियों को देखते हुए इस मैच की महत्ता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। कलकत्ता के सभी नागरिक मन्दिरों में जा कर देशवासी खिलाड़ियों के लिए जीत की कामना करने लगे। बड़े सनसनीखेज वातावरण में मैच शुरू हुआ और नंगे पांव खेलने वाले मोहन बागान के खिलाड़ियों ने अंग्रेज सैनिकों को हरा कर १९११ में पहली बार आई० एफ० ए० कप पर अपना अधिकार जमाया। भारतीय फुटबाल के इतिहास का शायद यही सब से अधिक गौरवपूर्ण अध्याय है। उस समय बम्बई से प्रकाशित होने वाली इलस्ट्रेटिड वीकली ने लिखा—'आप कहीं भी चले जाइए, बस हो या ट्राम, घर हो या दफ्तर, लोग हर जगह यही कहते-फिरते दिखाई देते हैं कि नंगे पांव खेलने वाले बंगाली लड़कों ने बूट वालों के छक्के छुड़ा दिए। स्टेट्समैन ने कहा—'आने वाली पीढ़ी पर इस जीत का अच्छा प्रभाव पड़ेगा।' अमृत बाजार पत्रिका ने कहा—'इस टीम ने अपनी खेल-कुशलता से पश्चिमी राष्ट्रों में भारत का नाम ऊँचा किया है।' मोहन बागान की विजयी टीम जब आई० एफ० ए० शील्ड जीत कर मैदान से बाहर निकली तब लोगों ने नाच कर गाकर तालियां बजा कर और यहां तक कि खुशी के आंसू बहा कर इस टीम का हार्दिक स्वागत किया। हजारों की संख्या में लोग इन देश भक्त खिलाड़ियों के दर्शन करने पहुंचे। टीम में हिस्सा लेने वाले खिलाड़ियों के नाम इस प्रकार थे:—बी. भादुड़ी, एस. सरकार, एस. भादुड़ी, जे. राय, ए. सुकुल, ए. घोष, एन. भट्टाचार्य, आरसेन गुप्ता, एम. मुखर्जी, एस. के. चटर्जी।

बृहस्पति राजधर्म-सूत्रम्

प्रथमोध्याय:

आत्मवान् राजा ।।१।।

आत्म-सयंमी एवं आत्म-ज्ञानी मानव ही राज्य का अधिनायक बनने का पात्र है। जो दिव्य गुणों से दीप्त हो वही राजा कहा जा सकता है।

आत्मवन्तं मन्त्रणामापादयेत ।।२।।

ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों को जो पूर्ण-सयंमी हो और स्वाभिमानी हों मन्त्री पद के लिये चुनना चाहिये।

दण्डनीतिरेव विद्या ।।३।।

शासन का सम्यक् ज्ञान ही शासक के लिये सब से बडी विद्या है।

धर्ममपि लोकनिकृष्टं न कुर्यात् ।।४।।

वह कार्य जिसका सर्वसाधारण जनता प्रबल विरोध करती हो चाहे धर्मानुकूल भी हो राजा को नहीं करना चाहिए। जनमत को अनुकूल बना कर ही राजा उस कर्त्तव्य-कर्म का अनुष्ठान करे।

करोति चेदाशास्यैनं बुद्धिमद्भिः ।।५।।

यदि शासक की दृष्टि में उस कार्य का करना लोक-हित की दृष्टि से नितांत आवश्यक हो तो उसके अनुकूल प्रथम बुद्धिमान् आचारवान् विद्वत्पुरुषों द्वारा लोकमत को तैयार करे।

समानैः सेव्यः ।।६।।

राजा को सदा समान गुणशील-युक्त महानुभावों का ही संग करना चाहिये।

स्त्रीबालवृद्धः सह वदेदधुर्यनीति कृत्यानि ।।७।।

राजा को अपनी गुप्त गम्भीर मन्त्रणाओं का भेद स्त्री, बालक तथा वृद्ध व्यक्तियों पर प्रकट नहीं करना चाहिए क्योंकि भावुकता, अनुभवशून्यता, एवं बुद्धि-विभ्रम के कारण उनका बिस्फोट होना सम्भव है।

ऐन्द्रजालिकं न कुर्यात् ।।८।।

राजा को कभी छल-कपट युक्त भ्रम में डालने वाले कार्यों में भाग नहीं लेना चाहिये और न छल युक्त भाषण करना चाहिये।

मन्त्रवादोत्सवौ च ।।९।।

राजा को कभी अपने मन्त्र (गुप्त विचार एवं योज-नाओं) का प्रकाश नहीं करना चाहिये और न सार्वजनिक प्रीतिभोज आदि उत्सवों में भाग लेना चाहिये।

आमय-विष ध्वंसनानि ।।१०।।

राजा को कभी ऐसे कार्यों में भाग नहीं लेना चाहिये जो रोगोत्पत्ति के कारण हों, जनमत को विषाक्त करने वाले हों तथा जो विध्वंसात्मक हों।

न मद्यं पिबेत् ।।११।।

राजा को कभी भूल कर शराब आदि मादक द्रव्यों का सेवन नहीं करना चाहिये। जो शासक मद्यपान के अभ्यासी हों उनका निश्चय ही परित्याग करना चाहिये।

ब्राह्मणं न हन्यात् ।।१२।।

आध्यात्मिक साधनाओं में रत, ब्रह्मज्ञानी, ब्रह्मशक्ति के उपासक तपस्वी मानवों को भूलकर भी कभी पीड़ा नहीं पहुंचानी चाहिये।

स्तेयं न कुर्यात् ।।१३।।

राजा को राज्यकोष का एक पैसा भी कभी व्यर्थ नहीं खोना चाहिए। जनता के धन का दुरुपयोग करने वाला शासक निश्चय पापी है।

बहु न च स्रगनुलेपौ ।।१४।।

राजा को सदा सर्वदा चन्दन माल्य सुगन्ध आदि स्वागत की कामना से शून्य होना चाहिये।

न विषीदेत् ।।१५।।

शासक को घोर विपत्तियों के उपस्थित होने पर भी सदा प्रसन्न वदन रहना चाहिये। शासक के मुखमण्डल पर कभी घबराहट की रेखा नहीं पड़नी चाहिये। शासक को सदा सागर के समान गम्भीर भावों से युक्त रहना चाहिये।

(क्रमशः)

क्या नक्सलवाद मर गया ?

गहरे अंधकार में एक विशालकाय दानव खड़ा है। काफी लम्बे अरसे से खड़ा है। उसके मुट्ठी भर रक्तपाती उपासक हैं, जिन से उसे भरपूर खुराक मिलती रहती है। अचानक कुछ रक्त-मांसहीन हड्डियाँ टकरा जाती हैं। इस टक्कर से उत्पन्न रोशनी में विशाल राक्षस साफ नजर आता है लेकिन उसे पहचानने का दावा करने वाले उसकी काली छाया की ओर इशारा कर देते हैं। अपनी परछाई पिटते देख दानव अट्टहास कर उठता है।

पश्चिम बंगाल की भूमि समस्या का यह दानव सबसे पहले नक्सलबाड़ी में १९६७ में दिखायी पड़ा जिसने नक्सलबाड़ी आन्दोलन को जन्म दिया। चेयरमैन माओ त्से तुंग की 'सूक्तियों' की रोशनी में संचालित यह सशस्त्र आंदोलन अभी पूरी तरह जोर नहीं पकड़ पाया था कि कुचल दिया गया। लेकिन उस आधार को नहीं कुचला गया जिसने इस आंदोलन को जन्म दिया। इस दिशा में पहला प्रयास भूमि और भूमि-राजस्वमंत्री श्री हरेकृष्ण कोनार ने किया है जो बंगाल की संयुक्त मोर्चा सरकार में एकमात्र ऐसे मंत्री हैं जिन्हें माओ त्से तुंग से मिलने और भूमि समस्या को समझने का 'सौभाग्य' प्राप्त है।

शुरू-शुरू में ऐसा लगता था कि नक्सलबाड़ी, खोरीबाड़ी और फांसीदेवा के क्षेत्रों में हुआ 'सशस्त्र किसान आंदोलन' न केवल बंगाल बल्कि बिहार और उत्तर-प्रदेश आदि कई राज्यों को भी अपनी गिरफ्त में ले लेगा, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। इसका कारण नक्सलवादी नेताओं की गिरफ्तारी और पुलिस कार्रवाई नहीं है। इसका कारण जन-संगठन और प्रकट-जन आंदोलन की उपेक्षा कर केवल गुप्त संगठन और गोरिला युद्ध की नीति अपनाना है।

नक्सलवादी आंदोलन के प्रमुख व्याख्याता श्री चारु मजूमदार के अनुसार गरीब और भूमिहीन किसान केवल छापामार (गोरिला) युद्ध द्वारा किसान वर्ग पर अपने नेतृत्व की स्थापना कर सकते हैं—किसानों के क्रान्तिकारी आंदोलन का एकमात्र रास्ता छापामार युद्ध है। और किसी सार्वजनिक संगठन के खुले आंदोलन द्वारा यह संभव नहीं।

एक प्रसिद्ध नक्सलवादी श्री परिमल दास गुप्त द्वारा चे ग्वेवारा की गोरिला-युद्ध पद्धति की वकालत के संदर्भ में श्री मजूमदार ने कहा 'चे की युद्ध-पद्धति में शस्त्रास्त्रों पर नहीं, जनसाधारण के सहयोग पर अधिक विश्वास किया जाता है। इसलिए यह पद्धति अनुपयुक्त है। स्पष्टतः गोरिला युद्ध में सारे किसान शामिल नहीं होंगे। इस युद्ध का प्रारम्भ ही वर्ग-चेतना के कारण होता है और उसमें मुट्ठी भर पद-दलित शामिल होते हैं।' श्री मजूमदार ने सवाल किया : अगर हर कोई जन-साधारण के संगठन में दिलचस्पी रखता है तो भूमिगत संगठन का बीड़ा कौन उठायेगा ? क्या हम यह आशा करें कि सर्वसाधारण के संगठन से कृषि क्रान्ति हो सकती है ? श्री मजूमदार ने कहा कि किसी कीमत पर ऐसा संभव नहीं है।

आन्दोलन खत्म : वहशत शुरू : उत्तर बंगाल में साम्यवादी संगठन के मुख्य नियोजक और नक्सलवादी आंदोलन के मुख्य प्रवर्त्तक श्री चारु मजूमदार अब उन युवकों के लिए प्रेरणा के स्रोत नहीं रहे जो रोमांस मिश्रित साहसिकता के लिए नक्सलवादी कुहासे पर मोहित हो उठे थे। उनके लिए यह घोर निराशा का विषय है कि आज पश्चिम बंगाल में कहीं नक्सलवादी आंदोलन नहीं हो रहा। सारा आंदोलन कलकत्ते से प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं तक सीमित होकर रह गया है जिन में गुटबंदी और मतभेद को उजागर करने वाली बड़ी-बड़ी दास्तानें छपने लगी हैं। 'ग्राम थेके शहर घेरो' का नारा फीका पड़ गया है। स्वयं नक्सलवादी इसे 'शहर थेके ग्राम घेरो' में परिवर्त्तित कर दें तो कोई आश्चर्य नहीं। १९६८ के बाद उनकी सक्रियता शहरी क्षेत्रों में ही अधिक रही है। पिछले कुछ ही समय में राज्य के औद्योगिक क्षेत्रों में नक्सलवादी तत्वों की सक्रियता बढ़ी है। सबसे पहले

उनकी गतिविधि दुर्गापुर इस्पात संयंत्र में देखी गयी जहां उन्होंने सरकार और मार्क्सवादी कम्युनिस्ट यूनियन के साथ सहयोग करने से इनकार कर दिया। अगस्त के दूसरे सप्ताह में कलकत्ता में हाइड रोड स्थित मेटल बाक्स कम्पनी की दो इकाइयों में नक्सलवादियों ने चेयरमैन माओ त्से तुंग का नारा लगाया और २० प्रतिशत लाभांश की मांग की। पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा आयोजित त्रिपक्षीय वार्त्ता से बहिर्गमन करने वाले नक्सलवादी यूनियन नेताओं का कहना है कि उन्हें सरकारी सहायता की आवश्यकता नहीं। वे मालिकों से खुद निबट लेंगे। मेटल बाक्स के उक्त कारखानों में, जिन्हें बन्द करने के लिए प्रबन्धकों को बाध्य होना पड़ा है, ३५०० कर्मचारी हैं जिनमें २८०० दैनिक दर मजदूरी पाने वाले श्रमिक हैं। दैनिक दर मजदूरी करने वाले श्रमिकों में अधिकांश नक्सलवादी हैं। पिछले तीन वर्षों से उक्त कारखानों की दीवारों पर नक्सलवादी नारे निरंतर लिखे जा रहे हैं। अंग्रेजी, बंगला, हिंदी में लिखे इन नारों को भी देखा जा सकता है।

साम्यवादी सिद्धांत के अनुसार भी बुनियादी 'क्रांति' गाँवों से शुरू होनी चाहिए जब कि हर 'क्रांति' शहरों से शुरू होती रही है। नक्सलवादियों का दावा था कि उनकी 'क्रांति लीला' गाँवों से शुरू होगी और बाद में शहरों को अपनी चपेट में लेगी लेकिन नक्सलवाद भी साम्यवादी विडंबना का शिकार हुआ है, नक्सलवाद के साथ भी सबसे बड़ा अंतर्विरोध यह है कि उस के लगभग सारे नेता शहरों के हैं, शहरों में जन्मे हैं, शहरों में पले हैं और उनका कार्यक्षेत्र शहर रहे हैं। इसलिए ग्रामीण परिवेश और जीवन से असंपृक्त रहने के कारण गाँवों से शुरू होने वाली क्रांतियों का नेतृत्व करने में वे नितांत असमर्थ हैं। इसका एहसास उन्हें भी है। उनकी असफलता का यह सबसे बड़ा कारण है, शहरों का आकर्षण उनके लिए किसी से कम नहीं है। चारु मजूमदार, कानू सान्याल और अन्य नक्सलवादी नगरों में, खासकर कलकत्ते में, रह रहे हैं।

कटावहीन दायरे : नक्सलवाद को संगठन के पहले ही विघटन का सामना करना पड़ा। नक्सलवादियों की

राष्ट्रीय एकता दिवस की उपेक्षा

पश्चिम बंगाल के मंत्रिमंडल ने यह निर्णय किया है कि वह केन्द्र सरकार द्वारा सभी प्रदेशों को भेजे गये १८ अक्तूबर को राष्ट्रीय एकता दिवस मनाने के आदेश का पालन नहीं करेगा। पश्चिमी बंगाल के सूचना-मंत्री ज्योति भट्टाचार्य ने बताया कि मंत्रिमंडल को एकता से नहीं, एकता संदेशपत्र में प्रयुक्त शब्दावली पर आपत्ति है। उसमें राजनैतिक, धार्मिक और भाषायी समस्याओं के समाधान के लिए हिंसा के प्रयोग की निंदा की गई है। १९६२ में चीनी आक्रमण के बाद से राष्ट्रीय एकता दिवस सारे देश में मनाया जाता है।

मार्क्सवादी लेनिनवादी भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के गठन के पहले ही नागी रेड्डी और पोल्ला रेड्डी अपनी डफली पर अपना अलग राग अलाप चुके थे। उक्त पार्टी के गठन (२२ अप्रैल १९६९) के बाद भी बहुत से नक्सलवादी उस से अलग रहे जिन में नागी रेड्डी के कुछ समर्थक भी हैं।

श्री रेड्डी अपने और नवगठित नक्सलवादी पार्टी के बीच विद्यमान खाई पाटने के ख्याल से कुछ दिनों पहले एक बार कलकत्ता भी आये लेकिन बात कुछ बनी नहीं।

इस समय नक्सलवादियों के चार गुट हैं। चारु मजूमदार और कानू सान्याल के गुट में कलकत्ते के केवल एक प्रमुख नक्सलवादी कार्यकर्त्ता सरोज दत्त रह गये हैं। उनके अन्य साथियों और सहयोगियों ने अपना अलग गुट बना लिया है, जिसकी औपचारिक घोषणा होनी अभी बाकी है। इस गुट में सुशीतल राय चौधरी, असित सेन, श्यामल नंदी, सत्यानंद भट्टाचार्य, वनविहारी चक्रवर्त्ती, अनिल मजूमदार और दिलीप पाइन हैं। इस गुट के सर्वाधिक शक्तिशाली होने का अनुमान है। इसने ही श्री मजूमदार और श्री सान्याल को कलकत्ता आमंत्रित किया, गुप्त आवास की व्यवस्था भी की और बड़ी सभाओं का आयोजन किया गया। कलकत्ता और दुर्गापुर के औद्योगिक क्षेत्रों में इस गुट का अधिक प्रभाव है। एक प्रवक्ता ने बताया कि श्री मजूमदार और श्री सान्याल कामरेड लेनिन के रास्ते से भटक गये हैं। लेनिन ने सर्वसाधारण में संग-

ठन और पूंजीवाद तथा साम्राज्यवादी शक्तियों के विरुद्ध सामूहिक संघर्ष को अनिवार्य बताया है। इसके विपरीत श्री मजूमदार केवल भूमिहीन किसानों द्वारा गोरिला युद्ध को एकमात्र क्रांति-मार्ग घोषित कर रहे हैं। सर्वाधिक दिलचस्प और महत्वपूर्ण बात यह है कि इस गुट में एक अरसे से यह संदेह व्यक्त किया जा रहा है कि श्री सान्याल और श्री मजूमदार मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के सम्पर्क में हैं और उसके इशारे पर कोई और आंदोलन करने के लिए तैयार नजर नहीं आते।

तीसरे गुट में श्री रेड्डी के समर्थक हैं। चौथे गुट के एकमात्र कर्त्ता-धर्त्ता श्री परिमल दास गुप्त हैं।

एक साल पहले तक ये सारे नक्सलवादी एक साथ रहे हैं। पिछले वर्ष विश्व बैंक के अध्यक्ष राबर्ट मैकनमारा के कलकत्ता आगमन पर किया गया विशाल प्रदर्शन इस का सबूत था। इस साल राष्ट्रपति निक्सन के भारत आगमन पर नक्सलवादी आंदोलन महज एक रस्म अदायगी रही। गत मई दिवस के बाद नक्सलवादियों में व्याप्त मतभेद की दरारें तेजी से चौड़ी हुई और अब उनको पाट पाना असंभव प्रतीत होता है। सबके अलग-अलग दायरे हैं जिनमें परस्पर मिलने के लिए कटाव नहीं है, इस तरह बंगाल में समवेत और सशक्त नक्सलवादी आंदोलन की आशंकाएँ करीब-करीब खत्म हो चली हैं।

शस्त्रास्त्र से समाजवाद : विभिन्न नक्सलवादी प्रवक्ताओं ने बताया कि कानून, व्यवस्था और संसदीय लोकतंत्र में उनका विश्वास नहीं, क्योंकि ये समाजवाद में बाधक सिद्ध हो रहे हैं। ऐसे लोकतंत्र को लेकर वह किसान क्या करेगा जो २२ वर्ष बाद भी उस जमीन का मालिक नहीं है जिसे बिना नागा वह हर वर्ष जोतता चला आ रहा है। वह किसान कानून और व्यवस्था के प्रति कैसे वफादार होगा जो २२ वर्ष बाद भी बगादार (बटाईदार) है, खेत का मालिक नहीं। उन भूमिहीन बहुसंख्यक किसानों के लिए संसदीय लोकतंत्र ने क्या किया जो जमींदारों की चौबीस घंटे की गुलामी के बावजूद भरपेट रूखे-सूखे भोजन और वस्त्र के लिए मोहताज है। बंगाल में १९५६ में जमींदारी प्रथा का उन्मूलन हो गया और २५ एकड़ भूमि की अधिकतम सीमा निर्धारित कर दी गयी, लेकिन आज भी जमींदारों के पास सैकड़ों और हजारों एकड़ जमीन क्यों है? सरकार ने कितने जोतदारों से जमीन छीनी, कितने इस जुर्म में फांसी पर चढ़ाये गये, कितने जेल भेजे गये? क्या सत्ता पर उस वर्ग का अधिकार नहीं है जो जोतदारों, उद्योगपतियों और रईसों से बनता है? जनता की समस्याओं का समाधान सशस्त्र क्रांति है, यह सामंतवादी लोकतंत्र नहीं जो पूंजीवाद और उपनिवेशवाद की जड़ें मजबूत करता है।'

श्री सान्याल और श्री मजूमदार से खिन्न दूसरे नक्सलवादी गुट के, जिसके सर्वाधिक शक्तिशाली होने का ख्याल है और जिसमें श्यामल नंदी और असित सेन आदि हैं, एक प्रवक्ता ने बताया कि दार्जिलिंग में हुए नक्सलबाड़ी आंदोलन में जिन लोगों ने श्री मजूमदार का साथ दिया था, वे भी अब उनसे निराश हो चुके हैं। उन्हें यह विश्वास हो गया है कि श्री मजूमदार की सारी लड़ाई कागजी है। निरंतर सशक्त आंदोलन चलाते रहने के पक्ष में न वह है और न उनके निकटतम साथी श्री सान्याल हैं।

प्रवक्ता ने कहा कि इन नेताओं ने दार्जिलिंग के अलावा अन्य किसी जिले में 'कृषि विप्लव' के लिए कुछ नहीं किया। प्रवक्ता के अनुसार कूच बिहार, माल्दह, जलपाईगुड़ी और पश्चिम दिनाजपुर में कृषि विप्लव के लिए विशाल संभावनाएँ हैं।

यह पूछे जाने पर कि आपसी फूट के अलावा क्या संयुक्त मोर्चा के भूमि सुधारों से भी नक्सलवादी आंदोलन कमजोर हुआ है, प्रवक्ता ने कहा कि 'हमारी लड़ाई समाज के मौजूदा ढाँचे और सत्ता के विरुद्ध है, इसलिए हमारे पक्ष के कमजोर होने का सवाल ही नहीं उठता। हमारी दृष्टि में वर्तमान भूमि सुधार मुलम्मा भर है, इससे ज्यादा कोई आशा भी नहीं कर सकता। हमारी दृष्टि में कांग्रेस और संयुक्त मोर्चा की बुर्जुआ नौकरशाही में कोई अंतर नहीं है।'

नया मोड़ : १९६७ में संयुक्त मोर्चा सरकार ने बेनामी और किसानों को दी गयी भूमि का पता लगाने और उन्हें किसानों के सुपुर्द करने का काम शुरू किया था, लेकिन जमींदारों ने अदालत की सहायता से ३३,००० एकड़ भूमि पर कब्जा करने पर रोक लगा दी। थोड़े

समय के बाद संयुक्त मोर्चा सरकार ही बरखास्त कर दी गयी।

मध्यावधि निर्वाचन के बाद अपनी दुबारा वापसी पर भूमि राजस्वमंत्री श्री कोनार ने नयी तकनीक का सहारा लिया जो नक्सलवादी पद्धति के बहुत करीब है, उन्होंने सरकार की ओर से कानूनी कार्रवाई न कर किसानों को बेनामी भूमि पर कब्जा करने की छूट दे दी। उनकी सहायता के लिए उन के पास यह सूचना भिजवा दी कि कहां-कहां कितनी जमीन बेनामी है और जोतदार गलत ढंग से उस पर कब्जा जमाये हुए हैं, फिर क्या था, विभिन्न राजनैतिक दलों, खास कर मार्क्सवादी कम्युनिस्ट और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में भूमि और मत्स्य केन्द्रों पर जबर्दस्ती कब्जा किया जाने लगा। पुलिस लगभग निष्क्रिय कर दी गयी। सैकड़ों और हजारों की संख्या में सशस्त्र किसान जमीन पर कब्जा करने लगे। अनेक स्थानों पर जोतदारों ने सशस्त्र प्रतिरोध किया। बर्दवान और २४ परगना में अनेक किसान गोली से मार डाले गये।

बेनामी जमीन की छीनाझपटी में संयुक्त मोर्चा के विभिन्न घटकों में से कुछ ने जानलेवा लड़ाइयां लड़ीं एक दर्जन से अधिक लोग ऐसी लड़ाइयों में काम आये। अनेक मामलों में जोतदारों के अलावा सामान्य किसानों के साथ ज्यादती हुई। श्री कोनार ने अंतर्दल संघर्ष और किसान आंदोलन को गुजरता दौर से संबोधित किया और यह स्वीकार किया कि अनेक मामलों में ज्यादतियां हुई हैं।

इस आंदोलन ने नक्सलवादी आंदोलन को कमजोर जरूर किया है, समाप्त नहीं किया। राज्य ग्रामीण आबादी में भूमिहीन कृषि श्रमिक ६४ प्रतिशत हैं, इन के लिए संयुक्त मोर्चा सरकार ने अभी तक कुछ नहीं किया है। नक्सलवादी सेना के सिपाही ऐसे ही किसान होंगे। राज्य में सिर्फ ५ प्रतिशत किसानों (जोतदारों) के पास ४० प्रतिशत जमीन है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार साल में ९३ दिन श्रमिक बेकार रहते हैं। १९६१ में बेकार दिनों की संख्या बढ़कर १८० हो गयी थी। हताश, निराश और बेसहारा वर्ग के लोगों को खूनी आंदोलन के लिए कभी भी तैयार किया जा सकता है।

बेनामी जमीन : कहां कितनी : श्री हरेकृष्ण कोनार के अनुसार राज्य में लगभग ११ लाख एकड़ बेनामी भूमि होने का अनुमान है जिसे जोतदारों ने गैर कानूनी तौर पर दबा रखा है। संयुक्त मोर्चा सरकार के आने के बाद से जुलाई १९६९ तक २,५१,०५४,६८ एकड़ जमीन का पता लगाया जा सका है। लगभग उस सारी जमीन पर किसानों का कब्जा हो गया है, जिसे अब कानूनी तौर पर उनके नाम कर दिया जायेगा। बंगाल के विभिन्न जिलों में प्राप्त बेनामी जमीन का जिलेवार विवरण इस प्रकार है :

१—पुरुलिया	७९,१०९.५१ एकड़
२—२४ परगना	६१,२६८.३१ एकड़
३—बर्दवान	१४,४९८.५५ एकड़
४—बांकुड़ा	१३,५०६.६० एकड़
५—जलपाईगुड़ी	११,७४२. ९ एकड़
६—पश्चिम दिनाजपुर	१४,४७८.९९ एकड़
७—मेदिनीपुर	१०,९६५.७१ एकड़
८—नदिया	६,३७९.२५ एकड़
९—कूच बिहार	६,२६४.४० एकड़
१०—मुर्शिदाबाद	६,३६८.५७ एकड़
११—बीरभूम	५,२४२.७९ एकड़
१२—माल्दह	५,१९५.१२ एकड़
१३—दार्जिलिंग	४,३७१.०७ एकड़
१४—हुगली	२,८८१.७२ एकड़
१५—हावड़ा	२,७८१.३० एकड़

नक्सलवादी नहीं : भूमि को लेकर सर्वाधिक संघर्ष २४ परगना जिले के दक्षिणी क्षेत्र अर्थात् कैनिंग, मांगड़ और सोनापुर में हुए हैं। लगभग एक दर्जन किसान नेताओं से बातचीत का निचोड़ यह है कि इस क्षेत्र में हुए किसान आंदोलन से नक्सलवादी आंदोलन कहा जाये तो वह दूसरी बात है, अन्यथा इस क्षेत्र में मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी क्रांतिकारी समाजवदी पार्टी और समाजवादी एकता केन्द्र आदि कुछ राजनैतिक दलों का विशेष जोर है।

२४ परगना जिला किसान सभा के सदस्यों ने बताया कि दक्षिण २४ परगना में हजारों एकड़ बेनामी जमीन जोतदारों ने जबरदस्ती दखल कर रखी है। कैनिंग के मानिक दत्त, सोनारपुर के हरिधन चौधरी, वासुदेव गांगुली

भांगड़ के लतेमन अली मौला, अमरनस्कर, २४ परगना के नरेव गुहा, अजित गांगुली और बसंती के निर्मल होर से प्राप्त नाम और आंकड़ों के अनुसार १३ बड़े जोतदारों से छीनी गयी बेनामी जमीन का विवरण निम्न प्रकार है : (ये जोतदार कैनिग, भांगड़ और सोनारपुर थानों के अंतर्गत हैं)

१—जोगेंद्रनाथ नस्कर	२००० बीघा
२—मनमथ नस्कर और अन्य	१३०० बीघा
३—सुशील सपुई (नलबेरी)	८०० बीघा
४—अजित मन्ना (तरदाहा मौजा)	७०० बीघा
५—समरेश चक्रवर्ती	६०० बीघा
६—अशोक घोष	२०० बीघा
७—अमल मिस्त्री	२०० बीघा
८—नेताइ नस्कर	२०० बीघा
९—क्षितीन सिंह	१५० बीघा
१०—आनंदी बैनर्जी	१२५ बीघा
११—सुशील डॉक्टर	१०० बीघा
१२—संतोष घोष	१०० बीघा
१३—शील प्रसाद सिंह	५० बीघा

इस के अलावा कम से कम १७ मौजों में पियाली और विद्याधरी नदियों के मिट्टी फेंकने से बने खेतों पर जमींदारों का कब्जा है। इन मौजों के नाम हैं : सागर, नभासान, तरदाहा कापासाती, सतबेरिया, नारायनपुरा, काला हाजरा, रामचन्द्र खाली; गौरांग बसु, नफरगंज, हिरनमयपुर, बोरिया, मनसा खाली, नेबूखाली, चारविद्या और सांचेखाली। अंतिम १२मौजे बसंती थाने के अन्तर्गत है, जहाँ जुलाई के अंतिम सप्ताह में एक पुलिस नायक को कत्ल कर दिया गया था, जिस की लाश के साथ पुलिस मैनों ने विधान-सभा के बाहर-भीतर प्रदर्शन किया था।

सैंकड़ों और हजारों बीघे जमीन एक-एक जोतदार के पास देख कर आश्चर्य होता है। १९५६ में स्टेट एक्वीजीशन एक्ट (जमींदारी उन्मूलन विधेयक) पास करने के बाद 'समाजवादी और लोकतंत्री' कांग्रेस की सरकार क्या करती रही ? जैसी विस्फोटक स्थिति है क्या कृषि विप्लव और पहले नहीं होना चाहिए था ?

जब भूमि और भूमिराजस्वमंत्री श्री कोनार से पूछा गया कि सैकड़ों हजारों एकड़ जमीन दबा कर अब तक बैठे जोतदारों की आखिर शिकायत क्या है तब उन्होंने बताया कि उन की अधिकांश शिकायतें पुलिस की निष्क्रियता के विरुद्ध हैं। क्या 'पहले कानून बना कर बाकी या बेनामी जमीन किसानों को दे देना और फिर बाद में कब्जा करना संभव नहीं है ? 'नहीं, कई कारणों से ऐसा संभव नहीं है, कानूनी तौर पर भूमि को ढूढ़ पाना और फिर अदालत से मुक्ति पाना खेल नहीं है। इन सब के चक्कर में पड़ने पर वही कांग्रेस राज लौट आयेगा। १९६७ में पहले मैंने ऐसा ही सोचा था, लेकिन अनेक बाधाएं खड़ी हो गयीं। ३०-४० हजार एकड़ बेनामी जमीन का पता लगा कर भी हम उसे जोतदारों से लेने और किसानों को देने में असमर्थ रहे। इस लिए उस के विपरीत यह दूसरा रास्ता अख्तियार करना पड़ा कि पहले किसान ऐसी जमीन पर कब्जा करें फिर बाद में मामले की छानबीन कर वह उन के नाम कर दी जायेगी।'

सरगोधा का हीरो

सरगोधा का हवाई अड्डा नष्ट करने के लिए भारतीय वायुसेना ने कई बार प्रयास किए, किन्तु सफलता नहीं मिल सकी। इसका मुख्य कारण था वहाँ का राडर-सिस्टम, जिसके द्वारा २०० मील की दूरी तक उड़ने वाले हवाई जहाजों का पहले ही पता चल जाता था। यह राडर-सिस्टम नष्ट करना ही बड़ी समस्या थी।

हमारे जवान भी इस बात का पूर्ण निश्चय कर चुके थे कि सरगोधा के हवाई अड्डे को नष्ट करना ही है। इस बार भी जब हवाई अड्डे पर बमवर्षा की गई तो राडर-सिस्टम को नष्ट नहीं किया जा सका। हमारे ग्रुप-कप्टन ने बेड़े के दूसरे जहाजों को आदेश दिया कि वे सभी अपने ठिकाने पर लौट चलें। भारतीय वायुसेना का एक वीर यह निश्चय कर चुका था कि वह राडर-सिस्टम को नष्ट करके ही छोड़ेगा। अपने ग्रुप-कैप्टेन की आज्ञा की परवाह किए बिना उसने नीची उड़ान भरी। ग्रुप-कैप्टन ने फिर आदेश दिया और कहा कि वह जान-बूझकर मरने जा रहा है। लेकिन वह अपने निश्चय पर डटा रहा और ठीक निशाने पर उसने अपने साथ ही हवाई जहाज को इतनी तेजी एवं जोर से नीचे गिरा दिया कि पाकिस्तान के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सरगोधा हवाई अड्डे का राडर-सिस्टम पाश-पाश हो गया। अपने जीवन का बलिदान देकर भारत के इस वीर सपूत ने शौर्य एवं साहस की नई परम्पराओं को जन्म दिया है खून के आखिरी कतरे तक।

उपन्यासकार श्री गुरुदत्त वैद्य

रामशंकर अग्निहोत्री

कुछ लोगों के इस कथन में आज के साहित्य-जगत का एक बड़ा तथ्य छिपा हुआ है कि यदि उपन्यासकार श्री गुरुदत्त जी ने साहित्य में सोद्देश्यता का तिरस्कार किया होता तथा संत्रास, कुण्ठा, विफलता आदि के जालों से बुनी अतृप्त भोग-लालसाओं द्वारा सामाजिक मूल्यांकन की दिशा आंकने वाली प्रचलित कला का पल्ला पकड़ लिया होता, यदि श्री गुरुदत्त जी ने भी भोगे हुए क्षणों की स्मृतियों के चित्रण और निष्कर्षहीन अधूरे पात्रों के असम्बद्ध अन्तर्द्वन्द्वों के शब्द-विस्फोटों को ही प्रधानता दी होती तो उनका भी एक समा होता, जिसे प्रगतिशील लेखक कहा जाता।

दूसरी भी एक बात कही जाती है कि यदि उन्होने अपने विचार-साहित्य में भारतीय जीवन दर्शन तथा मूल्यों की श्रेष्ठता प्रतिपादित करने का रास्ता न पकड़ा होता, धर्म, संस्कृति, समाज एवं राष्ट्र की ऋषि प्रणीत व्याख्याओं को छोड़ कर मिली-जुली सभ्यता, सामाजिक संस्कृति, खिचड़ी राष्ट्रवाद और अवसरवादी राजनीति की डफली पर थापें देते हुए जन-जीवन में फैले हुए भ्रम, अनास्था, अस्थिर विचारों के सुर में ही अपना सुर मिला दिया होता तो कभी का उन्हें साहित्यकार मान लिया गया होता।

उपरोक्त दोनों बातें भिन्न-भिन्न अवसरों पर अलग-अलग तरीकों से कही जाती रही हैं, जो इस बात को सिद्ध करती है कि श्री गुरुदत्त जी ने लोक-लीक चलने से इनकार किया। वे अपनी बात को कितने जोर से कह पाये, कितनी सारगर्भिता, स्पष्टता, सरलता और तर्क-संगतता से कह पाये ?

यह बिलकुल अलग विषय है। इस पर जिज्ञासु पाठकों और चिन्तनशील विद्वानों के मत भिन्न हो सकते हैं, किन्तु यही एक सत्य कि उन्होंने साहित्य में प्रचलित हो हल्ले से मुक्त अपना स्वर दिया, उनके प्रयत्नों की यथार्थता सिद्ध कर देता है। उनकी निर्भयता, अडिगता का बोध कराता है। विचारों में उनके विश्वास को स्पष्ट करता है।

सशक्त शब्दचित्र

वैसे किसी भी साहित्यकार को साहित्यिक मान्यता की स्वीकृति पाठकगण ही प्रदान करते हैं। रचनायें पाठकों के बीच समादृत होती हैं और साहित्यकारों के विचारों की गूंज उठने लगती है। श्री गुरुदत्त जी को यह मान्यता सन् १९४२ के "स्वाधीनता के पथ पर" उपन्यास से लेकर सन् १९५३ के "देश की हत्या" तक १० वर्षों में भली भांति प्राप्त हो चुकी थी। उसके बाद तो उन्होंने इतना लिखा है कि लोग आश्चर्य करते हैं। ११५ के लगभग उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। मुझे ऐसे कई परिवारों का पता है जो श्री गुरुदत्त जी के नये उपन्यास की बाट जोहा करते हैं। उन्होंने इस प्रकार एक विशाल पाठक-वर्ग का यह विश्वास सम्पादित कर लिया है कि उनके द्वारा खींचे गये शब्दचित्रों में ऐसी शक्ति होती है जो समस्याओं को कंघी करती है धुंधलकों को फटकारती है और चारों ओर की निरर्थकता में व्याप रही खीझ को समेट कर एक सार्थकता का पुट निर्माण करती है। श्री गुरुदत्त जी की इस सफलता से कोई इनकार नहीं कर सकता।

श्री गुरुदत्त जी का नाम वैसे मैंने भी पहले सुन लिया था, जब कि उनके साथ भेंटवार्ता का अवसर मुझे सन् १९५२-५३ में सर्वप्रथम प्राप्त हुआ। भारतीय जनसंघ के संस्थापक डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी के नेतृत्व में संचालित "कश्मीर आन्दोलन" की वेला थी। दिल्ली से "आकाशवाणी" नामक एक सान्ध्य दैनिक के प्रधान सम्पादक के नाते उन दिनों लगभग दो वर्ष मुझे दिल्ली में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। सत्याग्रह की सर-गर्मी के बीच एक तेजस्वी व्यक्तित्व और ओजस्वी वक्ता के रूप में श्री गुरुदत्त जी का परिचय मुझे प्राप्त हुआ

था। दिल्ली में स्थान-स्थान पर सभायें होती थीं। कई बार श्री गुरुदत्त जी के साथ मुझे भी इन सभाओं में जाने का और श्री गुरुदत्त जी के विचारों का अध्ययन करने का अवसर मिला।

साहित्य यात्रा का दर्शन

उसके बाद आज तक मैं बड़े चाव से उनकी साहित्य यात्रा का दर्शक रहा हूं। साहित्य में प्रचलित वादों और आन्दोलनों के घेरों से ऊपर उठ कर उन्होंने अपनी एक विशिष्ट शैली द्वारा विगत २०-२५ वर्षों में अनेक पड़ाव डाले। शैक्षणिक उपाधि में विज्ञान की एम० एस० सी० की डिग्री, व्यवसाय में आयुर्वेद चिकित्सक, मुख्याध्यापकी और अमेठी राजा के निजी सचिव आदि के संघर्षपूर्ण उतार चढ़ाव के बीच उनके अनुभवों का भण्डार बढ़ता गया। इसीलिए उन्हें उपन्यासों में पात्रों के चयन में सरलता प्राप्त होती है। उनका यह कहना कि "उपन्यास लिखते समय किसी न किसी अध्ययन का प्रतीत चित्र मेरा निर्देशक बन बैठता है और मेरे लिए मार्ग प्रशस्त करता है। ऐसी अधिकाधिक घटनायें हुई हैं, जब कि कोई अपरिचित, अनजाना व्यक्ति मेरे सम्मुख आ खड़ा हुआ हो और मुझे अपना परिचय मेरे किसी उपन्यास के किसी पात्र के रूप में देता रहा हो।" उनका जीवन अध्ययन की क्षमता का ही प्रमाण है। सामान्य पाठक तक सरल और प्रचलित भाषा में प्रवाहात्मक शैली के माध्यम से वे अब अपनी कथावस्तु को पहुँचाते हैं तो वे कभी इस बात को नजरअन्दाज नहीं कर ले कि वे अपनी विशेष विचारधारा का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। इतना ही नहीं, श्री गुरुदत्त जी का उपन्यासकार खुलेआम घोषणा करता चलता है कि कथानक का चुनाव विचार-विशेष के लक्षानुसार ही किया गया है। उनकी इसी विशेषता को कुछ लोग उनका प्रचार तंत्र कह कर मुंह बिचकाने का यत्न करते हैं, किन्तु आश्चर्य तब होता है, जब रेलगाड़ी, फुटपाथों, दफ्तरों और घरों में लोग उनके उपन्यासों को प्रचार की पुड़िया जैसा नहीं, अपने भीतर की भूल जैसी घनिष्ठ आत्मीयता प्रदान करते हैं।

अमर शहीद श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल'

१९ दिसम्बर १९२७.........

आज के दिन ३० वर्ष का नौजवान भारत मां का बहादुर बेटा रामप्रसाद बिस्मिल अंग्रेजो दासता की बेड़ियों को ठोकर मारते हुए फांसी पर भूल गया था! आर्यराष्ट्र की यज्ञवेदी पर चढ़ी इस समिधा की आग कहीं बुझने न पाये—इसलिये क्रान्ति में आस्था रखने वाले साथियो! १९ दिसम्बर को देश के कोने-कोने में बिस्सिल और उसके अनन्य सहयोगी अशफाक का बलिदान दिवस अवश्य मनाना और इन वीरों के खून की शपथ लेकर संकल्प करना कि—

मरते बिस्मिल रोशन लहड़ी,
अशफाक अत्याचार से।
होंगे पैदा सैंकड़ों इनके
रुधिर की धार से॥

शिक्षा का स्वरूप और उद्देश्य

प्रा. भद्रसेन
(साधु आश्रम—होशियारपुर)

शिक्षा, शिक्षण, ज्ञान, विद्या तथा इनके अन्य अनेक पर्यायवाची शब्द आज प्रायः एक ही अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। परन्तु वैदिक लौकिक वाङ्मय में शिक्षा शब्द वदांग के प्रथम अङ्ग शिक्षा-ग्रन्थ के रूप में भी प्रसिद्ध है, जिसमें वर्णोच्चारण आदि का विश्लेषण है, तथा ऋषिदयानन्द सरस्वती ने विद्या को शिक्षा का अवान्तर भाग मानते हुए इन दोनों शब्दों का इस प्रकार से भाव स्पष्ट किया है। 'शिक्षा—जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मा, जितेन्द्रियतादि की बढ़ती होवे और अविद्यादि दोष छूटें उसको शिक्षा कहते हैं, (स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश)। विद्या—पृथवी से लेकर परमेश्वर पर्यन्त यथार्थज्ञान और उनसे यथायोग्य उपकार लेना विद्या, इससे विपरीत अविद्या है, (सत्यार्थ-प्रकाश, पञ्चम समुल्लास)।' संहिताओं में विद्या शब्द क्रिया के तथा कृत् प्रत्ययों से युक्त होकर अनेक बार आया है। वहाँ शिक्षा के स्थान पर विद्या शब्द का इस अर्थ में प्रयोग हुआ है। ब्राह्मण, उपनिषद् आदि अन्य वैदिक साहित्य में शिक्षा शब्द का विशेष प्रयोग मिलता है। तैत्तिरीय उपनिषद् में शि [शी] क्षा बल्ली नाम से एक विशेष प्रकरण हैं, जहाँ वर्णों के भेद, उच्चारण, स्थान, प्रयत्न और सन्धि आदि के सम्बन्ध में विशेष विचार किया गया है, जिसको आज भाषा-विज्ञान में ध्वनि विज्ञान के नाम से स्मरण किया जाता है, तथा जीवनोपयोगी सत्य आदि सद्गुणों, ब्रह्म से पृथिवी पर्यन्त तत्त्वों के ज्ञान और आचार्य-शिष्य सम्बन्धी विद्या के अर्थ में शिक्षा शब्द आया है।

अनेक शास्त्रों में विद्या, शिक्षा आदि पर्यायवाची शब्दों की परिभाषाएँ प्राप्त होती हैं, जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि विद्या जीवन है और अविद्या मृत्यु है। जीवन, प्रकाश, सफलता, विकास, प्रगति, आनन्द, एकता, सत्य और धर्म विद्या है। जिस भी क्षेत्र में हम इन गुणों को चाहते हैं, उसकी प्राप्ति का एक मात्र साधन विद्या है। यही भावना हमें इन 'सा विद्या या विमुक्तये, विद्या हि का ब्रह्म गतिप्रदा या, बोधो हि को यस्तु विमुक्तिहेतुः(शंकराचार्य कृतप्रश्नोत्तरी') ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः; तत्वज्ञानान्निश्रेयसम् (न्याय, वैशेषिक)ज्ञानान्मुक्तिः (सांख्य)विद्ययामृतमश्नुते (यजु.४०, १४) वचनों से प्राप्त होती हैं। तथा विद्या ही विविध प्रकार की अविद्या=मृत्यु, अन्धकार, झूठ, अधर्म, बन्धन, व्यभिचार. आलस्य, विरोध, दुःख और कायरता आदि से छुटकारा और परम सुख प्राप्ति का साधन है।

विद्या के महत्त्व का वर्णन करते हुए शास्त्रकारों ने कहा है—यह जीवन यात्रा में माता के समान रक्षा करती है, पिता के तुल्य हितकर कार्यों में नियुक्त करती है, पत्नीवत् खेद को हटाकर प्रसन्न एवं आनन्दित करती है और चारों दिशाओं में विद्यावाले की शुद्ध कीर्ति का प्रसार कर उसको धन, धान्य से समृद्ध कर देती है अर्थात् विद्या तो एक कल्पलता है, जिससे प्रत्येक अभीष्ट की सिद्धि की जा सकती है। संसार के अन्य सब धनों की प्राप्ति का उपाय जहाँ विद्या है, वहाँ यह एक ऐसा प्रच्छन्न धन है, जिसको न तो राजा या राज्य अधिकारी छीन सकता है, न चोर चुरा सकता है और न ही बन्धु-बान्धव इसमें भागीदार बन सकते हैं। आश्चर्य तो यह है कि इस धन को कितना भी बढ़ाते जाएं पर इसके भार में वृद्धि न होगी। इस अनमोल धन की सबसे बड़ी विशेषता तो यह है कि अन्य धन तो जहाँ खर्च करने पर घटते हैं, वहाँ इसका जितना भी अधिक व्यय किया जाता है, उतना ही अधिक वृद्धि को प्राप्त होता है। आज जितना भी ज्ञान; विज्ञान से जन्य संस्कृति और सभ्यता का विकास है या विज्ञान प्रदत्त सुविधाओं की प्राप्ति है, यह सब विद्या की कृपा के ही तो बरदान हैं।

वस्तुतः मनुष्य जीवन का विकास शिक्षा पर ही आधारित है, शिक्षा से ही मनुष्य विचारशील, बुद्धिमान्, सदाचारी हो कर अपनी वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक और दैशिक उन्नति करने में समर्थ होता है, क्योंकि मनुष्य की छिपी हुई शारीरिक, मानसिक और आत्मिक प्रतिभाओं के सर्वतोमुखी विकास का एक मात्र साधन शिक्षा है। इन शक्तियों के विकसित होने पर मानव हर क्षेत्र में अपने उद्देश्य की सिद्धि या सफलता प्राप्त करने में समर्थ हो सकता है, क्योंकि शिक्षा शिक्षित के जीवन में प्रेम, सहानुभूति, सहनशीलता, दया, नैतिकता, संगठन आदि सद्गुणों का सन्निवेश करती है। शिक्षा एक वरदान है, जिससे हम जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपने अभीष्ट की पूर्ति कर सकते हैं। व्यक्ति इसके द्वारा अपने लक्ष्य की संसिद्धि में सफल हो सकता है। आज प्रत्येक क्षेत्र की प्रगति का एकमात्र मूल शिक्षा ही है। संसार में भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में जो व्यक्ति सफल या उच्चतम स्थानों को प्राप्त कर जन-जन की श्रद्धा के भोजन बने हैं, उनकी उस सफलता और उच्चता का रहस्य इसी में ही निहित है। अतः शिक्षा सर्वविध विकास का एक प्रमुखतम साधन है। शिक्षा एक सोपान है, जिसका अवलम्बन कर हम उत्कर्ष और उद्देश्य तक पहुँच सकते है। इसीलिए ही विद्वानों ने शिक्षा=ज्ञान की चक्षु, प्रकाश, दर्पण, सोपान और इत्यादि से उपमा दी है। शिक्षा के बिना मनुष्य किसी भी क्षेत्र में प्रगति नहीं कर सकता, वह तो बिना पूँछ, सींग के निरापशु या अन्धे के सदृश है। शिक्षा का अभाव ही अन्धकार और भय का मूल है, जिस-जिस क्षेत्र सम्बन्धी जितनी-जितनी शिक्षा का जहाँ अभाव होता है वहाँ उतना-उतना ही अन्धकार, भय, संशय, अविकास, रोग निर्धनतना, दुःख, अनाचार, अत्याचार और भ्रष्टाचार का साम्राज्य रहता है।

अतः ऐसी महत्त्वशाली वस्तु के स्वरूप और उद्देश्य पर सर्वांगीण विचार करना आवश्यक हो जाता है। प्राचीन शिक्षणालयों में प्रतिदिन के शिक्षण के प्रारम्भ होने से पूर्व गुरु शिष्य मिलकर एक मन्त्र का पाठ करते थे, जैसे आज राष्ट्रीय गान होता है। वह मन्त्र हमें तत्त्वज्ञान की प्रतिनिधिभूत कुछ [कठ तथा तैत्तिरीय की ब्रह्मानन्द और भृगु बल्ली के प्रारम्भ और अन्त] उपनिषदों में दृग्गोचर होता है। प्रत्याहिक शिक्षण के प्रारम्भ में किसी विशेष मन्त्र का विनियोग एक रहस्य रखता है और विचार के अनन्तर आज की भाषा में हम यह कहने पर विवश हो जाते हैं कि 'यह क्या ही मौके की बात, तान, धुन, स्वर या घोष हैं' जिसमें शिक्षा-विद्यादि सम्बन्धी समस्त परिभाषाओं, उद्देश्यों, स्वरूपों, का पूर्णरूपेण सन्निवेश किया गया है। शिक्षा का पूर्ण, संक्षिप्त महत्त्वशाली, सर्वाङ्गीण परिचय इससे अधिक सुन्दर शब्दों में नहीं दिया जा सकता है। मन्त्र के शब्द चाहे अतिप्राचीन काल के हैं, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है, जसे आज का कोई व्यक्ति शिक्षा के विषय में अपनी आधुनिक भावनाएँ व्यक्त कर रहा हो। मेरे विचार से प्रत्येक शिक्षण संस्था के मुख्यद्वार, भवन और व्यवहार में आने वाली वस्तुओं पर आदर्श वाक्य के रूप में यह मन्त्र अङ्कित होना चाहिए।

सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्विनावधीतमस्तु। मा विद्विषावहै।

हे सर्वरक्षक परमेश्वर! या विद्याधिदेवते! हम दोनों की साथ-साथ रक्षा करो, हम दोनों का साथ-साथ पालन करो, हम दोनों मिलकर शक्ति का संचय करें, हम दोनों का पढ़ा हुआ तेजस्वी हो, हम दोनों परस्पर (कभी भी किसी भी परिस्थिति में मनसा-वाचा और कर्मणा) विद्वेष न करें। यहां मन्त्र में शिक्षा के पाँच उद्देश्य दर्शाए गए हैं। इन उद्देश्यों से विद्या का स्वरूप भी स्पष्ट हो जाता है, क्योंकि किसी भी वस्तु का स्वरूप उद्देश्य के अनुरूप या सिद्धि के लिए ही निश्चित किया जाता है।

शिक्षा का प्रथम प्रयोजन या स्वरूप अवतु में निहित है। √अव् धातु रक्षण दीप्ति आदि उन्नीस

---

१. मन्त्र विनियोग की प्रक्रिया के अनुसार यह मन्त्र शिक्षा के सर्वात्मना रूप का द्योतक है, क्योंकि किसी मन्त्र के किसी क्रिया या स्थल में विनियुक्त होने के रहस्य को बताते हुए ऐतरेय ब्राह्मण में कहा है— 'एतद्वै यज्ञस्य समृद्धं यद् रूपसमृद्धं यत्कर्मक्रियमाणमृगभिवदति' ३,६ यही यज्ञ [अमुक कर्म] की समृद्धि=सम्पूर्णता है, जो [यज्ञ के] रूप की सम्पूर्णता है अर्थात् जिस प्रकार का कर्म किया जा रहा है, उसी को ऋचा कहती है। इससे यह अभिप्राय सिद्ध होता है कि यह मन्त्र प्रार्थनामयी शैली में शिक्षा विषयक सर्वाङ्गीण परिचय देता है।

अर्थों वाली होती हुई भी यहां मुख्यरूपेण रक्षा की वाचक है। विद्या के ग्रहण का प्रथम प्रयोजन है—रक्षण अर्थात् विद्यार्थी को ऐसी शिक्षा दी जाए कि वह अपने समग्र जीवन में अपेक्षित सर्वविध वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक और दैशिक रक्षण करने में समर्थ हो। रक्षण विज्ञान में मुख्यरूपेण शारीरिक, मानसिक, आत्मिक तथा रक्षण के साधनभूत विविध अस्त्र-शास्त्रों के ज्ञान का ग्रहण होता है! विशेषत: शारीरिक विकास ही अभिप्रेत है। एक शिक्षित का शरीर, मन और आत्मा विकसित, स्वस्थ होने चाहिएं और वह उनके ज्ञान से युक्त हो। वह शिक्षा, शिक्षा कहलाने के योग्य नहीं है, जिसको प्राप्त कर शिक्षित अपने स्वास्थ्य का ही नाश कर ले या शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् अस्वस्थ रहे एवं स्वास्थ्य और रक्षण विज्ञान से अनभिज्ञ अथवा उनमें असमर्थ हो। अर्थात् शिक्षा का प्रथम अंग रक्षण एवं शरीर, मन और आत्मा का विकास है।

मन्त्र का दूसरा चरण है सह नौ भुनक्तु √भुज् पालन-अभ्यवहारयो: (पालन और भक्षण)। एक शिक्षार्थी शिक्षित हो जाने के पश्चात् इस योग्य हो कि वह अपना और अपने से सम्बन्धित जनों (परिवार, समाज, राष्ट्र) का पालन-पोषण कर सके। शिक्षा ग्रहण के बाद उसके समक्ष आजीविका की समस्या न हो। आज के युग में पढ़ने-पढ़ाने वालों की सबसे बड़ी अभिलाषा यही होती है कि शिक्षित हो जाने के अनन्तर अच्छी आजीविका मिल जाए, जिससे अपना तथा अपनों का सांसारिक जीवन अच्छी प्रकार से सुखी हो सके, निर्वाह की समस्या न रहे शिक्षित में पालन-पोषण सम्बन्धी द्रव्यों की प्राप्ति की योग्यता या उत्तम आजीविका सम्पादन की योग्यता का होना सर्वथा आवश्यक है, अन्यथा आज के युग में शिक्षा की ओर प्रवृत्ति भी असम्भव हो जाएगी।

इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षण पद्धति में शिल्प उद्योग, कृषि आदि को यथोचित स्थान दिया जाए। जिससे शिक्षित उपार्जन-साधनों के संचय सम्बन्धी ज्ञान और कर्म में पटु हो। वह चाहे शरीर से साध्य हो या बुद्धि से, वह दोनों का बिना संकोच, ईमानदारी, उत्साह और रुचि के साथ प्रयोग करने में कुशल हो, शारीरिक कार्यों से घृणा न करे। अर्थात् आजीविका की दृष्टि से जिस समय शारीरिक या बौद्धिक जो भी कार्य करने का अवसर आए उसको सहर्षता के साथ सम्पादन करे। आज ग्राम्य-जीवन, शिल्प-कला एवं कृषि आदि शारीरिक कार्यों के प्रति अरुचि, अप्रवृत्ति और घृणा आदि भावनाएँ आधुनिक भारतीय शिक्षण-पद्धति की अपूर्णता की द्योतक हैं। अतएव विश्वविद्यालयों के दीक्षान्त समारोहों पर "हमें भाषण नहीं, नौकरी चाहिए" की आवाज उठती हुब सुनाई दे रही है।

शिक्षा का तीसरा उद्देश्य वीर्य शब्द में निहित है। वैसे आयुर्वेदीय शरीर विज्ञान के अनुसार खाए हुए भोजन का रस, रक्त, मांस आदि सप्त धातुओं के रूप में क्रमश: परिपाक होने पर अन्तिम जो परिपाक होता है वह वीर्य कहलाता है। जिसको शरीर का राजा, तेल, अनमोल सम्पत्ति कहा जाता है। जिसके कारण कारण शरीर में तेज, शक्ति, पराक्रम. उत्साह, आकर्षकता, सौन्दर्य स्वास्थ्य, स्मृति और दीर्घआयु आदि गुणों का विकास होता है। इसलिए वेद में कई स्थलों पर वीर्य को हिरण्य और दाक्षायण नाम से भी स्मरण किया है। वीर्य और सदाचार का घनिष्ट सम्बन्ध है। क्योंकि नियम, संविधान, सदाचार और अनुशासन का पालन ही वीर्य—शक्ति, बल, तेज, यश, सफलता का मूल है। अत: वीर्य शब्द यहाँ सदाचार, नैतिकता और अनुशासन का ही परिचायक है। महात्मा गांधी ने लिखा है कि शिक्षा का मुख्य प्रयोजन सदाचार है और यही मानव तथा पशु में एक भेद रेखा है। सदाचार का अर्थ है सत्-आचार—अच्छा व्यवहार, अत: शिक्षित का प्रत्येक कार्य अच्छा होना चाहिए, वह कभी भी परिस्थिति में अनुचित आचरण न करे। अर्थात् शिक्षा का एक प्रयोजन है नैतिकता सदाचार, अनुशासन का प्रचार, अत: शिक्षा की यह मांग है कि शिक्षा प्राप्त व्यक्ति समाज या राष्ट्र के संविधान के प्रति सदा सच्चा रहे कभी भी उसका उल्लंघन न करे। इसीलिए ही समाज और राष्ट्र शिक्षा के प्रसार में कटिबद्ध होते हैं।

आज शिक्षा पद्धति में नैतिकता का यथोचित स्थान न होने से शिक्षित व्यक्ति ही संविधान का उल्लंघन करने में विशेष तत्पर देखे जाते हैं। सामान्य और अनुचित मांगों की आड़ में हिंसायुक्त हड़तालें, प्रदर्शन, तोड़-

फोड़ और आग लगाने के दृश्य ही आए दिन नजर आ रहे हैं। कुछ की दृष्टि में चार अक्षरों का ज्ञान और नौकरी प्राप्ति का प्रमाण-पत्र देना ही शिक्षा का एक मात्र प्रयोजन रह गया है, जिसके परिणाम स्वरूप शिक्षा के क्षेत्र में अनैतिकता के साम्राज्य को देखकर एक आवाज उठ रही है कि शिक्षितों से तो अशिक्षित ही अच्छे हैं।

शिक्षा के आचार्य और शिष्य दो मुख्य अंग हैं। आचार्य शब्द के भाव को स्पष्ट करते हुए यास्काचार्य ने निरुक्त १, ४ लिखा है—"आचार्यः कस्मात्, आचार्य आचारं ग्राह्यति, आचिनोति अर्थात्, आचिनोति बुद्धिमिति वा" अर्थात् वह आचार्य=गुरु, शिक्षक, अध्यापक, प्राध्यापक कहलाता है जो अपने शिष्यों में सदाचार, नैतिकता, अनुशासन की भावना का सन्निवेश करता है। शास्त्र के अर्थों का या जीवनोपयोगी विविध विषयों या पदार्थों का यथोचित बोध कराता है तथा विविध विषयों के ज्ञान से उनकी बुद्धि का विकास करता है। इससे जहाँ आचार्य की परिभाषा तथा उसके कर्तव्यों का बोध होता है, वहां शिक्षा के उद्देश्य और प्रयोजन का भी बोध होता है।

शिक्षा की चौथी विशेषता है "हम दोनों का पढ़ा हुआ तेजस्वी=चिरस्थायी हो या जीवन के विविध क्षेत्रों में शिक्षित तेज=यश, सफलता, व विकास का कारण हो। इसमें यह भावना निहित है कि पढ़ने-पढ़ाने का प्रकार ऐसा हो जिस से वह चिरस्थायी बन सके। अर्थात् अध्ययन-अध्यापक का ऐसा प्रशस्त प्रकार हो कि विद्यार्थी को हर बात अच्छी प्रकार से समझ में आ जाए और वह कुछ क्षण के लिए ही नहीं अपितु दीर्घकाल के लिए। दूसरी बात यह है कि पढ़ाने का माध्यम वह भाषा हो, जिसमें विद्यार्थी हर बात को अच्छी प्रकार से समझ सके तथा अपने भाव व्यक्त कर सके, क्योंकि विद्या का प्रयोजन है विद्या के ग्रहण करने वाले का विकास। जब विद्या उस के लिये है, तो उसकी योग्यता और सुविधा के अनुसार ही शिक्षण का माध्यम होना चाहिए। तीसरी बात यह है कि पाठ्यक्रम में उन ग्रन्थों और विषयों को स्थान देना चाहिए जिससे शिक्षार्थी का सर्वाङ्गीण विकास हो, न कि लेखक की दृष्टि से, अथवा पाठ्यक्रम केवल श्रेणी का शोभा बढ़ाने के लिए ही न हो। आज संस्कृत के पाठ्यक्रम में कुछ ऐसी पुस्तकें लगाई गई हैं, जिनका प्रयोजन केवल यह दिखाना है कि पाठ्यक्रम में ऐसी-ऐसी उच्च पुस्तकें हैं। परीक्षा के समय विद्यार्थी उनको येन-केन प्रकारेण रट कर तैयार कर लेते हैं, परन्तु उनसे उनका ज्ञान विकसित नहीं होता। वे पुस्तकें विद्यार्थी के ज्ञान का स्थायी विकास न कर सकने से उसके ज्ञान का स्थायी अंग नहीं बनती है। ऐसी स्थिति में विद्यार्थी का पढ़ा हुआ तेजस्वी कैसे बने। प्रायः पाठ्यक्रम के समय यह बात भुला दी जाती है कि वह विद्यार्थी के विकास के लिए है, न कि विद्यार्थी इसके लिए है। शिक्षित की तेजस्वी होने पर ही उसके जीवन में यश, सफलता और विकास का साधन बन सकती है।

मन्त्र में शिक्षा का एक और उद्देश्य है—मा विद्विषावहै। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो शिक्षित के अन्दर उन भावनाओं के अंकुर न पनपने दे, जिससे वह अन्यों से मनसा, वाचा और कर्मणा किसी भी जन्म, जाति, कार्य, वर्ग, विचार आदि के आधार भेद-भाव, घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, संघर्ष करे, अर्थात् वही शिक्षा शिक्षा कहलाने योग्य है, जिसको प्राप्त कर शिक्षित किसी से भी किसी कारण-वश किसी प्रकार का भेद-भाव, घृणा, द्वेष नहीं करता। शिक्षा का तो प्रयोजन है प्रेम, सहानुभूति, आत्म-सद्भावना के शिष्ट व्यवहार को व्यावहारिक रूप देना। इन्हीं भावनाओं के अभाव में ही भेद-भाव, घृणा, द्वेष, ईर्ष्या, संघर्ष और युद्ध होते हैं।

इस मन्त्र पर बारम्बार विचार और विश्लेषण के पश्चात् हम कह सकते हैं कि शिक्षा उस साधन का नाम है, जिसको प्राप्त करके शिक्षित शारीरिक, मानसिक और आत्मिक दृष्टि से समर्थ, अपना तथा अपनों का पालन करने के योग्य, नैतिकता, सदाचार, अनुशासन से युक्त अर्थात् श्रेष्ठ नागरिक हो, इसकी पूर्ति के लिए उसका उपरोक्त ज्ञान चिर-स्थायी हो तथा वह सब से प्रेम-युक्त आत्मीय व्यवहार करे। इस प्रकार इस मन्त्र में शिक्षा प्राप्त करने या कराने वाले की एतद्-विषयक समस्त भावनाओं का सर्वात्मना समावेश है, क्योंकि शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य है शिक्षार्थी का पूर्ण विकास। यही

भाव-माता पिता अपने आत्मज को आचार्य के श्री चरणों में सौंपते हुए कहते हैं।

आधत्त पितरो गर्भं कुमारं पुष्करस्रजम्।
यथेह पुरुषऽसत् ।।यजु. २ ३३ ।।

हे शिक्षादि द्वारा पालन-पोषण करने वाले पितरो! पुष्पवत् या पुष्पादि से अलंकृत इस गर्भ रूप कुमार को अनुशासित करो, जिससे यह पुरुष (पूर्ण) हो सके। मनुष्य जीवन की सामान्य या विशेष पूर्णता के लिए शरीर, भाषा, ज्ञान, समाज आजीविका और धर्म व सदाचार इत्यादि क्षेत्रों में विकास अभीष्ट है। अतः शिक्षित व्यक्ति की अभीष्ट सारी भावनाओं का प्रतिमूर्त यह मन्त्र प्रतीत होता है, तथा शिक्षा के स्वरूप और उद्देश्य का सर्वांगीण परिचय देने में सर्वथा सक्षम है।

●

अध्यापक एकता अमर रहे

हरियाणा के अध्यापक अन्याय से मुक्ति प्राप्त करने के हेतु संघर्ष की राह पर

सांकेतिक भूख हड़ताल व प्रदर्शन

बहनो तथा भाईयो!

हरियाणा के संघ जो हरियाणा के पैंतीस हजार अध्यापकों का एक मात्र प्रतिनिधि संघ है की दिनांक १६-११-६६ को सर छोटूराम पार्क में बैठक हुई। बैठक में हरियाणा के अध्यापकों के साथ सरकार द्वारा किये जा रहे अन्याय तथा अनैतिक व्यवहार का प्रतिरोध करने के लिये निम्नलिखित प्रस्ताव पास किये गये।

(१) दिनांक ४-१२-६६ को सभी अध्यापक पाठशाला समय में काले बिल्ले लगाकर अध्यापन कार्य करते हुये उपवास रखेंगे।

(२) दिनांक १३-१२-६६ को जिला हैडक्वाटर पर कम से कम ५१ अध्यापक सायं ३ बजे से २४ घंटे की सांकेतिक भूख हड़ताल करेंगे।

(३) दिनांक १४-१२-६६ को प्रातः ११ बजे जिले के सभी अध्यापक जलूस के रूप में प्रदर्शन करेंगे तथा अपनी माँगों का स्मरण-पत्र जिलाधीश को अर्पित करेंगे। प्रदर्शन में जिले के सभी अध्यापकों द्वारा भाग लेना आवश्यक है।

(४) दिनांक २८-१२-६६ को हरियाणा के प्रत्येक विधान सभा व संसद सदस्य के निवास स्थान पर उसी क्षेत्र के अध्यापक प्रातः १० बजे से सायंकाल के चार बजे तक धरना देंगे। कम से कम ५ अध्यापक आवश्यक हैं।

अगली कार्यवाई का निर्णय अध्यापकों के उत्साह व सहयोग को देखकर कार्य समिति शीघ्र ही करेगी। अतः सभी अध्यापक बहिनों तथा भाइयों से अनुरोध है कि अधिक से अधिक संख्या में पधार कर १४-१२-६६ के प्रदर्शन को सफल बनावें। और सरकार के अनुचित व्यवहार के प्रति अपना रोष प्रकट करें।

हमारी माँगें

हम हैं आपके सेवक

महासिंह
प्रधान अध्यापक संघ

बृजमोहन
महासचिव
हरियाणा अध्यापक संघ

सोहनलाल
प्रधान हरियाणा अध्यापक संघ

हरयाणा के हृदय से

● ओ३म्प्रकाश पत्रकार

हरयाणा संघर्ष समिति के आदेशानुसार 'आर्य युवक परिषद् हरयाणा' के कार्यकर्त्ताओं को पिछले तीन महीनों में हरयाणा में चल रहे चण्डीगढ़ के प्रकरण के विषय में जनजागरण हेतु प्रान्तभर के लगभग सभी भागों में जाने का अवसर प्राप्त हुआ। इन दिनों में हम जहाँ कहीं भी गए और जिस किसी से भी मिले चाहे वह गांव का साधारण अनपढ़ किसान या मजदूर था और चाहे वह शहर में रहने वाले शिक्षित वर्ग से सम्बन्धित व्यापारी, वकील या सरकारी पदाधिकारी था। सबकी जबान पर एक ही बात थी कि केन्द्रिय सरकार हरयाणा से अन्याय कर रही है और करती रही है।

यदि हम जनता की भावनाओं को दृष्टिगत रखकर यह कहें कि हरयाणा की जनता एक लम्बे समय तक अन्याय का शिकार होती रही हैं तो यह तथ्य प्रमाण सहित शतप्रतिशत सत्य पर अवलम्बित है। जहाँ अंग्रेज सरकार ने इन्हें बागी और गद्दार कहकर उपेक्षित किया और देश की प्रत्येक प्रगति में पीछे रखा, वहाँ इन काले अंग्रेजों की कांग्रेसी सरकार ने भी हरयाणा की न केवल प्रगति को रोका बल्कि प्रत्येक क्षेत्र में शोषण करके पूरी तरह पछाड़ दिया। १९४७ से हरयाणा अलग प्रान्त बनने तक पंजाब में भार्गव, सच्चर, कैरों और श्री रामकिशन चार मुख्यमन्त्री बने जो कि चारों वर्तमान पंजाब के रहने वाले थे। चारों महानुभावों ने अपने-अपने समय में हिन्दी क्षेत्र (हरयाणा) का शोषण कर पंजाबी क्षेत्र को सोने की चिड़िया बनाने के लिए पूरा जोर लगा दिया। बिजली, सिंचाई, सड़कें, सभी उद्योग धन्धे, शिक्षा के माध्यम से कृषि महाविद्यालय, चिकित्सा महाविद्यालय, बसों के रूट परमिट, सरकारी नौकरियों में बड़े पदों की नियुक्तियां आदि का श्रेय पंजाबी क्षेत्र को मिलता रहा। पंजाब में कितने ही दिनों से सभी खेतों को पानी, सभी घरों को बिजली, सभी ग्रामों में सड़कें और स्कूल आदि की सुविधाएँ पूरी तरह उपलब्ध हैं जबकि हरयाणा का तिहाई भाग सिंचाई, बिजली और सड़कों आदि की सुविधाओं से आज भी वंचित हैं। प्रत्येक ग्राम में स्कूल न होने के कारण छोटे-छोटे बच्चे दो-दो, तीन-तीन मील पैदल चलकर अन्य ग्रामों के स्कूलों में विद्याग्रहण करने जाते हैं। कितने शर्म की बात है कि भाखड़ा का, खुशहैशयती टैक्स तो देते थे रोहतक और हिसार के किसान और भूमि सींची जाती थी पटियाला और फिरोजपुर की। पंजाब के बच्चे तो राष्ट्रभाषा हिन्दी पढ़ने से भी इन्कार कर दें और हरयाणा के बच्चों को बाधित किया जाये पंजाबियों की बोली गुरमुखी भाषा के रूप में पढ़ने पर!! कहते हैं 'जादू वह जो सिर चढ़ बोलें'। हरयाणा की जनता ने बार-बार अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाई परन्तु दबा दिया गया उनकी भावनाओं को केन्द्रिय सरकार की सहायता से। हरयाणा शासित था और पंजाबी शासक था और उस शासक को भी समर्थन प्राप्त था दिल्ली के बाबा का। क्योंकि केन्द्रिय सरकार ने भी न केवल अन्याय को प्रोत्साहन दिया बल्कि स्वयं भी हरयाणा को स्थान-स्थान पर उपेक्षित करके पंजाबियों के हाथ मजबूत कर जुल्म ढाने पर उतारू किया।

जहाँ पंजाबी शासकों ने हरयाणा की जनता के साथ सोतेली माँ का सा बर्ताव किया वहाँ केन्द्र का रोल भी एक सोतेले पापी से कम नहीं रहा। केन्द्रीय सरकार ने भी हिन्दी क्षेत्र पर (हरयाणा) पंजाबी क्षेत्र (पंजाब) को प्रत्येक स्थान पर प्राथमिकता दी। आज तक किसी हरयाणावासी को किसी प्रान्त का राज्यपाल, विदेश में किसी देश का राजदूत, उच्चतम न्यायालय का न्यायधीश, पब्लिक सर्विस कमीशन का अध्यक्ष या केवलमात्र सदस्य भी, भारत की तीनों सेनाओं में किसी सेना का सेनापति

या उपसेनापति और यहां तक कि केन्द्रिय मन्त्रिमण्डल में मन्त्री के पद पर रहने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। मेरे कहने का तात्पर्य यह है राष्ट्रपति या केन्द्रिय सरकार द्वारा जितनी नियुक्तियाँ होती रही है उनमें आज तक किसी हरयाणावासी को किसी नियुक्ति का भागीदार बनना नसीब न हुआ! सम्मिलित पंजाब में भी हरयाणा में प्रायः कांग्रेस जीतती रही और आज भी हरयाणा में कांग्रेसी सरकार है परन्तु जहाँ तक आल इंडिया कांग्रेस पार्टी का सम्बन्ध है किसी हरयाणवी को छोटे से छोटे पद से लेकर प्रधान पद तक कभी किसी पद के लिए कोई मान्यता प्रदान नहीं दी गई। दूर का अन्याय तो दृष्टि से ओझल हो सकता है परन्तु हरयाणा तो दिल्ली की तलहटी में बसता है इसे आप कबूतर की भांति आँखें बन्द करके अन्याय की पर्दा-पोशी कहिये या चिराग तले से अंधेरा। परन्तु मैं तो इसे सोतेले पापी का अन्याय ही कह सकता हूँ।

प्रजातन्त्र देश में सरकार के अन्याय का मुकाबला करने के लिए जनता के पास प्रैस (समाचार-पत्र) और प्लेटफार्म (नेतागण) रूपी दो हथियार होते हैं। जबकि हरयाणा की जनता के पास दो में से एक भी नहीं है और यही कारण है कि निहत्थी जनता सुशस्त्र शासक के अन्याय का मुँह मोड़ने में असमर्थ रही है। जहाँ तक हरयाणा के नेताओं का सम्बन्ध है वे पहले पंजाबीशाही के आधीन रहे और अब अधीन है केन्द्रशाही के। अवसरवादिता इनका ओढ़ना और बिछोना है। इन्हें जहाँ दो पैसे का लाभ दिखाई दे वहीं रहते हैं। कभी एक दल में कभी दूसरे में कभी तीसरे में तो कभी चौथे में। आया राम गया राम की मिशाल सारे भारत में प्रसिद्ध। इस प्रकार के तथाकथित नेताओं के कारण हरयाणा की जनता अन्याय का ग्रास बनती रही है।

जहाँ हरयाणा के चरित्रहीन नेताओं की बेवफाह का सहारा लेकर केन्द्र और पंजाबी शासकों ने हरयाणा की जनता को उपेक्षित किया वहाँ भारत के समाचार पत्रों ने भी जिनका कर्त्तव्य प्रजातान्त्रिक देश में न्याय की रक्षा [illegible] पिछले [illegible] के [illegible] ही [illegible] र

अर्जुन को छोड़कर सभी दैनिक पत्रों में पंजाब के नेताओं के भाषण तथा उनके प्रदर्शन आदि के समाचारों को आकर्षित ढंग से छापा। जब प्रधान मन्त्री के निवास-स्थान के सामने पंजाबियों ने धरना दिया तो सभी समाचार-पत्रों ने उनके मित्रों सहित समाचार दिये। परन्तु जब हरयाणा के संसद सदस्यों, विधायकों, जिला परिषद के प्रधान आदि नेताओं ने धरना दिया तो दिल्ली के किसी समाचार-पत्र ने चित्र तो क्या धरने का समाचार तक भी पत्रों में न दिया। १७ नवम्बर को हरयाणावासियों ने दिल्ली में १० लाख की सख्या में अभूतपूर्व प्रदर्शन किया। जब कि किसी समाचार पत्र में ५ लाख से अधिक संख्या नहीं दी। यहाँ तक कि हरयाणा के टुकड़ों पर पलने वाला सिखों का अंग्रेजी दैनिक ट्रिब्यून चंडीगढ़ में हुए सिखों के ७०-७५ हजार के प्रदर्शन को तो दो लाख लिखता है जबकि हरयाणावासियों द्वारा किए गए दिल्ली में १० लाख के विशाल प्रदर्शन की संख्या केवल २॥ लाख देता है।

इन सब बातों के होते हुए भी हमें निराश होने की आवश्यकता नहीं क्योंकि हरयाणा पर हुए अन्याय का एकमात्र कारण है समाचार पत्र और चरित्रवान नेताओं का अभाव। क्योंकि अभाव अन्याय का पोषक है। आज हरयाणा में कोई दैनिक समाचार पत्र नहीं है। जबकि समाचार पत्र कई मोर्चों पर अकेला लड़ता है। प्रजातन्त्र में समाचार पत्र ही जनता की बिखरी हुई शक्ति को जोड़कर एक वातावरण पैदा करता है। उदाहरण के तौर पर यदि हरयाणा में समाचार पत्रों का अभाव न होता और एक शक्तिशाली प्रेस जनता का प्रतिनिधित्व करता तो सबसे पहले वह हरयाणा के नेताओं को अवसरवादी बनने से रोकता। केन्द्र और पंजाबियों के अन्याय के विरुद्ध आवाज उठा कर नेताओं को मुकाबला करने की प्रेरणा देता। ऐसी स्थिति में अन्यायकारी के भी पैर डगमगा जाते परन्तु दुख की बात है कि आज हमारे पास वह वस्तु नहीं है जो अन्यायियों पर प्रहार के लिए तलवार का काम देती है। जहाँ तक हम उस महत्वपूर्ण शक्ति से वंचित है न्याय की सुरक्षा के लिए संगठित नहीं हो सकते और न ही बाहरी आक्रमणकारियों को अन्याय के प्रहार से रोका जा सकता है। ●

हमें १ लाख रुपये चाहियें

हम आपसे भीख नहीं मांग रहे वरन् अपना अधिकार मांग रहे हैं। पिछले एक वर्ष से अधिक समय तक हमने आपको कार्य करके दिखाया है। हमारा उद्देश्य, हमारा काम और हमारा जीवन सब स्पष्ट रूप से आपके सामने आया है। आपने हमारे जिस किसी काम को अच्छा समझा उसे सराहा और जिसे अनुचित समझा उसके बारे में हमें सुझाया है। यह आपकी सहानुभूति ही थी जिसके सहारे हम इतना कुछ कर पाये पर अब आपकी सहानुभूति के साथ-साथ हमें आपके पैसों की जरूरत है। जिस संगठन में २१ सुयोग्य नवयुवक जीवनदान देकर देव दयानन्द के मिशन को पूरा करने के लिये रात दिन परिश्रम कर रहे हों, जिस संगठन में ५ भजन मण्डलियां अपने ओजस्वी प्रचार से हरियाणा के गांव-गांव में क्रान्ति की लहर और आर्यराष्ट्र के लिये तड़प पैदाकर रहे हों, जिस संगठन में तीन विद्वान्, प्रशिक्षित व्यायामाचार्य अपने ब्रह्मचर्य साधना शिवरों के माध्यम से राष्ट्र की तरुणाई में दयानन्द का आदर्श उड़ेल रहे हों, जिस संगठन के अन्तर्गत १ प्रशिक्षण केन्द्र, पांच कार्यालय तथा सैकड़ों कार्यकर्त्ता काम कर रहे हों और जिस संगठन का मुख पत्र हर पन्द्रह दिन में एक नई आशा को जन्म देता हुआ क्रान्ति के नवजागरण का शंखनाद करता हो उस संगठन की क्या आवश्यकतायें होंगी आप जान सकते हैं पर फिर भी स्पष्ट जानकारी के लिये आपकों हम बताना चाहते हैं कि—

६ मोटर साइकलों के लिये—	२५ हजार
१ जीप	२४ हजार
१ साइक्लोस्टाइलिंग मशीन —	३ हजार
१ राष्ट्रिय स्तर पर प्रशिक्षण केन्द्र—	२० हजार
५ कार्यालयों पर साल में—	१२ हजार
सस्ता साहित्य प्रचार के लिए	१६ हजार

इस तरह हमें शीघ्र १ लाख रुपयों की आवश्यकता है। कृपया अपना मनिआर्डर या क्रास चेक "सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्" के नाम से मन्दिर मार्ग नई दिल्ली-१ भेजने का कष्ट करें।

आप विद्यार्थी हों या व्यापारी, किसान हों या कर्मचारी, शिक्षक हों या सैनिक इस यज्ञ में आपको अपनी ओर से कुछ न कुछ आहुति देनी ही होगी अपने महीने भर की आय से कम से कम एक दिन की आय दीजिये। यदि आप इतने निर्धन हैं कि अपने पास से कुछ नहीं दे सकते तो दूसरों से इकट्ठा करके भेजें। आपके द्वारा दिए धन के एक-एक पैसे का सदुपयोग कर उसका पूरा हिसाब आडिट कराके आपकी सेवा में उपस्थित किया जायेगा।

आपके सहयोग की पूर्ण आशा के साथ—

...का किसी प्रान्त का राज्यपाल, विदेश में किसी
...का राजदूत, उच्चतम न्यायालय का न्यायधीश,
...लक सर्विस कमीशन का अध्यक्ष या केवलमात्र सदस्य
भारत की तीनों सेनाओं में किसी सेना का सेनापति

अरे ज्ञानियो ! खड्ग धरो

जब तक भोगी भूप प्रजाओं के नेता कहलायेंगे,
ज्ञान, त्याग, तप, नहीं श्रेष्ठता का जब तक पद पायेंगे।

असन-वसन से हीन, दीनता में जीवन धरने वाले,
सह कर भी अपमान मनुजता की चिन्ता करने वाले।

कवि, कोविद, विज्ञान-विशारद, कलाकार, पण्डित, ज्ञानी,
कनक नहीं, कल्पना, ज्ञान, उज्जवल चरित्र के अभिमानी।

इन विभूतियों को जब तक संसार नहीं पहचानेगा,
राजाओं से अधिक पूज्य जब तक न इन्हें वह मानेगा।

तब तक पड़ी आग में धरती, इसी तरह अकुलायेगी,
चाहे जो भी करो, दुखों से छूट नहीं वह पायेगी।

थकी जीभ समझा कर, गहरी लगी ठेस अभिलाषा को,
भूप समझता नहीं और कुछ छोड़ खड्ग की भाषा को।

रोक टोक से नहीं सुनेगा, नृप समान अविचारी है,
ग्रीवाहर, निष्ठुर कुठार का यह मदान्ध अधिकारी है।

इसी लिए तो मैं कहता हूँ, अरे ज्ञानियो ! खड्ग धरो,
हर न सका जिस को कोई भी, भू का वह तुम त्रास हरो।

रामधारीसिंह 'दिनकर'

सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के लिये
प्रो० श्यामराव द्वारा प्रकाशित एवं सम्राट् प्रेस,
पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६ में मुद्रित ।

श्रीयुत
श्री कुलपति गुरुकुल कांगड़ी,
सहारनपुर ।

राजधर्म
मन्दिर मार्ग नई दिल्ली-१
दूरभाष—४२०५१

पत्र व्यवहार करते हुए ग्राहक संख्या लिखना न भूलें ।